नमस्ते जी

ऋषि दयानंद द्वारा प्रचारित वैदिक विचारधारा ने सैकड़ो हृदय को क्रन्तिकारी विचारो से भर दिया | जो वेद उस काल में विचारो से भी भुला दिए गए थे | ऋषि दयानंद ने उन हृदयों को वेदों के विचारो से ओतप्रोत कर दिया और देश में वेद गंगा बहने लगी | ऋषि के अपने अल्प कार्य काल में समाज की आध्यात्मिक, सामाजिक, और व्यक्तिगत विचार धारा को बदल के रख दिया | ऋषि के बाद भी कही वर्षो तक यह परिपाटी चली पर यह वैचारिक परिवर्तन पुनः उसी विकृति की और लौट रहा है | और इसी विकृति को रोकने के लिए वैदिक विद्वान प्रो० राजेंद्र जी जिज्ञासु के सानिध्य में "पंडित लेखराम वैदिक मिशन" संस्था का जन्म हुआ है | इस संस्था का मुख्य उद्देश्य वेदों को समाज रूपी शरीर के रक्त धमनियों में रक्त के समान स्थापित करना है | यह कार्य ऋषि के जीवन का मुख्य उद्देश्य था और यही इस संस्था का भी मुख्य उद्देश्य है | संस्था के अन्य उद्देश्यों में सम्मिलत है साहित्य का सृजन करना | जो दुर्लभ आर्य साहित्य नष्ट होने की और अग्रसर है उस साहित्य को नष्ट होने से बचाना और उस साहित्य को क्रम बद्ध तरीके से हमारे भाई और बहनों के समक्ष प्रस्तुत करना जिससे उनकी स्वाध्याय में रूचि बढ़े और वे तुलनात्मक अध्यन कर सकें जिससे उनकी स्वधर्म में रूचि बढ़े और अन्य मत मतान्तरो की जानकारी उन्हें प्राप्त हो और वे विधर्मियो द्वारा लगाये जा रहे विभिन्न आक्षेपों का उत्तर दे सकें विधर्मियो से स्वयं भी बचें और अन्यो की भी सहयता करें | संस्था का उद्देश्य है समाज के समक्ष हमारे गौरव शाली इतिहास को प्रस्तुत करना जिससे हमारा रक्त जो ठंडा हो गया है वह पुनः गर्म हो सके और हम हमारे इतिहास पुरुषो का मान सम्मान करें और उनके बताये गये नीतिगत मार्ग पर चलें | संस्था का अन्य उद्देश्य गौ पालन और गौ सेवा को बढ़ावा देना जिससे पशुओ के प्रति प्रेम, दया का भाव बढ़े और इन पशुओ की हत्या बंद हो, समाज में हो रहे परमात्मा के नाम पर पाखण्ड, अन्धविश्वास, अत्याचार को जड़ से नष्ट करना और परमात्मा के शुद्ध वैदिक स्वरुप को समाज के समक्ष रखना, हमारे युवा शक्ति को अनेक भोग, विबिन्न व्यसनों, छल, कपट इत्यादि से बचाना |

इन कार्यो को हम अकेले पूरा करने का सामर्थ्य नहीं रखते पर, यह सारे कार्य है तो बड़े विशाल और व्यापक पर अगर संस्था को आप का साथ मिला तो बड़ी सरलता से पूर्ण किये जा सकते है | हमारा समाजिक ढाचा ऐसा है की हम प्रत्येक कार्य की लिए एक दुसरे पर निर्भर है | आशा करते है की इस कार्य में आप हमारी तन, मन से साहयता करेंगे | संस्था द्वारा चलाई जा रही वेबसाइट www.aryamantavya.in और www.vedickranti.in पर आप संस्था द्वारा स्थापित संकल्पों सम्बन्धी लेख पड़ सकते है और भिन्न-भिन्न वैदिक साहित्य को निशुल्क डाउनलोड कर सकते है | कृपया स्वयं भी जाये और अन्यो को भी सूचित करे यही आप की हवी होंगी इस यज्ञ में जो आप अवश्य करेंगे यही परमात्मा से प्रार्थना करते हैं |

जिन सज्जनों के पास दुर्लभ आर्य साहित्य है एवं वे उसे संरक्षित करने में संस्था की सहायता करना चाहते हैं वो कृपया निम्न पते पर सूचित करें

ptlekhram@gmail.com

धन्यवाद् !

पंडित लेखराम वैदिक मिशन

आर्य मंतव्य टीम

AryaMantavya
Make The Whole World Noble

॥ओ३म्॥

अथ तृतीयमण्डलम्

ओ३म् विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद्भ॒द्रं तन्न॒ आ सु॑व॥ ऋ०५.८२.५॥

अथ तृतीयमण्डले सोमस्येति त्रयोविंशत्यृचस्य प्रथमसूक्तस्य गाथिनो विश्वामित्र ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ३-५, ९, ११, १२, १५, १७, १९, २० निचृत्त्रिष्टुप्। २, ६, ७, १३, १४ त्रिष्टुप्। १०, २१ विराट् त्रिष्टुप्। २२ ज्योतिष्मती त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ८, १६, २३ स्वराट् पङ्क्तिः। १८ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ विद्वद्गुणानाह॥

अब तीसरे मण्डल का प्रारम्भ है। उसके प्रथम सूक्त के आरम्भ के प्रथम मन्त्र में विद्वानों की प्रशंसा को कहते हैं॥

सोम॑स्य मा त॒वसं॒ वक्ष्य॑ग्ने॒ वह्निं॑ चकर्थ वि॒दथे॒ यज॑ध्यै।
दे॒वाँ अच्छा॒ दीद्य॑द्युञ्जे॒ अद्रिं॑ शमा॒ये अ॑ग्ने त॒न्वं॑ जुषस्व॥ १॥

सोम॑स्य। मा॒। त॒वस॑म्। वक्षि॑। अ॒ग्ने॒। वह्नि॑म्। च॒क॒र्थ॒। वि॒दथे॑। यज॑ध्यै। दे॒वान्। अच्छ॑। दीद्य॑त्। यु॒ञ्जे। अद्रि॑म्। श॒म्ऽआ॒ये। अ॒ग्ने॒। त॒न्व॑म्। जु॒ष॒स्व॒॥ १॥

पदार्थः-(**सोमस्य**) ऐश्वर्यस्य सकाशात् (**मा**) माम् (**तवसम्**) बलयुक्तम् (**वक्षि**) वदसि (**अग्ने**) विद्वन् (**वह्निम्**) वाहकं पावकम् (**चकर्थ**) करोषि (**विदथे**) विद्वत्सत्काराख्ये यज्ञे (**यजध्यै**) यष्टुं सङ्गन्तुं (**देवान्**) विदुषो दिव्यगुणान् वा (**अच्छ**) सम्यक्। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**दीद्यत्**) देदीप्यमानः (**युञ्जे**) (**अद्रिम्**) मेघम् (**शमाये**) शमिमिवाचरामि (**अग्ने**) अग्निवद्वर्त्तमान (**तन्वम्**) (**जुषस्व**)॥१॥

अन्वयः-हे अग्ने! यस्त्वं सोमस्य तवसं मा वह्निं वक्षि विदथे देवान् यजध्यै अच्छ चकर्थ, तेन सहाहं दीद्यत्सन् विदथे देवान् यजध्यै युञ्जे यथाऽग्निरद्रिं वहति तथाऽहं विदुषां समीपे शमाये। हे अग्ने! शिष्यो यथा विद्वच्छरीरं सेवते तथा च तन्वं जुषस्व॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या ऐश्वर्य्यं चिकीर्षेयुस्ते विद्वत्सङ्गत्या शरीरमरोगं संरक्ष्यात्मानं विद्वांसं सम्पाद्याग्न्यादिपदार्थविद्यया कार्याणि साधयेयुः॥१॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) विद्वान्! जो आप (**सोमस्य**) ऐश्वर्य की उत्तेजना से (**तवसम्**) बलयुक्त (**मा**) मुझको (**वह्निम्**) पदार्थ बहानेवाले अर्थात् एक देश से दूसरे देश ले जानेवाले अग्नि को (**वक्षि**) कहते हैं (**विदथे**) विद्वानों के सत्कार करनेवाले यज्ञ में (**देवान्**) विद्वान् वा दिव्य गुणों के (**यजध्यै**) सङ्गत करने को (**अच्छ**) अच्छे प्रकार (**चकर्थ**) क्रिया करते हो, उनके साथ मैं (**दीद्यत्**) देदीप्यमान हुआ विद्वानों के

सत्कार करनेवाले यज्ञ में विद्वान् वा दिव्य गुणों के सङ्गत करने को **(युञ्जे)** युक्त होता हूँ, जैसे अग्नि **(अद्रिम्)** मेघ को बहाता है, वैसे मैं विद्वानों में समीप के **(शमाये)** शान्ति के समान आचरण करता हूँ। हे **(अग्ने)** अग्निवद्वर्त्तमान! शिष्य जैसे विद्वान् के शरीर का सेवन करता है, वैसे आप **(तन्वम्)** शरीर को **(जुषस्व)** प्रीति करो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य ऐश्वर्य के करने की इच्छा करें, वे विद्वानों की सङ्गति से शरीर को नीरोग रख कर, अपने को विद्वान् बना के अग्नि आदि की पदार्थविद्या से कार्य्यों को सिद्ध करें॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

प्राञ्चं यज्ञं चकृम वर्धतां गीः समिद्भिरग्निं नमसा दुवस्यन्।
दिवः शशासुर्विदथा कवीनां गृत्साय चित्तवसे गातुमीषुः॥२॥

प्राञ्चम्। यज्ञम्। चकृम। वर्धताम्। गीः। समित्ऽभिः। अग्निम्। नमसा। दुवस्यन्। दिवः। शशासुः। विदथा। कवीनाम्। गृत्साय। चित्। तवसे। गातुम्। ईषुः॥२॥

पदार्थः-**(प्राञ्चम्)** यः प्रागञ्चति प्राप्नोति सः तम् **(यज्ञम्)** सत्सङ्गाख्यं व्यवहारम् **(चकृम)** कुर्याम **(वर्धताम्)** **(गीः)** सुशिक्षिता वाक् **(समिद्भिः)** इन्धनादिभिः **(अग्निम्)** **(नमसा)** सत्कारेण **(दुवस्यन्)** सेवमानः **(दिवः)** प्रकाशात् **(शशासुः)** अनुशासतु **(विदथा)** विविधानि विज्ञानानि **(कवीनाम्)** मेधाविनां विदुषाम् **(गृत्साय)** मेधाविने **(चित्)** **(तवसे)** विद्यावृद्धाय **(गातुम्)** पृथिवीम् **(ईषुः)** इच्छन्तु॥२॥

अन्वयः-वयं यं यं नमसा प्राञ्चं यज्ञं चकृम तेन समिद्भिरग्निं दुवस्यन्निवास्माकं गीर्वर्धताम्। ये कवीनां दिवो विदथा तवसे गृत्साय शशासुर्गातुमीषुस्तान् वयन्नमसा चिदानन्दितांश्चकृम॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्या अवश्यं विद्यासुशिक्षितां वाचं वर्धयित्वा महाविदुषामध्यापकानां शासने सुशिक्षिता भूत्वा पृथिवीराज्यं कर्त्तुमिच्छन्तु॥२॥

पदार्थः-हम लोग **(नमसा)** सत्कार से जिस-जिस **(प्राञ्चम्)** पहिले प्राप्त होनेवाले **(यज्ञम्)** सज्जनों की सङ्गतिरूप यज्ञ को **(चकृम)** करें उससे **(समिद्भिः)** इन्धनादि पदार्थों से **(अग्निम्)** अग्नि का **(दुवस्यन्)** सेवन करते हुए के समान हम लोगों की **(गीः)** अच्छी शिक्षा पाई हुई वाणी **(वर्धताम्)** बढ़े जो **(कवीनाम्)** मेधावियों के **(दिवः)** प्रकाश से **(विदथा)** विद्वानों को **(तवसे)** विद्यावृद्ध **(गृत्साय)** मेधावी के लिये **(शशासुः)** सिखावें और **(गातुम्)** पृथिवी की **(ईषुः)** चाहना करें, उनको हम लोग सत्कार से **(चित्)** ही आनन्दित करें॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्य अवश्य विद्या से उत्तम शिक्षा पाई हुई वाणी को बढ़ाकर, महान् विद्वानों के समीप से अच्छे शिक्षित होकर, पृथिवी के राज्य करने की चाहना करें॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

मयो॑ दधे॒ मेधि॑रः पू॒तद॑क्षो दि॒वः सु॒बन्धु॑र्ज॒नुषा॑ पृथि॒व्याः।
अवि॑न्दन्नु दर्श॒तम॒प्स्व॑१॒॑न्तर्दे॒वासो॑ अ॒ग्निम॒पसि॒ स्वसॄ॑णाम्॥३॥

मयः॑। द॒धे॒। मेधि॑रः। पू॒तऽद॑क्षः। दि॒वः। सु॒ऽबन्धुः॑। ज॒नुषा॑। पृ॒थि॒व्याः। अवि॑न्दन्। ऊ॒म् इति॑। द॒र्श॒तम्। अ॒प्ऽसु। अ॒न्तः। दे॒वासः॑। अ॒ग्निम्। अ॒पसि॑। स्वसॄ॑णाम्॥३॥

पदार्थः-(**मयः**) सुखम् (**दधे**) दधाति (**मेधिरः**) सङ्गमकः (**पूतदक्षः**) पवित्रं दक्षो बलं यस्य सः (**दिवः**) प्रकाशयुक्तस्य (**सुबन्धुः**) शोभनो भ्राता (**जनुषा**) जन्मना (**पृथिव्याः**) भूमेर्मध्ये (**अविन्दन्**) लभन्ते (**उ**) (**दर्शतम्**) द्रष्टव्यम् (**अप्सु**) जलेषु प्राणेषु वा (**अन्तः**) मध्ये (**देवासः**) विद्वांसः (**अग्निम्**) विद्युतम् (**अपसि**) कर्मणि (**स्वसॄणाम्**) भगिनीनाम्॥३॥

अन्वयः-हे सज्जन! यथा देवासोऽप्स्वन्तर्दर्शतमग्निमपस्यविन्दंस्तथा यो दिवः पृथिव्या अन्तर्जनुषा स्वसॄणां सुबन्धुः पूतदक्षो मेधिरः सन् मयो दधे स उ अप्सु सर्वं सुखमाप्नोति॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा विद्वांसो योगविद्यया स्वात्मसु ज्ञानप्रकाशं दृष्ट्वाऽन्यान् दर्शयित्वा ज्ञानेन वर्द्धयन्ति तथा मनुष्यैर्यथापुत्रा अध्यापनीयास्तथापुत्र्योऽपि यथा बन्धवो विद्याऽभ्यासं कुर्युस्तथा भगिन्योऽपीत्थमेव भद्रं प्राप्तुं शक्यम्॥३॥

पदार्थः-हे सज्जन! जैसे (**देवासः**) विद्वान् जन (**अप्सु**) जल वा प्राणों (**अन्तः**) बीच (**दर्शतम्**) देखने योग्य (**अग्निम्**) विद्युत् रूप अग्नि को (**अपसि**) कर्म के निमित्त (**अविन्दन्**) प्राप्त होते हैं, वैसे जो (**दिवः**) सूर्य और (**पृथिव्याः**) भूमि के बीच (**जनुषा**) जन्म से (**स्वसॄणाम्**) भगिनियों का (**सुबन्धुः**) सुन्दर भ्राता (**पूतदक्षः**) जिसका पवित्र बल वह (**मेधिरः**) सज्जनों का सङ्ग करनेवाला होता हुआ (**मयः**) सुख को (**दधे**) धारण करता है, वह (**उ**) ही जलों वा प्राणों में सब सुख को प्राप्त होता है॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे विद्वान् जन योगविद्या से अपने आत्माओं में ज्ञान का प्रकाश देख औरों को दिखला कर ज्ञान से उन्हें बढ़ाते हैं, वैसे मनुष्यों को जिस प्रकार पुत्रों को विद्या पढ़ाना चाहिये, वैसे ही पुत्रियाँ भी विद्यासम्पन्न करनी चाहियें। जैसे भाई जन विद्याभ्यास करें, वैसे भगिनी भी, ऐसे ही अत्यानन्द मिल सकता है॥३॥

अथ स्त्रीपुरुषविषयमाह॥

अब स्त्री-पुरुष के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अवर्धयन्त्सुभगं सप्त यह्वीः श्वेतं जज्ञानमरुषं महित्वा।
शिशुं न जातमभ्यारुरश्वा देवासो अग्निं जनिमन् वपुष्यन्॥४॥

अवर्धयन्। सुऽभगम्। सप्त। यह्वीः। श्वेतम्। जज्ञानम्। अरुषम्। महिऽत्वा। शिशुम्। न। जातम्। अभि। आरुः। अश्वाः। देवासः। अग्निम्। जनिमन्। वपुष्यन्॥४॥

पदार्थः-(**अवर्धयन्**) वर्धयन्तु (**सुभगम्**) शोभनैश्वर्य्यम् (**सप्त**) सप्तसङ्ख्याकाः (**यह्वीः**) महत्यः स्त्रियः (**श्वेतम्**) श्वेतवर्णम् (**जज्ञानम्**) जनकम् (**अरुषम्**) अश्वम्। **अरुष इति अश्वनामसु पठितम्।** (निघं०१.१४)। (**महित्वा**) पूजयित्वा (**शिशुम्**) बालकम् (**न**) इव (**जातम्**) उत्पन्नम् (**अभि**) (**आरुः**) प्राप्नुवन्तु (**अश्वाः**) विद्याप्राप्तिशीलाः (**देवासः**) विद्वांसः (**अग्निम्**) (**जनिमन्**) प्रशस्ता जनिर्जन्म विद्यते यस्य तत्सम्बुद्धौ (**वपुष्यन्**) आत्मनो वपु रूपमिच्छन्। **वपुरिति रूपनामसु पठितम्।** (निघं०३.७)॥४॥

अन्वयः-हे जनिमन् वपुष्यन् विद्वन्! यथा अश्वा देवासः श्वेतमश्वमरुषमग्निं सप्त यह्वीः सुभगं जज्ञानं महित्वा जातं शिशुं नावर्धयँस्तास्सततं सुखमभ्यारुस्तथा त्वमपि प्रयतस्व॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा सप्त स्त्रिय एकं पुत्रं वर्धयन्ति तथा येऽग्निविद्यां विदित्वैश्वर्य्यमुन्नयन्ते ते महिमानमाप्नुवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे (**जनिमन्**) प्रशंसित जन्म वा (**वपुष्यन्**) अपने को रूप की इच्छा करनेवाले विद्वन्! जैसे (**अश्वाः**) विद्या व्याप्तिशील (**देवासः**) विद्वान् जन (**श्वेतम्**) श्वेतवर्ण (**अरुषम्**) अश्वरूप (**अग्निम्**) अग्नि को (**सप्त**) सात (**यह्वीः**) महान् स्त्री (**सुभगम्**) सुन्दर ऐश्वर्ययुक्त (**जज्ञानम्**) जन्म दिलानेवाले का (**महित्वा**) सत्कार (**जातम्**) उत्पन्न हुए (**शिशुम्**) बालक के (**न**) समान (**अवर्धयन्**) बढ़ावें, वे निरन्तर सुख को (**अभ्यारुः**) प्राप्त होती हैं, वैसे तुम भी प्रयत्न करो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे सात स्त्रियाँ एक पुत्र की वृद्धि करती हैं, वैसे जो अग्निविद्या को जानकर ऐश्वर्य्य की उन्नति करते हैं, वे महिमा को प्राप्त होते हैं॥४॥

पुनः पुरुषविषयमाह॥

फिर पुरुष विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

शुक्रेभिरङ्गै रज आततन्वान् क्रतुं पुनानः कविभिः पवित्रैः।
शोचिर्वसानः पर्यायुरपां श्रियो मिमीते बृहतीरनूनाः॥५॥१३॥

शुक्रेभिः। अङ्गैः। रजः। आऽततन्वान्। क्रतुम्। पुनानः। कविऽभिः। पवित्रैः। शोचिः। वसानः। परि। आयुः। अपाम्। श्रियः। मिमीते। बृहतीः। अनूनाः॥५॥

पदार्थः-(**शुक्रेभिः**) वीर्यवद्भिः (**अङ्गैः**) अवयवैः (**रजः**) ऐश्वर्य्यम् (**आततन्वान्**) समन्ताद्विस्तारितवान् (**क्रतुम्**) प्रज्ञां कर्म वा (**पुनानः**) पवित्रीकुर्वन् (**कविभिः**) मेधाविभिः (**पवित्रैः**)

शुद्धगुणकर्मस्वभावैः **(शोचिः)** प्रकाशम् **(वसानः)** आच्छादितः **(परि)** सर्वतः **(आयुः)** जीवनम् **(अपाम्)** जलानाम् **(श्रियः)** शोभा धनानि वा **(मिमीते)** जनयति **(बृहतीः)** **(अनूनाः)** न विद्यते ऊनं ऊनता यासु ताः॥५॥

अन्वयः-यो मनुष्यः शुक्रेभिरङ्गै रज आततन्वान् पवित्रैः कविभिः क्रतुं पुनानोऽपामायुः शोचिर्वसानोर्बृहतीरनूनाः श्रियः परिमिमीते स विद्वान् श्रीमान् कुतो न जायते॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यावद्युष्माकं दृढाङ्गानि शरीराणि पवित्राः प्रज्ञाः धर्मात्मनामाप्तानां विदुषां सङ्गो जितेन्द्रियत्वेन पूर्णमायुर्न भवति तावदतुलाः श्रियो विद्याश्च न भवन्तीति वेद्यम्॥५॥

पदार्थः-जो मनुष्य **(शुक्रेभिः)** वीर्यवान् बलवान् **(अङ्गैः)** अवयवों से **(रजः)** ऐश्वर्य को **(आततन्वान्)** सब ओर से विस्तारित किये हुए **(पवित्रैः)** पवित्र **(कविभिः)** विद्वानों से **(क्रतुम्)** विद्या वा कर्म को **(पुनानः)** पवित्र करता हुआ **(अपाम्)** जलों के बीच **(आयुः)** जीवन और **(शोचिः)** प्रकाश **(वसानः)** आच्छादित ढाँपे हुए **(बृहतीः)** बड़ी-बड़ी जिनमें **(अनूनाः)** ऊनता नहीं विद्यमान उन शोभाओं वा धनों को **(परिमिमीते)** सब ओर से उत्पन्न करता है, वह विद्वान् श्रीमान् कैसे न हो?॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जब तक तुम्हारे दृढ़ अङ्गवाले शरीर, पवित्र बुद्धियां, धर्मात्मा आप्त विद्वानों का सङ्ग, जितेन्द्रियता से पूर्ण आयु नहीं होती तब तक अतुल लक्ष्मी और विद्या भी नहीं होती, ऐसा जानना चाहिये॥५॥

अथ स्त्रीपुरुषविषयमाह॥

अब स्त्रीपुरुषों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

व॒व्राजा॑ सी॒मन॑दती॒रद॑ब्धा दि॒वो य॒ह्वीरव॑साना॒ अन॑ग्नाः।

सना॒ अत्र॑ युव॒तयः॒ सयो॑नी॒रेकं॒ गर्भं॑ दधिरे स॒प्त वाणीः॑॥६॥

व॒व्राज॑। सी॒म्। अन॑दतीः। अद॑ब्धाः। दि॒वः। य॒ह्वीः। अव॑सानाः। अन॑ग्नाः। सना॑ः। अत्र॑। यु॒वत॑यः। सऽयो॑नीः। एक॑म्। गर्भ॑म्। द॒धि॒रे। स॒प्त। वाणीः॑॥६॥

पदार्थः-**(वव्राज)** व्रजति प्राप्नोति। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(सीम्)** सर्वतः **(अनदतीः)** अविद्यमाना अतीव सूक्ष्मा दन्ता यासान्ताः **(अदब्धाः)** अहिंसनीयाः सत्कर्त्तव्याः **(दिवः)** देदीप्यमानाः **(यह्वीः)** महाविद्यागुणस्वभावयुक्ताः **(अवसानाः)** अन्ते समीपे स्थिताः **(अनग्नाः)** सर्वतो वस्त्रभूषणादिभिराच्छादिताः **(सनाः)** भोक्त्र्यः **(अत्र)** **(युवतयः)** प्राप्तयौवनाः **(सयोनीः)** समाना योनिर्यासां ताः **(एकम्)** असहायम् **(गर्भम्)** **(दधिरे)** धरन्ति **(सप्त)** **(वाणीः)**॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा विद्वान् सप्त वाणीः सीं वव्राज तथाऽत्रानदतीरदब्धा दिवो यह्वीरवसाना अनग्नास्सनाः सयोनीर्युवतय एकं गर्भं दधिरे ताः सुखिन्यः कुतो न स्युः?॥६॥

भावार्थः-यदि समानविद्यारूपस्वभावाः समानान् पतीन् स्वेच्छया प्राप्य परस्परप्रीत्यात् सन्तानानुत्पाद्य संरक्ष्य सुशिक्षयन्ति ताः सुखयुक्ता भवन्ति यथा परा पश्यन्ती मध्यमा वैखरी कर्म्मोपासनाज्ञानप्रकाशिकास्तिस्रश्च मिलित्वा सप्त वाण्यः सर्वान् व्यवहारान् साधयन्ति तथा विद्वांसः स्त्रीपुरुषा धर्मार्थकाममोक्षान् साद्धुं शक्नुवन्ति॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे विद्वान् **(सप्त)** सात **(वाणीः)** वाणियों को **(सीम्)** सब ओर से **(वव्राज)** प्राप्त होता, वैसे **(अत्र)** यहाँ **(अनदतीः)** अविद्यमान अर्थात् अतीव सूक्ष्म जिनके दन्त **(अदब्धाः)** अहिंसनीय अर्थात् सत्कार करने योग्य **(दिवः)** देदीप्यमान **(यह्वीः)** बहुत विद्या और गुण, स्वभाव से युक्त **(अवसानाः)** समीप में ठहरी हुईं **(अनग्नाः)** सब ओर से वस्त्र वा आभूषण आदि से ढपी हुईं **(सनाः)** भोगनेवाली **(सयोनीः)** समान जिनकी योनि अर्थात् एक माता से उत्पन्न हुईं सगी वे **(युवतयः)** प्राप्तयौवना स्त्री **(एकम्)** एक अर्थात् असहायक **(गर्भम्)** गर्भ को **(दधिरे)** धारण करतीं, वे सुखी क्यों न हों?॥६॥

भावार्थः-जो समान रूपवाली स्त्रियाँ अपने-अपने समान पतियों को अपनी इच्छा से प्राप्त होकर परस्पर प्रीति के साथ सन्तानों को उत्पन्न कर और उनकी रक्षा कर उनको उत्तम शिक्षा दिलाती हैं, वे सुखयुक्त होती हैं। जैसे परा, पश्यन्ती, मध्यमा, वैखरी और कर्म्मोपासनाज्ञान प्रकाश करनेवाली तीनों मिल कर सात वाणी सब व्यवहारों को सिद्ध करती हैं, वैसे विद्वान् स्त्रीपुरुष धर्म्म, अर्थ, काम और मोक्ष को सिद्ध कर सकते हैं॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स्तीर्णा अस्य संहतो विश्वरूपा घृतस्य योनौ स्रवथे मधूनाम्।
अस्थुरत्र धेनवः पिन्वमाना मही दस्मस्य मातरा समीची॥७॥

स्तीर्णाः। अस्य। सम्ऽहतः। विश्वऽरूपाः। घृतस्य। योनौ। स्रवथे। मधूनाम्। अस्थुः। अत्र। धेनवः। पिन्वमानाः। मही इति। दस्मस्य। मातरा। समीची इति सम्ऽईची॥७॥

पदार्थः-**(स्तीर्णाः)** शुभगुणैराच्छादिताः **(अस्य)** व्यवहारस्य मध्ये **(संहतः)** एकीभूताः **(विश्वरूपाः)** नानास्वरूपाः **(घृतस्य)** उदकस्य **(योनौ)** आधारे **(स्रवथे)** स्रवणे गमने **(मधूनाम्)** मधुराणाम् **(अस्थुः)** तिष्ठन्ति **(अत्र)** **(धेनवः)** गावः **(पिन्वमानाः)** सेवमानाः **(मही)** पूज्ये महत्यौ **(दस्मस्य)** दुःखोपक्षयकरस्य **(मातरा)** जनकजनन्यौ **(समीची)** सम्यगञ्चन्त्यौ॥७॥

अन्वयः-यथा स्तीर्णा विश्वरूपास्संहतः पिन्वमाना धेनवोऽत्रास्य घृतस्य योनौ मधूनां स्रवथेऽस्थुस्तथा समीची मही मातरा दस्मस्याऽपत्यस्य पालिके भवतः॥७॥

भावार्थः-यथा नदीसमुद्रौ मिलित्वा रत्नान्युत्पादयतस्तथा स्त्रीपुरुषा अपत्यान्युत्पादयन्तु॥७॥

पदार्थः-जैसे **(स्तीर्णाः)** शुभगुणों से आच्छादित **(विश्वरूपाः)** नाना स्वरूपयुक्त **(संहतः)** एक हो रहीं **(पिन्वमानाः)** सेवन करती हुईं **(धेनवः)** गौवें **(अत्र)** यहाँ **(अस्य)** इस व्यवहार के बीच **(घृतस्य)** जल के **(योनौ)** आधार में **(मधूनाम्)** मधुर पदार्थों की **(स्रवथे)** प्राप्ति के निमित्त **(अस्थुः)** स्थिर होती हैं, वैसे **(समीची)** अच्छे प्रकार प्राप्त होने **(मही)** सत्कार करने योग्य **(मातरा)** पिता-माता **(दस्मस्य)** दुःख नष्ट करनेवाले बालक के पालनेवाले होते हैं॥७॥

भावार्थः-जैसे नदी और समुद्र मिलकर रत्नों को उत्पन्न करते हैं, वैसे स्त्री-पुरुष सन्तानों को उत्पन्न करें॥७॥

अथ विद्याजन्मप्रशंसां प्राह॥

अब विद्याजन्म की प्रशंसा को अगले मन्त्र में कहा है॥

बभ्राणः सूनो सहसो व्यद्यौद् दधानः शुक्रा रभसा वपूंषि।
श्चोतन्ति धारा मधुनो घृतस्य वृषा यत्र वावृधे काव्येन॥८॥

बभ्राणः। सूनो इति। सहसः। वि। अद्यौत्। दधानः। शुक्रा। रभसा। वपूंषि। श्चोतन्ति। धाराः। मधुनः। घृतस्य। वृषा। यत्र। वावृधे। काव्येन॥८॥

पदार्थः-**(बभ्राणः)** पुष्यन् **(सूनो)** संतान **(सहसः)** बलात् **(वि)** **(अद्यौत्)** विद्योतते **(दधानः)** धरन् **(शुक्रा)** शुक्राणि शरीरात्मवीर्य्याणि **(रभसा)** रोगरहितानि **(वपूंषि)** रूपवन्ति शरीराणि **(श्चोतन्ति)** स्रवन्ते **(धाराः)** जलस्य गतय इव वाचः **(मधुनः)** मधुरस्य **(घृतस्य)** उदकस्य **(वृषा)** बलिष्ठः **(यत्र)** यस्मिन् **(वावृधे)** वर्द्धते। अत्र **तुजादीनामित्यभ्यासदैर्घ्यम्**। **(काव्येन)** विद्वद्भिर्निर्मितेन सह॥८॥

अन्वयः-हे सूनो! यथा शुक्रा रभसा वपूंषि दधानो यथा वा मधुनो घृतस्य धाराः श्चोतन्ति यत्र वृषा काव्येन वावृधे सहसो व्यद्यौत् तथैतैर्बभ्राणः संस्त्वं वर्धस्व॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सुशिक्षितानां वाचो जलवत् कोमला जायन्ते यथा ब्रह्मचारी वीर्यवान् भवति तथाऽपत्यैर्विद्यासुशिक्षास्संगृह्य बलवद्भिः सुशीलैर्भवितव्यम्॥८॥

पदार्थः-हे **(सूनो)** सन्तान! जैसे **(शुक्रा)** शरीर, आत्मा और बल तथा **(रभसा)** रोगरहित **(वपूंषि)** रूपवान् शरीरों को **(दधानः)** धारण करता हुआ जो **(मधुनः)** मीठे **(घृतस्य)** जल की **(धाराः)** धाराओं के समान वाणी **(श्चोतन्ति)** झरती हैं **(यत्र)** जिस व्यवहार में **(वृषा)** बलवान् जन **(काव्येन)** विद्वानों के निर्माण किये और पढ़े हुए कविताई आदि कर्म के साथ **(वावृधे)** बढ़ता है वा **(सहसः)** बल से **(व्यद्यौत्)** प्रकाशित होता है, वैसे ही उक्त पदार्थों से **(बभ्राणः)** पुष्ट होते हुए बढ़ो॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे उत्तम शिक्षा पाये हुए सज्जनों की वाणी जल के समान कोमल और सरस होती है, जैसे ब्रह्मचारी बलवान् होता है, वैसे सन्तानों को चाहिये कि

विद्या, सुशिक्षाओं को अच्छे प्रकार ग्रहण कर बलवान् और सुशील होवें॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

पितुश्चिदूधर्जनुषा विवेद व्यस्य धारा असृजद्वि धेनाः।
गुहा चरन्तं सखिभिः शिवेभिर्दिवो यह्वीभिर्न गुहा बभूव॥९॥

पितुः। चित्। ऊधः। जनुषा। विवेद। वि। अस्य। धाराः। असृजत्। वि। धेनाः। गुहा। चरन्तम्। सखिऽभिः। शिवेभिः। दिवः। यह्वीभिः। न। गुहा। बभूव॥९॥

पदार्थः-(**पितुः**) जनकस्य सकाशात् (**चित्**) इव (**ऊधः**) रात्री (**जनुषा**) जन्मना (**विवेद**) वेत्ति (**वि**) (**अस्य**) जलस्य (**धाराः**) प्रवाहाश्च (**असृजत्**) सृजेत् (**वि**) विशेषेण (**धेनाः**) प्रीयमाणान्यपत्यानि इव वाचः (**गुहा**) गुहायाम् बुद्धौ (**चरन्तम्**) प्राप्नुवन्तम् (**सखिभिः**) मित्रैः (**शिवेभिः**) मङ्गलकारिभिः (**दिवः**) विद्यादीप्तीः (**यह्वीभिः**) महतीभिः (**न**) इव (**गुहा**) कन्दरायाम् (**बभूव**) भवति॥९॥

अन्वयः-यथोधो विबभूव यथास्य धाराश्चिद् गुहा भवन्ति तथा यः पितुस्सकाशात् गर्भे स्थित्वा जनुषा प्रकटो भूत्वा शिवेभिस्सखिभिस्सह दिवो यह्वीर्न गुहा चरन्तं विवेद धेना व्यसृजत् स सुखमाप्नोति॥९॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यथान्धकारे स्थितं वस्तु न दृश्यते दीपेन लभ्यते तथा पितुः शरीरे वर्त्तमानो जीवो गर्भे स्थितस्सन् न दृश्यते यदास्य जन्म भवति तदा दृश्यो जायत एवं यो मङ्गलाचारैः मित्रैस्सह विद्या गृह्णाति स आत्मानं विदित्वा महान् भवति॥९॥

पदार्थः-जैसे (**ऊधः**) रात्री (**विबभूव**) विशेषता से होती है वा जैसे (**अस्य**) इस जल की (**धाराः**) धाराओं के (**चित्**) समान प्रवाह (**गुहा**) बुद्धि में होते हैं, वैसे जो (**पितुः**) पिता की उत्तेजना से गर्भ में स्थिर होकर (**जनुषा**) जन्म से प्रकट होकर (**शिवेभिः**) मङ्गलकारी (**सखिभिः**) मित्र वर्गों के साथ (**दिवः**) विद्या की दीप्ति जो (**यह्वीः**) बड़ी-बड़ी उनके (**न**) समान (**गुहा**) कन्दरा में (**चरन्तम्**) विचरते हुए को (**विवेद**) जानता है (**धेनाः**) प्रीयमाण सन्तानों के समान (**व्यसृजत्**) विशेषता से उत्पन्न को वह सुख प्राप्त होता है॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में [उपमा और] वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जैसे अन्धकार में स्थित वस्तु नहीं दीख पड़ती, जैसे दीप से प्राप्त होती, वैसे पिता के शरीर में वर्त्तमान जीव गर्भ में स्थिर हुआ नहीं दीखता और जब इसका जन्म होता है तब दीखता है। इस प्रकार जो मङ्गलाचरणों से मित्रों के साथ विद्याओं का ग्रहण करता है, वह आत्मा को जान बड़ा होता है॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

पितुश्च गर्भं जनितुश्च बभ्रे पूर्वीरेको अधयत् पीप्यानाः।
वृष्णे सपत्नी शुचये सबन्धू उभे अस्मै मनुष्ये३ नि पाहि॥ १०॥ १४॥

पितुः। च। गर्भम्। जनितुः। च। बभ्रे। पूर्वीः। एकः। अधयत्। पीप्यानाः। वृष्णे। सपत्नी इति सऽपत्नी। शुचये। सबन्धू इति सऽबन्धू। उभे इति। अस्मै। मनुष्ये३ इति। नि। पाहि॥ १०॥

पदार्थः-(**पितुः**) पालकात् (**च**) धात्र्याः (**गर्भम्**) (**जनितुः**) जनकात् (**च**) सुअन्नादेः (**बभ्रे**) बिभर्त्ति (**पूर्वीः**) पूर्वभूताः (**एकः**) (**अधयत्**) धयति पिबति (**पीप्यानाः**) वर्द्धमानाः (**वृष्णे**) वीर्यसेचकाय (**सपत्नी**) समाना पत्नी यस्याः सा (**शुचये**) पवित्राय (**सबन्धू**) समानौ बन्धूरिव वर्त्तमानौ (**उभे**) द्वे पुरुषः स्त्री च (**अस्मै**) (**मनुष्ये**) मनुष्येभ्यो हिते (**नि**) नितराम् (**पाहि**) रक्ष॥१०॥

अन्वयः-यथाऽस्मै शुचये वृष्णे सपत्नी गर्भं बभ्रे स एको गर्भः पितुश्च जनितुश्च सकाशाज्जन्म प्राप्य पूर्वीः पीप्याना अधयत् तथा उभे सबन्धू मनुष्ये गर्भं पातस्तथा हे विद्वन्! एकः संस्त्वं सन्नि पाहि॥१०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यदा मातापितरौ गर्भं धत्तस्तं संरक्ष्य दुग्धपानादिना वर्धयतस्तथा स्त्रीपुरुषौ प्रीतिं वर्धयित्वा गर्भान् धृत्वा संपाल्य मनुष्याणां हितायाऽपत्यानि विद्यां ग्राहयेताम्॥१०॥

पदार्थः-जैसे (**अस्मै**) इस (**शुचये**) पवित्र (**वृष्णे**) वीर्य सेचनेवाले मनुष्य के अर्थ (**सपत्नी**) समान जिसका पति वह स्त्री (**गर्भम्**) गर्भ को (**बभ्रे**) धारण करती वह (**एकः**) एक गर्भ (**पितुः**) पालन करनेवाले (**च**) और सुन्दर अन्नादि और (**जनितुः**) जन्म देनेवाले पिता की (**च**) और धाई की उत्तेजना से जन्म पाकर (**पूर्वीः**) पहिले उत्पन्न हुई (**पीप्यानाः**) बढ़ती हुई प्रजा (**अधयत्**) दुग्ध पीती हैं, वैसे (**उभे**) दोनों स्त्री-पुरुष (**सबन्धू**) एक समान बन्धुओं के समान प्रीति रखनेवाले (**मनुष्ये**) मनुष्यों के लिये जो हित उसके निमित्त (**गर्भम्**) गर्भ की रक्षा करते हैं, वैसे हे विद्वन्! एक होते आप (**नि, पाहि**) निरन्तर पालना करो॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जब माता-पिता गर्भ को धारण करते हैं, और उसकी रक्षा कर दुग्धपान आदि से बढ़ाते हैं, वैसे स्त्री-पुरुष प्रीति को बढ़ाकर गर्भ को धारण कर उसे अच्छे प्रकार पाल मनुष्यों के हित के लिये अपने सन्तानों को विद्या ग्रहण करावें॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उरौ महाँ अनिबाधे ववर्धापो अग्निं यशसः सं हि पूर्वीः।
ऋतस्य योनावशयद्दमूना जामीनामग्निरपसि स्वसॄणाम्॥ ११॥

उरौ। महान्। अनिऽबाधे। ववर्ध। आपः। अग्निम्। यशसः। सम्। हि। पूर्वीः। ऋतस्य। योनौ। अशयत्। दमूनाः। जामीनाम्। अग्निः। अपसि। स्वसृणाम्॥११॥

पदार्थः-(**उरौ**) बाहौ (**महान्**) (**अनिबाधे**) बाधारहिते (**ववर्ध**) वर्धते (**आपः**) जलानि (**अग्निम्**) पावकम् (**यशसः**) कीर्तेः (**सम्**) सम्यक् (**हि**) खलु (**पूर्वीः**) प्राचीनाः (**ऋतस्य**) जलस्य (**योनौ**) कारणे (**अशयत्**) शेते (**दमूनाः**) दमनशीलाः (**जामीनाम्**) भोक्तॄणाम् (**अग्निः**) पावकः (**अपसि**) कर्म्मणि (**स्वसृणाम्**) भगिनीनाम्॥११॥

अन्वयः-यथा पूर्वीरापो मेघेन वर्धन्ते तथा यशसो महाननिबाध उरावग्निं प्राप्य हि सं ववर्ध। यथाग्निर्ऋतस्य योनावशयत् तथा जामीनां स्वसृणामपसि स्थित्वा दमूना विद्यायां वर्धते॥११॥

भावार्थः-यदि निर्विघ्ना विद्यार्थिनो विद्याग्रहणप्रयत्नं कुर्युस्तदा दमशमादिगुणान्वितास्सन्तस्सर्वेषां सम्बन्धिनां विद्यासंप्रयोगं कर्त्तुं शक्नुयुः॥११॥

पदार्थः-जैसे (**पूर्वीः**) प्राचीन (**आपः**) जल मेघ से बढ़ते हैं, वैसे (**यशसः**) कीर्ति से (**महान्**) जो बड़ा है वह (**अनिबाधे**) बाधारहित (**उरौ**) बहुत व्यवहार में (**अग्निम्**) अग्नि को प्राप्त कर (**हि**) (**सम्, ववर्ध**) अच्छे प्रकार बढ़ता है, जैसे (**अग्निः**) पावक (**ऋतस्य**) जल के (**योनौ**) कारण में (**अशयत्**) सोता है, वैसे (**जामीनाम्**) भोगनेवाली (**स्वसृणाम्**) बहिनियों **[=बहिनों]** के (**अपसि**) कर्म में स्थिर होकर (**दमूनाः**) दमनशील जन विद्या में बढ़ता है॥११॥

भावार्थः-जो निर्विघ्न विद्यार्थी विद्या के ग्रहण करने में प्रयत्न करें तो दम और शमादि गुणयुक्त होते हुए सब सम्बन्धियों को विद्यायुक्त कर सकें॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अक्रो न बभ्रिः समिथे महीनां दिदृक्षेयः सूनवे भाऋजीकः।
उदुस्त्रिया जनिता यो जजानापां गर्भो नृतमो यह्वो अग्निः॥१२॥

अक्रः। न। बभ्रिः। सम्ऽइथे। महीनाम्। दिदृक्षेयः। सूनवे। भाःऽऋजीकः। उत्। उस्त्रियाः। जनिता। यः। जजान। अपाम्। गर्भः। नृऽतमः। यह्वः। अग्निः॥१२॥

पदार्थः-(**अक्रः**) केनापि प्रकारेण क्रमितुमयोग्यः (**न**) इव (**बभ्रिः**) धर्ता (**समिथे**) संग्रामे (**महीनाम्**) पूजनीयानां सेनानाम् (**दिदृक्षेयः**) द्रष्टुमिच्छायां साधुर्दर्शनीयः। अत्र **वाच्छन्दसी**ति ढः। (**सूनवे**) अपत्याय (**भाऋजीकः**) भाभिर्विद्यादीप्तिभिर्ऋजुः सरलः (**उत्**) (**उस्त्रियाः**) किरणैस्संयुक्तः (**जनिता**) उत्पादकः (**यः**) सूर्यः (**जजान**) जायते (**अपाम्**) जलानाम् (**गर्भः**) स्तोतुमर्हः (**नृतमः**) अतिशयेन नेता (**यह्वः**) महान् (**अग्निः**)॥१२॥

अन्वयः-योऽपां गर्भो यह्वोऽग्निरुस्रिया अपां जनिता भवतीव दिदृक्षेयो नृतम उज्जजान स सूनवे महीनां समिथे बभ्रिरक्रो न भाऋजीको भवति॥१२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा सूर्य्योऽपां गर्भं जनयित्वा मेघेन सह संयोध्य वृष्टिं कृत्वा सर्वान् वर्धयति तथाऽपत्यानां सुशिक्षकाः सर्वत्र विजयिनो भवन्ति॥१२॥

पदार्थः-**(यः)** जो सूर्य्य **(अपाम्)** जलों के बीच **(गर्भः)** स्तुति करने योग्य **(यह्वः)** महान् **(अग्निः)** अग्निरूप **(उस्रियाः)** किरणों से संयुक्त जलों का **(जनिता)** उत्पन्न करनेवाला होता है उसके **(दिदृक्षेयः)** देखने को चाहता मैं उत्तम **(नृतमः)** अतीव नेता सबका नायक **(उज्जजान)** उत्तमता से प्रकट होता है, वह **(सूनवे)** सन्तान के लिये **(महीनाम्)** पूजनीय सेनाओं के **(समिथे)** संग्राम के बीच **(बभ्रिः)** धारण करनेवाला **(अक्रः)** किसी प्रकार से आक्रमण करने को अयोग्य के **(न)** समान **(भाऋजीकः)** विद्यादीप्तियों से सरल होता है॥१२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य जलों के गर्भ को उत्पन्न कर तथा मेघ के साथ अच्छे प्रकार युद्ध कर जल वर्षा कर सबको बढ़ाता है, वैसे सन्तानों को शिक्षा देनेवाले सब जगह विजयी होते हैं॥१२॥

पुनर्विद्याप्रशंसामाह॥

फिर विद्या की प्रशंसा को अगले मन्त्र में कहा है॥

अपां गर्भं दर्शतमोषधीनां वना जजान सुभगा विरूपम्।

देवासश्चिन्मनसा सं हि जग्मुः पनिष्ठं जातं तवसं दुवस्यन्॥१३॥

अपाम्। गर्भम्। दर्शतम्। ओषधीनाम्। वना। जजान। सुऽभगा। विऽरूपम्। देवासः। चित्। मनसा। सम्। हि। जग्मुः। पनिष्ठम्। जातम्। तवसम्। दुवस्यन्॥१३॥

पदार्थः-**(अपाम्)** प्राणानाम् **(गर्भम्)** मध्यव्यापिनम् **(दर्शतम्)** द्रष्टव्यम् **(ओषधीनाम्)** **(वना)** वनानि जङ्गलानि **(जजान)** जनयति **(सुभगा)** सुष्ठ्वैश्वर्य्यप्रदानि **(विरूपम्)** विविधानि रूपाणि यस्मिँस्तम् **(देवासः)** विद्वांसः **(चित्)** अपि **(मनसा)** अन्तःकरणेन **(सम्)** **(हि)** खलु **(जग्मुः)** जानीयुः प्राप्नुयुर्वा **(पनिष्ठम्)** स्तोतुमर्हम् **(जातम्)** प्रसिद्धम् **(तवसम्)** बलकारकम् **(दुवस्यन्)** परिचरेयुः॥१३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! देवासो मनसाऽभ्यासेन चिदपामोषधीनां दर्शतं विरूपं गर्भं सं जग्मुः यो हि सुभगा वना जजान यं जातं तवसं पनिष्ठं दुवस्यन् तं सर्वव्यापकं विद्युद्रूपमग्निं यूयं यथावद्विजानीत॥१३॥

भावार्थः-मनुष्यैर्योऽग्निर्वाय्वप्सु पृथिव्यां शरीरौषध्यादिषु दृश्यादृश्यपदार्थेषु व्याप्तस्तं विज्ञाय तेन सर्वाणि कार्य्याणि साधनीयानि॥१३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(देवासः)** विद्वान् जन **(मनसा)** अन्तःकरण और अभ्यास से **(चित्)** भी

जिस **(अपाम्)** प्राण वा **(औषधीनाम्)** ओषधियों के बीच **(दर्शतम्)** देखने योग्य **(विरूपम्)** जिसमें विविध रूप विद्यमान उस **(गर्भम्)** मध्यव्यापी अग्नि को **(सम्, जग्मुः)** अच्छे प्रकार जानें वा प्राप्त हों तथा जो **(हि)** ही **(सुभगा)** सुन्दर ऐश्वर्य्य के देनेवाले **(वना)** वन वा जङ्गलों को **(जजान)** उत्पन्न करता है, जिस **(जातम्)** प्रसिद्ध **(तवसम्)** बल करनेवाले **(पनिष्ठम्)** स्तुति करने योग्य अग्नि को **(दुवस्यन्)** सेवन करें, उस [सर्वव्यापक] विद्युत् रूप अग्नि को तुम लोग यथावत् जानो॥१३॥

भावार्थः-मनुष्यों को उचित है कि जो अग्नि, वायु, जल और पृथिवी में तथा शरीर, ओषधि आदि प्रत्यक्ष परोक्षभूत पदार्थों में व्याप्त उसको जान, उससे सब कार्य्यों को सिद्ध करें॥१३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

बृहन्त इद्भानवो भाऋजीकमग्निं सचन्त विद्युतो न शुक्राः।
गुहेव वृद्धं सदसि स्वे अन्तरपार ऊर्वे अमृतं दुहानाः॥१४॥

बृहन्तः। इत्। भानवः। भाःऽऋजीकम्। अग्निम्। सचन्त। विऽद्युतः। न। शुक्राः। गुहाऽइव। वृद्धम्। सदसि। स्वे। अन्तः। अपारे। ऊर्वे। अमृतम्। दुहानाः॥१४॥

पदार्थः-**(बृहन्तः)** महान्तः **(इत्)** इव **(भानवः)** किरणदीप्तयः **(भाऋजीकम्)** भासु दीप्तिषु सरलम् **(अग्निम्)** पावकम् **(सचन्त)** सचन्ति समवयन्ति **(विद्युतः)** स्तनयित्नवः **(न)** इव **(शुक्राः)** शुद्धाः **(गुहेव)** यथा गुहायां बुद्धौ स्थितं जीवम् **(वृद्धम्)** विद्यावयोभ्यां ज्येष्ठम् **(सदसि)** सभायाम् **(स्वे)** स्वसम्बन्धिन्यौ **(अन्तः)** मध्ये **(अपारे)** अगाधे द्यावापृथिव्यौ। **अपारे इति द्यावापृथिवीनामसु पठितम्।** (निघं०३.३०)। **(ऊर्वे)** हिंसके **(अमृतम्)** कारणरूपेण नाशरहितं जलम् **(दुहानाः)** प्रपूरयन्तः॥१४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये बृहन्तोऽमृतन्दुहाना भानवो विद्युतो न शुक्राः सदसि वृद्धमिवात्मानं गुहेव भाऋजीकमग्निं सचन्त येऽपारे स्वे ऊर्वेऽभिव्याप्यान्तर्विराजेते तानिदेव विजानीत॥१४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। योऽग्निः सर्वत्र स्थितः सन् सूर्यभौमरूपेण प्रसिद्धो विद्युद्रूपेण गुप्तो मेघादिनिमित्तोऽस्ति तं विज्ञायाभीष्टं साधनीयम्॥१४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(बृहन्तः)** महान् **(अमृतम्)** कारणरूप से नाशरहित जल को **(दुहानाः)** पूर्ण करते हुए **(भानवः)** किरण वा दीप्ति **(विद्युतः)** बिजुलियों के **(न)** समान **(शुक्राः)** शुद्ध **(सदसि)** सभा में **(वृद्धम्)** विद्या और अवस्था से जो अतीव प्रशंसित उसके समान आत्मा को **(गुहेव)** बुद्धिस्थ जीव के समान **(भाऋजीकम्)** दीप्तियों में सरल **(अग्निम्)** अग्नि को **(सचन्त)** सम्बद्ध वा मेल करते हैं, जो **(अपारे)** अगाध द्यावापृथिवी **(स्वे)** निज सम्बन्ध करनेवाले **(ऊर्वे)** लोक सङ्घर्षण करनेवाले होकर **(अन्तः)** बीच में विराजमान हैं **(इत्)** उन्हीं को जानो॥१४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो अग्नि सर्वत्र स्थित सूर्य वा भौमरूप से प्रसिद्ध, बिजुली रूप से गुप्त, मेघादि पदार्थों का निमित्त है, उसको जानकर अभीष्ट सिद्ध करना चाहिये॥१४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ईळे॑ च त्वा॒ यज॑मानो ह॒विर्भि॒रीळे॑ सखि॒त्वं सु॑म॒तिं निका॑मः।
दे॒वैरवो॑ मिमीहि॒ सं ज॑रि॒त्रे रक्षा॑ च नो॒ दम्ये॑भि॒रनी॑कैः॥१५॥१५॥

ईळे॑। च॒। त्वा॒। यज॑मानः। ह॒विःऽभिः॑। ईळे॑। स॒खि॒ऽत्वम्। सु॒ऽम॒तिम्। निऽका॑मः। दे॒वैः। अवः॑। मि॒मी॒हि॒। सम्। ज॒रि॒त्रे। रक्ष॑। च॒। नः॒। दम्ये॑भिः। अनी॑कैः॥१५॥

पदार्थः-(**ईळे**) अध्येषयामि स्तौमि वा (**च**) (**त्वा**) त्वाम् (**यजमानः**) सङ्गन्ता (**हविर्भिः**) आदातुमर्हैः साधनैः (**ईळे**) (**सखित्वम्**) सख्युर्भावम् (**सुमतिम्**) शोभनां प्रज्ञाम् (**निकामः**) निश्चितकामनः (**देवैः**) विद्वद्भिः सह (**अवः**) रक्षणादिकम् (**मिमीहि**) सम्पादय (**सम्**) (**जरित्रे**) स्तावकाय (**रक्ष**)। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**च**) (**नः**) अस्मान् (**दम्येभिः**) दातुं योग्यैः (**अनीकैः**) सैन्यैः॥१५॥

अन्वयः-यजमानोऽहं देवैर्हविर्भिश्च तं त्वा विद्वांसं समीळे निकामः सन् सखित्वं सुमतिमीळे स त्वं जरित्रे मह्यमवो मिमीहि दम्येभिरनीकैर्नोऽस्माँश्च रक्ष॥१५॥

भावार्थः-मनुष्यैः प्रथमः श्रेष्ठोऽध्यापकोऽन्वेष्यस्तस्मात् सर्वेषाम्पदार्थानां विद्या अन्वेष्यास्ततो विचारः पुनः साक्षात्कारोऽतः परमुपयोगः कर्त्तव्यः॥१५॥

पदार्थः-(**यजमानः**) सब विद्या गुणों का सङ्ग करनेवाला मैं (**देवैः**) विद्वानों के साथ (**च**) और (**हविर्भिः**) ग्रहण करने योग्य साधनों से जिन (**त्वा**) आप विद्वानों की (**सम्, ईळे**) सम्यक् स्तुति करता हूं वा (**निकामः**) निश्चित कामनावाला होता हुआ (**सखित्वम्**) मित्रपन वा (**सुमतिम्**) सुन्दर बुद्धि की (**ईळे**) प्रशंसा करता हूँ, वह आप (**जरित्रे**) स्तुति करनेवाले मेरे लिये (**अवः**) रक्षा आदि को (**मिमीहि**) उत्पन्न करो (**दम्येभिः**) दमन करने योग्य (**अनीकैः**) सेनाजनों के साथ (**नः**) हम लोगों की (**च**) भी (**रक्ष**) रक्षा करो॥१५॥

भावार्थः-मनुष्यों को प्रथम श्रेष्ठ अध्यापक ढूंढना चाहिये और फिर उससे समस्त विद्याओं को ढूंढना चाहिये, तदनन्तर विचार, पीछे साक्षात्कार अर्थात् प्रत्यक्ष करना, उसके परे उपयोग करना चाहिये॥१५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उ॒प॒क्षे॒तार॒स्तव॑ सुप्रणी॒तेऽग्ने॒ विश्वा॑नि॒ धन्या॒ दधा॑नाः।

सुरेतसा श्रवसा तुञ्जमाना अभि ष्याम पृतनायूँरदेवान्॥ १६॥

उपऽक्षेतारः। तव। सुऽप्रनीते। अग्ने। विश्वानि। धन्या। दधानाः। सुऽरेतसा। श्रवसा। तुञ्जमानाः। अभि। स्याम। पृतनाऽयून्। अदेवान्॥ १६॥

पदार्थः-(**उपक्षेतारः**) उपगतान् द्वैधीकुर्वाणः (**तव**) (**सुप्रणीते**) सुष्ठु प्रकृष्टा नीतिर्यस्मात् तत्सम्बुद्धौ (**अग्ने**) पूर्णविद्यायुक्त (**विश्वानि**) (**धन्या**) धनार्हाणि (**दधानाः**) (**सुरेतसा**) सुष्ठु संश्लिष्टेन वीर्य्येण (**श्रवसा**) श्रवणेन (**तुञ्जमानाः**) बलायमानाः (**अभि**) (**स्याम**) भवेम (**पृतनायून्**) पृतनासु सेनासु पूर्णमायुर्येषान्तान् (**अदेवान्**) अविदुषः॥ १६॥

अन्वयः-हे सुप्रणीतेऽग्ने! तव सकाशाद्विद्वांसो भूत्वा पृतनायूनदेवानुपक्षेतारस्सुरेतसा श्रवसा विश्वानि धन्या दधानास्तुञ्जमानास्सन्तो वयं सुखिनोऽभि ष्याम॥ १६॥

भावार्थः-ये मनुष्या अविदुष उपेक्ष्य विदुषः सेवन्ते ते सर्वमैश्वर्य्यमाप्नुवन्ति॥ १६॥

पदार्थः-हे (**सुप्रणीते**) अपने से सुन्दर उत्तमोत्तम नीति को प्रकाश करनेवाले (**अग्ने**) पूर्णविद्यायुक्त! (**तव**) तुम्हारी उत्तेजना से विद्वान होकर (**पृतनायून्**) सेनाओं में पूर्ण आयु जिनकी विद्यमान उन (**अदेवान्**) अविद्वान् (**उपक्षेतारः**) समीप प्राप्त हुए जनों को छिन्न-भिन्न करनेवाले (**सुरेतसा**) सुन्दर संयुक्त वीर्य्य और (**श्रवसा**) श्रवण से (**विश्वानि**) समस्त (**धन्या**) धन के योग्य पदार्थों को (**दधानाः**) धारण करते और (**तुञ्जमानाः**) बल करते हुए हम लोग सुखी (**अभि, ष्याम**) सब ओर से होवें॥ १६॥

भावार्थः-जो मनुष्य अविद्वानों की उपेक्षा करके विद्वानों का सेवन करते हैं, वे सब ऐश्वर्य को प्राप्त होते हैं॥ १६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ देवानामभवः केतुरग्ने मन्द्रो विश्वानि काव्यानि विद्वान्।

प्रति मर्ताँ अवासयो दमूना अनु देवान् रथिरो यासि साधन्॥ १७॥

आ। देवानाम्। अभवः। केतुः। अग्ने। मन्द्रः। विश्वानि। काव्यानि। विद्वान्। प्रति। मर्तान्। अवासयः। दमूनाः। अनु। देवान्। रथिरः। यासि। साधन्॥ १७॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**देवानाम्**) विदुषां मध्ये (**अभवः**) भव (**केतुः**) ज्ञानवान् (**अग्ने**) तीव्रबुद्धे (**मन्द्रः**) आनन्दप्रदः (**विश्वानि**) (**काव्यानि**) कविभिर्निर्मितानि (**विद्वान्**) यो वेत्ति (**प्रति**) (**मर्त्तान्**) मनुष्यान् (**अवासयः**) वासय (**दमूनाः**) जितेन्द्रियः (**अनु**) (**देवान्**) विदुषः (**रथिरः**) प्रशस्ता रथा विद्यन्ते यस्य सः (**यासि**) प्राप्नोषि (**साधन्**) संसाध्नुवन्। अत्र व्यत्ययेन शप्॥ १७॥

अन्वयः-हे अग्ने! केतुर्मन्द्रो भवान् विश्वानि काव्यान्यधीत्य देवानां विद्वानाभवस्स दमूना रथिरः साधन् संस्त्वं मर्तान् देवान् प्रत्यावासयोऽनु यासि च॥१७॥

भावार्थः-यो विदुषाम्मध्ये स्थित्वा सर्वाणि शास्त्राण्यधीत्यान्यानध्यापयति स सर्वाणि सुखानि प्राप्नोति॥१७॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** तीव्रबुद्धिजन **(केतुः)** ज्ञानवान् **(मन्द्रः)** आनन्द के देनेवाले आप **(विश्वानि)** समस्त **(काव्यानि)** कवियों से निर्म्माण किये हुए शास्त्रों को अध्ययन कर **(देवानाम्)** देवों के बीच **(विद्वान्)** ज्ञानवान् **(आ, अभवः)** हो तथा **(दमूनाः)** जितेन्द्रिय **(रथिरः)** और प्रशंसित रथवाले **(साधन्)** साधना करते हुए आप **(मर्तान्)** मनुष्य जो **(देवान्)** विद्वान् उनके **(प्रति)** प्रति **(अवासयः)** निवास कराओ वा **(अनु, यासि)** उक्त मनुष्यों के प्रति अनुकूलता से प्राप्त होते हैं॥१७॥

भावार्थः-जो विद्वानों के बीच स्थिर हो सब शास्त्रों को अध्ययन कर औरों को अध्ययन कराता है, वह सब सुखों को प्राप्त होता है॥१७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

नि दुरोणे अमृतो मर्त्यानां राजा ससाद विदथानि साधन्।
घृतप्रतीक उर्विया व्यद्यौदग्निर्विश्वानि काव्यानि विद्वान्॥१८॥

नि। दुरोणे। अमृतः। मर्त्यानाम्। राजा। ससाद। विदथानि। साधन्। घृतऽप्रतीकः। उर्विया। वि। अद्यौत्। अग्निः। विश्वानि। काव्यानि। विद्वान्॥१८॥

पदार्थः-**(नि)** नितराम् **(दुरोणे)** गृहे **(अमृतः)** आत्मरूपेण मृत्युधर्मरहितः **(मर्त्यानाम्)** मनुष्याणाम् **(राजा)** न्यायाधीशः **(ससाद)** सीदेत् **(विदथानि)** विज्ञानानि **(साधन्)** साध्नुवन् **(घृतप्रतीकः)** घृतमाज्यं प्रतीकं प्रदीपकं यस्य सः **(उर्विया)** पृथिव्याम् **(वि)** **(अद्यौत्)** प्रकाशते **(अग्निः)** पावकः **(विश्वानि)** सर्वाणि **(काव्यानि)** कविभिः क्रान्तप्रज्ञैर्विद्वद्भिर्निर्मितानि **(विद्वान्)**॥१८॥

अन्वयः-योऽमृतो विद्वान् दुरोणे मर्त्यानां घृतप्रतीकोऽग्निरुर्विया व्यद्यौदिव विश्वानि विदथानि काव्यान्यधीत्य सर्वहितं साधन् मर्त्यानां राजा निषसाद सोऽस्माभिः सत्कर्त्तव्यः॥१८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽग्निः सूर्यरूपेण सर्वं प्रकाशयति तथा पूर्णविद्यो राजा धर्मेण प्रजाः संपाल्य विद्याः प्रकाशयति स सर्वैस्सत्कर्त्तव्यः कथन्न भवेत्?॥१८॥

पदार्थः-जो **(अमृतः)** आत्मरूप से मृत्युधर्मरहित **(विद्वान्)** विद्वान् **(दुरोणे)** घर में **(मर्त्यानाम्)** मनुष्यों के बीच **(घृतप्रतीकः)** घृत जिसका प्रकाश करनेवाला **(अग्निः)** वह अग्नि **(उर्विया)** पृथिवी पर **(वि, अद्यौत्)** विशेषता से प्रकाशित होते हुए के समान **(विश्वानि)** समस्त **(विदथानि)** विज्ञानों वा

(काव्यानि) विशेष आक्रमण करती हुई बुद्धियों वाले विद्वानों के बनाए शास्त्रों का अध्ययन कर सबका हित **(साधन्)** सिद्ध करते हुए मनुष्यों के बीच **(निषसाद)** स्थिर हो **[वह]** हम लोगों को सत्कार करने योग्य है॥१८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे अग्नि सूर्यरूप से सबको प्रकाशित करता है, वैसे पूर्ण विद्यायुक्त सभापति राजा धर्म से प्रजाजनों का अच्छे प्रकार पालन कर विद्याओं का प्रकाश करता है, वह सबको सत्कार करने योग्य कैसे न हो?॥१८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ नो गहि सख्येभिः शिवेभिर्महान् महीभिरूतिभिस्सरण्यन्।

अस्मे रयिं बहुलं सन्तरुत्रं सुवाचं भागं यशसं कृधी नः॥१९॥

आ। नः। गहि। सख्येभिः। शिवेभिः। महान्। महीभिः। ऊतिभिः। सरण्यन्। अस्मे इति। रयिम्। बहुलम्। सम्ऽतरुत्रम्। सुऽवाचम्। भागम्। यशसम्। कृधि। नः॥१९॥

पदार्थः-**(आ)** **(नः)** **(अस्मान्)** **(गहि)** प्राप्नुहि **(सख्येभिः)** सखिभिः कृतैः कर्म्मभिः **(शिवेभिः)** मङ्गलमयैः **(महान्)** **(महीभिः)** महतीभिः **(ऊतिभिः)** रक्षाभिः **(सरण्यन्)** प्राप्नुवन् **(अस्मे)** अस्मान् **(रयिम्)** श्रियम् **(बहुलम्)** पुष्कलम् **(सन्तरुत्रम्)** दुःखात् सम्यक् तारकम् **(सुवाचम्)** सुष्ठु वाग्निमित्तम् **(भागम्)** भजनीयम् **(यशसम्)** कीर्त्तिकारकम् **(कृधि)** कुरु। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(नः)** अस्मान्॥१९॥

अन्वयः-हे विद्वँस्त्वं शिवेभिः सख्येभिः सह नोऽस्माना गहि महीभिरूतिभिरस्मेऽस्मान् सरण्यन्महान् सन्तरुत्रं सुवाचं यशसं भागं बहुलं रयिम्प्राप्तान्नः कृधि॥१९॥

भावार्थः-यदि मनुष्यः सुमित्राणि प्राप्नुयात्तर्हि तं महती श्रीः कथं न प्राप्नुयात्॥१९॥

पदार्थः-हे विद्वान्! आप **(शिवेभिः)** मङ्गलमय **(सख्येभिः)** मित्रों के किये कर्म्मों के साथ **(नः)** हम लोगों को **(आ, गहि)** प्राप्त हूजिये **(महीभिः)** बड़ी-बड़ी **(ऊतिभिः)** रक्षाओं से **(अस्मे)** हम लोगों को **(सरण्यन्)** प्राप्त होते हुए **(महान्)** बड़े सज्जन आप **(सन्तरुत्रम्)** दुःख से अच्छे प्रकार तारनेवाले **(सुवाचम्)** सुन्दर वाणी के निमित्त **(यशसम्)** कीर्ति करनेवाले **(भागम्)** सेवन करने योग्य **(बहुलम्)** बहुत प्रकार के **(रयिम्)** पुष्कल धन को प्राप्त **(नः)** हम लोगों को **(कृधि)** कीजिये॥१९॥

भावार्थः-यदि मनुष्य सुन्दर मित्रों को प्राप्त हो तो उसको बड़ी लक्ष्मी कैसे न प्राप्त हो?॥१९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

एता ते अग्ने जनिमा सनानि प्र पूर्व्याय नूतनानि वोचम्।
महान्ति वृष्णे सवना कृतेमा जन्मंजन्मन् निहितो जातवेदाः॥२०॥

एता। ते। अग्ने। जनिम। सनानि। प्र। पूर्व्याय। नूतनानि। वोचम्। महान्ति। वृष्णे। सवना। कृता। इमा। जन्मन्ऽजन्मन्। निऽहितः। जातऽवेदाः॥२०॥

पदार्थः-(**एता**) एतानि (**ते**) तव (**अग्ने**) विद्वन् (**जनिम**) जन्मानि। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**सनानि**) कर्मभिः संभक्तानि (**प्र**) (**पूर्व्याय**) पूर्वैः कृताय (**नूतनानि**) नवीनानि (**वोचम्**) वदेयम् (**महान्ति**) (**वृष्णे**) बलाय (**सवना**) ऐश्वर्य्यसाधनानि (**कृता**) कृतानि (**इमा**) इमानि (**जन्मञ्जन्मन्**) जन्मनि जन्मनि (**निहितः**) संस्थितः (**जातवेदाः**) यो जातेषु पदार्थेषु विद्यते॥२०॥

अन्वयः-हे अग्ने! त एता जनिम सनानि नूतनानि महान्ति सवना जन्मन् जन्मन् कृतेमा सवना कर्माणि पूर्व्याय वृष्णे प्रवोचं तानि निहितो जातवेदास्त्वं शृणु॥२०॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यानि कर्माणि जीवैरनुष्ठेयानि क्रियन्ते करिष्यन्ते च तानि सर्वाणि सुखदुःखमिश्रफलानि भोक्तव्यानि भवन्ति॥२०॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) विद्वान्! (**ते**) आपके (**एता**) इन (**जनिम**) जन्मों को जो कि (**सनानि**) कर्मों से संसेवित वा (**नूतनानि**) नवीन (**महान्ति**) बड़े-बड़े (**सवना**) ऐश्वर्य्यसाधक कर्म्म (**जन्मन्जन्मन्**) जन्म-जन्म में (**कृता**) किये हुए तथा (**इमा**) इन ऐश्वर्य्यसाधक कर्म्मों को (**पूर्व्याय**) पूर्वजों से किये हुए (**वृष्णे**) बल के लिये (**प्र, वोचम्**) कहूँ, उनको (**निहितः**) अच्छे प्रकार स्थित (**जातवेदाः**) जो उत्पन्न हुए पदार्थों में विद्यमान आप सुनो॥२०॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो कर्म जीवों को करने योग्य, उनसे किये जाते और किये जायेंगे, वे सब सुख-दुःखमिश्रित फल भोगनेवाले होते हैं॥२०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

जन्मंजन्मन् निहितो जातवेदा विश्वामित्रेभिरिध्यते अजस्रः।
तस्य वयं सुमतौ यज्ञियस्यापि भद्रे सौमनसे स्याम॥२१॥

जन्मन्ऽजन्मन्। निऽहितः। जातऽवेदाः। विश्वामित्रेभिः। इध्यते। अजस्रः। तस्य। वयम्। सुऽमतौ। यज्ञियस्य। अपि। भद्रे। सौमनसे। स्याम॥२१॥

पदार्थः-(**जन्मञ्जन्मन्**) जन्मनि जन्मनि (**निहितः**) कर्म्मानुसारेण स्थापितः (**जातवेदाः**) यो जातेषु पदार्थेष्वजातः सन् विद्यते सः (**विश्वामित्रेभिः**) विश्वं सर्वं जगन्मित्रं येषान्तैः (**इध्यते**) प्रज्ञाप्यते प्रदीप्यते

वा **(अजस्रः)** निरन्तरः **(तस्य)** **(वयम्)** **(सुमतौ)** प्रशस्तप्रज्ञायाम् **(यज्ञियस्य)** यज्ञमर्हतः **(अपि)** **(भद्रे)** कल्याणकरे **(सौमनसे)** शोभनस्य मनसो भावे **(स्याम)** भवेम॥२१॥

अन्वयः-हे जीव! परमेश्वरेण जन्मन्जन्मन्निहितो जातवेदा विश्वामित्रेभिरजस्र इध्यते तस्य यज्ञियस्य सुमतौ भद्रे सौमनसे अपि वयं स्याम॥२१॥

भावार्थः-सर्वैर्मनुष्यैः प्रसिद्धे जगति सुखदुःखादीनि न्यूनाधिकानि दृष्ट्वा प्रागर्जितकर्मफलमनुमेयम्। यदि परमेश्वरः कर्मफलप्रदाता न भवेत् तर्हीयं व्यवस्थापि न सङ्गच्छेत्, तदर्थं सर्वैः श्रेष्ठां प्रतिज्ञामुत्पाद्य द्वेषादीनि विहाय सर्वैः सह सत्यभावेन वर्तितव्यम्॥२१॥

पदार्थः-हे जीव! परमेश्वर ने **(जन्मन्जन्मन्)** जन्म-जन्म में **(निहितः)** कर्मों के अनुसार संस्थापन किया **(जातवेदाः)** उत्पन्न हुए पदार्थों में न उत्पन्न हुए के समान वर्त्तमान **(विश्वामित्रेभिः)** समस्त संसार जिनका मित्र उन सज्जनों से **(अजस्रः)** निरन्तर **(इध्यते)** प्रबोधित कराया जाता **(तस्य)** उस **(यज्ञियस्य)** यज्ञ के योग्य होते हुए प्राणी की **(सुमतौ)** प्रशंसित प्रज्ञा में और **(भद्रे)** कल्याण करनेवाले व्यवहार में तथा **(सौमनसे)** सुन्दर मन के भाव में **(अपि)** भी हम लोग **(स्याम)** होवें॥२१॥

भावार्थः-सब मनुष्यों को प्रसिद्ध जगत् में सुखदुःखादि न्यून-अधिक फलों को देख कर पहिले जन्म में सञ्चित कर्म फल का अनुमान करना चाहिये। जो परमेश्वर कर्मफल का देनेवाला न हो तो व्यवस्था भी प्राप्त न हो, इसलिये सबको श्रेष्ठ बुद्धि उत्पन्न कर वैर आदि छोड़ सबके साथ सत्यभाव से वर्त्तना चाहिये॥२१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इमं यज्ञं सहसावन् त्वं नो देवत्रा धेहि सुक्रतो रराणः।
प्र यंसि होतर्बृहतीरिषो नोऽग्ने महि द्रविणमा यजस्व॥२२॥

इमम्। यज्ञम्। सहसाऽवन्। त्वम्। नः। देवऽत्रा। धेहि। सुक्रतो इति सुऽक्रतो। रराणः। प्र। यंसि। होतरिति। बृहतीः। इषः। नः। अग्ने। महि। द्रविणम्। आ। यजस्व॥२२॥

पदार्थः-**(इमम्)** **(यज्ञम्)** रागद्वेषरहितं न्यायदयामयम् **(सहसावन्)** प्रशस्तबलयुक्त **(त्वम्)** **(नः)** अस्माकम् **(देवत्रा)** देवेषु विद्वत्सु **(धेहि)** धर **(सुक्रतो)** श्रेष्ठप्रज्ञ **(रराणः)** दाता सन् **(प्र, यंसि)** यच्छसि **(होतः)** आदातः **(बृहतीः)** महतीः **(इषः)** अन्नादीनि **(नः)** अस्मभ्यम् **(अग्ने)** विद्वान् **(महि)** **(द्रविणम्)** धनम् **(आ)** **(यजस्व)** देहि॥२२॥

अन्वयः-हे सहसावन् सुक्रतो अग्ने! त्वं न इमं यज्ञं देवत्रा धेहि। हे होतरग्ने! रराणः सन् बृहतीरिषो नः प्रयंसि स महि द्रविणमा यजस्व॥२२॥

भावार्थः-ईश्वरेण विद्वानाज्ञाप्यते यावज्जीवं तावत्त्वं विद्यायज्ञं मनुष्येषु सुतनुहि तेन पुष्कलान्यन्नधनानि सर्वेभ्यो दत्वा सुखी भव॥२२॥

पदार्थः-हे **(सहसावन्)** प्रशस्त बल और **(सुक्रतो)** श्रेष्ठप्रज्ञायुक्त **(अग्ने)** विद्वान्! **(त्वम्)** आप **(नः)** हमारे **(इमम्)** इस **(यज्ञम्)** रागद्वेषरहित न्याय-दयामय यज्ञ को **(देवत्रा)** विद्वानों में **(धेहि)** स्थापन करें। वा हे **(होतः)** ग्रहण करने वाले विद्वान्! **(रराणः)** दाता होते हुए आप **(बृहतीः)** बड़ी-बड़ी **(इषः)** अन्नादि सामग्रियों को **(नः)** हम लोगों के लिये **(प्र, यंसि)** देते हैं, वह **(महि)** बहुत **(द्रविणम्)** धन को **(आ, यजस्व)** दीजिये॥२२॥

भावार्थः-ईश्वर ने विद्वान् को आज्ञा दी है कि जब तक जीवे तब तक तू विद्या यज्ञ को मनुष्यों में अच्छे प्रकार विस्तारे और पुष्कल अन्न और उससे धनों को सबके अर्थ दे के सुखी होवे॥२२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इळामग्ने पुरुदंसं सनिं गोः शश्वत्तमं हवमानाय साध।
स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावाऽग्ने सा ते सुमतिर्भूत्वस्मे॥२३॥१६॥

इळाम्। अग्ने। पुरुदंसम्। सनिम्। गोः। शश्वत्ऽतमम्। हवमानाय। साध। स्यात्। नः। सूनुः। तनयः। विजाऽवा। अग्ने। सा। ते। सुऽमतिः। भूतु। अस्मे इति॥२३॥

पदार्थः-**(इळाम्)** स्तुत्यां वाचम् **(अग्ने)** विद्वन् **(पुरुदंसम्)** पुरूणि दंसांसि कर्माणि भवन्ति यस्यास्ताम् **(सनिम्)** विभक्ताम् **(गोः)** वाचः **(शश्वत्तमम्)** अनादिभूतं शब्दार्थसम्बन्धम् **(हवमानाय)** आनन्दाय **(साध)** साध्नुहि। अत्र विकरणव्यत्ययेन शप्। **(स्यात्)** **(नः)** अस्माकम् **(सूनुः)** पुत्रः **(तनयः)** विस्तीर्णबुद्धिः **(विजावा)** विशेषेण प्रादुर्भूतः **(अग्ने)** विद्वन् **(सा)** **(ते)** **(सुमतिः)** उत्तमा प्रज्ञा **(भूतु)** भवतु **(अस्मे)** अस्मभ्यम्॥२३॥

अन्वयः-हे अग्ने! गोः शश्वत्तमं हवमानाय पुरुदंसं सनिमिळां त्वं साध। हे अग्ने! या ते सुमतिर्भवति साऽस्मे भूतु यया नो विजावा तनयः सूनुः स्यात्॥२३॥

भावार्थः-विदुषामियमेव योग्यतास्ति सर्वान् कुमारान् कुमारीश्च विदुषीः सम्पादयेत् यतः सर्वे विद्यायाः फलं प्राप्य सुमतयः स्युरिति॥२३॥

अत्र विद्वत्स्त्रीपुरुषविद्याजन्मप्रशंसाकरणादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति तृतीयमण्डले प्रथमं सूक्तं षोडशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वान् **(गोः)** वाणी का **(शश्वत्तमम्)** अनादि भूत शब्दार्थ सम्बन्ध **(हवमानाय)** आनन्द के लिये **(पुरुदंसम्)** जिससे बहुत कर्म बनते हैं **(सनिम्)** अलग-अलग की हुई **(इळाम्)** स्तुति करनेवाली वाणी को आप **(साध)** सिद्ध कीजिये। हे **(अग्ने)** विद्वान्! जो **(ते)** तुम्हारी

(सुमतिः) उत्तम बुद्धि होती है **(सा)** वह **(अस्मे)** हम लोगों के लिये **(भूतु)** हो, जिससे **(नः)** हमारे **(विजावा)** विशेष करके उत्पन्न भया [हुआ] हो ऐसा **(तनयः)** विस्तीर्ण बुद्धिवाला **(सूनुः)** पुत्र **(स्यात्)** हो॥२३॥

भावार्थः-विद्वानों को यही योग्यता है कि सब कुमार और कुमारियों को पण्डित-पण्डिता बनावें, जिससे सब विद्या के फल को प्राप्त होकर सुमति हों॥२३॥

इस सूक्त में विद्वान्-स्त्री-पुरुष और विद्या जन्म की प्रशंसा करने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्तार्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह तीसरे मण्डल में प्रथम सूक्त और सोलहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

वैश्वानरायेति पञ्चदशर्चस्य द्वितीयस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। अग्निर्वैश्वानरो देवता। १, ३, १० जगती। २, ४, ६, ८, ९, ११ विराड् जगती। ५, ७, १२-१५ निचृज्जगती च छन्दः। निषादः स्वरः॥

अथ विद्वद्गुणानाह॥

अब पन्द्रह ऋचावाले दूसरे सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में विद्वानों के गुणों का उपदेश किया है॥

वैश्वानराय धिषणामृतावृधे घृतं न पूतमग्नये जनामसि।
द्विता होतारं मनुषश्च वाघतो धिया रथं न कुलिशः समृण्वति॥ १॥

वैश्वानराय। धिषणाम्। ऋतऽवृधे। घृतम्। न। पूतम्। अग्नये। जनामसि। द्विता। होतारम्। मनुषः। च। वाघतः। धिया। रथम्। न। कुलिशः। सम्। ऋण्वति॥ १॥

पदार्थः-(**वैश्वानराय**) विश्वेषु नरेषु राजमानाय (**धिषणाम्**) प्रगल्भां धियम् (**ऋतावृधे**) सत्यस्य वर्द्धकाय (**घृतम्**) आज्यम् (**न**) इव (**पूतम्**) पवित्रम् (**अग्नये**) पावकाय (**जनामसि**) जनयेम। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम्। (**द्विता**) द्वयोर्भावः (**होतारम्**) दातारम् (**मनुषः**) मनुष्याः (**च**) (**वाघतः**) मेधावी। **वाघत इति मेधाविनामसु पठितम्।** (निघं०३.१५)। (**धिया**) प्रज्ञया कर्मणा वा (**रथम्**) यानम् (**न**) इव (**कुलिशः**) वज्रम्। **कुलिश इति वज्रनामसु पठितम्।** (निघं०२.२०)। (**सम्**) (**ऋण्वति**) प्राप्नोति। **ऋण्वतीति गतिकर्मासु पठितम्।** (निघं०२.१४)॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा वयमृतावृधे वैश्वानरायाग्नये पूतं घृतं न धिषणां जनामसि वाघतो धिया कुलिशो रथं न समृण्वति द्विता होतारं मनुषश्च समृण्वति तथा यूयमप्याचरत॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यथर्त्विजो घृतादिकं हविः संशोध्याग्नौ हवनेन पावकं वर्द्धयन्ति तथाध्यापकोपदेशकाः शिष्याणां श्रोतॄणां च प्रज्ञा वर्धयेयुर्यथा कुठारादिभिः साधनैर्यानानि रच्यन्ते तथा सुशिक्षाताडनैः शिष्या विद्यया संसृज्येरन्। यथाऽध्यापकाऽध्येतारौ प्रीत्या वर्त्तेते तथा सर्वैर्वर्त्तितव्यम्॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे हम लोग (**ऋतावृधे**) सत्य के बढ़ानेवाले (**वैश्वानराय**) समस्त मनुष्यों में प्रकाशमान (**अग्नये**) अग्नि के लिये (**पूतम्**) पवित्र (**घृतम्**) घृत के (**न**) समान (**धिषणाम्**) प्रगल्भ बुद्धि को (**जनामसि**) उत्पन्न करें (**वाघतः**) मेधावी जन (**धिया**) प्रज्ञा वा कर्म से (**कुलिशः**) वज्र (**रथम्**) रथ को (**न**) जैसे वैसे (**समृण्वति**) अच्छे प्रकार प्राप्त होता (**द्विता**) दो के होने (**होतारम्**) होमकर्ता मनुष्य (**च**) और (**मनुषः**) मनुष्यों को सम्यक् प्राप्त होता, वैसे ही तुम भी आचरण करो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जैसे ऋत्विग् जन घृत आदि हवि को अच्छे प्रकार शोध कर अग्नि में हवन करने से अग्नि की वृद्धि करते हैं, वैसे अध्यापक और

उपदेशक जन शिष्यों तथा श्रोताओं की बुद्धियों को बढ़ावें, जैसे कुल्हाड़ी आदि साधनों से काष्ठ छील कर यान बनाये जाते हैं, वैसे उत्तम शिक्षा और ताड़नाओं से शिष्य लोग [विद्या से] सम्पन्न किये जावें, जैसे अध्यापक और अध्येता प्रीति से वर्त्तमान हैं, वैसे सबको वर्त्तमान करना चाहिये॥१॥

अथ वह्निगुणानाह॥

अब अग्नि के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स रोचयज्जनुषा रोदसी उभे स मात्रोरभवत् पुत्र ईड्यः।
हव्यवाळग्निरजरश्चनोहितो दूळभो विशामतिथिर्विभावसुः॥२॥

सः। रोचयत्। जनुषा। रोदसी इति। उभे इति। सः। मात्रोः। अभवत्। पुत्रः। ईड्यः। हव्यऽवाट्। अग्निः। अजरः। चनःऽहितः। दुःऽदभः। विशाम्। अतिथिः। विभाऽवसुः॥२॥

पदार्थः-(**सः**) (**रोचयत्**)। अत्राडभावः। (**जनुषा**) जन्मना (**रोदसी**) सूर्य्यभूमी (**उभे**) (**सः**) (**मात्रोः**) (**अभवत्**) भवेत् (**पुत्रः**) (**ईड्यः**) स्तोतुमर्हः (**हव्यवाट्**) यो हव्यं वहति प्राप्नोति सः (**अग्निः**) (**अजरः**) जीर्णावस्थारहितः (**चनोहितः**) चनसे अन्नाय हितः (**दूळभः**) दुःखेन दभितुं योग्यः (**विशाम्**) प्रजानाम् (**अतिथिः**) सततं गन्ता (**विभावसुः**) यो विविधा भा वासयति सः॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा सोऽग्निर्जनुषा उभे रोदसी रोचयत्सोऽनयोर्मात्रोरीड्यः पुत्रइवाभवत्। योऽग्निर्हव्यवाडजरश्चनोहितो दूळभो विभावसुर्विशामतिथिरभवत्तं यथावद्विजानीत॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यदि ब्रह्मचर्य्येण विद्यासुशिक्षाः प्राप्य सत्पुत्रो जायते स भूम्याकाशयोर्मध्ये विराजमानः सूर्य्यइव सर्वेषां हितकारी स्यात्॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**सः**) वह (**अग्निः**) अग्नि (**जनुषा**) जन्म से अर्थात् उत्तेजना से (**उभे**) दोनों (**रोदसी**) सूर्य्य और भूमि को (**रोचयत्**) प्रकाशित करे और (**सः**) वह अग्नि (**मात्रोः**) इन मान करनेवाली सूर्य-भूमियों में (**ईड्यः**) स्तुति करने योग्य (**पुत्रः**) पुत्र के समान हो तथा जो (**अग्निः**) अग्नि (**हव्यवाट्**) हव्य पदार्थ को पहुंचानेवाला (**अजरः**) जीर्णावस्था रहित (**चनोहितः**) अन्नादि पदार्थों का हितकारी (**दूळभः**) दुःख से प्राप्त होने योग्य (**विभावसुः**) जो विविध प्रकार की कान्तियों का वसानेवाला (**विशाम्**) प्रजाओं के समीप (**अतिथिः**) निरन्तर पहुंचनेवाला हो, उसको यथावत् जानो॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो ब्रह्मचर्य से विद्या और उत्तम शिक्षाओं को प्राप्त सत्पुत्र हो, वह भूमि और आकाश के बीच विराजमान हो, सूर्य के समान सबका हितकारी हो॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

क्रत्वा दक्षस्य तरुषो विधर्मणि देवासो अग्निं जनयन्त चित्तिभिः।
रुरुचानं भानुना ज्योतिषा महामत्यं न वाजं सनिष्यन्नुप ब्रुवे॥ ३॥

क्रत्वा। दक्षस्य। तरुषः। विऽधर्मणि। देवासः। अग्निम्। जनयन्त। चित्तिभिः। रुरुचानम्। भानुना। ज्योतिषा। महाम्। अत्यम्। न। वाजम्। सनिष्यन्। उप। ब्रुवे॥ ३॥

पदार्थः-(**क्रत्वा**) क्रतुना प्रज्ञया वा (**दक्षस्य**) बलस्य (**तरुषः**) दुःखेभ्यः सन्तारकस्य (**विधर्मणि**) विविधं च तद्धर्म च तस्मिन् (**देवासः**) विद्यां कामयमानाः (**अग्निम्**) (**जनयन्त**) जनयेयुः (**चित्तिभिः**) इन्धनादीनां चयनक्रियाभिः (**रुरुचानम्**) शुम्भमानम् (**भानुना**) दीप्त्या (**ज्योतिषा**) तेजसा (**महाम्**) महान्तम्। अत्र **वाच्छन्दसी**ति नकारतकारलोपः सवर्णदीर्घत्वेनास्य सिद्धिः। (**अत्यम्**) अश्वम् (**न**) इव (**वाजम्**) वेगवन्तम् (**सनिष्यन्**) संभक्ष्यमाणः (**उप**) (**ब्रुवे**) उपदिशामि॥ ३॥

अन्वयः-यथा देवासः क्रत्वा दक्षस्य तरुषो विधर्मणि चित्तिभिर्भानुना रुरुचानं ज्योतिषा महां वाजमग्निमत्यं न जनयन्त तथैनं सनिष्यन्नहमन्यानुपब्रुवे॥ ३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यदि क्रियाकौशलेनाग्नेरुपकारं गृहीतुमिच्छेयुस्तर्ह्ययमत्यन्तं कार्य्यसाधको भवेत्॥ ३॥

पदार्थः-जैसे (**देवासः**) विद्या की कामना करनेवाले (**क्रत्वा**) बुद्धि वा कर्म से (**दक्षस्य**) बल (**तरुषः**) जो कि दुःखों से अच्छे प्रकार तारनेवाला उसके (**विधर्मणि**) विविध कर्म में (**चित्तिभिः**) इन्धन आदि की चयन क्रियाओं से (**भानुना**) जो प्रकाश उससे (**रुरुचानम्**) अत्यन्त दीप्तिमान् (**ज्योतिषा**) तेज से (**महाम्**) महान् (**वाजम्**) वेगवान् (**अग्निम्**) अग्नि को (**अत्यम्**) अश्व के (**न**) समान (**जनयन्त**) उत्पन्न करें, वैसे इस अग्नि को [(**सनिष्यन्**) सेवन करता हुआ] मैं औरों को (**उप, ब्रुवे**) उपदेश करता हूँ॥ ३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। यदि क्रिया कौशलता के साथ अग्नि से उपकार लिया चाहें तो अत्यन्त कार्य्यसिद्धि करनेवाला हो॥ ३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ मन्द्रस्य सनिष्यन्तो वरेण्यं वृणीमहे अह्रयं वाजमृग्मियम्।
रातिं भृगूणामुशिजं कविक्रतुमग्निं राजन्तं दिव्येन शोचिषा॥ ४॥

आ। मन्द्रस्य। सनिष्यन्तः। वरेण्यम्। वृणीमहे। अह्रयम्। वाजम्। ऋग्मियम्। रातिम्। भृगूणाम्। उशिजम्। कविऽक्रतुम्। अग्निम्। राजन्तम्। दिव्येन। शोचिषा॥ ४॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**मन्द्रस्य**) आनन्दप्रदस्य (**सनिष्यन्तः**) सं विभागं करिष्यन्तः (**वरेण्यम्**) वर्त्तुं स्वीकर्तुमर्हम् (**वृणीमहे**) स्वीकुर्महे (**अह्रयम्**) लज्जारहितम् (**वाजम्**) वेगवन्तम् (**ऋग्मियम्**) य

ऋग्भिर्मीयते प्रमीयते तम् **(रातिम्)** दातारम् **(भृगूणाम्)** अविद्यादाहकानाम् **(उशिजम्)** कमनीयम् **(कविक्रतुम्)** कवीनां क्रतुर्यज्ञइव प्रज्ञा यस्य तम् **(अग्निम्)** **(राजन्तम्)** प्रकाशमानम् **(दिव्येन)** शुद्धेन **(शोचिषा)** पवित्रेण स्वरूपेण॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा वयं मन्द्रस्य लाभायाह्रयं वाजमृग्मियं भृगूणां रातिमुशिजं दिव्येन शोचिषा राजन्तं कविक्रतुं वरेण्यमग्निं सनिष्यन्तो वयमावृणीमहे तथा यूयमप्येतं वृणुत॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यदि युक्त्या वह्निं सेवेरँस्तर्हि किं किं दिव्यं सुखं वस्तु वा न साधयेयुः॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे जिस **(मन्द्रस्य)** अच्छे प्रकार आनन्द देनेवाले के लाभ के लिये **(अह्रयम्)** लज्जारहित **(वाजम्)** वेगवान् **(ऋग्मियम्)** ऋचाओं से जिसका प्रक्षेप होता अर्थात् जिसमें क्रिया होती उस **(भृगूणाम्)** अविद्या जलानेवालों के **(रातिम्)** देनेवाले **(उशिजम्)** मनोहर **(दिव्येन)** शुद्ध और **(शोचिषा)** स्वरूप से **(राजन्तम्)** प्रकाशमान **(कविक्रतुम्)** कवियों के यज्ञ के समान उपकार जिसका उस **(वरेण्यम्)** स्वीकार करने योग्य **(अग्निम्)** अग्नि को **(सनिष्यन्तः)** बांटते हुए हम लोग **(आ, वृणीमहे)** अच्छे प्रकार स्वीकार करते हैं, वैसे तुम भी उसको स्वीकार करो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो युक्ति से अग्नि को सेवन करें तो क्या क्या दिव्य सुख वा वस्तु न सिद्ध करें?॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अ॒ग्निं सु॒म्नाय॑ दधिरे पु॒रो जना॒ वाज॑श्रवसमि॒ह वृ॒क्तब॑र्हिषः।
य॒तस्रु॑चः सु॒रुचं॑ वि॒श्वदे॑व्यं रु॒द्रं य॒ज्ञानां॒ साध॑दिष्टिम॒पसा॑म्॥५॥१७॥

अ॒ग्निम्। सु॒म्नाय॑। द॒धि॒रे॒। पु॒रः। जना॑ः। वाज॑ऽश्रवसम्। इ॒ह। वृ॒क्तऽब॑र्हिषः। य॒तऽस्रु॑चः। सु॒ऽरुच॑म्। वि॒श्वऽदे॑व्यम्। रु॒द्रम्। य॒ज्ञाना॑म्। साध॑त्ऽइष्टिम्। अ॒पसा॑म्॥५॥

पदार्थः-**(अग्निम्)** पावकम् **(सुम्नाय)** सुखाय **(दधिरे)** दध्युः **(पुरः)** पुरस्तात् **(जनाः)** मनुष्याः **(वाजश्रवसम्)** वाजो वेगः श्रवोऽन्नं यस्मात्तम् **(इह)** अस्मिन् वर्त्तमाने समये **(वृक्तबर्हिषः)** वृक्तं छेदितं धूमेन बर्हिरन्तरिक्षं यैस्ते ऋत्विजः **(यतस्रुचः)** यता गृहीताः स्रुचो यैस्ते **(सुरुचम्)** सुष्ठुदीप्तिम् **(विश्वदेव्यम्)** विश्वेषु देवेषु दिव्यपदार्थेषु भवम् **(रुद्रम्)** रोदयितारम् **(यज्ञानाम्)** **(साधदिष्टिम्)** साध्नुवन्तीष्टिर्येन तम् **(अपसाम्)** कर्मणाम्॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा यतस्रुचो वृक्तबर्हिषो जना इह सुम्नाय सुरुचं विश्वदेव्यं रुद्रं यज्ञानां साधदिष्टिमपसां वाजश्रवसमग्निं पुरो दधिरे तथाऽस्माभिरप्यनुष्ठेयम्॥५॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथर्त्विजो यज्ञेष्वग्निना वायुवृष्टिजलशोधनादीनि कर्माणि कुर्वन्ति तथा शिल्पिभिरपि पावकेन कार्य्याणि साधनीयानि॥५॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जैसे **(यतस्रुचः)** जिन्होंने यज्ञ करने की स्रुचा ग्रहण की और **(वृक्तबर्हिषः)** यज्ञ धूप से अन्तरिक्ष छेदन किया वे **(जनाः)** ऋत्विज् मनुष्य **(इह)** इस वर्त्तमान समय में **(सुम्नाय)** सुख के लिये **(सुरुचम्)** सुन्दर प्रकाशित **(विश्वदेव्यम्)** समस्त दिव्य पदार्थों में उत्पन्न हुए **(रुद्रम्)** किन्हीं को रुलानेवाले **(यज्ञानाम्)** यज्ञ कर्मों के **(साधदिष्टिम्)** हवन कर्म को जिससे सिद्ध करते वा अन्य **(अपसाम्)** कर्मों के बीच **(वाजश्रवसम्)** वेग और अन्न को सिद्ध करते उस **(अग्निम्)** अग्नि को **(पुरः)** प्रथम सब कर्मों से पहिले **(दधिरे)** धारण करते हैं, वैसे हम लोगों को भी अनुष्ठान करना चाहिये॥५॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे ऋत्विग् जन यज्ञों में अग्नि से वायु और वर्षा के जल की शुद्धि आदि काम करते हैं, वैसे शिल्पि आदि जनों को भी पावक अग्नि से कार्य सिद्ध करने चाहिये॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

पावकशोचे तव हि क्षयं परि होतर्यज्ञेषु वृक्तबर्हिषो नरः।
अग्ने दुव इच्छमानास आप्यमुपासते द्रविणं धेहि तेभ्यः॥६॥

पावकऽशोचे। तव। हि। क्षयम्। परि। होतः। यज्ञेषु। वृक्तऽबर्हिषः। नरः। अग्ने। दुवः। इच्छमानासः। आप्यम्। उप। आसते। द्रविणम्। धेहि। तेभ्यः॥६॥

पदार्थ:-**(पावकशोचे)** पावकस्याग्नेः शोचिर्दीप्तिरिव द्युतिर्यस्य तत्सम्बुद्धौ **(तव)** **(हि)** **(क्षयम्)** गृहम् **(परि)** सर्वतः **(होतः)** दातः **(यज्ञेषु)** **(वृक्तबर्हिषः)** ऋत्विजः **(नरः)** नेतारः **(अग्ने)** विद्वन् **(दुवः)** परिचरणम् **(इच्छमानासः)** **(आप्यम्)** आप्तुं प्राप्तुं योग्यम् **(उप)** **(आसते)** **(द्रविणम्)** धनं यशो वा **(धेहि)** **(तेभ्यः)**॥६॥

अन्वय:-हे पावकशोचे होतरग्ने! तव हि क्षयं यज्ञेषु दुव इच्छमानासो वृक्तबर्हिषो नर इव य आप्यमग्निमुपासते तेभ्यो द्रविणं त्वं परिधेहि॥६॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वन्! ये त्वत्सन्निधौ ये त्वामेव सेवमाना वह्निविद्यां याचते तान् प्रति इमामुपदिश येनैते धनाढ्याः स्युः॥६॥

पदार्थ:-हे **(पावकशोचे)** अग्नि के समान कान्तिवाले **(होतः)** दानशील **(अग्ने)** विद्वान्! **(तव)** आपके **(हि)** ही **(क्षयम्)** घर को **(यज्ञेषु)** यज्ञों में **(दुवः)** सेवन **(इच्छमानासः)** चाहते हुए **(वृक्तबर्हिषः)** ऋत्विग्जन **(नरः)** नायक सर्व शिरोमणि जनों के समान **(आप्यम्)** जो प्राप्त होने योग्य

अग्नि की **(उपासते)** उपासना करते हैं **(तेभ्य:)** उनके लिये **(द्रविणम्)** धन वा यश **(धेहि)** धरिये॥६॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वन्! जो तुम्हारे निकट तुम्हारे सेवा करते हुए अग्नि विद्या की याचना करते हैं, उनके प्रति इस विद्या का उपदेश कीजिये, जिससे वे धनाढ्य होवें॥६॥

अथाग्निविषयमाह॥

अब अग्नि विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ रोदसी अपृणदा स्वर्महज्जातं यदेनमपसो अधारयन्।
सो अध्वराय परि णीयते कविरत्यो न वाजसातये चनोहित:॥७॥

आ। रोदसी इति। अपृणत्। आ। स्व:। महत्। जातम्। यत्। एनम्। अपस:। अधारयन्। स:। अध्वराय। परि। नीयते। कवि:। अत्य:। न। वाजऽसातये। चन:ऽहित:॥७॥

पदार्थ:-**(आ)** **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ **(अपृणत्)** पूरयति **(आ)** **(स्व:)** सुखम् **(महत्)** **(जातम्)** **(यत्)** **(एनम्)** **(अपस:)** कर्मण: **(अधारयन्)** धारयन्तु **(स:)** **(अध्वराय)** अहिंसारूपयज्ञाय **(परि)** सर्वत: **(नीयते)** प्राप्यते **(कवि:)** क्रान्तदर्शन: **(अत्य:)** व्याप्तिशीलोऽश्व: **(न)** इव **(वाजसातये)** अन्नादीनां संविभागाय **(चनोहित:)** अन्नाय हितकारी॥७॥

अन्वय:-हे विद्वांसो! भवन्तो यथायं चनोहितो वाजसातयेऽत्यो न कविरग्नी रोदसी आपृणद् यन्महज्जातं स्वरापृणत् सोऽध्वराय परिणीयते तथैनमपसोऽधारयन्॥७॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। यो विद्युद्रपोऽग्निं सूर्यं पृथिवीन्तत्स्थानन्तरिक्षस्थांश्च प्रकाशयति यदि स यानेषु प्रयुज्येत तर्हि सर्वेषां हितकारी स्यात्॥७॥

पदार्थ:-हे विद्वानो! आप जैसे **(चनोहित:)** अन्न के लिये हित करानेवाला **(वाजसातये)** अन्नादि पदार्थों के विभाग करने को **(अत्य:)** जैसे व्याप्तिशील अर्थात् चालों में व्याप्ति रखनेवाला अश्व **(न)** वैसे **(कवि:)** चञ्चल देखा जाये ऐसा अग्नि **(रोदसी)** आकाश और पृथिवी **(आ, अपृणत्)** अच्छे प्रकार पूर्ण करता है वा **(यत्)** जिस **(महत्)** बहुत **(जातम्)** उत्पन्न हुए **(स्व:)** सुख को **(आ)** अच्छे प्रकार परिपूर्ण करता है **(स:)** वह **(अध्वराय)** अहिंसारूप यज्ञ के लिये **(परिणीयते)** प्राप्त किया जाता है, वैसे **(एनम्)** उक्त अग्नि को **(अपस:)** कर्म से **(अधारयन्)** धारण करें॥७॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो विद्युत् रूप अग्नि सूर्य, पृथिवी **[तथा]** उनमें स्थित और अन्तरिक्षस्थ पदार्थों को प्रकाशित करता है, यदि वह यानों में प्रयुक्त किया जाये तो सबका हितकारी हो॥७॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

नमस्यत हव्यदातिं स्वध्वरं दुवस्यत दम्यं जातवेदसम्।

रथीर्ऋतस्य बृहतो विचर्षणिरग्निर्देवानामभवत् पुरोहितः॥८॥

नमस्यत। हव्यऽदातिम्। सुऽअध्वरम्। दुवस्यत। दम्यम्। जातऽवेदसम्। रथीः। ऋतस्य। बृहतः। विऽचर्षणिः। अग्निः। देवानाम्। अभवत्। पुरःऽहितः॥८॥

पदार्थः-(**नमस्यत**) (**हव्यदातिम्**) हव्यानां दातिर्दानं येन तम् (**स्वध्वरम्**) शोभनोऽध्वरो यस्मात्तम् (**दुवस्यत**) सेवध्वम् (**दम्यम्**) दातुं शीलम् (**जातवेदसम्**) जातेषु विद्यमानम् (**रथीः**) प्रशस्तरथवान् (**ऋतस्य**) सत्यस्य (**बृहतः**) महतः कार्यस्य (**विचर्षणिः**) पश्यकः (**अग्निः**) पावकः (**देवानाम्**) विदुषाम् (**अभवत्**) भवति (**पुरोहितः**) पुर एनं दधाति सः॥८॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यो रथीर्ऋतस्य बृहतो विचर्षणिर्देवानां पुरोहितोऽग्निरभवत्तं हव्यदातिं स्वध्वरं दम्यं जातवेदसं नमस्यत दुवस्यत च॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो बृहद्विद्योऽहिंसको जितेन्द्रियः प्रशंसितो विदुषां मध्ये विद्वान् भवेत् स एव युष्माभिर्नमस्करणीयः सेवनीयश्च स्यात्॥८॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जो (**रथीः**) प्रशंसित रथवान् (**ऋतस्य**) सत्य (**बृहतः**) बड़े कार्य का (**विचर्षणिः**) देखनेवाला (**देवानाम्**) विद्वानों का (**पुरोहितः**) पहिले जिसको धारण करते [वह] (**अग्निः**) पवित्र करनेवाला (**अभवत्**) होता है, और (**हव्यदातिम्**) होमने योग्य पदार्थों का देनेवाला (**स्वध्वरम्**) जिससे कि सुन्दर यज्ञ होता उस (**दम्यम्**) दानशील (**जातवेदसम्**) और उत्पन्न हुए पदार्थों से विद्यमान विद्वान् को (**नमस्यत**) नमस्कार करो और उसकी (**दुवस्यत**) सेवा करो॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो बहुत विद्यावाला, अहिंसक, जितेन्द्रिय, विद्वानों के बीच विद्वान् हो, वही तुम लोगों को नमस्कार करने और सेवने योग्य भी हो॥८॥

अथाग्निविषयमाह॥

अब अग्नि के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तिस्रो यह्वस्य समिधः परिज्मनोऽग्नेरपुनन्नुशिजो अमृत्यवः।

तासामेकामदधुर्मर्त्ये भुजमु लोकमु द्वे उप जामिमीयतुः॥९॥

तिस्रः। यह्वस्य। सम्ऽइधः। परिऽज्मनः। अग्नेः। अपुनन्। उशिजः। अमृत्यवः। तासाम्। एकाम्। अदधुः। मर्त्ये। भुजम्। ऊम् इति। लोकम्। ऊम् इति। द्वे इति। उप। जामिम्। ईयतुः॥९॥

पदार्थः-(**तिस्रः**) त्रिप्रकारकाणि विद्युद्भौमसूर्यरूपेण स्थितानि ज्योतींषि (**यह्वस्य**) महतः (**समिधः**) सम्यक् प्रदीप्ताः (**परिज्मनः**) परितः सर्वतो व्याप्तस्य (**अग्नेः**) (**अपुनन्**) (**उशिजः**)

कमनीयाः **(अमृत्यवः)** मृत्युभयरहिताः **(तासाम्)** **(एकाम्)** **(अदधुः)** **(मर्त्ये)** मर्त्यलोके **(भुजम्)** पालिकाम् (उ) वितर्के **(लोकम्)** द्रष्टव्यम् (उ) **(द्वे)** **(उप)** **(जामिम्)** जायमानम् **(ईयतुः)** प्राप्नुतः॥९॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यह्वस्य परिज्मनोऽग्नेर्या उशिजोऽमृत्यवस्तिस्रः समिधः सर्वानपुनन् तासामेकां मर्त्येऽदधुर्द्वे भुजं लोकमु जामिमुपेयतुस्ता यथावद्विजानीत॥९॥

भावार्थः-यदि मनुष्यास्त्रिविधमग्निं विदित्वोपर्यधस्थानि प्रयोजनानि साधयितुं प्रवर्त्तेरँस्तर्हि तेषां किमपि कार्यमसाध्यन्न स्यात्॥९॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यह्वस्य)** महान् **(परिज्मनः)** सर्वत्र व्याप्त **(अग्नेः)** अग्नि की जो **(उशिजः)** मनोहर **(अमृत्यवः)** मृत्यु धर्मरहित **(तिस्रः)** तीन प्रकार बिजुली, भूमिगत और सूर्यरूप से स्थित ज्योतिः **(समिधः)** सम्यक् प्रदीप्त लपटें हैं, वे सबको **(अपुनन्)** पवित्र करती हैं **(तासाम्)** उनमें से (उ) ही **(एकाम्)** एक को **(मर्त्ये)** मनुष्य लोक में **(अदधुः)** स्थापन करते हैं **(द्वे)** शेष दो **(भुजम्)** पालनेवाली पृथ्वी तथा **(लोकम्)** देखने योग्य लोक के समूह को (उ) और **(जामिम्)** जायमान वस्तुमात्र को **(उपेयतुः)** प्राप्त होती हैं, उनको अच्छे प्रकार जानो॥९॥

भावार्थः-जो मनुष्य तीन प्रकार के अग्नि को जान के ऊपर-नीचे स्थित जो प्रयोजन उन को सिद्ध करने को प्रवृत्त हों तो उनको कोई काम असाध्य न हो॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

विशां कविं विश्पतिं मानुषीरिषः सं सीमकृण्वन्त्स्वधितिं न तेजसे।
स उद्वतो निवतो याति वेविषत्स गर्भमेषु भुवनेषु दीधरत्॥१०॥१८॥

विशाम्। कविम्। विश्पतिम्। मानुषीः। इषः। सम्। सीम्। अकृण्वन्। स्वऽधितिम्। न। तेजसे। सः। उत्ऽवतः। निऽवतः। याति। वेविषत्। सः। गर्भम्। एषु। भुवनेषु। दीधरत्॥१०॥

पदार्थः-**(विशाम्)** प्रजानाम् **(कविम्)** क्रान्तप्रज्ञम् **(विश्पतिम्)** प्रजापालकम् **(मानुषीः)** मनुष्याणामिमाः **(इषः)** इच्छा **(सम्)** **(सीम्)** सर्वतः **(अकृण्वन्)** **(स्वधितिम्)** वज्रम् **(न)** इव **(तेजसे)** **(सः)** **(उद्वतः)** उपरिस्थितान् मार्गान् **(निवतः)** न्यग्भूतानधस्थान् **(याति)** गच्छति **(वेविषत्)** भृशं व्याप्नोति **(सः)** **(गर्भम्)** **(एषु)** **(भुवनेषु)** स्थित्यधिकरणेषु **(दीधरत्)** धारयति॥१०॥

अन्वयः-ये विशां कविं विश्पतिं मानुषीरिषस्तेजसे स्वधितिं न सीमकृण्वन् स उद्वतो निवतो संयाति स एषु भुवनेषु वेविषद् गर्भं दीधरत्॥१०॥

भावार्थः-यथा गर्भोऽदृश्यो भवति तथा वह्निरपि सर्वेषु पदार्थेषु वर्त्तते यदि मनुष्या इमं साधकं कुर्युस्तर्ह्येतद्युक्तेन यानैर्भूम्याकाशमार्गानध ऊर्ध्वगतींश्च कर्तुं शक्नुयुः प्रजाश्च पालयितुम्॥१०॥

पदार्थः-जिस **(विशाम्)** प्रजाओं में **(कविम्)** प्रविष्ट बुद्धिवाले **(विश्पतिम्)** प्रजापालक विद्वान् को **(मानुषीः)** मनुष्यों की **(इषः)** इच्छा **(तेजसे)** तेज के लिये **(स्वधितिम्)** वज्र के **(न)** समान **(सीम्)** सब ओर से **(अकृण्वन्)** परिपूर्ण करती है **(सः)** वह **(उद्वतः)** ऊपर से और **(निवतः)** नीचे के मार्गों को **(संयाति)** अच्छे प्रकार जाता है और **(सः)** वह **(एषु)** इन **(भुवनेषु)** स्थिति करने के आधार रूप लोकलोकान्तरों में **(वेविषत्)** निरन्तर व्याप्त होता है और **(गर्भम्)** गर्भ को **(दीधरत्)** धारण करता है॥१०॥

भावार्थः-जैसे गर्भ अदृश्य होता है, वैसे अग्नि भी सब पदार्थों में वर्त्तमान है। जो मनुष्य इसको साधक करें तो इस अग्नि से युक्त यानों से भूमि और आकाश मार्गों को और नीचे ऊपरली गतियों को कर सकें और प्रजा भी पाल सकें॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स जिन्वते जठरेषु प्रजज्ञिवान् वृषा चित्रेषु नानदन्न सिंहः।
वैश्वानरः पृथुपाजा अमर्त्यो वसु रत्ना दयमानो वि दाशुषे॥११॥

सः। जिन्वते। जठरेषु। प्रजज्ञिऽवान्। वृषा। चित्रेषु। नानदत्। न। सिंहः। वैश्वानरः। पृथुऽपाजाः। अमर्त्यः। वसु। रत्ना। दयमानः। वि। दाशुषे॥११॥

पदार्थः-**(सः)** **(जिन्वते)** पृणाति **(जठरेषु)** उदरेषु **(प्रजज्ञिवान्)** प्रजातः सन् **(वृषा)** वीर्य्यकारी **(चित्रेषु)** अद्भुतेषु **(नानदत्)** भृशं शब्दयति **(न)** इव **(सिंहः)** **(वैश्वानरः)** सर्वेषां नायकः **(पृथुपाजाः)** विस्तीर्णबलः **(अमर्त्यः)** मरणधर्मरहितः **(वसु)** धनानि **(रत्ना)** रमणीयानि हीरकादीनि **(दयमानः)** ददन् सन् **(वि)** **(दाशुषे)** दात्रे॥११॥

अन्वयः-मनुष्यैर्यो जठरेषु प्रजज्ञिवान् चित्रेषु वृषा पृथुपाजा अमर्त्यो वैश्वानरो दाशुषे रत्ना वसु दयमानः सिंह इव न नानदत् स सर्वान् विजिन्वते इति विज्ञातव्यम्॥११॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। मनुष्यैर्वह्न्यावद्भुतान् गुणकर्मस्वभावान् विदित्वा अतुलाः श्रियः संपाद्य सन्मार्गेषु दातृभ्यो देयाः। यदि जाठराग्निः शान्तः स्यात्तर्हि जीवनं कस्यापि न संभवेन्न चैतेन विना बलमपि कश्चित्प्राप्नोति॥११॥

पदार्थः-मनुष्यों को उचित है कि जो **(जठरेषु)** उदरों में **(प्रजज्ञिवान्)** प्रबलता से उत्पन्न होता हुआ **(चित्रेषु)** अद्भुत स्थानों में **(वृषा)** वीर्य करनेवाला **(पृथुपाजाः)** विस्तीर्ण बलवान् **(अमर्त्यः)** मरणधर्मरहित **(वैश्वानरः)** सबका नायक **(दाशुषे)** दान करानेवाले के लिये **(रत्ना)** रमणीय हीरा आदि मणिरूप **(वसु)** धन को **(दयमानः)** देता हुआ **(सिंहः)** सिंह के समान **(न, नानदत्)** निरन्तर शब्द नहीं करता है **(सः)** वह सबको **(वि, जिन्वते)** विशेषता से तृप्त करता है, ऐसा जानें॥११॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। मनुष्यो को अग्नि में अद्भुत गुण, कर्म, स्वभावों को जान के अतुल लक्ष्मियों को सिद्ध कर अच्छे मार्गों में देनेवालों को देनी चाहिये। जो जाठराग्नि शान्त हो तो किसी के जीवन का सम्भव न हो और न इसके बिना बल भी कोई पा सकता है॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

वैश्वानरः प्रत्नथा नाकमारुहद् दिवस्पृष्ठं भन्दमानः सुमन्मभिः।
स पूर्ववज्जनयञ्जन्तवे धनं समानमज्मं पर्येति जागृविः॥१२॥

वैश्वानरः। प्रत्नऽथा। नाकम्। आ। अरुहत्। दिवः। पृष्ठम्। भन्दमानः। सुमन्मऽभिः। सः। पूर्वऽवत्। जनयन्। जन्तवे। धनम्। समानम्। अज्मम्। परि। एति। जागृविः॥१२॥

पदार्थ:-**(वैश्वानरः)** पावकः **(प्रत्नथा)** प्रत्नः प्राक्तन इव **(नाकम्)** **(आ)** **(अरुहत्)** आरोहति **(दिवः)** दिव्यस्याकाशस्य **(पृष्ठम्)** परभागम् **(भन्दमानः)** कल्याणं कुर्वाणः **(सुमन्मभिः)** सुष्ठुविचारैः **(सः)** **(पूर्ववत्)** **(जनयत्)** जनयति **(जन्तवे)** प्राणिने **(धनम्)** **(समानम्)** तुल्यम् **(अज्मम्)** अजन्ति गच्छन्ति यस्मिन्मार्गे तत् **(परि)** **(एति)** सर्वतः प्राप्नोति **(जागृविः)** सदा जाग्रदिव॥१२॥

अन्वयः-यो भन्दमानो जागृविरिव वैश्वानरः प्रत्नथा दिवः पृष्ठं नाकमारुहत् योऽज्मम्पर्य्येति जन्तवे समानं धनं पूर्ववज्जनयन् स सर्वैर्विद्वद्भिस्सुमन्मभिर्विज्ञेयः॥१२॥

भावार्थ:-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। नह्ययमग्निरपूर्वोऽस्ति योऽतीतेषु कल्पेषु यादृशोऽभूत्तादृश एवेदानीं वर्तते भविष्यत्काले भविष्यति च यद्ययं सर्वेषां प्रकाशक इव रवियोगेन कार्यकारी वर्त्तते तर्हि स यथावत् विज्ञातः प्रयुक्तश्च सन् मङ्गलप्रदो भवति॥१२॥

पदार्थ:-जो **(भन्दमानः)** कल्याण को करता हुआ **(जागृविः)** जागता सा **(वैश्वानरः)** अग्नि **(प्रत्नथा)** पुरातनों के समान **(दिवः)** दिव्य आकाश के समान **(पृष्ठम्)** पर भाग **(नाकम्)** स्वर्ग सुख भोग विशेष को **(आरुहत्)** चढ़ता है जो **(अज्मम्)** गमन होनेवाले मार्ग में **(पर्य्येति)** सब ओर से जाता है **(जन्तवे)** वा प्राणी के लिये **(समानम्)** तुल्य **(धनम्)** धन को **(पूर्ववत्)** पूर्व के समान **(जनयन्)** उत्पन्न करता है **(सः)** वह **(सुमन्मभिः)** समस्त उत्तम विचारवाले विद्वानों को विशेषता से जानने योग्य है॥१२॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। यह अग्नि अपूर्व नहीं है, जो व्यतीत हुए कल्पों में जैसा हुआ वैसा ही अब वर्त्तमान है, भविष्यकाल में भी होगा। यदि यह सबका प्रकाशक के समान रवि के योग से कार्यकारी वर्त्तमान है तो वह यथावत् जाना और प्रयोग किया हुआ मङ्गल का अच्छे प्रकार देनेवाला होता है॥१२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ऋतावानं यज्ञियं विप्रमुक्थ्य१मा यं दुधे मातरिश्वा दिवि क्षयम्।
तं चित्रयामं हरिकेशमीमहे सुदीतिमग्निं सुविताय नव्यसे॥ १३॥

ऋतऽवानम्। यज्ञियम्। विप्रम्। उक्थ्यम्। आ। यम्। दुधे। मातरिश्वा। दिवि। क्षयम्। तम्। चित्रऽयामम्। हरिऽकेशम्। ईमहे। सुऽदीतिम्। अग्निम्। सुविताय। नव्यसे॥ १३॥

पदार्थः-(**ऋतावानम्**) सत्यकारणमयम् (**यज्ञियम्**) यज्ञसम्पादकम् (**विप्रम्**) मेधाविनम् (**उक्थ्यम्**) प्रशंसनीयम् (**आ**) (**यम्**) (**दधे**) दधाति (**मातरिश्वा**) यो मातर्य्यन्तरिक्षे श्वसिति (**दिवि**) दिव्ये आकाशे (**क्षयम्**) निवसितारम् (**तम्**) (**चित्रयामम्**) चित्रा अद्भुता यामाः प्रहरा यस्मात् यद्वा चित्रं यामं प्रापणं यस्य तम् (**हरिकेशम्**) हरयो हरणशीलाः केशा रश्मयो यस्य तम् (**ईमहे**) याचामहे (**सुदीतिम्**) सुष्ठु दीतिः क्षयो यस्मात् तम् (**अग्निम्**) पावकम् (**सुविताय**) अभिषवाय (**नव्यसे**) नूतनाय॥ १३॥

अन्वयः-यं ऋतावानं यज्ञियमुक्थ्यं दिवि क्षयं चित्रयामं सुदीतिं हरिकेशमग्निं नव्यसे सुविताय मातरिश्वाऽऽदधे तं यो जानाति तं विप्रं वयमीमहे॥ १३॥

भावार्थः-वह्नेर्निमित्तकारणं धर्ता वायुः प्रवर्त्तते यत्रान्तरिक्षे वायुरस्ति तत्रैव पावकः। यस्मात्प्रलयः प्रभवति येन च यज्ञाः सिद्धा भवन्ति तमद्भुतगुणकर्मस्वभावमग्निं नवीनताविद्या- फलाप्तये विद्वांसोऽन्विच्छन्तु॥ १३॥

पदार्थः-(**यम्**) जिस (**ऋतावानम्**) सत्यकारणमय (**यज्ञियम्**) यज्ञसम्पादक (**उक्थ्यम्**) प्रशंसा करने योग्य (**दिवि**) दिव्य आकाश में (**क्षयम्**) निवास करते हुए (**चित्रयामम्**) चित्र-विचित्र अद्भुत प्रहर जिसमें होते हैं वा चित्र-विचित्र याम प्राप्ति जिसकी वा (**सुदीतिम्**) सुन्दर दान जिससे होता उस (**हरिकेशम्**) हरणशील रश्मियों वाले (**अग्निम्**) अग्नि को (**नव्यसे**) नवीन (**सुविताय**) अभिषव के लिये (**मातरिश्वा**) अन्तिरिक्ष में सोनेवाला वायु (**आ, दधे**) अच्छे प्रकार धारण करता है (**तम्**) उसे जो जानता है उस (**विप्रम्**) मेधावी पुरुष को हम लोग (**ईमहे**) याचते हैं॥ १३॥

भावार्थः-अग्नि के निमित्त कारण को धारण करनेवाला वायु वर्त्तमान है। जिस अन्तरिक्ष में वायु है वहीं अग्नि भी है। जिससे प्रलय होता है वा यज्ञ सिद्ध होते हैं, उस अद्भुत गुण, कर्म, स्वभाववाले अग्नि को नवीनता और विद्या प्राप्ति के लिये विद्वान् जन ढूंढे॥ १३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

शुचिं न यामन्निषिरं स्वर्दृशं केतुं दिवो रोचनस्थामुषर्बुधम्।
अग्निं मूर्धानं दिवो अप्रतिष्कुतं तमीमहे नमसा वाजिनं बृहत्॥ १४॥

शुचिम्। न। यामन्। इषिरम्। स्वःऽदृशम्। केतुम्। दिवः। रोचनऽस्थाम्। उषःऽबुधम्। अग्निम्। मूर्धानम्। दिवः। अप्रतिऽस्कुतम्। तम्। ईमहे। नमसा। वाजिनम्। बृहत्॥ १४॥

पदार्थः-(**शुचिम्**) पवित्रं शुद्धिकरम् (**न**) इव (**यामन्**) यान्ति गच्छन्ति यस्मिन् मार्गे (**इषिरम्**) एष्टव्यम् (**स्वर्दृशम्**) स्वः सुखं दृश्यते यस्मात्तम् (**केतुम्**) रूपादिप्रापकम् (**दिवः**) प्रकाशस्य (**रोचनस्थाम्**) रोचने प्रदीप्ते तिष्ठति तम् (**उषर्बुधम्**) य उषसि बोधयति तम् (**अग्निम्**) वह्निम् (**मूर्द्धानम्**) आकर्षणेन बद्धारम् (**दिवः**) दिव्याकाशस्य मध्ये (**अप्रतिष्कुतम्**) इतस्ततो लोकान्तरस्याभितो भ्रमणरहितम् (**तम्**) (**ईमहे**) (**नमसा**) सत्कारेण (**वाजिनम्**) बहुवेगवन्तम् (**बृहत्**) महान्तम्। अत्र **सुपां सुलुगिति** अमो लुक्॥ १४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! वयं विदुषां सकाशान्नमसा शुचिं न यामन्निषिरं स्वर्दृशं केतुं दिवो रोचनस्थामुषर्बुधं दिवो मूर्द्धानमप्रतिष्कुतं बृहद्वाजिनमग्निमीमहे तं तेभ्यो यूयमपि याचत॥ १४॥

भावार्थः-मनुष्यैराप्तेभ्यो विद्वद्भ्योऽग्न्यादिविद्याः प्राप्तव्याः। यो यस्माद्विद्या जिघृक्षन्तं सततं सत्कुर्य्यात्। सूर्यः कस्यापि लोकस्य परिक्रमणं न करोति सर्वेभ्यो महांश्च॥ १४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! हम लोग विद्वानों की उत्तेजना से (**नमसा**) सत्कार से जिस (**शुचिम्**) पवित्र और पवित्र करनेवाले के (**न**) समान (**यामन्**) जिससे गमन करते हैं, उस मार्ग में (**इषिरम्**) इच्छा करने योग्य (**स्वर्दृशम्**) जिससे कि सुख दीखता है उस (**केतुम्**) रूपादि प्रापक (**दिवः**) प्रकाश के बीच (**रोचनस्थाम्**) उजाले में स्थित होने (**उषर्बुधम्**) प्रातःकाल बोध दिलाने और (**दिवः**) दिव्य आकाश के बीच (**मूर्द्धानम्**) खींचने से बांधने (**अप्रतिष्कुतम्**) इधर-उधर से लोकान्तर के चारों ओर से भ्रमण रहित (**बृहत्**) महान् (**वाजिनम्**) बहुत वेगवाले (**अग्निम्**) अग्नि को (**ईमहे**) याचते हैं (**तम्**) उस अग्नि को उन हम लोगों से तुम भी चाहो वा मांगो॥ १४॥

भावार्थः-मनुष्यों को आप्त विद्वानों से अग्न्यादि विद्या प्राप्त करनी चाहिये। जो जिससे विद्या ग्रहण की इच्छा करे वह उसका निरन्तर सत्कार करे, सूर्य किसी लोक का परिक्रमण नहीं करता और सबसे बड़ा भी है॥ १४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

मन्द्रं होतारं शुचिमद्वयाविनं दमूनसमुक्थ्यं विश्वचर्षणिम्।

रथं न चित्रं वपुषाय दर्शतं मनुर्हितं सदमिद्राय ईमहे॥ १५॥ १९॥

मन्द्रम्। होतारम्। शुचिम्। अद्वयाविनम्। दमूनसम्। उक्थ्यम्। विश्वऽचर्षणिम्। रथम्। न। चित्रम्। वपुषाय। दर्शतम्। मनुःऽहितम्। सदम्। इत्। रायः। ईमहे॥ १५॥

पदार्थः-(**मन्द्रम्**) आनन्दप्रदम् (**होतारम्**) आदातारम् (**शुचिम्**) पवित्रम् (**अद्वयाविनम्**) यो द्वयोर्न विद्यते तं सरलगामिनम् (**दमूनसम्**) दमनशीलम् (**उक्थ्यम्**) प्रशंसनीयम् (**विश्वचर्षणिम्**) सर्वेषां दर्शकम् (**रथम्**) दृढं रमणीयं यानम् (**न**) इव (**चित्रम्**) अद्भुतम् (**वपुषाय**) वपूंषि रूपाणि विद्यन्ते यस्मिंस्तस्मै व्यवहाराय। अत्र **अर्श आदिभ्यो**ऽजिति वेद्यम्। (**दर्शतम्**) द्रष्टुं योग्यम् (**मनुर्हितम्**) मनुष्याणां हितकारकम् (**सदम्**) अवस्थितम् (**इत्**) एव (**रायः**) धनानि (**ईमहे**) याचामहे॥१५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! वयं यं होतारं मन्द्रं दमूनसमुक्थ्यं शुचिं विश्वचर्षणिं मनुर्हितं विद्वांसं प्राप्य रथं न चित्रं वपुषाय दर्शतं सदमद्वयाविनं वह्निमीमहे तेन राय ईमहे तमिद्यूयमपि याचत॥१५॥

भावार्थः-यदि दान्तानां विदुषां संनिधौ स्थित्वा वह्निविद्यां जानीयुस्तर्हि मनुष्याः किं किं धनं न प्राप्नुयुरिति॥१५॥

अत्र विद्वद्वह्निगुणवर्णनादेतदत्सूक्तार्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्वितीयं सूक्तमेकोनविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! हम लोग जिस (**होतारम्**) ग्रहण करने और (**मन्द्रम्**) आनन्द देनेवाले (**दमूनसम्**) दमनशील (**उक्थ्यम्**) प्रशंसा करने योग्य (**शुचिम्**) पवित्र (**विश्वचर्षणिम्**) सबके देखने और (**मनुर्हितम्**) मनुष्यों के हित करनेवाले विद्वान् को प्राप्त होकर (**रथम्**) दृढ़ रमणीय यान के (**न**) समान (**चित्रम्**) अद्भुत और (**वपुषाय**) जिस व्यवहार में रूप विद्यमान उस व्यवहार के लिये (**दर्शतम्**) देखने योग्य (**सदम्**) अवस्थित और (**अद्वयाविनम्**) जो दो में नहीं विद्यमान ऐसे सीधे चलनेवाले अग्नि को (**ईमहे**) जांचते [सिद्ध करते] और उससे (**रायः**) धनों को जांचते [सिद्ध करते] हैं, उस (**ईत्**) ही को तुम लोग भी जांचो [सिद्ध करो]॥१५॥

भावार्थः-जो इन्द्रियों को दमन करनेवाले विद्वानों के निकट स्थित होकर अग्निविद्या को जानें तो मनुष्य किस-किस धन को न प्राप्त हों?॥१५॥

इस सूक्त में विद्वान् और अग्नि के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह दूसरा सूक्त और उन्नीसवां वर्ग पूर्ण हुआ॥

वैश्वानरायेत्येकादशर्चस्य तृतीयस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। वैश्वानरोऽग्निर्देवता। १, ५ निचृज्जगती। २-४, ६, ८, ९ जगती। ७, १० विराट् जगती छन्दः। निषादः स्वरः। ११ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब ग्यारह ऋचावाले तीसरे सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में विद्वानों का विषय वर्णन करते हैं॥

वैश्वानराय पृथुपाजसे विपो रत्ना विधन्त धरुणेषु गातवे।
अग्निर्हि देवाँ अमृतो दुवस्यत्यथा धर्माणि सनता न दूदुषत्॥१॥

वैश्वानराय। पृथुऽपाजसे। विपः। रत्ना। विधन्त। धरुणेषु। गातवे। अग्निः। हि। देवान्। अमृतः। दुवस्यति। अथ। धर्माणि। सनता। न। दूदुषत्॥१॥

पदार्थः-(**वैश्वानराय**) विश्वेषु नरेषु राजमानाय (**पृथुपाजसे**) महाबलाय (**विपः**) मेधाविनः (**रत्ना**) रत्नानि रमणीयानि धनानि (**विधन्त**) सेवन्ते (**धरुणेषु**) आधारेषु (**गातवे**) स्तावकाय (**अग्निः**) पावक इव (**हि**) खलु (**देवान्**) दिव्यान् गुणान् (**अमृतः**) मरणधर्मरहितः (**दुवस्यति**) परिचरति (**अथ**) आनन्तर्ये। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**धर्माणि**) (**सनता**) सनतानि सनातनानि (**न**) निषेधे (**दूदुषत्**) दूषयति॥१॥

अन्वयः-यथाऽमृतोऽग्निर्हि देवान् पृथिव्यादीन् दुवस्यत्यथ न दूदुषत् तथा विपो वैश्वानराय पृथुपाजसे गातवे सनता रत्ना धर्माणि च धरुणेषु रत्ना विधन्त॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा पावकः स्वकीयान् सनातनान् गुणकर्मस्वभावान् सेवते कदाचिन्न दुष्यति तथैव विद्वांसो जिज्ञासुहिताय विद्या दत्वा स्वस्वभावान् भूषयन्ति न कदाचिदधर्माचरणेन दुष्यन्ति॥१॥

पदार्थः-जैसे (**अमृतः**) मरणधर्मरहित (**अग्निः**) अग्निः के समान विद्वान् (**हि**) ही (**देवान्**) दिव्य गुणोंवाले पृथिव्यादिकों की (**दुवस्यति**) सेवा करता (**अथ**) अनन्तर इसके (**न**) नहीं (**दूदुषत्**) दूषित काम कराता, वैसे (**विपः**) मेधावी जन (**वैश्वानराय**) समस्त मनुष्यो में प्रकाशमान (**पृथुपाजसे**) महाबली (**गातवे**) और स्तुति करनेवाले के लिये (**सनता**) सनातन (**रत्ना**) रमणीय रत्नों (**धर्माणि**) और धर्मों को तथा (**धरुणेषु**) आधारों में रत्नरूपी रमणीय धनों को (**विधन्त**) सेवन करते हैं॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे अग्नि अपने सनातन गुण, कर्म, स्वभावों को सेवता है, कभी दोषी नहीं होता, वैसे विद्वान् जन जिज्ञासुओं के हित के लिये विद्या देके अपने-अपने स्वभावों को भूषित करते हैं, कभी अधर्माचरण से दूषित नहीं होते हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अन्तर्दूतो रोदसी दस्म ईयते होता निषत्तो मनुषः पुरोहितः।
क्षयं बृहन्तं परि भूषति द्युभिर्देवेभिरग्निरिषितो धियावसुः॥२॥

अन्तः। दूतः। रोदसी इति। दस्मः। ईयते। होता। निऽसत्तः। मनुषः। पुरःऽहितः। क्षयम्। बृहन्तम्। परि। भूषति। द्युऽभिः। देवेभिः। अग्निः। इषितः। धियाऽवसुः॥२॥

पदार्थः-(**अन्तः**) मध्ये (**दूतः**) दूत इव वर्त्तमानः (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**दस्मः**) मूर्त्तद्रव्याणामुपक्षयिता (**ईयते**) प्राप्नोति (**होता**) आदाता (**निषत्तः**) निषण्णो निश्चितः स्थितः (**मनुषः**) मनुष्याणाम् (**पुरोहितः**) पुरस्ताद्धितकारी (**क्षयम्**) निवासस्थानम् (**बृहन्तम्**) महान्तम् (**परि**) सर्वतः (**भूषति**) अलं करोति (**द्युभिः**) देदीप्यमानैः (**देवेभिः**) किरणैः (**अग्निः**) पावकः (**इषितः**) अन्वेषितः (**धियावसुः**) यः प्रज्ञाः कर्माणि च वासयति सः॥२॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! भवन्तो यथा होता निषत्तो मनुषः पुरोहितो धियावसुरिषितो दस्मोऽन्तर्दूतोऽग्निर्द्युभिर्देवेभिः सह रोदसी ईयते बृहन्तं क्षयं परि भूषति तथा युष्माभिः सर्वे मनुष्यास्सुभूषणीयाः॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्यैर्देशावयवान् प्राप्य सोत्तमैर्विद्याध्यापनोपदेशादिभिः कर्मभिः सर्वे मनुष्याः सुभूषणीयाः, अनेन सर्वेषां हितं सम्पादनीयम्॥२॥

पदार्थः-हे विद्वानो! आप जैसे (**होता**) ग्रहण करनेवाला (**निषत्तः**) निश्चित स्थित (**मनुषः**) मनुष्यों का (**पुरोहितः**) पहिले करनेवाला (**धियावसुः**) जो प्रबल बुद्धियों और कर्मों को वास देता (**इषितः**) ढूंढा हुआ (**दस्मः**) मूर्तिमान् पदार्थों का छिन्न-भिन्न करनेहारा और (**अन्तः**) बीच में (**दूतः**) दूत के समान वर्त्तमान (**अग्निः**) अग्नि (**द्युभिः**) देदीप्यमान (**देवेभिः**) किरणों के साथ (**रोदसी**) प्रकाश और पृथिवी को (**ईयते**) प्राप्त होता और (**बृहन्तम्**) महान् (**क्षयम्**) निवासस्थान को (**परि, भूषति**) सब ओर से भूषित करता है, वैसे तुमको सब मनुष्य सुभूषित करने चाहिये॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्यों को देश के अवयवों को प्राप्त होकर उत्तम विद्याध्ययन, अध्यापन और उपदेशादि कर्मों के साथ समस्त मनुष्य सुभूषित करने चाहिये और इससे सबका हित सिद्ध करना चाहिये॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

केतुं यज्ञानां विदथस्य साधनं विप्रासो अग्निं महयन्त चित्तिभिः।

अपांसि यस्मिन्नधि संदधुर्गिरस्तस्मिन्त्सुम्नानि यजमान आ चके॥३॥

केतुम्। यज्ञानाम्। विदथस्य। साधनम्। विप्रासः। अग्निम्। महयन्त। चित्तिऽभिः। अपांसि। यस्मिन्। अधि। सम्ऽदधुः। गिरः। तस्मिन्। सुम्नानि। यजमानः। आ। चके॥३॥

पदार्थः-(**केतुम्**) प्रज्ञापकम् (**यज्ञानाम्**) सङ्गतानां व्यवहाराणाम् (**विदथस्य**) परार्थविज्ञानस्य (**साधनम्**) (**विप्रासः**) मेधाविनः (**अग्निम्**) पावकम् (**महयन्त**) पूजयेयुः (**चित्तिभिः**) काष्ठादिचयनैः (**अपांसि**) कर्माणि (**यस्मिन्**) वह्नौ (**अधि**) (**संदधुः**) सन्दध्युः (**गिरः**) वाचः (**तस्मिन्**) (**सुम्नानि**) सुखानि (**यजमानः**) विद्वत्सेवासङ्गतेः कर्ता (**आ**) समन्तात् (**चके**) कामयते। अत्र **छान्दसो वर्णलोपो वेति** यलोपः॥३॥

अन्वयः-विप्रासो यस्मिन् गिरोऽपांसि च चित्तिभिरग्निमिवाधिसंदधुर्यस्मिन् यज्ञानां केतुं विदथस्य साधनं महयन्त सुम्नानि संदधुर्यस्मिन् यजमानः सुम्नान्या चके तस्मिन् सर्वे मनुष्याः सुखानि संदध्युः॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। सर्वस्याः पदार्थविद्यायाः मध्ये अग्निना तुल्यः कश्चिदन्यः पदार्थः कार्यसाधको न विद्यतेऽतोऽस्यैव परिज्ञानं सर्वैर्मनुष्यैः प्रयत्नेन कार्य्यम्॥३॥

पदार्थः-(**विप्रासः**) विद्वान् मेधावी जन (**यस्मिन्**) जिस अग्नि में (**गिरः**) वाणी और (**अपांसि**) कर्मों को (**चित्तिभिः**) काष्ठ आदि के इकट्ठे समूहों से (**अग्निम्**) अग्नि के समान (**अधि, संदधुः**) अच्छे प्रकार धारण करें वा जिसमें (**यज्ञानाम्**) मिले हुए व्यवहारों का (**केतुम्**) उत्तमता से ज्ञान दिलाने और (**विदथस्य**) दूसरे के लिये विज्ञान के (**साधनम्**) सिद्ध करानेवाले का (**महयन्त**) सत्कार करें वा (**सुम्नानि**) सुखों को अच्छे प्रकार धारण करें वा जिसमें (**यजमानः**) विद्वानों की सेवा और सङ्गति का करनेवाला जन (**सुम्नानि**) सुखों की (**आ, चके**) अच्छे प्रकार कामना करता है (**तस्मिन्**) उसमें सब मनुष्य सुखों को अच्छे प्रकार धारण करें॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। समस्त पदार्थविद्या के बीच अग्नि के तुल्य कोई और पदार्थ कार्यसाधक नहीं है, इससे इस अग्नि का ही परिज्ञान उत्तम यत्न के साथ सब लोगों को करना चाहिये॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

पिता यज्ञानामसुरो विपश्चितां विमानमग्निर्वयुनं च वाघताम्।
आ विवेश रोदसी भूरिवर्पसा पुरुप्रियो भन्दते धामभिः कविः॥४॥

पिता। युज्ञाना॑म्। असु॑रः। विपःऽचिता॑म्। विऽमान॑म्। अग्निः। वयुन॑म्। च। वाघता॑म्। आ। विवेश। रोद॑सी इति॑। भूरि॑ऽवर्पसा। पुरुऽप्रियः। भन्दते। धाम॑ऽभिः। कविः॥४॥

पदार्थः-(**पिता**) पालकः (**यज्ञानाम्**) सङ्गतानां व्यवहाराणाम् (**असुरः**) सर्वेषां भूगोलादि-पदार्थानाम् यथाक्रमं प्रक्षेपकः (**विपश्चिताम्**) विदुषाम् (**विमानम्**) विमानमिव (**अग्निः**) पावक इव परमेश्वरः (**वयुनम्**) प्रज्ञाम् (**च**) (**वाघताम्**) मेधाविनाम् (**आ**) (**विवेश**) प्रविष्टवान् (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**भूरिवर्पसा**) भूरि बहु च तद्वर्पश्च तेन सह (**पुरुप्रियः**) यः पुरून् बहून् प्रीणाति (**भन्दते**) सुखयति (**धामभिः**) स्थानैः सह (**कविः**) विक्रान्तदर्शनः॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथेश्वरो यज्ञानां पिताऽसुरो विपश्चितां विमानं वाघतां च वयुनं भूरिवर्पसा धामभिः पुरुप्रियः कविर्भन्दते रोदसी आ विवेश तथाऽग्निरपि भवद्भिर्विज्ञेयः॥४॥

भावार्थः-यथेश्वरः सर्वत्र व्याप्य सर्वान् व्यवस्थापयति तथाग्निः पृथिव्यादीनभिव्याप्याकर्षणेन सर्वान् व्यवस्थापयति। यथाग्निः प्रयुक्तं विमानमाकाशे सद्यो गमयति तथा विद्वत्सेवापुरःसरेण योगाभ्यासविज्ञानेन सेवितो जगदीश्वरश्चिदाकाशे मुक्तान् सद्यः प्रवेश्य विहारयति॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे ईश्वर (**यज्ञानाम्**) प्राप्त हुए व्यवहारों का (**पिता**) पालनेवाला (**असुरः**) समस्त भूगोलादि पदार्थों का यथाक्रम अर्थात् यथास्थान फेंकनेवाला (**विपश्चिताम्**) विद्वानों के लिये (**विमानम्**) विमान के समान (**च**) और (**वाघताम्**) मेधावी जनों के (**वयुनम्**) उत्तम ज्ञान (**भूरिवर्पसा**) बहुत पराक्रम के (**धामभिः**) स्थानों के साथ (**पुरुप्रियः**) बहुतों को तृप्त करनेवाला (**कविः**) विशेष क्रम से जिसका दर्शन होता वह (**भन्दते**) प्रसन्न करता है और (**रोदसी**) आकाश और पृथिवी को (**आ, विवेश**) प्रविष्ट हुआ है, वैसे (**अग्निः**) अग्नि भी तुम लोगों को जानने योग्य है॥४॥

भावार्थः-जैसे ईश्वर सर्वत्र व्याप्त होकर सबकी व्यवस्था करता है, वैसे अग्नि पृथिव्यादिकों को अभिव्याप्त होकर आकर्षण से सब पदार्थों की व्यवस्था करता है। जैसे अग्नि अच्छे प्रकार युक्त किये हुए विमान को आकाश में शीघ्र चलाता है, वैसे विद्वानों की सेवापूर्वक योगाभ्यास के विज्ञान से सेवा किया हुआ जगदीश्वर चिदाकाश में मुक्त जनों को शीघ्र प्रवेश कर विहार कराता है॥४॥

अथाग्निविषयमाह॥

अब अग्नि विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

चन्द्रमग्निं चन्द्ररथं हरिव्रतं वैश्वानरमप्सुषदं स्वर्विदम्।
विगाहन्तूर्णिं तविषीभिरावृतं भूर्णिं देवास इह सुश्रियं दधुः॥५॥२०॥

चन्द्रम्। अग्निम्। चन्द्रऽरथम्। हरिऽव्रतम्। वैश्वानरम्। अप्सुऽसदम्। स्वःऽविदम्। विऽगाहम्। तूर्णिम्। तविषीभिः। आऽवृतम्। भूर्णिम्। देवासः। इह। सुऽश्रियम्। दधुः॥५॥

पदार्थः-(**चन्द्रम्**) आनन्दकरं देदीप्यमानं सुवर्णमिव वर्त्तमानम्। **चन्द्रमिति हिरण्यनामसु पठितम्।** (निघं०१.२)। (**अग्निम्**) वह्निम् (**चन्द्ररथम्**) चन्द्रमिव रथं यस्य तम् (**हरिव्रतम्**) हरयोऽश्वा व्रतं शीलं यस्य तम् (**वैश्वानरम्**) सर्वेषु नरेषु नीतेषु प्राप्तेषु पदार्थेषु व्याप्तम् (**अप्सुषदम्**) योऽप्सु प्राणेषु जलेषु वा सीदति तम् (**स्वर्विदम्**) स्वः सुखं विन्दति यस्मात्तम् (**विगाहम्**) विविधान् पदार्थान् गाहन्ते विलोडयन्ति येन तम् (**तूर्णिम्**) सद्यो गमकम् (**तविषीभिः**) बलादिभिर्गुणैः (**आवृतम्**) संयुक्तम् (**भूर्णिम्**) धर्त्तारम् (**देवासः**) विद्वांसः (**इह**) अस्मिन् जगति (**सुश्रियम्**) शोभना श्रीर्यस्मात्तम् (**दधुः**) धरन्तु॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा देवास इह चन्द्ररथं हरिव्रतमप्सुषदं स्वर्विदं विगाहं तूर्णिन्तविषीभिरावृतं भूर्णिं सुश्रियं वैश्वानरं चन्द्रमग्निं दधुस्तथैनं यूयमपि धरत॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यावत्पदार्थविद्याष्वग्निविद्या न स्यात्तावदनलंकृता स्त्रीव न शोभते॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**देवासः**) विद्वान् जन (**इह**) इस संसार के बीच (**चन्द्ररथम्**) जिससे चन्द्रमा के समान रथ बनता है (**हरिव्रतम्**) वा जिसके घोड़े शीलरूप (**अप्सुषदम्**) वा प्राण और जलों में स्थिर होता (**स्वर्विदम्**) वा जिससे जीव सुख को प्राप्त होता (**विगाहम्**) वा जिसके निमित्त से विविध प्रकार के पदार्थों को विलोड़ता वा (**तूर्णिम्**) जो शीघ्र गमन करनेवाला (**तविषीभिः**) बलादि गुणों के साथ संयुक्त (**भूर्णिम्**) और पदार्थों का धारण करनेवाला (**सुश्रियम्**) जिससे उत्तम श्री लक्ष्मी (**आवृतम्**) उत्पन्न होती वा (**वैश्वानरम्**) समस्त प्राप्त पदार्थों में व्याप्त (**चन्द्रम्**) आनन्द करनेवाला निरन्तर प्रकाशमान (**अग्निम्**) अग्नि को (**दधुः**) धारण करें, वैसे इसको तुम भी धारण करो॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जब तक पदार्थविद्या में अग्निविद्या न हो, तब तक आभूषणरहित स्त्री के समान नहीं शोभती है॥५॥

पुनरग्निविद्यामाह॥

फिर अग्निविद्या के उपदेश को कहते हैं॥

अ॒ग्निर्दे॒वेभि॒र्मनु॑षश्च ज॒न्तुभि॑स्तन्वा॒नो य॒ज्ञं पु॑रु॒पेश॑सं धि॒या।
र॒थीर॒न्तरी॑यते॒ साध॑दिष्टिभिर्जी॒रो दमू॑ना अभिशस्ति॒चात॑नः॥६॥

अ॒ग्निः। दे॒वेभिः॑। मनु॑षः। च॒। ज॒न्तुऽभिः॑। त॒न्वा॒नः। य॒ज्ञम्। पु॒रु॒ऽपेश॑सम्। धि॒या। र॒थीः। अ॒न्तः। ई॒य॒ते। साध॑दिष्टिऽभिः। जी॒रः। दमू॑नाः। अ॒भि॒श॒स्ति॒ऽचात॑नः॥६॥

पदार्थः-(**अग्निः**) पावकः (**देवेभिः**) दिव्यैर्गुणैः (**मनुषः**) मनुष्यान् (**च**) अन्यान् भूतिमतः पदार्थान् (**जन्तुभिः**) मनुष्यैः। **जन्तव इति मनुष्यनामसु पठितम्।** (निघं०२.३)। (**तन्वानः**) विस्तृणानः (**यज्ञम्**) सङ्गतं संसारम् (**पुरुपेशसम्**) बहुरूपम् (**धिया**) कर्मणा (**रथीः**) बहवो रथा विद्यन्ते यस्य सः

(अन्तः) मध्ये **(ईयते)** गच्छति **(साधदिष्टिभिः)** साधाः संसिद्धा दिष्टयश्च ताभिः **(जीरः)** वेगवान् **(दमूनाः)** दमनशीलः **(अभिशस्तिचातनः)** योऽभिशस्तिं हिंसां चातयति सः॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽभिशस्तिचातनो दमूनाः साधदिष्टिभिः सह जीरो रथीर्जन्तुभिः सह मनुषस्तन्वानो देवेभिः सहाग्निरन्तरीयते धिया पुरुपेशसं यज्ञं साध्नोति तं विजानीत॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्यैर्योऽग्निः सामान्यरूपेण सर्वान् पुष्णाति विशेषरूपेण हिनस्ति पृथिव्यादीनामन्तः प्राप्तोऽस्ति येन बहवो व्यवहाराः सिध्यन्ति सोऽग्निर्विज्ञातव्यः॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(अभिशस्तिचातनः)** सब ओर से हिंसा की याचना करता **(दमूनाः)** और दमनशील **(साधदिष्टिभिः)** अच्छे प्रकार सिद्ध की हुई इच्छाओं के साथ **(जीरः)** वेगवान् **(रथीः)** जिसके बहुत रथ विद्यमान **(जन्तुभिः)** मनुष्यों के साथ **(मनुषः)** मनुष्यों को **(तन्वानः)** विस्तार अर्थात् उनकी वृद्धि देता हुआ और **(देवेभिः)** दिव्य गुणों के साथ **(अग्निः)** अग्नि **(ईयते)** जाता है तथा **(धिया)** कर्म से **(पुरुपेशसम्)** बहुत रूपोंवाले **[(यज्ञम्)]** प्राप्त संसार को सिद्ध करता है, उसको जानो॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्यों को जो अग्नि सामान्य रूप से सब पदार्थों को पुष्ट करता वा विशेष रूप से उनको नष्ट करता वा पृथिव्यादि के भीतर व्याप्त है अर्थात् उनके प्रत्येक परमाणु के साथ है वा जिससे बहुत व्यवहार सिद्ध होते हैं, वह अग्नि विशेषता से जानने योग्य है॥६॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अग्ने॒ जर॑स्व स्वप॒त्य आयु॑न्यू॒र्जा पि॑न्वस्व॒ समिषो॑ दिदीहि नः।
वयां॑सि जिन्व बृह॒तश्च॑ जागृव उ॒शिग्दे॒वाना॒मसि॑ सु॒क्रतु॑र्वि॒पाम्॥७॥

अग्ने॑। जर॑स्व। सु॒ऽअ॒प॒त्ये। आयु॑नि। ऊ॒र्जा। पि॒न्व॒स्व॒। सम्। इषः॑। दि॒दी॒हि॒। नः॒। वयां॑सि। जि॒न्व॒। बृ॒ह॒तः। च॒। जा॒गृ॒वे॒। उ॒शिक्। दे॒वाना॑म्। असि॑। सु॒ऽक्रतुः॑। वि॒पाम्॥७॥

पदार्थः-**(अग्ने)** विद्वन् **(जरस्व)** स्तुहि। अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम्। **जरतीति स्तुतिकर्मासु पठितम्।** (निघं०३.१४)। **(स्वपत्ये)** स्वकीये सन्ताने **(आयुनि)** प्राप्ते **(ऊर्जा)** अन्नेन **(पिन्वस्व)** सेवस्व **(सम्)** **(इषः)** इच्छ **(दिदीहि)** प्राप्नुहि। अत्र दिव्धातोः शपः श्लुः। **(नः)** अस्मान् **(वयांसि)** कमनीयान्यन्नानि **(जिन्व)** प्रीणीहि **(बृहतः)** **(च)** अन्यान् **(जागृवे)** जागृतः **(उशिक्)** कमिता **(देवानाम्)** विदुषाम् **(असि)** **(सुक्रतुः)** सुष्ठुप्रज्ञः **(विपाम्)** मेधाविनाम्॥७॥

अन्वयः-हे जागृवेऽग्ने! त्वं स्वपत्य आयुन्यूर्जा पिन्वस्व विदुषो जरस्व न इषो वयांसि च सं दिदीहि बृहतश्च जिन्व यतस्त्वं विपां देवानामुशिक् सुक्रतुरसि तस्माद्विद्वान् जातोऽसि॥७॥

भावार्थः-ये मनुष्याः स्वसन्तानान् युक्ताहारविहारेण संपाल्य सुशिक्षाविद्यादानेन विदुषः कुर्वन्ति ते सदैव विद्वत्सङ्गकामा धर्मेच्छा भूत्वा धीमन्तो भवन्ति॥७॥

पदार्थः-हे **(जागृवे)** जागते हुए के तुल्य **(अग्ने)** जाननेवाले महाशय! आप **(स्वपत्ये)** अपने सन्तान के निमित्त **(आयुनि)** प्राप्त हुए पीछे **(ऊर्जा)** अन्न से **(पिन्वस्व)** सेवो, विद्वानों की **(जरस्व)** स्तुति करो **(नः)** हम लोगों की **(इषः)** चाहना करो और **(वयांसि)** अच्छे-अच्छे अन्नों को **(सम्, दिदीहि)** अच्छे प्रकार प्राप्त हूजिये **(च)** और **(बृहतः)** बहुतों को **(जिन्व)** तृप्त कीजिये जिससे आप **(विपाम्)** बुद्धिमान् **(देवानाम्)** विद्वानों के बीच **(उशिक्)** मनोहर **(सुक्रतुः)** सुन्दर बुद्धिमान् **(असि)** हैं, उससे विद्वान् हुए हो॥७॥

भावार्थः-जो मनुष्य अपने सन्तानों को योग्य आहार-विहार से अच्छे प्रकार पाल के उत्तम शिक्षा और विद्या के दान से विद्वान् करते हैं, वे सदैव विद्वानों के सत्सङ्ग की कामना करनेवाले धर्म के चाहनेवाले होकर बुद्धिमान् होते हैं॥७॥

पुनर्विद्वद्विषयमाह॥

फिर विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

विश्पतिं यह्वमतिथिं नरः सदा यन्तारं धीनामुशिजं च वाघताम्।
अध्वराणां चेतनं जातवेदसं प्र शंसन्ति नमसा जूतिभिर्वृधे॥८॥

विश्पतिम्। यह्वम्। अतिथिम्। नरः। सदा। यन्तारम्। धीनाम्। उशिजम्। च। वाघताम्। अध्वराणाम्। चेतनम्। जातऽवेदसम्। प्र। शंसन्ति। नमसा। जूतिऽभिः। वृधे॥८॥

पदार्थः-**(विश्पतिम्)** विशः सर्वस्याः प्रजायाः पालकं स्वामिनम् **(यह्वम्)** महान्तम् **(अतिथिम्)** अतिथिवत् सत्कर्तव्यम् **(नरः)** स्वात्मेन्द्रियशरीराणि धर्मं प्रति नेतारः **(सदा)** **(यन्तारम्)** नियन्तारमुपरतम् **(धीनाम्)** सत्कर्मणां प्रज्ञानाम् **(च)** **(उशिजम्)** कामयमानम् **(च)** **(वाघताम्)** मेधाविनाम् **(अध्वराणाम्)** अहिंसनीयानाम् **(चेतनम्)** सम्यग्ज्ञानस्वरूपम् **(जातवेदसम्)** यो जातेषु सर्वेषु स्वव्याप्त्या विद्यतेऽथवा जातान् सर्वान् पदार्थान् वेत्ति तम् **(प्रशंसन्ति)** स्तुवन्ति **(नमसा)** सत्कारेण **(जूतिभिः)** वेगादिभिर्गुणैः **(वृधे)** वर्धनाय॥८॥

अन्वयः-ये नरो वृधे जूतिभिर्विश्पतिं यह्वं यन्तारमतिथिं धीनां वाघतामध्वराणां चोशिजं जातवेदसं चेतनं परमात्मानं नमसा सदा प्रशंसन्ति ते ब्रह्मविदो भवन्ति॥८॥

भावार्थः-मनुष्यैराप्तैर्विद्वद्भिः स्तुतो महान् प्रजापालको ज्ञानस्वरूपः परमेश्वरः स्तोतव्योऽस्ति नैतदुपासनेन विना कश्चित्पूर्णो लाभः प्राप्नोति॥८॥

पदार्थः-जो **(नरः)** अपने आत्मा, इन्द्रियां और शरीरों को धर्म की ओर पहुँचानेवाले जन **(वृधे)** वृद्धि के लिये **(जूतिभिः)** वेगादि गुणों से **(विश्पतिम्)** समस्त प्रजा के पालनेवाले **(बृहम्)** बड़े **(यन्तारम्)** नियन्ता अर्थात् सब कामों को यथा नियम पहुँचानेवाले **(अतिथिम्)** अतिथि के समान सत्कार करने योग्य **(धीनाम्)** उत्तम कर्म और बुद्धियों वा **(वाघताम्)** बुद्धिमान् **(च)** और **(अध्वराणाम्)** अहिंसनीय व्यवहारों के बीच **(उशिजम्)** कामना की ओर **(जातवेदसम्)** उत्पन्न हुए सब पदार्थों में अपनी व्याप्ति से विद्यमान अथवा उत्पन्न हुए समस्त पदार्थों को जाननेवाले **(चेतसम्)** अच्छे प्रकार ज्ञानस्वरूप परमात्मा की **(नमसा)** सत्कार से **(सदा)** सदैव **(प्र, शंसन्ति)** प्रशंसा करते हैं, वे ब्रह्मवेत्ता होते हैं॥८॥

भावार्थः-मनुष्यों को आप्त विद्वानों ने **[=से]** स्तुति किया हुआ महान् प्रजापालक ज्ञानस्वरूप परमेश्वर स्तुति करने योग्य है, इसकी उपासना के विना किसी को पूरा लाभ प्राप्त नहीं होता॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

विभावा देवः सुरणः परि क्षितीरग्निर्बभूव शवसा सुमद्रथः।
तस्य व्रतानि भूरिपोषिणो वयमुप भूषेम दम आ सुवृक्तिभिः॥९॥

विभाऽवा। देवः। सुऽरणः। परि। क्षितीः। अग्निः। बभूव। शवसा। सुमत्ऽरथः। तस्य। व्रतानि। भूरिऽपोषिणः। वयम्। उप। भूषेम। दमे। आ। सुवृक्तिभिः॥९॥

पदार्थः-**(विभावा)** विविधदीप्तिमान् **(देवः)** कमनीयः **(सुरणः)** शोभनं रणः संग्रामो यस्मात् सः **(परि)** सर्वतः **(क्षितीः)** पृथिवीः **(अग्निः)** पावकः **(बभूव)** भवति **(शवसा)** बलेन **(सुमद्रथः)** सुमतां प्रशस्तज्ञानानां रथ इव रथो यस्मात्सः **(यस्य)** **(व्रतानि)** शीलानि **(भूरिपोषिणः)** भूरि बहुविधः पोषो पुष्टिर्विद्यते येषां ते **(वयम्)** **(उप)** समीपे **(भूषेम)** **(दमे)** गृहे **(आ)** **(सुवृक्तिभिः)** शोभनाश्च ते वृक्तयो वर्त्तनानि च ताभिः॥९॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथा त्वं विभावा देवः सुरणः सुमद्रथोऽग्निः सुवृक्तिभिः शवसा क्षितीः परिबभूव तस्य व्रतानि भूरिपोषिणो वयं दम उपा भूषेम॥९॥

भावार्थः-यथा विद्वांसो मनुष्याणां बहुपुष्टिप्रदा ऐश्वर्यप्रापकाः परोपकारेणालङ्कृता भवेयुस्ते राज्यैश्वर्यमाप्नुयुः॥९॥

पदार्थः-हे विद्वान्! जैसे आप **(विभावा)** विविध दीप्तिमान् **(देवः)** मनोहर **(सुरणः)** सुन्दर रण जिससे होता वा **(समुद्रथः)** जिससे प्रशंसित ज्ञानों का रथ के समान रथ होता **(अग्निः)** ऐसा अग्नि

(सुवृक्तिभिः) सुन्दर बर्तावों [सुन्दर मार्गों] से और **(शवसा)** बल से **(क्षितीः)** पृथिवियों को **(परि, बभूव)** सब ओर से व्याप्त होता अर्थात् उनका तिरस्कार करता **(तस्य)** उसके **(व्रतानि)** शीलों को **(भूरिपोषिणः)** बहुत प्रकार पोषण पुष्टि जिनके विद्यमान ये **(वयम्)** हम लोग **(दमे)** घर में **(उप,भूषेम)** अपने समीप अच्छे प्रकार भूषित करते हैं॥९॥

भावार्थः-जैसे विद्वान् जन मनुष्यों के बीच बहुत पुष्टि देने और ऐश्वर्य की प्राप्ति करानेवाले तथा परोपकार से अलङ्कृत हों, वे राज्य के ऐश्वर्य को प्राप्त हों॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

वैश्वा॑नर॒ तव॒ धामा॒न्या च॑के॒ येभि॑: स्व॒र्विद॑भ॑वो विचक्षण।
जा॒त आपृ॑णो॒ भुव॑नानि॒ रोद॑सी॒ अग्ने॒ ता विश्वा॑ परि॒भूर॑सि॒ त्मना॑॥१०॥

वैश्वा॑नर। तव॑। धामा॑नि। आ। च॒के॒। येभि॑:। स्व॒:ऽवित्। अभ॑व:। वि॒ऽच॒क्ष॒ण॒। जा॒तः। आ। अ॒पृ॒णः। भुव॑नानि। रोद॑सी॒ इति॑। अग्ने॑। ता। विश्वा॑। प॒रि॒ऽभूः। अ॒सि॒। त्मना॑॥१०॥

पदार्थः-**(वैश्वानर)** प्रधानपुरुष **(तव)** **(धामानि)** जन्मस्थाननामानि **(आ)** **(चके)** समन्तात् कामयेत **(येभिः)** यैः **(स्वर्वित्)** प्राप्तसुखः **(अभवः)** भवेः **(विचक्षण)** अतिचतुर **(जातः)** प्रसिद्धः **(आ)** **(अपृणः)** पुष्णीयाः **(भुवनानि)** लोकान् **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ **(अग्ने)** पावकइव वर्त्तमान **(ता)** तानि **(विश्वा)** सर्वाणि **(परिभूः)** यः परितः सर्वतो भवति सः **(असि)** **(त्मना)** आत्मना॥१०॥

अन्वयः-हे विचक्षण वैश्वानराग्ने! त्वं त्मना यानि विश्वा भुवनान्यापृणो यथाऽग्निर्विश्वा भुवनानि रोदसी चाभिव्याप्नोति तथा त्वं परिभूरसि स त्वं मनुष्यस्तव येभिर्धामान्याचके ता तानि विदित्वा जातः सन् स्वर्विदभवः॥१०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या अग्निवद्धर्मविद्याप्रकाशकाः सर्वेषु प्राणिषु सुखदुःखव्यवस्थया स्वात्मवद्बुद्धयः सन्ति ते सुखिनो भवन्ति॥१०॥

पदार्थः-हे **(विचक्षण)** अतिचतुर **(वैश्वानर)** प्रधान पुरुष **(अग्ने)** अग्नि के समान वर्तमान! आप **(त्मना)** अपने से जिन **(विश्वा)** समस्त **(भुवनानि)** लोकों को **(आ, अपृणः)** अच्छे प्रकार पुष्ट करें, जैसे अग्नि समस्त लोकों वा **(रोदसी)** आकाश और पृथिवी को अभिव्याप्त है, वैसे आप **(परिभूः)** सब ओर से होनेवाले **(असि)** हैं, वह आप मनुष्य **(तव)** आपके **(येभिः)** जिन **(धामानि)** जन्मस्थान नामों को **(आ, चके)** अच्छे प्रकार कामना करे **(ता)** उनको जानकर **(जातः)** प्रसिद्ध होते हुए **(स्वर्वित्)** प्राप्त सुख **(अभवः)** हूजिये॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य अग्नि के समान धर्म और विद्याओं

के प्रकाश करनेवाले, सबके बीच प्राणियों के सुख-दुःख की व्यवस्था से अपने समान बुद्धि रखनेवाले हैं, वे सुखी होते हैं॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

वैश्वानरस्य दंसनाभ्यो बृहदरिणादेकः स्वपस्यया कविः।
उभा पितरा महयन्नजायताग्निर्द्यावापृथिवी भूरिरेतसा॥ ११॥ २१॥

वैश्वानरस्य। दंसनाभ्यः। बृहत्। अरिणात्। एकः। सुऽअपस्यया। कविः। उभा। पितरा। महयन्। अजायत। अग्निः। द्यावापृथिवी इति। भूरिऽरेतसा॥ ११॥

पदार्थः-(**वैश्वानरस्य**) सर्वत्र राजमानस्य (**दंसनाभ्यः**) सुखकरक्रियाभ्यः (**बृहत्**) महत् (**अरिणात्**) प्राप्नुयात् (**एकः**) असहायः (**स्वपस्यया**) आत्मनः सुष्ठु कर्मण इच्छया (**कविः**) सर्वशास्त्रवित् (**उभा**) द्वौ (**पितरा**) पालकौ (**महयन्**) सत्कुर्वन् (**अजायत**) जायते (**अग्निः**) पावकः (**द्यावापृथिवी**) सूर्यभूमि (**भूरिरेतसा**) भूरीणि बहूनि रेतांसि उदकानि यस्मिन्नन्तरिक्षे तेन॥११॥

अन्वयः-य एकः कविः स्वपस्यया वैश्वानरस्य दंसनाभ्यो बृहदरिणाद् यथाग्निर्भूरिरेतसा सह वर्त्तमानो द्यावापृथिवी प्रकाशयन्नजायत तथोभा पितरा महयन् वर्त्तते स सुखी कथन्न जायेत॥११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये जना विद्वत्क्रियाकरा जनकजननीनां सत्कर्त्तारः सन्ति ते भूमिसूर्यवद्दिव्यगुणा भवन्तीति॥११॥

अत्राग्निविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति तृतीयं सूक्तमेकविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-जो (**एकः**) एकाकी (**कविः**) सर्वशास्त्रों को जाननेवाला (**स्वपस्यया**) अपने को उत्तम की इच्छा से (**वैश्वानरस्य**) सर्वत्र प्रकाशमान अग्नि की (**दंसनाभ्यः**) सुख करनेवाली क्रियाओं से (**बृहत्**) महान् कार्य को (**अरिणात्**) प्राप्त होवे वा जैसे (**अग्निः**) अग्नि (**भूरिरेतसा**) बहुत जल जिसमें विद्यमान उस अन्तरिक्ष के साथ वर्तमान (**द्यावापृथिवी**) सूर्य और पृथिवी को प्रकाशित करता हुआ (**अजायत**) प्रसिद्ध होता है, वैसे (**उभा**) दोनों (**पितरा**) माता-पिता को (**महयन्**) सत्कार करता हुआ वर्त्तमान है, वह सुखी कैसे न होवे?॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य विद्वानों के तुल्य कर्म और माता-पिताओं का सत्कार करते, वे पृथिवी और सूर्य के समान उत्तम गुणवाले होते हैं॥११॥

इस सूक्त में अग्नि और विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्तार्थ के साथ सङ्गति समझनी चाहिये॥

यह तीसरा सूक्त और इक्कीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

समित्समिदित्येकादशर्चस्य चतुर्थस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। आप्रियो देवता। १, ४,७, स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २, ३, ५ त्रिष्टुप्। ६, ८, १०, ११ निचृत् त्रिष्टुप्। ९ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब ग्यारह ऋचावाले चौथे सूक्त का प्रारम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में विद्वानों के विषय को कहते हैं॥

स॒मित्स॑मित्सु॒मना॑ बोध्य॒स्मे शु॒चाशु॑चा सु॒म॒तिं रा॑सि॒ वस्वः॑।
आ दे॑व दे॒वान् य॒जथा॑य वक्षि॒ सखा॒ सखी॑न्त्सु॒मना॑ यक्ष्यग्ने॥ १॥

स॒मित्ऽस॑मित्। सु॒ऽमनाः॑। बो॒धि॒। अ॒स्मे इति॑। शु॒चाऽशु॑चा। सु॒ऽम॒तिम्। रा॒सि॒। वस्वः॑। आ। दे॒व॒। दे॒वान्। य॒जथा॑य। व॒क्षि॒। सखा॑। सखी॑न्। सु॒ऽमनाः॑। य॒क्षि॒। अ॒ग्ने॒॥ १॥

पदार्थः-(**समित्समित्**) प्रतिसमिधम् (**सुमनाः**) शोभनं मनो यस्य सः (**बोधि**) बुध्यसे (**अस्मे**) अस्मभ्यम् (**शुचाशुचा**) होमसाधनेन (**सुमतिम्**) शोभनां प्रज्ञाम् (**रासि**) ददासि (**वस्वः**) वसूनि धनानि (**आ**) (**देव**) विद्वन् (**देवान्**) विदुषः (**यजथाय**) समागमाय (**वक्षि**) वहसि (**सखा**) मित्रः सन् (**सखीन्**) सुहृदः (**सुमनाः**) सुहृत्सन् (**यक्षि**) सङ्गच्छसे (**अग्ने**) अग्निरिव प्रकाशमान॥१॥

अन्वयः-हे अग्ने! यथा समित्समिच्छुचाशुचा पावको बोधि तथाऽध्यापनोपदेशाभ्यामस्मे सुमतिं वस्वश्च रासि। हे देव! सुमना सन्नाहुतीनामग्निरिव यजथाय देवानावक्षि सुमनाः सखा सन् सखीन् यक्षि तस्मात्सत्कर्त्तव्योऽसि॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यथा समिद्भिर्घृताद्येन हविषा अग्निर्वर्धते तथाऽध्यापनोपदेशाभ्यां मनुष्याणां प्रज्ञा वर्धनीया सदैव सुहृदो भूत्वा सर्वान् विदुषः श्रीमतश्च सम्पादयत॥१॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के समान प्रकाशमान विद्वन्! आप जैसे (**समित्समित्**) प्रतिसमिध (**शुचाशुचा**) शुच् [चमसा] शुच् [चमसा] प्रत्येक होम के साधन से अग्नि (**बोधि**) प्रबुद्ध होता जाना जाता है, वैसे पढ़ाने और उपदेश करने से (**अस्मे**) हम लोगों के लिये (**सुमतिम्**) उत्तम बुद्धि और (**वस्वः**) धनों को (**रासि**) देते हैं। हे (**देव**) विद्वानो! (**सुमनाः**) सुन्दर मनवाले होते हुए आप आहुतियों को अग्नि के समान (**यजथाय**) समागम के लिये (**देवान्**) विद्वानों को (**आ, वक्षि**) प्राप्त करते हो (**सुमनाः**) सुन्दर हृदयवाले (**सखा**) मित्र होते हुए आप (**सखीन्**) मित्र वर्गों को (**यक्षि**) सङ्ग करते हो, उक्त कारण से सत्कार करने योग्य हो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वानो! जैसे समिधों वा होमने योग्य घृतादि पदार्थ से अग्नि बढ़ता है, वैसे अध्यापन और उपदेश से मनुष्यों की बुद्धि बढ़ानी चाहिये और

आप लोग सदैव मित्र होकर सबको विद्वान् और श्रीमान् कीजिये॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

य देवासस्त्रिरहन्नायजन्ते दिवेदिवे वरुणो मित्रो अग्निः।

सेमं यज्ञं मधुमन्तं कृधी नस्तनूनपाद् घृतयोनिं विधन्तम्॥२॥

यम्। देवासः। त्रिः। अहन्। आऽयजन्ते। दिवेऽदिवे। वरुणः। मित्रः। अग्निः। सः। इमम्। यज्ञम्। मधुऽमन्तम्। कृधि। नः। तनूऽनपात्। घृतऽयोनिम्। विधन्तम्॥२॥

पदार्थः-(**यम्**) (**देवासः**) दिव्या विद्वांसः (**त्रिः**) त्रिवारम् (**अहन्**) अहनि (**आयजन्ते**) समन्तात् सङ्गच्छन्ते (**दिवेदिवे**) प्रतिदिनम् (**वरुणः**) चन्द्रः (**मित्रः**) वायुः (**अग्निः**) पावकः (**सः**) (**इमम्**) (**यज्ञम्**) सङ्गन्तव्यम् (**मधुमन्तम्**) बहूनि मधूनि हवींषि विद्यन्ते यस्मिँस्तम् (**कृधि**) कुरु (**नः**) अस्माकम् (**तनूनपात्**) शरीररक्षकः (**घृतयोनिम्**) घृतं दीपकं तत्त्वं योनिः कारणं यस्य तम् (**विधन्तम्**) सेवमानम्॥२॥

अन्वयः-यमिमं मधुमन्तं घृतयोनिं विधन्तं यज्ञं वरुणो मित्रोऽग्निश्चाहन् दिवेदिवे त्रिरायजन्ते यं देवासश्च स तनूनपात्त्वं न एतं यज्ञं सिद्धं कृधि॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा विद्वांसोऽग्न्यादि विद्याप्राप्तये यादृशीं क्रियां कुर्य्युस्तादृशीं यूयमपि कुरुत॥२॥

पदार्थः-(**यम्**) जिस (**इमम्**) इस (**मधुमन्तम्**) बहुत होमने योग्य पदार्थ वा (**घृतयोनिम्**) दीप्तिकारक कारणवाले (**विधन्तम्**) सेवते हुए और (**यज्ञम्**) सङ्ग करने योग्य व्यवहार का (**वरुणः**) चन्द्रमा (**मित्रः**) वायु और (**अग्निः**) अग्नि (**अहन्**) एक दिन में (**दिवेदिवे**) वा प्रतिदिन (**त्रिः**) तीन वार (**आयजन्ते**) अच्छे प्रकार मिलाते हैं और जिसको (**देवासः**) दिव्य विद्वान् जन मिलाते (**सः**) वह पूर्वोक्त गुणों से युक्त (**तनूनपात्**) शरीर की रक्षा करनेवाले आप (**नः**) हमारे इस यज्ञ को सिद्ध (**कृधि**) कीजिये॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे विद्वान् जन अग्न्यादि पदार्थों की विद्या प्राप्ति के लिये जैसी क्रिया करें, वैसे ही तुम भी करो॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

प्र दीधितिर्विश्ववारा जिगाति होतारमिळः प्रथमं यजध्यै।

अच्छा नमोभिर्वृषभं वन्दध्यै स देवान् यक्षदिषितो यजीयान्॥३॥

प्र। दीधिंतिः। विश्वऽवांरा। जिगाति। होतांरम्। इळः। प्रथमम्। यजंध्यै। अच्छं। नमंःऽभिः। वृषभम्। वन्दध्यै। सः। देवान्। यक्षत्। इषितः। यजीयान्॥ ३॥

पदार्थः-(**प्र**) (**दीधितिः**) दीप्तिः (**विश्ववारा**) विश्वस्मिन् वारो वरणं यस्याः सा (**जिगाति**) स्तौति (**होतारम्**) आदातारम् (**इळः**) पृथिवी। **इळेति पृथिवीनामसु पठितम्।** (निघं०१.१)। (**प्रथमम्**) आदिमम् (**यजध्यै**) यष्टुं सङ्गन्तुम् (**अच्छ**) सम्यक्। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**नमोभिः**) अन्नैः (**वृषभम्**) प्रशस्तम् (**वन्दध्यै**) वन्दितुं स्तोतुम् (**सः**) (**देवान्**) विदुषः (**यक्षत्**) यजेत् सङ्गच्छेत् (**इषितः**) इच्छाप्रयुक्तः (**यजीयान्**) अतिशयेन यष्टा॥ ३॥

अन्वयः-यस्य विश्ववारा दीधितिरिळो यजध्यै होतारं नमोभिः प्रथमं वृषभं वन्दध्यै प्र जिगाति स इषितो यजीयान् सन् देवानच्छ यक्षत्॥ ३॥

भावार्थः-यस्य प्रकाशमाना दीप्तिर्विद्युदिव विद्यादातारं प्रशंसति तं सर्वे विद्यार्थिनः सङ्गत्य दिव्यान् गुणान् प्राप्य धनधान्ययुक्ता भवेयुः॥ ३॥

पदार्थः-(**विश्ववारा**) संसार के बीच जिसका स्वीकार है, वह जिसकी (**दीधितिः**) दीप्ति (**इळः**) पृथिवियों की (**यजध्यै**) सङ्गति करने के (**होतारम्**) ग्रहण करनेवाले की तथा (**नमोभिः**) अन्नों से (**प्रथमम्**) पहिले (**वृषभम्**) प्रशंसित की (**वन्दध्यै**) वन्दना करने अर्थात् स्तुति करने को (**प्र, जिगाति**) अच्छे प्रकार स्तुति करता है (**सः**) वह (**इषितः**) इच्छा से प्रयुक्त किया हुआ (**यजीयान्**) अतीव यज्ञ करनेहारा होता हुआ (**देवान्**) विद्वानों को (**अच्छ**) अच्छे प्रकार (**यक्षत्**) सङ्ग कर मिलावे॥ ३॥

भावार्थः-जिसकी प्रकाशमान दीप्ति बिजुली के समान विद्या देनेवाले की प्रशंसा करती है, उसका सब विद्यार्थी जन सङ्ग कर दिव्य गुणों को प्राप्त होकर धनधान्य युक्त होवें॥ ३॥

पुनर्विद्वद्विषयमाह॥

फिर विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ऊर्ध्वो वां गातुरध्वरे अंकार्यूर्ध्वा शोचींषि प्रस्थिता रजांसि।
दिवो वा नाभा न्यंसादि होतां स्तृणीमहिं देवव्यंचा वि बर्हिः॥ ४॥

ऊर्ध्वः। वाम्। गातुः। अध्वरे। अकारि। ऊर्ध्वा। शोचींषि। प्रऽस्थिता। रजांसि। दिवः। वा। नाभा। नि। असादि। होता। स्तृणीमहि। देवऽव्यंचाः। वि। बर्हिः॥ ४॥

पदार्थः-(**ऊर्ध्वः**) उपरिगामी (**वाम्**) युवयोः (**गातुः**) स्तावकः (**अध्वरे**) अहिंसनीये व्यवहारे (**अकारि**) क्रियते (**ऊर्ध्वा**) ऊर्द्ध्वं गामीनि (**शोचींषि**) तेजांसि (**प्रस्थिता**) प्रस्थितानि (**रजांसि**) लोकान् प्रति (**दिवः**) किरणान् (**वा**) (**नाभा**) नाभौ मध्ये (**नि**) नितराम् (**असादि**) सद्यते (**होता**) आदाता

(स्तृणीमहि) आच्छादयेम **(देवव्यचा:)** यो देवान् पृथिव्यादीन् व्यचति व्याप्नोति स: **(वि) (बर्हि:)** अन्तरिक्षस्य॥४॥

अन्वय:-हे यजमान यज्ञसम्पादकौ! वामध्वरे स ऊर्ध्वो गातुरकारि देवव्यचा होता न्यसादि येन यज्ञेन वयमूर्ध्वा प्रस्थिता शोचींषि रजांसि दिवो वा बर्हिर्नाभा वि स्तृणीमहि॥४॥

भावार्थ:-यदि यजमानयज्ञकर्तारौ विद्वांसौ स्यातां सुशोधितानि द्रव्याण्यग्नौ प्रक्षिपेतां तर्हि किं किं सुखं न प्राप्तं स्यात्॥४॥

पदार्थ:-हे यज्ञ करने और यज्ञ सिद्ध करानेवालो! **(वाम्)** तुम्हारे **(अध्वरे)** न नष्ट करने योग्य व्यवहार में वह **(ऊर्ध्व:)** ऊपर जाने **(गातु:)** और स्तुति करनेवाला **(अकारि)** किया जाता **(देवव्यचा:)** बहुत यज्ञ पृथिव्यादिकों को व्याप्त होने वा **(होता)** पदार्थों को ग्रहण करनेवाला **(नि, असादि)** सिद्ध किया जाता है, जिस यज्ञ से हम लोग **(ऊर्ध्वा)** ऊपर जानेवाले **(प्रस्थिता)** जाने का आरम्भ किये हुए **(शोचींषि)** तेजों को और **(रजांसि)** लोकों को तथा **(दिव:)** किरणों को **(वा)** वा **(बर्हि:)** अन्तरिक्ष को **(नाभा)** नाभि के बीच **(वि, स्तृणीमहि)** विस्तारते हैं॥४॥

भावार्थ:-जो यज्ञकर्त्ता और यज्ञ करानेवाले विद्वान् हों और सुन्दर शुद्ध पदार्थों को अग्नि में छोड़ें तो क्या क्या सुख प्राप्त न हों?॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स॒प्त हो॒त्राणि॒ मन॑सा वृणा॒ना इन्व॑न्तो॒ विश्वं॒ प्रति॑ यन्नृ॒तेन॑।
नृ॒पेश॑सो वि॒दथे॑षु॒ प्र जा॒ता अ॒भी॒३॑मं य॒ज्ञं वि च॑रन्त पू॒र्वीः॥५॥२२॥

स॒प्त। हो॒त्राणि॑। मन॑सा। वृ॒णा॒नाः। इन्व॑न्तः। विश्व॑म्। प्रति॑। य॒न्। ऋ॒तेन॑। नृ॒ऽपेश॑सः। वि॒दथे॑षु। प्र। जा॒ताः। अ॒भि। इ॒मम्। य॒ज्ञम्। वि। च॒र॒न्त॒। पू॒र्वीः॥५॥

पदार्थ:-**(सप्त)** सप्तविधानि **(होत्राणि)** हवनसम्बन्धीनि कर्माणि **(मनसा)** विज्ञानेन **(वृणाना:)** स्वीकुर्वाणा: **(इन्वन्त:)** व्याप्नुवन्त: **(विश्वम्)** सर्वं जगत् **(प्रति) (यन्)** प्राप्नुवन्ति **(ऋतेन)** जलेन। **ऋतमित्युदकनामसु पठितम्।** (निघं०१.१२)। **(नृपेशस:)** नृणां पेशो रूपमिव रूपं येषान्ते **(विदथेषु)** यज्ञेषु **(प्र, जाता:)** प्रादुर्भूता: **(अभि)** सर्वत: **(इमम्) (यज्ञम्) (वि) (चरन्त)** विचरन्तु। अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम्। **(पूर्वी:)** पूर्वं सम्पादिता:॥५॥

अन्वय:-ये विदथेषु प्रजाता नृपेशसो मनसा सप्त होत्राणि वृणाना विश्वमिन्वन्त ऋतेनेमं यज्ञमभि येन विश्वं प्रति यन् पूर्वीराहुतयो विचरन्त स यज्ञ: सर्वैरनुष्ठेय:॥५॥

भावार्थः-यदि मनुष्याः सुगन्ध्यादियुक्तानां द्रव्याणां वह्नौ प्रक्षेपेण वायुवृष्टिजलौषध्यन्नानि संशोधयेयुस्तर्हि सर्वमारोग्यमाप्नुयुः॥५॥

पदार्थः-जो (**विदथेषु**) यज्ञों में (**प्रजाताः**) उत्पन्न हुए (**नृपेशसः**) मनुष्यों के रूप समान जिनका रूप वे पदार्थ (**मनसा**) विज्ञान से (**सप्त**) सात प्रकार के (**होत्राणि**) हवन सम्बन्धी कामों को (**वृणानाः**) स्वीकार करते और (**विश्वम्**) समस्त जगत् को (**इन्वन्तः**) व्याप्त होते हुए (**ऋतेन**) जल के साथ (**इमम्**) इस (**यज्ञम्**) यज्ञ को (**अभि**) सब ओर से (**येन**)[१] जिससे व विश्व को (**प्रति, यन्**) प्रतीति से प्राप्त होते हैं तथा (**पूर्वीः**) पूर्व सिद्ध हुई आहुतियां (**विचरन्त**) विशेषता से प्राप्त होतीं वह यज्ञ सब विद्वानों को करने योग्य है॥५॥

भावार्थः-जो मनुष्य सुगन्ध्यादि युक्त पदार्थों के अग्नि में छोड़ने से वायु, वृष्टि, जल, ओषधि और अन्नों को अच्छे प्रकार शोधें तो सब आरोग्यपन को प्राप्त हों॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ भन्दमाने उषसा उपाके उत स्मयेते तन्वा३ विरूपे।
यथा नो मित्रो वरुणो जुजोषदिन्द्रो मरुत्वाँ उत वा महोभिः॥६॥

आ। भन्दमाने इति। उषसौ। उपाके इति। उत। स्मयेते इति। तन्वा। विरूपे इति विऽरूपे। यथा। नः। मित्रः। वरुणः। जुजोषत्। इन्द्रः। मरुत्वान्। उत। वा। महःऽभिः॥६॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**भन्दमाने**) सुखकारके (**उषसौ**) रात्र्यहनी (**उपाके**) समीपं वर्त्तमाने। **उपाके इति अन्तिकनामसु पठितम्।** (निघं०२.१६)। (**उत**) अपि (**स्मयेते**) ईषद्धसतः (**तन्वा**) शरीरेण (**विरूपे**) प्रकाशाऽन्धकाराभ्यां विरुद्धस्वरूपे (**यथा**) (**नः**) अस्मान् (**मित्रः**) वायुः (**वरुणः**) जलम् (**जुजोषत्**) भृशं सेवते (**इन्द्रः**) विद्युदादिरूपो वह्निः (**मरुत्वान्**) प्रशस्तरूपवान् (**उत**) अपि (**वा**) (**महोभिः**) महद्भिर्गुणकर्मस्वभावैः॥६॥

अन्वयः-यथा भन्दमाने उपाके उत तन्वा विरूपे उषसौ स्त्रीपुरुषावास्मयेते इव वर्त्तमाने नोऽस्मान् सेवेते तथा महोभिः सह मित्रो वरुण उतापि मरुत्वानिन्द्रो वाऽस्मान् जुजोषत्॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यदीश्वरो रात्रिंदिवौ न निर्मिमीत तर्हि कस्यापि व्यवहारो यथावन्न सिध्येत यदि भूपवाऽग्निजलसूर्य्यवायून्न रचयेत्तर्हि कस्यापि जीवनं न स्यात्॥६॥

---

१. "येन" मन्त्रगत पद नहीं है॥ सं०॥

पदार्थः-(**यथा**) जैसे (**भन्दमाने**) सुख करनेवाले (**उपाके**) समीप वर्त्तमान (**उत**) और (**तन्वा**) शरीर के (**विरूपे**) प्रकाश और अन्धकार से विरुद्ध स्वरूप (**उषसौ**) रात्रि और दिन स्त्री-पुरुष (**आ, स्मयेते**) अच्छे प्रकार मुसकियाते जैसे, वैसे वर्त्तमान (**नः**) हम लोगों को सेवन करते हैं, वैसे (**महोभिः**) बड़े गुण, कर्म, स्वभावों के साथ (**मित्रः**) वायु (**वरुणः**) जल (**उत**) और (**मरुत्वान्**) प्रशंसित रूपवाला (**इन्द्रः**) बिजुली आदि अग्नि (**वा**) अथवा हम लोगों को (**जुजोषत्**) निरन्तर सेवते हैं॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। यदि ईश्वर रात्रि और दिन न बनावे तो किसी का व्यवहार यथावत् सिद्ध न हो। जो भगवान् जल, सूर्य्य और वायु को न रचे तो किसी का जीवन न हो॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

दैव्या होतारा प्रथमा न्यृञ्जे सप्त पृक्षासः स्वधया मदन्ति।
ऋतं शंसन्त ऋतमित्त आहुरनु व्रतं व्रतपा दीध्यानाः॥७॥

दैव्या। होतारा। प्रथमा। नि। ऋञ्जे। सप्त। पृक्षासः। स्वधया। मदन्ति। ऋतम्। शंसन्तः। ऋतम्। इत्। ते। आहुः। अनु। व्रतम्। व्रतऽपाः। दीध्यानाः॥७॥

पदार्थः-(**दैव्या**) दिव्यगुणावेव (**होतारा**) दातारौ (**प्रथमा**) विस्तारकौ (**नि**) (**ऋञ्जे**) भर्जयामि (**सप्त**) (**पृक्षासः**) संपर्काः (**स्वधया**) जलेनान्नेन वा (**मदन्ति**) हृष्यन्ति (**ऋतम्**) जलम् (**शंसन्तः**) स्तुवन्तः (**ऋतम्**) सत्यम् (**इत्**) एव (**ते**) (**आहुः**) कथयन्तु (**अनु**) (**व्रतम्**) शीलम् (**व्रतपाः**) सुशीलरक्षकाः (**दीध्यानाः**) देदीप्यमानाः॥७॥

अन्वयः-यौ प्रथमा दैव्या होतारा सप्तविधानि हवींष्याधत्तो य ऋतं पृक्षास ऋतमिच्छंसन्तो दीध्याना व्रतपा अनु व्रतमाहुस्ते स्वधया मदन्ति तानहं न्यृञ्जे॥७॥

भावार्थः-ये यज्ञाहुतिभिः शुद्धानि पवनजलान्नादीनि सेवन्ते ते सुशीलाः सन्तः प्रशंसका भूत्वाऽऽनन्दन्ति॥७॥

पदार्थः-जो (**प्रथमा**) विस्तार करनेवाले (**दैव्या**) दिव्य गुणी (**होतारा**) अनेक पदार्थों के ग्रहणकर्त्ता (**सप्त**) सात प्रकार के होमने योग्य पदार्थों को अच्छे प्रकार धारण करते हैं वा जो (**ऋतम्**) जल का (**पृक्षासः**) सम्बन्ध करनेवाले (**ऋतम्**) सत्य की (**इत्**) ही (**शंसन्तः**) स्तुति करते हुए (**दीध्यानाः**) देदीप्यमान (**व्रतपाः**) उत्तमशील की रक्षा करनेवाले (**अनु, व्रतम्**) अनुकूल शील को (**आहुः**) कहें (**ते**) वे (**स्वधया**) अन्न और जल से (**मदन्ति**) हर्षित होते हैं, उन सबको मैं (**नि, ऋञ्जे**) न नष्ट करूं॥७॥

भावार्थः-जो यज्ञ की आहुतियों से शुद्ध पवन, जल और अन्नादिकों का सेवन करते हैं, वे

सुशील होते हुए प्रशंसावाले होकर आनन्द को प्राप्त होते हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ भार॑ती भार॑तीभिः स॒जोषा॒ इळा॑ दे॒वैर्म॑नु॒ष्ये॑भिर॒ग्निः।
सर॑स्वती सारस्व॒तेभि॑र॒र्वाक् ति॒स्रो दे॒वीर्ब॒र्हिरे॒दं स॑दन्तु॥८॥

आ। भार॑ती। भार॑तीभिः। सऽजोषाः॑। इळा॑। दे॒वैः। म॒नु॒ष्येभिः। अ॒ग्निः। सर॑स्वती। सा॒र॒स्व॒तेभिः॑। अ॒र्वाक्। ति॒स्रः। दे॒वीः। ब॒र्हिः। आ। इ॒दम्। स॒द॒न्तु॥८॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**भारती**) विद्याशिक्षाधृतावाक् (**भारतीभिः**) सुशिक्षिताभिर्वाणीभिः (**सजोषाः**) समानसेवनप्रीतिः (**इळा**) पृथिवी (**देवैः**) दिव्यैर्गुणैः (**मनुष्येभिः**) मननशीलैः (**अग्निः**) भास्वरः (**सरस्वती**) प्रशस्तज्ञानयुक्ता (**सारस्वतेभिः**) सरस्वत्यां भवैः (**अर्वाक्**) अधस्तात् (**तिस्रः**) त्रित्वसंख्याकाः (**देवीः**) देव्यो देदीप्यमानाः (**बर्हिः**) अन्तरिक्षम् (**आ**) (**इदम्**) प्रत्यक्षे वर्त्तमानम् (**सदन्तु**) तिष्ठन्तु॥८॥

अन्वयः-या भारतीभिः सह सजोषा भारती देवैर्मनुष्येभिश्च सह सजोषा इळा अग्निश्च सारस्वतेभिस्सह सरस्वती तिस्रो देवीरर्वागिदं बर्हिरासीदन्ति ताः सर्वे मनुष्या आसदन्तु॥८॥

भावार्थः-येषां मनुष्याणां विद्वद्धारणानुकूला धारणा प्रशंसानुकूला स्तुतिर्वागनुवृता वाग्वर्त्तते तेऽन्तरिक्षस्थां शुभां वाणीं प्राप्यानन्दन्ति॥८॥

पदार्थः-जो (**भारतीभिः**) सुन्दर शिक्षित वाणियों के साथ (**सजोषाः**) एकसी सेवा और प्रीतिवाली (**भारती**) विद्या और शिक्षा से धारण की हुई वाणी वा (**देवैः**) दिव्य गुण और (**मनुष्येभिः**) विचारशील पुरुषों के साथ समान सेवा और प्रीतिवाली (**इळा**) पृथिवी और (**अग्निः**) प्रकाशमान अग्नि वा (**सारस्वतेभिः**) वाणी में उत्पन्न हुए भावों के साथ (**सरस्वती**) प्रशंसित विज्ञानयुक्त वाणी (**तिस्रः**) उक्त तीनों (**देवीः**) देदीप्यमान (**अर्वाक्**) नीचे से (**इदम्**) इस (**बर्हिः**) अन्तरिक्ष को (**आ**) अच्छे प्रकार स्थिर होती हैं, उनको सब मनुष्य (**आ, सदन्तु**) आसादन करें, उनका आश्रय लें अर्थात् उनमें अच्छे प्रकार स्थित हों॥८॥

भावार्थः-जिन मनुष्यों की विद्वानों की धारणा के अनुकूल धारणा, प्रशंसा के अनुकूल स्तुति, वाणी के अनुकूल वर्त्तावली वाणी वर्त्तमान है, वे अन्तरिक्षस्थ शुभ वाणी को प्राप्त होकर आनन्द को प्राप्त होते हैं॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तन्नस्तुरीपमध पोषयित्नु देव त्वष्टर्वि रराणः स्यस्व।
यतो वीरः कर्मण्यः सुदक्षो युक्तग्रावा जायते देवकामः॥९॥

तत्। नः। तुरीपम्। अध। पोषयित्नु। देव। त्वष्टः। वि। रराणः। स्यस्वेति स्यस्व। यतः। वीरः। कर्मण्यः। सुऽदक्षः। युक्तऽग्रावा। जायते। देवऽकामः॥९॥

पदार्थः-(**तत्**) (**नः**) अस्माकम् (**तुरीपम्**) तारकं शीघ्रकारी। अत्र तुर धातोर्बाहुलकादौणादिक ईय प्रत्ययः। (**अध**) अथ (**पोषयित्नु**) पोषयित्री (**देव**) दिव्यगुणप्रद (**त्वष्टः**) छेदक (**वि**) (**रराणः**) रममाणः (**स्यस्व**) अन्तःकुरु (**यतः**) यस्मात् (**वीरः**) शुभगुणव्यापनशीलः (**कर्मण्यः**) यः कर्मणा संपद्यते सः (**सुदक्षः**) उत्तमबलः (**युक्तग्रावा**) युक्तो ग्रावा मेघो यस्मिन्त्सः (**जायते**) (**देवकामः**) यो देवान् कामयते सः॥९॥

अन्वयः-हे देव त्वष्टः! रराणः संस्त्वं नो यत्तुरीपमध पोषयित्नु वर्त्तते तद्वि स्यस्व यतो नोऽस्माकं कुले सुदक्षो युक्तग्रावा कर्मण्यो देवकामो वीरो जायते॥९॥

भावार्थः-ये विद्वांसोऽस्मभ्यं दुःखात्तारकं पुष्टिकरमुपदेशं कुर्युस्तान् शुभगुणकर्मस्वभावकामा वयं सदा सेवेमहि येनाऽस्माकं कुलमुत्कर्षमाप्नुयात्॥९॥

पदार्थः-हे (**देव**) दिव्य गुणों के देनेवाले (**त्वष्टः**) छिन्न-भिन्न कर्त्ता (**रराणः**) रमण करते हुए आप (**नः**) हमारी जो (**तुरीपम्**) शीघ्र कर्त्ता यज्ञ (**अध**) इसके अनन्तर (**पोषयित्नु**) पुष्टि की करनेवाली यज्ञक्रिया है (**तत्**) उन दोनों को (**वि, स्यस्व**) बीच में करो, जिससे हम लोगों के कुल में (**सुदक्षः**) उत्तम बली (**युक्तग्रावा**) जिसमें मेघयुक्त हैं (**कर्मण्यः**) जो कर्म से सिद्ध होता है (**देवकामः**) और दिव्यगुणों वा विद्वानों की कामना करता ऐसा (**वीरः**) शुभ गुणों में व्याप्त होनेवाला वीर पुरुष (**जायते**) उत्पन्न होता है॥९॥

भावार्थः-जो विद्वान् हमारे लिये दुःख से तारने और पुष्टि करनेवाले उपदेश को करें, उन्हें शुभ गुण, कर्म, स्वभाव की कामना करनेवाले हम लोग सदैव सेवें, जिससे हमारा कुल उत्कर्ष उन्नति को प्राप्त हो॥९॥

अथाग्निविषयमाह॥

अब अग्नि के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

वनस्पतेऽव सृजोप देवानग्निर्हविः शमिता सूदयाति।
सेदु होता सत्यतरो यजाति यथा देवानां जनिमानि वेद॥१०॥

वनस्पते। अव। सृज। उप। देवान्। अग्निः। हविः। शमिता। सूदयाति। सः। इत्। ऊम् इति। होता। सत्यऽतरः। यजाति। यथा। देवानाम्। जनिमानि। वेद॥१०॥

पदार्थः-(**वनस्पते**) किरणानां पालक (**अव**) (**सृज**) उत्पादय (**उप**) (**देवान्**) दिव्यान् गुणान् (**अग्निः**) पावकः (**हविः**) होतुं योग्यं द्रव्यम् (**शमिता**) उपशमकः (**सूदयाति**) क्षरयेत् वर्षयेत् (**सः**) (**इत्**) एव (**उ**) वितर्के (**होता**) आदाता (**सत्यतरः**) अतिशयेन सत्यः (**यजाति**) यजेत् (**यथा**) (**देवानाम्**) विदुषां दिव्यानां पदार्थानां वा (**जनिमानि**) जन्मानि (**वेद**) जानीयात्॥१०॥

अन्वयः-हे वनस्पते! यथाग्निर्हविः सूदयाति तथा देवानुपसृज दोषानवसृज यः सत्यतरो होता यथा देवानां जनिमानि वेद स इदु शमिता यजाति॥१०॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यथा सूर्य्यकिरणा दिव्यान् गुणान् सृजन्ति दोषान् दूरीकुर्वन्ति तथा विद्वांसो जगति गुणान् जनयित्वा दोषान् दूरीकुर्य्युः॥१०॥

पदार्थः-हे (**वनस्पते**) किरणों के पालनेवाले (**यथा**) जैसे (**अग्निः**) अग्नि (**हविः**) होमने योग्य पदार्थों को (**सूदयाति**) वर्षाता है, वैसे (**देवान्**) दिव्य गुणों को (**उप, सृज**) अपने समीप उत्पन्न कराओ, दोषों को (**अव**) न उत्पन्न करो। जो (**सत्यतरः**) अतीव सत्य (**होता**) गुणों का ग्रहण करनेवाला जैसे (**देवानाम्**) विद्वानों वा दिव्य पदार्थों के (**जनिमानि**) जन्मों को (**वेद**) जाने (**सः, इत्**) वही (**उ**) तर्क-वितर्क के साथ (**शमिता**) शान्ति करनेवाला (**यजाति**) यज्ञ करे॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जैसे सूर्य्य की किरणें दिव्य गुणों को उत्पन्न करतीं और दोषों को दूर करती हैं, वैसे विद्वान् लोग जगत् में गुणों को उत्पन्न करके दोषों को दूर करें॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ या॑ह्यग्ने समिधा॒नो अ॒र्वाङिन्द्रे॑ण दे॒वैः स॒रथं॑ तु॒रेभिः॑।

ब॒र्हिर्न॒ आस्ता॒मदि॑तिः सुपु॒त्रा स्वाहा॑ दे॒वा अ॒मृता॑ मादयन्ताम्॥११॥२३॥

आ। या॒हि॒। अ॒ग्ने॒। स॒म्ऽइ॒धा॒नः। अ॒र्वाङ्। इन्द्रे॑ण। दे॒वैः। स॒ऽरथ॑म्। तु॒रेभिः॑। ब॒र्हिः। न॒ः। आस्ता॑म्। अदि॑तिः। सु॒ऽपु॒त्रा। स्वाहा॑। दे॒वाः। अ॒मृता॑ः। मा॒द॒य॒न्ता॒म्॥११॥

पदार्थः-(**आ**) (**याहि**) आगच्छ (**अग्ने**) वह्निवत्प्रकाशमान विद्वन् (**समिधानः**) प्रदीप्तः (**अर्वाङ्**) योऽर्वागधोऽञ्चति गच्छति सः (**इन्द्रेण**) वायुना विद्युता वा (**देवैः**) दिव्यैः (**सरथम्**) रथेन सह वर्त्तमानम् (**तुरेभिः**) शीघ्रगामिभिरश्वैः (**बर्हिः**) अन्तरिक्षम् (**न**) इव (**आस्ताम्**) उपविशतु (**अदितिः**) माता (**सुपुत्रा**) शोभनाः पुत्रा यस्याः सा (**स्वाहा**) शोभनान्नेन सुशिक्षितया वाचा वा (**देवाः**) दिव्यविद्याः (**अमृताः**) आत्मस्वरूपेण नित्याः (**मादयन्ताम्**) हर्षयन्तु॥११॥

अन्वयः-हे अग्ने! यथा समिधानोऽर्वाङिन्द्रेण देवैः तुरेभिः सह सरथं बर्हिर्न व्याप्तो भवति तथा त्वमा याहि यथा सुपुत्रा अदितिः सुखिन्यास्तां तथाऽमृता देवा अस्मान् स्वाहा मादयन्ताम्॥११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा विद्युदादिपदार्थैश्चालितानि यानानि भूसमुद्राऽन्तरिक्षेषु सद्यो गच्छन्ति तथा विद्वच्छिक्षया विद्याः प्राप्य सद्यो गुरुकुलं गत्वा ब्रह्मचारिण आगत्य सर्वानानन्दयन्त्विति॥११॥

अत्र वह्निविद्वद्वाणीगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुर्थं सूक्तं त्रयोविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** वह्नि के समान प्रकाशमान विद्वान्! जैसे **(समिधानः)** प्रदीप्त **(अर्वाङ्)** और नीचे जानेवाला **(इन्द्रेण)** पवन वा बिजुली और **(देवैः)** दिव्य **(तुरेभिः)** शीघ्रगामी घोड़ों के साथ **(सरथम्)** रथ के सहित वर्त्तमान **(बर्हिः)** जो अन्तरिक्ष **(न)** उसके समान व्याप्त होता है, वैसे आप **(आ, याहि)** आओ वा जैसे **(सुपुत्रा)** सुन्दर पुत्रोंवाली **(अदितिः)** माता सुखिनी **(आस्ताम्)** हो, वैसे **(अमृताः)** आत्मस्वरूप से नित्य **(देवाः)** दिव्य विद्यावाले विद्वान् जन हम लोगों को **(स्वाहा)** उत्तम अन्न वा सुशिक्षित वाणी से **(मादयन्ताम्)** हर्षित करें॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे बिजुली आदि पदार्थों से चलाये हुए रथ आदि यान भू, समुद्र और अन्तरिक्ष में शीघ्र जाते हैं, वैसे विद्वानों की शिक्षा से विद्याओं को प्राप्त होकर शीघ्र गुरुकुल जाकर और ब्रह्मचारियों को प्राप्त होकर सबको[२] आनन्द करें॥११॥

इस सूक्त में वह्नि, विद्वान् और वाणी के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्तार्थ के साथ सङ्गति समझनी चाहिये॥

यह चौथा सूक्त और तेईसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

---

२. और ब्रह्मचारी लौटकर सबको॥सं.॥

प्रत्यग्निरुषस इत्येकादशर्चस्य पञ्चमसूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। अग्निर्देवता। १, २, ११ भुरिक् पङ्क्तिः। ३ पङ्क्तिः। ६ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ४ त्रिष्टुप्। ५, ७, १० निचृत्त्रिष्टुप्। ८, ९ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ विद्वत्सम्बन्धेनाग्निगुणानाह॥

अब एकादश ऋचावाले पांचवें सूक्त का प्रारम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में विद्वानों के सम्बन्ध से अग्नि के गुणों का कहते हैं॥

प्रत्यग्निरुषसश्चेकितानोऽबोधि विप्रः पदवीः कवीनाम्।
पृथुपाजा देवयद्भिः समिद्धोऽप द्वारा तमसो वह्निरावः॥१॥

प्रति। अग्निः। उषसः। चेकितानः। अबोधि। विप्रः। पदऽवीः। कवीनाम्। पृथुऽपाजाः। देवयत्ऽभिः। सम्ऽइद्धः। अप। द्वारा। तमसः। वह्निः। आवरित्यावः॥१॥

पदार्थः-(**प्रति**) (**अग्निः**) (**उषसः**) प्रभातान् (**चेकितानः**) ज्ञापकः (**अबोधि**) (**विप्रः**) मेधावी (**पदवीः**) यः प्राप्तव्यानि पदानि व्येति व्याप्नोति सः (**कवीनाम्**) विदुषाम् (**पृथुपाजाः**) बृहद्बलः (**देवयद्भिः**) देवान् कामयद्भिः (**समिद्धः**) प्रदीप्तः (**अप**) (**द्वारा**) द्वाराणि (**तमसः**) अन्धकारात् (**वह्निः**) वोढा (**आवः**) आवृणोति॥१॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथाऽग्निरुषसः प्रत्यबोधि तथा चेकितानः कवीनां पदवीः पृथुपाजा विप्रो देवयद्भिः सह प्रत्यबोधि। यथा समिद्धो वह्निस्तमस आवृतानि द्वारापावस्तथा विद्वान्भवेत्॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽग्निरुषः काले सर्वान् प्राणिनो जागारयति अन्धकारं निवर्त्तयति तथा विद्वांसोऽविद्यायां सुप्तान् जनान् प्रतिबोध्यैतेषामात्मनोऽज्ञानावरणात् पृथक् कुर्वन्ति॥१॥

पदार्थः-हे विद्वान्! जैसे (**अग्निः**) अग्नि (**उषसः**) प्रभात समयों के (**प्रति, अबोधि**) प्रति जाना जाता है, वैसे (**चेकितानः**) ज्ञान देनेवाला अर्थात् समझानेवाला (**कवीनाम्**) विद्वानों की (**पदवीः**) पदवियों को प्राप्त होता (**पृथुपाजाः**) महान् बलवाला (**विप्रः**) बुद्धिमान् विद्वान् जन (**देवयद्भिः**) विद्वानों की कामना करते हुओं के साथ जाना जाता है। जैसे (**समिद्धः**) प्रदीप्त (**वह्निः**) और पदार्थों की गति करानेवाला अग्नि (**तमसः**) अन्धकार से ढँपे हुए (**द्वारा**) द्वारों को (**अप, आवः**) खोलता है, वैसे विद्वान् हो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे अग्नि प्रातःकाल में सब प्राणियों को जगाता और अन्धकार को निवृत्त करता है, वैसे विद्वान् जन अविद्या में सोते हुए मनुष्यों को जगाते हैं और इनके आत्माओं को अज्ञान के आवरण से अलग करते हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

प्रेद्वग्निर्वावृधे स्तोमेभिर्गीर्भिः स्तोतृणां नमस्य उक्थैः।

पूर्वीर्ऋतस्य संदृशश्चकानः सं दूतो अद्यौदुषसो विरोके॥ २॥

प्र। इत्। ऊम् इति। अग्निः। ववृधे। स्तोमेभिः। गीःऽभिः। स्तोतृणाम्। नमस्यः। उक्थैः। पूर्वीः। ऋतस्य। सम्ऽदृशः। चकानः। सम्। दूतः। अद्यौत्। उषसः। विऽरोके॥ २॥

पदार्थः-(**प्र**) प्रकृष्टे (**इत्**) एव (**उ**) वितर्के (**अग्निः**) पावकः (**ववृधे**) वर्धते (**स्तोमेभिः**) स्तुवन्ति सकला विद्या यैस्तैः (**गीर्भिः**) सुशिक्षिताभिर्वाग्भिः (**स्तोतृणाम्**) अखिलविद्याप्रशंसकानाम् (**नमस्यः**) पूज्यः (**उक्थैः**) उचन्ति सर्वा विद्या येषु तैः (**पूर्वीः**) पूर्णा बह्वी विद्याः (**ऋतस्य**) सत्यस्य (**संदृशः**) सम्यग्द्रष्टुं योग्यस्य (**चकानः**) कामयमानः (**सम्**) सम्यक् (**दूतः**) यो दुनोति परितापयति सः (**अद्यौत्**) द्योतयति (**उषसः**) प्रभातान् (**विरोके**) अभिप्रीते प्रदीपने वा॥ २॥

अन्वयः-यथा दूतोऽग्निरिन्धनैः प्रववृधे तथा स्तोतृणां स्तोमेभिर्गीर्भिरुक्थैर्नमस्यो वर्धते यथाग्निर्विरोके उषसोऽद्यौत् तथा संदृश ऋतस्य पूर्वीश्चकानो इदु विद्वान् संद्योतयति॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथेन्धनघृतादिना वह्निः प्रवृध्य प्रकाशयति तथा ब्रह्मचर्य्यविद्याभ्यासादिभिर्मनुष्याणामात्मानो ज्ञानवृद्धा भूत्वा सनातनीविद्याः सर्वेभ्यो दत्वा पूज्यतमा जायन्ते॥ २॥

पदार्थः-जैसे (**दूतः**) परिताप देनेवाला (**अग्निः**) अग्नि इन्धनों से (**प्र, ववृधे**) अच्छे प्रकार बढ़ता है, वैसे (**स्तोतृणाम्**) समस्त विद्या प्रशंसा करनेवालों के (**स्तोमेभिः**) उन व्यवहारों से जिनसे सब विद्याओं की स्तुति करते हैं (**गीर्भिः**) तथा सुशिक्षित वाणियों से (**उक्थैः**) और सब विद्याओं का सम्बन्ध जिनमें करते हैं, उन व्यवहारों से (**नमस्यः**) जो सत्कार करने योग्य है, वह बढ़ता है जैसे अग्नि (**विरोके**) सब ओर से जिनमें प्रीति है, उस व्यवहार के वा प्रकाश के निमित्त (**उषसः**) प्रभात समयों को (**अद्यौत्**) प्रकाशित करता है, वैसे (**संदृशः**) अच्छे प्रकार देखने को (**ऋतस्य**) सत्य सम्बन्धी (**पूर्वीः**) पूर्ण बहुत विद्या की (**चकानः**) कामना करता हुआ (**इत्, उ**) ही तर्क-वितर्क के साथ विद्वान् (**सम्**) अच्छे प्रकार प्रकाशित होता है॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे इन्धन और घृतादिकों से अग्नि प्रवृद्ध होकर प्रकाशित होता, वैसे ब्रह्मचर्य और विद्याभ्यासादिकों से मनुष्यों का आत्मा ज्ञानवृद्ध होकर सनातन विद्या सबको देकर पूज्यतम होते हैं॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अधाय्यग्निर्मानुषीषु विक्ष्वपां गर्भो मित्र ऋतेन साधन्।

आ हर्यतो यजतः सान्वस्थादभूदु विप्रो हव्यो मतीनाम्॥३॥

अधायि। अग्निः। मानुषीषु। विक्षु। अपाम्। गर्भः। मित्रः। ऋतेन। साधन्। आ। हर्यतः। यजतः। सानु। अस्थात्। अभूत्। ऊम् इति। विप्रः। हव्यः। मतीनाम्॥३॥

पदार्थः-(**अधायि**) धीयते (**अग्निः**) (**मानुषीषु**) मनुष्याणामिमासु (**विक्षु**) प्रजासु (**अपाम्**) प्राणानाम् (**गर्भः**) गर्भइव भूत्वा (**मित्रः**) सुहृत् (**ऋतेन**) सत्येन (**साधन्**) अत्र विकरणव्यत्ययः। (**आ**) (**हर्य्यतः**) कमनीयः (**यजतः**) सङ्गन्तव्यः (**सानु**) संभजनीयम् (**अस्थात्**) तिष्ठेत् (**अभूत्**) भवेत् (**उ**) (**विप्रः**) (**हव्यः**) आदातुमर्हः (**मतीनाम्**) विपश्चिताम्॥३॥

अन्वयः-यथा विद्वद्भिरपां गर्भोऽग्निर्मानुषीषु विक्ष्वधायि तथा मतीनां मित्रो य ऋतेन साधन् हर्यतो यजतो हव्यो विप्रो धृतः स उ सान्वस्थादभूत्॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यूयं यथेश्वरेणाग्निः सकलप्रजाप्रकाशकः स्थापितस्तथा विद्याधर्मप्रकाशकान् विदुषो विजानीत॥३॥

पदार्थः-जैसे विद्वानों ने (**अपाम्**) प्राणों को (**गर्भः**) गर्भ के समान होकर (**अग्निः**) अग्नि (**मानुषीषु**) मनुष्य सम्बन्धी इन (**विक्षु**) प्रजाओं में (**अधायि**) धारण किया जाता, वैसे (**मतीनाम्**) विशेष बुद्धिमानों का (**मित्रः**) मित्र जो (**ऋतेन**) सत्य से (**साधन्**) कार्य सिद्ध करता हुआ (**हर्यतः**) मनोहर (**यजतः**) सङ्गम (**हव्यः**) और ग्रहण करने योग्य (**विप्रः**) बुद्धिमान् जन धारण किया हुआ है वह (**उ**) ही (**सानु**) विभाग करने योग्य पदार्थ की (**आ, अस्थात्**) प्रतिज्ञा करता और प्रसिद्ध (**अभूत्**) होता है॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे ईश्वर ने अग्नि सकल प्रजा का प्रकाश करनेवाला स्थापित किया, वैसे विद्या और धर्म के प्रकाश करनेवाले विद्वानों को तुम जानो॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

मित्रो अग्निर्भवति यत्समिद्धो मित्रो होता वरुणो जातवेदाः।

मित्रो अध्वर्युरिषिरो दमूना मित्रः सिन्धूनामुत पर्वतानाम्॥४॥

मित्रः। अग्निः। भवति। यत्। सम्ऽइद्धः। मित्रः। होता। वरुणः। जातऽवेदाः। मित्रः। अध्वर्युः। इषिरः। दमूनाः। मित्रः। सिन्धूनाम्। उत। पर्वतानाम्॥४॥

पदार्थः-(**मित्रः**) सुहृत् (**अग्निः**) पावकइव (**भवति**) (**यत्**) यः (**समिद्धः**) प्रदीप्तः (**मित्रः**) (**होता**) आदातेव (**वरुणः**) वरः (**जातवेदाः**) यथा जातानां सर्वेषां पदार्थानां वेत्ता जगदीश्वरः (**मित्रः**) (**अध्वर्युः**) आत्मनोऽध्वरमहिंसाधर्ममिच्छुः (**इषिरः**) इच्छुः (**दमूनाः**) दमनशीलः (**मित्रः**) (**सिन्धूनाम्**) नदीनाम् (**उत**) अपि (**पर्वतानाम्**) शैलानाम्॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यद्यस्सिन्धूनामुत पर्वतानां समिद्धोऽग्निरिव मित्रो होतेव मित्रो जातवेदा इव वरुणोऽध्वर्य्युरिव मित्र इषिरो दमूना इव मित्रो भवति तं सत्कुरुत॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्यो नदीशैलौषध्यादीनां किरणद्वारा पोषकः शोषको वा भवति तथा सखायो धर्मे पोषका अधर्मे शोषका अर्थात् धर्मे प्रवर्त्तका अधर्मान्निवर्त्तका भवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यत्)** जो **(सिन्धूनाम्)** नदियों **(उत)** और **(पर्वतानाम्)** बड़ी शिलाओं के बीच **(समिद्धः)** प्रदीप्त **(अग्निः)** अग्नि के समान **(मित्रः)** मित्र वा **(होता)** ग्रहण करनेहारे के तुल्य **(मित्रः)** मित्र वा **(जातवेदाः)** उत्पन्न हुए पदार्थों के जाननेवाले जगदीश्वर के समान **(वरुणः)** श्रेष्ठ वा **(अध्वर्य्युः)** अपने को अहिंसा धर्म की इच्छा करनेवाले के समान **(मित्रः)** मित्र वा **(इषिरः)** इच्छा करनेवाले **(दमूनाः)** दमनशील के समान **(मित्रः)** मित्र **(भवति)** होता है, उसका सत्कार करिये॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य; नदी, शैल और ओषधि आदिकों को किरणों के द्वारा पुष्ट करने वा उनको सुखानेवाला होता है, वैसे मित्रजन धर्म में पुष्टिकारक और अधर्म से निवर्त्तक होते हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

पाति प्रियं रिपो अग्रं पदं वेः पाति यह्वश्चरणं सूर्यस्य।

पाति नाभा सप्तशीर्षाणमग्निः पाति देवानामुपमादमृष्वः॥५॥२४॥

पाति। प्रियम्। रिपः। अग्रम्। पदम्। वेः। पाति। यह्वः। चरणम्। सूर्यस्य। पाति। नाभा। सप्तऽशीर्षाणम्। अग्निः। पाति। देवानाम्। उपऽमादम्। ऋष्वः॥५॥

पदार्थः-**(पाति)** **(प्रियम्)** **(रिपः)** पृथिव्याः **(अग्रम्)** उपरिभागम् **(पदम्)** प्राप्तव्यं स्थानम् **(वेः)** गन्त्र्याः **(पाति)** **(यह्वः)** महान् **(चरणम्)** गमनम् **(सूर्य्यस्य)** **(पाति)** **(नाभा)** मध्ये वर्तमानेऽन्तरिक्षे **(सप्तशीर्षाणम्)** सप्तविधानि शिरांसि किरणा यस्मिँस्तम् **(अग्निः)** पावकः **(पाति)** **(देवानाम्)** दिव्यानां विदुषाम् **(उपमादम्)** य उपमां ददाति तम् **(ऋष्वः)** प्रापकः॥५॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथाऽग्निर्वे रिपोऽग्रं प्रियं पदं पाति यह्वः सन् सूर्य्यस्य चरणं पाति नाभा सप्तशीर्षाणं पाति ऋष्वस्सन् देवानामुपमादं पाति तथा त्वं भव॥५॥

भावार्थः-हे विद्वन्! यथा वह्निर्गतिमतां पृथिव्यादीनां रक्षाप्रकाशनिमित्तेन रक्षको वर्त्तते तथा त्वं सर्वेषां रक्षको भवेः॥५॥

पदार्थः-हे विद्वान् जैसे **(अग्निः)** अग्नि **(वेः)** चलती हुई **(रिपः)** पृथिवी के **(अग्रम्)** ऊपरले

(प्रियम्) प्रिय **(पदम्)** प्राप्त होने योग्य स्थान को **(पाति)** प्राप्त होता और **(यह्वः)** बड़ा होता हुआ **(सूर्य्यस्य)** सूर्य्य के **(चरणम्)** गमन को **(पाति)** प्राप्त होता वा **(नाभा)** बीच में वर्त्तमान अन्तरिक्ष में **(सप्तशीर्षाणम्)** सात प्रकार की शिररूप किरणें जिसमें विद्यमान उस सूर्य्यमण्डल को **(पाति)** प्राप्त होता वा **(ऋष्वः)** प्राप्ति करानेवाला होता हुआ **(देवानाम्)** दिव्य विद्वानों के **(उपमादम्)** उस व्यवहार को जो उपमा दिलाता है **(पाति)** प्राप्त होता है, वैसे तुम होओ॥५॥

भावार्थः-हे विद्वान्! जैसे वह्नि, चालवाले पृथिवी आदि लोकों की रक्षा और प्रकाश के निमित्त से उनकी रक्षा करनेवाला वर्त्तमान होता है, वैसे आप सबकी रक्षा करनेवाले होओ॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ऋभुश्चक्र ईड्यं चारु नाम विश्वानि देवो वयुनानि विद्वान्।
ससस्य चर्म घृतवत्पदं वेस्तदिदग्नी रक्षत्यप्रयुच्छन्॥६॥

ऋभुः। चक्रे। ईड्यम्। चारु। नाम। विश्वानि। देवः। वयुनानि। विद्वान्। ससस्य। चर्म। घृतऽवत्। पदम्। वेः। तत्। इत्। अग्निः। रक्षति। अप्रऽयुच्छन्॥६॥

पदार्थः-**(ऋभुः)** महान् **(चक्रे)** करोति **(ईड्यम्)** स्तोतुमर्हम् **(चारु)** सुन्दरम् **(नाम)** वाचं जलं वा। **नामेति वाङ्नामसु पठितम्।** (निघं०१.११)। **उदकनामसु च।** (निघं०१.१२)। **(विश्वानि)** सर्वाणि **(देवः)** दाता **(वयुनानि)** प्रज्ञानानि **(विद्वान्)** **(ससस्य)** शयानस्य **(चर्म)** **(घृतवत्)** घृतेन तुल्यम् **(पदम्)** **(वेः)** प्राप्तस्य **(तत्)** **(इत्)** एव **(अग्निः)** पावकः **(रक्षति)** **(अप्रयुच्छन्)** अप्रमाद्यन्॥६॥

अन्वयः-य ऋभुर्देवोऽप्रयुच्छन् विद्वानीड्यं चारु नाम विश्वानि वयुनानि चक्रे तदित्प्राप्तोऽग्निरिव वेः ससस्य पदं चर्म घृतवत् रक्षति॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा प्राणाऽग्निः शरीरं रक्षति सुप्तं जागारयति तथा अध्यापकोपदेशकाः सुशिक्षिता वाचोऽखिलानि विज्ञानानि प्रापय्य मनुष्यान् जागृतान् कुर्वन्ति॥६॥

पदार्थः-जो **(ऋभुः)** बड़ा **(देवः)** देनेवाला **(अप्रयुच्छन्)** प्रमाद न करता हुआ **(विद्वान्)** विद्वान् **(ईड्यम्)** स्तुति के योग्य कर्म **(चारु)** सुन्दर **(नाम)** वाणी वा जल को और **(विश्वानि)** समस्त **(वयुनानि)** उत्तम ज्ञानों को **(चक्रे)** करता है, वह **(तत्, इत्)** उन्हीं को प्राप्त हुआ **(अग्निः)** अग्नि के समान **(वेः)** पाये **(ससस्य)** और सोते हुए मनुष्य के **(पदम्)** पद और **(चर्म)** त्वचा की **(घृतवत्)** घी के तुल्य **(रक्षति)** रक्षा करता है॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे प्राणाग्नि शरीर की रक्षा करता है, सोते हुए को जगाता है, वैसे अध्यापक और उपदेशक उत्तम शिक्षा को पाये हुए वाणी के समस्त विज्ञानों की

प्राप्ति करा कर मनुष्यों को जगाते हैं॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ योनि॑म॒ग्निर्घृ॒तव॑न्तमस्थात् पृ॒थुप्र॑गाणमु॒शन्त॑मुशा॒नः।
दीद्या॑नः॒ शुचि॑र्ऋ॒ष्वः पा॑व॒कः पुनः॑पुनर्मा॒तरा॒ नव्य॑सी कः॥७॥

आ। योनि॑म्। अ॒ग्निः। घृ॒तऽव॑न्तम्। अ॒स्था॒त्। पृ॒थुऽप्र॑गानम्। उ॒शन्त॑म्। उ॒शा॒नः। दीद्या॑नः। शुचि॑ः। ऋ॒ष्वः। पा॒व॒कः। पुन॑ःऽपुनः। मा॒तरा॑। नव्य॑सी॒ इति॑। क॒रिति॑ कः॥७॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**योनिम्**) गृहम् (**अग्निः**) पावकः (**घृतवन्तम्**) बहुघृतमुदकं विद्यते यस्मिन् (**अस्थात्**) आतिष्ठेत् (**पृथुप्रगाणम्**) पृथूनि प्रकृष्टानि गानानि स्तवनानि यस्मिँस्तम् (**उशन्तम्**) कामयमानम् (**उशानः**) कामयमानः (**दीद्यानः**) देदीप्यमानः (**शुचि**) पवित्रः (**ऋष्वः**) प्राप्तुं योग्यः (**पावकः**) पवित्रकर्त्ता (**पुनःपुनः**) वारंवारम् (**मातरा**) मातरौ (**नव्यसी**) अतिशयेन नवीने (**कः**) करोति॥७॥

अन्वयः-यथा पावकोऽग्निः पुनःपुनर्नव्यसी मातरा कः घृतवन्तं योनिमास्थात् तथा दीद्यानः शुचिर्ऋष्वः पृथुप्रगाणमुशन्तमुशानः सन् विद्याध्यापकौ मातापितृवन्मत्वा स्वस्वभावाख्यं गृहमातिष्ठेत्॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा विद्युदग्निः पृथिव्यादिषु स्थित्वाऽभिव्याप्य कस्माच्चिन्न विरुध्यति तथा विद्वांसः कस्माच्चिद्विरोधं नाचरेयुः। यथाऽग्निः शुद्धशोधकोऽस्ति तथा पवित्रः सन्नन्यान् पवित्रान् कुर्य्यात्॥७॥

पदार्थः-जैसे (**पावकः**) पवित्र करनेवाला (**अग्निः**) अग्नि (**पुनःपुनः**) वारंवार (**नव्यसी**) अतीव नवीन (**मातरा**) माता-पिता को (**कः**) प्रसिद्ध करता है वा (**घृतवन्तम्**) घी जिसमें विद्यमान उस (**योनिम्**) घर को (**आ, अस्थात्**) आस्था करता अर्थात् सब प्रकार उसमें स्थिर होता है, वैसे (**दीद्यानः**) देदीप्यमान (**शुचिः**) पवित्र (**ऋष्वः**) और प्राप्त होने योग्य जन (**पृथुप्रगाणम्**) जिसमें विशेष गान वा स्तुति विद्यमान है वा जो (**उशन्तम्**) कामना किया जाता है उसको (**उशानः**) कामना करता हुआ विद्या और पढ़ानेवाले को माता-पिता के तुल्य मान अपने स्वभावरूपी घर को अच्छा स्थित हो॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे विद्युत्रूप अग्नि पृथिवी आदि पदार्थों में स्थिर और सब ओर से अभिव्याप्त होकर किसी से विरुद्ध नहीं होता, वैसे विद्वान् जन किसी से विरुद्ध आचरण न करें। जैसे अग्नि शुद्ध और दूसरों को शुद्ध करनेवाला है, वैसे पवित्र होता हुआ औरों को पवित्र करे॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स॒द्यो जा॒त ओष॑धीभिर्ववक्षे॒ यदी॒ वर्ध॑न्ति प्र॒स्वो॑ घृ॒तेन॑।
आप॑इव प्र॒वता॒ शुम्भ॑माना उरु॒ष्यद॒ग्निः पि॒त्रोरु॒पस्थे॑॥८॥

स॒द्यः। जा॒तः। ओष॑धीभिः। व॒व॒क्षे॒। यदि॑। वर्ध॑न्ति। प्र॒ऽस्वः॑। घृ॒तेन॑। आप॑ःऽइव। प्र॒ऽवता॑। शुम्भ॑मानाः। उ॒रु॒ष्यत्। अ॒ग्निः। पि॒त्रोः। उ॒पस्थे॑॥८॥

पदार्थः-(**सद्यः**) शीघ्रम् (**जातः**) प्रकटः सन् (**ओषधीभिः**) यवादिभिः (**ववक्षे**) रुष इव विरुध्यति (**यदि**) अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**वर्धन्ति**) वर्धन्ते (**प्रस्वः**) याः प्रसूयन्ते ताः (**घृतेन**) उदकेन (**आपइव**) जलानीव (**प्रवता**) निम्नमार्गेण (**शुम्भमानाः**) सुशोभायुक्ताः (**उरुष्यत्**) आत्मन उरुर्बहुरिवाचरति (**अग्निः**) पावकः (**पित्रोः**) द्यावापृथिव्योः (**उपस्थे**) उपतिष्ठन्ति यस्मिँस्तस्मिन्। अत्र **घञर्थे कविधानमिति** वार्त्तिकेनाधिकरणकारके कः प्रत्ययः॥८॥

अन्वयः-यदि प्रस्वो घृतेन शुम्भमाना आपइव वर्धन्ति तर्हि ताभिरोषधीभिः सह प्रवता घृतेन यः सद्यो जातोऽग्निर्ववक्षे यदि पित्रोरुपस्थे उरुष्यत् तं विजानीत॥८॥

भावार्थः-यदि वह्निः सूर्य्यरूपेण भूमेर्जलमाकृष्य न वर्षयेत्तर्हि काचिदप्योषधिर्न सम्भवेद् यथा कश्चिद् रुष्टः सन् कञ्चिद्धन्ति तथा प्रदीप्तः सन् वह्निः प्राप्तान् पदार्थान् हन्ति यथा तुष्टः सन् मित्रं मित्रं रक्षति तथा युक्त्या सेवितः सन्नग्निः पदार्थान् रक्षति॥८॥

पदार्थः-(**यदि**) जो (**प्रस्वः**) उत्पन्न होती हैं वे ओषधी (**घृतेन**) जल से (**शुम्भमानाः**) सुन्दर शोभित (**आपइव**) जलों के समान (**वर्धन्ति**) बढ़ती हैं तो उन (**ओषधीभिः**) ओषधियों के साथ (**प्रवता**) नीचला मार्ग है जिसका अर्थात् टपकता हुआ जो घृत उससे जो (**सद्यः**) शीघ्र (**जातः**) प्रकट होता हुआ (**अग्निः**) अग्नि (**ववक्षे**) रूठे के समान विरुद्ध होता है, जो अग्नि (**पित्रोः**) माता-पिता स्थानीय आकाश और पृथिवी के (**उपस्थे**) उस भाग में जिसमें स्थित होते हैं (**उरुष्यत्**) अपने को बहुत के समान आचरण करता है, उसको जानो॥८॥

भावार्थः-यदि अग्नि सूर्यरूप से भूमि के जल को खींच कर वर्षा न करावे तो कोई भी ओषधि न हो। जैसे कोई रूठा हुआ किसी को मारता है, वैसे जलता हुआ अग्नि पाये हुए पदार्थों को जला देता है। और जैसे प्रसन्न होता हुआ मित्र मित्र की रक्षा करता है, वैसे युक्ति से सेवन किया हुआ अग्नि पदार्थों की रक्षा करता है॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उद्व॑ष्टुतः स॒मिधा॑ य॒ह्वो अ॑द्यौद् वर्ष्म॑न्दि॒वो अधि॒ नाभा॑ पृथि॒व्याः।
मि॒त्रो अ॒ग्निरीड्यो॑ मात॒रिश्वा॑ दू॒तो व॑क्षद् य॒जथा॑य दे॒वान्॥९॥

उत्। ऊम् इति। स्तुतः। सम्ऽइधा। यह्वः। अद्यौत्। वर्ष्मन्। दिवः। अधि। नाभा। पृथिव्याः। मित्रः। अग्निः। ईड्यः। मातरिश्वा। आ। दूतः। वक्षत्। यजथाय। देवान्॥९॥

पदार्थः-(**उत्**) (**उ**) (**स्तुतः**) प्रशंसितः (**समिधा**) (**यह्वः**) महान् (**अद्यौत्**) द्योतते (**वर्ष्मन्**) सेचने (**दिवः**) प्रकाशस्य (**अधि**) (**नाभा**) मध्ये (**पृथिव्याः**) भूमेः अन्वेषणीयः (**मित्रः**) सखा (**अग्निः**) वह्निः (**ईड्यः**) स्तोतव्यः (**मातरिश्वा**) यो मातरि श्वसिति (**आ**) (**दूतः**) दूत इव (**वक्षत्**) वहेत् (**यजथाय**) यजनाय सङ्गमनाय (**देवान्**) दिव्यगुणान्॥९॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथेड्योऽग्निः समिधा वर्ष्मन् दिवः पृथिव्या नाभा उदद्यौत् यो मातरिश्वा दूतस्सन् यजथाय देवानधि वक्षत्तथा उ स्तुतो यह्व ईड्यो मित्रो भवेत्॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽस्मिन् ब्रह्माण्डे सूर्य्यरूपेणाग्निः सर्वान् तापयति तथा महान् सखा सखीनानन्दयति दिव्यान् गुणाँश्च प्रापयति॥९॥

पदार्थः-हे विद्वान्! जैसे (**ईड्यः**) स्तुति करने योग्य (**अग्निः**) अग्नि (**समिधा**) समिधा से (**वर्ष्मन्**) सेचन के विषय में (**दिवा**) प्रकाश और (**पृथिव्याः**) भूमि के (**नाभा**) बीच में (**उत्, अद्यौत्**) उदय होता है वा जो (**मातरिश्वा**) अन्तरिक्ष में सोनेवाला (**दूतः**) दूत के समान हुआ (**यजथाय**) सङ्गम करनेवाले के लिये (**देवान्**) दिव्य गुणों को (**अधि, वक्षत्**) अधिकता से प्राप्त करे, (**उ**) वैसे ही (**स्तुतः**) प्रशंसा को प्राप्त हुआ (**यह्वः**) महान् (**ईड्यः**) स्तुति करने योग्य (**मित्रः**) मित्र हो॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे इस ब्रह्माण्ड में सूर्य्यरूप से अग्नि सबको तपाता है, वैसे महान् मित्र अपने मित्रों को आनन्दित करता और दिव्य गुणों की प्राप्ति कराता है॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उदस्तम्भीत् समिधा नाकमृष्वो३ग्निर्भवन्नुत्तमो रोचनानाम्।
यदी भृगुभ्यः परि मातरिश्वा गुहा सन्तं हव्यवाहं समीधे॥१०॥

उत्। अस्तम्भीत्। सम्ऽइधा। नाकम्। ऋष्वः। अग्निः। भवन्। उत्ऽतमः। रोचनानाम्। यदि। भृगुऽभ्यः। परि। मातरिश्वा। गुहा। सन्तम्। हव्यऽवाहम्। सम्ऽईधे॥१०॥

पदार्थः-(**उत्**) (**अस्तम्भीत्**) उत्तभ्नाति (**समिधा**) प्रदीपनेन (**नाकम्**) अविद्यमानदुःखम् (**ऋष्वः**) महान् (**अग्निः**) (**भवन्**) (**उत्तमः**) श्रेष्ठः (**रोचनानाम्**) प्रकाशमानानाम् (**यदि**)। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**भृगुभ्यः**) भर्जमानेभ्यः (**परि**) सर्वतः (**मातरिश्वा**) अन्तरिक्षशयानः (**गुहा**) गुहायाम् (**सन्तम्**) वर्त्तमानम् (**हव्यवाहम्**) यो हव्यं हविर्वहति तम् (**समीधे**) प्रदीपयेय॥१०॥

अन्वयः-यदि रोचनानामुत्तमो भवन्नृष्वो मातरिश्वाऽग्निर्भृगुभ्यः समिधा नाकमुदस्तम्भीत्तर्हि तमहं गुहा सन्तं हव्यवाहं परि समीधे॥१०॥

भावार्थः-यथा वह्निर्विद्युत्सूर्य्यरूपेण सर्वं दधाति तथैव तमहं धरामि॥१०॥

पदार्थः-यदि **(रोचनानाम्)** प्रकाशमानों में **(उत्तमः)** उत्तम **(भवन्)** होता हुआ **(ऋष्वः)** महान् **(अग्निः)** अग्नि **(भृगुभ्यः)** भुंजते हुए पदार्थों से **(समिधा)** अच्छे प्रकार प्रकाश के साथ **(नाकम्)** सुख का **(उदस्तम्भीत्)** उत्थान करता है तो [उसको] मैं **(गुहा)** पदार्थों के भीतर **(सन्तम्)** वर्त्तमान **(हव्यवाहम्)** और जो होम के पदार्थों को [**(मातरिश्वा)**] अन्तरिक्ष को पहुँचाता, उस अग्नि को **(परि, समीधे)** सब ओर से प्रदीप्त करूं॥१०॥

भावार्थः-जैसे अग्नि बिजुली सूर्य्यरूप से सबको धारण करता है, वैसे उसको मैं धारण करता हूँ॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इळामग्ने पुरुदंसं सनिं गोः शश्वत्तमं हवमानाय साध।
स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावाग्ने सा ते सुमतिर्भूत्वस्मे॥११॥२५॥

इळाम्। अग्ने। पुरुऽदंसम्। सनिम्। गोः। शश्वत्ऽतमम्। हवमानाय। साध। स्यात्। नः। सूनुः। तनयः। विजाऽवा। अग्ने। सा। ते। सुऽमतिः। भूतु। अस्मे इति॥११॥

पदार्थः-**(इळाम्)** स्तोतुमर्हाम् **(अग्ने)** विद्वन् **(पुरुदंसम्)** बहुकर्मसाधकम् **(सनिम्)** संविभाजकम् **(गोः)** वाचः **(शश्वत्तमम्)** अनादिभूतम् **(हवमानाय)** आददानाय **(साध)** साध्नुहि। अत्र विकरणव्यत्ययेन शः। **(स्यात्)** भवेत् **(नः)** अस्माकम् **(सूनुः)** अपत्यम् **(तनयः)** कामदः **(विजावा)** विशेषेण जातः **(अग्ने)** विद्वन् **(सा)** **(ते)** तव **(सुमतिः)** शोभना प्रज्ञा **(भूतु)** भवतु **(अस्मे)** अस्मासु॥११॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं गोः शश्वत्तमं हवमानाय पुरुदंसं सनिमिळां साध। हे अग्ने! या ते सुमतिरस्ति साऽस्मे भूतु यतो नो विजावा सूनुस्तनयश्च स्यात्॥११॥

भावार्थः-विद्वद्भिः सर्वविद्यामन्थनसारयुक्तां स्ववाचं मतिं च विधायान्येषामपि तादृशी कार्य्या। यथाऽन्येभ्यो बुद्धिः सुशिक्षा च गृह्येत तथाऽन्येभ्योऽपि देया यतः सर्वेषां सन्ताना विद्वांसः स्युरिति॥११॥

अत्र विद्वदग्निगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति पञ्चमं सूक्तं पञ्चविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वन्! आप **(गोः)** वाणी के **(शश्वत्तमम्)** अनादि व्यवहार को **(हवमानाय)**

ग्रहण करनेवाले के लिये **(पुरुदंसम्)** बहुत कर्मों की सिद्धि करने **(सनिम्)** और अच्छे प्रकार विभाग करनेवाले तथा **(इळाम्)** प्रशंसा करने योग्य क्रिया को **(साध)** सिद्ध कीजिये। हे **(अग्ने)** विद्वान्! जो **(ते)** तुम्हारी **(सुमतिः)** उत्तम बुद्धि **(सा)** वह **(अस्मे)** हम लोगों में **(भूतु)** हो जिससे **(नः)** हम लोगों के बीच **(विजावा)** विशेषता से उत्पन्न होनेवाला **(सूनुः)** बालक और **(तनयः)** काम का देनेवाला कुमार **(स्यात्)** हो॥११॥

भावार्थः-विद्वान् जनों को सर्व विद्या मन्थन से सारयुक्त अपनी वाणी और मति का विधान कर औरों की भी वैसी ही करनी चाहिये। जैसे औरों से बुद्धि और उत्तम शिक्षा ग्रहण की जाये, वैसे औरों को भी देनी चाहिये, जिससे सबके सन्तान विद्वान् होवें॥११॥

इस सूक्त में विद्वान् और अग्नि के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह पञ्चम सूक्त और पच्चीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

प्र कारव इत्येकादशर्चस्य षष्ठस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ५ विराट् त्रिष्टुप्। २, ७ त्रिष्टुप्। ३, ४, ८ निचृत्त्रिष्टुप्। १० भुरिक् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ६, ११ भुरिक् पङ्क्तिः। ९ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

पुनरग्निसम्बन्धेन विद्वद्गुणानाह॥

अब ग्यारह ऋचावाले छठे सूक्त का प्रारम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में अग्नि के सम्बन्ध से विद्वानों के गुणों को कहते हैं॥

प्र कारवो मनना वच्यमाना देवद्रीचीं नयत देवयन्तः।

दक्षिणावाड् वाजिनी प्राच्येति हविर्भरन्त्यग्नये घृताची॥ १॥

प्र। कारवः। मनना। वच्यमानाः। देवद्रीचीम्। नयत। देवऽयन्तः। दक्षिणाऽवाट्। वाजिनी। प्राची। एति। हविः। भरन्ती। अग्नये। घृताची॥ १॥

पदार्थः-(**प्र**) (**कारवः**) कारुकाः शिल्पिनः (**मनना**) मन्तुं विज्ञातुं योग्या (**वच्यमानाः**) (**देवद्रीचीम्**) यया देवानञ्चति ताम् (**नयत**) (**देवयन्तः**) देवानाचक्षाणाः (**दक्षिणावाट्**) या दक्षिणां दिशं वहति सा (**वाजिनी**) वजितुं प्राप्तुं शीलं यस्याः (**प्राची**) या प्रागञ्चति सा पूर्वा दिक् (**एति**) प्राप्नोति (**हविः**) दातुमर्हम् (**भरन्ती**) धरन्ती पोषयन्ती वा (**अग्नये**) (**घृताची**) या घृतमुदकमञ्चति प्राप्नोति सा॥ १॥

अन्वयः-हे देवद्रीचीं देवयन्तः कारवो! यूयं या मनना वच्यमाना दक्षिणावाड् वाजिनी प्राची घृताच्यग्नये हविर्भरन्त्येति ताः प्र णयत॥ १॥

भावार्थः-यथा विद्वांसो रात्रिं तत्रत्यान् व्यवहाराँश्च विदन्ति तथान्यैरपि वेद्यम्॥ १॥

पदार्थः-(**देवद्रीचीम्**) जिससे मनुष्य विद्वानों का सत्कार करता है उसकी तथा (**देवयन्तः**) विद्वानों की कामना करनेवाले हे (**कारवः**) शिल्प कामों के कर्ता विद्वानो! तुम जो (**मनना**) मानने वा जानने योग्य (**वच्यमानाः**) वा जो कही जाती वा (**दक्षिणावाट्**) जो दक्षिण दिशा को प्राप्त होती हुई (**वाजिनी**) जो प्राप्त होनेवाली वा (**प्राची**) जो पहिले प्राप्त होती पूर्व दिशा वा (**घृताची**) जो जल को प्राप्त होती हुई (**अग्नये**) अग्नि के लिये (**हविः**) देने योग्य पदार्थ को (**भरन्ती**) धारण करती वा पुष्ट करती हुई (**एति**) प्राप्त होती है, उन सबको (**प्र, णयत**) प्राप्त करो॥ १॥

भावार्थः-जैसे विद्वान् लोग रात्रि और रात्रि के व्यवहारों को जानते, वैसे औरों को भी जानना चाहिये॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ रोदसी अपृणा जायमान उत प्र रिक्था अध नु प्रयज्यो।

दिवश्चिदग्ने महिना पृथिव्या वच्यन्तां ते वह्नयः सप्तजिह्वाः॥२॥

आ। रोदसी इति। अपृणाः। जायमानः। उत। प्र। रिक्थाः। अध। नु। प्रयज्यो इति प्रऽयज्यो। दिवः। चित्। अग्ने। महिना। पृथिव्याः। वच्यन्ताम्। ते। वह्नयः। सप्तजिह्वाः॥२॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**अपृणाः**) पिपर्त्ति (**जायमानः**) उत्पद्यमानः (**उत**) अपि (**प्र**) (**रिक्थाः**) अतिरिणक्षि। अत्र **वाच्छन्दसी**ति विकरणाभावः। (**अध**) अथ (**नु**) सद्यः (**प्रयज्यो**) यः प्रयजति तत्सम्बुद्धौ (**दिवः**) प्रकाशस्य (**चित्**) अपि (**अग्ने**) वह्निवद्विद्वन् (**महिना**) महिम्ना (**पृथिव्याः**) भूमेः (**वच्यन्ताम्**) उच्यन्ताम् (**ते**) तव (**वह्नयः**) वोढारः (**सप्तजिह्वाः**) काल्यादयः सप्त जिह्वा इव ज्वाला येषान्ते॥२॥

अन्वयः-हे प्रयज्योऽग्ने! दिवः पृथिव्या महिना सप्तजिह्वा वह्नयस्त्वया वच्यन्तां स त्वं जायमानः सन् रोदसी अपृणाः। उता प्ररिक्थाः अध ते चिन्नु सुखं भवेत्॥२॥

भावार्थः-यथा सूर्य्यपृथिव्योरग्नेश्च महिमा वर्त्तते तथा योऽग्निविद्यां भूगर्भविद्यां च जानाति स सततं सुखी भवेत्॥२॥

पदार्थः-हे (**प्रयज्यो**) उत्तम यज्ञ करनेवाले (**अग्ने**) अग्नि के समान विद्वान्! (**दिवः**) प्रकाश और (**पृथिव्याः**) भूमि के (**महिना**) महत्त्व से (**सप्तजिह्वाः**) काली आदि सात जिह्वा ज्वालावाले (**वह्नयः**) पदार्थ को देशान्तर में पहुंचानेवाले अग्नि तुम्हें (**वच्यन्ताम्**) कहने चाहिये और सो आप (**जायमानः**) उत्पन्न होते हुए (**रोदसी**) आकाश और पृथिवी को (**अपृणाः**) परिपूर्ण कीजिये (**उत**) और (**आ, प्र, रिक्थाः**) दोषों को सब ओर से अच्छे प्रकार दूर कीजिये (**अध**) इसके अनन्तर (**ते**) आपको (**चित्**) [भी] (**नु**) शीघ्र निश्चय करके सुख हो॥२॥

भावार्थः-जैसे सूर्य, पृथिवी और अग्नि की महिमा वर्त्तमान है, वैसे जो अग्निविद्या और भूगर्भविद्या को जानता है, वह निरन्तर सुखी हो॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

द्यौश्च त्वा पृथिवी यज्ञियासो नि होतारं सादयन्ते दमाय।
यदी विशो मानुषीर्देवयन्तीः प्रयस्वतीरीळते शुक्रमर्चिः॥३॥

द्यौः। च। त्वा। पृथिवी। यज्ञियासः। नि। होतारम्। सादयन्ते। दमाय। यदि। विशः। मानुषीः। देवऽयन्तीः। प्रयस्वतीः। ईळते। शुक्रम्। अर्चिः॥३॥

पदार्थः-(**द्यौः**) प्रकाशः (**च**) (**त्वा**) त्वाम् (**पृथिवी**) (**यज्ञियासः**) यज्ञस्य सम्पादकाः (**नि**) (**होतारम्**) दातारम् (**सादयन्ते**) स्थापयन्ति (**दमाय**) जितेन्द्रियत्वाय (**यदि**)। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः।

(विशः) प्रजाः **(मानुषीः)** मनुष्याणामिमाः **(देवयन्तीः)** दिव्या गुणा विदुषो वा कामयन्तीः **(प्रयस्वतीः)** प्रयो बहुविधं तर्प्पणं विद्यते यासु ताः **(ईळते)** स्तुवन्ति **(शुक्रम्)** वीर्य्यम् **(अर्चिः)** विद्याप्रकाशम्॥३॥

अन्वयः-हे राजन्! यदि प्रयस्वतीर्देवयन्तीर्मानुषीर्विशो यं त्वा शुक्रमर्चिश्चेडते तं होतारं त्वा दमाय यज्ञियासो निषादयन्ते। द्यौः पृथिवी च प्राप्नोति॥३॥

भावार्थः-यदा राजा राजपुरुषाश्च विद्याविनयेन नीतिभिश्च प्रजाः प्रसादयन्ति जितेन्द्रिया भूत्वा दुर्व्यसनरहिता भवन्ति ते धर्मार्थकाममोक्षान् प्राप्नुवन्ति। अत्र वीर्य्यविद्योन्नतेरुत्तमं कारणं जानन्तु॥३॥

पदार्थः-हे राजन्! **(यदि)** जो **(प्रयस्वतीः)** बहुत प्रकार का जिनमें तर्प्पण तृप्ति विद्यमान वे **(देवयन्तीः)** विद्वानों की कामना करनेवाली **(मानुषीः)** मनुष्य सम्बन्धी **(विशः)** प्रजा जिन **(त्वा)** आप **(शुक्रम्)** आपके पराक्रम और **(अर्चिः)** विद्या के प्रकाश की **(ईडते)** स्तुति करती हैं उन **(होतारम्)** दानशील आपको **(दमाय)** जितेन्द्रिय[त्व] के लिये **(यज्ञियासः)** यज्ञ की सिद्धि करनेवाले **(नि, सादयन्ते)** निरन्तर स्थापन करते हैं **(द्यौः)** प्रकाश **(च)** और **(पृथिवी)** पृथिवी भी प्राप्त होती हैं॥३॥

भावार्थः-जब राजा और राजपुरुष विद्या, विनय और नीतियों से अपनी प्रजाओं को प्रसन्न करते और जितेन्द्रिय होकर दुष्ट व्यसनों से रहित होते हैं, वे धर्म, अर्थ, काम और मोक्षों को प्राप्त होते हैं। यहाँ वीर्य और विद्या की उन्नति को उत्तम कारण जानो॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

म॒हान्त्स॒धस्थे॑ ध्रु॒व आ निष॒त्तोऽन्तर्द्यावा॒ माहि॑ने॒ हर्य॑माणः।
आस्क्रे॑ स॒पत्नी॒ अ॒जरे॒ अमृ॑क्ते॒ सब॒र्दुघे॑ उरुगा॒यस्य॑ धे॒नू॥४॥

म॒हान्। स॒धऽस्थे॑। ध्रु॒वः। आ। निऽस॑त्तः। अ॒न्तः। द्यावा॑। माहि॑ने॒ इति॑। हर्य॑माणः। आस्क्रे॒ इति॑। स॒पत्नी॒ इति॑ स॒पत्नी॑। अ॒जरे॒ इति॑। अमृ॑क्ते॒ इति॑। स॒ब॒र्दुघे॒ इति॑ स॒ब॒ऽदुघे॑। उ॒रु॒ऽगा॒यस्य॑। धे॒नू इति॑॥४॥

पदार्थः-**(महान्)** महत्त्वपरिमाणः **(सधस्थे)** समानस्थाने **(ध्रुवः)** निश्चलः **(आ)** समन्तात् **(निषत्तः)** निषण्णः **(अन्तः)** मध्ये **(द्यावा)** **(माहिने)** महिम्ने **(हर्यमाणः)** कमनीयः **(आस्क्रे)** आक्रमणस्वभावे **(सपत्नी)** सपत्नी इव वर्तमाने **(अजरे)** जीर्णावस्थारहिते **(अमृक्ते)** विकारावस्थयाऽशुद्धे **(सबर्दुघे)** समानस्त्रीकरणप्रपूरिके **(उरुगायस्य)** बहुभिः स्तुतस्य **(धेनू)** धेनुवत्पालिके॥४॥

अन्वयः-यो महान्त्सधस्थे ध्रुवो माहिने हर्यमाणो द्यावापृथिव्योऽन्तरानिषत्तोऽग्निरास्क्रे अजरे अमृक्ते सबर्दुघे उरुगायस्य सपत्नी धेनूइव वर्त्तमाने व्याप्नोति स सर्वैर्वेदितव्यः॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। योऽयं सूर्यलोको दृश्यते स सर्वेभ्यो महान् स्वपरिधौ निवसन् सर्वान् भूगोलान् प्रकाशयति यस्मादहोरात्रे सम्भवतस्तं विजानीत॥४॥

पदार्थः-जो **(महान्)** बड़े परिमाणवाला **(सधस्थे)** समानस्थान में **(ध्रुवः)** निश्चल **(माहिने)** महत्त्व के लिये **(हर्यमाणः)** कामना करता हुआ **(द्यावा)** आकाश और पृथिवी के **(अन्तः)** बीच में **(आ, निषत्तः)** निरन्तर स्थिर अग्नि **(आस्क्रे)** जिनका आक्रमण करना अर्थात् अनुक्रम से चलना स्वभाव **(अजरे)** जो जीर्ण अवस्थारहित **(अमृक्ते)** विकार अवस्था से अशुद्ध **(सबर्दुघे)** एक से स्वीकार को अच्छे प्रकार पूरे करनेवाली **(उरुगायस्य)** बहुतों से जो स्तुति को प्राप्त हुआ उसकी **(सपत्नी)** सपत्नी के समान वर्त्तमान वा **(धेनू)** दो गौओं के समान पालन करनेवाली हैं, उनको व्याप्त होता है, वह सबको जानने योग्य है॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो वह सूर्यलोक दीख पड़ता है, वह सब से बड़ा और अपनी परिधि में निरन्तर वसता हुआ सब भूगोलों को प्रकाशित करता है, जिससे कि दिन-रात्रि होते हैं, उसको जानो॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

व्रता ते अग्ने महतो महानि तव क्रत्वा रोदसी आ ततन्थ।
त्वं दूतो अभवो जायमानस्त्वं नेता वृषभ चर्षणीनाम्॥५॥२६॥

व्रता। ते। अग्ने। महतः। महानि। तव। क्रत्वा। रोदसी इति। आ। ततन्थ। त्वम्। दूतः। अभवः। जायमानः। त्वम्। नेता। वृषभ। चर्षणीनाम्॥५॥

पदार्थः-**(व्रता)** व्रतानि शीलानि **(ते)** तव **(अग्ने)** विद्वन् **(महतः)** **(महानि)** महान्ति **(तव)** **(क्रत्वा)** प्रज्ञया कर्मणा वा **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ **(आ)** **(ततन्थ)** विस्तारयति **(त्वम्)** **(दूतः)** **(अभवः)** भवेः **(जायमानः)** प्रसिद्धः **(त्वम्)** **(नेता)** नायकः **(वृषभ)** वर्षक **(चर्षणीनाम्)** मनुष्याणाम्॥५॥

अन्वयः-हे वृषभाग्ने! यथा सूर्यो विद्युद्वा रोदसी आ ततन्थ दूतो भवति तथा त्वमभवो यस्य महतस्ते महानि व्रता तव क्रत्वा भवन्ति स त्वं चर्षणीनां दूतोऽभवो जायमानस्त्वं नेताऽभवः॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाग्नेर्महान्तो गुणकर्मस्वभावास्सन्ति तथा यो मनुष्यो भवेत् स एव राजदूतो मनुष्याणां नायकश्च स्यात्॥५॥

पदार्थः-हे **(वृषभ)** वर्षा करानेवाले **(अग्ने)** विद्वान् जन! जैसे सूर्य्य वा बिजुली **(रोदसी)** आकाश और पृथिवी को **(आ, ततन्थ)** विस्तारता और **(दूतः)** दूत होता है, वैसे **(त्वम्)** आप **(अभवः)** हूजिये, जिन **(महतः)** महान् **(ते)** आपके **(महानि)** बड़े-बड़े **(व्रता)** शील **(तव)** आपके **(क्रत्वा)** उत्तम बुद्धि वा कर्म से प्रसिद्ध होते हैं सो **(त्वम्)** आप **(चर्षणीनाम्)** मनुष्यों के दूत हूजिये तथा **(जायमानः)** प्रसिद्ध होते हुए आप **(नेता)** अग्रगन्ता सभों में श्रेष्ठ हूजिये॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे अग्नि के महान् गुण, कर्म, स्वभाव हैं, वैसे गुण-कर्म-स्वभाववाला जो मनुष्य हो, वही राजदूत और मनुष्यों का नायक भी हो॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ऋतस्य वा केशिना योग्याभिर्घृतस्नुवा रोहिता धुरि धिष्व।
अथा वह देवान् देव विश्वान्त्स्वध्वरा कृणुहि जातवेदः॥६॥

ऋतस्य। वा। केशिना। योग्याऽभिः। घृतऽस्नुवा। रोहिता। धुरि। धिष्व। अथ। आ। वह। देवान्। देव। विश्वान्। सुऽअध्वरा। कृणुहि। जातऽवेदः॥६॥

पदार्थः-(**ऋतस्य**) जलस्य (**वा**) (**केशिना**) बहवः केशाः किरणा विद्यन्ते ययोस्तौ (**योग्याभिः**) पृथिवीभिः (**घृतस्नुवा**) यौ घृतमुदकं स्नुतः स्रावयतस्तौ (**रोहिता**) रत्नगुणविशिष्टावश्वौ (**धुरि**) (**धिष्व**) धेहि (**अथ**) (**आ**) (**वह**) प्रापय (**देवान्**) दिव्यान् गुणान् (**देव**) दातः (**विश्वान्**) अखिलान् (**स्वध्वरा**) सुष्ठु अध्वरो यज्ञो याभ्यान्तौ (**कृणुहि**) कुरु (**जातवेदः**) यो जातान् वेत्ति तत्सम्बुद्धौ॥६॥

अन्वयः-हे जातवेदो देव! त्वं धुरि ऋतस्य योग्याभिः केशिना घृतस्नुवा रोहिता धुरि धिष्व वा स्वध्वरा तान् कृणुहि। अथ विश्वान् देवानावह॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथेश्वरेण सूर्यविद्युतौ सर्वस्य गमकौ ब्रह्माण्डे धृतौ तथा यूयमश्वादिकं धरत, अनेनाखिलान् गुणान् स्वीकुरुत॥६॥

पदार्थः-हे (**जातवेदः**) जो उत्पन्न हुए पदार्थों को जानता है वह हे (**देव**) दान देनेवाले विद्वान्! आप (**धुरि**) धुरे पर (**ऋतस्य**) जल के (**योग्याभिः**) योग्य पृथिवियों से (**केशिना**) जिनमें बहुतसी किरणें विद्यमान वा (**घृतस्नुवा**) जो जल को चुआते (**रोहिता**) उन रत्न गुणवाले अश्वों को धुरे में (**धिष्व**) धरो लगाओ (**वा**) वा (**स्वध्वरा**) जिनसे सुन्दर यज्ञ होता उनको (**कृणुहि**) अच्छे प्रकार सिद्ध करो (**अथ**) इसके अनन्तर (**विश्वान्**) समस्त (**देवान्**) दिव्य गुणों को (**आ, वह**) प्राप्त करो॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे ईश्वर ने सूर्य और बिजुली सबके चलानेवाले ब्रह्माण्ड में धरे स्थापन किये, वैसे तुम लोग अश्वादिकों को धारण करो और इस काम से समस्त गुणों का स्वीकार करो॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

दिवश्चिदा ते रुचयन्त रोका उषो विभातीरनु भासि पूर्वीः।
अपो यदग्न उशधग्वनेषु होतुर्मन्द्रस्य पनयन्त देवाः॥७॥

दिवः। चित्। आ। ते। रुचयन्त। रोकाः। उषः। विऽभातीः। अनु। भासि। पूर्वीः। अपः। यत्। अग्ने। उशधक्। वनेषु। होतुः। मन्द्रस्य। पनयन्त। देवाः॥७॥

पदार्थः-(**दिवः**) प्रकाशात् (**चित्**) इव (**आ**) (**ते**) तव (**रुचयन्त**) रुचिमाचक्षते (**रोकाः**) रुचिकराः प्रकाशाः (**उषः**) उषसः (**विभातीः**) विशेषेण प्रकाशयन्तीः (**अनु**) (**भासि**) प्रकाशयसि (**पूर्वीः**) प्राचीनाः (**अपः**) जलानि (**यत्**) यः (**अग्ने**) विद्वन् (**उशधक्**) उशः कमनीयान् दहति येन सः (**वनेषु**) जङ्गलेषु (**होतुः**) दातुः (**मन्द्रस्य**) आनन्दप्रदस्य (**पनयन्त**) प्रशंसत (**देवाः**) विद्वांसः॥७॥

अन्वयः-हे अग्ने विद्वन्! दिवश्चित्ते रोका आ रुचयन्त यथा सूर्यः पूर्वीर्विभातीरुषः प्रकाशयत्यपो वर्षयति तथा यद्यस्त्वं विद्यामनुभासि तस्य मन्द्रस्य तव होतुर्गुणान् यथा वनेषूशधगग्निर्वर्त्तते तथा देवाः पनयन्त॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्याः सूर्य्यवत् प्रकाशका दुष्टानां दग्धारः श्रेष्ठानां स्तावका भवन्ति ते विद्युद्वत्कार्यसाधका भवन्ति॥७॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) विद्वान्! (**दिवः**) प्रकाश से लेकर (**चित्**) ही (**ते**) आपके (**रोका**) रुचि करनेवाले प्रकाश (**आ, रुचयन्त**) अच्छे प्रकार रुचते हैं, जैसे सूर्य (**पूर्वीः**) प्राचीन (**विभातीः**) और विशेषता से प्रकाश होती हुईं (**उषः**) प्रभात वेलाओं को प्रकाशित करता वा (**अपः**) जलों को वर्षाता है (**यत्**) जो आप विद्या के (**अनुभासि**) अनुकूलता से प्रकाशित होते हो उन (**मन्द्रस्य**) आनन्द देनेवाले (**होतुः**) दानशील (**तव**) आपके गुणों के जैसे (**वनेषु**) जङ्गलों में (**उशधक्**) पदार्थों को जिससे जलाता वह अग्नि वर्त्तमान हैं, वैसे (**देवाः**) विद्वान् जन (**पनयन्त**) प्रशंसित करो॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य सूर्य के समान प्रकाश कराने, दुष्टों को जलाने और श्रेष्ठों की स्तुति प्रशंसा करनेवाले होते हैं, वे बिजुली के समान कार्य के सिद्ध करनेवाले होते हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उरौ वा ये अन्तरिक्षे मदन्ति दिवो वा ये रोचने सन्ति देवाः।
ऊमा वा ये सुहवासो यजत्रा आयेमिरे रथ्यो अग्ने अश्वाः॥८॥

उरौ। वा। ये। अन्तरिक्षे। मदन्ति। दिवः। वा। ये। रोचने। सन्ति। देवाः। ऊमाः। वा। ये। सुऽहवासः। यजत्राः। आऽयेमिरे। रथ्यः। अग्ने। अश्वाः॥८॥

पदार्थः-(**उरौ**) पुष्कले (**वा**) (**ये**) (**अन्तरिक्षे**) आकाशे (**मदन्ति**) हर्षन्ति (**दिवः**) प्रकाशः (**वा**) (**ये**) (**रोचने**) प्रकाशे (**सन्ति**) (**देवाः**) दिव्याः (**ऊमाः**) कमनीयाः (**वा**) (**ये**) (**सुहवासः**) सुष्ठ्वादातारः

(यजत्राः) सङ्गताः **(आयेमिरे)** विस्तृणन्ति **(रथ्यः)** रथाय हिताः **(अग्ने)** पावकस्य[३] **(अश्वाः)** व्याप्तिशीलाः किरणाः। **अश्व इति किरणानामसु पठितम्।**[४] (निघं०१.५)॥८॥

अन्वयः-हे अग्ने! पावक इव तेजस्विन्! ये ऊमा वा ये सुहवासो वा ये यजत्रा रथ्योऽश्वाः वा ये रोचने देवा अश्वाः सन्ति त उरावन्तरिक्षे दिव आयेमिरे तान् ये विदन्ति ते सदा मदन्ति॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यूयं प्रसिद्धाऽप्रसिद्धरूपस्याग्नेर्ये किरणा गुणाश्च सर्वेषां प्रकाशका यानेभ्यो हिता आकर्षकास्सन्ति तान् विदित्वा सर्वेषां प्राणिनां रक्षका भवत॥८॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के तुल्य तेजस्वि विद्वन्! जो **(ऊमाः)** मनोहर **(वा)** वा **(ये)** जो **(सुहवासः)** सुन्दर ग्रहण करनेवाली **(वा)** वा **(ये)** जो **(यजत्राः)** सङ्गम की प्राप्ति **(रथ्यः)** रथ के लिये हितरूप **(अश्वाः)** और व्याप्ति रखनेवाली किरणें **(वा)** वा **(ये)** जो **(रोचने)** प्रकाश में **(देवाः)** दिव्य किरणें **(सन्ति)** विद्यमान हैं, वे **(उरौ)** पुष्कल **(अन्तरिक्षे)** आकाश में **(दिवः)** प्रकाश से **(आयेमिरे)** विथरती हैं, उनको जो जानते हैं, वे सर्वदा **(मदन्ति)** हर्षित होते हैं॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! तुम प्रसिद्ध और अप्रसिद्ध रूप को जो कि **[अग्नि की]** किरणें और गुण सबके प्रकाश करनेवाले रथादिकों के लिये हितरूप और आकर्षणशक्ति युक्त हैं, उनको जान कर सब प्राणियों की रक्षा करनेवाले होओ॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ऐभि॑रग्ने स॒रथं॑ याह्य॒र्वाङ् नाना॑र॒थं वा॑ वि॒भवो॒ ह्यश्वाः॑।

पत्नी॑वतस्त्रिं॒शतं॒ त्रींश्च॑ दे॒वान॑नुष्व॒धमा व॑ह मा॒दय॑स्व॥९॥

आ। ए॒भिः॒। अ॒ग्ने॒। स॒ऽरथ॑म्। या॒हि॒। अ॒र्वाङ्। ना॒ना॒ऽर॒थम्। वा॒। वि॒ऽभवः॑। हि। अश्वाः॑। पत्नी॑ऽवतः। त्रिं॒शत॑म्। त्रीन्। च॒। दे॒वान्। अ॒नु॒ऽस्व॒धम्। आ। व॒ह॒। मा॒दय॑स्व॥९॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(एभिः)** **(अग्ने)** अग्निवज्ज्ञानेन प्रकाशमय **(सरथम्)** रथैः सह वर्त्तमानम् **(याहि)** **(अर्वाङ्)** योऽर्वस्तादञ्चत्यधो गच्छति सः **(नानारथम्)** नाना रथा यस्मिँस्तम् **(वा)** **(विभवः)** व्यापकाः **(हि)** खलु **(अश्वाः)** किरणाः **(पत्नीवतः)** प्रशस्ताः पत्न्यो विद्यन्ते येषान्तान्

३. पावक इव-सं.॥

४. अश्व इति पदनाम०॥ (निघं० ५.३-सं०॥)

(त्रिंशतम्) **(त्रीन्)** **(च)** **(देवान्)** पृथिव्यादीन् **(अनुष्वधम्)** अन्वन्नम् **(आ)** **(वह)** **(मादयस्व)** आनन्दय॥९॥

अन्वयः-हे अग्ने! येऽग्नेर्विभवोऽश्वा नानारथं वा त्रीन् त्रिंशतं च पत्नीवतो देवाननुष्वधमावहन्ति य एभिस्त्वमर्वाङूर्ध्वं सरथमा याह्यस्माना वह मादयस्व च॥९॥

भावार्थः-यथाऽग्निस्त्रयस्त्रिंशतः पृथिव्यादीन् दिव्यगुणान् पदार्थान् धरति तत्र व्यापको भूत्वा स्वसरूपान् करोति तथा विद्वांसो विज्ञानेन सर्वान् विज्ञायान्यान् प्रत्युपदिश्यानन्दन्ति॥९॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के समान ज्ञान से प्रकाशमय जो अग्नि की **(विभवः)** व्यापक **(अश्वाः)** किरणें **(नानारथम्)** जिनमें अनेक रथ विद्यमान उसे **(वा)** वा **(त्रीन्)** तीन **(त्रिंशतम्, च)** और तीस **(पत्नीवतः)** प्रशस्त पत्नियोंवाले **(देवान्)** पृथिवी आदि लोकों को **(अनुष्वधम्)** अन्न के अनुकूल पहुँचाती हैं, **(एभिः)** इससे आप **(अर्वाङ्)** जो नीचे को प्राप्त होता वा ऊपर को पहुँचता है, उस **(सरथम्)** रथों के सहित वर्त्तमान मार्ग को **(आ, याहि)** आओ प्राप्त होओ और हम लोगों को **(आ, वह)** प्राप्त कीजिये तथा **(मादयस्व)** हर्षित कीजिये॥९॥

भावार्थः-जैसे अग्नि, तैंतीस पृथिवी आदि दिव्य गुणी पदार्थों को धारण करता और वहाँ व्यापक होकर अपने रूप कर देता है, वैसे विद्वान् जन विज्ञान से सबको जानकर तथा औरों के प्रति उपदेश कर आनन्द देते हैं॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स होता यस्य रोदसी चिदुर्वी यज्ञंयज्ञमभि वृधे गृणीतः।

प्राची अध्वरेव तस्थतुः सुमेके ऋतावरी ऋतजातस्य सत्ये॥१०॥

सः। होता। यस्य। रोदसी इति। चित्। उर्वी इति। यज्ञंऽयज्ञम्। अभि। वृधे। गृणीतः। प्राची इति। अध्वराऽइव। तस्थतुः। सुमेके इति सुऽमेके। ऋतावरी इत्यृतऽवरी। ऋतऽजातस्य। सत्ये इति॥१०॥

पदार्थः-**(सः)** **(होता)** आदाता धर्ता **(यस्य)** **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ **(चित्)** **(उर्वी)** बहुस्वरूपे **(यज्ञंयज्ञम्)** प्रतिव्यवहारम् **(अभि)** आभिमुख्ये **(वृधे)** वृद्धये **(गृणीतः)** शब्दयतः **(प्राची)** प्राक्तने **(अध्वरेव)** अहिंसनीयौ यज्ञाविव **(तस्थतुः)** तिष्ठतः **(सुमेके)** सुष्ठुप्रक्षिप्ते **(ऋतावरी)** बहूनृतादीन्युदकानि विद्यन्ते ययोस्ते **(ऋतजातस्य)** ऋतात् सत्यात् कारणाज्जातस्य जगतो मध्ये **(सत्ये)** सत्सु साध्व्यौ हिते कारणरूपेण नित्ये वा॥१०॥

अन्वयः-यस्याग्नेः सम्बन्धे उर्वी अध्वरेव प्राची सुमेके ऋतावरी ऋतजातस्य सत्ये रोदसी वृधे यज्ञंयज्ञमभि गृणीतश्चित् तस्थतुः स होताग्निः सर्वैर्वेदितव्यः॥१०॥

भावार्थः-यदि भूमिसूर्य्यौ नोदेत्स्यतां तर्हि कश्चिदपि व्यवहारं साद्धुं कोऽपि नार्हिष्यत् नापि कस्यापि वृद्धिरभविष्यत्॥१०॥

पदार्थः-(**यस्य**) जिन अग्नि के सम्बन्ध में (**उर्वी**) बहुस्वरूपवाले (**अध्वरेव**) न नष्ट करने योग्य यज्ञों के समान (**प्राची**) प्राक्तन (**सुमेके**) अच्छे प्रकार प्रक्षेप किये हुए (**ऋतावरी**) जिनमें बहुत उदक जल विद्यमान (**ऋतजातस्य**) सत्य कारण से उत्पन्न हुए संसार के बीच (**सत्ये**) विद्यमान पदार्थों में हित या कारण रूप से नित्य (**रोदसी**) जो आकाश और पृथिवी (**वृधे**) वृद्धि के लिये (**यज्ञंयज्ञम्**) प्रति व्यवहार को (**अभि, गृणीतः**) सम्मुख कहते (**चित्**) ही (**तस्थतुः**) स्थित होते हैं (**सः**) वह (**होता**) ग्रहणकर्त्ता वा सर्व पदार्थों को धारणकर्त्ता अग्नि सबको जानने योग्य है॥१०॥

भावार्थः-यदि भूमि सूर्य्य उदय को न प्राप्त हों तो किसी व्यवहार के सिद्ध करने को कोई योग्य न हो और न किसी की वृद्धि हो॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इळामग्ने पुरुदंसं सनिं गोः शश्वत्तमं हवमानाय साध।
स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावाग्ने सा ते सुमतिर्भूत्वस्मे॥११॥२७॥

इळाम्। अग्ने। पुरुऽदंसम्। सनिम्। गोः। शश्वत्ऽतमम्। हवमानाय। साध। स्यात्। नः। सूनुः। तनयः। विजाऽवा। अग्ने। सा। ते। सुऽमतिः। भूतु। अस्मे इति॥११॥

पदार्थः-(**इळाम्**) स्तोतुमर्हां भूमिम् (**अग्ने**) विद्वन् (**पुरुदंसम्**) बहुकर्मयुक्तम् (**सनिम्**) विभक्तम् (**गोः**) पृथिव्याः (**शश्वत्तमम्**) अतिशयेनानादिभूतं स्वरूपम् (**हवमानाय**) स्पर्द्धमानाय (**साध**) साध्नुहि (**स्यात्**) (**नः**) अस्माकम् (**सूनुः**) (**तनयः**) (**विजावा**) (**अग्ने**) (**सा**) (**ते**) तव (**सुमतिः**) (**भूतु**) (**अस्मे**) अस्मासु॥११॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं हवमानाय गोः शश्वत्तमं पुरुदंसं सनिमिळां च साध यतो नो विजावा सूनुस्तनयः स्यात्। हे अग्ने! या ते सुमतिर्वर्त्तते साऽस्मे भूतु॥११॥

भावार्थः-यदि मनुष्या अग्नेः पृथिव्यादेश्च स्वरूपं विज्ञाय कार्य्येषु संप्रयुञ्जीरंस्तर्हि तेषु पुत्रपौत्रधनधान्यविद्यैश्वर्य्यं प्रभूतं भवेदिति॥११॥

अत्र विद्वदग्निगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) विद्वान्! आप (**हवमानाय**) स्पर्द्धा करते हुए के लिये (**गोः**) पृथिवी के (**शश्वत्तमम्**) अतीव अनादि स्वरूप को (**पुरुदंसम्**) जो कि बहुत कर्मों से युक्त है, उस (**सनिम्**) विभागयुक्त को तथा (**इळाम्**) प्रशस्त भूमि को (**साध**) सिद्ध करो जिससे (**नः**) हमारा (**विजावा**) विशेष

गतिवाला वा विशेष ज्ञानवाला वा विशेष प्रतिज्ञावाला **(सूनुः)** उत्पन्न **(तनयः)** पुत्र हो। हे **(अग्ने)** विद्वान्! जो **(ते)** आपकी **(सुमतिः)** सुन्दर श्रेष्ठ मति है **(सा)** वह **(अस्मे)** हम लोगों में **(भूतु)** हो॥११॥

भावार्थः-यदि मनुष्य अग्नि और पृथिवी आदि के स्वरूप को जान कर अच्छे प्रकार कार्यों में प्रयुक्त करें तो उनमें पुत्र, पौत्र, धन, धान्य, विद्या और ऐश्वर्य प्रभूत हो॥११॥

इस सूक्त में विद्वान् और अग्नि का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जानना चाहिये॥

यह तृतीय मण्डल में छठवां सूक्त सत्ताईसवां वर्ग, द्वितीय अष्टक में आठवां अध्याय और द्वितीय अष्टक समाप्त हुआ॥

इति श्रीपरमहंसपरिव्राजकाचार्याणां परमविदुषां श्रीमद्विरजानन्दसरस्वतीस्वामिनां शिष्येण श्रीपरमहंसपरिव्राजकाचार्येण श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिना निर्मिते संस्कृतार्यभाषाभ्यां सुभूषिते सुप्रमाणयुक्ते ऋग्वेदभाष्ये द्वितीयाष्टकेऽष्टमोऽध्यायो द्वितीयमष्टकं च समाप्तम्॥

॥ओ३म्॥

अथ ऋग्वेदे तृतीयाष्टकारम्भः॥

ओं विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद्भ॒द्रं तन्न॒ आ सु॑व। ऋ० ५.८२.५॥

अथैकादशर्चस्य सप्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। अग्निर्देवता॥ १, ६, ९, १० त्रिष्टुप्। २-५, ७ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ८ स्वराट् पङ्क्तिः। ११ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ विद्युद्गुणवर्णनमाह॥

अब तीसरे अष्टक का आरम्भ है। उसके प्रथम अध्याय के पहिले सूक्त के प्रथम मन्त्र में विद्युत् अग्नि के गुणों का वर्णन किया है॥

प्र य आ॒रुः शि॑तिपृ॒ष्ठस्य॑ धा॒सेरा मा॒तरा॑ विविशुः स॒प्त वाणीः॑।
प॒रि॒क्षिता॑ पि॒तरा॒ सं च॑रेते॒ प्र स॑र्स्राते दी॒र्घमायुः॑ प्र॒यक्षे॑॥ १॥

प्र। ये। आ॒रुः। शि॒ति॒ऽपृ॒ष्ठस्य॑। धा॒सेः। आ। मा॒तरा॑। वि॒वि॒शुः। स॒प्त। वाणीः॑। प॒रि॒ऽक्षिता॑। पि॒तरा॑। सम्। च॒रे॒ते॒ इति॑। प्र। स॒र्स्रा॒ते॒ इति॑। दी॒र्घम्। आयुः॑। प्र॒ऽयक्षे॑॥ १॥

पदार्थः-(**प्र**) (**ये**) (**आरुः**) गच्छेयुः (**शितिपृष्ठस्य**) शितिः पृष्ठं प्रश्नो यस्य तस्य (**धासेः**) धारकस्य (**आ**) (**मातरा**) जलाग्नी (**विविशुः**) प्रविशेयुः (**सप्त**) (**वाणीः**) सप्तद्वारावकीर्णा वाचः (**परिक्षिता**) सर्वतो निवसन्तौ (**पितरा**) पालकौ (**सम्**) (**चरेते**) (**प्र**) (**सर्स्राते**) प्रसरतः प्राप्नुतः (**दीर्घम्**) (**आयुः**) जीवनम् (**प्रयक्षे**) प्रकर्षेण यष्टुम्॥ १॥

अन्वयः-ये शितिपृष्ठस्य धासेर्वह्नेः परिक्षिता पितरा मातरा प्रारुर्यौ सञ्चरेते प्रसर्स्राते ते दीर्घमायुः प्रयक्षे सप्त वाणीरा विविशुः॥ १॥

भावार्थः-यदि शरीरे विद्युद्वह्निः प्रसृतो न स्यात्तर्हि वाक् किञ्चिदपि न प्रचलेत्। तं ये ब्रह्मचर्यादिषु कर्मभिर्यथावत्सेवन्ते ते दीर्घमायुः प्राप्नुवन्ति॥ १॥

पदार्थः-(**ये**) जो लोग (**शितिपृष्ठस्य**) जिसका पूंछना सूक्ष्म है (**धासेः**) उस धारण करनेवाले विद्युत् अग्नि के सम्बन्धी (**परिक्षिता**) सब ओर से निवास करते हुए (**पितरा**) पालक (**मातरा**) जल और अग्नि को (**प्र, आरुः**) प्राप्त होवें। जो जल अग्नि दोनों को (**सम्, चरेते**) सम्यक् विचरते हैं तथा (**प्र, सर्स्राते**) विस्तारपूर्वक प्राप्त होते हैं, वे (**दीर्घम्**) बड़ी (**आयुः**) अवस्था को और (**प्रयक्षे**) अच्छे प्रकार यज्ञ करने के लिये (**सप्त**) सात (**वाणीः**) द्वारों में फैली वाणियों को (**आ, विविशुः**) प्रवेश करें, सब प्रकार जानें॥ १॥

भावार्थः-जो शरीर में विद्युत् रूप अग्नि फैला न हो तो वाणी कुछ भी न चले। उस विद्युत् अग्नि का जो ब्रह्मचर्यादि उत्तम कर्मों में यथावत् सेवन करते हैं, वे बड़ी अवस्था को प्राप्त होते हैं॥१॥

मनुष्यैः कीदृशी वाक् सेव्येत्याह॥

मनुष्यों को कैसी वाणी का सेवन करना चाहिए, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

दिवक्षसो धेनवो वृष्णो अश्वा देवीरा तस्थौ मधुमद्वहन्तीः।

ऋतस्य त्वा सदसि क्षेमयन्तं पर्येका चरति वर्तनिं गौः॥२॥

दिवक्षसः। धेनवः। वृष्णः। अश्वाः। देवीः। आ। तस्थौ। मधुऽमत्। वहन्तीः। ऋतस्य। त्वा। सदसि। क्षेमऽयन्तम्। परि। एका। चरति। वर्तनिम्। गौः॥२॥

पदार्थः-(**दिवक्षसः**) दीप्तिं प्राप्य व्याप्ताः (**धेनवः**) वाचः (**वृष्णः**) बलिष्ठस्य (**अश्वाः**) आशुगामिनस्तुरङ्गा इव (**देवीः**) दिव्यस्वरूपाः (**आ**) (**तस्थौ**) समन्तात् तिष्ठति (**मधुमत्**) मधुराणि विज्ञानानि वर्त्तन्ते यस्मिँस्तत् (**वहन्तीः**) सुखं प्रापयन्त्यः (**ऋतस्य**) सत्यस्य (**त्वा**) त्वाम् (**सदसि**) सभायाम् (**क्षेमयन्तम्**) रक्षयन्तम् (**परि**) सर्वतः (**एका**) असहाया (**चरति**) गच्छति (**वर्त्तनिम्**) वर्त्तन्ते यस्मिँस्तं मार्गम् (**गौः**) या गच्छति सा भूमिः॥२॥

अन्वयः-हे विद्वन्! या ऋतस्य सदसि दिवक्षसो वृष्णोऽश्वा देवीर्मधुमद्वहन्तीर्धेनवो वाचः क्षेमयन्तं त्वैका गौर्वर्त्तनिं परि चरती वाऽऽतस्थौ तास्त्वं यथावद्विजानीहि॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽसहाया पृथिवी स्वकक्षामार्गं नित्यं चलति, तथैव सभ्यजनानां वाचो नियमेन मिथ्याभाषणं विहाय सत्यमार्गे गच्छन्ति, य ईदृशीं वाणीं सेवन्ते न तेषां किञ्चिदकुशलं जायते॥२॥

पदार्थः-हे विद्वान् पुरुष! जो (**ऋतस्य**) सत्य की (**सदसि**) सभा में (**दिवक्षसः**) प्रकाश को प्राप्त हो व्याप्त हुई (**वृष्णः**) बलिष्ठ पुरुष के (**अश्वाः**) शीघ्रगामी घोड़ों के समान (**देवीः**) दिव्य स्वरूप (**मधुमत्**) कोमल विज्ञानवाले उस सुख को (**वहन्तीः**) प्राप्त कराती हुई (**धेनवः**) वाणी (**क्षेमयन्तम्**) रक्षा करते हुए (**त्वा**) आपको (**एका**) एक (**गौः**) अपनी कक्षा में चलनेवाली भूमि (**वर्त्तनिम्**) मार्ग को (**परि, चरति**) सब ओर से चलती हुई सी (**आ, तस्थौ**) स्थित होती, उन वाणियों को आप यथावत् जानो॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे असहाय पृथिवी अपने कक्षा मार्ग में नित्य चलती हैं, वैसे ही सभ्य जनों की वाणी नियम से मिथ्याभाषण को छोड़ सत्य मार्ग में चलती हैं। जो ऐसी वाणी का सेवन करते हैं, उनकी कुछ भी हानि नहीं होती॥२॥

पुना राजा किं कुर्य्यादित्याह॥

फिर राजा क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ सीमरोहत्सुयमा भवन्तीः पतिश्चिकित्वान् रयिविद्रयीणाम्।
प्र नीलपृष्ठो अतसस्य धासेस्ता अवासयत् पुरुधप्रतीकः॥ ३॥

आ। सीम्। अरोहत्। सुऽयमाः। भवन्तीः। पतिः। चिकित्वान्। रयिऽवित्। रयीणाम्। प्र। नीलऽपृष्ठः। अतसस्य। धासेः। ताः। अवासयत्। पुरुधऽप्रतीकः॥ ३॥

पदार्थः-(**आ**) (**सीम्**) आदित्यः (**अरोहत्**) रोहति (**सुयमाः**) (**भवन्तीः**) वर्त्तमानाः (**पतिः**) स्वामी (**चिकित्वान्**) ज्ञानवान् (**रयिवित्**) द्रव्यवेत्ता (**रयीणाम्**) धनानाम् (**प्र**) (**नीलपृष्ठः**) नीलो वर्णः पृष्ठे यस्य सः (**अतसस्य**) व्याप्तस्य (**धासेः**) पोषकस्य (**ताः**) (**अवासयत्**) वासयेत् (**पुरुधप्रतीकः**) पुरून् बहून् दधाति येन तत् पुरुधं पुरुधं प्रतीतिकरं कर्म यस्य सः॥ ३॥

अन्वयः-हे विद्वन्! चिकित्वान् रयिविद्रयीणां पतिस्त्वं यथा पुरुधप्रतीको नीलपृष्ठः सीमादित्योऽतसस्य धासेर्या भवन्तीः सुयमाः प्रा वासयदरोहच्च तथा ताः सुयमाः प्रजा आवासय॥ ३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्यः सर्वाः प्रजा उत्थाप्य वासयति तथैव राजा स्वकीयाः सुशिक्षिता रक्षिताः प्रजा भूगोलस्थेषु देशेषु वासयित्वा धनाढ्याः प्रकुर्यात्॥ ३॥

पदार्थः-हे विद्वन्! (**चिकित्वान्**) ज्ञानी (**रयिवित्**) द्रव्यवेत्ता (**रयीणाम्**) धनों के (**पतिः**) स्वामी! आप जैसे (**पुरुधप्रतीकः**) अनेकों के पोषण के वा धारण के हेतु प्रतीतिकारी कर्मवाला (**नीलपृष्ठः**) जिसके पिछले भाग में नीलवर्ण है ऐसा (**सीम्**) सूर्य्यमण्डल (**अतसस्य**) व्याप्त बुद्धि (**धासेः**) पोषण करनेवाले राजा की जो (**भवन्तीः**) वर्त्तमान (**सुयमाः**) सुन्दर नियमवाली प्रजाओं को (**प्र, आ, अवासयत्**) अच्छे प्रकार वास कराता और (**अरोहत्**) अपने काम में आरूढ़ होता है, वैसे (**ताः**) उन सुन्दर नियमयुक्त प्रजाओं को अच्छे प्रकार वास कराइये॥ ३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य सब प्रजाओं को उठा के अच्छे प्रकार वास कराता है, वैसे ही राजा सुशिक्षित रक्षा की हुई प्रजाओं को भूगोल के सब देशों में वसा के धनाढ्य करे॥ ३॥

पुनर्मनुष्यैः किं कार्य्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

महि त्वाष्ट्रमूर्जयन्तीरजुर्यं स्तभूयमानं वहतो वहन्ति।
व्यङ्गेभिर्दिद्युतानः सधस्थ एकामिव रोदसी आ विवेश॥ ४॥

महि। त्वाष्ट्रम्। ऊर्जयन्तीः। अजुर्यम्। स्तभुऽयमानम्। वहतः। वहन्ति। वि। अङ्गेभिः। दिद्युतानः। सधऽस्थे। एकाम्ऽइव। रोदसी इति। आ। विवेश॥ ४॥

पदार्थः-(**महि**) महत् (**त्वाष्ट्रम्**) त्वष्टुः सूर्य्यस्येदं तेजः (**ऊर्जयन्तीः**) बलयन्त्यः (**अजुर्यम्**) जीर्णावस्थारहितम् (**स्तभूयमानम्**) लोकानां धारकम् (**वहतः**) वहनशीलः (**वहन्ति**) (**वि**) (**अङ्गेभिः**) विविधाङ्गैः (**दिद्युतानः**) देदीप्यमानः (**सधस्थे**) समानस्थाने (**एकामिव**) स्वकीयां स्त्रियमिव (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**आ**) (**विवेश**) आविशति॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्य सूर्यस्याजुर्य्यं महि स्तभूयमानं त्वाष्ट्रमूर्जयन्तीर्वहतो व्यङ्गेभिर्वहन्ति यो दिद्युतानः सन्नग्निः पतिः सधस्थ एकामिव रोदसी आ विवेश तं विद्युदग्निकार्य्यसिद्धये संप्रयुङ्ग्ध्वम्॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। मनुष्यैः सर्वत्राभिव्याप्तस्य विद्युत्स्वरूपस्याग्नेर्गुणकर्मस्वभावान् विज्ञाय कार्यसिद्धिः सम्पादनीया॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिस सूर्य के (**अजुर्यम्**) जीर्ण अवस्था से रहित (**महि**) बड़े (**स्तभूयमानम्**) लोकों के धारक (**त्वाष्ट्रम्**) तेज को (**ऊर्जयन्तीः**) बल देती हुई शक्तियों को यथा स्थान (**वहतः**) पहुँचानेवाले किरण (**व्यङ्गेभिः**) विविध प्रकार के अङ्गों से (**वहन्ति**) पहुँचाते हैं। जो (**दिद्युतानः**) देदीप्यमान हुआ अग्नि जैसे पति (**सधस्थे**) एक स्थान में (**एकामिव**) एक अपनी स्त्री का सङ्ग करता है, वैसे (**रोदसी**) आकाश-भूमि को (**आ, विवेश**) आवेश करता है, उस विद्युत् रूप अग्नि को कार्य्यसिद्धि के लिये संप्रयुक्त करो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि सर्वत्र अभिव्याप्त विद्युत्स्वरूप अग्नि के गुण, कर्म, स्वभावों को जान के कार्य्यसिद्धि करें॥४॥

अथ के महात्मानो भवन्तीत्याह॥

अब कौन महात्मा होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

जानन्ति वृष्णो अरुषस्य शेवमुत ब्रध्नस्य शासने रणन्ति।

दिवोरुचः सुरुचो रोचमाना इळा येषां गण्या माहिना गीः॥५॥ १॥

जानन्ति। वृष्णः। अरुषस्य। शेवम्। उत। ब्रध्नस्य। शासने। रणन्ति। दिवःऽरुचः। सुऽरुचः। रोचमानाः। इळा। येषाम्। गण्या। माहिना। गीः॥५॥

पदार्थः-(**जानन्ति**) (**वृष्णः**) बलिष्ठस्य (**अरुषस्य**) अश्वस्येव (**शेवम्**) सुखम्। **शेवमिति सुखनामसु पठितम्।** (निघं०३.६)। (**उत**) अपि (**ब्रध्नस्य**) महतः (**शासने**) शिक्षायामाज्ञायां वा (**रणन्ति**) शब्दायन्ते (**दिवोरुचः**) विज्ञानप्रकाशे रुचिकरः (**सुरुचः**) सुप्रीतिसम्पादकाः (**रोचमानाः**) रुचिमन्तः (**इळा**) स्तोतव्या वाक् (**येषाम्**) (**गण्या**) संख्यातुं योग्या (**माहिना**) सत्कर्त्तव्या (**गीः**) वाणी॥५॥

अन्वयः-येषां गण्येळा माहिना गीर्वर्त्तते ते रोचमाना दिवोरुचः सुरुचो रणन्ति वृष्णोऽरुषस्य ब्रध्नस्य शासने शेवमुत विज्ञानं जानन्ति॥५॥

भावार्थः-ये मनुष्या विदुषां शिक्षायां स्थिरा भवन्ति ते प्रशंसिता विद्वांसो भूत्वा महान्तो जायन्ते॥५॥

पदार्थः-(**येषाम्**) जिनकी (**गण्या**) गणना करने योग्य (**इळा**) स्तुति और (**महिना**) सत्कार करने योग्य (**गीः**) वाणी है वे (**रोचमानाः**) रुचिवाले हुए (**दिवोरुचः**) विज्ञानरूप प्रकाश में रुचि करनेवाले (**सुरुचः**) सुन्दर प्रीति के उत्पादक विद्वान् लोग (**रणन्ति**) शब्द करते हैं तथा (**वृष्णः**) बलिष्ठ (**अरुषस्य**) घोड़े के तुल्य वेगयुक्त (**ब्रध्नस्य**) महान् राजपुरुष की (**शासने**) शिक्षा में (**शेवम्**) सुख (**उत**) और विज्ञान को (**जानन्ति**) जानते हैं॥५॥

भावार्थः-जो मनुष्य विद्वानों की शिक्षा में स्थिर होते हैं, वे प्रशंसित विद्वान् होकर महात्मा होते हैं॥५॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उतो पितृभ्यां प्रविदानु घोषं महो महद्भ्यामनयन्त शूषम्।
उक्षा ह यत्र परि धानमक्तोरनु स्वं धाम जरितुर्ववक्ष॥६॥

उतो इति। पितृऽभ्याम्। प्रऽविदा। अनु। घोषम्। महः। महत्ऽभ्याम्। अनयन्त। शूषम्। उक्षा। ह। यत्र। परि। धानम्। अक्तोः। अनु। स्वम्। धाम। जरितुः। ववक्ष॥६॥

पदार्थः-(**उतो**) अपि (**पितृभ्याम्**) जनकजननीभ्याम् (**प्रविदा**) प्रकृष्टविज्ञानेन (**अनु**) (**घोषम्**) विद्याशिक्षायुक्तां वाचम्। **घोष इति वाङ्नामसु पठितम्।** (निघं०१.११)। (**महः**) महत् (**महद्भ्याम्**) पूज्याभ्याम् (**अनयन्त**) प्राप्नुयुः (**शूषम्**) बलम् (**उक्षा**) सेचकः (**ह**) खलु (**यत्र**) (**परि**) (**धानम्**) धारणम् (**अक्तोः**) रात्रेः (**अनु**) (**स्वम्**) स्वकीयम् (**धाम**) (**जरितुः**) स्तावकस्य (**ववक्ष**) वहति। अत्र वर्त्तमाने लिटि **वाच्छन्दसी**ति सुडागमः॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये ब्रह्मचारिणो महद्भ्यां मह उतो पितृभ्यां प्रविदा घोषं शूषं चान्वनयन्त यत्रोक्षाऽक्तोः परि धानं जरितुर्हि स्वं धामानु ववक्ष तान् यूयं सत्कुरुत॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा ब्रह्मचारिणः पित्राचार्य्यादिमहतां सेवनेन ब्रह्मवर्चसमाप्नुवन्ति तथा यूयं प्रातरीश्वरस्तुत्यादिना धर्मसुखमाप्नुत॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे ब्रह्मचारी लोग (**महद्भ्याम्**) पूज्य अध्यापक उपदेशकों से (**महः**) बड़े ब्रह्मचर्य्य को (**उतो**) और (**पितृभ्याम्**) माता-पिता के साथ (**प्रविदा**) प्रकृष्ट ज्ञान से (**घोषम्**) विद्याशिक्षायुक्त वाणी और (**शूषम्**) बल को (**अनु, अनयन्त**) अनुकूल प्राप्त हों (**यत्र**) जहाँ (**उक्षा**) सेचन करनेवाला सूर्य्य (**अक्तोः**) रात्रि के (**परि, धानम्**) सब ओर से धारण को (**जरितुः**) स्तुतिकर्त्ता के

(ह) ही **(स्वम्)** अपने **(धाम)** स्थान को अर्थात् प्राप्त अवस्था को **(अनु, ववक्ष)** पहुँचाता है, उसका सत्कार करो॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे ब्रह्मचारी लोग पिता, आचार्य्य आदि महान् पुरुषों के सेवन से विद्या तेज को पाते हैं, वैसे तुम लोग प्रातःकाल ईश्वर की स्तुति आदि से धर्म से हुए सुख को प्राप्त होओ॥६॥

अथोपदेशकाः किंवत् किं कुर्वन्तीत्याह॥

अब उपदेशक लोग किसके सदृश क्या करते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अध्वर्युभिः पञ्चभिः सप्त विप्राः प्रियं रक्षन्ते निहितं पदं वेः।

प्राञ्चो मदन्त्युक्षणो अजुर्या देवा देवानामनु हि व्रता गुः॥७॥

अध्वर्युऽभिः। पञ्चऽभिः। सप्त। विप्राः। प्रियम्। रक्षन्ते। निऽहितम्। पदम्। वेरिति वेः। प्राञ्चः। मदन्ति। उक्षणः। अजुर्याः। देवाः। देवानाम्। अनु। हि। व्रता। गुरिति गुः॥७॥

पदार्थः-**(अध्वर्युभिः)** अध्वरं निष्पादकैः **(पञ्चभिः)** होत्राध्वर्यूद्गातृब्रह्मसभ्यैर्ऋत्विग्भिः **(सप्त)** पत्नीयजमानाभ्यां सहिताः सप्तसङ्ख्याकाः **(विप्राः)** मेधाविनः **(प्रियम्)** **(रक्षन्ते)**। अत्र व्यत्ययेनात्मनेदम्। **(निहितम्)** स्थितम् **(पदम्)** प्रापणीयम् **(वेः)** व्यापकस्य परमेश्वरस्य **(प्राञ्चः)** प्रकृष्टविद्यायुक्ताः **(मदन्ति)** **(उक्षणः)** सुखसेवकाः **(अजुर्याः)** शरीरात्मजीर्णावस्थारहिताः **(देवाः)** विद्वांसः **(देवानाम्)** विदुषाम् **(अनु)** **(हि)** यतः **(व्रता)** सत्यभाषणादिशीलानि **(गुः)** गच्छेयुः॥७॥

अन्वयः-ये प्राञ्च उक्षणोऽजुर्या देवा हि देवानां व्रतानु गुस्तेऽध्वर्य्युभिः पञ्चभिः पत्नीयजमानाभ्यां च सह वर्त्तमानाः सप्त विप्रा वेः प्रियं निहितं पदं रक्षन्ते त एव मदन्ति॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा सप्तर्त्विजो यज्ञं निष्पाद्य प्रजाः सुखयन्ति तथैवोपदेशका विद्वांसः सुशीला धार्मिका भूत्वाऽध्यापनोपदेशाभ्यां सर्वान् मनुष्यानानन्दयन्ति॥७॥

पदार्थः-जो **(प्राञ्चः)** प्रकृष्ट विद्यायुक्त **(उक्षणः)** सुख फैलानेहारे **(अजुर्याः)** शरीर आत्मा की जीर्ण अवस्था से रहित **(देवाः)** विद्वान् लोग **(हि)** ही **(देवानाम्)** विद्वानों के **(व्रता)** सत्यभाषणादि उत्तम स्वभावों को **(अनु, गुः)** अनुकूलतापूर्वक प्राप्त हों, वे **(अध्वर्य्युभिः)** यज्ञ रचनेवाले **(पञ्चभिः)** होता, अध्वर्यु, उद्गाता, ब्रह्मा और सभ्य इन पाँच ऋत्विजों और पत्नी यजमानों के साथ वर्त्तमान **(सप्त)** सात **(विप्राः)** बुद्धिमान् लोग **(वेः)** व्यापक परमेश्वर के **(प्रियम्)** प्रिय **(निहितम्)** स्थित **(पदम्)** प्राप्त करने योग्य स्वरूप की **(रक्षन्ते)** रक्षा करते हैं, वे ही **(मदन्ति)** आनन्दित होते हैं॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे सात ऋत्विज् लोग यज्ञ करके प्रजाओं को सुखी करते हैं, वैसे ही उपदेशक विद्वान् लोग सुशील धार्मिक हो के अध्यापन और उपदेश से सब मनुष्यों को आनन्दित करते

हैं॥७॥

पुनरुपदेशकविषयमाह॥

फिर भी उपदेशक विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

दैव्या होतारा प्रथमा न्यृञ्जे सप्त पृक्षासः स्वधया मदन्ति।

ऋतं शंसन्त ऋतमित्त आहुरनु व्रतं व्रतपा दीध्यानाः॥८॥

दैव्या। होतारा। प्रथमा। नि। ऋञ्जे। सप्त। पृक्षासः। स्वधया। मदन्ति। ऋतम्। शंसन्तः। ऋतम्। इत्। ते। आहुः। अनु। व्रतम्। व्रतऽपाः। दीध्यानाः॥८॥

पदार्थः-(**दैव्या**) विद्वत्सु कुशलौ (**होतारा**) विद्याया दातारौ (**प्रथमा**) प्रख्यातौ (**नि**) (**ऋञ्जे**) प्रसाध्नुयाम् (**सप्त**) (**पृक्षासः**) आर्द्रीभूताः (**स्वधया**) अन्नेन (**मदन्ति**) हृष्यन्ति (**ऋतम्**) सत्यम् (**शंसन्तः**) स्तुवन्तः (**ऋतम्**) सत्यम् (**इत्**) एव (**ते**) (**आहुः**) उपदिशन्ति (**अनु**) (**व्रतम्**) सत्याचरणम् (**व्रतपाः**) सत्याचाररक्षकाः (**दीध्यानाः**) विद्यादिसद्गुणैः प्रकाशमानाः॥८॥

अन्वयः-ये सप्त पृक्षासः स्वधया मदन्ति ऋतं शंसन्त ऋतं व्रतमित्ते व्रतपा दीध्याना अन्वाहुर्दैव्या प्रथमा होतारा च तानहं न्यृञ्जे॥८॥

भावार्थः-ये विद्वांसो धर्म्येण व्यवहारेण धनधान्यानि प्राप्य सत्यमुपदिश्य तदेवाऽऽचर्य्य सर्वान् शिक्षन्ते ते सर्वेषां सत्कर्त्तव्याः स्युः॥८॥

पदार्थः-जो (**सप्त**) सात (**पृक्षासः**) कोमल स्वभाववाले जन (**स्वधया**) अन्न से (**मदन्ति**) आनन्द करते हैं (**ऋतम्**) सत्य की (**शंसन्तः**) स्तुति करते हैं (**ऋतम्**) सत्य (**व्रतम्**) आचरण को (**इत्**) ही (**ते**) वे (**व्रतपाः**) सत्याचरण के रक्षक (**दीध्यानाः**) विद्यादि सद्गुणों से प्रकाशमान पुरुष (**अनु, आहुः**) अनुकूल उपदेश करते हैं और (**दैव्या**) विद्वानों में कुशल (**प्रथमा**) प्रख्यात (**होतारा**) विद्या के देनेवाले दो विद्वान् अध्यापक उपदेशक भी अनुकूल उपदेश करते हैं, उनको मैं (**नि**) निरन्तर (**ऋञ्जे**) प्रसिद्ध करूं॥८॥

भावार्थः-जो विद्वान् लोग धर्मयुक्त व्यवहार से धन-धान्यों को प्राप्त हो सत्य का उपदेश कर उसी का आचरण करके सबको शिक्षा करते हैं, वे सबसे सत्कार करने योग्य हों॥८॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्वन्तीत्याह॥

फिर विद्वान् लोग क्या करते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

वृषायन्ते महे अत्याय पूर्वीर्वृष्णे चित्राय रश्मयः सुयामाः।

देव होतर्मन्द्रतरश्चिकित्वान् महो देवान् रोदसी एह वक्षि॥९॥

वृषऽयन्ते। महे। अत्याय। पूर्वीः। वृष्णे। चित्राय। रश्मयः। सुऽयामाः। देव। होतः। मन्द्रऽतरः। चिकित्वान्। महः। देवान्। रोदसी इति। आ। इह। वक्षि॥ ९॥

पदार्थः-(**वृषायन्ते**) वृष इवाचरन्ति (**महे**) महते (**अत्याय**) सर्वविद्याव्यापनशीलाय (**पूर्वीः**) पूर्वं वर्त्तमानाः प्रजाः (**वृष्णे**) विद्यावर्षकाय (**चित्राय**) आश्चर्यस्वभावाय (**रश्मयः**) किरणाः (**सुयामाः**) शोभनाः यामाः प्रहरा येषु ते (**देव**) देदीप्यमान (**होतः**) सर्वेभ्यः सुखस्य दाता (**मन्द्रतरः**) अतिशयेनाह्लादकः (**चिकित्वान्**) विज्ञापकः (**महः**) महतः (**देवान्**) विदुषः (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**आ**) (**इह**) अस्मिन् संसारे (**वक्षि**) समन्तात्प्रापय॥९॥

अन्वयः-हे होतर्देवमन्द्रतरश्चिकित्वांस्त्वं यथा सुयामा रश्मयो महेऽत्याय चित्राय वृष्णे पूर्वीर्वृषायन्ते रोदसी प्रकटयन्ति तथेहं महो देवाना वक्षि॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्य्यकिरणाः प्रकाशेन वृष्टिद्वारा सर्वाः प्रजाः सुखयन्ति तथैव विद्वांसो विदुषः सम्पाद्य सर्वाः प्रजाः सुज्ञानाः कुर्वन्ति॥९॥

पदार्थः-हे (**देव**) प्रकाशमान (**होतः**) सबके लिये सुख देनेहारे विद्वान् (**मन्द्रतरः**) अति आनन्दकारक (**चिकित्वान्**) चितानेहारे! आप जैसे (**सुयामाः**) सुन्दर प्रहर आदि समयवाली (**रश्मयः**) किरणें (**महे**) बड़े (**अत्याय**) सब विद्याओं में व्यापनशील (**चित्राय**) आश्चर्य स्वभाववाले (**वृष्णे**) विद्या के प्रचारक विद्वान् के अर्थ (**पूर्वीः**) पहिले से वर्त्तमान प्रजाजनों को (**वृषायन्ते**) बैल के समान उत्साहित करती (**रोदसी**) सूर्य-भूमि प्रकट करती हैं, वैसे (**इह**) इस जगत् में (**महः**) महान् (**देवान्**) विद्वानों को (**आ, वक्षि**) अच्छे प्रकार प्राप्त कराइये॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य की किरणें प्रकाश से वृष्टि द्वारा सब प्रजा को सुखी करती हैं, वैसे ही विद्वान् लोग सब प्रजा जनों को विद्वान् [बनाकर] सुन्दर ज्ञानयुक्त करते हैं॥९॥

पुनर्विद्वद्भिः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

पृक्षप्रयजो द्रविणः सुवाचः सुकेतव उषसो रेवदूषुः।
उतो चिदग्ने महिना पृथिव्याः कृतं चिदेनः सं महे दशस्य॥ १०॥

पृक्षऽप्रयजः। द्रविणः। सुऽवाचः। सुऽकेतवः। उषसः। रेवत्। ऊषुः। उतो इति। चित्। अग्ने। महिना। पृथिव्याः। कृतम्। चित्। एनः। सम्। महे। दशस्य॥ १०॥

पदार्थः-(**पृक्षप्रयजः**) ये पृक्षेण शुभगुणैरार्द्रीभावेन प्रयजन्ति ते (**द्रविणः**) प्रशस्तानि द्रविणानि द्रव्याणि विद्यन्ते यस्य सः (**सुवाचः**) सुष्ठु सत्या वाग् येषान्ते (**सुकेतवः**) सुष्ठु केतुः प्रज्ञा येषान्ते (**उषसः**)

प्रभाता इव **(रेवत्)** द्रव्यवत् **(ऊषुः)** वसेयुः **(उतो)** अपि **(चित्)** **(अग्ने)** विद्वन् **(महिना)** महिम्ना **(पृथिव्याः)** भूमेर्मध्ये **(कृतम्)** **(चित्)** **(एनः)** पापम् **(सम्)** **(महे)** महते सौभाग्याय **(दशस्य)** क्षयं गमय॥१०॥

अन्वयः-हे अग्ने! द्रविणस्त्वं महिना महे पृक्षप्रयज उषसइव वर्त्तमानाः सुवाचः सुकेतवो रेवदूषुरुतो अन्धकारं निवर्त्तयन्ति तद्वत्पृथिव्याः कृतमेनश्चित् त्वं सन्दशस्य चिदपि शोभनं प्रापय॥१०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यूयं प्रभातवेलावन्मनुष्यात्मनः प्रकाश्य विज्ञानं दत्वा पापाचरणं त्याजयित्वा सर्वान्मनुष्यान् सत्यवादिनो विदुषः कुरुत येन पृथिव्यां पापाचरणं न वर्धेत॥१०॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वान्! **(द्रविणः)** प्रशस्त द्रव्य जिसके विद्यमान ऐसे आप **(महिना)** महिमा से **(महे)** बड़े सौभाग्य के लिये **(पृक्षप्रयजः)** शुभ गुण और कोमल भाव से यज्ञ करनेहारे **(उषसः)** प्रभात वेला के तुल्य वर्त्तमान **(सुवाचः)** सुन्दर सत्य वाणी से युक्त **(सुकेतवः)** सुन्दर बुद्धिवाले **(रेवत्)** द्रव्य के समान **(ऊषुः)** वसें **(उतो)** और अन्धकार को निवृत्त करते हैं, वैसे **(पृथिव्याः)** भूमि के मध्य में **(कृतम्)** किया हुआ **(एनः)** पाप **(चित्)** शीघ्र आप **(सम्, दशस्य)** सम्यक् नष्ट करो **(चित्)** और सुन्दर कर्म को प्राप्त करो॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वानो! तुम लोग प्रभात वेला के तुल्य मनुष्यों के आत्माओं को प्रकाशित कर विज्ञान दे और अधर्माचरण को छुड़ा के सब मनुष्यों को सत्यवादी विद्वान् करो, जिससे पृथिवी पर पापाचरण न बढ़े॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इळा॑मग्ने पुरु॒दंसं॑ स॒निं गोः श॑श्वत्त॒मं हव॑मानाय साध।

स्यान्नः॑ सू॒नुस्तन॑यो विजा॒वाग्ने॒ सा ते॑ सुम॒तिर्भू॑त्व॒स्मे॥ ११॥ २॥

इळा॑म्। अ॒ग्ने॒। पु॒रु॒ऽदंस॑म्। स॒निम्। गोः। श॒श्व॒त्ऽत॒मम्। हव॑मानाय। सा॒ध॒। स्यात्। नः॒। सू॒नुः। तन॑यः। वि॒जाऽवा॑। अग्ने॑। सा। ते॒। सु॒ऽम॒तिः। भू॒तु॒। अ॒स्मे इति॑॥ ११॥

पदार्थः-**(इळाम्)** प्रशंसनीयां वाचम् **(अग्ने)** प्रकाशात्मन् **(पुरुदंसम्)** पुरूणि दंसांसि कर्माणि विद्यन्ते यस्य तम् **(सनिम्)** संभजमानाम् **(गोः)** पृथिव्या मध्ये **(शश्वत्तमम्)** सदैव वर्त्तमानम् **(हवमानाय)** आददानाय **(साध)** **(स्यात्)** भवेत् **(नः)** अस्माकम् **(सूनुः)** अपत्यम् **(तनयः)** विद्यासुखप्रचारकः **(विजावा)** विशेषेण प्रसिद्धः **(अग्ने)** विद्वन् **(सा)** **(ते)** तव **(सुमतिः)** शोभना चासौ मतिश्च सा सुमतिः **(भूतु)** भवतु **(अस्मे)** अस्मभ्यम्॥११॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं पुरुदसं सनिमिळां साध। गोर्मध्ये हवमानाय शश्वत्तमं विज्ञानं साध येन नस्तनयो विजावा सूनुः स्यात्। हे अग्ने! ते तव सा सुमतिरस्मे भूतु॥११॥

भावार्थः-मनुष्यैः सदैव विद्यायुक्तां वाचं प्रज्ञां च प्राप्य सुशिक्षितान् सन्तानान् कृत्वाऽनादिभूतं सुखं प्राप्तव्यं सदैवाऽऽप्तानां प्रज्ञा सर्वत्र प्रसारणीयेति॥११॥

अत्राऽग्निसूर्य्यविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इति सप्तमं सूक्तं द्वितीयो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अपने शरीरात्मा के प्रकाश से युक्त विद्वान्! आप **(पुरुदंसम्)** बहुत कर्मों वाली **(सनिम्)** सम्यक् सेवन की हुई **(इळाम्)** प्रशंसा के योग्य वाणी को **(साध)** साधो **(गोः)** पृथिवी के बीच **(हवमानाय)** ग्रहण करते हुए के अर्थ **(शश्वत्तमम्)** सदैव वर्त्तमान विज्ञान को सिद्ध करो, जिससे **(नः)** हमारा **(विजावा)** विशेष कर प्रसिद्ध **(तनयः)** विद्या और सुख का प्रचार करनेहारा **(सूनुः)** सन्तान **(स्यात्)** होवे। हे **(अग्ने)** विद्वन्! **(ते)** आपकी **(सा)** वह **(सुमतिः)** उत्तम बुद्धि **(अस्मे)** हमारे लिये **(भूतु)** हो॥११॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि सदैव विद्यायुक्त वाणी और बुद्धि को प्राप्त हो सन्तानों को उत्तम शिक्षा दे के अनादि रूप सुख को प्राप्त होवें और सदैव सत्यवादी विद्वानों की बुद्धि सर्वत्र फैलावें॥११॥

इस सूक्त में अग्नि, सूर्य्य और विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह सातवां सूक्त और दूसरा वर्ग समाप्त हुआ॥

अथैकादशर्चस्याष्टमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। विश्वेदेवा देवताः। १, ८-१० निचृत्त्रिष्टुप्। २, ५, ६, ११ त्रिष्टुप्। ४ स्वराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ३, ७ स्वराडनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः॥

अथ मनुष्याः केषां कामनां कुर्य्युरित्याह॥

अब तीसरे मण्डल के आठवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में मनुष्य लोग किसकी कामना करें, इस विषय को कहा है॥

अ॒ञ्जन्ति॑ त्वाम॑ध्व॒रे दे॑व॒यन्तो॒ वन॑स्पते॒ मधु॑ना दैव्ये॑न।
यदू॒र्ध्वस्तिष्ठा॒ द्रवि॑णे॒ह ध॑त्ता॒द् यद्वा॒ क्षयो॑ मा॒तुर॒स्या उ॒पस्थे॑॥ १॥

अ॒ञ्जन्ति॑। त्वाम्। अ॒ध्व॒रे। दे॒व॒ऽयन्तः॑। वन॑स्पते। मधु॑ना। दैव्ये॑न। यत्। ऊ॒र्ध्वः। तिष्ठाः॑। द्रवि॑णा। इ॒ह। ध॒त्ता॒त्। यत्। वा॒। क्षयः॑। मा॒तुः। अ॒स्याः। उ॒पस्थे॑॥ १॥

पदार्थः-(**अञ्जन्ति**) कामयन्ते (**त्वाम्**) (**अध्वरे**) अध्ययनाध्यापनराजपालनादिव्यवहारे (**देवयन्तः**) कामयमानाः (**वनस्पते**) वनस्य रश्मिसमूहस्य पालकः सूर्य्यस्तद्वद्वर्त्तमान (**मधुना**) मधुरस्वभावेन (**दैव्येन**) देवेषु विद्वत्सु भवेन (**यत्**) यम् (**ऊर्ध्वः**) सद्गुणैरुत्कृष्टः (**तिष्ठाः**) तिष्ठेः (**द्रविणा**) द्रविणानि धनानि (**इह**) अस्मिन् संसारे (**धत्तात्**) दध्याः (**यत्**) (**वा**) (**क्षयः**) निवासस्थानम् (**मातुः**) माननिमित्तायाः (**अस्याः**) भूमेः (**उपस्थे**) समीपे॥ १॥

अन्वयः-हे वनस्पते! मधुना दैव्येन सह वर्त्तमाना देवयन्तो विद्वांसो यद्यं त्वामध्वरे अञ्जन्ति स त्वं येषामूर्ध्वस्तिष्ठा इह द्रविणा वा धत्तादस्या मातुरुपस्थे यत् क्षयोऽस्ति तद्वयमपि गृह्णीयाम॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सर्वे प्राणिनो दिनं कामयन्ते तथैवोत्तमान् विदुषः सर्वे कामयन्ताम्। सर्वे मिलित्वा प्रीत्योत्तमं गृहमैश्वर्य्यं च साध्नुवन्ति [=साध्नुवन्तु]॥ १॥

पदार्थः-हे (**वनस्पते**) किरणों के रक्षक सूर्य्य के समान वर्त्तमान तेजस्वी विद्वन्! (**दैव्येन**) विद्वानों में हुए (**मधुना**) कोमल स्वभाव के साथ वर्त्तमान (**देवयन्तः**) कामना करते हुए विद्वान् (**यत्**) जिन (**त्वाम्**) आपको (**अध्वरे**) पढ़ने-पढ़ाने और राज्यपालनादि व्यवहार में (**अञ्जन्ति**) चाहते हैं, सो आप जिनके बीच (**ऊर्ध्वः**) श्रेष्ठ गुणों से बढ़े हुए (**तिष्ठाः**) स्थित हूजिये (**वा**) और (**इह**) इस संसार में (**द्रविणा**) धनों को (**धत्तात्**) धारण करो (**अस्याः**) इस (**मातुः**) मान देनेवाली भूमि के (**उपस्थे**) समीप गोद में (**यत्**) जो (**क्षयः**) निवासस्थान है, उसको हम लोग ग्रहण करें॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सब प्राणी दिन को चाहते हैं, वैसे ही उत्तम विद्वान् लोगों को सब मनुष्य चाहें। सब मिल के प्रीति से उत्तम घर और ऐश्वर्य्य की सिद्धि करें॥ १॥

अथ के जनाः कल्याणमाप्नुवन्तीत्याह॥

अब कौन मनुष्य कल्याण को प्राप्त होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

समिद्धस्य श्रयमाणः पुरस्ताद् ब्रह्म वन्वानो अजरं सुवीरम्।

आरे अस्मदमतिं बाधमान उच्छ्रयस्व महते सौभगाय॥ २॥

सम्ऽइद्धस्य। श्रयमाणः। पुरस्तात्। ब्रह्म। वन्वानः। अजरम्। सुऽवीरम्। आरे। अस्मत्। अमतिम्। बाधमानः। उत्। श्रयस्व। महते। सौभगाय॥ २॥

पदार्थः-(**समिद्धस्य**) प्रदीप्तस्य (**श्रयमाणः**) सेवमानः (**पुरस्तात्**) (**ब्रह्म**) महद्धनम् (**वन्वानः**) संभजमानः (**अजरम्**) अक्षयम् (**सुवीरम्**) शोभना वीरा यस्मात्तत् (**आरे**) समीपे दूरे वा (**अस्मत्**) (**अमतिम्**) विरुद्धामधर्मयुक्तां प्रज्ञाम् (**बाधमानः**) (**उत्**) (**श्रयस्व**) उत्कृष्टतया सेवस्व (**महते**) (**सौभगाय**) उत्तमैश्वर्यस्य भावाय॥ २॥

अन्वयः-हे वनस्पते! त्वं पुरस्तात्समिद्धस्य विदुषः श्रयमाणोऽजरं सुवीरं ब्रह्म वन्वानोऽस्मदारेऽमतिं बाधमानः सन् महते सौभगाय सततमुच्छ्रयस्व॥ २॥

भावार्थः-अत्र पूर्वमन्त्रात् 'वनस्पते' इति पदमनुवर्त्तते। ये जनाः सुशिक्षया कुबुद्धिं निवारयन्तो धनाद्यैश्वर्येण सुशिक्षाविद्याधर्मान् प्रचारयन्तः सर्वस्य कल्याणमिच्छेयुस्ते सदैव कल्याणभाजः स्युः॥ २॥

पदार्थः-हे रश्मिरक्षक सूर्य के समान तेजस्वी विद्वन्! आप (**पुरस्तात्**) पहिले से (**समिद्धस्य**) प्रदीप्त तेजस्वी विद्वान् का (**श्रयमाणः**) सेवन करते और (**अजरम्**) अक्षय (**सुवीरम्**) जिससे उत्तम वीर पुरुष हों ऐसे (**ब्रह्म**) बड़े धन को (**वन्वानः**) सेवन करते हुए (**अस्मत्**) हमारे (**आरे**) समीप वा दूर में (**अमतिम्**) अधर्मयुक्त विरुद्ध बुद्धि को (**बाधमानः**) नष्ट करते हुए (**महते**) बड़े (**सौभगाय**) उत्तम ऐश्वर्य्य होने के लिये निरन्तर (**उत्, श्रयस्व**) अच्छे प्रकार सेवन करो॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में पूर्व मन्त्र से 'वनस्पते' इस पद की अनुवृत्ति आती है। जो मनुष्य अच्छी शिक्षा से कुबुद्धि का निवारण करते और धनादि ऐश्वर्य के साथ सुशिक्षा, विद्या और धर्म का प्रचार करते हुए सबके कल्याण की इच्छा करें, वे सदैव कल्याणभागी होवें॥ २॥

पुनर्मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उच्छ्रयस्व वनस्पते वर्ष्मन् पृथिव्या अधि।

सुमिती मीयमानो वर्चो धा यज्ञवाहसे॥ ३॥

उत्। श्रयस्व। वनस्पते। वर्ष्मन्। पृथिव्याः। अधि। सुऽमिती। मीयमानः। वर्चः। धाः। यज्ञऽवाहसे॥ ३॥

पदार्थः-(**उत्**) (**श्रयस्व**) (**वनस्पते**) वननीयस्य धनस्य रक्षक (**वर्ष्मन्**) सद्गुणानां सेचक (**पृथिव्याः**) भूमेः (**अधि**) उपरि (**सुमती**)[५] शोभनया प्रज्ञया। अत्र पूर्वसवर्णादेशः। **माङ् मान** इत्यस्मात् क्तिनि **द्यतिस्यतिमास्थे**तीत्वम्। धातूनामनेकार्थत्वाज्ज्ञानार्थत्वम् (**मीयमानः**) सत्क्रियमाणः (**वर्चः**) अध्यापनतेजः (**धाः**) धेहि (**यज्ञवाहसे**) यज्ञस्याऽध्ययनाऽध्यापनस्य प्राप्तये॥३॥

अन्वयः-हे वर्ष्मन् वनस्पते! त्वं पृथिव्या अधि स्तम्भ इवोच्छ्रयस्व मीयमानः सन्सुमती[६] यज्ञवाहसे वर्चो धाः॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा वटादयो वनस्पतयो मूलस्कन्धशाखादिभिर्वर्द्धन्ते तथैव पुरुषार्थेन विद्याः प्रचार्य्य मनुष्यैर्वर्द्धनीयम्॥३॥

पदार्थः-हे (**वर्ष्मन्**) श्रेष्ठ गुणों के प्रचारक (**वनस्पते**) सेवने योग्य धन के रक्षक विद्वान्! आप (**पृथिव्याः**) भूमि के (**अधि**) उपर खम्भ के तुल्य (**उत्, श्रयस्व**) ऊंचे हूजिये (**मीयमानः**) सत्कार किये हुए (**सुमतीः**)[७] सुन्दर बुद्धि से (**यज्ञवाहसे**) पढ़ने-पढ़ाने आदि यज्ञ के प्राप्त करानेहारे विद्यार्थी के लिये (**वर्चः**) पढ़ाने रूप तेज को (**धाः**) धारण कीजिये॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे बड़ आदि वनस्पति जड़, स्कन्ध, डाली आदि से बढ़ते हैं, वैसे ही पुरुषार्थ के साथ विद्याओं का प्रचार कर मनुष्यों को बढ़ाना चाहिये॥३॥

पुनः कीदृशो विद्वान् भवतीत्याह॥

फिर कैसा विद्वान् हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

युवा॑ सु॒वासाः॒ परि॑वीत॒ आगा॒त् स उ॒ श्रेया॑न् भवति॒ जाय॑मानः।

तं धीरा॑सः क॒वय॒ उन्न॑यन्ति स्वा॒ध्यो॒३॒॑ मन॑सा देव॒यन्तः॑॥४॥

युवा॑। सु॒ऽवासाः॑। परि॑ऽवीतः। आ। अ॒गा॒त्। सः। ऊ॒म् इति॑। श्रेया॑न्। भ॒व॒ति॒। जाय॑मानः। तम्। धीरा॑सः। क॒वयः॑। उत्। न॒य॒न्ति॒। सु॒ऽआ॒ध्यः॑। मन॑सा। दे॒व॒ऽयन्तः॑॥४॥

पदार्थः-(**युवा**) यौवनावस्थां प्राप्तः (**सुवासाः**) शोभनानि वासांसि धृतानि येन सः (**परिवीतः**) परितः सर्वतो व्याप्तविद्यः (**आ**) समन्तात् (**अगात्**) आगच्छेत् (**सः**) (**उ**) एव (**श्रेयान्**) अतिशयेन प्रशस्तः (**भवति**) (**जायमानः**) विद्याया मातुरन्तः स्थित्वा निष्पन्नः (**तम्**) (**धीरासः**) धीमन्तः (**कवयः**)

५. सुमिती॥ सं.

६. सुमिती॥ सं.

७. सुमिती॥ सं.

अनूचाना विद्वांस: **(उत्)** ऊर्ध्वे **(नयन्ति)** उत्तमं सम्पादयन्ति **(स्वाध्य:)** सुष्ठु विद्याधानकर्त्तार: **(मनसा)** विज्ञानेनान्त:करणेन वा **(देवयन्त:)** कामयमाना:॥४॥

अन्वय:-योऽष्टमं वर्षमारभ्य ब्रह्मचर्येण गृहीतविद्यो युवा सुवासा: परिवीत: सन् गृहमागात्स उ विद्यायां जायमान: सञ्छ्रेयान् भवति तं देवयन्तो धीरास: स्वाध्य: कवयो मनसोन्नयन्ति॥४॥

भावार्थ:-नहि कश्चिदपि विद्यासुशिक्षाब्रह्मचर्यसेवनेन विना दीर्घायु: सभ्यो विद्वान् भवितुमर्हति न चैष क्वापि सत्कारं प्राप्तुं योग्यो जायते यं धार्मिका विद्वांस: प्रशंसन्ति स एव विद्वानस्ति॥४॥

पदार्थ:-जो आठवें वर्ष से लेकर ब्रह्मचर्य्य के साथ विद्या को ग्रहण किये **(युवा)** युवावस्था को प्राप्त **(सुवासा:)** सुन्दर वस्त्रों को धारण किये **(परिवीत:)** और सब ओर से विद्या में व्याप्त हुए ब्रह्मचर्य से घर को **(आ, अगात्)** आवे **(स:, उ)** वही विद्या में **(जायमान:)** प्रसिद्ध हुआ **(श्रेयान्)** अति प्रशस्त **(भवति)** होता है **(तम्)** उसको **(देवयन्त:)** कामना करते हुए **(धीरास:)** बुद्धिमान् **(स्वाध्य:)** सुन्दर विद्या का आधान करनेवाले **(कवय:)** सर्वोत्तम विद्वान् लोग **(मनसा)** विज्ञान वा अन्त:करण से **(उत्, नयन्ति)** उन्नत करते उत्तम मानते हैं॥४॥

भावार्थ:-कोई भी मनुष्य विद्या की उत्तम शिक्षा और ब्रह्मचर्य्य सेवन के विना दीर्घायु और सभा के योग्य विद्वान् नहीं हो सकता और न वह मनुष्य कहीं सत्कार पाने योग्य होता है। जिस मनुष्य की धार्मिक विद्वान् प्रशंसा करते हैं, वही विद्वान् है॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

जातो जायते सुदिनत्वे अह्नां समर्य आ विदथे वर्धमान:।

पुनन्ति धीरा अपसो मनीषा देवया विप्र उदियर्ति वाचम्॥५॥

जात:। जायते। सुऽदिनत्वे। अह्नाम्। सऽमर्ये। आ। विदथे। वर्धमान:। पुनन्ति। धीरा:। अपस:। मनीषा। देवऽया:। विप्र:। उत्। इयर्ति। वाचम्॥५॥

पदार्थ:-**(जात:)** उत्पन्न: प्रसिद्ध: **(जायते)** उत्पद्यते **(सुदिनत्वे)** शोभनानां दिनानां भावे **(अह्नाम्)** दिवसानाम् **(समर्य्ये)** संग्रामे। **समर्य्य इति संग्रामनामसु पठितम्।** (निघं०२.१७)। **(आ)** समन्तात् **(विदथे)** विज्ञानमये व्यवहारे **(वर्धमान:)** **(पुनन्ति)** पवित्रीकुर्वन्ति **(धीरा:)** मेधाविनो ध्यानवन्त: **(अपस:)** कर्माणि **(मनीषा)** प्रज्ञया **(देवया:)** देवान् विदुषो यजमान: पूजयन् **(विप्र:)** सकलविद्यायुक्तो मेधावी **(उत्)** **(इयर्ति)** प्राप्नोति **(वाचम्)** शुद्धां वाणीम्॥५॥

अन्वय:-य: समर्ये शूरवीर इवाह्नां सुदिनत्वे विदथे जातो वर्द्धमानो जायते यो मनीषा अपस: कुर्वन् देवया युक्तो विप्रो वाचमुदियर्त्ति तं धीरा आ पुनन्ति॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। तेषामेव सुदिनं भवति ये विद्यासुशिक्षे संगृह्य विद्वांसो जायन्ते यथा शूरवीरा दुष्टान् विजित्य धनाद्यैश्वर्येण सर्वतो वर्धन्ते तथैव विद्यया विद्वान् वर्धते॥५॥

पदार्थः-जो **(समर्ये)** युद्ध में शूरवीर पुरुष के समान **(अह्नाम्)** दिनों के **(सुदिनत्वे)** सुन्दर दिनों के होने में **(विदथे)** विज्ञान सम्बन्धी व्यवहार में **(जातः)** प्रसिद्ध **(वर्द्धमानः)** बढ़ता हुआ **(जायते)** उत्पन्न होता है। जो **(मनीषा)** बुद्धि से **(अपसः)** कर्मों को करता हुआ **(देवयाः)** विद्वानों का पूजन करनेवाला नियतात्मा **(विप्रः)** समस्त विद्याओं से युक्त बुद्धिमान् जन **(वाचम्)** शुद्ध वाणी को **(उत्, इयर्त्ति)** प्राप्त होता है, उसको **(धीराः)** बुद्धिमान् जन **(आ, पुनन्ति)** अच्छे प्रकार पवित्र करते हैं॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। उन्हीं का सुदिन होता है जो विद्या और उत्तम शिक्षा का संग्रह कर विद्वान् होते हैं। जैसे शूरवीर पुरुष दुष्टों को जीत के धनादि ऐश्वर्य्य के साथ सब ओर से बढ़ते हैं, वैसे ही विद्या से विद्वान् बढ़ते हैं॥५॥

मनुष्यैः के ग्राह्यास्त्याज्या वेत्याह॥

मनुष्यों को किनका ग्रहण वा त्याग करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यान् वो नरो॑ देव॒यन्तो॑ निमि॒म्युर्वन॑स्पते॒ स्वधि॑तिर्वा त॒तक्ष॑।

ते दे॒वास॒: स्वर॑वस्तस्थि॒वांस॑: प्र॒जाव॑द॒स्मे दि॑धिषन्तु॒ रत्न॑म्॥६॥

यान्। व॒ः। नर॑ः। दे॒व॒ऽयन्त॑ः। नि॒ऽमि॒म्युः। वन॑स्पते। स्वऽधि॑तिः। वा॒। त॒तक्ष॑। ते। दे॒वास॑ः। स्वर॑वः। त॒स्थि॒ऽवांस॑ः। प्र॒जाऽव॑त्। अ॒स्मेऽ इति॑। दि॒धि॒ष॒न्तु॒। रत्न॑म्॥६॥

पदार्थः-**(यान्)** **(वः)** युष्मान् **(नरः)** नायकाः **(देवयन्तः)** कामयमानाः **(निमिम्युः)** नितरां मिनुयुः **(वनस्पते)** वनानां पालक **(स्वधितिः)** वज्रः **(वा)** **(ततक्ष)** तक्षति **(ते)** **(देवासः)** विद्वांसः **(स्वरवः)** स्वकीयो रवो विद्याप्रज्ञापकः शब्दो येषान्ते **(तस्थिवांसः)** स्थिरप्रज्ञाः **(प्रजावत्)** प्रजा विद्यन्ते यस्मिँस्तत् **(अस्मे)** अस्मभ्यम् **(दिधिषन्तु)** उपदिशन्तु **(रत्नम्)** धनम्। **रत्नमिति धननामसु पठितम्।** (निघं०२.१०)॥६॥

अन्वयः-हे नरो! यान् वो देवयन्तो निमिम्युस्ते स्वरवस्तस्थिवांसो देवासो भवन्तोऽस्मे प्रजावद्रत्नं दिधिषन्तु। वा हे वनस्पते! यथा स्वधितिर्मेघं ततक्ष तथा त्वं दुष्टतां तक्ष॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! येषां सङ्गेनान्ये सभ्या विद्वांसः स्युस्तेषामेव सङ्गं यूयमपि कुरुत येषां समागमेन दुर्व्यसनानि वर्धेरँस्तान् सर्वे त्यजन्तु॥६॥

पदार्थः-हे **(नरः)** नायक लोगो! **(यान्)** जिन **(वः)** तुमको **(देवयन्तः)** कामना करते हुए जन **(निमिम्युः)** निरन्तर मान करें **(ते)** वे **(स्वरवः)** अपने विद्याबोधक शब्दों से युक्त **(तस्थिवांसः)** स्थिर बुद्धिवाले **(देवासः)** आप विद्वान् लोग **(अस्मे)** हमारे **(प्रजावत्)** प्रजावान् **(रत्नम्)** धन का **(दिधिषन्तु)**

उपदेश करें। **(वा)** अथवा हे **(वनस्पते)** वनों के रक्षक पुरुष! जैसे **(स्वधितिः)** वज्र मेघ को **(ततक्ष)** काटता है, वैसे आप दुष्टता को काटो॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जिनके सङ्ग से अन्य जन सभ्य विद्वान् हों, उन्हीं का सङ्ग तुम लोग भी करो। जिनके समागम से दुर्व्यसन बढ़ें, उनको सब लोग त्याग देवें॥६॥

अथ विद्यया किं भवतीत्याह॥

अब विद्या से क्या होता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ये वृक्णासो अधि क्षमि निमितासो यतस्रुचः।
ते नो व्यन्तु वार्यं देवत्रा क्षेत्रसाधसः॥७॥

ये। वृक्णासः। अधि। क्षमि। निऽमितासः। यतऽस्रुचः। ते। नः। व्यन्तु। वार्यम्। देवऽत्रा। क्षेत्रऽसाधसः॥७॥

पदार्थः-**(ये)** **(वृक्णासः)** छिन्नाविद्याः **(अधि)** **(क्षमि)** पृथिव्याम् **(निमितासः)** नित्यमितज्ञानाः **(यतस्रुचः)** यता स्रुग् यज्ञसाधनं यैस्ते ऋत्विजः **(ते)** **(नः)** अस्माकम् **(व्यन्तु)** प्राप्नुवन्तु **(वार्य्यम्)** वर्त्तुमर्हं विज्ञानम् **(देवत्रा)** देवेषु विद्वत्सु **(क्षेत्रसाधसः)** ये क्षेत्राणि साध्नुवन्ति ते॥७॥

अन्वयः-ये वृक्णासो निमितासो यतस्रुचः क्षम्यधि वर्त्तन्ते ते देवत्रा क्षेत्रसाधसो नो वार्य्यं व्यन्तु॥७॥

भावार्थः-यथा कुठारेण छिन्ना वृक्षा न रोहन्ति तथैव विद्यया क्षीणा अविद्या न वर्द्धते॥७॥

पदार्थः-**(ये)** जो **(वृक्णासः)** अविद्या से पृथक् हुए **(निमितासः)** सदैव सत्य-सत्य ज्ञानवाले **(यतस्रुचः)** जिन्होंने यज्ञ साधन निश्चित किया और **(क्षमि)** **(अधि)** पृथिवी पर वर्त्तमान हैं **(ते)** वे **(देवत्रा)** विद्वानों में **(क्षेत्रसाधसः)** खेतों को साधनेवाले **(नः)** हमारे **(वार्य्यम्)** स्वीकार के योग्य ज्ञान को **(व्यन्तु)** प्राप्त हों॥७॥

भावार्थः-जैसे कुल्हाड़े से काटे हुए वृक्ष फिर नहीं जमते, वैसे ही विद्या से नष्ट हुई अविद्या नहीं बढ़ती॥७॥

पुनस्तमेवाहिंसाधर्मोन्नतिविषयमाह॥

फिर उसी अहिंसाधर्म की उन्नति के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आदित्या रुद्रा वसवः सुनीथा द्यावाक्षामा पृथिवी अन्तरिक्षम्।
सजोषसो यज्ञमवन्तु देवा ऊर्ध्वं कृण्वन्त्वध्वरस्य केतुम्॥८॥

आदित्याः। रुद्राः। वसवः। सुऽनीथाः। द्यावाक्षामा। पृथिवी। अन्तरिक्षम्। सऽजोषसः। यज्ञम्। अवन्तु। देवाः। ऊर्ध्वम्। कृण्वन्तु। अध्वरस्य। केतुम्॥८॥

पदार्थः-(**आदित्याः**) द्वादश मासाः (**रुद्राः**) प्राणाः (**वसवः**) पृथिव्यादयः (**सुनीथाः**) सुष्ठुसङ्गताः (**द्यावाक्षामा**) सूर्य्यभूमी (**पृथिवी**) विस्तीर्णे (**अन्तरिक्षम्**) आकाशम् (**सजोषसः**) समानप्रीतिसेवनाः (**यज्ञम्**) सर्वं सद्व्यवहारं (**अवन्तु**) रक्षन्तु (**देवाः**) कामयमानाः (**ऊर्ध्वम्**) उच्छ्रितमुत्कृष्टम् (**कृण्वन्तु**) (**अध्वरस्य**) अहिंसनीयस्य (**केतुम्**) प्रज्ञाम्॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथादित्या रुद्रा वसवः पृथिवी द्यावाक्षामा अन्तरिक्षं च सजोषसः सुनीथा यज्ञं वर्द्धयन्ति तथा सजोषसो देवा यज्ञमवन्त्वध्वरस्य केतुमूर्ध्वं कृण्वन्तु॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यथा मासाः प्राणाः पृथिव्यादयश्च पदार्थाः सहानुभूत्या वर्त्तन्ते तथैव सर्वैः सर्वैः सह प्रीतिमुत्पाद्य विज्ञानं वर्धयित्वाऽहिंसाधर्मस्योन्नतिः कार्य्या:॥८॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**आदित्याः**) बारह मास (**रुद्राः**) प्राण (**वसवः**) पृथिवी आदि (**पृथिवी**) विस्तारयुक्त (**द्यावाक्षामा**) सूर्य्य और भूमि तथा (**अन्तरिक्षम्**) आकाश ये सब (**सजोषसः**) सबके साथ समान प्रीति के सेवक (**सुनीथाः**) सुन्दर सङ्गति को प्राप्त (**यज्ञम्**) यज्ञ को (**वर्द्धयन्ति**) बढ़ाते हैं, वैसे (**सजोषसः**) समान प्रीतिवाले (**देवाः**) कामना करते हुए विद्वान् यज्ञ की (**अवन्तु**) रक्षा करें (**अध्वरस्य**) रक्षा योग्य धर्म की (**केतुम्**) बुद्धि को (**ऊर्ध्वम्**) उत्तेजित (**कृण्वन्तु**) करें॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वानो! जैसे महीने, प्राण और पृथिवी आदि पदार्थ अविरुद्धता के साथ वर्त्तमान रहते हैं, वैसे ही सबको सबके साथ प्रीति उत्पन्न कर, विज्ञान बढ़ा के अहिंसाधर्म की उन्नति करनी चाहिये॥८॥

पुनः के पूर्णं सुखमाप्नुवन्तीत्याह॥

फिर कौन पूर्ण सुख को प्राप्त होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

हंसाइव श्रेणिशो यताना: शुक्रा वसाना: स्वरवो न आगुः।
उन्नीयमाना: कविभिः पुरस्ताद् देवा देवानामपि यन्ति पाथः॥९॥

हंसाःऽइंव। श्रेणिऽशः। यतानाः। शुक्राः। वसानाः। स्वरवः। नः। आ। अगुः। उत्ऽनीयमानाः। कविऽभिः। पुरस्तात्। देवाः। देवानाम्। अपि। यन्ति। पाथः॥९॥

पदार्थः-(**हंसाइव**) यथा पक्षिविशेषाः (**श्रेणिशः**) कृतश्रेणयो विहितपङ्क्तयः (**यतानाः**) प्रयतमानाः (**शुक्रा**) शुक्राण्युदकानि (**वसानाः**) आच्छादयन्तः (**स्वरवः**) सुस्वरान् सेवमानाः (**नः**) अस्मान् (**आ**) समन्तात् (**अगुः**) प्राप्नुवन्ति (**उन्नीयमानाः**) उत्कृष्टान् गुणान् प्रापयन्तः (**कविभिः**)

मेधाविभिः **(पुरस्तात्)** प्रथमतः **(देवाः)** दिव्यगुणकर्मस्वभावा विपश्चितः **(देवानाम्)** विदुषाम् **(अपि)** **(यन्ति)** गच्छन्ति **(पाथः)** मार्गम्॥९॥

अन्वयः-ये देवाः श्रेणिशो यतानाः शुक्रा वसानाः स्वरवो हंसाइव न उन्नीयमानाः पुरस्तात् कविभिः सह वर्त्तमानानां देवानां पाथोऽपि यन्ति तेऽप्यस्मानागुः॥९॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये हंसाइव संहता भूत्वा प्रयत्नेन सर्वानुन्नीय स्वयमुन्नताः सन्त आप्तमार्गं गत्वा वीर्य्यं वर्धयन्ति त एव पुष्कलं सुखमश्नुवते॥९॥

पदार्थः-जो **(देवाः)** उत्तम गुण, कर्म, स्वभाववाले पण्डित लोग **(श्रेणिशः)** पङ्क्ति बांधे **(यतानाः)** यत्न करते और **(शुक्राः)** जलों को **(वसानाः)** आच्छादन करते हुए **(स्वरवः)** सुन्दर स्वरों का सेवन करनेहारे **(हंसाइव)** हंसों के तुल्य दर्शनीय **(नः)** हमको **(उन्नीयमानाः)** उत्तम गुणों को प्राप्त करते हुए **(पुरस्तात्)** पहिले से **(कविभिः)** बुद्धिमानों के साथ वर्त्तमान **(देवानाम्)** विद्वानों के **(पाथः)** मार्ग को **(अपि, यन्ति)** चलते हैं, वे भी हमको **(आ, अगुः)** अच्छे प्रकार प्राप्त होते हैं॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो हंसों के तुल्य मिल के प्रयत्न से सबकी उन्नति कर अपने आप उन्नति को प्राप्त हुए आप्त सत्यवादियों के मार्ग में चल के पराक्रम बढ़ाते हैं, वे ही पूर्ण सुख को भोगते हैं॥९॥

पुनः के विद्वांसः सत्कारमाप्नुवन्तीत्याह॥

अब कौन विद्वान् जन सत्कार पाते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

शृङ्गा॑णीवेच्छृ॒ङ्गिणां॒ सं द॑दृश्रे च॒षाल॑वन्तः॒ स्वर॑वः पृथि॒व्याम्।
वा॒घद्भि॑र्वा विहु॒वे श्रोष॑माणा अ॒स्माँ अ॑वन्तु पृत॒नाज्ये॑षु॥१०॥

शृङ्गा॑णिऽइव। इत्। शृङ्गिणा॑म्। सम्। द॒दृश्रे। च॒षाल॑ऽवन्तः। स्वर॑वः। पृथि॒व्याम्। वा॒घत्ऽभि॑ः। वा॒। वि॒ऽहुवे। श्रोष॑माणाः। अ॒स्मान्। अ॒वन्तु। पृत॒नाज्ये॑षु॥१०॥

पदार्थः-**(शृङ्गाणीव)** **(इत्)** एव **(शृङ्गिणाम्)** महिषादीनाम् **(सम्)** सम्यक् **(ददृश्रे)** दृश्यन्ते **(चषालवन्तः)** बहवश्चषाला भोगा विद्यन्ते येषान्ते **(स्वरवः)** प्रशंसकाः **(पृथिव्याम्)** भूमौ **(वाघद्भिः)** ऋत्विग्भिः **(वा)** पक्षान्तरे **(विहवे)** विशेषेण ह्वयति शब्दयति यस्मिँस्तस्मिन् **(श्रोषमाणाः)** शृण्वन्तः। अत्र **वाच्छन्दसी**ति द्वित्वाभावः। **(अस्मान्)** **(अवन्तु)** **(पृतनाज्येषु)** संग्रामेषु॥१०॥

अन्वयः-ये चषालवन्तः स्वरवो विहवे श्रोषमाणा वाघद्भिः सह वर्त्तमानाः पृथिव्यां शृङ्गिणां शृङ्गाणीव सं ददृश्रे त इत्पृतनाज्येषु वेतरेषु व्यवहारेष्वस्मानवन्तु॥१०॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये बहुश्रुता विद्वांसः स्वात्मवत्सर्वान् पालयन्ति ते सुकीर्त्योत्तमाङ्गे मस्तके संस्थितानि पशूनां शृङ्गाणीव योग्यपदवीं प्राप्य संसारे स्तूयमानाः सर्वैः सत्क्रियन्ते॥१०॥

पदार्थः-जो **(चषालवन्तः)** बहुत भोगोंवाले **(स्वरवः)** प्रशंसक लोग **(विहवे)** विशेष कर जहाँ पठन-पाठनादि का शब्द करते उस स्थान में **(श्रोषमाणाः)** सुनते हुए **(वाघद्भिः)** ऋत्विजों के साथ वर्त्तमान **(पृथिव्याम्)** पृथिवी पर **(शृङ्गिणाम्)** भैंसा आदि के **(शृङ्गाणीव)** सींगों के तुल्य **(सम्, ददृश्रे)** सम्यक् दीख पड़ते हैं, वे **(इत्)** ही **(पृतनाज्येषु)** संग्रामों **(वा)** अथवा अन्य व्यवहारों में **(अस्मान्)** हमको **(अवन्तु)** रक्षित करें॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो बहुश्रुत विद्वान् लोग अपने आत्मा के तुल्य सबकी रक्षा करते हैं, वे उत्तम कीर्त्ति से श्रेष्ठाङ्ग मस्तक में वर्त्तमान सब पशुओं के सींगों के तुल्य उत्तम पद को प्राप्त होकर संसार में स्तुति किये हुए सब के सत्कार को प्राप्त होते हैं॥१०॥

अथ ब्रह्मचर्य्यानुष्ठानेन किं भवतीत्याह॥

अब ब्रह्मचर्य्य के अनुष्ठान से क्या होता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

वन॑स्पते श॒तव॑ल्शो॒ वि रो॑ह स॒हस्र॑वल्शा॒ वि व॒यं रु॑हेम।

यं त्वाम॒यं स्वधि॑ति॒स्तेज॑मानः प्रणि॒नाय॑ मह॒ते सौभ॑गाय॥ ११॥ ४॥

वन॑स्पते। श॒तऽव॑ल्शः। वि। रो॒ह॒। स॒हस्र॑ऽवल्शाः। वि। व॒यम्। रु॒हे॒म। यम्। त्वाम्। अ॒यम्। स्वऽधि॑तिः। तेज॑मानः। प्र॒ऽनि॒नाय॑। म॒ह॒ते। सौभ॑गाय॥ ११॥

पदार्थः-**(वनस्पते)** वनस्पतिरिव वर्त्तमान **(शतवल्शः)** शतानि वल्शा अङ्कुरा यस्य सः **(वि)** विशेषेण **(रोह)** वर्द्धयस्व **(सहस्रवल्शाः)** सहस्राङ्कुरा वनस्पतय इवाङ्गोपाङ्गैः सह वर्त्तमानाः **(वि)** **(वयम्)** **(रुहेम)** वर्द्धेमहि **(यम्)** **(त्वाम्)** **(अयम्)** **(स्वधितिः)** वज्रः **(तेजमानः)** तीक्ष्णीकृतः **(प्रणिनाय)** प्रकर्षेण प्रापय **(महते)** **(सौभगाय)** शोभनस्य धनस्य भावाय॥११॥

अन्वयः-हे वनस्पते! यथा शतवल्शो वंशादिवृक्षविशेषो वर्द्धते तथा त्वं विरोह सुखं प्रणिनाय च यथा सहस्रवल्शा दूर्वादयो तथैव वर्द्धन्ते वयं विरुहेम यथाऽयं तेजमानः स्वधितिर्विद्युन्महते सौभगाय यन्त्वां वर्धयति तं वयमपि वर्धयेम॥११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या ब्रह्मचर्य्यविद्यासुशिक्षाधर्मपुरुषार्थैर्युक्ताः सन्तः कार्य्यसिद्धये प्रयतन्ते ते वंशादयो वृक्षाइव सर्वतो वर्द्धन्ते यथा सुतीक्ष्णैः शस्त्रैः शत्रून् सञ्जित्याऽजातशत्रवः सन्ति तान् विद्युन्मेघमिव शत्रुदलानि दग्धुं समर्था भूत्वा महदैश्वर्यं जनयेयुरिति॥११॥

अत्र विद्वच्छ्रोत्रियब्रह्मचारिगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इत्यष्टमं सूक्तं चतुर्थो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(वनस्पते)** वनस्पति के समान वर्त्तमान परोपकारी सज्जन! जैसे **(शतवल्शः)** सैकड़ों अंकुरवाला बांस आदि वृक्ष विशेष बढ़ता है, वैसे आप **(वि, रोह)** वृद्धि को प्राप्त हूजिये और सुख को

(प्रणिनाय) उत्तम प्रकार से प्राप्त कीजिये। जैसे **(सहस्रवल्शाः)** हजारों अंकुरवाले वनस्पतियों के तुल्य साङ्गोपाङ्ग वर्त्तमान दूर्वा आदि बढ़ते हैं, वैसे ही **(वयम्)** हम लोग **(वि, रुहेम)** विशेष कर बढ़ें। जैसे **(अयम्)** यह **(तेजमानः)** तीक्ष्ण किया **(स्वधितिः)** वज्ररूप विद्युत् अग्नि **(महते)** बड़े **(सौभगाय)** सुन्दर धन होने के लिये **(यम्)** जिस **(त्वाम्)** आपको बढ़ाता है, वैसे हम लोग भी बढ़ावें॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य ब्रह्मचर्य्य, विद्या, सुशिक्षा, धर्म और पुरुषार्थों से युक्त हुए कार्य्यसिद्धि के अर्थ प्रयत्न करते हैं, वे बांस आदि वृक्षों के तुल्य सब ओर से बढ़ते हैं। जैसे सुन्दर तीक्ष्ण शस्त्रों से शत्रुओं को जीत के अजातशत्रु होते हैं, उनको जैसे विद्युत् मेघ को, वैसे शत्रु दलों को जलाने को समर्थ हो के महान् ऐश्वर्य्य को उत्पन्न करें॥११॥

इस सूक्त में विद्वान् वेदपाठी और बह्मचारी के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त केअर्थ की पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है यह जानना चाहिये॥

यह आठवां सूक्त और चौथा वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ नवर्चस्य नवमसूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ४ बृहती। २, ५-७ निचृद्बृहती। ३, ८ विराट् बृहती छन्दः। मध्यमः स्वरः। ९ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ मनुष्यैरहिंसाधर्मो ग्राह्य इत्याह॥

अब नव ऋचावाले नवमें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में मनुष्यों को अहिंसा धर्म का ग्रहण करना चाहिये, इस विषय को कहा है॥

सखा॑यस्त्वा ववृमहे दे॒वं मर्ता॑स ऊ॒तये॑।

अ॒पां नपा॑तं सु॒भगं॑ सु॒दीदि॑तिं सु॒प्रतू॑र्तिमने॒हस॑म्॥ १॥

सखा॑यः। त्वा॒। व॒वृ॒म॒हे॒। दे॒वम्। मर्ता॑सः। ऊ॒तये॑। अ॒पाम्। नपा॑तम्। सु॒ऽभग॑म्। सु॒ऽदीदि॑तिम्। सु॒ऽप्रतू॑र्तिम्। अ॒ने॒हस॑म्॥ १॥

पदार्थः-(**सखायः**) सुहृदः सन्तः (**त्वा**) त्वाम् (**ववृमहे**) वृणुयाम (**देवम्**) विद्वांसम् (**मर्त्तासः**) मननशीला मनुष्याः (**ऊतये**) रक्षणाय (**अपाम्**) प्राणानां मध्ये (**नपातम्**) आत्मत्वेन नाशरहितम् (**सुभगम्**) उत्तमैश्वर्यम् (**सुदीदितिम्**) विद्याविनयप्रकाशयुक्तम्। **दीदयतीति ज्वलतिकर्मा।** (निघं०१.१६) (**सुप्रतूर्त्तिम्**) सुष्ठु प्रकृष्टा तूर्त्तिः शीघ्रता यस्मिँस्तम् (**अनेहसम्**) अहन्तारम्॥ १॥

अन्वयः-हे उपदेशक! मर्त्तासः सखायो वयमूतयेऽपां नपातमनेहसं सुप्रतूर्त्तिं सुदीदितिं सुभगं देवं त्वा ववृमहे॥ १॥

भावार्थः-मनुष्यैर्विद्यादिसौभाग्यजननाय सुहृद्भावमाश्रित्याप्तस्य विदुषः शरणं गत्वाऽहिंसाधर्मः संग्रहीतव्यः॥ १॥

पदार्थः-हे उपदेशक सज्जन (**मर्त्तासः**) मननशील (**सखायः**) मित्र हुए हम लोग (**ऊतये**) रक्षा आदि के लिये (**अपाम्**) प्राणों के बीच (**नपातम्**) आत्मभाव से नाशरहित (**अनेहसम्**) न मारनेहारे (**सुप्रतूर्त्तिम्**) सुन्दर शीघ्रतायुक्त (**सुदीदितिम्**) विद्या और विनय के प्रकाश से युक्त (**सुभगम्**) उत्तम ऐश्वर्य्यवाले (**देवम्**) विद्वान् (**त्वा**) आपको (**ववृमहे**) स्वीकार करें॥ १॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि विद्यादि सौभाग्य जनने के लिये मित्रभाव का आश्रय कर और आप्त सत्यवक्ता विद्वान् के शरण को प्राप्त हो के अहिंसाधर्म का संग्रह करें॥ १॥

विद्यार्थी कं प्राप्य सुखी भवतीत्याह॥

विद्यार्थी किसको पाकर सुखी होता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

काय॑मानो व॒ना त्वं यन्मा॒तॄरज॑गन्न॒पः।

न तत्ते॑ अग्ने प्र॒मृषे॑ नि॒वर्त॑नं॒ यद्दू॒रे सन्नि॒हाभ॑वः॥ २॥

कार्यमानः। वना। त्वम्। यत्। मातॄः। अजगन्। अपः। न। तत्। ते। अग्ने। प्रऽमृषे। निऽवर्तनम्। यत्। दूरे। सन्। इह। अभवः॥२॥

पदार्थः-(**कायमानः**) अध्यापयन्नुपदिशन् वा (**वना**) वनानि याचनीयानि (**त्वम्**) (**यत्**) यतः (**मातॄः**) मातर इव पालिकाः (**अजगन्**) प्राप्नुयाः (**अपः**) प्राणान् (**न**) (**तत्**) तस्मात् (**ते**) तव (**अग्ने**) शुभगुणैः प्रकाशमान (**प्रमृषे**) सुखैः संयोजयेः (**निवर्त्तनम्**) अन्यायाचरणात्पृथग्भवनम् (**यत्**) यस्मात् (**दूरे**) (**सन्**) (**इह**) (**अभवः**) भवेः॥२॥

अन्वयः-हे अग्ने! कायमानः सँस्त्वं यन्मातॄरपोऽजगन् यन्निवर्त्तनं दूरे प्रक्षिपेर्मङ्गलायेहाभवस्तत्तस्मात्ते सकाशादहं वना प्रमृषे मर्त्तस्त्वं दूरे न भवेः॥२॥

भावार्थः-यथा तृषातुरो जलं प्राप्य तृप्यति तथैवाप्तमध्यापकमुपदेशकं वा लब्ध्वा विद्याभिलाषी सर्वतः सुखी भवति॥२॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) शुभगुणों से प्रकाशमान सज्जन! (**कायमानः**) पढ़ाते वा उपदेश करते (**सन्**) हुए (**त्वम्**) आप (**यत्**) जिससे (**मातॄः**) माताओं के तुल्य रक्षक वा प्रिय (**अपः**) प्राणों को (**अजगन्**) प्राप्त होवें और (**यत्**) जिससे (**निवर्त्तनम्**) अन्यायाचरण से पृथक् होने को (**दूरे**) दूर फेंकिये और मङ्गल के अर्थ (**इह**) यहाँ (**अभवः**) हूजिये (**तत्**) इससे (**ते**) आपसे मैं (**वना**) मांगने योग्य पदार्थों को (**प्रमृषे**) सुखों से संयुक्त करूं और मुझसे आप दूर न हूजिये॥२॥

भावार्थः-जैसे प्यासा जन जल को पाके तृप्त होता, वैसे ही आप्त अध्यापक और उपदेशक को विद्यार्थी जन प्राप्त हो के सब ओर से सुखी होता है॥२॥

अथ के जगति पूज्या भवन्तीत्याह॥

अब कौन मनुष्य जगत् में पूज्य होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अति तृष्टं ववक्षिथाथैव सुमना असि।
प्रप्रान्ये यन्ति पर्यन्य आसते येषां सख्ये असि श्रितः॥३॥

अति। तृष्टम्। ववक्षिथ। अथ। एव। सुऽमनाः। असि। प्रऽप्र। अन्ये। यन्ति। परि। अन्ये। आसते। येषाम्। सख्ये। असि। श्रितः॥३॥

पदार्थः-(**अति**) (**तृष्टम्**) पिपासितम् (**ववक्षिथ**) वोढुमिच्छ (**अथ**) (**एव**) (**सुमनाः**) प्रसन्नचित्तः (**असि**) (**प्रप्र**) प्रकर्षेण (**अन्ये**) (**यन्ति**) गच्छन्ति (**परि**) सर्वतः (**अन्ये**) इतरे (**आसते**) उपविशन्ति (**येषाम्**) (**सख्ये**) सख्युर्भावे कर्मणि वा (**असि**) (**श्रितः**)॥३॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यतस्त्वं तृष्टं ववक्षिथाऽथ सुमना एवासि येषां सख्ये त्व श्रितोऽसि तेषां मध्यादन्ये प्रप्रातियन्ति। अन्ये पर्य्यासते॥३॥

भावार्थः-ये मित्रभावेन तृषातुराय जलमिव विद्यामिच्छवे विद्यां दत्वा प्रसन्नात्मानं कुर्वन्ति त एव जगत्पूज्या भवन्ति॥३॥

पदार्थः-हे विद्वान् जन! जिस कारण आप **(तृष्टम्)** प्यासे को **(ववक्षिथ)** प्राप्त करना चाहते **(अथ)** अथवा **(सुमनाः)** प्रसन्नचित्त **(एव)** ही **(असि)** हैं तथा **(येषाम्)** जिनकी **(सख्ये)** मित्रता वा मित्र कर्म में आप **(श्रितः)** संयुक्त **(असि)** हैं, उनमें से **(अन्ये)** अन्य लोग **(प्रप्र, अति, यन्ति)** विशेष कर अत्यन्त प्राप्त होते तथा **(अन्ये)** अन्य लोग **(परि, आसते)** सब ओर से बैठते हैं॥३॥

भावार्थः-जो लोग मित्रभाव से प्यासे के लिये जल के तुल्य विद्या चाहनेवाले के अर्थ विद्या देकर प्रसन्न रूप करते हैं, वे ही जगत् में पूज्य होते हैं॥३॥

पुनः पाखण्डिनः कथं दूरीभवन्तीत्याह॥

फिर पाखण्डी लोग कैसे दूर होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ई॒यि॒वांस॒मति॒ स्रिधः॒ शश्व॑ती॒रति॑ स॒श्चतः॑।

अ॒न्वी॑मविन्दन्निचि॒रासो॑ अ॒द्रुहो॑ऽप्सु सिं॒हमि॑व श्रि॒तम्॥४॥

ई॒यि॒ऽवांस॑म्। अति॑। स्रिधः॑। शश्व॑तीः। अति॑। स॒श्चतः॑। अनु॑। ई॒म्। अ॒वि॒न्द॒न्। नि॒ऽचि॒रासः॑। अ॒द्रुहः॑। अ॒प्ऽसु। सिं॒हम्ऽइ॑व। श्रि॒तम्॥४॥

पदार्थः-**(ईयिवांसम्)** प्राप्नुवन्तम् **(अति)** **(स्रिधः)** अतिसहनशीलाः **(शश्वतीः)** सनातन्यः **(अति)** **(सश्चतः)** समवेताः **(अनु)** **(ईम्)** **(अविन्दन्)** लभेरन् **(निचिरासः)** निश्चयेन चिरन्तन्यः प्रजाः **(अद्रुहः)** द्रोहरहिताः **(अप्सु)** जलेषु **(सिंहमिव)** व्याघ्रमिव **(श्रितम्)** सेवमानम्॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! अति स्रिधः शश्वतीरति सश्चतो निचिरासोऽद्रुहः प्रजा ईयिवांसमप्सु श्रितं सिंहमिवेमन्वविन्दन् ताः सुखिनीर्यूयं विजानीत॥४॥

भावार्थः-यथा सिंहं दृष्ट्वा मृगादयः पलायन्ते तथैव सुशिक्षिता विदुषीः प्रजाः समीक्ष्य पाखण्डिनो विलीयन्ते॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(अति)** अति **(स्रिधः)** सहनशील **(शश्वतीः)** सनातन **(अति)** अत्यन्त **(सश्चतः)** आपस में मिले हुए **(निचिरासः)** निश्चय से प्राचीन **(अद्रुहः)** द्रोहरहित प्रजाजन **(ईयिवांसम्)** प्राप्त होते हुए **(अप्सु)** जलों में **(श्रितम्)** आश्रित **(सिंहमिव)** सिंह के तुल्य **(ईम्, अनु, अविन्दन्)** सब ओर से अनुकूल प्राप्त हों, उनको तुम लोग सुख भोगनेवाले जानो॥४॥

भावार्थः-जैसे सिंह को देख के हरिण आदि भाग जाते हैं, वैसे ही सुशिक्षायुक्त विद्वान् प्रजाजनों को देखकर पाखण्डी लोग नष्ट-भ्रष्ट हो जाते हैं॥४॥

पुनरात्मज्ञानविषयमाह॥

फिर आत्मज्ञान विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ससृवांसमिव त्मनाऽग्निमित्था तिरोहितम्।

ऐनं नयन्मातरिश्वा परावतो देवेभ्यो मथितं परि॥५॥५॥

ससृवांसम्ऽइव। त्मना। अग्निम्। इत्था। तिरःऽहितम्। आ। एनम्। नयत्। मातरिश्वा। पराऽवतः। देवेभ्यः। मथितम्। परि॥५॥

पदार्थः-(**ससृवांसमिव**) प्राप्नुवन्तमिव (**त्मना**) आत्मना (**अग्निम्**) पावकम् (**इत्था**) अनेन हेतुना (**तिरोहितम्**) परिच्छिन्नम् (**आ**) (**एनम्**) (**नयत्**) नयति (**मातरिश्वा**) वायुः (**परावतः**) विप्रकृष्टाद्देशात् (**देवेभ्यः**) विद्वद्भ्यः (**मथितम्**) (**परि**) सर्वतः॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा मातरिश्वा परावतो देवेभ्यो मथितं तिरोहितमग्निं ससृवांसमिव पर्य्यानयदित्था तमेनं त्मना यूयं विजानीत॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। हे मनुष्या! यथा प्रयत्नेन मन्थनादिना जातमग्निं वायुर्वर्धयति दूरे च गमयति वह्निश्च प्राप्तान् पदार्थान् दहति नैव तिरोहितान्। एवं ब्रह्मचर्य्यविद्यायोगाभ्यासधर्मानुष्ठानसत्पुरुषसङ्गैः साक्षात्कृत आत्मा परमात्मा च सर्वान् दोषान् दग्ध्वा सुप्रकाशितज्ञानं जनयति॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**मातरिश्वा**) वायु (**परावतः**) दूर देश से (**देवेभ्यः**) विद्वानों के लिये (**मथितम्**) मन्थन किये (**तिरोहितम्**) परिच्छिन्न (**अग्निम्**) अग्नि को (**ससृवांसमिव**) प्राप्त होते हुए मनुष्य के समान (**परि, आ, नयत्**) सब ओर से सब प्रकार प्राप्त कराता है (**इत्था**) इस प्रकार उस (**एनम्**) अग्नि को (**त्मना**) आत्मा से तुम लोग विशेष कर जानो॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में **[**उपमा और**]** वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। हे मनुष्यो! जैसे प्रयत्न के साथ मन्थन आदि से उत्पन्न हुए अग्नि को वायु बढ़ाता और दूर पहुँचाता है तथा अग्नि प्राप्त हुए पदार्थों को जलाता है और दूरस्थ पदार्थों को नहीं जलाता। इसी प्रकार ब्रह्मचर्य्य, विद्या, योगाभ्यास, धर्मानुष्ठान और सत्पुरुषों के सङ्ग से साक्षात् किया आत्मा और परमात्मा सब दोषों को जला के सुन्दर प्रकाशित ज्ञान को प्रकट करता है॥५॥

पुनरुपदेशकविषयमाह॥

फिर उपदेशक विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तन्त्वा मर्ता अगृभ्णत देवेभ्यो हव्यवाहन।

विश्वान्यद्यज्ञाँ अभिपासि मानुष तव क्रत्वा यविष्ठ्य॥६॥

तम्। त्वा। मर्ताः। अगृभ्णत। देवेभ्यः। हव्यऽवाहन। विश्वान्। यत्। यज्ञान्। अभिऽपासि। मानुष। तव। क्रत्वा। यविष्ठ्य॥६॥

पदार्थः-(**तम्**) (**त्वा**) (**मर्त्ताः**) मरणधर्माणो मनुष्याः (**अगृभ्णत**) गृह्णन्तु (**देवेभ्यः**) विद्वद्भ्यः (**हव्यवाहन**) यो हव्यानि ग्रहीतव्यानि प्रापयति तत्सम्बुद्धौ (**विश्वान्**) अखिलान् (**यत्**) यः (**यज्ञान्**) विद्यादिप्रापकान् व्यवहारान् (**अभि, पासि**) सर्वतो रक्षसि (**मानुष**) मननशील (**तव**) (**क्रत्वा**) प्रज्ञया (**यविष्ठ्य**) अतिशयेन ब्रह्मचर्य्यविद्याभ्यां प्राप्तयौवन॥६॥

अन्वयः-हे मानुष हव्यवाहन यविष्ठ्य विद्वन्! यद्विश्वान् यज्ञानभिपासि तस्य तव क्रत्वा मर्त्ता देवेभ्यस्तं त्वाऽगृभ्णत॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यस्योपदेशेन प्रज्ञां प्राप्य समग्राणि सुखानि भवन्ती लभेरन् तं सर्वतः सत्कुरुत॥६॥

पदार्थः-हे (**मानुष**) मननशील (**हव्यवाहन**) ग्रहण करने योग्य शास्त्रीय युक्तियुक्त वचनों को प्राप्त करानेहारे (**यविष्ठ्य**) अत्यन्त ब्रह्मचर्य और विद्या के अभ्यास से युवावस्था को प्राप्त उपदेशक विद्वन्! (**यत्**) जो आप (**विश्वान्**) समस्त (**यज्ञान्**) विद्यादि के प्रापक व्यवहारों की (**अभि, पासि**) सब ओर से रक्षा करते हैं, उन (**तव**) आपकी (**क्रत्वा**) बुद्धि से (**मर्त्ताः**) मरण धर्मवाले मनुष्य (**देवेभ्यः**) विद्वानों के लिये (**तम्**) उन (**त्वा**) आपको (**अगृभ्णत**) ग्रहण करें॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिसके उपदेश से बुद्धि को प्राप्त होकर समग्र सुखों को आप लोग प्राप्त होवें, उसका सब ओर से सत्कार करो॥६॥

पुनर्मनुष्याः कथं सर्वभयाद्रहिता भवन्तीत्याह॥

फिर मनुष्य कैसे सब भय से रहित होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तद्भद्रं तव दंसना पाकाय चिच्छदयति।

त्वां यदग्ने पशवः समासते समिद्धमपिशर्वरे॥७॥

तत्। भद्रम्। तव। दंसना। पाकाय। चित्। छदयति। त्वाम्। यत्। अग्ने। पशवः। सम्ऽआसते। सम्ऽइद्धम्। अपिऽशर्वरे॥७॥

पदार्थः-(**तत्**) प्रज्ञाजन्यं ज्ञानम् (**भद्रम्**) भन्दनीयम् कल्याणकारम् (**तव**) (**दंसना**) दंसनं दर्शनम्। अत्र विभक्तेराकारादेशः। (**पाकाय**) परिपक्वत्वाय (**चित्**) इव (**छदयति**) सत्करोति। **छदयतीत्यर्चतिकर्मा**। (निघं०३.१४)। (**त्वाम्**) (**यत्**) यतः (**अग्ने**) अग्निरिव प्रकाशात्मन् (**पशवः**) गवादयः (**समासते**) सम्यगुपविशन्ति (**समिद्धम्**) प्रदीप्तम् (**अपिशर्वरे**) निश्चिते रात्रावन्धकारे॥७॥

अन्वयः-हे अग्ने! यद्ये मनुष्या अपिशर्वरे समिद्धमग्निं पशवइव त्वां समासते तेषां पाकायाग्निश्चिदिव तद्भद्रं तव दंसना छदयति॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथाऽरण्येऽग्नेरभितः स्थिताः पशवः सिंहादिभ्यो रक्षिता भवन्ति तथैव विद्वज्ज्ञानाश्रयो मनुष्यान् सर्वतो भयात् रक्षति॥७॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के तुल्य तेजस्वि! **(यत्)** जो मनुष्य **(अपिशर्वरे)** निश्चित अन्धकार रूप रात्रि में भी **(समिद्धम्)** प्रज्वलित अग्नि के निकट जैसे **(पशवः)** गौ आदि पशु शीत निवारणार्थ, वैसे **(त्वाम्)** आपके निकट **(समासते)** बैठते हैं, उनके **(पाकाय)** परिपक्व दृढ़ होने के लिये अग्नि के **(चित्)** तुल्य **(तत्)** उस **(भद्रम्)** कल्याणकारक बुद्धि से उत्पन्न ज्ञान को **(तव)** आपका **(दंसना)** दर्शनशास्त्र **(छदयति)** बढ़ाता है॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे वन में अग्नि के चारों ओर स्थित हुए पशु सिंह आदि से रक्षित होते हैं, वैसे ही विद्वानों के ज्ञान का आश्रय मनुष्यों की सब ओर के भय से रक्षा करता है॥७॥

पुनरीश्वर एव ध्येय इत्याह॥

फिर ईश्वर का ही ध्यान करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ जुहोता स्वध्वरं शीरं पावकशोचिषम्।

आशुं दूतमजिरं प्रत्नमीड्यं श्रुष्टी देवं सपर्यत॥८॥

आ। जुहोत। सुऽअध्वरम्। शीरम्। पावकऽशोचिषम्। आशुम्। दूतम्। अजिरम्। प्रत्नम्। ईड्यम्। श्रुष्टी। देवम्। सपर्यत॥८॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(जुहोत)** गृह्णीत। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(स्वध्वरम्)** सुष्ठ्वहिंसनीयम् **(शीरम्)** विद्युद्रूपेण सर्वत्र शयानम् **(पावकशोचिषम्)** पवित्रकरदीप्तिम् **(आशुम्)** सद्यो गामिनम् **(दूतम्)** दूतवद्देशान्तरे समाचारप्रापकम् **(अजिरम्)** गन्तारं प्रक्षेप्तारम् **(प्रत्नम्)** प्राक्तनम् **(ईड्यम्)** अध्यन्वेषणीयम् **(श्रुष्टी)** सद्यः **(देवम्)** दिव्यगुणकर्मस्वभावं सर्वानन्दप्रदम् **(सपर्य्यत)** परिचरत॥८॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यूयं स्वध्वरं शीरं पावकशोचिषमाशुं दूतमजिरं प्रत्नमीड्यं विद्युदाख्यं वह्निमाजुहोत तथैव स्वप्रकाशं सर्वत्र व्यापकं परमात्मानं देवं श्रुष्टी सपर्य्यत॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यो विद्युद्वद् व्यापकः स्वप्रकाशोऽविद्यादिदोषहन्ता सनातनोऽनादिः प्रशंसनीयः परमात्माऽस्ति तमेव ध्यायत॥८॥

पदार्थः-हे विद्वानो! तुम लोग जैसे **(स्वध्वरम्)** हिंसा न करने योग्य **(शीरम्)** विद्युत् रूप से

सब जगह भरे हुए **(पावकशोचिषम्)** शुद्ध प्रकाशवाले **(आशुम्)** शीघ्रगामी **(दूतम्)** दूत के तुल्य देशान्तर में समाचार पहुँचानेवाले **(अजिरम्)** फेंकनेहारे **(प्रत्नम्)** प्राचीन **(ईड्यम्)** खोजने योग्य विद्युत् रूप अग्नि का **(आ, जुहोत)** अच्छे प्रकार ग्रहण करो, वैसे ही स्वयं प्रकाशरूप सर्वत्र व्यापक **(देवम्)** उत्तम गुणकर्मस्वभावयुक्त सब आनन्द देनेवाले परमात्मा की **(श्रुष्टी)** शीघ्र **(सपर्य्यत)** सेवा करो॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो बिजुली के तुल्य व्यापक, स्वयं प्रकाशरूप, अविद्यादि दोषों का नाश करनेवाला, सनातन, अनादि काल से प्रशंसा करने योग्य परमात्मा है, उसी का नित्य ध्यान करो॥८॥

पुनरग्निः किं करोतीत्याह॥

फिर अग्नि क्या करता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्रीणि शता त्री सहस्राण्यग्निं त्रिंशच्च देवा नव चासपर्यन्।
औक्षन् घृतैरस्तृणन् बर्हिरस्मा आदिद्धोतारं न्यसादयन्त॥९॥६॥

त्रीणि। शता। त्री। सहस्राणि। अग्निम्। त्रिंशत्। च। देवाः। नव। च। असपर्यन्। औक्षन्। घृतैः। अस्तृणन्। बर्हिः। अस्मै। आत्। इत्। होतारम्। नि। असादयन्त॥९॥

पदार्थः-**(त्रीणि)** **(शता)** शतानि **(त्री)** त्रीणि **(सहस्राणि)** तत्त्वानि **(अग्निम्)** पावकम् **(त्रिंशत्)** **(च)** त्रयश्च **(देवाः)** पृथिव्यादयः **(नव)** हिरण्यगर्भादयः **(च)** **(असपर्यन्)** सेवन्ते **(औक्षन्)** सिञ्चन्ति **(घृतैः)** उदकैः **(अस्तृणन्)** **(बर्हिः)** **(अस्मै)** **(आत्)** आनन्तर्ये **(इत्)** एव **(होतारम्)** आदातारम् **(नि)** **(असादयन्त)** कार्य्येषु नियोजयत॥९॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यमग्निं त्रीणि शता त्री सहस्राणि त्रिंशच्च नव च देवा असपर्यन् घृतैरौक्षन्नस्मै बर्हिरस्तृणन् तमाद्धोतारमिदेव यूयं न्यसादयन्त॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्या! भवन्तो यस्याश्रये त्रयस्त्रिंशत्सहस्राणि त्रीणि शतानि द्विचत्वारिंशच्च तत्त्वानि सन्ति य एकः सर्वान् विद्युद्रूपेण व्याप्नोति तेनाग्निना सर्वाणि कार्य्याणि साध्नुवन्तु॥९॥

अत्राग्निमनुष्यादिगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इति नवमं सूक्तं षष्ठो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे विद्वान् लोगो! जिस **(अग्निम्)** अग्नि को **(त्रीणि)** तीन **(शता)** सैंकड़े **(त्री)** तीन **(सहस्राणि)** हजार तत्त्व **(च)** और **(त्रिंशत्)** पृथिवी आदि तीस तथा तीन तेंतीस **(च)** और **(नव)** नौ

हिरण्यगर्भादि **(देवा:)** दिव्यगुणवाले पदार्थ **(असपर्यन्)** सेवन करते **(घृतै:)** जलों से **(औक्षन्)** सींचते **(अस्मै)** इस अग्नि के लिये **(बर्हि:)** पदार्थ वृद्धि का **(अस्तृणन्)** विस्तार करते उस **(आत्)** विद्याप्राप्ति के पश्चात् **(होतारम्)** आदर करनेवाले कार्यसाधक **(इत्)** को ही तुम लोग **(नि, असादयन्त)** कार्य्यों में निरन्तर युक्त करो॥९॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जिसके आश्रय में तेंतीस हजार तीन सौ बयालीस तत्त्व हैं, जो एक सबको विद्युत् रूप से व्याप्त है, उस अग्नि के आश्रय से आप लोग सब कार्य्य सिद्ध करो॥९॥

इस सूक्त में अग्नि और मनुष्यादि के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह नवमां सूक्त और छठा वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ नवर्चस्य दशमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ५, ८ विराडुष्णिक्। ३ उष्णिक्। ४, ६, ७, ९ निचृदुष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः। २ भुरिग् गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथेश्वरः किं करोतीत्याह॥

अब नौ ऋचावाले दशमें सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में ईश्वर क्या करता है, इस विषय को कहते हैं॥

त्वाम॑ग्ने मनी॒षिण॑ः स॒म्राजं॑ चर्षणी॒नाम्। दे॒वं मर्ता॑स इन्धते॒ सम॑ध्व॒रे॥ १॥

त्वाम्। अ॒ग्ने॒। म॒नी॒षिण॑ः। स॒म्ऽराज॑म्। च॒र्ष॒णी॒नाम्। दे॒वम्। मर्ता॑सः। इ॒न्ध॒ते॒। सम्। अ॒ध्व॒रे॥ १॥

पदार्थः-(**त्वाम्**) अग्निरिव वर्त्तमानं परमात्मानम् (**अग्ने**) स्वप्रकाशस्वरूप (**मनीषिणः**) मनस ईषिणः। अत्र **शकन्ध्वादिना** पररूपम्। (**सम्राजम्**) सम्राडिव वर्त्तमानम् (**चर्षणीनाम्**) मनुष्यादि-प्रजानाम् (**देवम्**) सर्वसुखदातारम् (**मर्त्तासः**) मनुष्याः (**इन्धते**) प्रकाशयन्ति (**सम्**) (**अध्वरे**) अहिंसनीये धर्म्ये व्यवहारे॥ १॥

अन्वयः-हे अग्ने जगदीश्वर! मनीषिणो मर्त्तासो ये चर्षणीनां सम्राजं देवं त्वामध्वरे समिन्धते तमेव वयमप्युपासीमहि॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽग्निः सूर्य्यादिरूपेण सर्वं जगत्प्रकाश्योपकृत्याऽऽनन्दयति तथैव परमात्माऽन्तर्यामिरूपेण जिज्ञासूनां योगिनामात्मनो विशेषतः सामान्यतः सर्वेषां च प्रकाश्य जगत्स्थैरसङ्ख्यैः पदार्थैरुपकृत्याऽभ्युदयनिःश्रेयससुखदानेन सदैव सुखयति॥ १॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) स्वयं प्रकाशरूप जगदीश्वर! (**मनीषिणः**) मननशील (**मर्त्तासः**) मनुष्य जिन (**चर्षणीनाम्**) मनुष्यादि प्रजाओं के (**सम्राजम्**) सम्यक् न्यायाधीश राजा (**देवम्**) सब सुख देनेवाले (**त्वाम्**) आपको (**अध्वरे**) रक्षणीय धर्मयुक्त व्यवहार में (**सम्, इन्धते**) सम्यक् प्रकाशित करते हैं, उन्हीं आपकी हम भी उपासना करें॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे अग्नि सूर्य्यादि रूप से सब जगत् को प्रकाशित और उपकृत कर आनन्दित करता है, वैसे ही परमात्मा अन्तर्यामी रूप से जिज्ञासु योगी लोगों के आत्माओं को विशेष और सामान्य से सबके आत्माओं को प्रकाशित कर और जगत् के असंख्य पदार्थों से उपकृत कर इस लोक-परलोक के सुख देने से सदैव सुखी करता है॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वां य॒ज्ञेष्वृ॒त्विज॒मग्ने॒ होता॑रमीळते। गो॒पा ऋ॒तस्य॑ दीदिहि॒ स्वे दमे॑॥ २॥

त्वाम्। यज्ञेषु। ऋत्विजम्। अग्ने। होतारम्। ईळते। गोपाः। ऋतस्य। दीदिहि। स्वे। दमे॥ २॥

पदार्थः-(**त्वाम्**) (**यज्ञेषु**) पूजनीयेषु व्यवहारेषु वा (**ऋत्विजम्**) ऋत्विग्वत्सुखसाधकम् (**अग्ने**) अविद्यादोषप्रदाहकपरमात्मन् (**होतारम्**) सर्वस्य धर्त्तारम् (**ईळते**) स्तुवन्ति (**गोपाः**) रक्षकाः (**ऋतस्य**) सत्यस्य (**दीदिहि**) प्रकाशय (**स्वे**) स्वकीये (**दमे**) दमनशीले व्यवहारे॥ २॥

अन्वयः-हे अग्ने जगदीश्वर! य ऋतस्य गोपा यज्ञेष्वृत्विजं होतारं यं त्वामीळते स त्वं स्वे दमे तान् दीदिहि॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः! हे परमेश्वर! ये सत्यभाषणादिलक्षणं धर्ममनुष्ठायाऽसत्यभाषणादिलक्षणमधर्मं विहाय त्वां भजन्ति ते भवन्तं प्राप्य सदाऽऽनन्दिता इह वसन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अविद्यादि दोषों के नाशक जगदीश्वर! जो (**ऋतस्य**) सत्य के (**गोपाः**) रक्षक विद्वान् लोग (**यज्ञेषु**) अच्छे व्यवहारों वा यज्ञों में (**ऋत्विजम्**) ऋत्विज् के तुल्य सुखसाधक (**होतारम्**) सबके धारण करनेहारे (**त्वाम्**) आपकी (**ईडते**) स्तुति करते हैं सो आप (**स्वे**) अपने (**दमे**) नियमरूप व्यवहार में उन विद्वानों को (**दीदिहि**) विज्ञान दान दीजिये॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो लोग सत्यभाषणादि धर्म का अनुष्ठान कर और असत्य भाषणादि रूप अधर्म को छोड़ के आपका भजन करते हैं, वे आपको प्राप्त होके सदा आनन्दित हुए इस संसार में वसते हैं॥ २॥

अथ मनुष्याः कथं सुखानि लभेरन्नित्याह॥

अब मनुष्य कैसे सुखों को प्राप्त हों, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स घा यस्ते ददाशति समिधा जातवेदसे। सो अग्ने धत्ते सुवीर्यं स पुष्यति॥ ३॥

सः। घ। यः। ते। ददाशति। सम्ऽइधा। जातऽवेदसे। सः। अग्ने। धत्ते। सुऽवीर्यम्। सः। पुष्यति॥ ३॥

पदार्थः-(**सः**) (**घ**) एव। अत्र **ऋचि तुनुघे**ति दीर्घः। (**यः**) (**ते**) तुभ्यम् (**ददाशति**) (**समिधा**) सम्यक् प्रदीपकेनेन्धनेन सुविज्ञानेन वा (**जातवेदसे**) जातेषु पदार्थेषु विद्यमानाय जातप्रज्ञानाय वा (**सः**) (**अग्ने**) सर्वस्य प्रकाशक (**धत्ते**) धरति (**सुवीर्य्यम्**) शोभनं विज्ञानादिधनं पराक्रमं वा (**सः**) (**पुष्यति**) सर्वतः पुष्टो भवति॥ ३॥

अन्वयः-हे अग्ने! यस्समिधा जातवेदसे त आत्मानं ददाशति स घ सुवीर्य्यं धत्ते स पुष्यति सोऽन्यान् पोषयति च॥ ३॥

भावार्थः-यथा प्राणिनोऽग्नौ घृतादिकं प्रक्षिप्य वाय्वादिशुद्धिद्वारा सर्वाऽऽनन्दं प्राप्नुवन्ति तथैव विद्वांसः परमात्मनि स्वात्मनः समर्प्याऽखिलानि सुखानि लभन्ते॥ ३॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** सबके प्रकाशक जन! **(यः)** जो **(समिधा)** सम्यक् प्रकाशक इन्धन वा सुन्दर विज्ञान से **(जातवेदसे)** उत्पन्न हुए पदार्थों में विद्यमान वा बुद्धि को प्राप्त हुए **(ते)** आपके लिये आत्मा अपने स्वरूप को **(ददाशति)** देता प्राप्त कराता है **(सः, घ)** वही **(सुवीर्य्यम्)** सुन्दर विज्ञानादि धन वा पराक्रम को **(धत्ते)** धारण करता **(सः)** वह **(पुष्यति)** सब ओर से पुष्ट होता और **(सः)** वह दूसरों को पुष्ट करता है॥३॥

भावार्थः-जैसे प्राणी अग्नि में घृतादि उत्तम द्रव्य का होम कर वायु आदि की शुद्धि होने से सब आनन्द **[को]** प्राप्त होते हैं, वैसे ही विद्वान् लोग परमात्मा में **[अपने को]** समर्पण कर समस्त सुखों को प्राप्त होते हैं॥३॥

अथोपदेशककृत्यमाह॥

अब उपदेशक का कर्त्तव्य कहते हैं॥

स केतुरध्वराणामग्निर्देवेभिरागमत्। अञ्जानः सप्त होतृभिर्हविष्मते॥४॥

सः। केतुः। अध्वराणाम्। अग्निः। देवेभिः। आ। अगमत्। अञ्जानः। सप्त। होतृऽभिः। हविष्मते॥४॥

पदार्थः-**(सः)** **(केतुः)** ध्वज इव प्रज्ञापकः **(अध्वराणाम्)** अहिंसामयानां यज्ञानाम् **(अग्निः)** पावकइव **(देवेभिः)** दिव्यगुणैः पदार्थैरिव विद्वद्भिः **(आ)** **(अगमत्)** आगच्छेत् **(अञ्जानः)** प्रसिद्धो दिव्यान् गुणान् प्रकटीकुर्वन् **(सप्त)** सप्तभिः पञ्चप्राणमनोबुद्धिभिः **(होतृभिः)** आदातृभिः **(हविष्मते)** प्रशस्तानि हवींषि दातव्यानि यस्य तस्मै॥४॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथा स केतुरञ्जानोऽग्निर्देवेभिः सप्त होतृभिः सहाऽध्वराणां हविष्मत आगमत् तथा त्वमागच्छ॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा विज्ञाय संसेवितोऽग्निर्दिव्यान् गुणान् प्रयच्छति तथैव सेवित्वा आप्ता विद्वांसोऽहिंसादिलक्षणं धर्मं विज्ञाप्य दिव्यानि सुखानि श्रोतृभ्यो ददति॥४॥

पदार्थः-हे विद्वन् पुरुष! जैसे **(सः)** वह **(केतुः)** ध्वजा के तुल्य प्रज्ञापक **(अञ्जानः)** दिव्य गुणों को प्रकट करता हुआ प्रसिद्ध **(अग्निः)** अग्नि **(देवेभिः)** दिव्य गुणोंवाले पदार्थों के तुल्य विद्वानों और **(होतृभिः)** ग्रहण करनेहारे **(सप्त)** पाँच प्राण, मन और बुद्धि के साथ **(अध्वराणाम्)** अहिंसारूप यज्ञों के सम्बन्धी **(हविष्मते)** प्रशस्त देने योग्य पदार्थोंवाले जन के लिये **(आ, अगमत्)** आवे प्राप्त होवे अर्थात् अग्निविद्यायुक्त होवे, वैसे तू प्राप्त हो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे विज्ञान कर सम्यक् सेवन किया अग्नि दिव्य गुणों को देता है, वैसे ही सेवन किये आप्त विद्वान् जन् अहिंसादि रूप धर्म को जता कर श्रोताओं के लिये दिव्य सुखों को देते हैं॥४॥

अथाध्यापकविद्वत्कृत्यमाह॥

अब अध्यापक और विद्वान् के कर्त्तव्य को कहते हैं॥

प्र होत्रे॑ पू॒र्व्यं वचो॒ऽग्नये॑ भरता बृ॒हत्। वि॒पां ज्योतीं॑षि बिभ्र॑ते न वे॒धसे॑॥५॥७॥

प्र। होत्रे॑। पू॒र्व्यम्। वचः॑। अ॒ग्नये॑। भ॒र॒त॒। बृ॒हत्। वि॒पाम्। ज्योतीं॑षि। बिभ्र॑ते। न। वे॒धसे॑॥५॥

पदार्थः-(**प्र**) (**होत्रे**) आदात्रे (**पूर्व्यम्**) पूर्वैर्विद्वद्भिरुपदिष्टम् (**वचः**) वचनम् (**अग्नये**) पावकाय (**भरत**) धरत। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**बृहत्**) महदर्थयुक्तम् (**विपाम्**) मेधाविनाम्। अत्र **वाच्छन्दसीति** नुडभावः। (**ज्योतींषि**) विद्यातेजांसि (**बिभ्रते**) धर्त्रे (**न**) इव (**वेधसे**) मेधाविने॥५॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! होत्रेऽग्नये न विपां ज्योतींषि बिभ्रते वेधसे बृहत्पूर्व्यं वचः प्र भरत॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा याजका यज्ञाय घृतादीन् पदार्थान् गृहीत्वा सुसंस्कृतान्नैरग्निं वर्द्धयन्ति तथैवाध्यापकाः साङ्गोपाङ्गाः सर्वा विद्या धृत्वा विद्यार्थिनः श्रोतॄंश्च तर्प्पयेयुः॥५॥

पदार्थः-हे विद्वज्जनो! (**होत्रे**) ग्रहण करनेवाले (**अग्नये**) अग्नि के (**न**) समान (**विपाम्**) उत्तम बुद्धिवालों के (**ज्योतींषि**) विद्यारूप तेजों को (**बिभ्रते**) धारण करते हुए (**वेधसे**) बुद्धिमान् के लिये (**बृहत्**) महत् प्रयोजनवाले (**पूर्व्यम्**) प्राचीन विद्वानों से उपदेश किये हुए (**वचः**) वचन को (**प्र, भरत**) उपदेश कीजिये॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे यज्ञ करनेवाले यज्ञ के लिये घृत आदि पदार्थों से उत्तम प्रकार पूर्वक पकाये हुए अन्नों से अग्नि की वृद्धि करते हैं, वैसे ही अध्यापक पुरुष अङ्ग और उपाङ्गों के सहित सम्पूर्ण विद्याओं के प्रचार से विद्यार्थी और श्रोतृजनों को तृप्त करें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अ॒ग्निं व॑र्धन्तु नो॒ गिरो॒ यतो॒ जाय॑त उ॒क्थ्यः॑। म॒हे वाजा॑य॒ द्रवि॑णाय द॒र्श॒तः॥६॥

अ॒ग्निम्। व॒र्ध॒न्तु॒। नः॒। गिरः॑। यतः॑। जाय॑ते। उ॒क्थ्यः॑। म॒हे। वाजा॑य। द्रवि॑णाय। द॒र्श॒तः॥६॥

पदार्थः-(**अग्निम्**) पावकमिव (**वर्धन्तु**) वर्द्धयन्तु। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदं णिजर्थोऽन्तर्गतः। (**नः**) अस्माकम् (**गिरः**) सुशिक्षिता वाचः (**यतः**) (**जायते**) (**उक्थ्यः**) प्रशंसितो योग्यो विद्वान् (**महे**) महते (**वाजाय**) विज्ञानाय (**द्रविणाय**) ऐश्वर्य्याय (**दर्शतः**) द्रष्टुं योग्यः॥६॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! भवन्तः समिद्भिरग्निमिव नो गिरो वर्धन्तु यतो महे वाजाय द्रविणाय दर्शत उक्थ्यो जायते॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। अध्यापकोपदेशकैस्तथा प्रयत्नो विधेयो यथाऽध्येतॄणां श्रोतॄणाञ्च सुशिक्षाविद्यासभ्यता वर्धेरन् श्रीमन्तश्च स्युः॥६॥

पदार्थः-हे विद्वज्जनो! आप लोग जैसे समिधाओं से (**अग्निम्**) अग्नि बढ़ता है, वैसे (**नः**) हम

लोगों की **(गिरः)** उत्तम प्रकार से शिक्षित वाणियों को **(वर्धन्तु)** वृद्धि करें **(यतः)** जिससे **(महे)** श्रेष्ठ **(वाजाय)** विज्ञान और **(द्रविणाय)** ऐश्वर्य के लिये **(दर्शतः)** देखते और **(उक्थ्यः)** प्रशंसा करने योग्य विद्वान् पुरुष **(जायते)** प्रकट होता है॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। अध्यापक और उपदेशक पुरुषों को ऐसा प्रयत्न करना चाहिये जिससे कि पढ़ने और सुननेवाले जनों की उत्तम शिक्षा, विद्या और सभ्यता बढ़े और वे धनवान् होवें॥६॥

पुनर्विद्वत्कृत्यमाह॥

फिर विद्वान् के कृत्य को कहते हैं॥

अग्ने यजिष्ठो अध्वरे देवान् देवयते यज। होता मन्द्रो वि राजस्यति स्रिधः॥७॥

अग्ने। यजिष्ठः। अध्वरे। देवान्। देवऽयते। यज। होता। मन्द्रः। वि। राजसि। अति। स्रिधः॥७॥

पदार्थः-**(अग्ने)** पावकवद्वर्त्तमान **(यजिष्ठः)** अतिशयेन यष्टा **(अध्वरे)** अहिंसामये यज्ञे **(देवान्)** दिव्यान् गुणान् **(देवयते)** दिव्यान् गुणकर्मस्वभावान् कामयमानाय **(यज)** सङ्गमय **(होता)** दाता **(मन्द्रः)** आह्लादकः **(वि)** **(राजसि)** विशेषेण प्रकाशसे **(अति)** उल्लङ्घने **(स्रिधः)** विद्यादिसद्व्यवहारविरोधिनः॥७॥

अन्वयः-हे अग्ने! होता मन्द्रो यजिष्ठस्त्वमध्वरे देवयते देवान् यज यतोऽतिस्रिधो निवार्य्य विराजसि तस्मात् सत्कर्त्तव्योऽसि॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽग्निः संप्रयुक्तः शिल्पादिव्यवहारान् संसाध्य दारिद्र्यं विनाशयति तथैव सेविता विद्वांसो विद्याप्रचारं संसाध्याऽविद्यादिकुसंस्कारान् विनाशयन्ति॥७॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के तुल्य वर्त्तमान **(होता)** देनेहारे **(मन्द्रः)** प्रसन्न करने तथा **(यजिष्ठः)** अतिशय यज्ञ करनेवाले! आप **(अध्वरे)** अहिंसारूप यज्ञ में **(देवयते)** दिव्य गुण, कर्म, स्वभावों की कामना करनेवाले के लिये **(देवान्)** उत्तम गुणों को **(यज)** संयुक्त कीजिये जिससे **(अति)** **(स्रिधः)** विद्या आदि उत्तम व्यवहार के विरोधी पुरुषों को उत्तम अधिकारों से पृथक् करके **(वि)** **(राजसि)** अत्यन्त प्रकाशित होते हो, इससे उत्तम सत्कार करने योग्य हैं॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे अग्नि उत्तम प्रकार से यन्त्रों में संयुक्त किया हुआ शिल्पविद्या आदि व्यवहारों की सिद्धि करके दारिद्र्य का नाश करता है, वैसे ही पूजित हुए विद्वान् पुरुष विद्या का प्रचार करके अविद्या आदि दुष्ट स्वभावों का नाश करते हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स नः पावक दीदिहि द्युमदस्मे सुवीर्यम्। भवा स्तोतृभ्यो अन्तमः स्वस्तये॥८॥

सः। नः। पावक। दीदिहि। द्युऽमत्। अस्मे इति। सुऽवीर्यम्। भव। स्तोतृऽभ्यः। अन्तमः। स्वस्तये॥८॥

पदार्थः-(**सः**) (**नः**) अस्मान् (**पावक**) वह्निवत्पवित्रकारक (**दीदिहि**) प्रकाशय (**द्युमत्**) प्रशस्तविज्ञानयुक्तम् (**अस्मे**) अस्मभ्यम् (**सुवीर्य्यम्**) शोभनं धनम् (**भव**)। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**स्तोतृभ्यः**) विद्याप्रचारकेभ्यः (**अन्तमः**) समीपस्थः (**स्वस्तये**) सुखप्राप्तये॥८॥

अन्वयः-हे पावक विद्वन्! त्वं स्तोतृभ्योऽस्मे द्युमत्सुवीर्य्यं देहि स त्वं नो दीदिहि स्वस्तयेऽन्तमो भव॥८॥

भावार्थः-विद्वद्भिः स्वयं पवित्रैरन्ये विद्यासुशिक्षाभ्यां पवित्राः सम्पादनीया यतः सर्वे सखायः सन्तः सुखाय प्रभवेयुः॥८॥

पदार्थः-हे (**पावक**) अग्नि के तुल्य पवित्रकारक विद्वान् पुरुष! आप (**स्तोतृभ्यः**) विद्याओं के प्रचार करनेवाले (**अस्मे**) हम लोगों को (**द्युमत्**) प्रशंसा करने योग्य सद्विद्या के विज्ञान से युक्त (**सुवीर्य्यम्**) श्रेष्ठ धन दीजिये (**सः**) वह आप (**नः**) हम लोगों को (**दीदिहि**) प्रकाशित करो (**स्वस्तये**) सुख प्राप्ति के लिये (**अन्तमः**) समीप में वर्त्तमान (**भव**) हूजिये॥८॥

भावार्थः-विद्वज्जन जो कि स्वयं पवित्र हैं, उनको चाहिये कि औरों को भी विद्या और उत्तम शिक्षा से पवित्र करें, जिससे सम्पूर्ण पुरुष मित्र होकर सुख करने के लिये समर्थ हों॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय कोअगले मन्त्र में कहा है॥

तन्त्वा विप्रा विपन्यवो जागृवांसः समिन्धते। हव्यवाहममर्त्यं सहोवृधम्॥९॥८॥

तम्। त्वा। विप्राः। विपन्यवः। जागृऽवांसः सम्। इन्धते। हव्यऽवाहम्। अमर्त्यम्। सहः ऽवृधम्॥९॥

पदार्थः-(**तम्**) सर्वविद्याप्रकाशकमनूचानम् (**त्वा**) त्वाम् (**विप्राः**) मेधाविनः (**विपन्यवः**) विशेषेण प्रशंसिताः (**जागृवांसः**) अविद्यानिद्रात उत्थिता विद्यायां जागरूकाः (**सम्**) (**इन्धते**) प्रदीपयन्ति (**हव्यवाहम्**) दातव्यविज्ञानप्रापकम् (**अमर्त्यम्**) मर्त्यस्य स्वभावराहित्येन देवस्वभावम् (**सहोवृधम्**) यः सहसा बलेन वर्धते बलस्य वर्धकं वा॥९॥

अन्वयः-हे आप्त विद्वन्! ये जागृवांसो विपन्यवो विप्रास्तं हव्यवाहममर्त्यं सहोवृधं त्वा समिन्धते तान् भवान् सर्वतश्शुभैर्गुणैः प्रकाशयतु॥९॥

भावार्थः-विद्वांस एव विदुषां श्रमं ज्ञातुं शक्नुवन्ति नेतरे, विद्वांसो विदुष एव सत्कुर्वन्तु न मूढानिति॥९॥

अत्राग्निपरमात्मविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति दशमं सूक्तमष्टमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे सत्य कहनेवाले विद्वान् पुरुष! जो लोग (**जागृवांसः**) अविद्यारूप निद्रा से उठे विद्या

में जागते हुए और **(विपन्यवः)** विशेष प्रकार से प्रशंसा किये गये **(विप्राः)** बुद्धिमान् जन **(तम्)** उन सम्पूर्ण विद्याओं के प्रकाश करनेवाले वक्ता **(हव्यवाहम्)** देने के योग्य विज्ञान के दाता **(अमर्त्यम्)** मनुष्य के स्वभाव से रहित होने से देवता स्वभाववाले **(सहोवृधम्)** बल से बढ़ते वा बल के बढ़ानेवाले **(त्वा)** आपको **(सम्, इन्धते)** प्रकाशित करते हैं, उनको आप सब ओर से शुभ गुणों के साथ प्रकाशित कीजिये॥९॥

भावार्थः-विद्वान् ही लोग विद्वानों के परिश्रम को जान सकते हैं, अन्य जन नहीं। इससे विद्वज्जन विद्वान् पुरुषों ही का सत्कार करें, मूर्खों का नहीं॥९॥

इस सूक्त में अग्नि, परमात्मा और विद्वान् के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह दशवां सूक्त और आठवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ नवर्चस्यैकादशसूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। अग्निर्देवता। १, २, ५, ७, ८ निचृद्गायत्री। ३, ९ विराड् गायत्री। ४, ६ गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथाऽग्न्यादिदृष्टान्तेन विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

अब ग्यारहवें सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र से अग्न्यादि के दृष्टान्त से विद्वान् लोग क्या करें, इस विषय को कहा है॥

अ॒ग्निर्होता॑ पु॒रोहि॑तोऽध्व॒रस्य॒ विच॑र्षणिः। स वे॑द य॒ज्ञमा॑नु॒षक्॥१॥

अ॒ग्निः। होता॑। पु॒रःऽहि॑तः। अ॒ध्व॒रस्य॑। विऽच॑र्षणिः। सः। वे॒द॒। य॒ज्ञम्। आ॒नु॒षक्॥१॥

पदार्थः-(**अग्निः**) वह्निः (**होता**) दाता (**पुरोहितः**) सर्वेषां हितसाधकः (**अध्वरस्य**) अहिंसनीयस्य यज्ञस्य (**विचर्षणिः**) प्रकाशकः (**सः**) (**वेद**) (**यज्ञम्**) (**आनुषक्**) आनुकूल्येन वर्त्तमानः॥१॥

अन्वयः-यो मनुष्योऽध्वरस्य विचर्षणिर्होता पुरोहितोऽग्निरिव भवति स आनुषक् सन् यज्ञं वेद॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये ब्रह्मचर्य्यविद्यादि सद्गुणग्रहणानुकूला भवन्ति त एवाऽग्न्यादिपदार्थान् विज्ञाय सृष्टौ प्रशंसितकर्माणः सन्ति॥१॥

पदार्थः-जो मनुष्य (**अध्वरस्य**) जिसमें हिंसा न हो ऐसे कर्म का (**विचर्षणिः**) प्रकाशकर्ता (**होता**) दानकारक (**पुरोहितः**) सब जीवों के हित करनेवाले (**अग्निः**) अग्नि के सदृश होता है (**सः**) वह (**आनुषक्**) अनुकूलता से वर्त्तता हुआ (**यज्ञम्**) विधि यज्ञादि कर्म को (**वेद**) जानता है॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो पुरुष ब्रह्मचर्य और विद्या आदि उत्तम गुणों के ग्रहण करने में तत्पर होते हैं, वे ही अग्नि आदि पदार्थों को जान कर अर्थात् शिल्पविद्या में निपुण होकर संसार में प्रशंसा होने योग्य कर्म करनेवाले होते हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स ह॑व्य॒वाळम॑र्त्य उ॒शिग्दू॒तश्चनो॑हितः। अ॒ग्निर्धि॒या समृ॑ण्वति॥२॥

सः। ह॒व्य॒ऽवाट्। अम॑र्त्यः। उ॒शिक्। दू॒तः। चनः॑ऽहितः। अ॒ग्निः। धि॒या। सम्। ऋ॒ण्व॒ति॒॥२॥

पदार्थः-(**सः**) (**हव्यवाट्**) यो हव्यान् दातुमर्हाणि वस्तूनि वहति प्राप्नोति (**अमर्त्यः**) मरणधर्मरहितः (**उशिक्**) कामयमानः (**दूतः**) अविद्यायाः पारे विद्याया गमयिता (**चनोहितः**) चनःस्वन्नादिषु हितो हितकारी (**अग्निः**) पावकइव (**धिया**) कर्मणा प्रज्ञया वा (**सम्**) (**ऋण्वति**) गच्छति जानाति वा॥२॥

अन्वयः-योऽग्निरिव हव्यवाडमर्त्य उशिग्दूतश्चनोहितो विद्वान् धिया समृण्वति स एवास्माञ्छिक्षयितुं शक्नोति॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽग्निः स्वकर्मणा दूतवत् कार्य्याणि साध्नोति तथैव विद्वांसो राजकार्य्यादीनि साद्धुं शक्नुवन्ति॥२॥

पदार्थः-जो पुरुष **(अग्निः)** अग्नि के तुल्य तेजस्वी **(हव्यवाट्)** ग्रहण करने योग्य हवन सामग्री को प्राप्त **(अमर्त्यः)** मरणरूप धर्म से रहित **(उशिक्)** कामना करता हुआ **(दूतः)** अविद्या आदि से पृथक् दूर विद्या को प्राप्त करानेवाला **(चनोहितः)** अन्नादिकों में वृद्धिरूप हित कर्म करनेवाला विद्वान् पुरुष **(धिया)** सुकर्म से वा उत्तम बुद्धि से **(सम्) (ऋण्वति)** चलता वा श्रेष्ठ बुद्धियुक्त होकर उन कर्मों को जानता है **(सः)** वही पुरुष हम लोगों को शिक्षा कर सकता है॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे अग्नि अपने व्यापार से दूत के सदृश कार्य्यों को सिद्ध करता है, वैसे ही विद्वान् लोग राज्य के कार्य्य आदिकों को सिद्ध कर सकते हैं॥२॥

मनुष्यैः के सेवनीया इत्याह॥

मनुष्यों को किनका सेवन करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अ॒ग्निर्धि॒या स चे॑तति के॒तुर्य॒ज्ञस्य॑ पू॒र्व्यः। अर्थं॒ ह्य॑स्य त॒रणि॑॥३॥

अ॒ग्निः। धि॒या। सः। चे॒त॒ति॒। के॒तुः। य॒ज्ञस्य॑। पू॒र्व्यः। अर्थ॑म्। हि। अ॒स्य॒। त॒रणि॑॥३॥

पदार्थः-**(अग्निः)** पावकइव **(धिया)** क्रियया प्रज्ञया वा **(सः) (चेतति)** संजानीते संज्ञापयति वा **(केतुः)** प्रज्ञापकः **(यज्ञस्य)** विद्वत्सत्कारादेर्व्यवहारस्य **(पूर्व्यः)** पूर्वेषु विद्वत्सु कुशलः **(अर्थम्)** प्रयोजनम् **(हि)** यतः **(अस्य) (तरणि)** सन्तारकः। अत्र **सुपां सुलुगिति** सुलुक्॥३॥

अन्वयः-यो विद्वानग्निरिव केतुस्तरणि पूर्व्यो धिया ह्यस्य यज्ञस्यार्थं चेतति तस्मात्स सेव्योऽस्ति॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! ये विद्यामयं यज्ञं यथावज्जानन्ति तानेव विद्यावृद्धये सेवध्वम्॥३॥

पदार्थः-जो विद्वान् पुरुष **(अग्निः)** अग्नि के सदृश तेजस्वी **(केतुः)** उपदेश द्वारा बुद्धि का प्रकाश करने तथा **(तरणि)** सद्विद्या से दुःख का छुड़ानेवाला **(पूर्व्यः)** प्राचीन विद्वानों में चतुर **(धिया)** कर्म से वा बुद्धि से **(हि)** जिस कारण से **(अस्य)** इस **(यज्ञस्य)** विद्वानों में सत्काररूप व्यवहार को **(अर्थम्)** प्रयोजन को **(चेतति)** उत्तम प्रकार जानता वा अन्यों को जनाता है, इससे **(सः)** वह सेवा करने योग्य है॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो पुरुष विद्यारूप यज्ञ को उत्तम प्रकार से जानते हैं, उन्हीं पुरुषों की विद्या की उन्नति होने के लिये सेवा करो॥३॥

अथ सन्तानशिक्षाविषयमाह॥

अब सन्तानों की शिक्षा विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अ॒ग्निं सू॒नुं सन॑श्रुतं॒ सह॑सो जा॒तवे॑दसम्। वह्निं॑ दे॒वा अ॑कृण्वत॥४॥

अ॒ग्निम्। सू॒नुम्। सन॑ऽश्रुतम्। सह॑सः। जा॒तऽवे॑दसम्। वह्नि॑म्। दे॒वाः। अ॒कृ॒ण्व॒त॒॥४॥

पदार्थः-(**अग्निम्**) पावकमिव तेजस्विनम् (**सूनुम्**) अपत्यवत्सेवकम् (**सनश्रुतम्**) यः सनातनानि शास्त्राणि शृणोति तम् (**सहसः**) प्रशस्तबलयुक्तस्य (**जातवेदसम्**) प्राप्तविद्यम् (**वह्निम्**) सद्गुणानां वोढारम् (**देवाः**) विद्वांसः (**अकृण्वत**) कुर्वन्तु॥४॥

अन्वयः-हे विद्वांसः! स्वयं देवाः सन्तो भवन्तः सहसः सूनुं वह्निं सनश्रुतं जातवेदसमग्निमिवाऽकृण्वत॥४॥

भावार्थः-विद्वद्भिः स्वापत्यवदन्यापत्यानि विदित्वा प्रेम्णा विद्यायुक्तानि बहुश्रुतानि कृत्वाऽऽनन्दयितव्यानि॥४॥

पदार्थः-हे विद्वानो! स्वयं (**देवाः**) विद्वान् हुए आप लोग (**सहसः**) प्रशंसा करने योग्य विद्या बलवाले के (**सूनुम्**) पुत्र के सदृश सेवा करने (**वह्निम्**) अच्छे ही गुणों को धारण करने और (**सनश्रुतम्**) सनातन शास्त्रों को श्रवण करनेवाले (**जातवेदसम्**) विद्या से युक्त जिज्ञासु को (**अग्निम्**) अग्नि के समान तेजस्वी (**अकृण्वत**) करो॥४॥

भावार्थः-विद्वान् लोगों को चाहिये कि अपने पुत्रों के सदृश और लोगों के पुत्रों को समझ कर स्नेह से विद्यायुक्त और बहुत शास्त्रों को सुननेवाले अर्थात् जिन्होंने बहुत शास्त्र सुने हों, ऐसे करके आनन्द सहित करें॥४॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर विद्वान् लोग क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अदा॑भ्यः पुरए॒ता वि॒शाम॒ग्निर्मानु॑षीणाम्। तूर्णी॒ रथः॒ सदा॒ नवः॑॥५॥९॥

अदा॑भ्यः। पु॒रः॒ऽए॒ता। वि॒शाम्। अ॒ग्निः। मानु॑षीणाम्। तू॒र्णिः। रथः॑। सदा॑। नवः॑॥५॥

पदार्थः-(**अदाभ्यः**) हिंसितुमनर्हः (**पुरएता**) यः पुर एति सः (**विशाम्**) प्रजानाम् (**अग्निः**) पावक इव (**मानुषीणाम्**) मनुष्यसम्बन्धिनीनाम् (**तूर्णिः**) सद्योगामी (**रथः**) उत्तमं यानम् (**सदा**) सर्वस्मिन् काले (**नवः**) नूतनः॥५॥

अन्वयः-विद्वान् तूर्णिर्नवो रथइवाऽग्निरिव मानुषीणां विशां सदाऽदाभ्यः पुरएता भवेत्॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। विद्वांसो यथा शीघ्रगामिना नवेन रथेन सद्योऽभीष्टं स्थानं गच्छन्ति तथैव निर्वैरा भूत्वा सर्वानभीष्टाः सद्विद्याः सद्यः प्रापय्य कृतकृत्यान् सम्पादयेयुः॥५॥

पदार्थः-विद्वान् पुरुष **(तूर्णिः)** शीघ्र चलनेवाला और **(नवः)** नवीन **(रथः)** उत्तम सवारी और **(अग्निः)** अग्नि के सदृश प्रकाशित **(मानुषीणाम्)** मनुष्य सम्बन्धिनी **(विशाम्)** प्रजाओं की **(सदा)** सब काल में **(अदाभ्यः)** परस्पर हिंसा का वारणकर्त्ता और **(पुरएता)** अग्रगामी होवे॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। विद्वान् लोग जैसे शीघ्रगामी नवीन रथ से शीघ्र अपने वांछित स्थान को कोई एक मनुष्य पहुंचता है, वैसे वैर को त्याग के सब लोगों को अपनी इच्छानुकूल सद्विद्याओं की शीघ्र शिक्षा देकर उनका जन्म सफल करें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

साह्वान् विश्वा अभियुजः क्रतुर्देवानाममृक्तः। अग्निस्तुविश्रवस्तमः॥६॥

सह्वान्। विश्वाः। अभिऽयुजः। क्रतुः। देवानाम्। अमृक्तः। अग्निः। तुविश्रवःऽतमः॥६॥

पदार्थः-**(साह्वान्)** सोढा। अत्र **दाश्वान् साह्वान्मीढ्वाँश्चे**ति निपातनात् सिद्धिः। **(विश्वाः)** अखिलाः **(अभियुजः)** या आभिमुख्येन युज्यन्ते ताः प्रजाः **(क्रतुः)** प्राज्ञः **(देवानाम्)** विदुषां मध्ये **(अमृक्तः)** अन्यैरहिंस्यः **(अग्निः)** पावकइव शुद्धस्वरूपः **(तुविश्रवस्तमः)** अतिशयेन बहुश्रुतः॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽमृक्तः साह्वान् क्रतुरग्निरिव शुद्धस्तुविश्रवस्तमो देवानां विश्वा अभियुजः प्रजाः सर्वतो रक्षति स एव सर्वैः प्रजाजनैः सत्कर्त्तव्यः॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यः कञ्चन न हिनस्ति तं कोऽपि हिंसितुं नेच्छति, यो बहूनि शास्त्राण्यध्येतुं वा श्रोतुमिच्छति स प्राज्ञतमो जायते, यो यादृशेन भावेन प्रजायां वर्त्तते तं प्रति प्रजा अपि तादृशेन भावेनाभियुङ्क्ते॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(अमृक्तः)** जो कि औरों से न मारा जा सके **(साह्वान्)** क्रोधरहित **(क्रतुः)** बुद्धिमान् और **(अग्निः)** अग्नि के सदृश शुद्धस्वभाववाला **(तुविश्रवस्तमः)** अतिशय कर बहुत शास्त्रों को जिसने सुना हो **(देवानाम्)** पण्डितों के बीच में **(विश्वाः)** सम्पूर्ण **(अभियुजः)** अपने अनुकूल व्यवहार करनेवाली प्रजाओं की सब प्रकार रक्षा करता है, वही सब प्रजाजनों से सत्कार पाने योग्य है॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो किसी को नहीं मारता उसको मारने की कोई इच्छा नहीं करता, जो पुरुष बहुत शास्त्रों को पढ़ने और सुनने की इच्छा करता है वह अति बुद्धिमान् होता है, जो जैसी भावना से प्रजा में वर्त्ताव रखता है उसके साथ प्रजा भी उसी भावना से वर्त्ताव रखती है॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अभि प्रयांसि वाहसा दाश्वाँ अश्नोति मर्त्यः। क्षयं पावकशोचिषः॥७॥

अभि। प्रयांसि। वाहसा। दाश्वान्। अश्नोति। मर्त्यः। क्षयम्। पावकऽशोचिषः॥७॥

पदार्थः-(**अभि**) आभिमुख्ये (**प्रयांसि**) कमनीयान्यन्नादीनि (**वाहसा**) प्रापणेन (**दाश्वान्**) दाता (**अश्नोति**) प्राप्नोति (**मर्त्यः**) मनुष्यः (**क्षयम्**) निवासम् (**पावकशोचिषः**) पावकस्याग्नेः शोचिर्दीप्तिरिव शोचिर्यस्य विदुषस्तस्य॥७॥

अन्वयः-यो दाश्वान् मर्त्यो पावकशोचिषः क्षयमश्नोति स वाहसा प्रयांस्यभ्यश्नोति॥७॥

भावार्थः-यदा मनुष्या विदुषां विद्यास्थानं प्राप्नुवन्ति तदैव पूर्णकामा जायन्ते॥७॥

पदार्थः-जो (**दाश्वान्**) देनेवाला (**मर्त्यः**) मनुष्य (**पावकशोचिषः**) अग्नि की दीप्ति के सदृश दीप्तियुक्त विद्वान् पुरुष के (**क्षयम्**) विद्या स्थान को (**अश्नोति**) प्राप्त होता वह (**वाहसा**) उत्तम पदवी को प्राप्त होने से (**प्रयांसि**) कामना अभिलाषा के योग्य अन्न आदि को (**अभि**) प्राप्त होता है॥७॥

भावार्थः-जब मनुष्य विद्वानों की विद्या पदवी को प्राप्त होते हैं, तब ही उनके मनोरथ पूर्ण होते हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

परि विश्वानि सुधिताग्नेरश्याम मन्मभिः। विप्रासो जातवेदसः॥८॥

परि। विश्वानि। सुऽधिता। अग्नेः। अश्याम। मन्मऽभिः। विप्रासः। जातऽवेदसः॥८॥

पदार्थः-(**परि**) सर्वतः (**विश्वानि**) सर्वाणि (**सुधिता**) सुष्ठु धृतानि (**अग्नेः**) पावकस्येव (**अश्याम**) प्राप्नुयाम (**मन्मभिः**) विज्ञानविशेषैः सह (**विप्रासः**) मेधाविनः (**जातवेदसः**) जातविद्या विद्वांसः सन्तः॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा जातवेदसो विप्रासो वयं मन्मभिरग्नेर्विश्वानि सुधिता पर्यश्याम तथैव यूयमपि प्राप्नुत॥८॥

भावार्थः-विद्वद्भिर्मनुष्यैर्यथा मेधाविनो सृष्ट्यात्मनोर्विद्याग्रहणाय प्रयतन्ते तथैव विद्योन्नतये प्रयतितव्यम्॥८॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**जातवेदसः**) विद्वान् हुए (**विप्रासः**) बुद्धिमान् हम लोग (**मन्मभिः**) विज्ञान विशेषों के सहित (**अग्नेः**) अग्नि के सदृश (**विश्वानि**) सम्पूर्ण (**सुधिता**) उत्तम प्रकार धारण किये शास्त्रों को (**परि**) सब ओर से (**अश्याम**) प्राप्त हों, वैसे ही आप लोग भी प्राप्त हूजिये॥८॥

भावार्थः-विद्वान् मनुष्यों को चाहिये कि जैसे बुद्धिमान् विद्वान् सृष्टि और आत्मा की विद्या ग्रहण के लिये प्रयत्न करते हैं, वैसे ही विद्यावृद्धि के लिये प्रयत्न करें॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अग्ने॒ विश्वा॑नि॒ वार्या॒ वाजे॑षु सनिषामहे। त्वे दे॒वास॒ एरि॑रे॥९॥१०॥

अग्ने॑। विश्वा॑नि। वार्या॑। वाजे॑षु। स॒नि॒षा॒म॒हे॒। त्वे इति॑। दे॒वास॑:। आ। ई॒रि॒रे॒॥९॥

पदार्थ:-(**अग्ने**) पावकवद्विद्यया प्रकाशमान विद्वन् (**विश्वानि**) अखिलानि (**वार्य्या**) वर्त्तुमर्हाणि धनादीनि वस्तूनि (**वाजेषु**) संग्रामादिषु व्यवहारेषु (**सनिषामहे**) संभज्य प्राप्नुयाम (**त्वे**) त्वयि (**देवास:**) विद्वांस: (**आ**) (**ईरिरे**) प्रेरयन्ति॥९॥

अन्वय:-हे अग्ने! यस्मिँस्त्वे देवासोऽस्मानेरिरे ते वयं वाजेषु विश्वानि वार्य्या सनिषामहे॥९॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! यत्र धर्म्ये पुरुषार्थे विद्वांसो युष्मान् प्रेरयेयुर्यथा वयं तदाज्ञायां वर्त्तित्वा विद्यां धनं च प्राप्नुयाम तथा तत्र वर्त्तित्वा यूयमपि तादृशा भवत॥९॥

अत्राग्निविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इत्येकादशं सूक्तं दशमो वर्गश्च समाप्त:॥

पदार्थ:-हे (**अग्ने**) अग्नि के तुल्य विद्याओं से उत्तम प्रकार प्रकाशयुक्त विद्वन् पुरुष! जिन (**त्वे**) आपके विषय में (**देवास:**) विद्वान् लोग हम लोगों को (**आ**) (**ईरिरे**) प्रेरणा करते हैं, फिर प्रेरित हुए हम लोग (**वाजेषु**) संग्राम आदि व्यवहारों में (**विश्वानि**) सम्पूर्ण (**वार्य्या**) अच्छे प्रकार स्वीकार करने योग्य धनादि वस्तुओं को (**सनिषामहे**) यथाभाग प्राप्त होवें॥९॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जिस धर्मयुक्त पुरुषार्थ में विद्वान् लोग तुम लोगों को प्रेरणा करें तो जैसे हम लोग उनकी आज्ञानुकूल वर्त्ताव करके विद्या और धन को प्राप्त होवें, वैसे ही उन पुरुषों की आज्ञानुसार वर्त्ताव करके आप लोग भी विद्या और धनयुक्त होइये॥९॥

इस सूक्त में अग्नि और विद्वान् पुरुष के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है यह जानना चाहिये॥

यह ग्यारहवां सूक्त और दशवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ नवर्चस्य द्वादशसूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। इन्द्राग्नी देवते। १, ३, ५, ८, ९ निचृद्गायत्री। २, ४, ६ गायत्री। ७ यवमध्या विराड् गायत्री च छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथाध्यापकोपदेशकविषयमाह॥

अब नव ऋचावाले बारहवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में अध्यापक और उपदेशक का विषय कहते हैं॥

इन्द्रा॑ग्नी आ ग॑तं सु॒तं गी॒र्भिर्नभो॒ वरे॑ण्यम्। अ॒स्य पा॑तं धि॒येषि॒ता॥ १॥

इन्द्रा॑ग्नी॒ इति॑। आ। ग॒त॒म्। सु॒तम्। गी॒ःऽभिः। नभः॑। वरे॑ण्यम्। अ॒स्य। पा॒त॒म्। धि॒या। इ॒षि॒ता॥ १॥

पदार्थः-**(इन्द्राग्नी)** वायुविद्युतौ **(आ) (गतम्)** आगच्छतम् **(सुतम्)** विद्याजन्यमैश्वर्य्यवन्तं पुत्रं विद्यार्थिनं वा **(गीर्भिः)** सुशिक्षिताभिर्वाग्भिः सह **(नभः)** अन्तरिक्षमवकाशम्। **नभ इति साधारणनामसु पठितम्।** (निघं०१.४)। **(वरेण्यम्)** वरितुं स्वीकर्त्तुमर्हम् **(अस्य)** संसारस्य मध्ये **(पातम्)** रक्षतम् **(धिया)** प्रज्ञया **(इषिता)** प्रज्ञापकौ सन्तौ॥ १॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशकौ! युवामिन्द्राग्नी इवास्य मध्ये वर्त्तमानाविषिता गीर्भिर्धिया नभो वरेण्यं सुतं पातम्। विद्याप्रचारायाऽऽगतम्॥ १॥

भावार्थः-हे अध्यापकोपदेशकौ! यथा वायुसूर्यौ सर्वस्य जगतो रक्षकौ स्तस्तथैव विद्यासुशिक्षाभ्यां सर्वस्य रक्षकौ भवतम्॥ १॥

पदार्थः-हे विद्या पढ़ाने और उपदेश देनेवाले पुरुषो! आप दोनों **(इन्द्राग्नी)** वायु और बिजुली के सदृश **(अस्य)** इस संसार में वर्त्तमान होकर **(इषिता)** बोध देते हुए **(गीर्भिः)** उत्तम शिक्षाओं से पूरित वाणियों के सहित **(धिया)** श्रेष्ठ बुद्धि से **(नभः)** अन्तरिक्ष नामक अवकाश की और **(वरेण्यम्)** स्वीकार करने योग्य **(सुतम्)** विद्या से उपार्जित धन से युक्त पुत्र वा शिष्य की **(पातम्)** रक्षा कीजिये और **(आ, गतम्)** विद्या के प्रचार के लिये आइये॥ १॥

भावार्थः-हे अध्यापक और उपदेशक पुरुषो! जैसे वायु और सूर्य्य सम्पूर्ण जगत् के रक्षाकारक हैं, वैसे ही विद्या और उत्तम शिक्षा से सम्पूर्ण जगत् के रक्षक हूजिये॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इन्द्रा॑ग्नी जरि॒तुः सचा॑ य॒ज्ञो जि॑गाति॒ चेत॑नः। अ॒या पा॑तमि॒मं सु॒तम्॥ २॥

इन्द्रा॑ग्नी॒ इति॑। ज॒रि॒तुः। सचा॑। य॒ज्ञः। जि॒गा॒ति॒। चेत॑नः। अ॒या। पा॒त॒म्। इ॒मम्। सु॒तम्॥ २॥

पदार्थः-**(इन्द्राग्नी)** ऐश्वर्यविद्यायुक्तौ **(जरितुः)** स्तावकस्य **(सचा)** सम्बन्धिनौ **(यज्ञः)** यष्टुं योग्यः **(जिगाति)** गच्छति प्राप्नोति **(चेतनः)** सम्यग्ज्ञाता **(अया)** अनया विद्यासुशिक्षासहितया वाण्या। अत्र **छान्दसो वर्णलोप** इति न लोपः। **(पातम्)** रक्षतम् **(इमम्)** वर्त्तमानम् **(सुतम्)** उत्पन्नं संसारम्॥ २॥

अन्वयः-हे इन्द्राग्नी धनविद्येश्वरौ! यश्चेतनो यज्ञो युवां जिगाति तौ जरितुः सचा सन्तावयेमं सुतं पातम्॥२॥

भावार्थः-हे अध्यापकोपदेशका! ये विद्योपदेशग्रहणाय युष्मान् प्राप्नुयुस्तान् वायुसूर्य्यौ जगदिव सततं रक्षन्तु॥२॥

पदार्थः-हे **(इन्द्राग्नी)** धन और विद्यायुक्त पुरुषो! जो **(चेतनः)** उत्तम रीति से जाननेवाला **(यज्ञः)** पूजा करने योग्य पुरुष आप दोनों के **(जिगाति)** शरण को प्राप्त होवे। वे दोनों आप **(जरितुः)** स्तुतिकर्त्ता पुरुष के **(सचा)** सम्बन्धी हुए **(अया)** इस विद्या सुशिक्षा सहित वाणी से **(इमम्)** इस वर्त्तमान **(सुतम्)** उत्पन्न संसार को **(पातम्)** पालो॥२॥

भावार्थः-हे अध्यापक और विद्योपदेशक लोगो! जो पुरुष विद्या के उपदेश ग्रहण करने के लिये आप लोगों के शरण आवें, उनकी जैसे वायु-सूर्य्य जगत् की रक्षा करते हैं, वैसे निरन्तर पालना करो॥२॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इन्द्रमग्निं कविच्छदा यज्ञस्य जूत्या वृणे। ता सोमस्येह तृम्पताम्॥३॥

इन्द्रम्। अग्निम्। कविऽछदा। यज्ञस्य। जूत्या। वृणे। ता। सोमस्य। इह। तृम्पताम्॥३॥

पदार्थः-**(इन्द्रम्)** विद्युदिव दुष्टदोषप्रणाशकम् **(अग्निम्)** पावकइव दुष्टानां दाहकम् **(कविच्छदा)** यौ कवीन् विदुषश्छदयत ऊर्जयतस्तौ **(यज्ञस्य)** धर्म्यस्य व्यवहारस्य **(जूत्या)** वेगेन **(वृणे)** स्वीकरोमि **(ता)** तौ **(सोमस्य)** ऐश्वर्यस्य **(इह)** अस्मिन् संसारे **(तृम्पताम्)** सुखयतम्॥३॥

अन्वयः-अहं यौ जूत्या सह वर्त्तमानौ कविच्छदा इन्द्रमग्निं च वृणे ता इह सोमस्य यज्ञस्य मध्ये तृम्पताम्॥३॥

भावार्थः-मनुष्यैर्मूर्खसङ्गं विहाय विद्वत्सङ्गं विधायोत्तमाचरणेनास्मिन् जगत्यैश्वर्य्यमुन्नीय सदैवानन्दितव्यम्॥३॥

पदार्थः-मैं जिन **(जूत्या)** वेग के सहित वर्त्तमान **(कविच्छदा)** विद्वानों का सत्सङ्ग करनेवाले **(इन्द्रम्)** दुष्टों के दोषों के नाशकर्त्ता और **(अग्निम्)** अग्नि के सदृश दुष्टों के भस्मकारक जनों को **(वृणे)** स्वीकार करता हूँ **(ता)** वे **(इह)** इस संसार में **(सोमस्य)** ऐश्वर्य्य और **(यज्ञस्य)** धर्मसम्बन्धी व्यवहार के मध्य में **(तृम्पताम्)** सुख भोगें और सबको सुखी करें॥३॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि मूर्ख लोगों का सङ्ग त्याग के और विद्वानों का सङ्ग करके उत्तमाचरण करने से इस संसार में ऐश्वर्य्य का संग्रह करके सदा ही आनन्दयुक्त रहें॥३॥

अथ राजधर्मविषयमाह॥

अब राजधर्म विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तोशा वृत्रहणा हुवे सजित्वानापराजिता। इन्द्राग्नी वाजसातमा॥४॥

तोशा। वृत्रऽहना। हुवे। सऽजित्वाना। अपराऽजिता। इन्द्राग्नी इति। वाजऽसातमा॥४॥

पदार्थः-(**तोशा**) वर्द्धकौ विज्ञातारौ (**वृत्रहणा**) वृत्रं दुष्टमसुरप्रकृतिं हन्तारौ सभासेनेशौ (**हुवे**) प्रशंसामि (**सजित्वाना**) जयशीलैर्वीरैः सह वर्त्तमानौ (**अपराजिता**) शत्रुभिः पराजेतुमशक्यौ (**इन्द्राग्नी**) सूर्य्यविद्युतौ (**वाजसातमा**) वाजस्य विज्ञानस्य धनस्य वातिशयेन विभक्तारौ॥४॥

अन्वयः-हे सभासेनेशावहं वृत्रहणेन्द्राग्नी इव वर्त्तमानौ तोशा सजित्वानाऽपराजिता वाजसातमा युवां हुवे॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये राजानः शत्रूणां विजेतॄन् शत्रुभिरपराजितान् न्यायाधीशान् पुरुषान् स्वीकुर्वन्ति तेषां नित्यो विजयो भवति॥४॥

पदार्थः-हे सभासेना के अध्यक्षो! मैं (**वृत्रहणा**) असुर स्वभाववाले दुष्ट के नाशकारक (**इन्द्राग्नी**) सूर्य्य बिजुली के सदृश वर्त्तमान (**तोशा**) बढ़ानेवाले वा विज्ञानशील (**सजित्वाना**) जीतनेवाले वीरों के साथ वर्त्तमान (**अपराजिता**) शत्रुओं से नहीं हारने योग्य (**वाजसातमा**) विज्ञान वा धन का अतिशय विभाग करनेवाले आप लोगों की (**हुवे**) प्रशंसा करता हूँ॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा लोग शत्रुओं के जीतने और शत्रुओं से नहीं हारनेवाले न्यायकर्त्ता पुरुषों को सम्मानपूर्वक स्वीकार करते हैं, उनका सर्वदा विजय होता है॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

प्र वामर्चन्त्युक्थिनो नीथाविदो जरितारः। इन्द्राग्नी इष आ वृणे॥५॥११॥

प्र। वाम्। अर्चन्ति। उक्थिनः। नीथऽविदः। जरितारः। इन्द्राग्नी इति। इषः। आ। वृणे॥५॥

पदार्थः-(**प्र**) (**वाम्**) युवाम् (**अर्चन्ति**) सत्कुर्वन्ति (**उक्थिनः**) गुणप्रशंसकाः (**नीथाविदः**) ये नीथान् विनयान् विन्दन्ति ते (**जरितारः**) स्तावकाः (**इन्द्राग्नी**) विद्युत्सूर्याविव वर्त्तमानौ (**इषः**) अन्नादीनि (**आ**) समन्तात् (**वृणे**) प्राप्नुयाम्॥५॥

अन्वयः-हे इन्द्राग्नी इव वर्त्तमानौ सभासेनेशौ! ये नीथाविद उक्थिनो जरितारो वां प्रार्चन्ति तेभ्योऽहमिष आवृणे॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये पदार्थानां गुणकर्मस्वभावान् जानन्ति त एव युद्धं न्यायं च कर्त्तुं शक्नुवन्ति॥५॥

पदार्थः-हे (**इन्द्राग्नी**) बिजुली और सूर्य्य के सदृश प्रकाश सहित विद्यमान सभापति

सेनापतियो! जो **(नीथाविदः)** नम्रतायुक्त **(उक्थिनः)** उत्तम गुणों की प्रशंसा करने तथा **(जरितारः)** ईश्वर की स्तुति करनेवाले **(वाम्)** तुम दोनों को **(प्र, अर्चन्ति)** विशेष सत्कार करते हैं, उनसे मैं **(इषः)** अन्न आदि को **(आ, वृणे)** सब ओर से प्राप्त होऊं॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो पुरुष पृथिवी आदि पदार्थों के गुण, कर्म, स्वभावों को जानते हैं, वे ही युद्ध और न्यायाचरण कर सकते हैं॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इन्द्राग्नी नवतिं पुरो दासपत्नीरधूनुतम्। साकमेकेन कर्मणा॥६॥

इन्द्राग्नी इति। नवतिम्। पुरः। दासऽपत्नीः। अधूनुतम्। साकम्। एकेन। कर्मणा॥६॥

पदार्थः-**(इन्द्राग्नी)** वाय्वग्नी **(नवतिम्)** एतत्सङ्ख्याताः **(पुरः)** पालिकाः **(दासपत्नीः)** ये दस्यत्युपक्षिण्वन्ति शत्रून् ते दासास्तेषां पत्नीरिव वर्त्तमानाः किरणाः **(अधूनुतम्)** **(साकम्)** सह **(एकेन)** **(कर्मणा)** क्रियया॥६॥

अन्वयः-हे सभासेनेशौ! यथेन्द्राग्नी साकमेकेन कर्मणा नवतिं पुरो दासपत्नीरधूनुतं तथैव युवां सेनादिभिः शत्रून् कम्पयतम्॥६॥

भावार्थः-सभाध्यक्षादिमनुष्यैरैकमत्येन दुष्टान्निवार्य्य श्रेष्ठान् सत्कृत्य धर्म्येणाचरणेन राज्यशासनं कर्त्तव्यम्॥६॥

पदार्थः-हे सभापति सेनापतियो! जैसे **(इन्द्राग्नी)** वायु और अग्नि को **(साकम्)** एक साथ **(एकेन)** **(कर्मणा)** एक कर्म से **(नवतिम्)** नब्बे संख्यायुक्त **(पुरः)** पालन करनेवाली **(दासपत्नीः)** शत्रुओं को युद्ध में दूर फेंकनेवाले पुरुषों की स्त्रियों के तुल्य वर्त्तमान सूर्य्य की किरणें **(अधूनुतम्)** कंपाती हैं, वैसे आप दोनों सेना आदिकों से शत्रुओं को कम्पावें॥६॥

भावार्थः-सभाध्यक्षादि मनुष्यों को चाहिये कि परस्पर एक सम्मति से दुष्ट पुरुषों को उत्तम स्थानों से दूर कर और श्रेष्ठ पुरुषों का सत्कार करके धर्म्मपूर्वक व्यवहार से राज्यप्रबन्ध करें॥६॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इन्द्राग्नी अपसस्पर्युप प्र यन्ति धीतयः। ऋतस्य पथ्या३ अनु॥७॥

इन्द्राग्नी इति। अपसः। परि। उप। प्र। यन्ति। धीतयः। ऋतस्य। पथ्याः। अनु॥७॥

पदार्थः-(**इन्द्राग्नी**) वायुविद्युतौ (**अपसः**) कर्मणः (**परि**) सर्वतः (**उप**) समीपे (**प्र**) (**यन्ति**) गच्छन्ति (**धीतयः**) अङ्गुलय इव गतयः। **धीतय इत्यङ्गुलिनामसु पठितम्।** (निघं०२.५)। (**ऋतस्य**) सत्यस्य (**पथ्याः**) पथि साध्वीर्वीथीः (**अनु**)॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथेन्द्राग्नी ऋतस्यापसः परि पथ्या अनु गच्छतोऽनयोर्गतयो धीतय इवोप प्र यन्ति तथा यूयं सन्मार्गं नियमेन गच्छत॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथेश्वरसृष्टौ सूर्य्यादिपदार्था नियमेन स्वं स्वं मार्गं गच्छन्ति तथैव मनुष्या धर्म्येण मार्गेण गच्छन्तु॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**इन्द्राग्नी**) वायु और बिजुली (**ऋतस्य**) सत्य (**अपसः**) कर्म के (**परि**) सब ओर से (**पथ्याः**) मार्ग में सुखकारक सड़कों के (**अनु**) अनुकूल जाते हुए इन वायु बिजुलियों की गति (**धीतयः**) अंगुलियों के समान (**उप**) समीप में (**प्र, यन्ति**) प्राप्त होती हैं, वैसे ही आप लोग भी श्रेष्ठ मार्ग में नियमपूर्वक चलिये॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे ईश्वर की सृष्टि में सूर्य्य आदि पदार्थ नियम के साथ अपने-अपने मार्ग पर चलते हैं, वैसे ही मनुष्य लोग भी धर्मयुक्त मार्ग में चलें॥७॥

पुना राजधर्मविषयमाह॥

फिर राजधर्म विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इन्द्रा॑ग्नी तवि॒षाणि॑ वां स॒धस्था॑नि॒ प्रयां॑सि च। यु॒वोर॒प्तूर्यं॑ हि॒तम्॥८॥

इन्द्रा॑ग्नी॒ इति॑। त॒वि॒षाणि॑। वा॒म्। स॒धऽस्था॑नि। प्रयां॑सि। च॒। यु॒वोः। अ॒प्ऽतूर्य॑म्। हि॒तम्॥८॥

पदार्थः-(**इन्द्राग्नी**) वायुविद्युताविव सेनासेनाध्यक्षौ (**तविषाणि**) बलानि (**वाम्**) युवयोः (**सधस्थानि**) समानस्थानानि (**प्रयांसि**) कमनीयानि (**च**) (**युवोः**) (**अप्तूर्य्यम्**) कर्मानुष्ठानाय त्वरितव्यम् (**हितम्**) सुखसाधकम्॥८॥

अन्वयः-हे इन्द्राग्नी वायुविद्युताविव वर्त्तमानौ सेनासेनाध्यक्षौ! वां सधस्थानि प्रयांसि तविषाणि च युवोरप्तूर्य्यं हितं भवतु॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यदि वायुविद्युत्संयोगवत्सेनासेनाध्यक्षावविरुद्धौ स्यातां तर्हि सर्वे कामाः सिध्येयुः॥८॥

पदार्थः-हे (**इन्द्राग्नी**) वायु बिजुली के सदृश ऐक्यमत से वर्त्तमान सेना और सेना के मुख्य अधिष्ठाता! (**वाम्**) आप दोनों के (**सधस्थानि**) तुल्य स्थान में विद्यमान (**प्रयांसि**) कामना करने योग्य (**तविषाणि**) बल पराक्रम (**च**) और (**युवोः**) आप दोनों के (**अप्तूर्य्यम्**) कर्म करने के लिये शीघ्रता (**हितम्**) सुखसाधक हो॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो वायु और बिजुली के संयोग के समान

परस्पर सेना और सेना के स्वामी प्रेमभाव से विरोध छोड़ के वर्त्ताव करें तो सम्पूर्ण मनोरथ सिद्ध हों॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इन्द्रा॑ग्नी रोच॒ना दि॒वः परि॒ वाजे॑षु भूषथः। तद्वां॑ चेति॒ प्र वी॒र्य॑म्॥९॥१२॥अनु०१॥

इन्द्रा॑ग्नी॒ इति॑। रो॒च॒ना। दि॒वः। परि॑। वाजे॑षु। भू॒ष॒थः। तत्। वा॒म्। चे॒ति॒। प्र। वी॒र्य॑म्॥९॥

पदार्थः-(**इन्द्राग्नी**) वायुविद्युतौ (**रोचना**) रोचनानि रुचिकराणि कर्माणि (**दिवः**) प्रकाशस्य मध्ये (**परि**) (**वाजेषु**) सङ्ग्रामेषु (**भूषथः**) अलङ्कुरुथः (**तत्**) (**वाम्**) युवयोः (**चेति**) संज्ञपयति (**प्र**) प्रकृष्टम् (**वीर्य्यम्**) बलं पराक्रमम्॥९॥

अन्वयः-हे सेनासेनाध्यक्षौ! यथेन्द्राग्नी दिवो रोचना परि भूषथस्तथा वाजेषु विजयेन सेनाजना युवां परिभूषन्तु तद्वां प्रवीर्य्यञ्चेति॥९॥

भावार्थः-ये राजानो सेनासेनाध्यक्षान् सर्वथोत्तमान् सम्पादयन्ति तेषां सर्वदा विजय एव भवतीति॥९॥

अत्रेन्द्राग्न्यध्यापकोपदेशकसेनासेनाध्यक्षगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इति तृतीयमण्डले द्वादशं सूक्तं प्रथमोऽनुवाको द्वादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे सेना और सेना के स्वामी! जैसे (**इन्द्राग्नी**) वायु बिजुली (**दिवः**) प्रकाश के मध्य में (**रोचना**) प्रीतिकारक कर्मों को (**परि**) सब ओर से (**भूषथः**) शोभित करते हैं, वैसे (**वाजेषु**) संग्रामों में विजय से सेना के पुरुष आप दोनों को शोभित करें और (**तत्**) वह कर्म (**वाम्**) आप दोनों के (**प्र**) उत्तम (**वीर्य्यम्**) पराक्रम को (**चेति**) सम्यक् जनाता है॥९॥

भावार्थः-जो राजा लोग राज्यकार्य्य में सब प्रकार से निपुण सेना और सेना के स्वामियों को अधिकार देते हैं, उनका सब काल में विजय होता है॥९॥

इस सूक्त में इन्द्र, अग्नि, अध्यापक, उपदेशक और सेना तथा सेना के स्वामी के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह तीसरे मण्डल में बारहवां सूक्त पहिला अनुवाक और बारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ सप्तर्चस्य त्रयोदशस्य सूक्तस्य ऋषभो वैश्वामित्र ऋषिः। अग्निर्देवता। १ भुरिगुष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः। २, ३, ५-७ निचृदनुष्टुप्। ४ विराडनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः॥

अथ विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

अब सात ऋचावाले तेरहवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में विद्वान् लोग क्या करें, इस विषय को कहते हैं॥

प्र वो॑ दे॒वाया॒ग्नये॒ बर्हि॑ष्ठमर्चास्मै।

गम॑द्दे॒वेभि॒रा स नो॒ यजि॑ष्ठो ब॒र्हिरा स॑दत्॥ १॥

प्र। व॒ः। दे॒वाय॑। अ॒ग्नये॑। बर्हि॑ष्ठम्। अ॒र्च॒। अ॒स्मै॒। गम॑त्। दे॒वेभि॑ः। आ। सः। न॒ः। यजि॑ष्ठ। ब॒र्हिः। आ। स॒द॒त्॥ १॥

पदार्थः-(**प्र**) (**वः**) युष्मान् (**देवाय**) दिव्यगुणाय (**अग्नये**) अग्निवद्वर्त्तमानाय। (**बर्हिष्ठम्**) बर्हिषि यज्ञे तिष्ठतीति (**अर्च**) सत्कुरु (**अस्मै**) (**गमत्**) गच्छेत् प्राप्नुयात्। अत्राडभावः। (**देवेभिः**) दिव्यगुणैः सह (**आ**) (**सः**) (**नः**) अस्मान् (**यजिष्ठः**) अतिशयेन यष्टा (**बर्हिः**) अन्तरिक्षे (**आ**) (**सदत्**) प्राप्नुयात्॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो देवेभिः सहास्मै देवायाग्नये वो युष्माना गमत् तं बर्हिष्ठं प्रार्च स यजिष्ठो नो बर्हिरा सदत्॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! ये युष्मान् सत्कुर्वन्ति तान् यूयमपि सत्कुरुत यथा विद्वांसो विद्वद्भ्यो विद्यया युक्तान् शुभान् गुणान् गृह्णन्ति तान् यूयमर्चताऽस्मान् दिव्या गुणाः प्राप्नुवन्त्विवतीच्छत॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो पुरुष (**देवेभिः**) उत्तम गुणों के साथ (**अस्मै**) इस (**देवाय**) श्रेष्ठ गुणयुक्त (**अग्नये**) अग्नि के सदृश तेजधारी के लिये (**वः**) आप लोगों को (**आ**) सब प्रकार (**गमत्**) प्राप्त होवे उस (**बर्हिष्ठम्**) यज्ञ में बैठनेवाले को (**प्र**) (**अर्च**) विशेष सत्कार करो (**सः**) वह (**यजिष्ठः**) अतिशय यज्ञ करनेवाला (**नः**) हम लोगों को (**बर्हिः**) अन्तरिक्ष में (**आ**) (**सदत्**) प्राप्त होवे॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो लोग आप लोगों का सत्कार करते हैं, उनका आप लोग भी सत्कार करें। जैसे विद्वज्जन विद्वान् पुरुषों से विद्यायुक्त शुभ गुणों को ग्रहण करते हैं, उन विद्वज्जनों की आप लोग भी सेवा करें और हम लोगों को उत्तम गुण प्राप्त हों, ऐसी इच्छा करो॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ऋ॒तावा॒ यस्य॒ रोद॑सी॒ दक्षं॒ सच॑न्त ऊ॒तय॑ः।

हविष्मन्तस्तमीळते तं सनिष्यन्तोऽवसे॥ २॥

ऋतऽवा। यस्य। रोदसी इति। दक्षम्। सचन्ते। ऊतयः। हविष्मन्तः। तम्। ईळते। तम्। सनिष्यन्तः। अवसे॥ २॥

पदार्थः-(**ऋतावा**) य ऋतं सत्यं वनुते याचते सः। **अन्येषामपि दृश्यत** इति दीर्घः (**यस्य**) (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**दक्षम्**) बलं चातुर्य्यम् (**सचन्ते**) सम्बध्नन्ति (**ऊतयः**) रक्षका गुणाः (**हविष्मन्तः**) प्रशस्तानि हवींषि दानानि विद्यन्ते येषु ते (**तम्**) (**ईळते**) प्रशंसन्ति (**तम्**) (**सनिष्यन्तः**) सेवनं करिष्यमाणाः (**अवसे**) रक्षणाद्याय॥ २॥

अन्वयः-हे विद्वन् ऋतावा! भवान् यस्य दक्षमूतयश्च रोदसी सचन्ते तं हविष्मन्तः सचन्ते तमवसे सनिष्यन्तः ईळते तमेव प्रशंसतु॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यस्य कीर्त्तिर्द्यावापृथिव्योर्व्याप्ता यस्य न्यायेन रक्षणादीनि कर्माणि प्रशंसितानि सन्ति तमेव विद्वांसं सभापतिं रक्षणाद्यायाश्रयत॥ २॥

पदार्थः-हे विद्वन् पुरुष (**ऋतावा**) सत्य की प्रार्थना करनेवाले आप! (**यस्य**) जिसके (**दक्षम्**) पराक्रम वा चतुराई और (**ऊतयः**) रक्षा करनेवाले गुण (**रोदसी**) अन्तरिक्ष और पृथिवी को (**सचन्ते**) सम्बद्ध करते अर्थात् उनमें व्याप्त होते हैं (**तम्**) उसके (**हविष्मन्तः**) प्रशंसा करने योग्य दानयुक्त जन सम्बन्धी होते हैं (**तम्**) उसकी (**अवसे**) रक्षा आदि के लिये (**सनिष्यन्तः**) सेवन करनेवाले लोग (**ईळते**) प्रशंसा करते हैं, उसी की प्रशंसा करो॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिसकी कीर्त्ति आकाश और पृथिवी में व्याप्त, जिसके न्याय से प्रशस्त रक्षा आदि कर्म होते हैं, उसी विद्वान् सभापति का रक्षा आदि के लिये तुम आश्रय करो॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स यन्ता विप्र एषां स यज्ञानामथा हि षः।

अग्निं तं वो दुवस्यत दाता यो वनिता मघम्॥ ३॥

सः। यन्ता। विप्रः। एषाम्। सः। यज्ञानाम्। अथ। हि। सः। अग्निम्। तम्। वः। दुवस्यत। दाता। यः। वनिता। मघम्॥ ३॥

पदार्थः-(**सः**) (**यन्ता**) निग्रहीता (**विप्रः**) मेधावी (**एषाम्**) विद्यासुशिक्षान्वितानाम् (**सः**) (**यज्ञानाम्**) सङ्गन्तव्यानां व्यवहाराणाम् (**अथ**) आनन्तर्य्ये। अत्र **निपातस्य** चेति दीर्घः। (**हि**) यतः (**सः**) (**अग्निम्**) पावकम् (**तम्**) अग्निवद्वर्त्तमानम् (**वः**) युष्माकम् (**दुवस्यत**) सेवध्वम् (**दाता**) (**यः**) (**वनिता**) याचकः (**मघम्**) परमपूजनीयं धनम्॥ ३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो विप्र एषां यज्ञानां वो युष्माकं च यन्ता दाता वनिता भवेत्तमग्निमिव तस्मात्प्राप्तं मघञ्च दुवस्यत स हि स्वयं जितेन्द्रियः स स्वयं मेधावी सोऽथ स्वयं दाता यज्ञानुष्ठानात् सद्गुणयाचकः स्यात्॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः स्वयं धर्मात्मा जितेन्द्रियः सत्योपदेष्टा सद्गुणानां दाता ग्रहीता च प्रकृतेर्नियन्ता भवेत्तं सर्वोपायैः सेवध्वम्॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(विप्रः)** बुद्धिमान् पुरुष **(एषाम्)** इन विद्या और उत्तम शिक्षायुक्त **(यज्ञानाम्)** करने योग्य व्यवहारों को और **(वः)** आप लोगों का **(यन्ता)** कुमार्ग से निवारणकर्त्ता **(दाता)** दानशील **(वनिता)** मांगनेवाला होवे **(तम्)** उस **(अग्निम्)** अग्नि के सदृश प्रकाशमान जन को और उससे प्राप्त हुए **(मघम्)** अत्यन्त पूजने योग्य धन को **(दुवस्यत)** सेवो **(सः)** वह **(हि)** जिससे कि अपने आप ही जितेन्द्रिय इससे **(सः)** वह अपने आप ही बुद्धिमान् **(अथ)** इसके अनन्तर **(सः)** वह स्वयं दानशील यज्ञों के करने से उत्तम गुणों का मांगनेवाला होवे॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो पुरुष अपने आप धर्मात्मा, जितेन्द्रिय, सत्य का प्रचारक, श्रेष्ठ गुणों का देने और ग्रहण करनेवाला, स्वभाव का धर्म में प्रवर्त्तनकर्त्ता होवे, उसकी सम्पूर्ण उपायों से सेवा करो॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स नः शर्मा॑णि वी॒तये॑ऽग्निर्य॑च्छतु॒ शंत॑मा।

यतो॑ नः प्रु॒ष्णव॒द्वसु॑ दि॒वि क्षि॒तिभ्यो॑ अ॒प्स्वा॥४॥

सः। नः। शर्मा॑णि। वी॒तये॑। अ॒ग्निः। य॒च्छ॒तु॒। शंऽत॑मा। यतः॑। नः॒। प्रु॒ष्णव॑त्। वसु॑। दि॒वि। क्षि॒तिऽभ्यः॑। अ॒प्ऽसु। आ॥४॥

पदार्थः-**(सः)** **(नः)** अस्मभ्यम् **(शर्माणि)** उत्तमानि गृहाणि **(वीतये)** विज्ञानादिधनप्राप्तये **(अग्निः)** पावक इव **(यच्छतु)** ददातु **(शन्तमा)** अतिशयेन शङ्कराणि **(यतः)** **(नः)** अस्मान् **(प्रुष्णवत्)** सुष्ठ्वैश्वर्य्ययुक्तम् **(वसु)** धनम् **(दिवि)** प्रकाशे **(क्षितिभ्यः)** भूमिस्थदेशेभ्यः **(अप्सु)** प्राणेष्वन्तरिक्षे वा **(आ)** समन्तात्॥४॥

अन्वयः-स पूर्वोक्तो विद्वानग्निरिव वीतये नः शन्तमा शर्माणि क्षितिभ्यो दिव्यप्स्वा यच्छतु यतो नोऽस्मान् प्रुष्णवद्वसु प्राप्नुयात्॥४॥

भावार्थः-गृहस्थैः सर्वदा सुखकराणि गृहाणि निर्माय जले पृथिव्यामन्तरिक्षे गमनाय यानानि साधनानि निर्माय सर्वाः समृद्धयः प्राप्तव्यास्ताभिर्विज्ञानं वर्द्धनीयम्॥४॥

पदार्थः-(**सः**) वह पूर्व मन्त्र में कहा हुआ विद्वान् (**अग्निः**) अग्नि के सदृश (**वीतये**) विज्ञान आदि धन की प्राप्ति के लिये (**नः**) हम लोगों को (**शन्तमा**) अतिशय कल्याणकारक (**शर्माणि**) उत्तम गृहों को (**क्षितिभ्यः**) पृथ्वी में विराजमान देशों से (**दिवि**) प्रकाश में (**अप्सु**) प्राणों, जलों वा अन्तरिक्ष में (**आ**) चारों ओर से (**यच्छतु**) देवे (**यतः**) जिससे (**नः**) हम लोगों को (**प्रुष्णवत्**) अच्छे ऐश्वर्ययुक्त जैसा (**वसु**) धन प्राप्त होवे॥४॥

भावार्थः-गृहस्थ लोगों को चाहिये कि सर्वदा सुखोत्पादक गृहों को निर्मित करके और जल, स्थल, अन्तरिक्ष मार्ग से गमन के लिये उत्तम वाहन तथा अन्य यन्त्रादि साधनों को रच कर सम्पूर्ण समृद्धियाँ सञ्चित करें, फिर उनसे अपना विज्ञान बढ़ावें॥४॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

दीदिवांसमपूर्व्यं वस्वीभिरस्य धीतिभिः।

ऋक्वाणो अग्निमिन्धते होतारं विश्पतिं विशाम्॥५॥

दीदिवांसम्। अपूर्व्यम्। वस्वीभिः। अस्य। धीतिऽभिः। ऋक्वाणः। अग्निम्। इन्धते। होतारम्। विश्पतिम्। विशाम्॥५॥

पदार्थः-(**दीदिवांसम्**) सद्गुणैर्देदीप्यमानम् (**अपूर्व्यम्**) अपूर्वेषु दिव्येषु गुणेषु कुशलम् (**वस्वीभिः**) धनप्रापिकाभिः क्रियाभिः (**अस्य**) (**धीतिभिः**) अङ्गुलीभिरिव (**ऋक्वाणः**) स्तुत्यानां गुणानां स्तावकाः (**अग्निम्**) अग्निमिव वर्त्तमानम् (**इन्धते**) प्रकाशयन्ति (**होतारम्**) सुखस्य दातारम् (**विश्पतिम्**) विशिष्टानां पालकम् (**विशाम्**) प्रजानाम्॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य ऋक्वाणो धीतिभिरिव वस्वीभिरस्य संसारस्य मध्य अग्निमिव दीदिवांसमपूर्व्यं होतारं विशां विश्पतिमिन्धते तं यूयं सदा सेवध्वम्॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! युष्माभिरत्र श्रेष्ठाश्रयः कर्त्तव्यो दुष्टसङ्गो हातव्यो विद्याधनवृद्धिः कर्त्तव्या विद्याविनयसहितो राजा सेवनीयोऽस्तीति विजानीत॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो पुरुष (**ऋक्वाणः**) स्तुति करने योग्य गुणों के स्तुतिकर्त्ता (**धीतिभिः**) अंगुलियों के सदृश (**वस्वीभिः**) धन प्राप्त करानेवाली क्रियाओं से (**अस्य**) इस संसार के मध्य में (**अग्निम्**) अग्नि के तुल्य वर्त्तमान (**दीदिवांसम्**) उत्तम गुणों के प्रकाश से युक्त (**अपूर्व्यम्**) अपूर्व श्रेष्ठ गुणों में निपुण (**होतारम्**) सुखदायक (**विशाम्**) प्रजाओं के बीच (**विश्पतिम्**) विशिष्टों के पालनकर्त्ता जन को (**इन्धते**) प्रकाशित करता है, उसकी आप लोग सेवा करें॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! आप लोगों को इस संसार में श्रेष्ठ

पुरुषों का आश्रय करना, दुष्टों का सङ्ग त्यागना, विद्याधन की वृद्धि करनी और विद्याविनय से युक्त राजा का सेवन करना योग्य है, ऐसा समझो॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उ॒त नो॒ ब्रह्म॑न्नविष उ॒क्थेषु॑ देव॒हूत॑मः।

शं नः॑ शोचा म॒रुद्वृ॒धोऽग्ने॑ सहस्र॒सात॑मः॥६॥

उ॒त। नः॒। ब्रह्म॑न्। अ॒वि॒षः॒। उ॒क्थेषु॑। दे॒व॒ऽहूत॑मः। शम्। नः॒। शो॒च॒। म॒रुत्ऽवृ॑धः। अग्ने॑। स॒ह॒स्र॒ऽसात॑मः॥६॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**नः**) अस्मान् (**ब्रह्मन्**) ब्रह्मणि धने (**अविषः**) व्यापयेत् (**उक्थेषु**) प्रशंसनीयपदार्थेषु (**देवहूतमः**) देवैर्विद्वद्भिरतिशयेन प्रशंसितः (**शम्**) सुखम् (**नः**) अस्माकम् (**शोच**) विचारय। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**मरुद्वृधः**) मनुष्यैर्वर्धमानान् (**अग्ने**) अग्निरिव यशसा प्रकाशमान (**सहस्रसातमः**) यः सहस्रमसङ्ख्यं सनति ददाति सोऽतिशयितः॥६॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं ब्रह्मन्नुक्थेषु नोऽविष उत देवहूतमः सहस्रसातमस्त्वं मरुद्वृधो नः शं शोच प्रापय॥६॥

भावार्थः-मनुष्यैर्विदुषः प्राप्य प्रथमतो ब्रह्मचर्य्यविद्यादिग्रहणं ततो धनैश्वर्य्यवर्द्धनोपायो याचनीयो धनं प्राप्य सुपात्रेषु सन्मार्गे व्ययितव्यम्॥६॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के तुल्य कीर्ति से प्रकाशमान! आप (**ब्रह्मन्**) धन और (**उक्थेषु**) प्रशंसनीय पदार्थों के निमित्त (**नः**) हमको (**अविषः**) संयुक्त कीजिये (**उत**) और (**देवहूतमः**) विद्वानों से अति प्रशंसा को प्राप्त (**सहस्रसातमः**) असंख्य उपदेश वा धनों को अत्यन्त देनेवाले आप (**मरुद्वृधः**) मनुष्यों से बढ़ते हुए (**नः**) हमारे (**शम्**) सुख को (**शोच**) विचार कीजिये वा सुख प्राप्त कीजिये॥६॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि विद्वानों के शरण जा के प्रथम से ब्रह्मचर्य्य विद्या आदि का ग्रहण, तदनन्तर धन ऐश्वर्य की वृद्धि के उपाय की प्रार्थना करें और फिर धन को प्राप्त होके उत्तम विद्यावान् पुरुषों और श्रेष्ठ मार्ग में खर्चें॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

नू नो॑ रास्व स॒हस्र॑वत् तो॒कव॑त्पुष्टि॒मद्वसु॑।

द्यु॒मद॑ग्ने सु॒वीर्यं॒ वर्षि॑ष्ठ॒मनु॑पक्षितम्॥७॥१३॥

नु। नः। रास्व। सहस्रऽवत्। तोकऽवत्। पुष्टिऽमत्। वसु। द्युऽमत्। अग्ने। सुऽवीर्यम्। वर्षिष्ठम्। अनुपऽक्षितम्॥७॥

पदार्थः-(**नु**) सद्यः (**नः**) अस्मभ्यम् (**रास्व**) देहि (**सहस्रवत्**) सहस्रमसंख्यपरिमाणं विद्यते यस्मिँस्तत् (**तोकवत्**) प्रशंसितानि तोकान्यपत्यानि भवन्ति यस्मिँस्तत् (**पुष्टिमत्**) बहुविधा पुष्टिर्विद्यते यस्मिंस्तत् (**वसु**) विद्यासुवर्णादिधनम् (**द्युमत्**) द्यौर्ज्ञानप्रकाशो विद्यते यस्मिंस्तत् (**अग्ने**) परमेश्वर विद्वन् वा (**सुवीर्य्यम्**) शोभनं वीर्य्यं बलं यस्मात्तत् (**वर्षिष्ठम्**) अतिशयेन वृद्धम् (**अनुपक्षितम्**) यद्व्ययेनापि नोपक्षीयते तत्॥७॥

अन्वयः-हे अग्ने जगदीश्वर विद्वन् वा! त्वं नः सहस्रवत्तोकवत्पुष्टिमत्सुवीर्य्यं द्युमद्वर्षिष्ठमनुपक्षितं च वसु नु रास्व॥७॥

भावार्थः-मनुष्यैः परमेश्वरादैश्वर्य्यवतो विदुषो मनुष्याद्वा विद्यैश्वर्य्यं श्रेष्ठान्यपत्यान्युत्तमं बलं पुरुषार्थेन वर्द्धनीयं येन सर्वेषां सद्यो वृद्धिः कर्त्तुं शक्येतेति॥७॥

अत्र विद्वदग्निगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इति त्रयोदशं सूक्तं त्रयोदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) जगदीश्वर वा विद्वान् पुरुष! आप (**नः**) हम लोगों के लिये (**सहस्रवत्**) असंख्यपरिमाणयुक्त (**तोकवत्**) प्रशंसा करने योग्य सन्तानों से पूरित (**पुष्टिमत्**) अनेक प्रकार की पुष्टि के दाता (**सुवीर्य्यम्**) प्रचण्ड बल को बढ़ानेवाले (**द्युमत्**) ज्ञान के प्रकाश से युक्त (**वर्षिष्ठम्**) अतिशय वृद्धि से युक्त और (**अनुपक्षितम्**) खर्च करने से नहीं न्यून होनेवाले (**वसु**) विद्या, सुवर्ण आदि धन को (**नु**) शीघ्र (**रास्व**) दीजिये॥७॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि परम ऐश्वर्ययुक्त ईश्वर वा किसी विद्वान् पुरुष से प्रार्थना करके प्राप्ति के योग्य विद्या ऐश्वर्य्य, उत्तम सन्तान, श्रेष्ठ बल पुरुषार्थ से बढ़ावें, जिससे सब जनों की शीघ्र वृद्धि कर सकें॥७॥

इस सूक्त में विद्वान् और अग्नि के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है यह जाननी चाहिये॥

यह तेरहवां सूक्त और तेरहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ सप्तर्चस्य चतुर्दशस्य सूक्तस्य ऋषभो वैश्वामित्र ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ७ निचृत् त्रिष्टुप्। २, ५ त्रिष्टुप्। ३, ४ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः। ६ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ शिल्पविद्याविषयमाह॥

अब सात ऋचावाले चौदहवें सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र से शिल्पविद्या विषय को कहते हैं॥

आ होता मन्द्रो विदथान्यस्थात् सत्यो यज्वा कवितमः स वेधाः॥
विद्युद्रथः सहसस्पुत्रो अग्निः शोचिष्केशः पृथिव्यां पाजो अश्रेत्॥ १॥

आ। होता। मन्द्रः। विदथानि। अस्थात्। सत्यः। यज्वा। कविऽतमः। सः। वेधाः। विद्युत्ऽरथः। सहसः। पुत्रः। अग्निः। शोचिःऽकेशः। पृथिव्याम्। पाजः। अश्रेत्॥ १॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**होता**) सकलविद्यादाता (**मन्द्रः**) कमनीयो हर्षयिता (**विदथानि**) विज्ञानानि (**अस्थात्**) तिष्ठेत् (**सत्यः**) सत्सु साधुः (**यज्वा**) सङ्गन्ता (**कवितमः**) अतिशयेन विद्वान् (**सः**) (**वेधाः**) मेधावी। **वेधा इति मेधाविनामसु पठितम्।** (निघं०३.१५)। (**विद्युद्रथः**) विद्युता चालितो रथो विद्युद्रथः (**सहसः**) बलयुक्तस्य वायोः (**पुत्रः**) सन्तान इव (**अग्निः**) (**शोचिष्केशः**) शोचींषि तेजांसि केशा इव ज्वाला यस्य सः (**पृथिव्याम्**) (**पाजः**) बलम् (**अश्रेत्**) श्रयेत्॥ १॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो मन्द्रः सत्यो यज्वा होता कवितमो वेधा अस्ति स विदथान्यस्थात् विद्युद्रथः सहसस्पुत्रः शोचिष्केशोऽग्निः पृथिव्यां पाजोऽश्रेत्तस्मादेव युष्माभिः शिल्पविद्या संग्राह्या॥ १॥

भावार्थः-ये मनुष्याः पदार्थविज्ञानानि प्राप्य हस्तक्रियया यन्त्रकला निष्पाद्य विद्युदादिचाल्यानि यानानि साधयेयुस्तेऽत्यन्तं सुखमाप्नुयुः॥ १॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**मन्द्रः**) अच्छे और प्रसन्न कराने (**सत्यः**) श्रेष्ठ पुरुषों का आदर करने (**यज्वा**) मेल करने और (**होता**) सब विद्या को देनेवाला (**कवितमः**) अत्यन्त विद्वान् (**वेधाः**) बुद्धिमान् पुरुष है (**सः**) वह (**विदथानि**) विज्ञानों को (**आ**) (**अस्थात्**) प्राप्त होकर उत्पन्न करे (**विद्युद्रथः**) बिजुली से रथ चलानेवाला (**सहसः**) बलयुक्त वायु के (**पुत्रः**) सन्तान के सदृश (**शोचिष्केशः**) केशों के सदृश तेजों को धारणकर्त्ता (**अग्निः**) अग्नि के तुल्य तेजस्वी इस (**पृथिव्याम्**) पृथिवी में (**पाजः**) बल का (**अश्रेत्**) आश्रय करे, उससे विमानरचना और शिल्पविद्या में निपुण होइये॥ १॥

भावार्थः-जो मनुष्य पदार्थविद्या में कुशल होकर हाथ की कारीगरी से यन्त्रकला सिद्ध करके बिजुली से चलाने योग्य वाहनों को रचें तो वे अत्यन्त सुख को प्राप्त होवें॥ १॥

अथाध्ययनाध्यापनविषयमाह॥

अब पढ़ने-पढ़ाने रूप विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अयामि ते नमउक्तिं जुषस्व ऋतावस्तुभ्यं चेतते सहस्वः।

विद्वाँ आ वक्षि विदुषो नि षत्सि मध्य आ बर्हिरूतये यजत्र॥ २॥

अयामि। ते। नमःऽउक्तिम्। जुषस्व। ऋतऽवः। तुभ्यम्। चेतते। सहस्वः। विद्वान्। आ। वक्षि। विदुषः। नि। सत्सि। मध्ये। आ। बर्हिः। ऊतये। यजत्र॥ २॥

पदार्थः-(**अयामि**) प्राप्नोमि (**ते**) तव (**नमउक्तिम्**) नमसां नमस्काराणां वचनम् (**जुषस्व**) सेवस्व (**ऋताव:**) सत्यप्रकाशक (**तुभ्यम्**) (**चेतते**) प्रज्ञापकाय (**सहस्वः**) बहुबलयुक्त सकलविद्याविद्वा (**विद्वान्**) (**आ**) समन्तात् (**वक्षि**) वदसि (**विदुषः**) विपश्चितः (**नि**) निश्चितम् (**सत्सि**) निषीदसि (**मध्ये**) (**आ**) (**बर्हिः**) अन्तरिक्षस्य (**ऊतये**) रक्षणाद्याय (**यजत्र**) सङ्गन्तः॥ २॥

अन्वयः-हे ऋतावोऽहं ते नमउक्तिमयामि तां त्वं जुषस्व। हे सहस्वो यो विद्वाँस्त्वं विदुष आ वक्षि तेन त्वया सहाऽहं विदुषोऽयामि। हे यजत्र! यस्त्वमूतये बर्हिर्मध्य आ नि षत्सि तस्मै चेतते तुभ्यं नमउक्तिं विदधामि॥ २॥

भावार्थः-यथा विद्यार्थिनो नमस्कारादिसेवयाऽध्यापकान् प्रसादयेयुस्तथाऽध्यापकाः सुशिक्षादानेन विद्यार्थिनः सन्तोषयेयुः॥ २॥

पदार्थः-हे (**ऋताव:**) सत्यप्रकाशकशील मैं (**ते**) आपके (**नमउक्तिम्**) नमस्कारों के वचन को (**अयामि**) प्राप्त होता हूँ (**जुषस्व**) उसका आप सादर सहित ग्रहण कीजिये। हे (**सहस्वः**) अतिबलयुक्त वा सम्पूर्ण विद्या जाननेवाले जो (**विद्वान्**) विद्वान्! आप (**विदुषः**) विद्वानों को (**आ**) (**वक्षि**) सब प्रकार उपदेश देते हो ऐसे आपके साथ विद्वानों को प्राप्त होता हूँ। हे (**यजत्र**) पूजन करने योग्य! जो आप (**ऊतये**) रक्षा आदि के लिये (**बर्हिः**) अन्तरिक्ष के (**मध्ये**) मध्य में (**आ**) (**नि**) अच्छे प्रकार निश्चित (**सत्सि**) विराजो उस (**चेतते**) बोध देनेवाले (**तुभ्यम्**) आपके लिये नमस्काररूप वचन करता हूँ॥ २॥

भावार्थः-जैसे विद्यार्थी लोग नमस्कार आदि सेवा से अध्यापकों को प्रसन्न करें, वैसे अध्यापक लोग उत्तमशिक्षारूप विद्यादान से विद्यार्थियों को प्रसन्न सन्तुष्ट करें॥ २॥

मनुष्यैर्नियम आश्रयितव्य इत्याह॥

मनुष्यों को नियम का आश्रय करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

द्रवतां त उषसा वाजयन्ती अग्ने वातस्य पथ्याभिरच्छ।
यत्सीमञ्जन्ति पूर्व्यं हविर्भिरा बन्धुरेव तस्थतुर्दुरोणे॥ ३॥

द्रवताम्। ते। उषसा। वाजयन्ती इति। अग्ने। वातस्य। पथ्याभिः। अच्छ। यत्। सीम्। अञ्जन्ति। पूर्व्यम्। हविःऽभिः। आ। बन्धुराऽइव। तस्थतुः। दुरोणे॥ ३॥

पदार्थः-(**द्रवताम्**) गच्छेताम् (**ते**) तुभ्यम् (**उषसा**) प्रातःसायंसन्धिवेले (**वाजयन्ती**) प्रज्ञापयन्त्यौ (**अग्ने**) अग्निरिव वर्त्तमान (**वातस्य**) वायोः (**पथ्याभिः**) पथिषु साध्वीभिर्गतिभिः (**अच्छ**) सम्यक् (**यत्**)

(सीम्) सर्वतः **(अञ्जन्ति)** प्रकटयन्ति **(पूर्व्यम्)** पूर्वैर्निष्पादितं यानविशेषम् **(हविर्भिः)** आदातव्यैः साधनैः **(आ)** **(बन्धुरेव)** यथा बन्धुरे तथा **(तस्थतुः)** तिष्ठेताम् **(दुरोणे)** गृहे॥३॥

अन्वयः-हे अग्ने विद्वन्! ते यथा वाजयन्ती उषसा द्रवतां वा वातस्य पथ्याभिर्दुरोणेऽच्छ तस्थतुर्बन्धुरेव शिल्पिनो हविर्भिर्यत्पूर्व्यं यानविशेषं सीमाञ्जन्ति ते त्वं यथावत् तच्च यानं साध्नुहि॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथेश्वरनियते सायंप्रातर्वेले नियमेन वर्त्तेते यथा च सुशिल्पिभिर्निर्मितानि यन्त्रयुतानि यानानि यथानियमं गच्छन्त्यागच्छन्ति तथैव स्वयं नियमे वर्त्तित्वा नियतानि यानानि संसाध्याभीष्टं व्यवहारं सम्यक् साध्नुत॥३॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश प्रकाशयुक्त विद्वान् पुरुष! **(ते)** आपके लिये जैसे **(वाजयन्ती)** बोध कराती हुई **(उषसा)** प्रातःकाल सन्ध्याकाल दोनों वेला **(द्रवताम्)** प्रवाह से चलें वा **(वातस्य)** वायु के **(पथ्याभिः)** मार्ग में उत्तम गमनों से **(दुरोणे)** गृह में **(अच्छ)** उत्तम प्रकार **(तस्थतुः)** वर्त्तमान होवें **(बन्धुरेव)** बन्धनों के सदृश कारीगर लोग **(हविर्भिः)** ग्रहण करने योग्य साधनों से **(यत्)** जिस **(पूर्व्यम्)** प्राचीन लोगों से रचे गये वाहन विशेष को **(सीम्)** **(आ, अञ्जन्ति)** सब प्रकार प्रकट करते हैं, उन दोनों सायं-प्रातः वेला की आप यथायोग्य सेवा करें और उस वाहन को सिद्ध करो॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे ईश्वर से नियत की **[गयी]** सन्ध्या और प्रातः समय की वेला नियम से वर्त्तमान हैं और जैसे चतुर कारीगरों से बनाये गये कलायन्त्रों से युक्त वाहन नियम सहित जाते-आते हैं, वैसे ही अपने-आप नियमपूर्वक वर्ताव करके नियत यानों को रच के अपनी इच्छानुकूल व्यवहार को उत्तम प्रकार सिद्ध करें॥३॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

मित्रश्च तुभ्यं वरुणः सहस्वोऽग्ने विश्वे मरुतः सुम्नमर्चन्।

यच्छोचिषा सहसस्पुत्र तिष्ठा अभि क्षितीः प्रथयन्त्सूर्यो नॄन्॥४॥

मित्रः। च। तुभ्यम्। वरुणः। सहस्वः। अग्ने। विश्वे। मरुतः। सुम्नम्। अर्चन्। यत्। शोचिषा। सहसः। पुत्र। तिष्ठाः। अभि। क्षितीः। प्रथयन्। सूर्यः। नॄन्॥४॥

पदार्थः-**(मित्रः)** सखा **(च)** व्यवहारवित् **(तुभ्यम्)** **(वरुणः)** श्रेष्ठः **(सहस्वः)** बहुबलयुक्त **(अग्ने)** अग्निरिव प्रतापवन् **(विश्वे)** सर्वे **(मरुतः)** मनुष्याः **(सुम्नम्)** **(अर्चन्)** प्राप्नुवन्तु **(यत्)** यतः **(शोचिषा)** प्रकाशेन **(सहसः)** बलाय **(पुत्र)** पुत्रवद्वर्त्तमान **(तिष्ठाः)** तिष्ठेः **(अभि)** आभिमुख्ये **(क्षितीः)** मनुष्यान् **(प्रथयन्)** प्रकटीकुर्वन् **(सूर्य्यः)** सवितेव **(नॄन्)** नायकान्॥४॥

अन्वयः-हे सहस्वोऽग्ने! तुभ्यं यौ मित्रो वरुणश्चार्चतस्तौ त्वमर्च। हे सहसस्पुत्र! यद्यतः शोचिषा सूर्य्य इव त्वं यान् क्षितीर्नॄन् प्रथयन् सन्नभितिष्ठास्तस्मात्त्वं विश्वे मरुतः सुम्नमर्चन्॥४॥

भावार्थः-यदि मनुष्या अग्न्यादिपदार्थेभ्यो विद्ययोपकारान् गृह्णीयुस्तर्ह्येते मित्रवत्सुखानि विस्तारयेयुः॥४॥

पदार्थः-हे **(सहस्वः)** अत्यन्त बलधारी **(अग्ने)** अग्नि के सदृश प्रतापयुक्त जन **(तुभ्यम्)** आपके लिये जो **(वरुणः)** श्रेष्ठ **(मित्रः)** प्रेमी **(च)** और व्यवहार ज्ञाता आदर करते हैं तो उनका आप भी आदर करें। हे **(सहसः)** बल के **(पुत्र)** पुत्र के सदृश तेज से विद्यमान! **(यत्)** जिस कारण **(शोचिषा)** प्रकाश से **(सूर्य्यः)** सूर्य के तुल्य आप जिन **(क्षितीः)** मनुष्यों वा **(नॄन्)** मुख्य पुरुषों को **(प्रथयन्)** प्रकट करते हुए **(अभि)** सम्मुख **(तिष्ठाः)** उपस्थित होइये जिससे आपको **(विश्वे)** सम्पूर्ण **(मरुतः)** मनुष्य **(सुम्नम्)** सुखपूर्वक **(अर्चन्)** स्तवन करें॥४॥

भावार्थः-जो मनुष्य अग्नि आदि पदार्थों से विद्या द्वारा उपकार ग्रहण करें तो वे परस्पर मित्रों के तुल्य सुख भोग करें॥४॥

पुनरध्यापकाध्येतृविषयमाह॥

फिर अध्यापक और अध्येता के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

वयं ते अद्य ररिमा हि काममुत्तानहस्ता नमसोपसद्य।

यजिष्ठेन मनसा यक्षि देवानस्रेधता मन्मना विप्रो अग्ने॥५॥

वयम्। ते। अद्य। ररिम। हि। कामम्। उत्तानऽहस्ताः। नमसा। उपऽसद्य। यजिष्ठेन। मनसा। यक्षि। देवान्। अस्रेधता। मन्मना। विप्रः। अग्ने॥५॥

पदार्थः-**(वयम्)** **(ते)** **(अद्य)** इदानीम् **(ररिम)** दद्याम **(हि)** यतः **(कामम्)** **(उत्तानहस्ताः)** उत्थापितकराः **(नमसा)** सत्कारेणान्नादिना वा **(उपसद्य)** समीपं प्राप्य **(यजिष्ठेन)** अतिशयेन सङ्गतेन **(मनसा)** चित्तेन **(यक्षि)** सङ्गच्छसि **(देवान्)** विदुषः **(अस्रेधता)** अक्षीणेन **(मन्मना)** विज्ञानवता **(विप्रः)** मेधावी **(अग्ने)** विद्वन्॥५॥

अन्वयः-हे अग्ने हि विप्रस्त्वं यजिष्ठेनास्रेधता मन्मना मनसा अस्मान् देवान् यक्षि तस्मादद्य उत्तानहस्ता वयं त्वां नमसोपसद्य ते कामं ररिम॥५॥

भावार्थः-यथाऽध्यापकाः शिष्याणां विद्येच्छाः पूरयन्ति तथैव विद्यार्थिनोऽप्यध्यापकानाम-भीष्टानि पूरयन्तु सर्वदा सर्वे विद्यादिशुभगुणानां दातारः स्युः॥५॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वान् पुरुष **(हि)** जिससे **(विप्रः)** बुद्धिमान्! आप **(यजिष्ठेन)** अत्यन्त संलग्न और **(अस्रधेता)** नहीं खिन्न हुए **(मन्मना)** विज्ञान से युक्त **(मनसा)** चित्त से हम **(देवान्)** विद्वानों

का **(यक्षि)** सङ्ग कीजिये उससे **(अद्य)** इस समय **(उत्तानहस्ताः)** हाथ उठाये हुए **(वयम्)** हम लोग आपको **(नमसा)** सत्कार से वा अन्न आदि से **(उपसद्य)** समीप प्राप्त होके **(ते)** आपके **(कामम्)** मनोरथ को **(ररिम)** देवें॥५॥

भावार्थः-जैसे अध्यापक लोग शिष्यों की विद्याविषयिणी इच्छा को सन्तृप्त करते हैं, वैसे ही विद्यार्थी जन भी अध्यापकों के मनोरथों को सफल करें और सब काल में सम्पूर्ण पुरुष विद्या आदि शुभगुणों के देनेवाले होवें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वद्धि पुत्र सहसो वि पूर्वीर्देवस्य यन्त्यूतयो वि वाजाः।
त्वं देहि सहस्रिणं रयिं नोऽद्रोघेण वचसा सत्यमग्ने॥६॥

त्वत्। हि। पुत्र। सहसः। वि। पूर्वीः। देवस्य। यन्ति। ऊतयः। वि। वाजाः। त्वम्। देहि। सहस्रिणम्। रयिम्। नः। अद्रोघेण। वचसा। सत्यम्। अग्ने॥६॥

पदार्थः-**(त्वत्)** तव सकाशात् **(हि)** यतः **(पुत्र)** पवित्रकारक **(सहसः)** बलस्य **(वि)** **(पूर्वीः)** सनातन्यः **(देवस्य)** जगदीश्वरस्य **(यन्ति)** प्राप्नुवन्ति **(ऊतयः)** रक्षणाद्याः **(वि)** **(वाजाः)** विज्ञानान्नयुक्ताः **(त्वम्)** **(देहि)** **(सहस्रिणम्)** सहस्रमसंख्यानि वस्तूनि विद्यन्ते यस्मिँस्तम् **(रयिम्)** श्रियम् **(नः)** अस्मभ्यम् **(अद्रोघेण)** अद्रोहेण निर्वैरेण। अत्र वर्णव्यत्ययेन हस्य घः। **(वचसा)** वचनेन **(सत्यम्)** सत्सु व्यवहारेषु साधुम् **(अग्ने)** पावकद्वर्त्तमान॥६॥

अन्वयः-हे सहसस्पुत्र! हि या देवस्य पूर्वीरूतयो वाजा अस्मान्त्वद्वि यन्ति। हे अग्ने! ततस्त्वमद्रोघेण वचसा नोऽस्मभ्यं सत्यं सहस्रिणं रयिं वि देहि॥६॥

भावार्थः-सर्वैरध्येत्रध्यापकराजपुरुषप्रजाजनैर्द्रोहादिदोषान् विहाय प्रीतिं सम्पाद्य परस्परेषामसंख्यं धनं विज्ञानं च सततमुन्नेयम्॥६॥

पदार्थः-हे **(सहसः)** बल के **(पुत्र)** पवित्रकर्त्ता! **(हि)** जिससे जो **(देवस्य)** जगदीश्वर की **(पूर्वीः)** अति [सनातन] काल से उत्पन्न **(वाजाः)** विज्ञान और अन्नयुक्त **(ऊतयः)** रक्षा आदि क्रिया हम लोगों को **(त्वत्)** आपसे **(वि, यन्ति)** प्राप्त होती हैं। हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश तेजस्वी! उससे **(त्वम्)** आप **(अद्रोघेण)** वैररहित **(वचसा)** वचन से **(नः)** हम लोगों के लिये **(सत्यम्)** उत्तम व्यवहारों में व्यय होने योग्य **(सहस्रिणम्)** असंख्य वस्तुओं से पूरित **(रयिम्)** धन को **(वि, देहि)** दीजिये॥६॥

भावार्थः-सकल शिष्य, अध्यापक, राजपुरुष और प्रजाजनों को चाहिये कि वैर आदि दोषों को त्याग परस्पर स्नेह उत्पन्न करके मेल कर असंख्य धन और विज्ञान परस्पर बढ़ावें॥६॥

अथ विद्वद्वदितर आचरन्त्वित्याह॥

अब विद्वानों के तुल्य अन्य लोग आचरण करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तुभ्यं॑ दक्ष कविक्रतो॒ यानी॒मा देव॒ मर्ता॑सो अध्व॒रे अक॑र्म।

त्वं विश्व॑स्य सु॒रथ॑स्य बोधि॒ सर्वं॒ तद॑ग्ने अमृत स्वदे॒ह॥७॥१४॥

तुभ्य॑म्। द॒क्ष॒। क॒वि॒क्र॒तो॒ इति॑ कविऽक्रतो। यानि॑। इ॒मा। देव॑। मर्ता॑सः। अ॒ध्व॒रे। अक॑र्म। त्वम्। विश्व॑स्य। सु॒ऽरथ॑स्य। बो॒धि॒। सर्व॑म्। तत्। अ॒ग्ने॒। अ॒मृ॒त॒। स्व॒द॒। इ॒ह॥७॥

पदार्थः-(**तुभ्यम्**) (**दक्ष**) अतिचतुर (**कविक्रतो**) कवीनां क्रतुरिव क्रतुः प्रज्ञा यस्य (**यानि**) (**इमा**) (**देव**) दिव्यगुणकर्मस्वभावप्रद (**मर्त्तासः**) मनुष्याः (**अध्वरे**) अहिंसादिलक्षणे यज्ञे (**अकर्म**) कुर्याम (**त्वम्**) (**विश्वस्य**) समग्रस्य (**सुरथस्य**) शोभनानि रथादीन्यङ्गानि यस्मिँस्तस्य विद्याबोधकव्यवहारस्य (**बोधि**) बुध्यस्व (**सर्वम्**) (**तत्**) (**अग्ने**) विद्वन् (**अमृत**) स्वस्वरूपेण नाशरहित (**स्वद**) आस्वादय (**इह**) अस्मिन् संसारे॥७॥

अन्वयः-हे दक्ष कविक्रतो देवाऽमृताऽग्ने विद्वन्! मर्त्तासो वयमध्वरे तुभ्यं यानीमा धर्म्याणि कर्माणीहाऽकर्म तत्सर्वं त्वं विश्वस्य सुरथस्य मध्ये बोधि सुसंस्कृतान्यन्नानि स्वद॥७॥

भावार्थः-सर्वे मनुष्या यथा विद्वांसो धर्म्ययुक्तानि कर्माणि कुर्युस्तथैव कुर्वन्तु सर्वे मिलित्वेह विद्यासुखोन्नतिं सम्पादयेयुरिति॥७॥

अत्राऽग्निविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इति चतुर्दशं सूक्तं चतुर्दशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**दक्ष**) अत्यन्त चतुर (**कविक्रतो**) पण्डितों के तुल्य बुद्धिमान् (**देव**) श्रेष्ठ गुण, कर्म, स्वभावों के देनेवाले (**अमृत**) अपने स्वरूप से नाशरहित (**अग्ने**) विद्वान् पुरुष! (**मर्त्तासः**) हम मनुष्य लोग (**अध्वरे**) अहिंसा आदि रूप धर्म में (**तुभ्यम्**) आपके लिये (**यानि**) जो (**इमा**) ये धर्मसम्बन्धी कर्म उनको (**इह**) इस संसार में (**अकर्म**) करें (**तत्**) उस (**सर्वम्**) सम्पूर्ण कर्म को (**त्वम्**) आप (**विश्वस्य**) सम्पूर्ण (**सुरथस्य**) उत्तम रथ आदि अङ्गों से युक्त विद्याप्रकाशकारक व्यवहार के बीच (**बोधि**) जानिये और उत्तम प्रकार पाक से सिद्ध किये हुए अन्नों को (**स्वद**) स्वादपूर्वक भोग करें॥७॥

भावार्थः-सम्पूर्ण मनुष्यों को चाहिये कि जैसे विद्वान् लोग धर्म योग्य कर्म करें, वैसे वे भी करें और सम्पूर्ण जन एक सम्मति करके इस संसार में विद्या और सुख की उन्नति करें॥७॥

इस सूक्त में अग्नि और विद्वान् के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है यह समझनी चाहिये॥

यह चौदहवां सूक्त और चौदहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ सप्तर्चस्य पञ्चदशस्य सूक्तस्य उत्कील: कात्य ऋषि:। अग्निर्देवता। १, ४ त्रिष्टुप्। ५ विराट् त्रिष्टुप्। ६ निचृत् त्रिष्टुप् छन्द:। धैवत: स्वर:। २ पङ्क्ति:। ३, ७ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्द:। पञ्चम: स्वर:॥

पुनर्विद्वद्भि: किं कार्य्यमित्याह॥

अब तृतीय मण्डल में सात ऋचावाले पन्द्रहवें सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहा है॥

वि पाजसा पृथुना शोशुचानो बाधस्व द्विषो रक्षसो अमीवा:।
सुशर्मणो बृहत: शर्मणि स्यामग्नेरहं सुहवस्य प्रणीतौ॥ १॥

वि। पाजसा। पृथुना। शोशुचान:। बाधस्व। द्विष:। रक्षस:। अमीवा:। सुऽशर्मण:। बृहत:। शर्मणि। स्याम्। अग्ने:। अहम्। सुऽहवस्य। प्रऽनीतौ॥ १॥

पदार्थ:-(**वि**) (**पाजसा**) बलेन (**पृथुना**) विस्तीर्णेन (**शोशुचान:**) भृशं पवित्र: सन् (**बाधस्व**) निवारय (**द्विष:**) वैरिण: (**रक्षस:**) दुष्टस्वभावा: (**अमीवा:**) रोगइवाऽन्यान् पीडयन्त: (**सुशर्मण:**) शोभनानि शर्माणि गृहाणि यस्य तस्य (**बृहत:**) विद्यादिशुभगुणैर्वृद्धस्य (**शर्मणि**) गृहे (**स्याम्**) भवेयम् (**अग्ने:**) पावकस्येव शुभगुणप्रकाशकस्य (**अहम्**) (**सुहवस्य**) सुष्ठु स्तुतस्य विदुष: (**प्रणीतौ**) प्रकृष्टायां नीतौ॥ १॥

अन्वय:-हे विद्वन्! शोशुचानस्त्वं पृथुना पाजसा येऽमीवा इव वर्त्तमानान् रक्षसो द्विषो विबाधस्व यतोऽहं सुहवस्य सुशर्मणो बृहतोऽग्नेस्तव प्रणीतौ शर्मणि स्थिर: स्याम्॥ १॥

भावार्थ:-विद्वद्भि: स्वयं निर्दोषैर्भूत्वाऽन्येषां दोषान्निवार्य्य गुणान् प्रदाय विद्यासुशिक्षायुक्ता: कार्य्या यत: सर्वे पक्षपातरहिते न्याय्ये धर्मे दृढतया प्रवर्तेरन्॥ १॥

पदार्थ:-हे विद्वान् पुरुष! (**शोशुचान:**) अति पवित्र हुए आप (**पृथुना**) विस्तारयुक्त (**पाजसा**) बल से जो (**अमीवा:**) रोग के सदृश औरों को पीड़ा देते हुए (**रक्षस:**) निकृष्ट स्वभाववाले (**द्विष:**) वैरी लोग हैं उनको (**वि**) (**बाधस्व**) त्यागो, जिससे (**अहम्**) मैं (**सुहवस्य**) उत्तम प्रकार प्रशंसित (**सुशर्मण:**) उत्तम गृहों से युक्त (**बृहत:**) विद्या आदि शुभ गुणों से वृद्धभाव को प्राप्त (**अग्ने:**) अग्नि के सदृश उत्तम गुणों के प्रकाशकर्त्ता आपकी (**प्रणीतौ**) श्रेष्ठ नीतियुक्त (**शर्मणि**) गृह में (**स्याम्**) स्थिर होऊं॥ १॥

भावार्थ:-विद्वान् लोगों को चाहिये कि स्वयं दोषरहित हो औरों के दोष छुड़ा और गुण देकर विद्या तथा उत्तम शिक्षा से युक्त करें जिससे कि सकल जन पक्षपातशून्य न्याययुक्त धर्म में दृढ़भाव से प्रवृत्त होवें॥ १॥

पुनर्मनुष्या: किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वं नो॑ अ॒स्या उ॒षसो॒ व्यु॑ष्टौ॒ त्वं सूर॒ उदि॑ते बोधि गो॒पाः।
जन्मे॑व॒ नित्यं॒ तन॑यं जुषस्व॒ स्तोमं॑ मे अग्ने त॒न्वा॑ सुजात॥ २॥

त्वम्। नः॒। अ॒स्याः। उ॒षसः॑। विऽउ॑ष्टौ। त्वम्। सूरे॑। उत्ऽइ॑ते। बो॒धि॒। गो॒पाः। जन्म॑ऽइव। नित्य॑म्। तन॑यम्। जु॒षस्व॒। स्तोम॑म्। मे॒। अ॒ग्ने॒। त॒न्वा॑। सु॒ऽजा॒त॒॥ २॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**नः**) अस्मान् (**अस्याः**) (**उषसः**) प्रभातवेलायाः (**व्युष्टौ**) विशेषेण दाहे (**त्वम्**) (**सूरे**) सूर्य्ये (**उदिते**) प्राप्तोदये (**बोधि**) बुध्यस्व (**गोपाः**) रक्षकः सन् (**जन्मेव**) यथा प्रादुर्भावे कर्म प्रकटयति तथा (**नित्यम्**) (**तनयम्**) पुत्रम् (**जुषस्व**) सेवस्व प्रीणीहि वा (**स्तोमम्**) विद्याप्रशंसाम् (**मे**) मम (**अग्ने**) पावक इव (**तन्वा**) शरीरेण (**सुजात**) सुष्ठु प्रसिद्ध॥ २॥

अन्वयः-हे सुजाताऽग्ने गोपाः विद्वँस्त्वमस्या उषसो व्युष्टौ नो बोधि। त्वं सूर उदितेऽस्मान् बोधि नित्यं तनयं जन्मेव [मे] तन्वा स्तोमं जुषस्व॥ २॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा गर्भाशयस्थिता गर्भा न विज्ञायन्ते तथैव सुप्ता अविद्यायां स्थिताश्च विज्ञानरहिता भवन्ति यथा जन्मानन्तरं सशरीरो जीवः प्रसिद्धिं प्राप्नोति तथैव निद्रां विहाय प्रातरुत्थिता इवाविद्यां हित्वा विद्यायां जागृता भूत्वा प्रशंसां प्राप्नुवन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे (**सुजात**) उत्तम प्रकार प्रसिद्ध (**अग्ने**) अग्नि के सदृश तेजस्वी (**गोपाः**) रक्षाकारक विद्वान् पुरुष! (**त्वम्**) आप (**अस्याः**) इस (**उषसः**) प्रभात समय के (**व्युष्टौ**) अतिप्रकाश होने पर (**नः**) हम लोगों को (**बोधि**) जगाइये (**त्वम्**) आप (**सूरे**) सूर्य्य के (**उदिते**) उदय को प्राप्त होने पर हमको जगाइये (**नित्यम्**) अतिकाल प्राणधारी (**तनयम्**) पुत्र को (**जन्मेव**) जैसे प्रारब्ध कर्म प्रकट करता है, वैसे (**मे**) मेरे (**तन्वा**) शरीर से (**स्तोमम्**) विद्या सम्बन्धिनी प्रशंसा को (**जुषस्व**) आदर कीजिये वा ग्रहण कीजिये॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे गर्भाशय में वर्त्तमान पुरुष गर्भों के स्वरूप को नहीं जानते हैं, वैसे ही निद्रावस्थापन्न और अविद्या में लिप्त पुरुष विज्ञान से रहित होते हैं और जैसे जन्मधारण होने के अनन्तर शरीरसहित जीवात्मा प्रकट होता है, वैसे ही निद्रा को त्याग के प्रातःकाल में जागृत पुरुषों के सदृश अविद्या को त्याग के विद्या में कुशल जन प्रशंसनीय होते हैं॥ २॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वं नृ॒चक्षा॑ वृष॒भानु॒ पू॒र्वीः कृ॒ष्णास्व॑ग्ने अरु॒षो वि भा॑हि।
वसो॒ नेषि॑ च॒ पर्षि॑ चात्यंहः॑ कृ॒धी नो॑ रा॒य उ॒शिजो॑ यविष्ठ॥ ३॥

त्वम्। नृऽचक्षाः। वृषभ। अनु। पूर्वीः। कृष्णासु। अग्ने। अरुषः। वि। भाहि। वसो इति। नेषि। च। पर्षि। च। अति। अंहः। कृधि। नः। राये। उशिजः। यविष्ठ॥३॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**नृचक्षाः**) नृणां सदसत्कर्मद्रष्टा (**वृषभ**) प्राप्तशरीरात्मबल (**अनु**) (**पूर्वीः**) पूर्वेणेश्वरेण कृताः (**कृष्णासु**) निकृष्टवर्णास्वाकर्षितासु प्रजासु (**अग्ने**) पावक इव विद्याप्रकाशयुक्त (**अरुषः**) अहिंसकः सन् (**वि**) (**भाहि**) प्रकाशय (**वसो**) सद्गुणेषु कृतनिवास (**नेषि**) नयसि (**च**) (**पर्षिः**) पालयसि। अत्रोभयत्र विकरणाभावः। (**च**) (**अति**) (**अंहः**) अनिष्टाचरणम् (**कृधि**) कुरु। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**नः**) अस्मान् (**राये**) धनाय (**उशिजः**) कामयमानान् (**यविष्ठ**) अतिशयेन युवन्॥३॥

अन्वयः-हे यविष्ठ वृषभाऽग्ने! त्वं सूर्य्य इवारुषो नृचक्षाः सन् कृष्णास्वनुपूर्वीः प्रजा वि भाहि। हे वसो! यतस्त्वं राय उशिजो नेषि च मनोरथान् पर्षि चांहोऽति नेषि तस्मात्त्वं नोऽस्मानुत्तमान् कृधि॥३॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! युष्माभी रविरिव विद्यासुशिक्षाभ्यां सर्वाः प्रजा विद्याधनाढ्याः कृत्वा पापान्निवार्य्य पुण्ये प्रवर्त्तयितव्याः॥३॥

पदार्थः-हे (**यविष्ठ**) अत्यन्त युवा (**वृषभ**) वीरतायुक्त (**अग्ने**) अग्नि के सदृश विद्या से प्रकाशमान (**त्वम्**) आप सूर्य्य के सदृश (**अरुषः**) रक्षक और (**नृचक्षाः**) मनुष्यों के सत्-असत् कर्म में विवेकी होकर (**कृष्णासु**) अविद्यान्धकारकयुक्त नीच प्रजाओं में (**अनु**) (**पूर्वीः**) प्रथम ईश्वर से प्रकट की गईं प्रजाओं को (**वि**) (**भाहि**) प्रकाशमान कीजिये। हे (**वसो**) उत्तम गुणधारी! जिससे आप (**राये**) धन के लिये (**उशिजः**) कामनाविशिष्ट पुरुषों के योग्य (**नेषि**) प्राप्त कराते (**च**) मनोरथों को पूर्ण (**च**) और (**पर्षि**) दुःखों से रहित तथा (**अंहः**) बुरे आचरण को (**अति**) दूर कीजिये इससे आप (**नः**) हम लोगों को श्रेष्ठ (**कृधि**) कीजिये॥३॥

भावार्थः-हे विद्वान् पुरुषो! आप लोगों को चाहिये कि जैसे सूर्य्य अपने किरणों के द्वारा सब जनों का पालन करता है, वैसे विद्या और उत्तम शिक्षा से सम्पूर्ण प्रजा को विद्या धन से युक्त तथा पाप से निवृत्त करके पुण्य कर्मों में प्रीतिपूर्वक प्रवृत्त करावें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अषाळ्हो अग्ने वृषभो दिदीहि पुरो विश्वाः सौभगा संजिगीवान्।
यज्ञस्य नेता प्रथमस्य पायोर्जातवेदो बृहतः सुप्रणीते॥४॥

अषाळ्हः। अग्ने। वृषभः। दिदीहि। पुरः। विश्वाः। सौभगा। सम्ऽजिगीवान्। यज्ञस्य। नेता। प्रथमस्य। पायोः। जातऽवेदः। बृहतः। सुऽप्रणीते॥४॥

पदार्थः-(**अषाळ्हः**) असहमानः (**अग्ने**) पावक इव वर्त्तमान (**वृषभः**) बलिष्ठः (**दिदीहि**) धर्म्याणि कर्माणि प्रकाशय (**पुरः**) नगरीः (**विश्वाः**) समग्राः (**सौभगा**) सुभगानामैश्वर्याणां सम्बन्धिनीः। अत्र **सुपामि**ति विभक्तेराकारादेशः। (**सञ्जिगीवान्**) सम्यग् विजेता सन् (**यज्ञस्य**) विद्वत्सत्कारादेः (**नेता**) प्रापकः (**प्रथमस्य**) आदिमाश्रमब्रह्मचर्य्यस्य (**पायोः**) रक्षकस्य (**जातवेदः**) जातविद्यः (**बृहतः**) महतः (**सुप्रणीते**) शोभना प्रकृष्टा नीतिर्न्यायो यस्य तत्सम्बुद्धौ॥४॥

अन्वयः-हे सुप्रणीतेऽग्नेऽषाळ्हो विद्वन् वृषभस्त्वं विश्वाः सौभगा पुरो दिदीहि। हे जातवेदो विद्वन्! प्रथमस्य पायोर्बृहतो यज्ञस्य नेता सञ्जिगीवान् भव॥४॥

भावार्थः-हे राजपुरुषा! विद्याविनयाभ्यां सर्वाः प्रजा आनन्द्य ब्रह्मचर्य्यादिाश्रमानुष्ठानेन प्रजासु विद्यासुशिक्षासभ्यतादीर्घायूंषि वर्धयित्वैश्वर्य्याण्युन्नयन्तु॥४॥

पदार्थः-हे (**सुप्रणीते**) उत्कृष्ट न्यायकारी (**अग्ने**) अग्नि के सदृश तेजस्वी (**अषाळ्हः**) दूसरे से नहीं पराजय के योग्य विद्वान् (**वृषभः**) बलवान् पुरुष! आप (**विश्वाः**) सम्पूर्ण (**सौभगा**) उत्तम ऐश्वर्यवाली (**पुरः**) नगरियों में (**दिदीहि**) धर्ममिश्रित कर्मों का प्रकाश कीजिये। हे (**जातवेदः**) सकलविद्यापूरित विद्वन् पुरुष! (**प्रथमस्य**) प्रथमाश्रमब्रह्मचर्य्यरूप (**पायोः**) रक्षाकारक (**बृहतः**) श्रेष्ठ (**यज्ञस्य**) अहिंसा धर्म के (**नेता**) उत्तम रीति से निर्वाहक हुए और (**सञ्जिगीवान्**) उत्तम प्रकार जयशाली होइये॥४॥

भावार्थः-हे राजपुरुषो! विद्या और विनय से सम्पूर्ण प्रजाओं को प्रसन्न तथा ब्रह्मचर्य्य आदि आश्रमों के निर्वाह से उनमें विद्या, उत्तम शिक्षा, श्रेष्ठता अतिकाल जीवन आदि बढ़ाय के ऐश्वर्य्यों का आधिक्य कीजिये॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अच्छिंद्रा शर्म जरितः पुरूणि देवाँ अच्छा दीद्यानः सुमेधाः।
रथो न सस्निरभि वक्षि वाजमग्ने त्वं रोदसी नः सुमेके॥५॥

अच्छिंद्रा। शर्म। जरितरिति। पुरूणि। देवान्। अच्छ। दीद्यानः। सुऽमेधाः। रथः। न। सस्निः। अभि। वक्षि। वाजम्। अग्ने। त्वम्। रोदसी इति। नः। सुमेके इति सुऽमेके॥५॥

पदार्थः-(**अच्छिद्रा**) अच्छिन्नानि (**शर्म**) शर्माणि गृहाणि (**जरितः**) सत्यगुणस्तावक (**पुरूणि**) बहूनि (**देवान्**) विदुषो दिव्यगुणान् वा (**अच्छ**) सुष्ठु। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**दीद्यानः**) प्रकाशमानः प्रकाशयन् वा (**सुमेधाः**) उत्तमप्रज्ञः सन् (**रथः**) उत्तमयानम् (**न**) इव (**सस्निः**) शुद्धः (**अभि**) आभिमुख्ये (**वक्षि**) वदसि (**वाजम्**) विज्ञानम् (**अग्ने**) पावकवद्वर्त्तमान (**त्वम्**) (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**नः**) अस्माकम् (**सुमेके**) सुष्ठु प्रक्षिप्ते॥५॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं यथाऽग्निः सुमेके रोदसी प्रकाशयति तथैव नो दीद्यानः सुमेधाः सस्नी रथो न नोऽस्मभ्यं वाजमभि वक्षि। हे जरितर्विद्वँस्त्वमिच्छद्रा पुरूणि शर्म देवाँश्च कामयमानः सन्नच्छाभि वक्षि॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा शुद्धेन दृढेन रथेनाऽभीष्टं स्थानं सद्यो गच्छन्ति तथैव येऽनलसाः पुरुषार्थिनः शोभनानि स्थानानि कामयमानाः विद्वत्सङ्गेन दिव्यान् गुणान् प्राप्याऽन्यान् प्रत्युपदिशन्ति ते सम्यक् सिद्धसुखा जायन्ते॥५॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश प्रतापी! **(त्वम्)** आप जैसे अग्नि **(सुमेके)** अच्छे प्रकार फैलाये गये **(रोदसी)** अन्तरिक्ष-पृथिवी को प्रकाशित करता है, उसी प्रकार **(नः)** हम लोगों के **(दीद्यानः)** प्रकाशयुक्त वा प्रकाशक **(सुमेधाः)** श्रेष्ठ बुद्धिमान् और **(सस्निः)** सुडौल **(रथः)** उत्तम रथ के **(नः)** सदृश हम लोगों के लिये **(अभि)** सम्मुख **(वाजम्)** विज्ञान को **(वक्षि)** कहिये। हे **(जरितः)** सत्य गुणों की स्तुतिकर्त्ता विद्वान् पुरुष! आप **(अच्छिद्रा)** अति पुष्ट **(पुरूणि)** बहुत **(शर्म)** गृह और **(देवान्)** विद्वान् वा उत्तम गुणों से प्रसन्नतापूर्वक **(अच्छ)** उत्तम प्रकार संयुक्त कीजिये॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे सुडौल बने हुए और दृढ़ रथ से अभिवाञ्छित स्थानों को शीघ्र पहुँचते हैं, वैसे ही जो पुरुष आलस्य त्याग कर पुरुषार्थी हैं, वे उत्तम स्थानों की कामना करते हुए विद्वानों के सङ्ग द्वारा श्रेष्ठ गुणों से संयुक्त होकर अन्य जनों के लिये भी उपदेश देते हैं, वे पुरुष उत्तम प्रकार सुख भोगते हैं॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

प्र पीपय वृषभ जिन्व वाजानग्ने त्वं रोदसी नः सुदोघे।
देवेभिर्देव सुरुचा रुचानो मा नो मर्तस्य दुर्मतिः परि ष्ठात्॥६॥

प्र। पीपय। वृषभ। जिन्व। वाजान्। अग्ने। त्वम्। रोदसी इति। नः। सुदोघे इति सुऽदोघे। देवेभिः। देव। सुऽरुचा। रुचानः। मा। नः। मर्तस्य। दुःऽमतिः। परि। स्थात्॥६॥

पदार्थः-**(प्र)** **(पीपय)** वर्द्धय **(वृषभ)** शरीरात्मबलयुक्त **(जिन्व)** प्रीणीहि **(वाजान्)** विज्ञानवतः **(अग्ने)** पावकवद्वर्त्तमान **(त्वम्)** **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ **(नः)** अस्मभ्यम् **(सुदोघे)** कामानां सुष्ठुप्रपूरिके। अत्र वर्णव्यत्ययेन ह्रस्य घः। **(देवेभिः)** विद्वद्भिः सह **(देव)** दिव्यगुणप्रद **(सुरुचा)** यया सुष्ठु रोचते तया **(रुचानः)** प्रीतिमान् **(मा)** **(नः)** अस्मान् **(मर्त्तस्य)** मनुष्यस्य **(दुर्मतिः)** दुष्टा चासौ मतिश्च **(परि)** सर्वतः **(स्थात्)** तिष्ठेत्॥६॥

अन्वयः-हे वृषभाऽग्ने! त्वं सुदोघे रोदसी सूर्य्य इव वाजान्नोऽस्मभ्यं पीपय। हे देव! त्वं देवेभिः सुरुचा सह रुचानः सन्नोऽस्मान् प्र जिन्व यतो नो मर्त्तस्य दुर्मतिर्मा परि ष्ठात्॥६॥

भावार्थः-यस्मिन्देशे विद्वांसः प्रीत्या सर्वान् वर्धयितुमिच्छन्ति दुष्टां प्रज्ञां विनाशयन्ति तत्र सर्वे प्रबुद्धविज्ञानधना जायन्ते॥६॥

पदार्थः-हे **(वृषभ)** शरीर और आत्मा के बल से युक्त **(अग्ने)** अग्नि के सदृश तेजस्वी! **(त्वम्)** आप जैसे **(सुदोघे)** कामनाओं की उत्तम प्रकार पूर्तिकारक **(रोदसी)** अन्तरिक्ष-पृथिवी को सूर्य्य प्रकाशित और सुखयुक्त करता है, वैसे **(वाजान्)** विज्ञानयुक्त **(नः)** हम लोगों को **(पीपय)** सम्पत्तियुक्त कीजिये। हे **(देव)** उत्तम गुण प्रदाता! आप **(देवेभिः)** विद्वानों के साथ **(सुरुचा)** उत्तम तेज से प्रीतिसहित **(रुचानः)** प्रीतियुक्त हुए **(नः)** हम लोगों को **(प्र)** **(जिन्व)** आनन्दित कीजिये जिससे कि हम लोगों के लिये **(मर्त्तस्य)** मनुष्य सम्बन्धिनी **(दुर्मतिः)** दुष्ट बुद्धि **(मा)** नहीं **(परि)** सब ओर से **(स्थात्)** स्थित हो॥६॥

भावार्थः-जिस देश में विद्वान् लोग प्रीति से सब लोगों को बढ़ाने की इच्छा करते हैं और दुष्ट बुद्धि का नाश करते हैं, वहाँ सब लोग वृद्धि को प्राप्त विज्ञानरूप धनवाले होते हैं॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इळा॑मग्ने पुरु॒दंसं॑ स॒निं गोः श॑श्वत्त॒मं हव॑मानाय साध।

स्यान्नः॑ सू॒नुस्तन॑यो वि॒जावाग्ने॒ सा ते॑ सुम॒तिर्भू॑त्व॒स्मे॥७॥१५॥

इळा॑म्। अग्ने॑। पु॒रु॒ऽदंस॑म्। स॒निम्। गोः। श॒श्व॒त्ऽत॒मम्। हव॑मानाय। सा॒ध॒। स्यात्। नः॒। सू॒नुः। तन॑यः। वि॒जाऽवा॑। अग्ने॑। सा। ते॒। सु॒ऽम॒तिः। भू॒तु॒। अ॒स्मे इति॑॥७॥

पदार्थः-**(इळाम्)** सुशिक्षितां वाचम् **(अग्ने)** पावक इव विद्याप्रकाशक **(पुरुदंसम्)** पुरूणि बहूनि दंसांसि धर्म्याणि कर्माणि यस्य तम् **(सनिम्)** न्यायेन सत्याऽसत्यविभाजकम् **(गोः)** पृथिव्या मध्ये **(शश्वत्तमम्)** अनादिभूतम् **(हवमानाय)** प्रशंसमानाय **(साध)** साध्नुहि **(स्यात्)** भवेत् **(नः)** अस्माकम् **(सूनुः)** सन्तानः **(तनयः)** धार्मिकः पुत्रः **(विजावा)** विजयशीलः। अत्र जी धातोरौणादिको वन् प्रत्ययो बाहुलकादाकारादेशश्च। **(अग्ने)** विद्वन् **(सा)** **(ते)** तव **(सुमतिः)** शोभना प्रज्ञा **(भूतु)** भवतु **(अस्मे)** अस्मासु॥७॥

अन्वयः-हे अग्ने! हवमानाय शश्वत्तमं पुरुदंसमिळां गोः सनिमैश्वर्यं साध येन नः सूनुः तनयः विजावा स्यात्। हे अग्ने! या ते सुमतिरस्ति सास्मे भूतु॥७॥

भावार्थः-विद्वद्भिर्जिज्ञासुभ्यो विद्यां सुशिक्षां धर्मानुष्ठानमैश्वर्यञ्च साधनीयं यथा सर्वेषां कुमारा कुमार्यश्चोत्तमाः स्युस्तथा प्रयत्नोऽनुविधेयः सर्वतो विद्यां गृहीत्वा सर्वेभ्यो देया इति॥७॥

अत्र विद्वदध्यापकाऽध्येत्रग्निगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति पञ्चदशं सूक्तं पञ्चदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थ:-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश विद्याप्रकाशकारक विद्वन्! आप **(हवमानाय)** प्रशंसाकर्त्ता के लिये **(शश्वत्तमम्)** अनादि से उत्पन्न **(पुरुदंसम्)** अत्यन्त धर्मसहित कर्मयुक्त **(इळाम्)** उत्तम शिक्षायुक्त वाणी को **(गो:)** पृथिवी के मध्य में **(सनिम्)** न्याय से सत्य और असत्य के विभागकारक ऐश्वर्य को **(साध)** सिद्ध करिये, जिससे **(न:)** हम लोगों का **(सूनु:)** सन्तान **(तनय:)** धार्मिक पुत्र **(विजावा)** विजयशील **(स्यात्)** हो। हे **(अग्ने)** विद्वन्! जो **(ते)** आपकी **(सुमति:)** उत्तम बुद्धि है **(सा)** वह **(अस्मे)** हम लोगों के लिये **(भूतु)** होवे॥७॥

भावार्थ:-विद्वानों को चाहिये कि जिज्ञासु जनों के लिये विद्या, उत्तम शिक्षा, धर्मानुष्ठान तथा ऐश्वर्यवृद्धि सिद्ध करें और जैसे कि सम्पूर्ण मनुष्यों के लड़के-लड़कियाँ उत्तम कर्मयुक्त तथा सबके सन्तान विद्याबलयुक्त होवें, ऐसे प्रयत्न करें अर्थात् सब स्थान से विद्या ग्रहण करके सबको देवें॥७॥

इस सूक्त में विद्वान्, अध्यापक, अध्येता और अग्नि के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह पन्द्रहवां सूक्त और पन्द्रहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ षड्चस्य षोडशस्य सूक्तस्य उत्कील: कात्य ऋषि:। अग्निर्देवता। १, ५ भुरिगनुष्टुप् छन्द:। गान्धार: स्वर:। २, ६ निचृत् पङ्क्तिश्छन्द:। पञ्चम: स्वर:। ३ निचृदबृहती। ४ भुरिग्बृहती छन्द:। मध्यम: स्वर:॥

अथाऽग्निगुणानाह॥

अब छ: ऋचावाले सोलहवें सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में अग्नि के गुणों को कहते हैं॥

अयमग्नि: सुवीर्यस्येशे मह: सौभगस्य।
राय ईशे स्वपत्यस्य गोमत ईशे वृत्रहथानाम्॥ १॥

अयम्। अग्नि:। सुऽवीर्यस्य। ईशे। मह:। सौभगस्य। राय:। ईशे। सुऽअपत्यस्य। गोऽमत:। ईशे। वृत्रऽहथानाम्॥ १॥

पदार्थ:-**(अयम्) (अग्नि:)** अग्निरिव वर्त्तमानो राजा **(सुवीर्य्यस्य)** सुष्ठु बलस्य **(ईशे)** ईष्टे **(मह:)** महत: **(सौभगस्य)** श्रेष्ठैश्वर्य्यस्य **(राय:) (ईशे) (स्वपत्यस्य)** शोभनान्यपत्यानि यस्य तस्य **(गोमत:)** शोभना वाग् पृथिव्यादयो वा विद्यन्ते यस्य तस्य **(ईशे)** ईष्टे। अत्र सर्वत्रैकपक्षे **लोपस्त आत्मने[पदे]ष्वि**ति तलोपोऽन्यत्रोत्तमपुरुषस्यैकवचनम्। **(वृत्रहथानाम्)** वृत्रा मेघा इव वर्त्तमाना: शत्रवो हथा हता यैस्तेषाम्॥ १॥

अन्वय:-यथा वृत्रहथानां मध्येऽयमग्निर्मह: सुवीर्य्यस्येशे सौभगस्य राय ईशे गोमत: स्वपत्यस्येशे तथाऽहमेतेषामेनस ईशे॥ १॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। मनुष्या यथा सुसाधितेनाग्निनोत्तमं बलं महदैश्वर्य्यमुत्तमान्यपत्यानि च लब्ध्वा शत्रून् विनाशयन्ति तथैव मनुष्या: सुपुरुषार्थेनोत्तमं सैन्यमतुलमैश्वर्य्यं शरीरात्मबलयुक्तान् सन्तानान् प्राप्य शत्रुवद्दोषान् घ्नन्तु॥ १॥

पदार्थ:-जैसे **(वृत्रहथानाम्)** मेघ के सदृश वर्त्तमान शत्रुओं के हननकारियों के मध्य में **(अयम्)** यह **(अग्नि:)** अग्नि के सदृश प्रकाशमान राजा **(मह:)** श्रेष्ठ **(सुवीर्य्यस्य)** उत्तम बल का **(ईशे)** स्वामी तथा **(सौभगस्य)** श्रेष्ठ ऐश्वर्यभाव और **(राय:)** धन का **(ईशे)** स्वामी है **(गोमत:)** उत्तम वाणी तथा पृथिवी आदि युक्त पुरुष का स्वामी है **(स्वपत्यस्य)** उत्तम सन्तान युक्त पुरुष का स्वामी है, वैसे ही मैं इन पुरुषों के मध्य में दोष का **(ईशे)** स्वामी हूँ॥ १॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्य लोग जैसे उत्तम प्रकार होम तथा यन्त्र आदि से सिद्ध किये हुए अग्नि से उत्तम बल, श्रेष्ठ ऐश्वर्य और उत्तम सन्तानों को प्राप्त होके शत्रु लोगों का नाश करते, वैसे ही मनुष्य लोगों को चाहिये कि उत्तम पुरुषार्थ से उत्तम सेना, अतुल ऐश्वर्य, शरीर आत्मा बल से युक्त सन्तानों को प्राप्त होकर शत्रुओं के समान क्रोध आदि दोषों को त्यागें॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इमं नरो मरुतः सश्चता वृधं यस्मिन् रायः शेवृधासः।

अभि ये सन्ति पृतनासु दूढ्यो विश्वाहा शत्रुमादभुः॥ २॥

इमम्। नरः। मरुतः। सश्चत। वृधम्। यस्मिन्। रायः। शेऽवृधासः। अभि। ये। सन्ति। पृतनासु। दुःऽध्यः। विश्वाहा। शत्रुम्। आऽदभुः॥ २॥

पदार्थः-**(इमम्)** **(नरः)** विद्याविनयनेतारः **(मरुतः)** वायव इव मनुष्याः **(सश्चत)** प्राप्नुत। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(वृधम्)** वर्द्धकं व्यवहारम् **(यस्मिन्)** यस्मिन् व्यवहारे **(रायः)** श्रियः **(शेवृधासः)** शेवृन् सुखानि दधति येभ्यस्ते **(अभि)** **(ये)** **(सन्ति)** **(पृतनासु)** मनुष्यसेनासु **(दूढ्यः)** दुःखेन ध्यातुं योग्यान् **(विश्वाहा)** सर्वाण्यहानि **(शत्रुम्)** **(आदभुः)** समन्ताद्धिंसन्तु॥ २॥

अन्वयः-हे मरुतो नरो! यूयं यस्मिञ्छेवृधासो रायः सन्ति तमिमं वृधं विश्वाहा सश्चत। ये पृतनासु दूढ्यः सन्ति शत्रुमादभुस्तानभि सश्चत॥ २॥

भावार्थः-राजपुरुषैर्यथा धनराजसत्ताप्रतिष्ठा वर्धेरन् यथा च सेनासूत्तमा वीरा जायेरन् तथा सत्यव्यवहारः सदाऽनुष्ठेयः॥ २॥

पदार्थः-हे **(मरुतः)** वायु के सदृश बलयुक्त मनुष्यो! **(नरः)** विद्या और नम्रता के नायक आप लोग **(यस्मिन्)** जिस व्यवहार में **(शेवृधासः)** सुखवृद्धिकारक **(रायः)** धन **(सन्ति)** होते हैं, उस **(इमम्)** इस **(वृधम्)** पुत्र आदि के वृद्धिकारक व्यवहार को **(विश्वाहा)** सर्वदा **(सश्चत)** प्राप्त करो **(ये)** जो **(पृतनासु)** मनुष्यों की सेनाओं में **(दूढ्यः)** कठिनता से पराजित होनेयोग्य पुरुष हैं ऐसे और **(शत्रुम्)** शत्रु को **(आदभुः)** सब ओर से नाश करें, उन पुरुषों को **(अभि)** सब प्रकार प्राप्त होओ॥ २॥

भावार्थः-राजपुरुषों को चाहिये कि जिस प्रकार धन, राजस्थिति और प्रतिष्ठा बढ़े और जिस प्रकार सेनाओं में उत्तम वीर पुरुष होवें, वैसा सत्य व्यवहार सदा करें॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स त्वं नो रायः शिशीहि मीढ्वो अग्ने सुवीर्यस्य।

तुविद्युम्न वर्षिष्ठस्य प्रजावतोऽनमीवस्य शुष्मिणः॥ ३॥

सः। त्वम्। नः। रायः। शिशीहि। मीढ्वः। अग्ने। सुऽवीर्यस्य। तुविऽद्युम्न। वर्षिष्ठस्य। प्रजाऽवतः। अनमीवस्य। शुष्मिणः॥ ३॥

पदार्थः-(**सः**) (**त्वम्**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**रायः**) धनानि (**शिशीहि**) तीव्रान् सम्पादय (**मीढ्वः**) सुखानां सेचकः (**अग्ने**) पावकवद्वर्त्तमान (**सुवीर्यस्य**) शोभनेषु वीरेषु भवस्य (**तुविद्युम्न**) तुविर्बहुविधं धनं यशो वा यस्य (**वर्षिष्ठस्य**) अतिशयेन वृद्धस्य (**प्रजावतः**) बह्व्यः प्रजा विद्यन्ते यस्य तस्य (**अनमीवस्य**) नीरोगस्य (**शुष्मिणः**) बहुबलयुक्तस्य॥३॥

अन्वयः-हे मीढ्वस्तुविद्युम्नाग्ने! स त्वं नः सुवीर्य्यस्य वर्षिष्ठस्य प्रजावतोऽनमीवस्य शुष्मिणो रायः शिशीहि॥३॥

भावार्थः-ये मनुष्या धनेन सैन्यं श्रेष्ठतां प्रजामारोग्यं बलं च वर्धयन्ति ते सर्वदाऽग्रश्रियो भवन्ति॥३॥

पदार्थः-हे (**मीढ्वः**) सुखों के दाता (**तुविद्युम्न**) बहुत प्रकार के धन वा यश से युक्त (**अग्ने**) अग्नि के समान तेजोवान्! (**सः**) वह (**त्वम्**) आप (**नः**) हम लोगों के लिये (**सुवीर्य्यस्य**) उत्तम वीरों से उत्पन्न (**वर्षिष्ठस्य**) अति वृद्ध और (**प्रजावतः**) अत्यन्त प्रजायुक्त (**अनमीवस्य**) रोगरहित (**शुष्मिणः**) अत्यन्त बलसहित पुरुष के (**रायः**) धनों को (**शिशीहि**) अति बढ़ाइये॥३॥

भावार्थः-जो मनुष्य धन से सेना, श्रेष्ठता, प्रजा, आरोग्य और बल को बढ़ाते हैं, वे लोग सर्वदा बहुत धनवाले होते हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

चक्रिर्यो विश्वा भुवनाभि सासहिश्चक्रिर्देवेष्वा दुवः।
आ देवेषु यतत आ सुवीर्य आ शंस उत नृणाम्॥४॥

चक्रिः। यः। विश्वा। भुवना। अभि। ससहिः। चक्रिः। देवेषु। आ। दुवः। आ। देवेषु। यतते। आ। सुऽवीर्ये। आ। शंसे। उत। नृणाम्॥४॥

पदार्थः-(**चक्रिः**) यः करोति सः (**यः**) (**विश्वा**) सर्वाणि (**भुवना**) भवन्ति येषु तानि भुवनानि (**अभि**) (**सासहिः**) अतिशयेन सोढा (**चक्रिः**) कर्त्तुं शीलः (**देवेषु**) दिव्यगुणेषु (**आ**) (**दुवः**) परिचरणं सेवनम् (**आ**) (**देवेषु**) प्रशंसकेषु (**यतते**) साध्नोति (**आ**) (**सुवीर्य्ये**) शोभने बले (**आ**) (**शंसे**) स्तुतौ (**उत**) (**नृणाम्**) वीरजनानाम्॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो विश्वा भुवनाऽभिचक्रिर्देवेषु सासहिर्दुवरा चक्रिर्देवेष्वा यतत उतापि नृणामाशंसे सुवीर्य्य आ यतते तं सदा सेवध्वम्॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येन सर्वे लोका निर्मिता मनुष्यादयः प्राणिनस्तेषां निर्वाहायान्नादयः पदार्था रचिता यो विद्वद्भिर्वेद्यस्तस्यैव परमात्मनः सेवनं सततं कर्त्तव्यम्॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(विश्वा)** सम्पूर्ण **(भुवना)** लोकों का **(अभि, चक्रिः)** अभिमुख कर्त्ता **(देवेषु)** उत्तम गुणों में **(सासहिः)** अति सहनशील और **(दुवः)** सेवन को **(आ, चक्रिः)** अच्छे प्रकार करनेवाला और जो **(देवेषु)** स्तुतिकारकों में **(आ) (यतते)** अच्छा यत्न करता है **(उत)** और भी **(नृणाम्)** वीर पुरुषों की **(आ) (शंसे)** स्तुति में **(सुवीर्ये)** श्रेष्ठ बल में **(आ)** सब प्रकार प्रयत्न करता है, उसकी सदा **(सेवध्वम्)** सेवा करो॥४॥

भावार्थः-**[**हे मनुष्यो!**]** जिसने सम्पूर्ण लोक तथा मनुष्य आदि प्राणी रचे और उन प्राणियों के जीवनार्थ अन्न आदि पदार्थ रचे और जो विद्वानों से जानने योग्य उस ही परमात्मा का निरन्तर सेवन करना चाहिये॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

मा नो॑ अ॒ग्नेऽम॑तये॒ मावीर॑तायै रीरधः।

मागोता॑यै सहसस्पुत्र॒ मा नि॒देऽप॒ द्वेषां॒स्या कृ॑धि॥५॥

मा। नः॒। अ॒ग्ने॒। अम॑तये। मा। अ॒वीर॑तायै॒ री॒र॒धः॒। मा। अ॒गोता॑यै। स॒ह॒सः॒। पु॒त्र॒। मा। नि॒दे। अप॑। द्वेषां॑सि। आ। कृ॒धि॒॥५॥

पदार्थः-**(मा)** निषेधे **(नः)** अस्माकम् **(अग्ने)** विद्वन् **(अमतये)** विरुद्धप्रज्ञायै **(मा) (अवीरतायै)** कातरतायै **(रीरधः)** रध्याः हिंस्याः **(मा) (अगोतायै)** इन्द्रियविकलतायै **(सहसः)** बलस्य **(पुत्र)** पालक **(मा) (निदे)** निन्दकाय **(अप)** दूरीकरणे **(द्वेषांसि) (आ) (कृधि)** समन्तात् कुर्याः॥५॥

अन्वयः-हे सहसस्पुत्राऽग्ने! त्वं नोऽमतये मा रीरधोऽवीरतायै मा रीरधोऽगोतायै मा रीरधो निदे द्वेषांसि माऽपाकृधि॥५॥

भावार्थः-जिज्ञासुभिर्विदुषः प्राप्य प्रज्ञा वीरता जितेन्द्रियता विद्या सुशिक्षा धर्मो ब्रह्मज्ञानं च याचनीयम्। निन्दादिदोषान् निन्दकसङ्गं च विहाय सभ्यता संग्राह्या॥५॥

पदार्थः-हे **(सहसः)** बल के **(पुत्र)** पालक **(अग्ने)** विद्वन् पुरुष! आप **(नः)** हम लोगों की **(अमतये)** विपरीत बुद्धि के लिये **(मा)** नहीं **(रीरधः)** वश में करो तथा **(अवीरतायै)** कायरता के लिये **(मा)** नहीं वशीभूत करो **(अगोतायै)** इन्द्रिय-विकारता के लिये **(मा)** नहीं वशीभूत करो **(निदे)** निन्दक पुरुष के लिये **(द्वेषांसि)** द्वेष भावों को **(मा)** नहीं **(अप)** अलग करने में **(आ) (कृधि)** सब प्रकार कीजिये॥५॥

भावार्थः-ज्ञान सुख की इच्छा करनेवाले पुरुषों को चाहिये कि विद्वानों के समीप प्राप्त होकर बुद्धि, वीरता, जितेन्द्रियता, विद्या, उत्तम शिक्षा, धर्म और ब्रह्मज्ञान की प्रार्थना करें तथा निन्दा आदि दोष

और निन्दक पुरुषों का सङ्ग त्याग के सभ्यता ग्रहण करें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

शग्धि वाजस्य सुभग प्रजावतोऽग्ने बृहतो अध्वरे।
सं राया भूयसा सृज मयोभुना तुविद्युम्न यशस्वता॥६॥१६॥

शग्धि। वाजस्य। सुऽभग। प्रजाऽवतः। अग्ने। बृहतः। अध्वरे। सम्। राया। भूयसा। सृज। मयःऽभुना। तुविऽद्युम्न। यशस्वता॥६॥

पदार्थः-(**शग्धि**) शक्नुहि (**वाजस्य**) अन्नादेर्विज्ञानस्य वा (**सुभग**) प्राप्तोत्तमैश्वर्य्य (**प्रजावतः**) प्रशस्ताः प्रजा विद्यन्ते यस्मिंस्तस्य (**अग्ने**) विद्वन् (**बृहतः**) महतः (**अध्वरे**) अहिंसादिलक्षणे व्यवहारे (**सम्**) सम्यक् (**राया**) धनेन (**भूयसा**) बहुना (**सृज**) (**मयोभुना**) यो मयांसि सुखानि भावयति तेन (**तुविद्युम्न**) बहुधनकीर्तियुक्त (**यशस्वता**) बहुयशो विद्यते यस्मिंस्तेन॥६॥

अन्वयः-हे तुविद्युम्न सुभगाऽग्ने! त्वं प्रजावतो बृहतो वाजस्याध्वरे शग्धि तेन भूयसा मयोभुना यशस्वता राया संसृज अस्मान् संसर्जय॥६॥

भावार्थः-मनुष्यैर्विदुषां सङ्गेनेयम्प्रार्थना कार्य्या। हे विद्वांसोऽस्मान् विद्याविनयनधनसुखैः सह संयोजयतेति॥६॥

अत्राऽग्निविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षोडशं सूक्तं षोडशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**तुविद्युम्न**) बहुत धन और कीर्ति से युक्त (**सुभग**) उत्तम ऐश्वर्य्यधारी (**अग्ने**) विद्वान् पुरुष! आप (**प्रजावतः**) प्रशंसा करने योग्य प्रजायुक्त (**बृहतः**) श्रेष्ठ (**वाजस्य**) अन्न आदि वा विज्ञान के (**अध्वरे**) अहिंसा आदि स्वरूप व्यवहार में (**शग्धि**) सामर्थ्य स्वरूप हो उस (**भूयसा**) बड़े (**मयोभुना**) सुखकारक (**यशस्वता**) अधिक यशसहित (**राया**) धन से हमको (**संसृज**) संयुक्त कीजिये॥६॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि विद्वानों के सङ्ग से यह प्रार्थना करें कि हे विद्वानो! हम लोगों को विद्या, विनय और धन सुखों से संयुक्त करो॥६॥

इस सूक्त में अग्नि और विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह सोलहवां सूक्त और सोलहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्य सप्तदशस्य सूक्तस्य उत्कील: कात्य ऋषि:। अग्निर्देवता। १, २ त्रिष्टुप्। ४ विराट् त्रिष्टुप्। ५ निचृत् त्रिष्टुप् छन्द:। धैवत: स्वर:। ३ निचृत् पङ्क्तिश्छन्द:। पञ्चम: स्वर:॥

अथाग्निगुणानाह॥

अब पाँच ऋचावाले सत्रहवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में अग्नि के गुणों को कहते हैं॥

स॒मि॒ध्यमा॑न: प्रथ॒मानु॒ धर्मा॒ सम॒क्तुभि॑रज्यते वि॒श्ववा॑र:।

शो॒चिष्के॑शो घृतनि॑र्णिक् पाव॒क: सु॑य॒ज्ञो अ॒ग्निर्य॒जथा॑य दे॒वान्॥ १॥

स॒म्ऽइ॒ध्यमा॑न:। प्र॒थ॒मा। अनु॑। धर्मा॑। सम्। अ॒क्तुऽभि॑:। अ॒ज्य॒ते॒। वि॒श्वऽवा॑र:। शो॒चि:ऽके॑श:। घृ॒तऽनि॑र्निक्। पा॒व॒क:। सु॒ऽय॒ज्ञ:। अ॒ग्नि:। य॒जथा॑य। दे॒वान्॥ १॥

पदार्थ:-(**समिध्यमान:**) सम्यक् प्रदीप्यमान: (**प्रथमा**) प्रख्यातानि (**अनु**) (**धर्म**) धर्माणि। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घ:। (**सम्, अक्तुभि:**) सम्यक् रात्रिभि: (**अज्यते**) प्रक्षिप्यते (**विश्ववार:**) यो विश्वं वृणोति (**शोचिष्केश:**) शोचींषि तेजांसि इव केशा यस्य स: (**घृतनिर्णिक्**) यो घृतेन निर्णेक्ति स: (**पावक:**) पवित्रकर्त्ता (**सुयज्ञ:**) शोभना यज्ञा यस्मात् स: (**अग्नि:**) पावक: (**यजथाय**) सङ्गमनाय (**देवान्**) दिव्यान् गुणान्॥ १॥

अन्वय:-हे मनुष्या! य: समिध्यमानो विश्ववार: शोचिष्केशो घृतनिर्णिक् पावक: सुयज्ञोऽग्नि: समक्तुभिर्यजथाय प्रथमा धर्माज्यते देवाननुगमयति तं संप्रयुङ्ग्ध्वम्॥ १॥

भावार्थ:-यदि पुष्कलगुणयुक्तेनाऽग्न्यादिपदार्थेन कार्य्याणि साध्नुयुस्तर्हि किं कार्य्यमसिद्धं भवेत्॥ १॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जो (**समिध्यमान:**) उत्तम प्रकार प्रकाशमान (**विश्ववार:**) सकल जन का प्रिय (**शोचिष्केश:**) तेजरूप केशवान् (**घृतनिर्णिक्**) तेजस्वी (**पावक:**) पवित्रकर्त्ता (**सुयज्ञ:**) सुन्दर यज्ञ जिससे हों, वह अग्नि (**समक्तुभि:**) उत्तम रात्रियों से (**यजथाय**) सङ्ग के लिये (**प्रथमा**) प्रसिद्ध (**धर्म**) धर्मों को (**अज्यते**) उत्तम प्रकार प्रसिद्ध करता तथा (**देवान्**) उत्तम गुणों का (**अनु**) प्रस्तार करता है, उसको अच्छे प्रकार प्रेरणा करो॥ १॥

भावार्थ:-जो अति गुणों से युक्त अग्नि आदि पदार्थ से कार्य्यों को सिद्ध करें तो सम्पूर्ण कार्य्य मनुष्य सिद्ध कर सकते हैं॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यथाय॑जो हो॒त्रम॑ग्ने पृथि॒व्या यथा॑ दि॒वो जा॑तवेदश्चिकि॒त्वान्।

एवानेन हविषा यक्षि देवान् मनुष्वद्यज्ञं प्र तिरेममद्य॥ २॥

यथा। अयजः। होत्रम्। अग्ने। पृथिव्याः। यथा। दिवः। जातऽवेदः। चिकित्वान्। एव। अनेन। हविषा। यक्षि। देवान्। मनुष्वत्। यज्ञम्। प्र। तिर। इमम्। अद्य॥ २॥

पदार्थः-(**यथा**) (**अयजः**) यजेः (**होत्रम्**) हवनाभ्यासम् (**अग्ने**) पावक इव (**पृथिव्याः**) भूमेरन्तरिक्षस्य वा मध्ये (**यथा**) (**दिवः**) प्रकाशस्य (**जातवेदः**) उत्पन्नप्रज्ञ (**चिकित्वान्**) ज्ञानवान् (**एव**) (**अनेन**) (**हविषा**) (**यक्षि**) यजसि। अत्र शपो लुक्। (**देवान्**) विदुषो दिव्यान् पदार्थान् वा (**मनुष्वत्**) मनुष्येण तुल्यम् (**यज्ञम्**) सङ्गतिकरणम् (**प्र**) (**तिर**) विस्तारय (**इमम्**) (**अद्य**) इदानीम्॥ २॥

अन्वयः-हे जातवेदोऽग्ने! यथा त्वं पृथिव्या होत्रमयजो यथा दिवः [**यथा**] चिकित्वान् सन् अनेन हविषैव देवान् यक्ष्यद्येमं यज्ञं प्र तिर तथाहमपि मनुष्वत्कुर्य्याम्॥ २॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये मनुष्या अस्यां सृष्टौ सर्वैः प्राणादिभिः सङ्गन्तव्यं व्यवहारं साध्नुवन्ति ते दिव्यं विज्ञानं प्राप्नुवन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे (**जातवेदः**) उत्तम बुद्धियुक्त (**अग्ने**) अग्नि के सदृश तेजस्वी! (**यथा**) जैसे आप (**पृथिव्याः**) भूमि वा अन्तरिक्ष के मध्य में (**होत्रम्**) हवन करने के अभ्यास को (**अयजः**) करें और (**यथा**) जैसे (**दिवः**) प्रकाश के (**यथा**) [जैसे] (**चिकित्वान्**) ज्ञाता पुरुष आप (**अनेन**) इस (**हविषा**) हवन सामग्री से (**एव**) ही (**देवान्**) विद्वानों वा उत्तम पदार्थों का (**यक्षि**) आदर करो (**अद्य**) इस समय (**इमम्**) इस (**यज्ञम्**) सम्मेलन करने को (**प्र**) (**तिर**) विशेष सफल करो, वैसे मैं भी (**मनुष्वत्**) मनुष्य के तुल्य प्रसिद्ध करूं॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्य इस सृष्टि में सम्पूर्ण प्राण आदिकों से भी कार्य्य होने योग्य व्यवहार को सिद्ध करते, वे श्रेष्ठ विज्ञान को प्राप्त होते हैं॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्रीण्यायूंषि तव जातवेदस्तिस्र आजानीरुषसस्ते अग्ने।
ताभिर्देवानामवो यक्षि विद्वानथा भव यजमानाय शं योः॥ ३॥

त्रीणि। आयूंषि। तव। जातऽवेदः। तिस्रः। आऽजानीः। उषसः। ते। अग्ने। ताभिः। देवानाम्। अवः। यक्षि। विद्वान्। अथ। भव। यजमानाय। शम्। योः॥ ३॥

पदार्थः-(**त्रीणि**) त्रिविधानि शरीरात्ममनः सुखकराणि (**आयूंषि**) जीवनानि (**तव**) (**जातवेदः**) जातवित्त (**तिस्रः**) (**आजानीः**) समन्तात्प्रसिद्धाः (**उषसः**) प्रकाशकर्त्र्यो वेलाः (**ते**) तव (**अग्ने**) अग्निरिव वर्त्तमान (**ताभिः**) वेलाभिः (**देवानाम्**) दिव्यानां पदार्थानां विदुषां वा (**अवः**) रक्षणादिकम् (**यक्षि**)

सङ्गच्छसे **(विद्वान्)** सत्यासत्यवेत्ता **(अथ)**। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(भव)** **(यजमानाय)** सङ्गन्त्रे **(शम्)** सुखम् **(योः)** मिश्रयिता भेदको वा॥३॥

अन्वयः-हे जातवेदोऽग्ने विद्वांस्त्वं यथा तेऽग्निर्यजमानाय शङ्करो भवति तथैव तव यानि त्रीण्यायूंषि यथाऽग्नेस्तिस्र आजानीरुषसस्तथा योः सन् यक्ष्यथ ताभिर्देवानामवो विधेहि शङ्करश्च भव॥३॥

भावार्थः-यदि मनुष्या दीर्घेण ब्रह्मचर्येण युक्ताहारविहाराभ्यां जीवनं वर्द्धितुमिच्छेयुस्तर्हि त्रिगुणं त्रीणि शतानि वर्षाणि तावद्धवितुं शक्यमिति विज्ञेयम्॥३॥

पदार्थः-हे **(जातवेदः)** सम्पूर्ण उत्पन्न पदार्थ के ज्ञाता **(अग्ने)** अग्नि के सदृश तेजस्वी और **(विद्वान्)** सत्य-असत्य के ज्ञाता पुरुष! आप जैसे **(ते)** आपका जाना अग्नि **(यजमानाय)** किसी पदार्थ में अग्नि का संयोग करनेवाले के **(शम्)** कल्याणकारक होता है, वैसे **(तव)** आपके जो **(त्रीणि)** तीन प्रकार के शरीर, आत्मा, मन के सुखकारक **(आयूंषि)** जीवन और जैसे अग्नि के सदृश तेजस्वी **(तिस्रः)** तीन **(आजानीः)** सब ओर से प्रसिद्ध **(उषसः)** प्रकाशकारक समय वैसे हो **(योः)** संयोगकारक वा भेदक आप **(यक्षि)** सम्प्राप्त होते **(ताभिः)** उन वेलाओं से **(देवानाम्)** पदार्थों की वा विद्वानों की **(अवः)** रक्षा आदि कीजिये और कल्याण करनेवाले भी **(भव)** हूजिये॥३॥

भावार्थः-जो मनुष्य बहुत काल पर्य्यन्त ब्रह्मचर्य्य, नियत भोजन तथा [आहार-]विहार से आयु बढ़ाने की इच्छा करें तो त्रिगुण अर्थात् तीन सौ वर्ष तक जीवन हो सकता है॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अ॒ग्निं सु॑दी॒तिं सु॒दृशं॑ गृ॒णन्तो॑ नम॒स्याम॒स्त्वेड्यं॑ जातवेदः।

त्वां दू॒तम॑र॒तिं ह॑व्य॒वाहं॑ दे॒वा अ॑कृण्वन्न॒मृत॑स्य॒ नाभि॑म्॥४॥

अ॒ग्निम्। सु॒ऽदी॒तिम्। सु॒ऽदृश॑म्। गृ॒णन्तः॑। न॒म॒स्याम॑ः। त्वा॒। ई॒ड्य॑म्। जा॒त॒ऽवे॒दः॒। त्वाम्। दू॒तम्। अ॒र॒तिम्। ह॒व्य॒ऽवाह॑म्। दे॒वाः। अ॒कृ॒ण्व॒न्। अ॒मृत॑स्य। नाभि॑म्॥४॥

पदार्थः-**(अग्निम्)** पावकमिव विद्वांसम् **(सुदीतिम्)** सुरक्षकम् **(सुदृशम्)** सम्यग् द्रष्टुं योग्यं दर्शकं वा **(गृणन्तः)** स्तुवन्तः **(नमस्याम)** सेवेमहि **(त्वा)** त्वाम् **(ईड्यम्)** प्रशंसितुमर्हम् **(जातवेदः)** जातेषु पदार्थेषु कृतविद्य **(त्वाम्)** **(दूतम्)** दूतमिव परितापकम् **(अरतिम्)** प्रापकम् **(हव्यवाहम्)** हव्यानां पदार्थानां प्रापकम् **(देवाः)** विद्वांसः **(अकृण्वन्)** **(अमृतस्य)** मोक्षस्य **(नाभिम्)** नाभिरिव बन्धकम्॥४॥

अन्वयः-हे जातवेदो! यं त्वा दूतमरतिं हव्यवाहं पावकमिवामृतस्य नाभिं देवा अकृण्वन् तं सुदीतिं सुदृशमीड्यमग्निमिव त्वां गृणन्तः सन्तो वयं नमस्याम॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये पावकवर्चसो विज्ञानप्रदा विद्वांसो धर्मार्थकाममोक्षसाधनान्युपदिशेयुस्तान्नित्यं नमस्कृत्य सेवेयुः॥४॥

पदार्थः-हे **(जातवेदः)** सम्पूर्ण उत्पन्न पदार्थों में प्रसिद्ध विद्वान्! जिन **(त्वा)** आप **(दूतम्)** दूत के समान सन्तापकारी **(अरतिम्)** प्राप्तकारक **(हव्यवाहम्)** हवन करने योग्य पदार्थों को प्राप्त होनेवाले अग्नि के सदृश **(अमृतस्य)** मोक्ष का **(नाभिम्)** नाभि के सदृश बन्धनकर्त्ता **(देवाः)** विद्वान् लोग **(अकृण्वन्)** किया करते हैं उस **(सुदीतिम्)** उत्तम प्रकार रक्षाकारक **(सुदृशम्)** सम्यक् देखने योग्य वा दर्शक और **(ईड्यम्)** प्रशंसा करने योग्य **(अग्निम्)** अग्नि के सदृश तेजस्वी विद्वान् **(त्वाम्)** आपको **(गृणन्तः)** स्तुति करते हुए हम लोग **(नमस्यामः)** नमस्कार करते हैं॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो पुरुष अग्नि के सदृश तेजस्वी, विज्ञानदाता, विद्वान् लोग धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के साधनों का उपदेश दें; उनकी नित्य नमस्कारपूर्वक सेवा करनी चाहिये॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यस्त्वद्धोता पूर्वो अग्ने यजीयान् द्विता च सत्ता स्वधया च शंभुः।

तस्यानु धर्म प्र यजा चिकित्वोऽथा नो धा अध्वरं देववीतौ॥५॥१७॥

यः। त्वत्। होता। पूर्वः। अग्ने। यजीयान्। द्विता। च। सत्ता। स्वधया। च। शम्ऽभुः। तस्य। अनु। धर्म। प्र। यज। चिकित्वः। अथ। नः। धाः। अध्वरम्। देवऽवीतौ॥५॥

पदार्थः-**(यः)** **(त्वत्)** तव सकाशात् **(होता)** दाता **(पूर्वः)** पूर्वविद्यः **(अग्ने)** विद्वन् **(यजीयान्)** अतिशयेन यष्टा सङ्गन्ता **(द्विता)** द्वयोर्भावः **(च)** **(सत्ता)** दत्तः **(स्वधया)** अन्नेन **(च)** **(शम्भुः)** सुखं भावुकः **(तस्य)** **(अनु)** **(धर्म)** धर्त्तव्यम् **(प्र)** **(यज)** सङ्गच्छस्व। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(चिकित्वः)** विज्ञानयुक्त **(अथ)** आनन्तर्य्ये। अत्रापि **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(नः)** अस्माकम् **(धाः)** धेहि **(अध्वरम्)** अहिंसादिगुणयुक्तं व्यवहारम् **(देववीतौ)** देवानां वीतिर्व्याप्तिस्तस्याम्॥३॥

अन्वयः-हे अग्ने! यस्त्वद्धोता पूर्वो यजीयान् द्विता च सत्ता स्वधया च शम्भुर्भवेत्तस्य धर्मानु प्र यजाथ। हे चिकित्वः! संस्त्वं देववीतौ नोऽध्वरं धाः॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये विद्वांसो युष्मत्प्राचीना अन्नादिसामग्रीभिरहिंसाख्यं व्यवहारं धरेयुस्ततस्ते सर्वदा सुखमाप्नुयुरिति॥५॥

अत्राग्निविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इति सप्तदशं सूक्तं सप्तदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वान् पुरुष! जो **(त्वत्)** आपके समीप से **(होता)** दानशील **(पूर्वः)** पूर्व

विद्यावान् **(यजीयान्)** अतिशय यज्ञकारक वा सम्मेलकारी **(द्विता)** द्वित्व स्वरूप **(च)** और **(सत्ता)** स्थित **(स्वधया)** अन्न से **(च)** भी **(शम्भुः)** सुखकारक होवे **(तस्य)** उसके **(धर्म)** धारण करने योग्य को **(अनु)** **(प्र)** **(यज)** सम्प्राप्त होइये **(अथ)** इसके अनन्तर हे **(चिकित्वः)** विज्ञानशाली! आप **(देववीतौ)** विद्वानों के समूह में **(नः)** हम लोगों के **(अध्वरम्)** अहिंसा आदि गुणयुक्त व्यवहार को **(धाः)** धारण करिये॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो विद्वान् लोग आप लोगों की अपेक्षा प्राचीन तथा अन्न आदि सामग्रियों से अहिंसाख्य व्यवहार को धारण किया करें, इससे वे सर्वदा सुख भोगी हों॥५॥

इस सूक्त में अग्नि और विद्वान् के गुणों का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, ऐसा जानना चाहिये॥

यह सत्रहवां सूक्त और सत्रहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्याष्टादशस्य सूक्तस्य कतो वैश्वामित्र ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ३, ५ त्रिष्टुप्। २, ४ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ विद्वद्भिः किं विधेयमित्याह॥

अब इस तृतीय मण्डल में अठारहवें सूक्त का आरम्भ है। उसके पहिले मन्त्र से विद्वानों को क्या करना योग्य है, इस विषय को कहा है॥

भवा॑ नो अग्ने सु॒मना॒ उपे॑तौ सखे॑व॒ सख्ये॑ पि॒तरे॑व सा॒धुः।

पु॒रु॒द्रुहो॒ हि क्षि॒तयो॒ जना॑नां॒ प्रति॑ प्रती॒चीर्दहता॒दरा॑तीः॥ १॥

भव॑। नः॒। अ॒ग्ने॒। सु॒ऽमनाः॑। उप॑ऽइतौ। सखा॑ऽइव। सख्ये॑। पि॒तरा॑ऽइव। सा॒धुः। पु॒रु॒ऽद्रुहः॑। हि। क्षि॒तयः॑। जना॑नाम्। प्रति॑। प्र॒ती॒चीः। द॒ह॒ता॒त्। अरा॑तीः॥ १॥

पदार्थः-(**भव**)। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**नः**) अस्मभ्यम् (**अग्ने**) कृपामय विद्वन् (**सुमनाः**) शोभनं मनो यस्य सः (**उपेतौ**) प्राप्तौ (**सखेव**) मित्रवत् (**सख्ये**) मित्रकर्मणे (**पितरेव**) जनकाविव (**साधुः**) (**पुरुद्रुहः**) ये पुरून् बहून् द्रुह्यन्ति तान् (**हि**) (**क्षितयः**) मनुष्याः (**जनानाम्**) मनुष्याणाम् (**प्रति**) (**प्रतीचीः**) प्रतिकूलं वर्त्तमानाः (**दहतात्**) भस्मीकुरु (**अरातीः**) शत्रून्॥ १॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वमुपेतौ पितरेव सख्ये सखेव नोऽस्मभ्यं सुमना भव साधुः सन् जनानाम्मध्ये ये क्षितयः पुरुद्रुहः स्युस्तान् प्रतीचीररातीर्हि प्रति दहतात्॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! युष्माभिर्ये विद्वांसो मनुष्यादिप्राणिषु पितृवन्मित्रवद् वर्त्तेरँस्तेषां सत्कारं ये द्वेष्टारस्तेषामसत्कारं कृत्वा धर्मो वर्द्धनीयः॥ १॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) कृपारूप विद्वान् पुरुष! आप (**उपेतौ**) प्राप्ति में (**पितरेव**) जनकों के सदृश (**सख्ये**) मित्र कर्म के लिये (**सखेव**) मित्र के तुल्य (**नः**) हम लोगों के लिये (**सुमनाः**) उत्तम मनयुक्त (**भव**) होइये और (**साधुः**) उत्तम उपदेश से कल्याणकारी होकर (**जनानाम्**) मनुष्यों के बीच में जो (**क्षितयः**) मनुष्य (**पुरुद्रुहः**) बहुत लोगों से द्वेषकर्त्ता होवें उन (**प्रतीचीः**) प्रतिकूल वर्त्तमान (**अरातीः**) शत्रुओं को (**प्रति**) (**दहतात्**) भस्म करिये॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! आप लोगों को चाहिये कि जो विद्वान् लोग मनुष्य आदि प्राणियों में पिता और मित्र के तुल्य वर्त्तावकारी उनका सत्कार और जो द्वेषकारी उनका निरादर करके धर्मवृद्धि करें॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तपो॒ ष्व॑ग्ने॒ अन्त॑राँ अ॒मित्रा॒न् तपा॒ शंस॒मर॑रुषः॒ पर॑स्य।

तपो॑ वसो चिकिता॒नो अ॒चित्ता॒न् वि ते॑ तिष्ठन्ताम॒जरा॑ अ॒यासः॑॥ २॥

तपो॒ इति॑। सु। अ॒ग्ने॒। अन्त॑रान्। अ॒मित्रा॑न्। तप॑। शंस॑म्। अर॑रुषः। पर॑स्य। तपो॒ इति॑। वसो॒ इति॑। चि॒कि॒ता॒नः। अ॒चित्ता॑न्। वि। ते। ति॒ष्ठ॒न्ता॒म्। अ॒जरा॑ः। अ॒यासः॑॥ २॥

पदार्थः-(**तपो**) तपस्विन् (**सु**) (**अग्ने**) दुष्टान् प्रति पावकवद्वर्त्तमान (**अन्तरान्**) भिन्नान् (**अमित्रान्**) शत्रून् (**तप**) सन्तापय (**शंसम्**) प्रशंसाम् (**अररुषः**) अहिंसकस्य (**परस्य**) श्रेष्ठस्य (**तपो**) दुष्टानां पुरुषाणां दाहक (**वसो**) यस्सद्गुणेषु वसति तत्सम्बुद्धौ (**चिकितानः**) ज्ञानवान् ज्ञापकः (**अचित्तान्**) प्राप्तदरिद्रावस्थान् (**वि**) (**ते**) तव (**तिष्ठन्ताम्**) (**अजराः**) जरारोगरहिताः (**अयासः**) विज्ञानवन्तः॥ २॥

अन्वयः-हे तपोऽग्ने! त्वमन्तरानमित्रान् सुतप। अररुषः परस्य शंसं विधेहि। हे तपो वसो चिकितानस्त्वमचित्तान् बोधय। एतेऽजरा अयासस्ते समीपे वि तिष्ठन्ताम्॥ २॥

भावार्थः-ये मनुष्याः शत्रून्निवार्य्य धार्मिकानाप्तान् सत्कृत्य सर्वार्थं सुखं वर्द्धयन्ति तेऽपि सुखमाप्नुवन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे (**तपो**) तपस्वी! (**अग्ने**) दुष्ट जनों के अग्नि के सदृश दाहकर्ता! आप (**अन्तरान्**) भेद को प्राप्त (**अमित्रान्**) शत्रुओं को (**सुतप**) सन्तापयुक्त तथा (**अररुषः**) अहिंसायुक्त (**परस्य**) श्रेष्ठ जन की (**शंसम्**) प्रशंसा करो। हे (**तपो**) दुष्ट पुरुषों के दाहकारी (**वसो**) उत्तम गुणों के निवासी (**चिकितानः**) ज्ञानवान् वा बोधकारक आप (**अचित्तान्**) दरिद्र दशायुक्त पुरुषों को सचेत कीजिये और ये (**अजराः**) वृद्धावस्थारूप रोग से रहित (**अयासः**) विज्ञानयुक्त पुरुष (**ते**) आपके समीप (**वि**) (**तिष्ठन्ताम्**) वर्त्तमान हों॥ २॥

भावार्थः-जो मनुष्य शत्रुओं को पृथक् कर धार्मिक, यथार्थवक्ता, सत्यवादी पुरुषों का सत्कार करके, सब जनों के लिये सुखवृद्धि करते हैं, वे भी सुख पाते हैं॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इ॒ध्मेना॑ग्न इ॒च्छमा॑नो घृ॒तेन॑ जुहोमि॑ ह॒व्यं तर॑से॒ बला॑य।

याव॒दीशे॒ ब्रह्म॑णा॒ वन्द॑मान इ॒मां धियं॑ शत॒सेया॑य दे॒वीम्॥ ३॥

इ॒ध्मेन॑। अ॒ग्ने॒। इ॒च्छमा॑नः। घृ॒तेन॑। जु॒होमि॑। ह॒व्यम्। तर॑से। बला॑य। याव॑त्। ईशे॑। ब्रह्म॑णा। वन्द॑मानः। इ॒माम्। धिय॑म्। श॒त॒ऽसेया॑य। दे॒वीम्॥ ३॥

पदार्थः-(**इध्मेन**) समिधेन (**अग्ने**) अग्निरिव प्रदीप्तविद्य (**इच्छमानः**) (**घृतेन**) सुसंस्कृतेनाज्येन (**जुहोमि**) (**हव्यम्**) (**तरसे**) तारकाय (**बलाय**) (**यावत्**) (**ईशे**) इच्छामि (**ब्रह्मणा**) महता धनेन सह

(वन्दमानः) **(इमाम्)** वर्त्तमानाम् **(धियम्)** धारणावतीं प्रज्ञाम् **(शतसेयाय)** शतादिसंख्यापरिमितधनावसानाय **(देवीम्)** देदीप्यमानां विद्वद्भिः कमनीयाम्॥३॥

अन्वयः-हे अग्ने! यथेध्मेन घृतेनेच्छमानोऽहं तरसे बलाय हव्यं जुहोमि ब्रह्मणा वन्दमानः शतसेयायेमां देवीं धियं यावदीशे तथा त्वं जुहुधि तावदीशिष्व॥३॥

भावार्थः-यथेन्धनघृताभ्यामग्निर्वर्द्धते तथैव ब्रह्मचर्य्यवेदाभ्यासाभ्यां बलविद्ये वर्द्धेते यावद्योग्यं तावदेव ब्रह्मचर्य्यं सेवनीयम्॥३॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश प्रकाशित विद्यायुक्त! जैसे **(इध्मेन)** समिध से तथा **(घृतेन)** उत्तम प्रकार के मन्त्रों से संस्कारयुक्त घृत से **(इच्छमानः)** इच्छाकारी मैं **(तरसे)** वेग तथा **(बलाय)** बल के लिये **(हव्यम्)** हवन सामग्री का **(जुहोमि)** होम करता हूँ **(ब्रह्मणा)** अतिशय धन के साथ **(वन्दमानः)** स्तुति से उपासनाकारक मैं **(शतसेयाय)** शत आदि संख्या से पूरित धन प्राप्ति के लिये **(इमाम्)** विद्यमान इस **(देवीम्)** प्रकाशमान **(धियम्)** धारणायोग्य बुद्धि को **(यावत्)** जितने परिणाम से **(ईशे)** इच्छाकारक हूँ, उसी प्रकार आप हवन कीजिये उतनी इच्छा करो॥३॥

भावार्थः-जैसे इन्धन और घृत से अग्नि बढ़ती है, वैसे ही ब्रह्मचर्य्य तथा वेद के अभ्यास से बल और विद्या बढ़ती है, जितना वेद से ब्रह्मचर्य्य रखना योग्य है, उतना अभ्यास करना चाहिये॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उच्छो॒चिषा॑ सहसस्पुत्र स्तु॒तो बृ॒हद्वयः॑ शशमा॒नेषु॑ धेहि।

रे॒वद॑ग्ने वि॒श्वामि॑त्रेषु॒ शं योर्म॑र्मृ॒ज्मा ते॑ त॒न्वं१॒॑ भूरि॒ कृत्वः॑॥४॥

उत्। शो॒चिषा॑। स॒ह॒सः॒। पु॒त्र॒। स्तु॒तः। बृ॒हत्। वयः॑। श॒श॒मा॒नेषु॑। धे॒हि॒। रे॒वत्। अ॒ग्ने॒। वि॒श्वामि॑त्रेषु। शम्। योः। म॒र्मृ॒ज्म। ते॒। त॒न्व॑म्। भूरि॑। कृत्वः॑॥४॥

पदार्थः-**(उत्)** **(शोचिषा)** तेजसा **(सहसः)** **(पुत्र)** बलस्योत्पादक **(स्तुतः)** प्रशंसितः **(बृहत्)** महत् **(वयः)** कमनीयमायुः **(शशमानेषु)** भोगाभ्यासोल्लङ्घनेषु **(धेहि)** **(रेवत्)** प्रशस्तधनयुक्तम् **(अग्ने)** पावकवद्वर्त्तमान वैद्यराज विद्वन् **(विश्वामित्रेषु)** विश्वं मित्रं सुहृद् येषान्तेषु **(शम्)** सुखम् **(योः)** दुःखवियोजकः सुखसंयोजकः **(मर्मृज्मा)** भृशं शुद्धः शोधयिता **(ते)** तव **(तन्वम्)** **(भूरि)** बहु **(कृत्वः)** बहवः कर्त्तारो विद्यन्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ॥४॥

अन्वयः-हे भूरि कृत्वः सहसस्पुत्राग्ने! स्तुतस्त्वं शोचिषा शशमानेषु विश्वामित्रेषु रेवद् बृहद्वयो भूरि शं धेहि। योर्मर्मृज्मा त्वन्ते तन्वमुद्धेहि॥४॥

भावार्थः-हे पुरुषाः! युष्माभिः ब्रह्मचर्य्येण विद्यायुषी वर्द्धयित्वा सर्वैः सह मित्रतां कृत्वा सर्वे दीर्घायुषो बृहद्विद्याः सम्पादनीयाः॥४॥

पदार्थः-हे (**भूरि**) बहुत (**कृत्वः**) पुरुषों से रचित (**सहसस्पुत्र**) बल के उत्पादक (**अग्ने**) अग्नि के सदृश तेजस्वी वैद्यराज विद्वान्! (**स्तुतः**) प्रशंसायुक्त आप (**शोचिषा**) तेज से (**शशमानेषु**) भोग अभ्यास उल्लंघनों तथा (**विश्वामित्रेषु**) सम्पूर्ण जनों के मित्रों में (**रेवत्**) प्रशंसा करने योग्य धन से युक्त (**बृहत्**) अधिक (**वयः**) कामनायोग्य अवस्था और बहुत (**शम्**) सुख को दीजिये (**योः**) दुःख के नाशक और सुख से संयोग करानेवाले (**मर्मृज्मा**) अति पवित्र वा पवित्रकारक आप (**ते**) अपने (**तन्वम्**) शरीर को (**उत्**) (**धेहि**) स्थिर कीजिये॥४॥

भावार्थः-हे पुरुषो! आप लोगों को चाहिये कि ब्रह्मचर्य्य द्वारा विद्या और अवस्था बढ़ा, सब लोगों के साथ मित्रता करके, सकल जनों को अधिक अवस्थायुक्त तथा बहुत विद्यावान् करो॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

कृधि रत्नं सुसनितर्धनानां स घेदग्ने भवसि यत्समिद्धः।
स्तोतुर्दुरोणे सुभगस्य रेवत् सृप्रा करस्ना दधिषे वपूंषि॥५॥१८॥

कृधि। रत्नम्। सुऽसनितः। धनानाम्। सः। घ। इत्। अग्ने। भवसि। यत्। सम्ऽइद्धः। स्तोतुः। दुरोणे। सुऽभगस्य। रेवत्। सृप्रा। करस्ना। दधिषे। वपूंषि॥५॥

पदार्थः-(**कृधि**) कुरु (**रत्नम्**) रमणीयं धनम् (**सुसनितः**) सुष्ठु संविभाजक (**धनानाम्**) सुवर्णादीनाम् (**सः**) (**घ**) एव (**इत्**) इव (**अग्ने**) विद्युद्वद्धनवर्द्धक (**भवसि**) (**यत्**) यः (**समिद्धः**) प्रदीप्तः (**स्तोतुः**) ऋत्विजः प्रशंसकस्य (**दुरोणे**) गृहे (**सुभगस्य**) वरैश्वर्य्यस्य (**रेवत्**) प्रशस्तधनयुक्तम् (**सृप्रा**) सर्प्पन्ति प्राप्नुवन्ति याभ्यां तौ (**करस्ना**) बाहू। **करस्नौ बाहू कर्मणाम्प्रस्नातारौ।** (निरु०६.१७)। (**दधिषे**) धरसि (**वपूंषि**) रूपवन्ति शरीराणि॥५॥

अन्वयः-हे सुसनितरग्ने! यद्यस्त्वं समिद्धोऽग्निरिव सुसमिद्धो भवसि स घ धनानां रत्नं कृधि सुभगस्य स्तोतुरिदद्दुरोणे यौ सृप्रा करस्ना ते भवतस्ताभ्यां रेवद्वपूंषि च दधिषे स त्वमस्माभिः सत्कर्त्तव्योऽसि॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! मनुष्यान् सुशिक्ष्य पुरुषार्थेन संयोज्य विद्याधनयुक्तान् कृत्वा सुसभ्यान् दीर्घायुषः सम्पादयेयुरिति॥५॥

अत्राग्निविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यष्टादशं सूक्तमष्टादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**सुसनितः**) उत्तम प्रकार दानविभागकारी (**अग्ने**) बिजुली के समान शीघ्र धन

वृद्धिकर्त्ता! **(यत्)** जो आप **(समिद्धः)** प्रकाशमान अग्नि के सदृश प्रकाशमान होते **(सः, घ)** सो ही **(धनानाम्)** सुवर्ण आदि रूप धनों में **(रत्नम्)** उत्तम धन को **(कृधि)** संयुक्त कीजिये **(सुभगस्य)** उत्तम ऐश्वर्य्य और **(स्तोतुः)** हवनकर्त्ता वा प्रशंसाकर्त्ता के **(इत्)** समान **(दुरोणे)** गृह में जो **(सृप्रा)** अभीष्टस्थान की प्राप्तिकारक **(करस्ना)** कर्मों की शुद्धिकारक आपके बाहुओं और **(रेवत्)** उत्तम धनयुक्त **(वपूंषि)** रूपवत् शरीरों को **(दधिषे)** धारण करते हो, वह आप हम लोगों से आदर करने योग्य हो॥५॥

भावार्थः–इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे विद्वानो! आप लोगों को चाहिये कि मनुष्यों को उत्तम प्रकार शिक्षा तथा पुरुषार्थ से युक्त और विद्या धनयुक्त करके उत्तम सभ्य चिरञ्जीवी जन बनाइये॥५॥

इस सूक्त में विद्वान् और अग्नि के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह अठारहवां सूक्त और अठारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्यैकोनविंशस्य सूक्तस्य कुशिकपुत्रो गाथी ऋषिः। अग्निर्देवता। १ त्रिष्टुप्। २, ४, ५ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ३ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ मनुष्याणां धनाद्यैश्वर्यं कथं वर्धेतेत्याह॥

अब इस तृतीय मण्डल में १९ उन्नीसवें सूक्त का प्रारम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में मनुष्यों का धनादि ऐश्वर्य्य कैसे बढ़े, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अ॒ग्निं होता॑रं॒ प्र वृ॑णे मि॒येधे॒ गृत्सं॑ क॒विं वि॑श्व॒विद॒ममू॑रम्।
स नो॑ यक्षद्दे॒वता॑ता॒ यजी॑यान् रा॒ये वाजा॑य वनते म॒घानि॑॥ १॥

अ॒ग्निम्। होता॑रम्। प्र। वृ॒णे॒। मि॒येधे॑। गृत्स॑म्। क॒विम्। वि॒श्व॒ऽविद॑म्। अमू॑रम्। सः। नः॒। य॒क्ष॒त्। दे॒वऽता॑ता। यजी॑यान्। रा॒ये। वाजा॑य। व॒न॒ते॒। म॒घानि॑॥ १॥

पदार्थः-(**अग्निम्**) पावक इव वर्त्तमानम् (**होतारम्**) हवनकर्त्तारं दातारम् (**प्र**) (**वृणे**) स्वीकरोमि। (**मियेधे**) घृतादिप्रक्षेपणेन प्रशंसनीये यज्ञे (**गृत्सम्**) यो गृणाति तं मेधाविनम् (**कविम्**) क्रान्तप्रज्ञं बहुशास्त्राऽध्यापकम् (**विश्वविदम्**) यो विश्वानि सर्वाणि शास्त्राणि वेत्ति तम् (**अमूरम्**) मूढतादिदोषरहितम्। अत्र वर्णव्यत्ययेन ढस्य रः। (**सः**) (**नः**) अस्मान् (**यक्षत्**) सङ्गमयेत् (**देवताता**) देवान् विदुषः (**यजीयान्**) अतिशयेन यष्टा (**राये**) धनप्राप्तये (**वाजाय**) विज्ञानप्रदाय (**वनते**) संभजमानाय (**मघानि**) पूजितव्यानि धनानि॥ १॥

अन्वयः-हे विद्वन्नहं यं मियेधे होतारं विश्वविदममूरं कविं गृत्समग्निं प्रवृणे स यजीयाँस्त्वं वाजाय वनते राये मघानि देवताता नोऽस्मान् यक्षत्॥ १॥

भावार्थः-मनुष्यैर्यस्मिन्नधिकारे यस्य योग्यता भवेत् तस्मा एव सोऽधिकारो देयः। एवं सति धनधान्यैश्वर्य्यं प्रवृद्धं भवितुं शक्यम्॥ १॥

पदार्थः-हे विद्वान् पुरुष! मैं जिस (**मियेधे**) घृतादि के प्रक्षेपण से होने योग्य यज्ञ में (**होतारम्**) हवनकर्त्ता वा दाता (**विश्वविदम्**) सकल शास्त्रों के वेत्ता (**अमूरम्**) मूढ़ता आदि दोषरहित (**कविम्**) तीक्ष्ण बुद्धियुक्त वा बहुत शास्त्रों के अध्यापक (**गृत्सम्**) शिक्षा देने में चतुर बुद्धिमान् और (**अग्निम्**) अग्नि के सदृश तेजस्वी पुरुष को (**प्र**) (**वृणे**) स्वीकार करता हूँ (**सः**) वह (**यजीयान्**) अत्यन्त यज्ञकर्त्ता आप (**वाजाय**) ज्ञानदाता और (**वनते**) प्रसन्नता से दिये पदार्थों के स्वीकारकर्त्ता पुरुष के लिये तथा (**राये**) धन प्राप्ति के लिये (**मघानि**) आदर करने योग्य धन और (**देवताता**) विद्वानों को (**नः**) हम लोगों के लिये (**यक्षत्**) संयुक्त कीजिये॥ १॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि जिस अधिकार में जिस पुरुष की योग्यता हो उसी ही के लिये वह अधिकार देवें, क्योंकि ऐसा करने पर धनधान्यरूप ऐश्वर्य्य की वृद्धि हो सकती है॥ १॥

पुनर्मनुष्यैः किं कार्यमित्याह॥

फिर मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

प्र ते॑ अग्ने ह॒विष्म॑तीमि॒यर्म्यच्छा॑ सुद्यु॒म्नां रा॒तिनीं॑ घृ॒ताची॑म्।

प्र॒द॒क्षि॒णिद् दे॒वता॑तिमुरा॒णः सं रा॒तिभि॒र्वसु॑भिर्य॒ज्ञम॑श्रेत्॥ २॥

प्र। ते॒। अ॒ग्ने॒। ह॒विष्म॑तीम्। इ॒यर्मि॑। अच्छ॑। सु॒द्यु॒म्नाम्। रा॒तिनी॑म्। घृ॒ताची॑म्। प्र॒ऽद॒क्षि॒णित्। दे॒वऽता॑तिम्। उ॒रा॒णः। सम्। रा॒तिऽभिः॑। वसु॑ऽभिः। य॒ज्ञम्। अ॒श्रे॒त्॥ २॥

पदार्थः-(**प्र**) (**ते**) तव (**अग्ने**) पावकवद्वर्त्तमान (**हविष्मतीम्**) बहूनि हवींषि विद्यन्ते यस्यान्ताम् (**इयर्मि**) प्राप्नोमि (**अच्छ**) उत्तमरीत्या। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**सुद्युम्नाम्**) शोभनप्रकाशयुक्ताम् (**रातिनीम्**) रातानि दत्तानि विद्यन्ते यस्यां ताम् (**घृताचीम्**) या घृतमुदकमञ्चति प्राप्नोति तां रात्रीम्। **घृताचीति रात्रिनामसु पठितम्।** (निघं०१.१)। (**प्रदक्षिणित्**) प्रदक्षिणमेति गच्छति सः। अत्रेण् धातोः क्विप् **छान्दसो वर्णलोपो वेत्यन्तस्याकारलोपः।** (**देवतातिम्**) दिव्यस्वरूपाम् (**उराणः**) य उरु बह्वनिति स उराणः। अत्र वर्णव्यत्ययेनोकारस्य स्थानेऽकारः। (**सम्**) (**रातिभिः**) सुखदानादिभिः (**वसुभिः**) वासहेतुभिः सह (**यज्ञम्**) सुषुप्त्यादिसङ्गतं व्यवहारम् (**अश्रेत्**) आश्रयेत्। अत्र शपो लुक्॥ २॥

अन्वयः-हे अग्ने विद्वन्नहं ते तव शिक्षया यथोराणः प्रदक्षिणित् कश्चिज्जनो वसुभी रातिभिः सह हविष्मतीं सुद्युम्नां रातिनीं देवतातिं घृताचीं यज्ञं च समश्रेत् तथैतामच्छ प्रेयर्मि॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्यैर्दिवा स्वापं वर्ज्जयित्वा व्यवहारसिद्धये श्रमं कृत्वा रात्रौ सम्यक् पञ्चदशघटिकामात्री निद्रा नेया दिवसे पुरुषार्थेन धनादीनि प्राप्य सुपात्रे सन्मार्गे च दानं देयम्॥ २॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के सदृश तेजधारी विद्वान् पुरुष! मैं (**ते**) आपकी शिक्षा से जैसे (**उराणः**) विद्वानों को आदर से श्रेष्ठकर्त्ता कोई (**प्रदक्षिणित्**) दक्षिण अर्थात् सन्मार्ग गन्ता जन (**वसुभिः**) निवास के कारण (**रातिभिः**) सुखदान आदि के साथ (**हविष्मतीम्**) अतिशय हवनसामग्री-युक्त (**सुद्युम्नाम्**) श्रेष्ठ प्रकाश से युक्त (**रातिनीम्**) दिये हुए हवन के पदार्थों से युक्त (**देवतातिम्**) उत्तम स्वरूपविशिष्ट (**घृताचीम्**) जल को प्राप्त होनेवाली रात्रि और (**यज्ञम्**) शयनावस्था आदि में प्राप्त चित्त के व्यवहारों को (**सम्, अश्रेत्**) प्राप्त करे, वैसे इसको (**अच्छ**) उत्तम रीति से (**प्र**) (**इयर्मि**) प्राप्त होता हूँ॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि दिन में शयन छोड़ सांसारिक व्यवहार की सिद्धि के लिये परिश्रम कर रात्रि के समय स्वस्थतापूर्वक पञ्चदश १५ घटिका पर्यन्त निद्रालु होवें और दिन भर पुरुषार्थ से धन आदि उत्तम पदार्थों को प्राप्त होकर सुपात्र पुरुष तथा सन्मार्ग में दान देवें॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स तेजीयसा मनसा त्वोत उत शिक्ष स्वपत्यस्य शिक्षोः।
अग्ने रायो नृतमस्य प्रभूतौ भूयाम ते सुष्टुतयश्च वस्वः॥३॥

सः। तेजीयसा। मनसा। त्वाऽऊतः। उत। शिक्ष। सुऽअपत्यस्य। शिक्षोः। अग्ने। रायः। नृऽतमस्य। प्रऽभूतौ। भूयाम। ते। सुऽस्तुतयः। च। वस्वः॥३॥

पदार्थः-(**सः**) (**तेजीयसा**) तेजस्विना शुद्धस्वरूपेण (**मनसा**) अन्तःकरणेन (**त्वोतः**) त्वां कामयमानः (**उत**) अपि (**शिक्ष**) विद्यां ग्राहय (**स्वपत्यस्य**) शोभनान्यपत्यानि विद्यार्थिनो वा यस्य तस्य (**शिक्षोः**) शिक्षकस्य (**अग्ने**) पूर्णविद्याप्रकाशयुक्त (**रायः**) ऐश्वर्य्यस्य (**नृतमस्य**) अतिशयेन नायका यस्य तस्य (**प्रभूतौ**) बहुत्वे (**भूयाम**) (**ते**) तव (**सुष्टुतयः**) शोभनाः स्तुतयो येषां ते (**च**) (**वस्वः**) वसुना सुखेन वासहेतोर्धनस्य॥३॥

अन्वयः-हे अग्ने! वयं यस्य स्वपत्यस्य नृतमस्य शिक्षोस्ते शिक्षायां सुष्टुतयस्सन्तस्तेजीयसा मनसा वस्वो रायः प्रभूतौ भूयाम स त्वोत उत तमस्मांश्च त्वं शिक्ष॥३॥

भावार्थः-ये ब्रह्मचर्य्येण विद्यया धर्म्याणि कृत्यानि कृत्वा शुद्धेनान्तःकरणेनात्मना वा प्रयतेरंस्ते धनपतयो भवेयुः॥३॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) पूर्ण विद्या के प्रकाश से युक्त! हम लोग जिस (**स्वपत्यस्य**) उत्तम सन्तान वा विद्यार्थियों के सहित (**नृतमस्य**) अत्यन्त शूरवीरों से विशिष्ट (**शिक्षोः**) शिक्षक पुरुष (**ते**) आपकी शिक्षा में (**सुष्टुतयः**) उत्तम स्तुतिकर्त्ता श्रेष्ठ पुरुष (**तेजीयसा**) तेजस्वी पवित्र स्वरूपवान् (**मनसा**) अन्तःकरण से (**वस्वः**) सुखपूर्वक निवास का कारण धन तथा (**रायः**) ऐश्वर्य्य के (**प्रभूतौ**) बहुत्वभाव में (**भूयाम**) वर्त्तमान होवें (**सः**) वह (**त्वोतः**) आपकी कामना करता हुआ जो ऐसा पुरुष उसको (**च**) और हम लोगों को (**उत**) भी आप (**शिक्ष**) विद्योपदेश दीजिये॥३॥

भावार्थः-जो पुरुष ब्रह्मचर्य्य और विद्या से धर्म सम्बन्धी कामों को करके निष्कपट अन्तःकरण तथा आत्मा से प्रयत्न करें, उनको धनपति का अधिकार देना योग्य है॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

भूरीणि हि त्वे दधिरे अनीकाग्ने देवस्य यज्यवो जनासः।
स आ वह देवतातिं यविष्ठ शर्धो यदद्य दिव्यं यजासि॥४॥

भूरीणि। हि। त्वे इति। दधिरे। अनीका। अग्ने। देवस्य। यज्यवः। जनासः। सः। आ। वह। देवऽतातिम्। यविष्ठ। शर्धः। यत्। अद्य। दिव्यम्। यजासि॥४॥

पदार्थः-(**भूरीणि**) बहूनि (**हि**) यतः (**त्वे**) त्वयि (**दधिरे**) दधीरन् (**अनीका**) अनीकानि सैन्यानि (**अग्ने**) विद्युदिव सकलविद्यासु व्यापिन् (**देवस्य**) दिव्यगुणकर्मस्वभावस्य (**यज्यवः**) सत्कर्त्तव्याः (**जनासः**) विद्यादिगुणैः प्रादुर्भूताः (**सः**) (**आ**) (**वह**) समन्तात्प्राप्नुहि (**देवतातिम्**) दिव्यस्वभावम् (**यविष्ठ**) अतिशयेन युवन् (**शर्धः**) बलम् (**यत्**) (**अद्य**) इदानीम् (**दिव्यम्**) पवित्रम् (**यजासि**) यजेः॥४॥

अन्वयः-हे यविष्ठाग्ने! यस्य देवस्य सङ्गेन यज्यवो जनासो हि त्वे भूरीण्यनीका दधिरे यदद्य दिव्यं शर्धो यजासि स त्वं देवतातिमा वह॥४॥

भावार्थः-ये मनुष्या विद्वत्सङ्गेन बह्वीः सुशिक्षिताः सेना गृह्णीयुस्ते महद्बलं प्राप्य दिव्यान् गुणानाकर्षेयुः॥४॥

पदार्थः-हे (**यविष्ठ**) अतिशय युवावस्थासम्पन्न (**अग्ने**) बिजुली के सदृश सम्पूर्ण विद्याओं में व्यापी पुरुष! जिस (**देवस्य**) उत्तम गुण, कर्म, स्वभाववान् जन के सङ्ग से (**यज्यवः**) आदर करने योग्य (**जनासः**) विद्या आदि गुणों से प्रकट जन (**हि**) जिससे (**त्वे**) आप में (**भूरीणि**) बहुत (**अनीका**) सेनाओं को (**दधिरे**) धारण करें (**यत्**) जो (**अद्य**) इस समय (**दिव्यम्**) पवित्र (**शर्धः**) बल को (**यजासि**) धारण करो और (**सः**) वह आप (**देवतातिम्**) उत्तम स्वभाव को (**आ**) (**वह**) सब प्रकार प्राप्त होइये॥४॥

भावार्थः-जो मनुष्य विद्वानों के सङ्ग से बहुत-सी उत्तम प्रकार शिक्षित सेनाओं को ग्रहण करें, वे अति बल को प्राप्त होके उत्तम गुणों का आकर्षण करें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यत्त्वा होतारमनजन्मियेधे निषादयन्तो यजथाय देवाः।

स त्वं नो अग्नेऽवितेह बोध्यधि श्रवांसि धेहि नस्तनूषु॥५॥१९॥

यत्। त्वा। होतारम्। अनजन्। मियेधे। निऽसादयन्तः। यजथाय। देवाः। सः। त्वम्। नः। अग्ने। अविता। इह। बोधि। अधि। श्रवांसि। धेहि। नः। तनूषु॥५॥

पदार्थः-(**यत्**) यः (**त्वा**) त्वाम् (**होतारम्**) विद्यादातारम् (**अनजन्**) कामयेरन् (**मियेधे**) प्रापणीये यज्ञे (**निषादयन्तः**) नितरां स्थापयन्तो वा विज्ञापयन्तः (**यजथाय**) विद्यासङ्गमनाय (**देवाः**) विद्वांसः (**सः**) (**त्वम्**) (**नः**) अस्माकमस्मान् वा (**अग्ने**) विद्वन् (**अविता**) रक्षणादिकर्त्ता (**इह**) अस्मिन् संसारे (**बोधि**) बोधय (**अधि**) उत्कृष्टे (**श्रवांसि**) प्रियाण्यन्नानीव श्रवणानि (**धेहि**) स्थापय (**नः**) अस्माकम् (**तनूषु**) शरीरेषु॥५॥

अन्वयः-हे अग्ने! निषादयन्तो देवा मियेधे यजथाय यद्धोतारं त्वानजन् स त्वमिह नोऽविता सन्नस्मान् बोधि नस्तनूषु श्रवांस्यधि धेहि॥५॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! मनुष्या येष्वधिकारेषु युष्मान्नियोजयेयुस्तेषु यथावद्वर्त्तित्वा सर्वान् सभ्यान् भवन्तो निष्पादयेयुर्यथा शिक्षया विद्यासभ्यताऽऽरोग्यायूंषि वर्धेरंस्तथैव सततमनुतिष्ठतेति॥५॥

अत्राग्निविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इत्येकोनविंशं सूक्तमेकोनविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वान् पुरुष! **(निषादयन्तः)** अत्यन्त अधिकार में स्थित कराने वा जनानेवाले **(देवाः)** विद्वान् पुरुष **(मियेधे)** प्राप्त होने योग्य यज्ञ में **(यजथाय)** विद्या में बोध कराने के लिये **(यत्)** जिन **(होतारम्)** विद्यादाता **(त्वा)** आपकी **(अनजन्)** कामना करें **(सः)** वह **(त्वम्)** आप **(इह)** इस संसार में **(नः)** हम लोगों की **(अविता)** रक्षा आदि के कर्त्ता हुए हम लोगों को **(बोधि)** बोध कराइये और **(नः)** हम लोगों के **(तनूषु)** शरीरों में **(श्रवांसि)** प्रिय अन्नों के सदृश सम्पदाओं को **(अधि)** उत्तम प्रकार **(धेहि)** स्थित करो॥५॥

भावार्थः-हे विद्वान् मनुष्यो! जिन अधिकारों में आप लोग नियुक्त किये जायें, उन अधिकारों में उत्तम प्रकार वर्त्तमान होके सर्वजनों को श्रेष्ठ बनाइये और जिस शिक्षा से विद्या, सभ्यता, आरोग्यता और अवस्था बढ़े ऐसा उपाय निरन्तर करो॥५॥

इस सूक्त में अग्नि और विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्तार्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह उन्नीसवां सूक्त और उन्नीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्य विंशतितमस्य सूक्तस्य गाथी ऋषिः। विश्वेदेवा देवताः। १ विराट् त्रिष्टुप्। २ निचृत्त्रिष्टुप्। ३ भुरिक् त्रिष्टुप्। ४, ५ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ विद्वांसः कथं वर्त्तेरन्नित्याह॥

अब तृतीय मण्डल के बीसवें सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में विद्वान् जन कैसे वर्त्तें, इस विषय को कहा है॥

अ॒ग्निमु॒षस॑म॒श्विना॑ दधि॒क्रां व्यु॑ष्टिषु हवते॒ वह्नि॑रु॒क्थैः।
सु॒ज्योति॑षो नः शृण्वन्तु दे॒वाः स॒जोष॑सो अध्व॒रं वा॑वशा॒नाः॥ १॥

अ॒ग्निम्। उ॒षस॑म्। अ॒श्विना॑। द॒धि॒ऽक्राम्। विऽउ॑ष्टिषु। ह॒व॒ते॒। वह्नि॑ः। उ॒क्थैः। सु॒ऽज्योति॑षः। नः॒। शृ॒ण्व॒न्तु॒। दे॒वाः। स॒ऽजोष॑सः। अ॒ध्व॒रम्। वा॒व॒शा॒नाः॥ १॥

पदार्थः-(**अग्निम्**) पावकम् (**उषसम्**) प्रभातकालम् (**अश्विना**) सूर्याचन्द्रमसौ (**दधिक्राम्**) यो धारकान् क्रामति तमश्वम् (**व्युष्टिषु**) विशेषेण दहन्ति यासु क्रियासु तासु (**हवते**) आदत्ते (**वह्निः**) वोढा वायुः (**उक्थैः**) प्रशंसनीयैः कर्मभिः (**सुज्योतिषः**) शोभनानि ज्योतींषि प्रज्ञाप्रकाशा येषां ते (**नः**) अस्मान् (**शृण्वन्तु**) (**देवाः**) विद्वांसः (**सजोषसः**) समानप्रीतिसेवनाः (**अध्वरम्**) अहिंसनीयं व्यवहारम् (**वावशानाः**) भृशं कामयमानाः॥१॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशका! यथा वह्निर्व्युष्टिष्वग्निमुषसमश्विना दधिक्रां च हवते तथाऽध्वरं वावशानाः सजोषसः सुज्योतिषो देवा भवन्त उक्थैर्नः शृण्वन्तु॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा वायुः सर्वान् सूर्यादीन् प्रकाशकान् पदार्थान् धृत्वा सर्वानुपकरोति तथैव विद्वांसः सर्वैः सह वैरत्यागरूपस्याहिंसाधर्मस्य प्रचारायैकमत्या भूत्वा सर्वं जगदुपकुर्युः॥१॥

पदार्थः-हे अध्यापक उपदेशक जनो! जैसे (**वह्निः**) पदार्थों का धारणकर्त्ता (**व्युष्टिषु**) प्रकाशकारक क्रियाओं में (**अग्निम्**) अग्नि (**उषसम्**) प्रातःकाल (**अश्विना**) सूर्य-चन्द्रमा और (**दधिक्राम्**) संसार के धारणकारकों के उल्लङ्घनकर्ता को (**हवते**) ग्रहण करता है, वैसे (**अध्वरम्**) हिंसाभिन्न व्यवहार की (**वावशानाः**) अत्यन्त कामना करते हुए (**सजोषसः**) समान प्रीति के निर्वाहक (**सुज्योतिषः**) शोभन उत्तम बुद्धि के प्रकाशों से युक्त (**देवाः**) विद्वान् आप लोग (**उक्थैः**) प्रशंसा करने योग्य कर्मों से (**नः**) हम लोगों के प्रार्थनारूप वचन (**शृण्वन्तु**) सुनिये॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे वायु सम्पूर्ण प्रकाशकारी सूर्य आदि पदार्थों के धारण द्वारा सब जीवों का उपकार करता, वैसे विद्वान् पुरुष सम्पूर्ण जनों के साथ वैर छोड़नारूप अहिंसा धर्म के प्रचार के लिये एक सम्मति से सब संसार का उपकार करें॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अग्ने त्री ते वाजिना त्री षधस्था तिस्रस्ते जिह्वा ऋतजात पूर्वीः।
तिस्र उ ते तन्वो देववातास्ताभिर्नः पाहि गिरो अप्रयुच्छन्॥ २॥

अग्ने। त्री। ते। वाजिना। त्री। सधस्था। तिस्रः। ते। जिह्वाः। ऋतऽजात। पूर्वीः। तिस्रः। ऊम् इति। ते। तन्वः। देवऽवाताः। ताभिः। नः। पाहि। गिरः। अप्रऽयुच्छन्॥ २॥

पदार्थः-(**अग्ने**) पावक इव प्रकाशात्मन् विद्वन्! (**त्री**) त्रीणि (**ते**) तव (**वाजिना**) ज्ञानगमनप्राप्तिरूपाणि (**त्री**) त्रीणि (**सधस्था**) समानस्थानानि (**तिस्रः**) त्रित्वसंख्याताः (**ते**) तव (**जिह्वाः**) विविधा वाणीः (**ऋतजात**) सत्याचरणे प्रसिद्ध (**पूर्वीः**) प्राचीनाः (**तिस्रः**) त्रिविधाः (**उ**) वितर्के (**ते**) तव (**तन्वः**) शरीरस्य (**देववाताः**) ये देवैर्विद्वद्भिः सह वान्ति ते (**ताभिः**) पूर्वोक्ताभिः (**नः**) अस्माकम् (**पाहि**) (**गिरः**) सुशिक्षिता वाचः (**अप्रयुच्छन्**) प्रमादमकुर्वन्॥ २॥

अन्वयः-हे ऋतजाताग्ने! ते तव त्री वाजिना त्री सधस्था ते तिस्रो जिह्वाः पूर्वीरु ते तिस्रस्तन्वो देववाता गिरः सन्ति ताभिरप्रयुच्छन् संस्त्वं नोऽस्मान् पाहि॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ब्रह्मचर्य्याध्ययनमननानि त्रीणि कर्माणि कृत्वा त्रिषु जन्मस्थाननामसु कृतकृत्या भवन्तु अध्यापनोपदेशाभ्यां सर्वेषां रक्षां कुर्वन्तु स्वयं प्रमादरहिता भूत्वाऽन्यानपि तादृशान् सम्पादयन्तु॥ २॥

पदार्थः-हे (**ऋतजात**) सत्य आचरण करने में प्रसिद्ध (**अग्ने**) अग्नि के सदृश प्रकाशस्वरूप विद्वान् पुरुष! (**ते**) आपके (**त्री**) तीन (**वाजिना**) ज्ञान, गमन और प्राप्तिरूप (**त्री**) तीन (**सधस्था**) तुल्य स्थानवाले जन्मादि (**ते**) आपकी (**तिस्रः**) तीन प्रकारवाली (**जिह्वाः**) वाणियां (**पूर्वीः**) प्राचीन (**उ**) और (**ते**) आपके (**तिस्रः**) तीन (**तन्वः**) शरीर सम्बन्धी (**देववाताः**) विद्वानों के साथ संवाद करने में उपकारक (**गिरः**) वचन हैं उनसे (**अप्रयुच्छन्**) अहङ्कारत्यागी आप (**नः**) हम लोगों की (**पाहि**) रक्षा करो॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! आप लोग ब्रह्मचर्य्य, अध्ययन और विचार से तीन कर्म करके; तीन जन्म, स्थान और नामों से कृतकृत्य अर्थात् जन्म सफल करो; पढ़ाने तथा उपदेश से सबकी रक्षा करो; और आप स्वयं प्रमादरहित होकर अन्य लोगों को वैसा ही करो॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अग्ने भूरीणि तव जातवेदो देव स्वधावोऽमृतस्य नाम।
याश्च माया मायिनां विश्वमिन्व त्वे पूर्वीः संदधुः पृष्टबन्धो॥ ३॥

अग्ने॑। भूरी॑णि। तव॑। जा॒त॒ऽवे॒द॒:। देव॑। स्व॒धा॒ऽव॒:। अ॒मृत॑स्य। नाम॑। या:। च॒। मा॒या। मा॒यिना॑म्। वि॒श्व॒म्॒ऽइ॒न्व। त्वे इति॑। पू॒र्वी:। स॒म्॒ऽद॒धु:। पृ॒ष्ट॒ब॒न्धो॒ इति॑ पृष्टऽबन्धो॥ ३॥

पदार्थ:-(**अग्ने**) प्रकाशात्मन् (**भूरीणि**) बहूनि (**तव**) (**जातवेद:**) प्रजातविज्ञान् (**देव**) विद्वन् (**स्वधाव:**) प्रशस्तानि स्वधा अमृतरूपाण्यन्नानि विद्यन्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ (**अमृतस्य**) नाशरहितस्य (**नाम**) प्रसिद्धानि नामानि (**या:**) (**च**) (**माया**) प्रज्ञा: (**मायिनाम्**) कुत्सिता माया प्रज्ञा विद्यते येषां तेषाम् (**विश्वमिन्व**) विश्वं सर्वं जगन्मिन्वं व्याप्तं येन तत्सम्बुद्धौ (**त्वे**) त्वयि (**पूर्वी:**) पुरातनी: प्रजा: (**सन्दधु:**) सन्धिता: कुर्य्यु: (**पृष्टबन्धो**) य: पृष्टान् जनानुत्तरेषु बध्नाति तत्सम्बुद्धौ॥ ३॥

अन्वय:-हे स्वधावो जातवेदो देवाऽग्ने! यानि तव भूरीण्यमृतस्य नाम नामानि सन्ति। हे पृष्टबन्धो विश्वमिन्व याश्च पूर्वीस्त्वे सन्दधुर्मायिनां माया च हन्युस्ते विज्ञानवन्तो जायन्ते॥ ३॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! यूयं सर्वं जगत्परमेश्वरेण व्याप्यं मन्यध्वं छलीनां छलं घ्नत परमेश्वरस्यार्थवन्ति सर्वाणि नामानि बुध्वाऽर्थानुकूलतया स्वाचरणानि कुर्वन्तु॥ ३॥

पदार्थ:-हे (**स्वधाव:**) प्रशंसनीय अमृतरूप अन्नयुक्त (**जातवेद:**) श्रेष्ठ विज्ञानयुक्त (**देव**) विद्वान् पुरुष! (**अग्ने**) विद्या द्वारा प्रकाशकारक जो (**तव**) आपके (**भूरीणि**) बहुत (**अमृतस्य**) नाशरहित के नाम हैं। हे (**पृष्टबन्धो**) मनुष्यों के कर्मानुसार फलदायक (**विश्वमिन्व**) सम्पूर्ण जगत् में व्यापक (**या:**) जो (**पूर्वी:**) प्राचीन प्रजायें (**त्वे**) आप में (**सन्दधु:**) स्थित की गई हैं (**मायिनाम्**) निकृष्ट बुद्धियुक्त पुरुषों की (**माया**) बुद्धिनाश हो तो (**च**) भी अन्य पुरुष विज्ञानयुक्त होवें॥ ३॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! आप लोग [और] सम्पूर्ण संसार ईश्वर से व्याप्य अर्थात् पूरित जानो और छली पुरुषों के छल का नाश तथा परमेश्वर के अर्थसहित सम्पूर्ण नाम जान के, अर्थ के अनुकूल भाव से अपने आचरणों को शुद्ध करो॥ ३॥

पुनरग्निदृष्टान्तेन विद्वत्कर्त्तव्यमाह॥

फिर अग्नि के दृष्टान्त से विद्वान् का कर्त्तव्य कहते हैं॥

अ॒ग्निर्ने॒ता भग॑इव क्षि॒ती॒नां दैवी॑नां दे॒व ऋ॑तु॒पा ऋ॒तावा॑।
स वृ॑त्र॒हा स॒नयो॑ वि॒श्ववे॑दा: पर्ष॒द्विश्वाति॑ दुरि॒ता गृ॒णन्त॑म्॥ ४॥

अ॒ग्नि:। ने॒ता। भग॑:ऽइव। क्षि॒ती॒नाम्। दैवी॑नाम्। दे॒व:। ऋ॒तु॒ऽपा:। ऋ॒तऽवा॑। स:। वृ॒त्र॒ऽहा। स॒नय॑:। विश्वऽवे॑दा:। प॒र्ष॑त्। विश्वा॑। अति॑। दु॒:ऽइ॒ता। गृ॒णन्त॑म्॥ ४॥

पदार्थ:-(**अग्नि:**) पावक: (**नेता**) गमक: (**भगइव**) सूर्य्य इव (**क्षितीनाम्**) भूमीनाम् (**दैवीनाम्**) देवेषु दिव्यगुणेषु भवानाम् (**देव:**) सुखप्रदाता (**ऋतुपा:**) य ऋतुं पाति रक्षति स: (**ऋतावा**) य ऋतं

संभजति **(सः)** **(वृत्रहा)** मेघस्य हन्ता सूर्य्य इव **(सनयः)** सनातनाः **(विश्ववेदाः)** यो विश्वं वेत्ति सः **(पर्षत्)** पारं प्रापयतु **(विश्वा)** सर्वाणि **(अति)** उल्लंघने **(दुरिता)** दुष्टाचरणानि **(गृणन्तम्)** स्तुवन्तम्॥४॥

अन्वयः-यो भगइव दैवीनां क्षितीनां नेता ऋतुपा ऋतावा देवो वृत्रहेव सनयो विश्ववेदा अग्निर्गृणन्तं विश्वा दुरितातिपर्षत् सोऽस्माभिस्सदैव सेवनीयः॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथाग्निः सूर्यादिरूपेण पृथिव्यादीन् पदार्थान्नियमन्नयति यथा जगदीश्वरः सदा सर्वं जगद्व्यवस्थापयति तथैवोपासित ईश्वरः सेवितो विद्वान् सर्वेभ्यः पापाचरणेभ्यः पृथक् कृत्य दुःखार्णवात् पारं नयति॥४॥

पदार्थः-जो **(भगइव)** सूर्य्य के तुल्य **(दैवीनाम्)** श्रेष्ठ गुणों में उत्पन्न **(क्षितीनाम्)** भूमियों का **(नेता)** अग्रणी **(ऋतुपाः)** ऋतुओं के रक्षक **(ऋतावा)** सत्यकर्म निर्वाहक **(देवः)** सुखदायक **(वृत्रहा)** मेघों के नाशक सूर्य्य के सदृश **(सनयः)** अनादि सिद्ध **(विश्ववेदाः)** संसार के ज्ञाता **(अग्निः)** अग्नि के सदृश तेजस्वी **(गृणन्तम्)** स्तुतिकारक को **(विश्वा)** सम्पूर्ण पुरुषों के **(दुरिता)** दुष्ट आचरणों को **(अति)** उल्लङ्घन करके **(पर्षत्)** पार पहुँचावे **(सः)** वह परमात्मा हम लोगों से सेवने योग्य है॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे अग्नि, सूर्य्य आदि रूप धारण करके पृथिवी आदि पदार्थों को नियमपूर्वक अपने स्थान में स्थित रखता और जैसे जगदीश्वर सर्वदा सम्पूर्ण जगत् की व्यवस्था करता है, वैसे ही उपासित हुआ ईश्वर तथा सेवित हुआ विद्वान् पुरुष सम्पूर्ण पापाचरणों से पृथक् करके दुःखरूप समुद्र के पार पहुँचाता है॥४॥

पुनर्विद्वन्मनुष्यकर्त्तव्यमाह॥

फिर विद्वान् मनुष्य के कर्त्तव्य को कहते हैं॥

द॒धि॒क्राम॒ग्निमु॒षसं॑ च दे॒वीं बृह॒स्पतिं॑ सवि॒तारं॑ च दे॒वम्।

अ॒श्विना॑ मि॒त्रावरु॑णा॒ भगं॑ च॒ वसू॑न् रु॒द्राँ आ॑दि॒त्याँ इ॒ह हु॑वे॥५॥२०॥

द॒धि॒ऽक्राम्। अ॒ग्निम्। उ॒षस॑म्। च॒। दे॒वीम्। बृह॒स्पति॑म्। स॒वि॒तार॑म्। च॒। दे॒वम्। अ॒श्विना॑। मि॒त्रावरु॑णा। भग॑म्। च॒। वसू॑न्। रु॒द्रान्। आ॒दि॒त्यान्। इ॒ह। हु॒वे॒॥५॥

पदार्थः-**(दधिक्राम्)** यो भूम्यादीन् दधीन् धर्त्रीन् पदार्थान् क्रामति तम् **(अग्निम्)** विद्युतम् **(उषसम्)** प्रभातम् **(च)** **(देवीम्)** देदीप्यमानां कमनीयाम् **(बृहस्पतिम्)** बृहतां पालकं वायुम् **(सवितारम्)** सूर्य्यम् **(च)** सकलजगदुत्पादकं परमेश्वरम् **(देवम्)** कमनीयं दातारम् **(अश्विना)** अध्यापकोपदेशकौ **(मित्रावरुणा)** प्राणोदानौ **(भगम्)** सकलैश्वर्यप्रदं व्यवहारम् **(च)** **(वसून्)** भूम्यादीन् **(रुद्रान्)** प्राणान् **(आदित्यान्)** संवत्सरस्य मासान् **(इह)** **(हुवे)** स्तुवे गृह्णामि॥५॥

अन्वयः–हे मनुष्या! यथाहमिह दधिक्रामग्निं देवीमुषसं च बृहस्पतिं सवितारं परमेश्वरं देवं चाश्विना मित्रावरुणा भगं वसून् रुद्रानादित्याँश्च हुवे तथैव यूयमप्येतान् सततमाह्वयत॥५॥

भावार्थः–अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। सर्वैर्मनुष्यैः यथा विद्वांसोऽस्याः सृष्टेरुपकारकैः पदार्थैः सर्वाणि कार्य्याणि साध्नुवन्ति तथैतान् विदित्वा सर्वाण्यभीष्टानि कार्य्याणि साधनीयानि सर्वैः परमेश्वरः सततमुपासनीयश्चेति॥५॥

अत्राग्न्यादिविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति विंशतितमं सूक्तं विंशतितमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः–हे मनुष्यो! जैसे मैं **(इह)** इस संसार में **(दधिक्राम्)** भूमि आदि धारण करनेवाले पदार्थों को उल्लङ्घन करके वर्त्तमान **(अग्निम्)** बिजुली रूप अग्नि **(देवीम्)** प्रकाशमान तथा कामना करने योग्य **(उषसम्)** प्रातःकाल **(च)** और **(बृहस्पतिम्)** बड़े-बड़े पदार्थों का रक्षक वायु **(सवितारम्)** सूर्य्य और सम्पूर्ण संसार की उत्पत्ति करनेवाला **(देवम्)** कामना योग्य दानशील ईश्वर **(च)** और **(अश्विना)** अध्यापक उपदेशकर्त्ता **(मित्रावरुणा)** प्राण और उदान वायु **(भगम्)** सम्पूर्ण ऐश्वर्य्य को देनेवाला व्यवहार **(वसून्)** भूमि आदि पदार्थ **(रुद्रान्)** प्राण **(च)** और **(आदित्यान्)** संवत्सरों में मासों की **(हुवे)** स्तुति करता हूँ वा ग्रहण करता हूँ, वैसे ही तुम लोग इनकी निरन्तर स्तुति वा ग्रहण करो॥५॥

भावार्थः–इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। सब मनुष्यों को चाहिये कि जैसे विद्वान् लोग इस सृष्टि के उपकारक पदार्थों से सम्पूर्ण कार्य्यों को सिद्ध करते हैं, वैसे ही उन पदार्थों के गुणों को जानकर सम्पूर्ण अभीष्ट कार्यों को सिद्ध करें और सब जनों से ईश्वर उपासना करने योग्य है॥५॥

इस सूक्त में अग्नि आदि और विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह बीसवां सूक्त और बीसवां वर्ग पूरा हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्यैकाधिकविंशतितमस्य सूक्तस्य कौशिको गाथी ऋषिः। अग्निर्देवता। १, ४ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २, ३ अनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः। ५ विराट् बृहती छन्दः। मध्यमः स्वरः॥

अथ मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

अब पाँच ऋचावाले इक्कीसवें सूक्त का प्रारम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

इमं नो यज्ञममृतेषु धेहीमा हव्या जातवेदो जुषस्व।
स्तोकानामग्ने मेदसो घृतस्य होतः प्राशान प्रथमो निषद्य॥ १॥

इमम्। नः। यज्ञम्। अमृतेषु। धेहि। इमा। हव्या। जातऽवेदः। जुषस्व। स्तोकानाम्। अग्ने। मेदसः। घृतस्य। होतरिति। प्र। अशान। प्रथमः। निऽसद्य॥ १॥

पदार्थः-(**इमम्**) (**नः**) अस्माकम् (**यज्ञम्**) विद्वत्सत्कारसत्सङ्गशुभगुणदानाख्यम् (**अमृतेषु**) नाशरहितेषु पदार्थेषु (**धेहि**) (**इमा**) इमानि (**हव्या**) होतुं धर्मार्थकाममोक्षान् साधयितुमर्हाणि साधनानि (**जातवेदः**) जातविज्ञान (**जुषस्व**) सेवस्व (**स्तोकानाम्**) अल्पानां पदार्थानाम् (**अग्ने**) विद्वन् (**मेदसः**) स्निग्धस्य (**घृतस्य**) (**होतः**) दातः (**प्र**) (**अशान**) भुङ्क्ष्व (**प्रथमः**) आदिमः (**निषद्य**)॥ १॥

अन्वयः-हे जातवेदो! मेदसो घृतस्य स्तोकानां होतरग्ने प्रथमस्त्वं निषद्य सुखं प्राशान न इमं यज्ञं जुषस्वेमा हव्या अमृतेषु धेहि॥ १॥

भावार्थः-यथान्नपानादीनां दाता अन्येषां प्रियो भवति तथैव विद्यासुशिक्षाधर्मज्ञानप्रापको जिज्ञासूनां प्रियो भवति॥ १॥

पदार्थः-हे (**जातवेदः**) सम्पूर्ण उत्पन्न पदार्थों के ज्ञाता! (**मेदसः**) चिकने (**घृतस्य**) घृत और (**स्तोकानाम्**) छोटे पदार्थों के (**होतः**) दाता (**अग्ने**) विद्वान् पुरुष (**प्रथमः**) पूर्वकाल में वर्त्तमान आप (**निषद्य**) स्थित होकर (**प्र**) (**अशान**) सुख को भोगो (**नः**) हम लोगों के (**इमम्**) इस (**यज्ञम्**) विद्वानों के सत्कार, सत्सङ्ग, शुभ गुणों और दानरूप कर्म का (**जुषस्व**) सेवन कीजिये (**इमा**) इन (**हव्या**) धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की सिद्धि के लिये योग्य साधनों को (**अमृतेषु**) नाशरहित पदार्थों में (**धेहि**) स्थापन करो॥ १॥

भावार्थः-जैसे अन्न जल आदि का दाता पुरुष अन्य पुरुषों को प्रिय होता, वैसे विद्या, उत्तम शिक्षा और धर्म सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करानेवाला जन इन कर्मों को जानने की इच्छायुक्त पुरुषों का प्रिय होता है॥ १॥

अथ धर्मोपदेशकाः किंवत्पालयन्तीत्याह॥

अब धर्म्मोपदेशक किसके तुल्य रक्षा करते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

घृतवन्तः पावक ते स्तोकाः श्चोतन्ति मेदसः।
स्वधर्मन् देववीतये श्रेष्ठं नो धेहि वार्यम्॥ २॥

घृतऽवन्तः। पावक। ते। स्तोकाः। श्चोतन्ति। मेदसः। स्वऽधर्मन्। देवऽवीतये। श्रेष्ठम्। नः। धेहि। वार्यम्॥ २॥

पदार्थः-(**घृतवन्तः**) प्रशस्तं बहु वा घृतमाज्यमुदकं वा विद्यते येषान्ते (**पावक**) अग्निवत्पवित्रकारक (**ते**) तव (**स्तोकाः**) अल्पाः (**श्चोतन्ति**) सिञ्चन्ति (**मेदसः**) स्निग्धाः (**स्वधर्मन्**) स्वस्य वैदिके धर्मणि (**देववीतये**) विद्वत्प्राप्तये (**श्रेष्ठम्**) अतिशयेन प्रशस्तम् (**नः**) अस्मभ्यम् (**धेहि**) देहि (**वार्य्यम्**) वर्तुमर्हं धनम्॥ २॥

अन्वयः-हे पावक! यस्य ते घृतवन्तो मेदसः स्तोकाः श्चोतन्ति स त्वं देववीतये श्रेष्ठं वार्य्यं स्वधर्मन्नो धेहि॥ २॥

भावार्थः-यथा पावकः स्वकर्मणा जलादिपदार्थान् शुद्धान् कृत्वा वर्षादिरूपेण सर्वान् सिक्त्वा सर्वान् जीवयति तथैव विद्याधर्म्मोपदेशकाः सर्वान् मनुष्यान् पालयन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे (**पावक**) अग्नि के सदृश पवित्रकर्त्ता! जिन (**ते**) आपके (**घृतवन्तः**) उत्तम वा अधिक घृतवाले तथा जलयुक्त (**मेदसः**) चिकने (**स्तोकाः**) थोड़े पदार्थ (**श्चोतन्ति**) सिञ्चन करते हैं वह आप (**देववीतये**) विद्वानों की प्राप्ति के लिये (**श्रेष्ठम्**) अति उत्तम (**वार्य्यम्**) स्वीकार करने योग्य धन (**स्वधर्मन्**) अपने वैदिक धर्म में (**नः**) हम लोगों के लिये (**धेहि**) दीजिये॥ २॥

भावार्थः-जैसे अग्नि जल आदि पदार्थों को अपने कर्म से शुद्ध कर वर्षा आदि रूप से सम्पूर्ण पदार्थों को सींच कर सब जीवों की रक्षा करते हैं, वैसे ही विद्या और धर्म के उपदेशक लोग सम्पूर्ण मनुष्यों का पालन करते हैं॥ २॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् लोग क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तुभ्यं स्तोका घृतश्चुतोऽग्ने विप्राय सन्त्य।
ऋषिः श्रेष्ठः समिध्यसे यज्ञस्य प्राविता भव॥ ३॥

तुभ्यम्। स्तोकाः। घृतऽश्चुतः। अग्ने। विप्राय। सन्त्य। ऋषिः। श्रेष्ठः। सम्। इध्यसे। यज्ञस्य। प्रऽअविता। भव॥ ३॥

पदार्थः-(**तुभ्यम्**) (**स्तोकाः**) स्तावकाः (**घृतश्चुतः**) घृतेन सिक्ताः (**अग्ने**) विद्वन् (**विप्राय**) मेधाविने (**सन्त्य**) सन्तिषु सत्याऽसत्यविभाजकेषु साधो (**ऋषिः**) मन्त्रार्थवेत्ता (**श्रेष्ठः**) श्रेयान् (**सम्**) (**इध्यसे**) प्रकाश्यसे (**यज्ञस्य**) सङ्गतस्य व्यवहारस्य (**प्राविता**) प्रकर्षेण रक्षकः (**भव**)॥ ३॥

अन्वयः-हे सन्त्याग्ने! ये घृतश्चुतः स्तोका विप्राय तुभ्यं श्चोतन्ति श्रेष्ठ ऋषिस्त्वं समिध्यसे स त्वं यज्ञस्य प्राविता भव॥३॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! ये युष्मान् स्तुवन्ति तान् यूयं वेदार्थविदः कुरुत यतः परस्परेषां रक्षणं स्यात्॥३॥

पदार्थः-हे **(सन्त्य)** सत्य और असत्य के विभाग करनेवालों में कुशल प्रवीण **(अग्ने)** विद्वान् पुरुष! जो **(घृतश्चुतः)** घृत से सींचे गए **(स्तोकाः)** स्तुतिकर्त्ता लोग **(विप्राय)** बुद्धिमान् **(तुभ्यम्)** तुम्हारे लिये प्राप्त होते हैं और **(श्रेष्ठः)** उत्तम **(ऋषिः)** वेदमन्त्र और उनके अर्थ के ज्ञाता आप **(समिध्यसे)** प्रताप वा प्रकाशयुक्त किये जाते ऐसे आप **(यज्ञस्य)** सङ्गति के योग्य व्यवहार के **(प्राविता)** अत्यन्त रक्षाकारक **(भव)** होइये॥३॥

भावार्थः-हे विद्वान् लोगो! जो लोग आपकी स्तुति करते हैं, उन पुरुषों को आप लोग वेद के अर्थ ज्ञानवाले कीजिये, जिससे एक सम्मति से परस्पर रक्षा होवे॥३॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तुभ्यं श्चोतन्त्यध्रिगो शचीवः स्तोकासो अग्ने मेदसो घृतस्य।

कविशस्तो बृहता भानुनागा हव्या जुषस्व मेधिर॥४॥

तुभ्यम्। श्चोतन्ति। अध्रिगो इत्यध्रिऽगो। शचीऽवः। स्तोकासः। अग्ने। मेदसः। घृतस्य। कविऽशस्तः। बृहता। भानुना। आ। अगाः। हव्या। जुषस्व। मेधिर॥४॥

पदार्थः-**(तुभ्यम्)** **(श्चोतन्ति)** सिञ्चन्ति **(अध्रिगो)** योऽध्रीन् मन्त्रान् गच्छति जानाति तत्सम्बुद्धौ **(शचीवः)** शची प्रशस्ता प्रज्ञा विद्यते यस्य तत्सम्बुद्धौ **(स्तोकासः)** गुणानां स्तावकाः **(अग्ने)** अग्निरिव प्रकाशक **(मेदसः)** स्निग्धस्य **(घृतस्य)** आज्यस्योदकस्य वा **(कविशस्तः)** कविभिर्विद्वद्भिः प्रशंसितः **(बृहता)** महता **(भानुना)** तेजसा **(आ)** **(अगाः)** गच्छेः **(हव्या)** दातुमर्हाणि वस्तूनि **(जुषस्व)** सेवस्व **(मेधिर)** मेधाविन्॥४॥

अन्वयः-हे अध्रिगो शचीवो मेधिराऽग्ने! ये स्तोकासो मेदसो घृतस्य तुभ्यं श्चोतन्ति तैः सह कविशस्तस्त्वं बृहता भानुना सूर्य इवागाः हव्या जुषस्व॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथोदकेन सिक्त्वा वृक्षान् वर्द्धयित्वा फलानि प्राप्नुवन्ति तथैव सत्सङ्गेन सत्पुरुषान् सेवयित्वा विज्ञानादिफलानि प्राप्नुयुः॥४॥

पदार्थः-हे **(अध्रिगोः)** वेदमन्त्रों के ज्ञाता **(शचीवः)** प्रशंसनीय बुद्धियुक्त **(मेधिर)** बुद्धिमान् पुरुष **(अग्ने)** अग्नि के सदृश प्रकाशकारक! जो पुरुष **(स्तोकासः)** उत्तम गुणों के स्तुतिकर्त्ता **(मेदसः)**

चिकने **(घृतस्य)** घृत का **(तुभ्यम्)** तेरे लिये **(श्चोतन्ति)** सेचन करते उनके साथ **(कविशस्तः)** विद्वानों से प्रशंसित हुआ **(बृहता)** बड़े **(भानुना)** तेज से सूर्य के सदृश **(आ) (अगाः)** प्राप्त हो और **(हव्या)** देने योग्य वस्तुओं का **(जुषस्व)** सेवन करो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे जल से सींच कर वृक्षों को बढ़ाय फल प्राप्त होते हैं, वैसे ही सत्सङ्ग से सत्पुरुषों का सेवन करके विज्ञान आदि फलों को प्राप्त करें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ओजिष्ठं ते मध्यतो मेद उद्भृतं प्र ते वयं ददामहे।
श्चोतन्ति ते वसो स्तोका अधि त्वचि प्रति तान्देवशो विहि॥५॥२१॥

ओजिष्ठम्। ते। मध्यतः। मेदः। उत्ऽभृतम्। प्र। ते। वयम्। ददामहे। श्चोतन्ति। ते। वसोऽइति। स्तोकाः। अधि। त्वचि। प्रति। तान्। देवऽशः। विहि॥५॥

पदार्थः-**(ओजिष्ठम्)** अतिशयेन बलिष्ठम् **(ते)** तव **(मध्यतः) (मेदः)** स्नेहः **(उद्भृतम्)** उत्कृष्टतया धृतम् **(प्र) (ते)** तुभ्यम् **(वयम्) (ददामहे) (श्चोतन्ति)** सिञ्चन्ति **(ते)** तव **(वसो)** वासहेतो **(स्तोकाः)** स्तावकाः **(अधि)** उपरिभावे **(त्वचि) (प्रति) (तान्) (देवशः)** देवान् **(विहि)** प्राप्नुहि। अत्र**ान्येषामपि दृश्यत** इत्याद्यचो ह्रस्वः॥५॥

अन्वयः-हे वसो! ते मध्यतो यदोजिष्ठं मेद उद्भृतं तत्ते वयं प्रददामहे ये स्तोकास्तेऽधि त्वचि श्चोतन्ति तान् देवशः प्रति विहि॥५॥

भावार्थः-यो हि अतीव हृद्यं वस्तु यस्मै दद्यात्तेन तस्मै तादृशमेव देयं ये विदुषां सङ्गेन दिव्यान् गुणान् प्राप्नुवन्ति ते सर्वान् कोमलस्वभावान् कर्तुं शक्नुवन्तीति॥५॥

अत्राग्निमनुष्यगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इत्येकाधिकविंशतितमं सूक्तमेकाधिकविंशतितमश्च वर्गस्समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(वसो)** निवास के कारण! **(ते)** आपके **(मध्यतः)** मध्य से जो **(ओजिष्ठम्)** अति बलयुक्त **(मेदः)** प्रीति **(उद्भृतम्)** उत्तम प्रकार धारण की गयी, उसको **(ते)** आपके लिये **(वयम्)** हम लोग **(प्र, ददामहे)** देते हैं, जो **(स्तोकाः)** स्तुतिकारक **(ते)** आपके **(अधि)** ऊपर **(त्वचि)** चर्म में **(श्चोतन्ति)** सिञ्चन करते हैं **(तान्)** उन **(देवशः)** विद्वानों के **(प्रति)** समीप **(विहि)** प्राप्त होइये॥५॥

भावार्थ:-जो पुरुष बहुत ही उत्तम वस्तु जिस पुरुष को देवे, उस पुरुष को चाहिये कि उस देनेवाले पुरुष को वैसी ही वस्तु देवे और जो लोग विद्वानों के सत्सङ्ग से श्रेष्ठ गुणों को प्राप्त होते हैं, वे सम्पूर्ण जनों को कोमल स्वभावयुक्त कर सकते हैं॥५॥

इस सूक्त में अग्नि और मनुष्यों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह इक्कीसवां सूक्त और इक्कीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्य द्वाविंशतितमस्य सूक्तस्य गाथी ऋषिः। पुरीष्या अग्नयो देवताः। १ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २, ३ भुरिक् पङ्क्तिः। ५ निचृत्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ४ विराडनुष्टुप् छन्दः। ऋषभः स्वरः॥

अथाग्निगुणमाह॥

अब बाईसवें सूक्त का प्रारम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र से अग्नि के गुणवर्णन विषय को कहते हैं॥

अयं सो अग्निर्यस्मिन्त्सोममिन्द्रः सुतं दधे जठरे वावशानः।
सहस्रिणं वाजमत्यं न सप्तिं ससवान्त्सन्त्स्तूयसे जातवेदः॥ १॥

अयम्। सः। अग्निः। यस्मिन्। सोमम्। इन्द्रः। सुतम्। दधे। जठरे। वावशानः। सहस्रिणम्। वाजम्। अत्यम्। न। सप्तिम्। ससऽवान्। सन्। स्तूयसे। जातऽवेदः॥ १॥

पदार्थः-(**अयम्**) (**सः**) (**अग्निः**) विद्युत् (**यस्मिन्**) (**सोमम्**) पदार्थसमूहम् (**इन्द्रः**) जीवः (**सुतम्**) निष्पन्नम् (**दधे**) धरति (**जठरे**) उदराग्नौ (**वावशानः**) भृशं कामयमानः (**सहस्रिणम्**) असंख्यं बलं विद्यते यस्मिँस्तम् (**वाजम्**) वेगम् (**अत्यम्**) व्यापकं शीघ्रगामिनं वायुम् (**न**) इव (**सप्तिम्**) अग्न्याख्यमश्वम् (**ससवान्**) संभाजकः (**सन्**) (**स्तूयसे**) (**जातवेदः**) जातविद्य॥ १॥

अन्वयः-हे जातवेदो! यस्मिन्नयमग्निः सहस्रिणं वाजमत्यं न सप्तिं दधे तस्मिन् वावशान इन्द्रो भवान् जठरे सुतं सोमन्दधे स त्वं ससवान् सन् स्तूयसे॥ १॥

भावार्थः-यदि मनुष्या विद्ययाग्निं चालयेयुस्तर्ह्ययं सहस्राणामश्वानां बलन्धरति॥ १॥

पदार्थः-हे (**जातवेदः**) उत्तम विद्याधारी! (**यस्मिन्**) जिसमें (**अयम्**) यह (**अग्निः**) बिजुली (**सहस्रिणम्**) असंख्य पराक्रमयुक्त (**वाजम्**) वेग और (**अत्यम्**) व्यापक शीघ्र चलनेवाले वायु के (**न**) तुल्य (**सप्तिम्**) अग्निनामक अश्व को (**दधे**) धारण करता है, उसमें (**वावशानः**) अत्यन्त कामना करनेवाला (**इन्द्रः**) जीवात्मा आप (**जठरे**) पेट की अग्नि में (**सुतम्**) उत्पन्न (**सोमम्**) पदार्थों के समूह के धारणकर्त्ता आप (**ससवान्**) विभागकारक (**सन्**) होकर (**स्तूयसे**) स्तुति करने योग्य हो॥ १॥

भावार्थः-जो मनुष्य विद्या से अग्नि को चलावें तो यह अग्नि हजारों घोड़ों के बल को धारण करता है॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अग्ने यत्ते दिवि वर्चः पृथिव्यां यदोषधीष्वप्स्वा यजत्र।
येनान्तरिक्षमुर्वाततन्थ त्वेषः स भानुरर्णवो नृचक्षाः॥ २॥

अग्ने॑। यत्। ते॒। दि॒वि। वर्चः॑। पृ॒थि॒व्याम्। यत्। ओष॑धीषु। अ॒प्ऽसु। आ। य॒ज॒त्र॒। येन॑। अ॒न्तरि॑क्षम्। उ॒रु। आ॒ऽत॒तन्थ॑। त्वे॒षः। सः। भा॒नुः। अ॒र्ण॒वः। नृ॒ऽचक्षाः॑॥२॥

पदार्थः-(**अग्ने**) पावकवद्वर्त्तमान (**यत्**) (**ते**) तव (**दिवि**) प्रकाशे (**वर्चः**) दीप्तिः (**पृथिव्याम्**) (**यत्**) (**ओषधीषु**) सोमादिषु (**अप्सु**) जलेषु (**आ**) समन्तात् (**यजत्र**) सङ्गन्तः (**येन**) (**अन्तरिक्षम्**) (**उरु**) (**आततन्थ**) समन्तात् तनोति (**त्वेषः**) दीप्तिमान् (**सः**) (**भानुः**) दीप्तिमान् (**अर्णवः**) समुद्र इव (**नृचक्षाः**) नृणां द्रष्टा॥२॥

अन्वयः-हे यजत्राग्ने! ते दिवि यद्वर्चो यत्पृथिव्यां यदोषधीषु यदप्स्वा वर्त्तते येनोर्वन्तरिक्षमाततन्थ स त्वं त्वेषो भानुरर्णव इव नृचक्षा भव॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यद्विद्युताख्यं तेजः सूर्य्ये वायौ भूमौ जलेऽन्यत्र चोषध्यादिषु वर्त्तते तद्विज्ञाय सुखानि विस्तारयत॥२॥

पदार्थः-हे (**यजत्र**) प्रीति के पात्र (**अग्ने**) अग्नि के सदृश तेजस्वी! (**ते**) आपके (**दिवि**) प्रकाश में (**यत्**) जो (**वर्चः**) तेज (**यत्**) जो (**पृथिव्याम्**) पृथिवी में (**ओषधीषु**) जो ओषधियों में और जो तेज (**अप्सु**) जलों में (**आ**) अच्छा वर्त्तमान है तथा (**येन**) जिस तेज से (**अन्तरिक्षम्**) पोलरूप (**उरु**) वक्षःस्थल (**आततन्थ**) सब ओर से विस्तारकर्त्ता (**सः**) वह आप (**त्वेषः**) प्रकाशमान (**भानुः**) दीप्तियुक्त (**अर्णवः**) समुद्र के सदृश (**नृचक्षाः**) मनुष्यों के देखनेवाले होइये॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो बिजुली नामक तेज सूर्य्य, वायु, भूमि और जल में तथा अन्य पदार्थों ओषधी आदि में वर्त्तमान उसको जान के सुख का विस्तार करो॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अग्ने॑ दि॒वो अर्ण॒मच्छा॑ जिगा॒स्यच्छा॑ दे॒वाँ ऊ॑चिषे॒ धिष्ण्या॒ ये।
या रो॑च॒ने प॒रस्ता॒त्सूर्य॑स्य॒ याश्चा॒वस्ता॑दुप॒तिष्ठ॑न्त॒ आपः॑॥३॥

अग्ने॑। दि॒वः। अर्ण॑म्। अच्छ॑। जि॒गा॒सि॒। अच्छ॑। दे॒वान्। ऊ॒चि॒षे॒। धिष्ण्याः॑। ये। याः। रो॒च॒ने। प॒रस्ता॑त्। सूर्य॑स्य। याः। च॒। अ॒वस्ता॑त्। उ॒प॒ऽतिष्ठ॑न्ते। आपः॑॥३॥

पदार्थः-(**अग्ने**) अग्निसदृश विद्वन् पुरुष! (**दिवः**) सूर्य्यप्रकाशात् (**अर्णम्**) उदकम् (**अच्छ**) सम्यक्। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**जिगासि**) स्तौषि (**अच्छ**)। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**देवान्**) दिव्यगुणान् मनुष्यान् (**ऊचिषे**) उच्याः (**धिष्ण्याः**) धर्षितुं योग्याः (**ये**) (**याः**) (**रोचने**) सूर्य्यप्रकाशे (**परस्तात्**) (**सूर्य्यस्य**) सवितृमण्डलस्य (**याः**) (**च**) (**अवस्तात्**) अधस्तात् (**उपतिष्ठन्ते**) (**आपः**)॥३॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं यथाग्निर्दिवोऽर्णमच्छ गमयति तथाच्छ जिगासि देवानच्छोचिषे याः सूर्य्यस्य रोचने परस्तात् याश्च धिष्ण्या आपोऽवस्तादुपतिष्ठन्ते य एता विजानीयुस्तेऽद्भ्य उपकारं ग्रहीतुं शक्नुयुः॥३॥

भावार्थः-यथा सूर्य्योऽन्धकारं विनाश्य दिनं जनयित्वाऽऽपो वर्षयित्वा च सर्वान् सुखयति तथैव विद्वांसोऽविद्यां विनाश्य विद्यां जनयित्वा सुखानि वर्षयित्वा सर्वानानन्दयन्ति॥३॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश तेजस्वी विद्वान् पुरुष! आप जैसे अग्नि **(दिवः)** सूर्य्य के प्रकाश से **(अर्णम्)** जल को **(अच्छ)** अच्छे प्रकार प्राप्त होता है, वैसे **(अच्छ)** उत्तम प्रकार **(जिगासि)** स्तुति करो **(देवान्)** उत्तम गुणयुक्त मनुष्यों की **(ऊचिषे)** अच्छे प्रकार स्तुति करते हो **(याः)** जो **(सूर्य्यस्य)** सूर्य्यमण्डल के **(रोचने)** प्रकाश में **(परस्तात्)** ऊपर **(च)** और **(याः)** जो **(धिष्ण्याः)** धर्षण करने योग्य **(आपः)** जल **(अवस्तात्)** नीचे से **(उपतिष्ठन्ते)** प्राप्त होते हैं **(ये)** जो लोग इन जलों के गुणों को जानते, वे जलों से उपकार ले सकते हैं॥३॥

भावार्थः-जैसे सूर्य्य अन्धकार का नाश कर दिन को उत्पन्न कर और जल की वृष्टि करके सम्पूर्ण संसार का सुखकारक होता है, वैसे ही विद्वान् लोग अविद्या का नाश, विद्या की उत्पत्ति और सुख की वृष्टि करके सबको आनन्दित करते हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

पुरीष्यासो अग्नयः प्रावणेभिः सजोषसः।

जुषन्तां यज्ञमद्रुहोऽनमीवा इषो महीः॥४॥

पुरीष्यासः। अग्नयः। प्रवणेभिः। सऽजोषसः। जुषन्ताम्। यज्ञम्। अद्रुहः। अनमीवाः। इषः। महीः॥४॥

पदार्थः-**(पुरीष्यासः)** पुरीषेषु पालकेषु पृथिव्यादिषु व्यापकत्वेन भवाः **(अग्नयः)** पावका इव वर्त्तमानाः **(प्रवणेभिः)** गमनादिभिः। अत्रा**न्येषामपी**त्याद्यचो दीर्घः। **(सजोषसः)** समानप्रीति-सेवनाः **(जुषन्ताम्)** सेवन्ताम् **(यज्ञम्)** सङ्गतिमयम् **(अद्रुहः)** द्वेषरहिताः **(अनमीवाः)** नीरोगाः **(इषः)** अन्नानि **(महीः)** महतीर्वाचः। **महीति वाङ्नामसु पठितम्।** (निघं०१.११)॥४॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! भवन्तः पुरीष्यासोऽग्नय इव सजोषसोऽद्रुहोऽनमीवाः सन्तो प्रवणेभिर्यज्ञमिषो महीश्च जुषन्ताम्॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽग्न्यादयः पदार्थाः परस्परं मिलितास्सन्तो-ऽनेकानि कार्य्याणि साध्नुवन्ति तथैव सखायोऽरोगास्सन्तो विद्वांसो धनधान्यैश्वर्यं विद्याश्च प्राप्नुवन्तु॥४॥

पदार्थः-हे **(विद्वानो)**! आप लोग **(पुरीष्यासः)** पालक पृथिवी आदि पदार्थों में व्यापक भाव से वर्त्तमान **(अग्नयः)** अग्नियों के सदृश तेजयुक्त **(सजोषसः)** तुल्य प्रीति के निर्वाहक **(अद्रुहः)** द्वेषरहित **(अनमीवाः)** रोग से रहित हुए **(प्रवणेभिः)** गमन आदिकों से **(यज्ञम्)** मेलरूप यज्ञ **(इषः)** अन्न और **(महीः)** श्रेष्ठ वाणियों का **(जुषन्ताम्)** सेवन करो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे अग्नि आदि पदार्थ परस्पर मिल कर अनेक कार्य्यों को सिद्ध करते हैं, वैसे ही मित्रभाव से वर्त्तमान रोग से रहित हुए विद्वान् लोग धनधान्य ऐश्वर्य्य और विद्या को प्राप्त होवें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इळा॑मग्ने पुरु॒दंसं॑ स॒निं गोः श॑श्वत्त॒मं हव॑मानाय साध।
स्यान्नः॑ सू॒नुस्तन॑यो वि॒जावाग्ने॒ सा ते॑ सुम॒तिर्भू॑त्व॒स्मे॥५॥२२॥

इळा॑म्। अ॒ग्ने॒। पु॒रु॒ऽदंस॑म्। स॒निम्। गोः। श॒श्व॒त्ऽत॒मम्। हव॑मानाय। सा॒ध॒। स्यात्। नः॒। सू॒नुः। तन॑यः। वि॒जाऽवा॑। अ॒ग्ने॒। सा। ते॒। सु॒ऽम॒तिः। भू॒तु॒। अ॒स्मे इति॑॥५॥

पदार्थः-**(इळाम्)** पृथिवीम् **(अग्ने)** अग्निरिव विद्याप्रकाशक **(पुरुदंसम्)** बहुकर्माणम् **(सनिम्)** याचमानम् **(गोः)** वाचः **(शश्वत्तमम्)** अनादिनं लक्ष्यम् **(हवमानाय)** प्रशंसमानाय **(साध)** **(स्यात्)** भवेत् **(नः)** अस्माकम् **(सूनुः)** अपत्यम् **(तनयः)** विद्याविस्तारकः **(विजावा)** सत्याऽसत्ययोर्विभाजकः **(अग्ने)** **(सा)** **(ते)** तव **(सुमतिः)** सुष्ठुप्रज्ञा **(भूतु)** भवतु **(अस्मे)** अस्मभ्यम्॥५॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं हवमानायेळां पुरुदंसं सनिं गोः शश्वत्तमं नोऽस्मभ्यं साध। हे अग्ने! येन नस्तनयो विजावा सूनुः स्यात्सा ते सुमतिरस्मे भूतु॥५॥

भावार्थः-विद्वान् विद्यामादित्सवे विद्यां साध्नुयात् सर्वतो गुणान् गृह्णीयादिति॥५॥

अस्मिन्सूक्तेऽग्निगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्वाविंशं सूक्तं द्वाविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश विद्या के प्रकाश करनेवाले विद्वान्! आप **(हवमानाय)** प्रशंसा करनेवाले के लिये **(इळाम्)** पृथिवी **(पुरुदंसम्)** बहुत कर्मकर्त्ता **(सनिम्)** याचनाकारक **(गोः)** वाणी **(शश्वत्तमम्)** अनादि से वर्त्तमान चिह्न को हम लोगों के लिये **(साध)** सिद्ध करिये। हे **(अग्ने)** तेजस्वी

पुरुष! जिससे **(नः)** हम लोगों का **(तनयः)** विद्याविस्तारकर्त्ता **(विजावा)** सत्य और असत्य का विभागकारक **(सूनुः)** पुत्र **(स्यात्)** हो तथा **(सा)** वह **(ते)** आपकी **(सुमतिः)** उत्तम बुद्धि **(अस्मे)** हम लोगों के लिये **(भूतु)** होवे॥५॥

भावार्थः-विद्वान् पुरुष विद्या ग्रहण करने की इच्छा करनेवाले पुरुष के लिये विद्या को सिद्ध करे तथा सबसे गुणों का ग्रहण करे॥५॥

इस सूक्त में अग्नि के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह बाईसवां सूक्त और बाईसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्य त्रयोविंशतितमस्य सूक्तस्य देवश्रवा देवताश्च भारतावृषी। अग्निर्देवता। १ विराट् त्रिष्टुप्। २-५ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथाग्निद्वारा शिल्पविद्योपदिश्यते॥

अब पाँच ऋचावाले तेईसवें सूक्त का प्रारम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र से अग्नि के द्वारा शिल्पविद्या का उपदेश किया है॥

निर्मथितः सुधित आ सधस्थे युवा कविरध्वरस्य प्रणेता।
जूर्यत्स्वग्निरजरो वनेष्वत्रा दधे अमृतं जातवेदाः॥ १॥

निःऽमथितः। सुऽधितः। आ। सधऽस्थे। युवा। कविः। अध्वरस्य। प्रऽनेता। जूर्यतऽसु। अग्निः। अजरः। वनेषु। अत्र। दधे। अमृतम्। जातऽवेदाः॥ १॥

पदार्थः-(**निर्मथितः**) नितरां विलोडितः (**सुधितः**) सुष्ठु धृतः (**आ**) (**सधस्थे**) समानस्थाने (**युवा**) विभाजकः (**कविः**) क्रान्तदर्शनः (**अध्वरस्य**) अहिंसामयस्य शिल्पव्यवहारस्य (**प्रणेता**) प्रेरकः (**जूर्यत्सु**) वेगवत्सु (**अग्निः**) पावकः (**अजरः**) नित्यः (**वनेषु**) रश्मिषु (**अत्र**) अस्मिन्। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। (**दधे**) दधाति (**अमृतम्**) उदकम् (**जातवेदाः**) जातानि वेदांसि धनानि यस्मात्सः॥ १॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्सधस्थे निर्मथितः सुधितो युवा कविः प्रणेताऽजरो जातवेदा अग्निर्जूर्यत्सु वनेष्वध्वरस्या दधेऽत्रामृतं च स सर्वोपायैर्वेदितव्यः॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्याः! कलायन्त्रादियुक्तेषु यानेषु नितरां विलोडितश्चालितोऽग्निः सर्वेभ्यो यानानि वेगेन गमयतीति वित्त॥ १॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**सधस्थे**) तुल्य स्थान में (**निर्मथितः**) अत्यन्त मथा अर्थात् प्रदीप्त किया गया (**सुधितः**) उत्तम प्रकार धारित (**युवा**) विभागकर्त्ता (**कविः**) उत्तम दर्शन सहित (**प्रणेता**) प्रेरणाकारक (**अजरः**) नित्य (**जातवेदाः**) धनों की उत्पत्ति करनेवाला (**अग्निः**) अग्नि (**जूर्यत्सु**) वेगयुक्त (**वनेषु**) किरणों में (**अध्वरस्य**) अहिंसारूप शिल्पव्यवहार को (**आदधे**) धारण करता है (**अत्र**) इस शिल्पविद्या में (**अमृतम्**) जल को भी धारण करता, वह अग्नि सम्पूर्ण उपायों से जानने योग्य है॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! कलायन्त्र आदिकों से युक्त वाहनों में अत्यन्त मथित होकर चलाया गया अग्नि सकल जनों के लिये वाहनों को वेगपूर्वक चलाता है, यह जानना चाहिये॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अमन्थिष्टां भारता रेवदग्निं देवश्रवा देववातः सुदक्षम्।
अग्ने वि पश्य बृहताभि रायेषां नो नेता भवतादनु द्यून्॥ २॥

अमन्थिष्टाम्। भारता। रेवत्। अग्निम्। देवऽश्रवाः। देवऽवातः। सुऽदक्षम्। अग्ने। वि। पश्य। बृहता। अभि। राया। इषाम्। नः। नेता। भवतात्। अनु। द्यून्॥ २॥

पदार्थः-(**अमन्थिष्टाम्**) मथ्नीताम् (**भारता**) धारकपोषकौ (**रेवत्**) धनवत् (**अग्निम्**) पावकम् (**देवश्रवाः**) देवान् यः शृणोति सः (**देववातः**) देवो दिव्यो वातः प्रेरको यस्य सः (**सुदक्षम्**) सुष्ठुबलम् (**अग्ने**) अग्निरिव दर्शकः (**वि**) (**पश्य**) समीक्षस्व (**बृहता**) महता (**अभि**) (**राया**) (**इषाम्**) अन्नादीनाम् (**नः**) अस्मभ्यम् (**नेता**) नयनकर्त्ता (**भवतात्**) भवेत् (**अनु**) (**द्यून्**) अनुकूलान् दिवसान्॥ २॥

अन्वयः-हे अग्ने! यथा भारता सुदक्षमग्निममन्थिष्टां तथा देवश्रवो देववातोऽनु द्यून् रेवदग्निं व्यमथ्नीयात्। यो नो नेता भवतात् स त्वं बृहता रायेषामभि विपश्य॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा शिल्पविद्याध्येत्रध्यापकौ पदार्थैः क्रयविक्रयान् श्रीमन्तो भवन्ति तथैव यूयमपि भवत॥ २॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के सदृश प्रकाशयुक्त! जैसे (**भारता**) धारणकर्त्ता और पालनकर्त्ता पुरुष (**सुदक्षम्**) श्रेष्ठ बल (**अग्निम्**) अग्नि का (**अमन्थिष्टाम्**) मन्थन करते, वैसे (**देवश्रवाः**) विद्वानों के वचन श्रोता (**देववातः**) श्रेष्ठ प्रेरणाकारक से प्रेरित (**अनु, द्यून्**) अनुकूल दिवस (**रेवत्**) धन के तुल्य अग्नि का मन्थन करें। जो (**नः**) हम लोगों के लिये (**नेता**) सुमार्ग में अग्रणी (**भवतात्**) होवे वह आप (**बृहता**) बड़े (**राया**) धन से (**इषाम्**) अन्न आदिकों के मध्य में (**अभि**) (**वि**) **पश्य**) सब प्रकार कृपादृष्टि से देखिये॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे शिल्पविद्या के पढ़ने-पढ़ानेवाले लोग पदार्थों के क्रय-विक्रय से धनवान् होते हैं, वैसे ही आप लोग भी होइये॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

दश क्षिपः पूर्व्यं सीमजीजनन्त्सुजातं मातृषु प्रियम्।
अग्निं स्तुहि दैववातं देवश्रवो यो जनानामसद्वशी॥ ३॥

दश। क्षिपः। पूर्व्यम्। सीम्। अजीजनन्। सुऽजातम्। मातृषु। प्रियम्। अग्निम्। स्तुहि। दैवऽवातम्। देवऽश्रवः। यः। जनानाम्। असत्। वशी॥ ३॥

पदार्थः-(**दश**) दशसंख्याकाः (**क्षिपः**) प्रक्षेपिका अङ्गुलयः (**पूर्व्यम्**) पूर्वैर्निष्पादितम् (**सीम्**) सर्वतः (**अजीजनन्**) जनयन्ति (**सुजातम्**) सुष्ठुप्रसिद्धम् (**मातृषु**) नदीषु। **मातर इति नदीनामसु पठितम्।** (निघं०१.१३) (**प्रियम्**) कमनीयम् (**अग्निम्**) पावकम् (**स्तुहि**) प्रशंस (**दैववातम्**) देवैर्विज्ञातानां

सम्बन्धिनम् **(देवश्रवः)** यो देवेभ्यो विद्वद्भ्यः शृणोति तत्सम्बुद्धौ **(यः)** **(जनानाम्)** मनुष्याणाम् **(असत्)** भवेत् **(वशी)** जितेन्द्रियः॥३॥

अन्वयः-हे देवश्रवो! भवान् यथा दश क्षिपो मातृषु प्रियं सुजातं दैववातं पूर्व्यमग्निं सीमजीजनन् तथा त्वं स्तुहि। यो जनानां वश्यसत् तं च प्रशंस॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा कराङ्गुलिभिर्बहूनि कार्य्याणि सिद्ध्यन्ति तथैवाग्न्यादिभिर्बहूनि कार्य्याणि यूयं साध्नुत॥३॥

पदार्थः-हे **(देवश्रवः)** विद्वानों के लिये उपकार श्रोता! आप जैसे **(दश)** दश संख्यायुक्त **(क्षिपः)** फैलनेवाली अंगुलियां **(मातृषु)** नदियों में **(प्रियम्)** कामना करने योग्य **(सुजातम्)** उत्तम प्रकार सिद्ध **(दैववातम्)** विद्वानों से जाने हुओं का सम्बन्धी **(पूर्व्यम्)** प्राचीन जनों से उत्पन्न **(अग्निम्)** अग्नि को **(सीम्)** सब प्रकार **(अजीजनन्)** उत्पन्न करते हैं, वैसे आप **(स्तुहि)** स्तुति करो और **(यः)** जो **(जनानाम्)** मनुष्यों के मध्य में **(वशी)** इन्द्रियजित् **(असत्)** होवे, उसकी प्रशंसा करो॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे हाथों की अंगुलियों से बहुत कार्य्य सिद्ध होते हैं, वैसे ही अग्नि आदिकों से बहुत कार्यों को आप लोग सिद्ध करो॥३॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

नि त्वा॑ दधे॒ वर॒ आ पृ॑थि॒व्या इळा॑यास्प॒दे सु॑दि॒न॒त्वे अह्ना॑म्।

दृ॒षद्व॑त्यां॒ मानु॑ष आप॒यायां॒ सर॑स्वत्यां रे॒वद॑ग्ने दिदीहि॥४॥

नि। त्वा॒। द॒धे॒। वरे॑। आ। पृ॒थि॒व्याः॑। इळा॑याः। प॒दे। सु॒दि॒न॒ऽत्वे। अह्ना॑म्। दृ॒षत्ऽव॑त्याम्। मानु॑षे। आ॒प॒याया॑म्। सर॑स्वत्याम्। रे॒वत्। अ॒ग्ने॒। दि॒दी॒हि॒॥४॥

पदार्थः-**(नि)** **(त्वा)** त्वाम् **(दधे)** **(वरे)** उत्तमे व्यवहारे **(आ)** समन्तात् **(पृथिव्याः)** भूमेरन्तरिक्षस्य वा **(इळायाः)** वाचः **(पदे)** प्रापणीये स्थाने **(सुदिनत्वे)** शोभनानां दिनानां भावे **(अह्नाम्)** दिवसानाम् **(दृषद्वत्याम्)** बहवो दृषदो विद्यन्ते यस्याम् **(मानुषे)** मननशीले **(आपयायाम्)** प्राणव्यापिकायाम् **(सरस्वत्याम्)** विज्ञानवत्यां वाचि **(रेवत्)** प्रशस्तधनेन तुल्यम् **(अग्ने)** पावकवद्विद्वन् **(दिदीहि)** प्रकाशय॥४॥

अन्वयः-हे अग्ने! अहं यथा त्वा पृथिव्या वर इळायास्पदेऽह्नां सुदिनत्वे दृषद्वत्यामापयायां सरस्वत्यां मानुषे रेवन्नि दधे तथा मामा दिदीहि॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्या सखायो भूत्वाऽन्योऽन्यस्मिन् विद्याधर्मसभ्यतासुखानि वर्द्धयेयुः॥४॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश तेजस्वी विद्वान् पुरुष! मैं जैसे **(त्वा)** आपको **(पृथिव्याः)** भूमि वा अन्तरिक्ष **(वरे)** उत्तम व्यवहार और **(इळायाः)** वाणी के **(पदे)** प्राप्त होने योग्य स्थान में **(अह्नाम्)** दिवसों के **(सुदिनत्वे)** उत्तम दिनों में **(दृषद्वत्याम्)** प्रस्थरयुक्त **(आपयायाम्)** प्राणों में व्यापक **(सरस्वत्याम्)** विज्ञानवाली वाणी और **(मानुषे)** मननशील में **(रेवत्)** श्रेष्ठ धन के तुल्य **(नि)** **(दधे)** धारण किया, वैसे मननकर्त्ता आप मुझको **(आ)** **(दिदीहि)** प्रकाशित करो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि परस्पर मित्रभाव से वर्त्तमान करके **[=होकर] [एक-दूसरे के]** विद्या, धर्म, सज्जनता और सुखों को बढ़ावें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इळामग्ने पुरुदंसं सनिं गोः शश्वत्तमं हवमानाय साध।
स्यान्नः सूनुस्तनयो विजावाग्ने सा ते सुमतिर्भूत्वस्मे॥५॥२३॥

इळाम्। अग्ने। पुरुऽदंसम्। सनिम्। गोः। शश्वत्ऽतमम्। हवमानाय। साध। स्यात्। नः। सूनुः। तनयः। विजाऽवा। अग्ने। सा। ते। सुऽमतिः। भूतु। अस्मे इति॥५॥

पदार्थः-**(इळाम्)** प्रशंसनीयां वाचम् **(अग्ने)** पावकवद्विद्याप्रकाशक **(पुरुदंसम्)** बहुशुभकर्माणम् **(सनिम्)** विद्यादिशुभगुणदानम् **(गोः)** उत्तमवाचः **(शश्वत्तमम्)** अनादिभूतं विज्ञानम् **(हवमानाय)** आददानाय **(साध)** संसाध्नुहि **(स्यात्)** **(नः)** अस्माकम् **(सूनुः)** अपत्यवच्छिष्यः **(तनयः)** सुखविस्तारकः **(विजावा)** विशेषेण सर्वेषां सुखजनकः **(अग्ने)** सुपरीक्षक **(सा)** **(ते)** **(सुमतिः)** **(भूतु)** **(अस्मे)** अस्मासु॥५॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं हवमानायेळां गोः शश्वत्तमं पुरुदंसं सनिं साध यतो नो विजावा सूनुस्तनयः स्यात्। हे अग्ने! या ते सुमतिर्भूतु साऽस्मे स्यात्॥५॥

भावार्थः-मनुष्यैः परस्परान् प्रति शुभगुणग्रहणादानोपदेशः कर्तव्यः स्वसन्तानानां विद्यासुशिक्षाविज्ञानानि सततं वर्द्धनीयानीति॥५॥

अत्राग्निविद्वन्मनुष्यगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति त्रयोविंशतितमं सूक्तं त्रयोविंशतितमश्च वर्गः समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश विद्या के प्रकाशकारी! आप **(हवमानाय)** ग्रहण करने के लिये **(इळाम्)** प्रशंसायुक्त वाणी को और **(गोः)** उत्तम वाणी के **(शश्वत्तमम्)** अनादि विज्ञान तथा **(पुरदंसम्)** बहुत शुभ कर्मों के **(सनिम्)** विद्या आदि उत्तम गुणों के दान को **(साध)** सिद्ध करो जिससे **(नः)** हम लोगों का **(विजावा)** विशेष करके सम्पूर्ण जनों का सुखोत्पादक **(सूनुः)** पुत्र के सदृश शिष्य **(तनयः)** सुख का विस्तारकारक **(स्यात्)** होवे। हे **(अग्ने)** उत्तम प्रकार परीक्षा लेने में निपुण विद्वन्! जो

(ते) आपकी **(सुमतिः)** उत्तम बुद्धि **(भूतु)** होवे **(सा)** वह **(अस्मे)** हम लोगों में होवे॥५॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि परस्पर जनों के प्रति शुभ गुणों के ग्रहण और दान का उपदेश दें और अपने सन्तानों को विद्या, सुशिक्षा और विज्ञानों को निरन्तर बढ़ावें॥५॥

इस सूक्त में अग्नि और विद्वान् मनुष्यों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह तेईसवां सूक्त और तेईसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्य चतुर्विंशतितमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। अग्निर्देवता। १ निचृदनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः। २ निचृद्गायत्री। ३-५ गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथ राजधर्मविषयमाह॥

अब पाँच ऋचावाले चौबीसवें सूक्त का प्रारम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र से राजधर्मविषय का उपदेश करते हैं॥

अग्ने सहस्व पृतना अभिमातीरपास्य। दुष्टरस्तरन्नरातीर्वर्चो धा यज्ञवाहसे॥ १॥

अग्ने। सहस्व। पृतनाः। अभिऽमातीः। अप। अस्य। दुस्तरः। तरन्। अरातीः। वर्चः। धाः। यज्ञऽवाहसे॥ १॥

पदार्थः-(**अग्ने**) वह्निवद्दुष्टानां दाहक (**सहस्व**) अभिभव तिरस्कुरु। **सह अभिभव** इत्यस्य प्रयोगः। (**पृतनाः**) शत्रुसेनाः (**अभिमातीः**) अभिमानयुक्तान् दुष्टान् विघ्नकारिणः (**अप**) (**अस्य**) दूरीकुरु (**दुष्टरः**) दुःखेन तरितुमुल्लङ्घयितुं जेतुं योग्यः (**तरन्**) उल्लङ्घयन् (**अरातीः**) शत्रून् (**वर्चः**) अन्नम्। **वर्च इति अन्ननामसु पठितम्।** (निघं०२.७) (**धाः**) धेहि (**यज्ञवाहसे**) यज्ञस्य प्रापकाय॥ १॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं पृतनाः सहस्व अभिमातीरपास्य। दुष्टरस्त्वमरातीस्तरन् यज्ञवाहसे वर्चो धाः॥ १॥

भावार्थः-राजपुरुषैः स्वप्रजासेना बलवतीः कृत्वा दुष्टाञ्छत्रून्निवार्य्य प्रजावर्द्धनाय धनविद्योन्नतिः सततं कर्त्तव्या॥ १॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के तुल्य दुष्टजनों के दाहकर्त्ता वीर पुरुष! आप (**पृतना**) शत्रुओं की सेनाओं का (**सहस्व**) तिरस्कार करो (**अभिमातीः**) अभिमान युक्त विघ्नकारी दुष्टों को (**अपास्य**) दूर करो (**दुष्टरः**) कठिनता से उल्लङ्घन करने योग्य आप और (**अरातीः**) शत्रुओं को (**तरन्**) उल्लङ्घन करते हुए (**यज्ञवाहसे**) यज्ञ के प्राप्त कराने वाले के लिये (**वर्चः**) अन्न को (**धाः**) धारण कीजिये॥ १॥

भावार्थः-राजपुरुषों को चाहिये कि अपनी प्रजा और सेनाओं को बलयुक्त कर और दुष्ट शत्रुओं को राज्य से पृथक् करके प्रजा की वृद्धि के लिये धन और विद्या की निरन्तर उन्नति करें॥ १॥

अथ विद्वद्भिः कथमन्येषामुन्नतिः कार्येत्याह॥

अब विद्वानों को कैसे दूसरों की उन्नति करनी चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अग्ने इळा समिध्यसे वीतिहोत्रो अमर्त्यः। जुषस्व सू नो अध्वरम्॥ २॥

अग्ने। इळा। सम्। इध्यसे। वीतिऽहोत्रः। अमर्त्यः। जुषस्व। सु। नः। अध्वरम्॥ २॥

पदार्थः-(**अग्ने**) अग्निवद्विद्याप्रकाशयुक्त (**इळा**) सुशिक्षिता स्तोतुमर्हा वाक् (**सम्**) सम्यक् (**इध्यसे**) प्रकाश्यसे (**वीतिहोत्रः**) वीतीनां शुभगुणव्याप्तानां विद्यानां होत्रं स्वीकरणं यस्य सः (**अमर्त्यः**)

आत्मत्वेन मरणधर्मरहितः **(जुषस्व)** सेवस्व **(सु)**। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(नः)** अस्माकम् **(अध्वरम्)** अहिंसादिव्यवहारयुक्तं यज्ञम्॥२॥

अन्वयः-हे अग्नेऽमर्त्यो वीतिहोत्रस्त्वं येळास्ति यथा त्वं समिध्यसे तया सह नोऽध्वरं सु जुषस्व॥२॥

भावार्थः-विद्वद्भिर्येन स्वेषां वृद्धिर्भवेत् तेनैवान्येषामपि उन्नतिः कार्य्या॥२॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के तुल्य विद्या के प्रकाश से युक्त पुरुष! **(अमर्त्यः)** आत्मरूप से मरणधर्मरहित **(वीतिहोत्रः)** उत्तम गुणों से पूरित विद्याओं के स्वीकारकारी आप जो **(इळा)** उत्तम प्रकार शिक्षित स्तुति करने योग्य वाणी है और जिससे आप **(सम्)** **(इध्यसे)** उत्तम प्रकार प्रकाशित हो उसके साथ **(नः)** हम लोगों के **(अध्वरम्)** अहिंसा आदि व्यवहार से युक्त यज्ञ का **(सु, जुषस्व)** अच्छे प्रकार सेवन करो॥२॥

भावार्थः-विद्वानों को चाहिये कि जिससे अपनी वृद्धि हो, उसी से अन्य जनों की उन्नति करें॥२॥

पुनः राजधर्मविषयमाह॥

फिर राजधर्म विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अग्नें द्युम्नेनं जागृवे सहंसः सूनवाहुत। एदं बुर्हिः संदो मम॥३॥

अग्नें। द्युम्नेनं। जागृवे। सहंसः। सूनो इति। आऽहुत। आ। इदम्। बर्हिः। सदः। ममं॥३॥

पदार्थः-**(अग्ने)** प्रकाशयुक्त राजन् **(द्युम्नेन)** यशस्विना धनेन **(जागृवे)** जागरूक **(सहसः)** बलवतः **(सूनो)** पुत्र दुष्टानां हिंसक **(आहुत)** समन्तात्कृताह्वान **(आ)** **(इदम्)** वर्त्तमानम् **(बर्हिः)** अतीवोत्तमम् **(सदः)** स्थित्यर्हमासनम् **(मम)**॥३॥

अन्वयः-हे जागृवे सहसः सूनावाहुताऽग्ने! द्युम्नेन सह वर्त्तमानस्त्वं ममेदं बर्हिः सद आ जुषस्व॥३॥

भावार्थः-ये राजपुरुषा यशोबलयुक्ता राजधर्मे जागरूका न्यायाधीशाः स्युस्तेऽखण्डितं राज्यं पालयितुं शक्नुयुः॥३॥

पदार्थः-हे **(जागृवे)** राजधर्म के उत्तम प्रकार निर्वाहक **(सहसः)** बलवान् के **(सूनो)** पुत्र, दुष्टों के नाशकर्त्ता **(आहुत)** चारों ओर से पुकारे गये **(अग्ने)** प्रतापयुक्त राजन्! **(द्युम्नेन)** यशकारक धन के सहित विराजमान आप **(मम)** मेरे **(इदम्)** इस वर्त्तमान **(बर्हिः)** अत्यन्त श्रेष्ठ **(सदः)** बैठने योग्य आसन

का **(आ, जुषस्व)**[८] अच्छे प्रकार सेवन करो॥३॥

भावार्थः-जो राजपुरुष यश **[और]** बलयुक्त, राजधर्म में कुशल, न्यायाधीश हों, **[वे]** अखण्डित राज्य की पालना कर सकें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अग्ने विश्वेभिरग्निभिर्देवेभिर्महया गिरः। यज्ञेषु य उ चायवः॥४॥

अग्ने। विश्वेभिः। अग्निऽभिः। देवेऽभिः। महय। गिरः। यज्ञेषु। ये। ऊम् इति। चायवः॥४॥

पदार्थः-**(अग्ने)** विद्वन् **(विश्वेभिः)** समग्रैः **(अग्निभिः)** अग्निभिरिव वर्त्तमानैः **(देवेभिः)** दिव्यगुणकर्मस्वभावैर्विद्वद्भिः **(महय)** पूजय। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(गिरः)** सुशिक्षिता वाचः **(यज्ञेषु)** सङ्गन्तव्येषु व्यवहारेषु **(ये)** **(उ)** **(चायवः)** सत्कर्त्तारः॥४॥

अन्वयः-हे अग्ने! ये यज्ञेषु चायवस्स्युस्तानेवाग्निभिरिव विश्वेभिर्देवेभिस्सह महय उ एषां गिरः सत्कुरु॥४॥

भावार्थः-ये राजजना अत्र जगत्युत्तमानि कर्माणि कुर्युस्ते सर्वैः सत्कर्त्तव्या, ये च दुष्टानि तेऽपमाननीयास्स्युः॥४॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वन् पुरुष! **(ये)** जो पुरुष **(यज्ञेषु)** सङ्गति के योग्य व्यवहारों में **(चायवः)** सत्कार योग्य हों उनका ही **(अग्निभिः)** अग्नियों के सदृश तेजयुक्त **(विश्वेभिः)** सम्पूर्ण **(देवेभिः)** श्रेष्ठ गुण, कर्म, स्वभावयुक्त विद्वानों के साथ **(महय)** सत्कार करो **(उ)** और उन्हीं लोगों की **(गिरः)** उत्तम प्रकार शिक्षायुक्त वाणियों का प्रमाण मानो॥४॥

भावार्थः-जो राजपुरुष इस संसार में उत्तम कार्य्यों के कर्त्ता हों, उनका सब लोग सत्कार करें और जो दुष्ट कर्म करते हों, उनका अपमान करें॥४॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अग्ने दा दाशुषे रयिं वीरवन्तं परीणसम्। शिशीहि नः सूनुमतः॥५॥२४॥

अग्ने। दाः। दाशुषे। रयिम्। वीरऽवन्तम्। परीणसम्। शिशीहि। नः। सूनुऽमतः॥५॥

---

८. 'जुषस्व' पद मन्त्र में पठित नहीं है।

पदार्थः-(**अग्ने**) (**दाः**) देहि (**दाशुषे**) सर्वेषां सुखदात्रे (**रयिम्**) धनम् (**वीरवन्तम्**) बहवो वीरा यस्मिँस्तम् (**परीणसम्**) बहुविधम्। **परीणस इति बहुनामसु पठितम्।** (निघं०३.१) (**शिशीहि**) तीक्ष्णान् सम्पादय। अत्र **वाच्छन्दसी**ति विकरणस्य श्लु**रन्येषामपि दृश्यत** इति दीर्घश्च। (**नः**) अस्मान् (**सूनुमतः**) पुत्रयुक्तान्॥५॥

अन्वयः-हे अग्ने! यथा त्वं दाशुषे परीणसं वीरवन्तं रयिन्दास्तथैव सूनुमतो नोऽस्माञ्छिशीहि॥५॥

भावार्थः-ये विद्याधनदातारः स्युस्तान् प्रत्येवं वाच्यं भवन्तोऽस्मान् सर्वथा वर्द्धयन्त्विति॥५॥

अत्राग्निराजविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इति चतुर्विंशतितमं सूक्तं स एव वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के सदृश तेजयुक्त विद्वान् पुरुष! जैसे आप (**दाशुषे**) सबके सुखदाता जन के लिये (**परीणसम्**) बहुत प्रकार युक्त (**वीरवन्तम्**) बहुत वीरों से विशिष्ट (**रयिम्**) धन को (**दाः**) दीजिये और वैसे ही (**सूनुमतः**) पुत्रयुक्त (**नः**) हम लोगों को (**शिशीहि**) प्रबल कीजिये॥५॥

भावार्थः-जो विद्या और धन के दाता विद्वान् हों, उनके प्रति ऐसा कहना चाहिये कि आप लोग हम लोगों की सब प्रकार वृद्धि करो॥५॥

इस सूक्त में अग्नि, राजा और विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह चौबीसवां सूक्त और चौबीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्य पञ्चविंशतितमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। १-४ अग्निर्देवता। ५ इन्द्राग्नीदेवते। १ निचृदनुष्टुप्। २ अनुष्टुप् छन्दः। ऋषभः स्वरः। ३-५ भुरिक् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ सूर्याग्निदृष्टान्तेन विद्वत्कृत्यमाह॥

अब पाँच ऋचावाले पच्चीसवें सूक्त का प्रारम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र से सूर्यरूप अग्नि के दृष्टान्त से विद्वानों का कर्त्तव्य कहते हैं॥

अग्ने दिवः सूनुरसि प्रचेतास्तना पृथिव्या उत विश्ववेदाः।
ऋधग्देवाँ इह यजा चिकित्वः॥१॥

अग्ने। दिवः। सूनुः। असि। प्रऽचेताः। तना। पृथिव्याः। उत। विश्वऽवेदाः। ऋधक्। देवान्। इह। यज। चिकित्वः॥१॥

पदार्थः-(**अग्ने**) विद्वन् (**दिवः**) विद्युतः (**सूनुः**) सूर्य्यः (**असि**) (**प्रचेताः**) प्रकृष्टज्ञानयुक्तो विज्ञापको वा (**तना**) विस्तारकः (**पृथिव्याः**) अन्तरिक्षस्य (**उत**) अपि (**विश्ववेदाः**) यो विश्वं धनं विन्दति सः (**ऋधक्**) स्वीकारे (**देवान्**) विदुषो दिव्यगुणान् वा (**इह**) अस्मिन्संसारे (**यज**) सङ्गमय। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**चिकित्वः**) विज्ञानवान्॥१॥

अन्वयः-हे चिकित्वोऽग्ने! यथा दिवः सूनुः सूर्य्य इव प्रचेताः पृथिव्यास्तना उत विश्ववेदा असि स त्वमिह देवानृधग्यज॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्य्यस्सर्वेषां मूर्तिमद्द्रव्याणां प्रकाशकोऽस्ति तथा विद्वांसो विद्वत्प्रियाश्चेह सर्वेषामात्मनां प्रकाशका भवन्ति॥१॥

पदार्थः-हे (**चिकित्वः**) विज्ञानवान् (**अग्ने**) विद्वन् पुरुष! जैसे (**दिवः**) बिजुली से (**सूनुः**) सूर्य्य के समान तेजस्वी (**प्रचेताः**) उत्तम विज्ञानयुक्त वा विज्ञानदाता (**पृथिव्याः**) अन्तरिक्ष के (**तना**) विस्तारक (**उत**) और भी (**विश्ववेदाः**) धनदाता (**असि**) हो वह आप (**इह**) इस संसार में (**देवान्**) विद्वान् वा उत्तम गुणों को (**ऋधक्**) स्वीकार करने में (**यज**) संयुक्त कीजिये॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य सम्पूर्ण स्वरूपवाले द्रव्यों का प्रकाशक है, वैसे विद्वान् और विद्वानों से प्रेमकारी पुरुष इस संसार में सर्व जनों के आत्माओं के प्रकाशक होते हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अग्निस्सनोति वीर्याणि विद्वान्त्सनोति वाजममृताय भूषन्।
स नो देवाँ एह वहा पुरुक्षो॥२॥

अग्निः। सनोति। वीर्याणि। विद्वान्। सनोति। वाजम्। अमृताय। भूषन्। सः। नः। देवान्। आ। इह। वह। पुरुक्षो इति पुरुऽक्षो॥ २॥

पदार्थः-(**अग्निः**) पावक इव (**सनोति**) विभजति (**वीर्य्याणि**) बलानि (**विद्वान्**) (**सनोति**) ददाति (**वाजम्**) विज्ञानम् (**अमृताय**) मोक्षस्याऽविनाशसुखप्राप्तये (**भूषन्**) (**सः**) (**नः**) अस्मान् (**देवान्**) (**आ**) समन्तात् (**इह**) अस्मिन्संसारे (**वह**) प्रापय (**पुरुक्षो**) पुरूणि क्षुधोऽन्नादीनि यस्य तत्सम्बुद्धौ। **क्षुदित्यन्नामसु पठितम्।** (निघं०२.७)॥ २॥

अन्वयः-हे पुरुक्षो यो विद्वान्! भवान् यथाग्निर्वीर्य्याणि सनोति तथा सोऽमृताय नोऽस्मान् देवानिह भूषन् वाजं सनोति तानस्माना वह॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्य्यो मूर्त्तान् पदार्थान् सुभूषयति तथैव विद्वांसो विद्यासुशिक्षासभ्यताभिः सर्वान् मनुष्यान् सुभूषयेयुः॥ २॥

पदार्थः-हे (**पुरुक्षो**) अतिशय अन्न आदि से युक्त जो (**विद्वान्**) विद्यावान् पुरुष! आप जैसे (**अग्निः**) अग्नि के सदृश (**वीर्य्याणि**) पराक्रमों का (**सनोति**) धारण करनेवाले, वैसे (**सः**) वह (**अमृताय**) नाशरहित मोक्षसुख की प्राप्ति के लिये (**नः**) हम (**देवान्**) विद्वानों को (**इह**) इस संसार में (**भूषन्**) शोभित करते हुए (**वाजम्**) विज्ञान को (**सनोति**) देता है, उस प्रकाशित करनेवाले पुरुष को हम लोगों के लिये (**आ**) (**वह**) अच्छे प्रकार प्राप्त करो॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य आकारवाले पदार्थों को उत्तम प्रकार शोभित करता है, वैसे ही विद्वान् लोग विद्या, उत्तम शिक्षा और सभ्यता से सम्पूर्ण मनुष्यों को शोभित करें॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अग्निर्द्यावापृथिवी विश्वजन्ये आ भाति देवी अमृते अमूरः।

क्षयन्वाजैः पुरुश्चन्द्रो नमोभिः॥ ३॥

अग्निः। द्यावापृथिवी इति। विश्वजन्ये इति विश्वऽजन्ये। आ। भाति। देवी इति। अमृते इति। अमूरः। क्षयन्। वाजैः। पुरुऽचन्द्रः। नमःऽभिः॥ ३॥

पदार्थः-(**अग्निः**) सूर्य्यो विद्युद्वा (**द्यावापृथिवी**) प्रकाशभूमी (**विश्वजन्ये**) सर्वस्य जनयित्र्यौ (**आ**) समन्तात् (**भाति**) प्रकाशयति (**देवी**) दिव्यगुणकर्मस्वभावयुक्ते (**अमृते**) कारणरूपेण नाशरहिते (**अमूरः**) मूढत्वादिदोषरहितः (**क्षयन्**) निवासयन् (**वाजैः**) विज्ञानवेगादिभिः (**पुरुश्चन्द्रः**) पुरुर्बहुश्चन्द्र आह्लादो यस्य सः (**नमोभिः**) अन्नैः सह सत्कारैर्वा॥ ३॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथा पुरुश्चन्द्रो वाजैर्नमोभिः सह क्षयन्नग्निर्विश्वजन्ये देवी अमृते द्यावापृथिवी आ भाति तथाऽमूरः सन् सर्वान् सज्जनान् स्वविद्याविनयाभ्यां सर्वतः प्रकाशय॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये पृथिवीवत्क्षमान्विताः सूर्यवत्सत्याऽसत्यप्रकाशका मूढान् बोधयन्तः सर्वान् मनुष्यान् धार्मिकान् कुर्वन्ति त एव सत्कर्तव्या भवन्ति॥३॥

पदार्थः-हे विद्वान् जन! जैसे **(पुरुश्चन्द्रः)** बहुत आनन्दकारक **(वाजैः)** विज्ञान वेग आदिकों से **(नमोभिः)** अन्न वा सत्कारों के साथ **(क्षयन्)** निवास करनेवाला **(अग्निः)** सूर्य्य वा विद्युत् रूप अग्नि **(विश्वजन्ये)** सबके उत्पादक **(देवी)** उत्तम गुण, कर्म, स्वभावयुक्त **(अमृते)** कारणरूप से नाशरहित **(द्यावापृथिवी)** प्रकाश और भूमि को **(आ)** सब ओर से **(भाति)** प्रकाशित करता है, वैसे **(अमूरः)** मूढ़ता आदि दोषों से रहित होकर सम्पूर्ण सज्जनों को अपनी विद्या और विनय से सब प्रकार प्रकाशित करो॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो लोग पृथिवी के सदृश क्षमाशील, सूर्य्य के सदृश सत्य-असत्य के प्रकाशकर्त्ता, मूढ़ लोगों को उपदेशदाता और सब लोगों को धार्मिक करते हैं, उन लोगों का ही सत्कार करना चाहिये॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अग्ने इन्द्रश्च दाशुषो दुरोणे सुतावतो यज्ञमिहोप यातम्।

अमर्धन्ता सोमपेयाय देवा॥४॥

अग्ने। इन्द्रः। च। दाशुषः। दुरोणे। सुतऽवतः। यज्ञम्। इह। उप। यातम्। अमर्धन्ता। सोमऽपेयाय। देवा॥४॥

पदार्थः-**(अग्ने)** **(इन्द्रः)** परमैश्वर्य्यकारको विद्युदग्निः **(च)** वायुः **(दाशुषः)** विद्यासुखस्य दातुः **(दुरोणे)** गृहे **(सुतावतः)** ऐश्वर्ययुक्तस्य **(यज्ञम्)** विद्वत्सत्कारादिमयं व्यवहारम् **(इह)** अस्मिन् संसारे **(उप)** **(यातम्)** प्राप्नुतम् **(अमर्धन्ता)** सर्वान् शोषयन्तौ **(सोमपेयाय)** ऐश्वर्यप्राप्तये **(देवा)** दिव्यगुणयुक्तौ॥४॥

अन्वयः-हे अग्ने! विद्वन्! यथाऽमर्धन्ता देवा इन्द्रो वायुश्च सोमपेयाय सुतावतो दाशुषो दुरोणे यज्ञमिहोपयातं तथैव त्वमुपयाहि अध्यापकोपदेशकौ चोपयातम्॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यत्र वायुविद्युद्वद्वर्त्तमानावविद्याविनाशकौ विद्याप्रकाशकौ धर्मोपदेष्टारावध्यापकोपदेशकौ स्यातां तत्र सर्वाणि सुखानि वर्धेरन्॥४॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के तुल्य विद्या से प्रकाशित विद्वान् पुरुष! जैसे **(अमर्धन्ता)** सबको

सुखाते हुए **(देवा)** श्रेष्ठ गुणों से युक्त पुरुष **(इन्द्रः)** अत्यन्त ऐश्वर्यकारक बिजुली सम्बन्धी अग्नि **(च)** और पवन तथा **(सोमपेयाय)** ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिये **(सुतावतः)** ऐश्वर्य से युक्त **(दाशुषः)** विद्यासम्बन्धी सुख के दाता **(दुरोणे)** गृह में **(यज्ञम्)** विद्वत्सत्कार आदि स्वरूप व्यवहार को **(इह)** इस संसार में **(उप) (यातम्)** प्राप्त हों और वैसे आप भी प्राप्त होइये और अध्यापक तथा उपदेशक भी प्राप्त हों॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जहाँ वायु और बिजुली के तुल्य वर्त्तमान अविद्या के विनाश और विद्या के प्रकाशकर्त्ता, धर्म के उपदेशकर्त्ता अध्यापक और उपदेशक होवें, वहाँ सम्पूर्ण सुख बढ़ें॥४॥

विद्वद्भिः परमात्मवज्जगदानन्दनीयमित्याह॥

विद्वानों को परमात्मा के तुल्य जगत् को आनन्दित करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अग्ने॑ अ॒पां समि॑ध्यसे दुरो॒णे नित्य॑ः सूनो सहसो जातवेदः।
स॒धस्था॑नि म॒हय॑मान ऊ॒ती॥५॥२५॥

अग्ने॑। अ॒पाम्। सम्। इ॒ध्य॒से॒। दु॒रो॒णे। नित्य॑ः। सू॒नो॒ इति॑। स॒ह॒सः॒। जा॒त॒ऽवे॒दः॒। स॒ध॒ऽस्था॑नि। म॒हय॑मानः। ऊ॒ती॥५॥

पदार्थः-**(अग्ने)** वह्निरिव वर्त्तमान **(अपाम्)** प्राणानां मध्ये **(सम्) (इध्यसे)** प्रकाश्यसे **(दुरोणे)** निवासस्थाने गृहे **(नित्यः)** स्वस्वरूपेणाऽविनाशी **(सूनो)** अपत्यमिव वर्त्तमान अविद्याहिंसक वा **(सहसः)** बलवतः **(जातवेदः)** जातप्रज्ञान **(सधस्थानि)** समानस्थानानि **(महयमानः)** पूज्यमानः **(ऊती)** ऊत्या रक्षणाद्यया क्रियया॥५॥

अन्वयः-हे सहसस्सूनो जातवेदोऽग्ने! नित्यो महयमानो यस्त्वमूती अपां मध्ये सूर्य्य इव दुरोणे समिध्यसे तेन भवता सर्वेषां मनुष्याणां सधस्थान्यात्मानश्च विद्याधर्मविनयैः प्रकाशनीयाः॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा नित्यशुद्धबुद्धमुक्तस्वभावः सच्चिदानन्दादिलक्षणः परमात्मा सर्वं जगदुत्पाद्य संरक्ष्यानन्दयति तथैवाप्तैर्विद्वद्भिस्सर्वमिदं जगदानन्दयितव्यमिति॥५॥

अत्राग्निविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति पञ्चविंशतितमं सूक्तं स एव वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(सहसः)** बलवान् के **(सूनो)** पुत्र के तुल्य वर्त्तमान वा अविद्या के नाशकारक **(जातवेदः)** सम्पूर्ण उत्पन्न पदार्थों के ज्ञाता **(अग्ने)** अग्नि के सदृश तेजस्वी! **(नित्यः)** अपने स्वरूप से नाशरहित **(महयमानः)** पूजने अर्थात् आदर करने योग्य जो आप **(ऊती)** रक्षण आदि क्रिया से **(अपाम्)** प्राणों के मध्य में सूर्य के सदृश **(दुरोणे)** रहने के स्थान गृह में **(सम्) (इध्यसे)** प्रकाशित होते, उन

आपको चाहिये कि सम्पूर्ण मनुष्यों के **(सधस्थानि)** तुल्य स्थानों और आत्माओं को विद्या, धर्म्म, विनय से प्रकाशित करें॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे नित्य, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त, स्वभावयुक्त और सत्-चित्-आनन्द आदि लक्षण विशिष्ट परमात्मा सम्पूर्ण जगत् को उत्पन्न और रक्षित कर आनन्दित करता है, वैसे ही सत्यवक्ता विद्वान् पुरुषों को चाहिये कि सम्पूर्ण इस संसार को आनन्दयुक्त करें॥५॥

इस सूक्त में अग्नि और विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह पच्चीसवां सूक्त और पच्चीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ नवर्चस्य षड्विंशतितमस्य सूक्तस्य। १-६, ८, ९ विश्वामित्रः। ७ आत्मा ऋषिः। १-३ वैश्वानरः। ४-६ मरुतः। ७, ८ अग्निरात्मा वा। ९ विश्वामित्रोपाध्यायो देवता। १-६ जगती छन्दः। निषादः स्वरः। ७-९ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथाग्न्यादिना विद्वद्भिः किं साध्यमित्याह॥

अब नव ऋचावाले छब्बीसवें सूक्त का प्रारम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में अग्नि आदि से विद्वान् क्या सिद्ध करें, इस विषय को कहते हैं॥

वैश्वानरं मनसाग्निं निचाय्या हविष्मन्तो अनुषत्यं स्वर्विदम्।
सुदानुं देवं रथिरं वसूयवो गीर्भी रण्वं कुशिकासो हवामहे॥१॥

वैश्वानरम्। मनसा। अग्निम्। निऽचाय्य। हविष्मन्तः। अनुऽसत्यम्। स्वःऽविदम्। सुऽदानुम्। देवम्। रथिरम्। वसुऽयवः। गीःऽभिः। रण्वम्। कुशिकासः। हवामहे॥१॥

पदार्थः-(**वैश्वानरम्**) विश्वेषां नराणां प्रकाशकम् (**मनसा**) विज्ञानेन (**अग्निम्**) पावकम् (**निचाय्य**) निश्चयं कारयित्वा। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**हविष्मन्तः**) बहूनि हवींषि दातव्यानि विद्यन्ते येषान्ते (**अनुषत्यम्**) सत्यस्यानुकूलम् (**स्वर्विदम्**) स्वः सुखं विन्दति येन तम् (**सुदानुम्**) शोभनान् दातारम् (**देवम्**) प्रकाशकम् (**रथिरम्**) रथा रमणीयानि यानानि भवन्ति यस्मिंस्तम् (**वसूयवः**) ये वसूनि युवन्ति मिश्रयन्ति ते। अत्र**ान्येषामपी**त्युकारदीर्घः। (**गीर्भिः**) वाग्भिः (**रण्वम्**) शब्दायमानम् (**कुशिकासः**) उपदेशकाः (**हवामहे**) गृह्णीयाम॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा कुशिकासो हविष्मन्तो वसूयवो वयं मनसा निचाय्य स्वर्विदं रण्वं रथिरमनुषत्यं सुदानुं देवं वैश्वानरमग्निं हवामहे तथा यूयमप्येनं गीर्भिः स्वीकुरुत॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा मनुष्या अग्नेर्गुणकर्मस्वभावान्निश्चित्य कार्याणि साध्नुवन्ति तथैव पृथिव्यादीनां गुणकर्मस्वभावनिश्चयोपकाराभ्यां कार्य्याणि साध्नुवन्तु॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**कुशिकासः**) उपदेशक जन (**हविष्मन्तः**) देने योग्य वस्तुओं से युक्त (**वसूयवः**) धन इकट्ठा करने में तत्पर हम लोग (**मनसा**) विज्ञान से (**निचाय्य**) निश्चय कराकर (**स्वर्विदम्**) धन की प्राप्ति करानेवाले (**रण्वम्**) शब्द करते हुए (**रथिरम्**) सुन्दर वाहनों से युक्त (**अनुषत्यम्**) सत्य के अनुकूल (**सुदानुम्**) उत्तम पदार्थों के देनेवाले (**देवम्**) प्रकाशकारक (**वैश्वानरम्**) सम्पूर्ण मनुष्यों के प्रकाशकर्त्ता (**अग्निम्**) अग्नि को (**हवामहे**) ग्रहण करते हैं, वैसे आप लोग भी इस अग्नि को (**गीर्भिः**) वाणियों से स्वीकार करें॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे मनुष्य अग्नि के गुण-कर्म-स्वभावों का निश्चय करके कार्य्यों को सिद्ध करते हैं, वैसे ही पृथिवी आदि पदार्थों के गुण-कर्म-स्वभावों के निश्चय और उपकार से कार्य्यों को सिद्ध करो॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तं शुभ्रमग्निमवसे हवामहे वैश्वानरं मातरिश्वानमुक्थ्यम्।
बृहस्पतिं मनुषो देवतातये विप्रं श्रोतारमतिथिं रघुष्यदम्॥ २॥

तम्। शुभ्रम्। अग्निम्। अवसे। हवामहे। वैश्वानरम्। मातरिश्वानम्। उक्थ्यम्। बृहस्पतिम्। मनुषः। देवऽतातये। विप्रम्। श्रोतारम्। अतिथिम्। रघुऽस्यदम्॥ २॥

पदार्थः-(**तम्**) (**शुभ्रम्**) भास्वरम् (**अग्निम्**) विद्युदादिस्वरूपं वह्निम् (**अवसे**) रक्षणाद्याय (**हवामहे**) स्वीकुर्महे (**वैश्वानरम्**) विश्वेषु नायकेषु विराजमानम् (**मातरिश्वानम्**) यो मातरि वायौ श्वसिति तम् (**उक्थ्यम्**) प्रशंसितुं योग्यम् (**बृहस्पतिम्**) बृहतां पृथिव्यादीनां पालकम् (**मनुषः**) मननधर्माणः (**देवतातये**) दिव्यगुणप्राप्तये (**विप्रम्**) मेधाविनम् (**श्रोतारम्**) (**अतिथिम्**) पूजनीयमनित्यस्थितिं विद्वांसम् (**रघुष्यदम्**) यो रघु लघु स्यन्दति तम्॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! मनुषो देवतातये रघुष्यदं विप्रं श्रोतारमतिथिमिव यमवसे मातरिश्वानमुक्थ्यं बृहस्पतिं वैश्वानरं शुभ्रमग्निं हवामहे तं यूयमपि विजानीत॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा पूर्णविद्योऽतिथिः श्रोतॄन् ज्ञानसम्पन्नान् करोति तथैव वह्निः शिल्पिभ्यः पुष्कलधनानि निष्पादयति॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**मनुषः**) मननकर्त्ता (**देवतातये**) उत्तम गुणों की प्राप्ति के लिये (**रघुष्यदम्**) शीघ्रगामी (**विप्रम्**) बुद्धिमान् (**श्रोतारम्**) वेदशास्त्र आदि सुननेवाले को (**अतिथिम्**) अतिथि के तुल्य जिसको (**अवसे**) रक्षण आदि के लिये (**मातरिश्वानम्**) वायु में श्वासकारी (**उक्थ्यम्**) प्रशंसा करने योग्य (**बृहस्पतिम्**) पृथिवी आदि पदार्थों के धारक (**वैश्वानरम्**) राजा आदि में विराजमान (**शुभ्रम्**) प्रकाशमान (**अग्निम्**) बिजुली आदि स्वरूप अग्नि को (**हवामहे**) स्वीकार करते हैं (**तम्**) उसको आप लोग भी जानो॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे पूर्ण विद्वान् अतिथिजन श्रोता जनों को ज्ञानयुक्त करता है, उसी प्रकार अग्नि शिल्पी जनों के लिये अत्यन्त धनों को उत्पन्न करता है॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अश्वो न क्रन्दञ्जनिभिः समिध्यते वैश्वानरः कुशिकेभिर्युगेयुगे।
स नो अग्निः सुवीर्यं स्वश्व्यं दधातु रत्नममृतेषु जागृविः॥ ३॥

अश्वः। न। क्रन्दन्। जनिऽभिः। सम्। इध्यते। वैश्वानरः। कुशिकेभिः। युगेऽयुगे। सः। नः। अग्निः। सुऽवीर्यम्। सुऽअश्व्यम्। दधातु। रत्नम्। अमृतेषु। जागृविः॥३॥

पदार्थः-(**अश्वः**) तुरङ्गः (**न**) इव (**क्रन्दन्**) शब्दायमानः (**जनिभिः**) जनयित्रीभिर्वडवाभिः (**सम्**) (**इध्यते**) प्रदीप्यते (**वैश्वानरः**) विश्वेषां नराणां प्रकाशकः (**कुशिकेभिः**) शब्दायमानैः (**युगेयुगे**) वर्षेवर्षे (**सः**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**अग्निः**) पावकः (**सुवीर्यम्**) शोभनं बलं यस्मात् तत् (**स्वश्व्यम्**) शोभनेष्वश्वेषु साधुम् (**दधातु**) (**रत्नम्**) धनम् (**अमृतेषु**) हिरण्यादिषु धनेषु। **अमृत इति हिरण्यनामसु पठितम्।** (निघं०१.२)। (**जागृविः**) जागरूकः॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्यो! यो वैश्वानरो जागृविरग्निर्जनिभिः सह क्रन्दन्नश्वो न कुशिकेभिर्युगेयुगे समिध्यते स नः सुवीर्य्यं स्वश्व्यममृतेषु रत्नं दधातु तं यूयमपि संप्रयुङ्ग्ध्वम्॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यदि मनुष्यैरग्निर्यानचालनादिकार्येषु संप्रयुज्यते तर्ह्ययं किं धनादिवस्तु नोन्नयेत्॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**वैश्वानरः**) सम्पूर्ण मनुष्यों का प्रकाशकर्त्ता (**जागृविः**) जागरणशील (**अग्निः**) अग्नि (**जनिभिः**) उत्पन्न करनेवाली घोड़ियों के साथ (**क्रन्दन्**) शब्द करते हुए (**अश्वः**) घोड़े के (**न**) तुल्य (**कुशिकेभिः**) शब्द करनेवालों से (**युगेयुगे**) प्रत्येक वर्ष में (**सम्**) (**इध्यते**) प्रदीप्त होता है (**सः**) वह (**नः**) हम लोगों के लिये (**सुवीर्य्यम्**) उत्तम बल करनेवाले (**स्वश्व्यम्**) उत्तम घोड़ों से युक्त (**अमृतेषु**) सुवर्ण आदि धनों में (**रत्नम्**) धन को (**दधातु**) धारण करता है, उसका आप लोग भी संप्रयोग करो॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जो मनुष्य लोग अग्नि को वाहन के चालन आदि कार्यों में संप्रयुक्त करते हैं तो यह अग्नि किस-किस धन आदि वस्तु की वृद्धि न करे अर्थात् सब वस्तुओं की वृद्धि कर सकता है॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

प्र यन्तु वाजास्तविषीभिरग्नयः शुभे संमिश्लाः पृषतीरयुक्षत।

बृहदुक्षो मरुतो विश्ववेदसः प्र वेपयन्ति पर्वताँ अदाभ्याः॥४॥

प्र। यन्तु। वाजाः। तविषीभिः। अग्नयः। शुभे। सम्ऽमिश्लाः। पृषतीः। अयुक्षत। बृहत्ऽउक्षः। मरुतः। विश्वऽवेदसः। प्र। वेपयन्ति। पर्वतान्। अदाभ्याः॥४॥

पदार्थः-(**प्र**) (**यन्तु**) गच्छन्तु (**वाजाः**) वेगवन्तः (**तविषीभिः**) बलादिभिः सह (**अग्नयः**) पावकाः (**शुभे**) उदके। **शुभमित्युदकनामसु पठितम्।** (निघं०१.१२) (**संमिश्लाः**) संमिश्राः संयुक्ताः

(पृषती:) सेचननिमित्ता गती: **(अयुक्षत)** संयुङ्ग्ध्वम् **(बृहदुक्ष:)** बृहदुक्ष: सेचनं येभ्यस्ते **(मरुत:)** वायव: **(विश्ववेदस:)** यैर्विश्वं विन्दति ते **(प्र) (वेपयन्ति)** कम्पयन्ति **(पर्वतान्)** शैलानिवोच्छ्रितान् मेघान् **(अदाभ्या:)** हिंसितुमनर्हा:॥४॥

अन्वय:-हे वीरा! यूयं तविषीभि: सह यथा वाजा अग्नय: विश्ववेदसो बृहदुक्षो मरुतश्च शुभे संमिश्ला: पृषती: प्र यन्तु अदाभ्या: पर्वतान् प्रवेपयन्ति तथा यूयमपि सखाय: सन्तोऽरीन् कम्पयत बलसैन्यादिकमयुक्षत॥४॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। यथा जले मिलिता: पृथिव्यग्निवायवो वर्त्तन्ते तथैव ये सेनायां सखायो भूत्वा वर्त्तन्ते तेषां ध्रुवो विजयो भवति॥४॥

पदार्थ:-हे वीरो! आप लोग **(तविषीभि:)** पराक्रम आदिकों के साथ जैसे **(वाजा:)** वेगवाले **(अग्नय:)** अग्नि **(विश्ववेदस:)** सम्पूर्ण धनों से युक्त **(बृहदुक्ष:)** अतिशय सेचनकारक **(मरुत:)** वायु **(शुभे)** जल में **(संमिश्ला:)** अच्छे प्रकार मिली हुई वा सुन्दर प्रयुक्त **(पृषती:)** सेचन में कारण **(प्र) (यन्तु)** प्राप्त होवें और **(अदाभ्या:)** नहीं मारने योग्य होकर **(पर्वतान्)** पर्वतों के सदृश ऊँचे मेघों को **(प्र) (वेपयन्ति)** कंपाते हैं, वैसे आप लोग भी परस्पर मित्र होकर शत्रुओं को कंपाओ और बलयुक्त सेना का सञ्चय करो॥४॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे जल में मिले हुए पृथिवी, अग्नि, वायु वर्त्तमान हैं, वैसे ही जो लोग सेना में मित्र होकर वर्त्तमान होते हैं, उनका निश्चय विजय होता है॥४॥

पुनर्वाय्वादिना किं साध्यमित्याह॥

फिर वायु आदि से क्या सिद्ध करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अ॒ग्नि॒श्रियो॑ म॒रुतो॑ वि॒श्वकृ॑ष्टय॒ आ त्वे॒षमु॒ग्रमव॑ ईमहे व॒यम्।

ते स्वा॒निनो॑ रु॒द्रिया॑ व॒र्षनि॑र्णिजः सिं॒हा न हे॒षक्र॑तवः सु॒दान॑वः॥५॥२६॥

अ॒ग्नि॒ऽश्रियः॑। म॒रुतः॑। वि॒श्वऽकृ॑ष्टयः। आ। त्वे॒षम्। उ॒ग्रम्। अवः॑। ई॒म॒हे॒। व॒यम्। ते। स्वा॒निनः॑। रु॒द्रियाः॑। व॒र्षऽनि॑र्निजः। सिं॒हाः। न। हे॒षऽक्र॑तवः। सु॒ऽदान॑वः॥५॥

पदार्थ:-**(अग्निश्रिय:)** अग्निना श्री: शोभा धनं येषां ते **(मरुत:)** वायव: **(विश्वकृष्टय:)** विश्वा कृष्टिर्येभ्यस्ते **(आ) (त्वेषम्)** प्रकाशम् **(उग्रम्)** कठिनम् **(अव:)** रक्षणादिकम् **(ईमहे)** याचामहे **(वयम्) (ते) (स्वानिन:)** बहव: स्वाना: शब्दा विद्यन्ते येभ्यस्ते **(रुद्रिया:)** रुद्रेऽग्नौ भवा: **(वर्षनिर्णिज:)** वर्षस्य वृष्टे शोधका: पोषका वा **(सिंहा:)** व्याघ्रा: **(न)** इव **(हेषक्रतव:)** हेषा: शब्दा: क्रतव: प्रज्ञा: क्रिया वा येषान्ते **(सुदानव:)** सुष्ठुदानं येभ्यस्ते॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा वयं ये विश्वकृष्टयोऽग्निश्रियः स्वानिनो **[=स्वानिना]** रुद्रिया वर्षनिर्णिजो मरुतः सिंहा न शब्दायन्ते यान् हेषक्रतवः सुदानवो वयमेमहे ते समन्ताद् याचनीयास्तेभ्यो वयमुग्रं त्वेषमुग्रमव ईमहे॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। मनुष्यैर्विद्वत्सङ्गेन धीमद्भिर्भूत्वा वाय्वादिपदार्थविद्या याचनीया सिंह इव पराक्रमश्च धारणीयः॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(वयम्)** हम लोग जो **(विश्वकृष्टयः)** सम्पूर्ण सृष्टि के उत्पन्नकर्त्ता **(अग्निश्रियः)** अग्नि से धनयुक्त **(स्वानिनः)** अतिशय शब्दों से विशिष्ट **(रुद्रियाः)** अग्नि में उत्पन्न होनेवाले **(वर्षनिर्णिजः)** वृष्टि के पवित्र करने वा पुष्ट करनेवाले **(मरुतः)** वायुदल **(सिंहाः)** व्याघ्रों के **(न)** सदृश शब्द करते जिनको **(हेषक्रतवः)** शब्दरूप बुद्धि वा क्रियावाले **(सुदानवः)** उत्तम दानकारक हम लोग **(आ, ईमहे)** अच्छे प्रकार याचना करते हैं **(ते)** वे सब प्रकार मांगने योग्य हैं, उनसे हम लोग **(उग्रम्)** कठिन **(त्वेषम्)** प्रकाश और कठिन **(अवः)** रक्षण आदि की याचना करते हैं॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि विद्वान् लोगों के सङ्ग से बुद्धिमान् होकर वायु आदि की सम्बन्धिनी पदार्थविद्या की प्रार्थना करें और सिंह के समान पराक्रम को धारण करें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

व्रातंव्रातं गणंगणं सुशस्तिभिरग्नेर्भामं मरुतामोज ईमहे।

पृषदश्वासो अनवभ्रराधसो गन्तारो यज्ञं विदथेषु धीराः॥६॥

व्रातम्ऽव्रातम्। गणम्ऽगणम्। सुशस्तिऽभिः। अग्नेः। भामम्। मरुताम्। ओजः। ईमहे। पृषत्ऽअश्वासः। अनवभ्रऽराधसः। गन्तारः। यज्ञम्। विदथेषु। धीराः॥६॥

पदार्थः-**(व्रातंव्रातम्)** वर्त्तमानं वर्त्तमानम् **(गणंगणम्)** समूहं समूहम् **(सुशस्तिभिः)** शोभनाभिः स्तुतिभिः **(अग्नेः)** पावकात् **(भामम्)** तेजः **(मरुताम्)** वायूनां सकाशात् **(ओजः)** बलम् **(ईमहे)** **(पृषदश्वासः)** पृषतः सेचका अश्वा वेगादयो गुणा येषु ते **(अनवभ्रराधसः)** अनवभ्रमविनाशि राधो येषां ते **(गन्तारः)** **(यज्ञम्)** सङ्गतिकरणम् **(विदथेषु)** विज्ञानादिषु **(धीराः)** ध्यानवन्तः॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! पृषदश्वासोऽनवभ्रराधसो गन्तारो वायव इव सुशस्तिभिः सह वर्तमाना धीरा विद्वांसो विदथेषु यज्ञमग्नेर्भामं मरुतां सकाशादोजोऽन्येषा पदार्थानां व्रातंव्रातं गणंगणं याचन्ते तथैव वयमेतत्सर्वमीमहे॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या अग्निवाय्वादिपदार्थेभ्यः कार्य्यसमूहं साध्नुवन्ति ते विद्वांसः सन्ति॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(पृषदश्वासः)** सेचनकर्त्ता और वेग आदि गुणयुक्त **(अनवभ्रराधसः)** अविनाशी धनों के दाता **(गन्तारः)** प्राप्त होनेवाले पवनों के तुल्य **(सुशस्तिभिः)** सुन्दर स्तुतियों के साथ वर्त्तमान **(धीराः)** ध्यानवाले विद्वान् पुरुष **(विदथेषु)** विज्ञान आदिकों में **(यज्ञम्)** मेल करने और **(अग्नेः)** अग्नि से उत्पन्न **(भामम्)** तेज को **(मरुताम्)** पवनों के समीप से **(ओजः)** बल और अन्य पदार्थों के **(व्रातंव्रातम्)** वर्त्तमान वर्त्तमान **(गणंगणम्)** समूह-समूह की याचना करते हैं, वैसे ही हम लोग इस सबकी **(ईमहे)** याचना करते हैं॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य अग्नि, वायु आदि पदार्थों से कार्य्यों के समूह को साधते हैं, वे विद्वान् कहाते हैं॥६॥

पुनर्विद्युद्वन्मनुष्यैर्वर्त्तितव्यमित्युपदिश्यते॥

फिर मनुष्यों को विद्युत् के तुल्य वर्त्तना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अ॒ग्निर॑स्मि॒ जन्म॑ना जा॒तवे॑दा घृ॒तं मे॒ चक्षु॑र॒मृतं॑ म आ॒सन्।

अ॒र्कस्त्रि॒धातू॒ रज॑सो वि॒मानोऽज॑स्रो घ॒र्मो ह॒विर॑स्मि॒ नाम॑॥७॥

अ॒ग्निः। अ॒स्मि॒। जन्म॑ना। जा॒तऽवे॑दाः। घृ॒तम्। मे॒। चक्षुः॑। अ॒मृत॑म्। मे॒। आ॒सन्। अ॒र्कः। त्रि॒ऽधातुः॑। रज॑सः। वि॒ऽमानः॑। अज॑स्रः। घ॒र्मः। ह॒विः। अ॒स्मि॒। नाम॑॥७॥

पदार्थः-**(अग्निः)** पावक इव **(अस्मि)** **(जन्मना)** **(जातवेदाः)** जातवित्तः **(घृतम्)** प्रदीप्तम् **(मे)** मम **(चक्षुः)** चष्टे नेनेक्ति नेत्रेन्द्रियम् **(अमृतम्)** अमृतात्मकरसम् **(मे)** मम **(आसन्)** आस्ये **(अर्कः)** वज्रो विद्युद्वा। **अर्क इति वज्रनामसु पठितम्।** (निघं०२.२०) **(त्रिधातुः)** त्रयो धातवो यस्मिन् सः **(रजसः)** लोकसमूहस्य **(विमानः)** विविधं मानं यस्य सः **(अजस्रः)** निरन्तरं गन्ता **(घर्मः)** प्रदीप्तो दिवसकरः **(हविः)** **(अस्मि)** **(नाम)** प्रसिद्धौ॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथाग्निरिव जन्मना जातवेदा अहमस्मि मे चक्षुर्घृतं प्रदीप्तं मे आसन्नमृतं भवेत्। यथा रजसो विमानो त्रिधातुरर्कोऽजस्रो घर्मो हविरस्ति तथा नामाहमस्मि॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्यैर्विद्युद्वत्कार्य्यसिद्धिधारणं रोगविनाशका-ऽऽहारकरणं शत्रुनिवारणं च कर्त्तव्यं येन विद्युत्फलमापतेत्॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(अग्निः)** अग्नि के सदृश **(जन्मना)** जन्म से **(जातवेदाः)** ज्ञानयुक्त मैं **(अस्मि)** वर्त्तमान हूँ **(मे)** मेरा **(चक्षुः)** नेत्र इन्द्रिय **(घृतम्)** प्रकाशमान **(मे)** मेरे **(आसन्)** मुख में **(अमृतम्)** अमृतस्वरूप रस हो, जैसे **(रजसः)** लोकसमूह का **(विमानः)** अनेक प्रकार के मानसहित

(त्रिधातुः) तीन धातुओं से युक्त **(अर्कः)** वज्र वा बिजुली **(अजस्रः)** निरन्तर चलनेवाला **(घर्मः)** प्रदीप्त सूर्य्य **(हविः)** हवन सामग्री है, वैसे ही **(नाम)** प्रसिद्ध मैं **(अस्मि)** हूँ॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि बिजुली के सदृश कार्य्यसिद्धि का धारण, रोग का नाशकारक भोजन करना और शत्रुओं का निवारण करें तो बिजुली का फल प्राप्त होवे॥७॥

अथ के शुद्धा जना इत्याह॥

अब शुद्ध मनुष्य कौन हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्रिभिः पवित्रैरपुपोद्ध्य१र्कं हृदा मतिं ज्योतिरनु प्रजानन्।
वर्षिष्ठं रत्नमकृत स्वधाभिरादिद् द्यावापृथिवी पर्यपश्यत्॥८॥

त्रिऽभिः। पवित्रैः। अपुपोत्। हि। अर्कम्। हृदा। मतिम्। ज्योतिः। अनु। प्रऽजानन्। वर्षिष्ठम्। रत्नम्। अकृत। स्वधाभिः। आत्। इत्। द्यावापृथिवी इति। परि। अपश्यत्॥८॥

पदार्थः-**(त्रिभिः)** शरीरवाङ्मनोभिः **(पवित्रैः)** **(अपुपोत्)** पवित्रं कुर्य्यात् **(हि)** **(अर्कम्)** सुसंस्कृतमन्नम्। **अर्क इत्यन्ननामसु पठितम्।** (निघं०२.७) **(हृदा)** हृदयेन **(मतिम्)** प्रज्ञाम् **(ज्योतिः)** प्रकाशम् **(अनु)** **(प्रजानन्)** प्रकर्षेण बुद्ध्यमानः **(वर्षिष्ठम्)** अतिशयेन वृद्धम् **(रत्नम्)** रमणीयं धनम् **(अकृत)** कुर्य्यात् **(स्वधाभिः)** अन्नादिभिः **(आत्)** **(इत्)** एव **(द्यावापृथिवी)** प्रकाशान्तरिक्षे **(परि)** सर्वतः **(अपश्यत्)** पश्येत्॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्त्रिभिः पवित्रैर्हृदा अर्कमपुपोद्धि ज्योतिर्मतिमनु प्रजानन् स्वधाभिर्वर्षिष्ठं रत्नमकृत स आदिद् द्यावापृथिवी पर्य्यपश्यत् तमेव यूयं सेवध्वम्॥८॥

भावार्थः-त एव शुद्धा मनुष्या ये पवित्रां प्रज्ञां प्राप्यान्यान् मनुष्यान् विद्याविनयाभ्यां सन्तोष्य श्रियाद्युन्नतिं संसाध्नुयुः॥८॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(त्रिभिः)** शरीर, वाणी और मन से **(पवित्रैः)** पवित्र करने में कारण तेजों और **(हृदा)** हृदय से **(अर्कम्)** उत्तम प्रकार संस्कार किये अन्न को **(अपुपोत्)** पवित्र करे **(हि)** जिससे **(ज्योतिः)** प्रकाश तथा **(मतिम्)** बुद्धि को **(अनु)** **(प्रजानन्)** अनुकूल जानता हुआ **(स्वधाभिः)** अन्न आदिकों से **(वर्षिष्ठम्)** अतिशय वृद्धियुक्त **(रत्नम्)** सुन्दर धन को **(अकृत)** करे वह **(आत्)** अनन्तर **(इत्)** ही **(द्यावापृथिवी)** प्रकाश और अन्तरिक्ष को **(परि)** सब प्रकार **(अपश्यत्)** देखे [उसी का तुम लोग सेवन करो]॥८॥

भावार्थः-वे ही शुद्ध मनुष्य हैं जो कि उत्तम बुद्धि को प्राप्त होकर अन्य मनुष्यों को विद्या और विनयों से सन्तुष्ट करके लक्ष्मी आदि की उन्नति सिद्ध करें॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

शतधा॑रमुत्स॒मक्षी॑यमाणं विप॒श्चितं॑ पि॒तरं॒ वक्त्वा॑नाम्।

मे॒ळिं मद॑न्तं पि॒त्रोरु॒पस्थे॒ तं रोद॑सी पिपृतं सत्य॒वाच॑म्॥ ९॥ २७॥

श॒तऽधा॑रम्। उत्स॑म्। अक्षी॑यमाणम्। वि॒प॒ःऽचित॑म्। पि॒तर॑म्। वक्त्वा॑नाम्। मे॒ळिम्। मद॑न्तम्। पि॒त्रोः। उ॒पऽस्थे॑। तम्। रो॒द॒सी॒ इति॑। पि॒पृ॒त॒म्। स॒त्य॒ऽवाच॑म्॥ ९॥

पदार्थः-(**शतधारम्**) शतधा धारा सुशिक्षिता वाग् यस्य तम् (**उत्सम्**) कूपमिव (**अक्षीयमाणम्**) विद्याविज्ञानागाधमक्षीणविद्यम् (**विपश्चितम्**) विद्वांसम् (**पितरम्**) पितृवद्वर्त्तमानम् (**वक्त्वानाम्**) वक्तुं समुचितानां वाक्यानाम् (**मेळिम्**) सुशिक्षितां वाचम् (**मदन्तम्**) स्तुवन्तम् (**पित्रोः**) जनकजनन्योः (**उपस्थे**) समीपे (**तम्**) (**रोदसी**) भूमिसूर्य्यौ (**पिपृतम्**) पालयतः। अत्र पुरुषव्यत्ययः। (**सत्यवाचम्**) सत्या वाग् यस्य तम्॥ ९॥

अन्वयः-हे मनुष्या! उत्समिवाक्षीयमाणं शतधारं पितरं वक्त्वानां वक्तारं मेळिं मदन्तं सत्यवाचं विपश्चितं यं पित्रोरुपस्थे रोदसी पिपृतं पालयतस्तं सेवध्वम्॥ ९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। योऽपरिमितविद्यो गम्भीरप्रज्ञः पृथिवीवत् क्षमावानादित्यवच्छुद्धान्तःकरणो विद्वान् नृषु पितृवद्वर्त्तेत तमेव सर्वे स्वात्मवत्सेवन्ताम्॥ ९॥

अत्र विद्वदग्निवायुगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षड्विंशतितमं सूक्तं सप्तविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**उत्सम्**) कूप के सदृश (**अक्षीयमाणम्**) विद्या के विज्ञान से थाहरहित पूर्ण विद्यायुक्त (**शतधारम्**) सैकड़ों प्रकार की उत्तम शिक्षा सहित वाणी वाले (**पितरम्**) पिता के तुल्य वर्त्तमान (**वक्त्वानाम्**) कहने को इकट्ठे किये गये वाक्यों के वक्ता (**मेळिम्**) उत्तम प्रकार शिक्षित वाणी और (**मदन्तम्**) स्तुतिकारक (**सत्यवाचम्**) सत्य वाणीयुक्त जिस (**विपश्चितम्**) विद्वान् पुरुष को (**पित्रोः**) पिता-माता के (**उपस्थे**) समीप में (**रोदसी**) भूमि-सूर्य्य (**पिपृतम्**) पालते हैं, उस ही की सब लोग अपने आत्मा के तुल्य सेवा करो॥ ९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो पूर्ण विद्वान्, अति सूक्ष्म बुद्धियुक्त, पृथिवी के सदृश क्षमाशील, सूर्य्य के सदृश अन्तःकरण से शुद्ध, विद्वान्, मनुष्यो में पिता के सदृश वर्त्ताव रक्खे; उसी की सब लोग अपने आत्मा के तुल्य सेवा करें॥ ९॥

इस सूक्त में विद्वान्, अग्नि और वायु के गुणों का वर्णन होने से सूक्त में कहे अर्थ की पूर्व सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह छब्बीसवां सूक्त और सत्ताईसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चदशर्चस्य सप्तविंशतितमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। १ ऋतवोऽग्निर्वा। २-१५ अग्निर्देवता। १, ७-१०, १४, १५ निचृद्गायत्री। २, ३, ६, ११, १२ गायत्री। ४, ५, १३ विराड्गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथ विद्वद्भिः किं कार्यमित्याह॥

अब पन्द्रह ऋचावाले सत्ताईसवें सूक्त का प्रारम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र से विद्वानों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

प्र वो॒ वाजा॑ अ॒भिद्य॑वो ह॒विष्म॑न्तो घृ॒ताच्या॑। दे॒वाञ्जि॑गाति सुम्न॒युः॥१॥

प्र। व॒ः। वाजा॑ः। अ॒भिऽद्य॑वः। ह॒विष्म॑न्तः। घृ॒ताच्या॑। दे॒वान्। जि॒गा॒ति॒। सु॒म्न॒युः॥१॥

पदार्थः-(**प्र**) (**वः**) युष्माकम् (**वाजाः**) विज्ञानादयः पदार्थाः (**अभिद्यवः**) अभितः प्रकाशमानाः (**हविष्मन्तः**) बहूनि हवींषि देयानि वस्तूनि विद्यन्ते येषु ते (**घृताच्या**) या घृतमुदकमञ्चति प्राप्नोति तया रात्र्या (**देवान्**) (**जिगाति**) स्तौति (**सुम्नयुः**) य आत्मनः सुम्नं सुखमिच्छुः॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये वोऽभिद्यवो हविष्मन्तो वाजा घृताच्या सह वर्त्तन्ते तैर्युक्तो यः सुम्नयुर्देवान् प्र जिगाति तांस्तं च यूयं प्राप्नुत॥१॥

भावार्थः-यथा दिवसे पदार्थाः शुष्का भवन्ति तथैव रात्रावार्द्रा जायन्ते तथैव ये स्वकीयाः पदार्थास्तेऽन्येषां येऽन्येषां ते स्वकीयाः सन्तीति सुखेच्छया विद्वत्सङ्गः कर्त्तव्यः॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**वः**) आप लोगों के (**अभिद्यवः**) चारों ओर से प्रकाशमान (**हविष्मन्तः**) बहुत-सी देने योग्य वस्तुओं से युक्त (**वाजाः**) विज्ञान आदि पदार्थ (**घृताच्या**) जल को प्राप्त होनेवाली रात्रि के सहित वर्त्तमान हैं, उनसे युक्त जो (**सुम्नयुः**) अपने सुख का अभिलाषी (**देवान्**) विद्वानों की (**प्र, जिगाति**) उत्तम प्रकार स्तुति करता है, उन विद्वानों और स्तुतिकारक उस पुरुष को आप लोग प्राप्त होओ॥१॥

भावार्थः-जैसे दिन में पदार्थ सूखते और रात्रि में गीले होते हैं उसी प्रकार जो अपने पदार्थ हैं वे औरों के और जो औरों के हैं वे अपने हैं इस प्रकार सुख की इच्छा से विद्वानों का सङ्ग करना चाहिये॥१॥

पुनरग्निना किं सिध्यतीत्याह॥

फिर अग्नि से क्या सिद्ध होता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ईळे॑ अ॒ग्निं वि॒प॒श्चित॑ं गि॒रा य॒ज्ञस्य॒ साध॑नम्। श्रु॒ष्टी॒वान॑ं धि॒तावा॑नम्॥२॥

ईळे॑। अ॒ग्निम्। वि॒प॒ःऽचित॑म्। गि॒रा। य॒ज्ञस्य॑। साध॑नम्। श्रु॒ष्टी॒ऽवान॑म्। धि॒तऽवा॑नम्॥२॥

पदार्थः-(**ईळे**) स्तौमि (**अग्निम्**) पावकमिव वर्त्तमानम् (**विपश्चितम्**) पण्डितम् (**गिरा**) वाण्या (**यज्ञस्य**) (**साधनम्**) सिद्धिकरम् (**श्रुष्टीवानम्**) आशुगन्तारं गमयितारं वा (**धितावानम्**) पदार्थानां धारकम्॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथाऽहं गिरा यज्ञस्य साधनं श्रुष्टीवानं धितावानमग्निमिव विपश्चितमीळे तथा भवन्तः स्तुवन्तु॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सङ्गतस्य व्यवहारस्य सिद्धयेऽग्निर्मुख्योऽस्ति तथैव धर्मार्थकामविद्याप्राप्तये विद्वान् प्रधानोऽस्तीति मन्तव्यम्॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे मैं (**गिरः**) वाणी से (**यज्ञस्य**) अहिंसारूप यज्ञ की (**साधनम्**) सिद्धि करने (**श्रुष्टीवानम्**) शीघ्र चलने वा चलानेवाले (**धितावानम्**) पदार्थों के धारणकर्त्ता (**अग्निम्**) अग्नि के सदृश तेजस्वी (**विपश्चितम्**) पण्डित विद्वान् की (**ईळे**) स्तुति करता हूँ, वैसे आप लोग भी स्तुति करें॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे किसी पदार्थ के जोड़ने आदि व्यवहार की सिद्धि के लिये अग्नि मुख्योपकारी है, वैसे ही धर्म, अर्थ, काम और विद्या की प्राप्ति के लिये विद्वान् जन मुख्य है, ऐसा जानना चाहिये॥२॥

विदुषां सङ्गः कर्त्तव्य इत्याह॥

विद्वानों का सङ्ग सबको करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अग्ने॑ श॒केम॑ ते व॒यं यमं॑ दे॒वस्य॑ वा॒जिनः॑। अति॒ द्वेषां॑सि तरेम॥३॥

अग्ने॑। श॒केम॑। ते॒। व॒यम्। यम॑म्। दे॒वस्य॑। वा॒जिनः॑। अति॑। द्वेषां॑सि। त॒रे॒म॒॥३॥

पदार्थः-(**अग्ने**) पावकवत्पवित्रपुरुषार्थिन् (**शकेम**) शक्नुयाम। अत्र विकरणव्यत्ययेन शः। (**ते**) तव (**वयम्**) **[(यमम्)]** सुनियमम् (**देवस्य**) विदुषः (**वाजिनः**) विज्ञानवतः (**अति**) उल्लङ्घने (**द्वेषांसि**) द्वेषयुक्तानि कर्म्माणि (**तरेम**) पारं गच्छेम॥३॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं यथा वयं वाजिनो देवस्य ते यमं प्राप्तुं शकेम द्वेषांस्यतितरेम तथा विधेहि॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। जिज्ञासुभिर्विद्वांस एवं प्रार्थनीया यथा वयं सुनियमान् प्राप्य द्वेषादीनि दुर्व्यसनान्युल्लङ्घयेम तथाऽस्माकमुपरि कृपा विधेया॥३॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के सदृश पवित्र पुरुषार्थी पुरुष! आप जैसे (**वयम्**) हम लोग (**वाजिनः**) विज्ञानयुक्त (**देवस्य**) विद्वान् (**ते**) आपके (**यमम्**) उत्तम नियम को प्राप्त होने के लिये (**शकेम**) समर्थ हों और (**द्वेषांसि**) द्वेषयुक्त कर्मों के (**अति**) (**तरेम**) पार पहुंचें, ऐसा यत्न करो॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मोक्ष आदि की जिज्ञासाकारक पुरुषों को

चाहिये कि विद्वान् पुरुषों की ऐसे प्रार्थना करें कि जिस प्रकार हम लोग उत्तम नियमों को प्राप्त होकर द्वेष आदि दुष्ट व्यसनों के पार जायें, ऐसी हम लोगों के ऊपर कृपा करिये॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

समिध्यमानो अध्वरे३ऽग्निः पावक ईड्यः। शोचिष्केशस्तमीमहे॥४॥

सम्ऽइध्यमानः। अध्वरे। अग्निः। पावकः। ईड्यः। शोचिःऽकेशः। तम्। ईमहे॥४॥

पदार्थः-(**समिध्यमानः**) सम्यक् प्रदीप्यमानः (**अध्वरे**) अहिंसामये यज्ञे (**अग्निः**) विद्युदिव (**पावकः**) पवित्रकर्त्ता (**ईड्यः**) स्तोतुमर्हः (**शोचिष्केशः**) शोचींषि तेजांसि केशा इव यस्य सः (**तम्**) (**ईमहे**) याचामहे॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽध्वरे समिध्यमानः शोचिष्केशः पावकोऽग्निरिवेड्यो भवेत् तं वयमीमहे यूयमप्येतं सेवध्वम्॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽस्मिन् जगत्यग्निरेव सर्वेभ्यो महानत एतद्विद्या याचनीयास्ति तथैव विद्वांसः सर्वेषु महान्तश्चैतद्विद्याप्राप्तये याचनीयाः सन्ति॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**अध्वरे**) अहिंसा रूप यज्ञ में (**समिध्यमानः**) उत्तम रीति से प्रकाशमान (**शोचिष्केशः**) केशों के सदृश तेजों से युक्त (**पावकः**) पवित्र करनेवाला (**अग्निः**) बिजुली के सदृश (**ईड्यः**) स्तुति करने योग्य होवे (**तम्**) उसकी हम लोग (**ईमहे**) याचना करते हैं, आप लोग भी इसका सेवन करिये॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे इस संसार में अग्निरूप पदार्थ ही सम्पूर्ण पदार्थों से श्रेष्ठ है, इसलिये इस अग्नि विषयणी विद्या की प्रार्थना करनी योग्य है, वैसे ही विद्वान् लोग सम्पूर्ण मनुष्यों में श्रेष्ठ और उनकी विद्याप्राप्ति के लिये प्रार्थना करनी चाहिये॥४॥

विद्वांसोऽग्निवत्कार्याणि साध्नुवन्तीत्याह॥

विद्वान् लोग अग्नि के तुल्य कार्यसाधक होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

पृथुपाजा अमर्त्यो घृतनिर्णिक् स्वाहुतः। अग्निर्यज्ञस्य हव्यवाट्॥५॥२८॥

पृथुऽपाजाः। अमर्त्यः। घृतऽनिर्निक्। सुऽआहुतः। अग्निः। यज्ञस्य। हव्यऽवाट्॥५॥

पदार्थः- (**पृथुपाजाः**) पृथु विस्तीर्णं पाजो बलं यस्य सः (**अमर्त्यः**) स्वस्वरूपेण नित्यः (**घृतनिर्णिक्**) आज्योदकयोः शोधकः (**स्वाहुतः**) सुष्ठु मानेन कृताऽऽह्वानः (**अग्निः**) वह्निरिव (**यज्ञस्य**) राजपालनादिव्यवहारस्य (**हव्यवाट्**) यो हव्यानि प्राप्तव्यानि वस्तूनि वहति प्रापयति सः॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यूयं यः पृथुपाजा अमर्त्यो यज्ञस्य हव्यवाड् घृतनिर्णिगग्निरिव स्वाहुतो भवेत्तं विद्वांसं सततं सेवध्वम्॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा साधनोपसाधनैरुपचरितोऽग्निः कार्य्याणि साध्नोति तथैव सेवया सन्तोषिता विद्वांसो विद्यादिसिद्धिं सम्पादयन्ति॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! आप लोग जो **(पृथुपाजाः)** विस्तारसहित बलयुक्त **(अमर्त्यः)** अपने स्वरूप से नाशरहित **(यज्ञस्य)** राज्यपालन आदि व्यवहार के **(हव्यवाट्)** प्राप्त होने योग्य वस्तुओं को धारण करनेवाले **(घृतनिर्णिक्)** जल और घी के शोधनेवाले **(अग्निः)** अग्नि के सदृश **(स्वाहुतः)** अच्छे प्रकार आदरपूर्वक पुकारे गये उस विद्वान् पुरुष की निरन्तर सेवा करो॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे साधन और उपसाधनों से उपकार में लाया गया अग्नि कार्य्यों को सिद्ध करता है, वैसे ही सेवा से संतुष्टता को प्राप्त किये विद्वान् लोग विद्या आदि की सिद्धि को सम्पादन करते हैं॥५॥

पुनर्मनुष्या किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तं सबाधो यतस्रुच इत्था धिया यज्ञवन्तः। आ चक्रुरग्निमूतये॥६॥

तम्। सऽबाधः। यतऽस्रुचः। इत्था। धिया। यज्ञऽवन्तः। आ। चक्रुः। अग्निम्। ऊतये॥६॥

पदार्थः-**(तम्)** **(सबाधः)** दुर्व्यसनानां बाधेन सह ये वर्त्तन्ते **(यतस्रुचः)** यता उद्यताः स्रुचः कर्मसाधनानि यैस्ते **(इत्था)** अनेन प्रकारेण **(धिया)** प्रज्ञया कर्मणा वा **(यज्ञवन्तः)** प्रशस्ता यज्ञाः प्रयत्ना येषान्ते **(आ)** **(चक्रुः)** कुर्युः **(अग्निम्)** पावकमिव विद्वांसम् **(ऊतये)** रक्षणाद्याय॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा सबाधो यतस्रुचो यज्ञवन्तो जना धियोतयेऽग्निमिव विद्वांसमा चक्रुस्तमित्था यूयं सेवध्वम्॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा प्रज्ञाकर्मकुशला सद्व्यवहारान् साध्नुवन्ति तथैव जिज्ञासवो विद्वांसं प्रसाद्य शुभान् गुणान् प्राप्नुवन्तु॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(सबाधः)** दुष्ट व्यसनों के नाशकर्त्ता **(यतस्रुचः)** उद्योगयुक्त कर्मसाधनों के सहित **(यज्ञवन्तः)** प्रशंसा करने योग्य प्रयत्न करनेवाले जन **(धिया)** बुद्धि वा कर्म से **(ऊतये)** रक्षण आदि के लिये **(अग्निम्)** अग्नि के सदृश तेजस्वी विद्वान् पुरुष का **(आ)** **(चक्रुः)** आदर करते हैं, वैसे **(तम्)** उस विद्वान् पुरुष की **(इत्था)** इसी प्रकार आप लोग भी सेवा करें॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे बुद्धि और कर्म में चतुर पुरुष उत्तम व्यवहारों को सिद्ध करते हैं, वैसे ही धर्म आदि को जानने की इच्छायुक्त पुरुष, विद्वान् जन को प्रसन्न करके उत्तम गुणों का ग्रहण करें॥६॥

पुनर्विद्यार्थिनः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्यार्थी क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

होता देवो अमर्त्यः पुरस्तादेति मायया। विदथानि प्रचोदयन्॥७॥

होता। देवः। अमर्त्यः। पुरस्तात्। एति। मायया। विदथानि। प्रऽचोदयन्॥७॥

पदार्थः-(**होता**) दाता (**देवः**) दिव्यगुणकर्मस्वभावः (**अमर्त्यः**) मरणधर्मरहितः (**पुरस्तात्**) प्रथमतः (**एति**) गच्छति (**मायया**) प्रज्ञया (**विदथानि**) विज्ञानानि (**प्रचोदयन्**) प्रज्ञापयन्॥७॥

अन्वयः-हे जिज्ञासवो! यथाऽमर्त्यो होता देवः पुरस्तान्मायया सह विदथानि प्रचोदयन् युष्मानेति तथैतं यूयमपि प्राप्नुत॥७॥

भावार्थः-हे विद्यार्थिनो योऽध्यापको युष्मभ्यं निष्कपटतया विद्यादिशुभगुणान् प्रदाय सुशिक्षयेत्तं यूयमप्यात्मवत्सेवध्वम्॥७॥

पदार्थः-हे धर्म आदि को जानने की इच्छा करनेवाले पुरुषो! जैसे (**अमर्त्यः**) मरणधर्म से रहित (**होता**) देनेवाला (**देवः**) उत्तम गुण, कर्म, स्वभावयुक्त पुरुष (**पुरस्तात्**) पहिले से (**मायया**) उत्तम बुद्धि के साथ (**विदथानि**) विज्ञानों का (**प्रचोदयन्**) प्रचार करता हुआ आप लोगों को (**एति**) प्राप्त होता है, वैसे उसको आप लोग भी प्राप्त होइये॥७॥

भावार्थः-हे विद्यार्थी जनो! जो अध्यापक पुरुष आप लोगों के लिये कपट त्याग के विद्या आदि उत्तम गुणों को देकर उत्तम शिक्षा देवे, उसकी आप लोग भी अपने आत्मा के तुल्य सेवा करो॥७॥

पुनर्विद्वदितरे किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वानों से भिन्न जन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

वाजी वाजेषु धीयतेऽध्वरेषु प्र णीयते। विप्रो यज्ञस्य साधनः॥८॥

वाजी। वाजेषु। धीयते। अध्वरेषु। प्र। नीयते। विप्रः। यज्ञस्य। साधनः॥८॥

पदार्थः-(**वाजी**) वेगवान् वह्निः (**वाजेषु**) विज्ञानक्रियामयेषु (**धीयते**) ध्रियते (**अध्वरेषु**) मित्रत्वादिगुणयुक्तव्यवहारेषु विधियज्ञेषु वा (**प्र**) (**नीयते**) प्राप्यते (**विप्रः**) मेधावी (**यज्ञस्य**) सद्व्यवहारस्य (**साधनः**) यः साध्नोति सः॥८॥

अन्वयः-हे जिज्ञासवो यथर्त्विग्भिर्वाजेष्वध्वरेषु यज्ञस्य साधनो वाजी वेगयुक्तोऽग्निर्धीयते तथा विप्रः प्र णीयते॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथाऽग्निहोत्रादिक्रियामयेषु यज्ञेषु प्राधान्येनाऽग्निराश्रीयते तथैव विद्याविनयसुशिक्षाव्यवहारेषु विद्वानाश्रयितव्यः॥८॥

पदार्थः-हे धर्म आदि की जिज्ञासा करनेवाले पुरुषो! जैसे ऋत्विजों से (**वाजेषु**) विज्ञान और

क्रियास्वरूप **(अध्वरेषु)** मित्रता आदि गुणयुक्त व्यवहारों वा यज्ञ में **(यज्ञस्य)** उत्तम व्यवहार का **(साधनः)** सिद्धिकर्त्ता **(वाजी)** वेगयुक्त अग्नि **(धीयते)** धारण किया जाता है, वैसे **(विप्रः)** बुद्धिमान् **(प्र) (नीयते)** प्राप्त किया जाता है॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे अग्निहोत्र आदि क्रियास्वरूप यज्ञों में मुख्यभाव से अग्नि का आश्रय किया जाता है, वैसे ही विद्या, विनय और उत्तम शिक्षा के व्यवहारों में विद्वान् का आश्रय करना चाहिये॥८॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् लोग क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

धिया चक्रे वरेण्यो भूतानां गर्भमा दधे। दक्षस्य पितरं तना॥९॥

धिया। चक्रे। वरेण्यः। भूतानाम्। गर्भम्। आ। दधे। दक्षस्य। पितरम्। तना॥९॥

पदार्थः-**(धिया)** श्रेष्ठया प्रज्ञया शिक्षया वा **(चक्रे)** कुर्य्यात् **(वरेण्यः)** वरितुमर्होऽतिश्रेष्ठः **(भूतानाम्)** प्राणिनाम् **(गर्भम्)** विद्यादिसद्गुणस्थापनाख्यम् **(आ)** समन्तात् **(दधे)** दधेत् **(दक्षस्य)** चतुरस्य विद्यार्थिनः **(पितरम्)** पितृवत्पालकम् **(तना)** विस्तृतया॥९॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो वरेण्यस्तना धिया दक्षस्य पितरं भूतानां गर्भमा दधे विद्यावृद्धिं चक्रे तमात्मवत्सेवध्वम्॥९॥

भावार्थः-यथा पतिः पत्न्यां गर्भं धारयित्वोत्तमान्यपत्यान्युत्पादयति तथैव विद्वांसो मनुष्याणां बुद्धौ विद्यागर्भं स्थापयित्वोत्तमान् व्यवहारान् जनयेयुः॥९॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(वरेण्यः)** आदर करने योग्य अति श्रेष्ठ पुरुष **(तना)** विस्तारयुक्त **(धिया)** श्रेष्ठ बुद्धि वा शिक्षा से **(दक्षस्य)** चतुर विद्यार्थी पुरुष के **(पितरम्)** पिता के सदृश पालनकर्त्ता **(भूतानाम्)** प्राणियों के **(गर्भम्)** विद्या आदि उत्तम गुणों को स्थित करने रूप गर्भ को **(आ) (दधे)** सब प्रकार धारण करें और विद्या सम्बन्धी वृद्धि को **(चक्रे)** करें तो उसकी अपने आत्मा के सदृश सेवा करो॥९॥

भावार्थः-जैसे पति अपनी स्त्री में गर्भ को धारण करके श्रेष्ठ सन्तानों को उत्पन्न करता है, वैसे ही विद्वान् लोग मनुष्यों की बुद्धि में विद्यासम्बन्धी गर्भ की स्थिति करके उत्तम व्यवहारों को उत्पन्न करें॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

नि त्वा दधे वरेण्यं दक्षस्येळा सहस्कृत। अग्ने सुदीतिमुशिजम्॥१०॥२९॥

नि। त्वा। दुधे। वरेण्यम्। दक्षस्य। इळा। सहःऽकृत। अग्ने। सुऽदीतिम्। उशिजम्॥ १०॥

पदार्थः-**(नि)** निश्चये **(त्वा)** त्वाम् **(दधे)** दधेय **(वरेण्यम्)** स्वीकर्त्तुं योग्यम् **(दक्षस्य)** बलस्य **(इळा)** प्रशंसितेनोपदेशेन सुसंस्कृतेनाऽन्नादिना वा **(सहस्कृत)** सहो बलं कृतं येन तत्सम्बुद्धौ **(अग्ने)** पावक इव वर्त्तमान **(सुदीतिम्)** सुष्ठुविज्ञानप्रकाशयुक्तम् **(उशिजम्)** सद्गुणप्रचारं कामयमानम्॥१०॥

अन्वयः-हे सहस्कृताऽग्ने! यथाऽहमिळा दक्षस्य वरेण्यं सुदीतिमुशिजं त्वा नि दधे तथैव त्वं मां विद्यानिधिं सम्पादय॥१०॥

भावार्थः-यथा विद्यार्थिनोऽध्यापकानामिच्छानुकूलानि कर्माणि कृत्वा प्रसन्नान् रक्षन्ति तथैवाऽध्यापका विद्यार्थिनामिच्छानुकूलाञ्छुभान् गुणान् दत्वा प्रसादयन्तु॥१०॥

पदार्थः-हे **(सहस्कृत)** बलकारक **(अग्ने)** अग्नि के सदृश तेजयुक्त पुरुष! जैसे मैं **(इळा)** उत्तम उपदेश वा उत्तम प्रकार संस्कारयुक्त अन्न आदि से **(दक्षस्य)** पराक्रम के **(वरेण्यम्)** स्वीकार करने योग्य **(सुदीतिम्)** उत्तम विज्ञान के प्रकाश से युक्त **(उशिजम्)** उत्तम गुणों के प्रचार की कामना करनेवाले **(त्वा)** आपको **(नि)** निश्चय से **(दधे)** धारण करूं, वैसे ही आप मुझको विद्या का पात्र करो॥१०॥

भावार्थः-जैसे विद्यार्थी जन अध्यापक लोगों की इच्छा के अनुसार कर्म्मों को कर प्रसन्न रखते हैं, वैसे ही अध्यापक लोग विद्यार्थियों की इच्छा के अनुकूल उत्तम गुणों को देकर प्रसन्न करें॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अग्निं यन्तुरमप्तुरमृतस्य योगे वनुषः। विप्रा वाजैः समिन्धते॥ ११॥

अग्निम्। यन्तुरम्। अप्ऽतुरम्। ऋतस्य। योगे। वनुषः। विप्राः। वाजैः। सम्। इन्धते॥ ११॥

पदार्थः-**(अग्निम्)** पावकमिव वर्त्तमानम् **(यन्तुरम्)** यन्तारम्। अत्र ययधातोर्बाहुलकात्तुरः प्रत्ययः। **(अप्तुरम्)** योऽपः प्राणान् जलानि वा तोरयति प्रेरयति तम् **(ऋतस्य)** सत्यस्य **(योगे)** **(वनुषः)** याचकाः **(विप्राः)** मेधाविनः **(वाजैः)** विज्ञानादिभिः **(सम्)** **(इन्धते)** सम्यक् प्रदीपयेयुः॥११॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा वनुषो विप्रा ऋतस्य योगे वाजैर्यन्तुरमप्तुरमग्निं समिन्धते तथैव सर्वैर्विद्याः प्रकाशनीयाः॥११॥

भावार्थः-यदा विदुषां सङ्गो भवेत्तदा सुविज्ञानस्यैव प्रश्नसमाधानाभ्यां याचना कार्य्या अस्मात्परो लाभोऽन्यो नैव मन्तव्यः॥११॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(वनुषः)** याचना करनेवाले **(विप्राः)** बुद्धिमान् जन **(ऋतस्य)** सत्य के **(योगे)** योग में **(वाजैः)** विज्ञान आदिकों से **(यन्तुरम्)** प्राप्तिकारक **(अप्तुरम्)** प्राण वा जलों की प्रेरणाकर्त्ता **(अग्निम्)** अग्नि के सदृश तेजस्वी को **(सम्)** **(इन्धते)** उत्तम प्रकार प्रदीप्त करें, वैसे ही

सम्पूर्ण जनों से विद्या प्रकाश करने योग्य हैं॥११॥

भावार्थः-जिस समय विद्वान् पुरुषों का सङ्ग होवे उस समय उत्तम विज्ञान ही की प्रश्न-उत्तरों से याचना करनी चाहिये, इससे अधिक लाभ और न समझना चाहिये॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ऊर्जो नपातमध्वरे दीदिवांसमुप द्यवि। अग्निमीळे कविक्रतुम्॥१२॥

ऊर्जः। नपातम्। अध्वरे। दीदिऽवांसम्। उप। द्यवि। अग्निम्। ईळे। कविऽक्रतुम्॥१२॥

पदार्थः-(**ऊर्जः**) बलात् (**नपात्**) विनाशरहितम् (**अध्वरे**) सङ्गते संसारे (**दीदिवांसम्**) प्रदीप्यमानम् (**उप**) (**द्यवि**) प्रकाशे (**अग्निम्**) वह्निवद् वर्त्तमानम् (**ईळे**) स्तौमि (**कविक्रतुम्**) कवीनां विदुषां क्रतुः प्रज्ञा कर्म वा क्रतुवत् यस्य सः तम्॥१२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यं द्यव्यध्वरेऽग्निमिव वर्त्तमानमूर्जो नपातं कविक्रतुं दीदिवांसं विद्वांसमुपेळे तथैतं यूयमपि प्रशंसत॥१२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा यज्ञेऽग्निः प्रकाशमानो विराजते तथैव विद्याप्रकाशके व्यवहारे विद्वांसः प्रकाशन्ते॥१२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिसको (**द्यवि**) प्रकाश तथा (**अध्वरे**) मेल को प्राप्त संसार में (**अग्निम्**) अग्नि के सदृश तेजयुक्त (**ऊर्जः**) बल से (**नपातम्**) विनाशरहित (**कविक्रतुम्**) विद्वानों की बुद्धि वा कर्म को यज्ञ समझनेवाला (**दीदिवांसम्**) प्रकाशमान विद्वान् पुरुष के (**उप**) समीप (**इळे**) स्तुति करता हूँ, वैसे इसकी आप लोग भी प्रशंसा करो॥१२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे यज्ञ में अग्नि प्रकाशमान होकर शोभित होता है, वैसे ही विद्या के प्रकाशकर्त्ता व्यवहार में विद्वान् जन प्रकाशित होते हैं॥१२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ईळेन्यो नमस्यस्तिरस्तमांसि दर्शतः। समग्निरिध्यते वृषा॥१३॥

ईळेन्यः। नमस्यः। तिरः। तमांसि। दर्शतः। सम्। अग्निः। इध्यते। वृषा॥१३॥

पदार्थः-(**ईळेन्यः**) ईळितुं स्तोतुमर्हः (**नमस्यः**) सत्कर्त्तुं योग्यः (**तिरः**) तिरस्कुर्वन् (**तमांसि**) रात्रीः (**दर्शतः**) द्रष्टुं योग्यः (**सम्**) सम्यक् (**अग्निः**) अग्निरिव प्रकाशमानः (**इध्यते**) प्रदीप्यते (**वृषा**) वर्षकः॥१३॥

अन्वयः-हे मनुष्यास्तमांसि तिरः तिरस्कुर्वन्नग्निरिव वृषा दर्शत इळेन्यो नमस्यः समिध्यते तं यूयं सततं भजत॥१३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्य्यस्तमो निहत्य प्रकाशं जनयति तथैवाप्ता विद्वांसोऽविद्यां हत्वा विद्यां प्रकाशयन्ति॥१३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(तमांसि)** रात्रियों के **(तिरः)** तिरस्कार करनेवाले **(अग्निः)** अग्नि के सदृश प्रकाशमान **(वृषा)** वृष्टिकर्त्ता **(दर्शतः)** देखने **(ईडेन्यः)** स्तुति करने और **(नमस्यः)** सत्कार करने योग्य पुरुष **(सम्)** उत्तम प्रकार **(इध्यते)** प्रकाशित किया जाता है, उसका आप निरन्तर आदर करो॥१३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य अन्धकार को दूर कर प्रकाश उत्पन्न करता है, वैसे ही यथार्थवक्ता विद्वान् लोग अविद्या का नाश और विद्या का प्रकाश करते हैं॥१३॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

वृषो॑ अ॒ग्निः समि॑ध्य॒तेऽश्वो॒ न दे॑व॒वाह॑नः। तं ह॒विष्म॑न्त ईळते॥१४॥

वृषो॒ इति॑। अ॒ग्निः। सम्। इ॒ध्य॒ते॒। अश्वः॑। न। दे॒व॒ऽवाह॑नः। तम्। ह॒विष्म॑न्तः। ई॒ळ॒ते॒॥१४॥

पदार्थः-**(वृषः)** वर्षकः **(अग्निः)** पावकः **(सम्)** **(इध्यते)** सम्यक् प्रकाश्यते **(अश्वः)** आशुगामी तुरङ्गः **(न)** इव **(देववाहनः)** यो देवान् दिव्यान् वेगादिगुणान् वाहयति प्रापयति सः **(तम्)** **(हविष्मन्तः)** बहूनि हवींष्यादानानि येषान्ते **(ईळते)** स्तुवन्ति॥१४॥

अन्वयः-यो वृषो देववाहनोऽग्निरश्वो न समिध्यते तं हविष्मन्त ईळते॥१४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा बलिष्ठा वेगवन्तोऽश्वा यानं सद्यो गमयन्ति तथैवाऽग्निरस्तीति वेद्यम्। यथाऽस्य गुणान् विद्वांसो जानन्ति तथैव यूयमपि जानीत॥१४॥

पदार्थः-जो **(वृषः)** वृष्टिकर्त्ता **(देववाहनः)** उत्तम वेग आदि गुणों को प्राप्त करानेवाला **(अग्निः)** अग्नि **(अश्वः)** शीघ्र चलनेवाले घोड़े के **(न)** सदृश **(सम्)** **(इध्यते)** प्रकाशित किया जाता है **(तम्)** उसकी **(हविष्मन्तः)** बहुत शीघ्र ग्रहण करने योग्य वस्तुओं से युक्त पुरुष **(ईळते)** स्तुति करते हैं॥१४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे बल और वेग से युक्त घोड़े वाहन को शीघ्र ले चलते हैं, वैसे ही अग्नि को भी समझना चाहिये और जैसे इस अग्नि के गुणों को विद्वान् लोग जानते हैं, वैसे आप लोग भी जानिये॥१४॥

पुनरध्ययनाऽध्यापनविषयमाह॥

फिर पढ़ने-पढ़ाने के विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

वृषणं त्वा वयं वृषन्वृषणः समिधीमहि। अग्ने दीद्यतं बृहत्॥ १५॥ ३०॥

वृषणम्। त्वा। वयम्। वृषन्। वृषणः। सम्। इधीमहि। अग्ने। दीद्यतम्। बृहत्॥ १५॥

पदार्थः-(**वृषणम्**) सुखवर्षयितारम् (**त्वा**) त्वाम् (**वयम्**) (**वृषन्**) बलिष्ठ (**वृषणः**) बलिष्ठान् (**सम्**) सम्यक् (**इधीमहि**) प्रकाशयेम (**अग्ने**) वह्निवत्प्रकाशक (**दीद्यतम्**) प्रकाशकं विज्ञानम् (**बृहत्**) महत्॥ १५॥

अन्वयः-हे वृषन्नग्ने! यथा त्वं बृहद्दीद्यतं प्रकाशयसि तथैव वयं वृषणं त्वाऽन्याम् वृषणश्च समिधीमहि॥ १५॥

भावार्थः-हे अध्यापकाऽध्येतारो भवद्भिर्विरोधं विहाय प्रीतिं जनयित्वा परस्परेषामुन्नतिर्विधेया यतो विद्यादिसद्गुणप्रकाशेन सर्वे मनुष्या बलिष्ठा न्यायकारिणश्च स्युरिति॥ १५॥

अत्र वह्निविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति सप्तविंशतितमं सूक्तं त्रिंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**वृषन्**) बलयुक्त (**अग्ने**) अग्नि के सदृश प्रकाशकर्त्ता जन! जैसे आप (**बृहत्**) बड़े (**दीद्यतम्**) प्रकाशकर्त्ता विज्ञान को प्रकाशित करते हैं, वैसे ही (**वयम्**) हम लोग (**वृषणम्**) सुखवृष्टिकारक (**त्वा**) आप और अन्य जनों को (**वृषणः**) बलयुक्त (**सम्**) उत्तम प्रकार (**इधीमहि**) प्रकाशित करें॥ १५॥

भावार्थः-हे पढ़ाने और पढ़नेवाले पुरुषो! आप लोगों को चाहिये कि विरोध को त्याग और प्रीति को उत्पन्न करक परस्पर की वृद्धि करो, जिससे विद्या आदि उत्तम गुणों के प्रकाश से सम्पूर्ण मनुष्य बलयुक्त और न्यायकारी होवें॥ १५॥

इस सूक्त में अग्नि और विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त में कहे अर्थ की पूर्व सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह सत्ताईसवां सूक्त और तीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ षड्चस्याष्टविंशतितमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। अग्निर्देवता। १ गायत्री। २, ६ निचृद्गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः। ३ स्वराडुष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः। ४ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ५ निचृज्जगती छन्दः। निषादः स्वरः॥

अथाग्निविद्वद्विषयमाह॥

अब छः ऋचावाले अट्ठाईसवें सूक्त का प्रारम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र से अग्नि और विद्वानों का वर्णन करते हैं॥

अग्ने जुषस्व नो हविः पुरोळाशं जातवेदः। प्रातःसावे धियावसो॥१॥

अग्ने। जुषस्व। नः। हविः। पुरोळाशम्। जातऽवेदः। प्रातःऽसावे। धियावसो इति धियाऽवसो॥१॥

पदार्थः-(**अग्ने**) वह्निरिव वर्त्तमान (**जुषस्व**) सेवस्व (**नः**) अस्माकम् (**हविः**) अत्तुं योग्यम् (**पुरोळाशम्**) संस्कृतान्नविशेषम् (**जातवेदः**) जातप्रज्ञान (**प्रातःसावे**) प्रातःसवने (**धियावसो**) यो धिया प्रज्ञया सुकर्मणा वा वासयति तत्सम्बुद्धौ॥१॥

अन्वयः-हे धियावसो जातवेदोऽग्ने! यथाऽग्निः प्रातःसावे नो हविः पुरोळाशं सेवते तथैव तत् त्वं जुषस्व॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथा प्रातरग्निहोत्रादिषु वेद्यां निहितोऽग्निर्घृतादिकं संसेव्यान्तरिक्षे प्रसार्य सुखयति तथैव ब्रह्मचर्ये प्रवृत्ता विद्यार्थिनो विद्याविनयौ सङ्गृह्य जगति प्रसार्य सर्वान् सुखयेयुः॥१॥

पदार्थः-हे (**धियावसो**) उत्तम बुद्धि वा उत्तम गुणों के प्रचारकर्त्ता (**जातवेदः**) सकल उत्पन्न पदार्थों के ज्ञाता (**अग्ने**) अग्नि के सदृश तेजस्वी पुरुष! जैसे अग्नि (**प्रातःसावे**) प्रातःकाल के अग्निहोत्र आदि कर्म में (**नः**) हमारे (**हविः**) भक्षण करने योग्य (**पुरोळाशम्**) मन्त्रों से संस्कारयुक्त अन्न विशेष का सेवन करते हैं, वैसे इसका आप (**जुषस्व**) सेवन करो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे प्रातःकाल अग्निहोत्र आदि कर्मों में वेदी में स्थापित किया गया अग्नि घृत आदि का सेवन तथा उसको अन्तरिक्ष में फैलाय के जनों को सुख देता है, वैसे ही ब्रह्मचर्य्यधर्म्म में वर्त्तमान विद्यार्थी जन विद्या और विनय का ग्रहण कर संसार में उनका प्रचार करके सकल जनों को सुख देवें॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

पुरोळा अग्ने पचतस्तुभ्यं वा घा परिष्कृतः। तं जुषस्व यविष्ठ्य॥२॥

पुरोळाः। अग्ने। पचतः। तुभ्यम्। वा। घ। परिऽकृतः। तम्। जुषस्व। यविष्ठ्य॥२॥

पदार्थः-(**पुरोळाः**) यो विधिना संस्कृतः (**अग्ने**) पावकवद्वर्त्तमान (**पचतः**) पाकं कुर्वन्। अत्र पच धातोरौणादिकोऽतच् प्रत्ययः। (**तुभ्यम्**) (**वा**) पक्षान्तरे (**घ**) एव। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**परिष्कृतः**) सर्वतः शुद्धः सम्पादितः (**तम्**) (**जुषस्व**) (**यविष्ठ्य**) यविष्ठ्येष्वतिशयेन युवसु कुशलस्तत्सम्बुद्धौ॥२॥

अन्वयः-हे यविष्ठ्याग्नेऽग्निरिव यस्तुभ्यं पुरोळाः पचतो वा परिष्कृतोऽस्ति तं घ जुषस्व॥२॥

भावार्थः-यथा भोजनप्रियः स्वार्थानि सुसंस्कृतान्यन्नादीनि निष्पाद्य भुक्त्वाऽऽनन्दो जायते तथैव सुसंस्कृतानि हवींषि प्राप्याऽग्निः सर्वानानन्दयति॥२॥

पदार्थः-हे (**यविष्ठ्य**) अतिशय युवा पुरुषों में चतुर (**अग्ने**) अग्नि के सदृश तेजस्वी जन! जो (**तुभ्यम्**) आपके लिये (**पुरोळाः**) वेदविधि से संस्कारयुक्त (**पचतः**) पाककर्त्ता हुआ (**वा**) अथवा (**परिष्कृतः**) सब प्रकार शुद्ध किया गया है (**तम्**) उसकी (**घ**) ही (**जुषस्व**) सेवा करो॥२॥

भावार्थः-जैसे भोजन में प्रीतिकर्त्ता पुरुष अपने लिये उत्तम प्रकार संस्कारयुक्त अन्न आदि पदार्थों को सिद्ध और उनका भोजन करके आनन्दयुक्त होता है, वैसे ही उत्तम प्रकार संस्कारयुक्त हवन की सामग्री को प्राप्त होकर अग्नि सम्पूर्ण जनों को आनन्द देता है॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अग्ने॑ वी॒हि पु॑रो॒ळाश॒माहु॑तं ति॒रोअ॑ह्न्यम्। सह॑सः सू॒नुर॑स्यध्व॒रे हि॒तः॥३॥

अग्ने॑। वी॒हि। पु॒रो॒ळाश॑म्। आऽहु॑तम्। ति॒रःऽअ॑ह्न्यम्। सह॑सः। सू॒नुः। अ॒सि॒। अ॒ध्व॒रे। हि॒तः॥३॥

पदार्थः-(**अग्ने**) पावक इव वर्त्तमान (**वीहि**) प्राप्नुहि (**पुरोळाशम्**) अनेकविधसंस्कारैर्निष्पादितम् (**आहुतम्**) समन्तात्प्रदत्तम् (**तिरोअह्न्यम्**) तिरश्चीनेऽह्नि भवं साधुर्वा (**सहसः**) बलस्य बलवतो वायोर्वा (**सूनुः**) अपत्यमिव (**असि**) (**अध्वरे**) दयामये व्यवहारे (**हितः**) हितकारी॥३॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वं पावक इव तिरोअह्न्यमाहुतं पुरोळाशं वीहि यतस्त्वं सहसः सूनुरिवाऽध्वरे सर्वेषां हितोऽसि तस्मात्सत्कर्त्तव्योऽसि॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽग्निर्वायोर्जातः सन् मूर्त्तं द्रव्यं दग्ध्वा विभजति तथैव विद्यापवित्रोऽविद्याव्यवहारं दग्ध्वा सत्याऽसत्यं विभजति॥३॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) अग्नि के सदृश तेजस्वी पुरुष! आप अग्नि के तुल्य (**तिरोअह्न्यम्**) दिन के प्रथम भाग में उत्पन्न वा उत्तम (**आहुतम्**) चारों ओर से दिये गये (**पुरोळाशम्**) अनेक प्रकारों के संस्कारों से युक्त अन्न को (**वीहि**) प्राप्त होइये जिससे आप (**सहसः**) बल वा बलवान् वायु के (**सूनुः**) पुत्र के तुल्य (**अध्वरे**) दयारूप व्यवहार में सबके (**हितः**) हितकारी (**असि**) वर्त्तमान हैं, इस कारण से सत्कार करने योग्य हैं॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे अग्नि वायु से उत्पन्न होकर स्वरूपवान् द्रव्य को भस्म करके विभाग करता है, वैसे ही विद्या से पवित्रात्मा पुरुष अविद्या के व्यवहार को भस्म अर्थात् दूर करके सत्य और असत्य का विभाग करता है॥३॥

अथ के सुखिनो भवन्तीत्याह॥

अब कौन मनुष्य सुखी होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

माध्यंदिने सवने जातवेदः पुरोळाशमिह कवे जुषस्व।
अग्ने यह्वस्य तव भागधेयं न प्र मिनन्ति विदथेषु धीराः॥४॥

माध्यंदिने। सवने। जातऽवेदः। पुरोळाशम्। इह। कवे। जुषस्व। अग्ने। यह्वस्य। तव। भागऽधेयम्। न। प्र। मिनन्ति। विदथेषु। धीराः॥४॥

पदार्थः-(**माध्यन्दिने**) मध्यंदिनसम्बन्धिनि (**सवने**) होमादिकर्मणि (**जातवेदः**) उत्पन्नविज्ञान (**पुरोडाशम्**) सुसंस्कृतमन्नादिकम् (**इह**) अस्मिन् संसारे (**कवे**) प्राप्तप्रज्ञ (**जुषस्व**) (**अग्ने**) पावक इव वर्त्तमान (**यह्वस्य**) महतः। **यह्व इति महन्नामसु पठितम्।** (निघं०३.३) (**तव**) (**भागधेयम्**) भाग्यम् (**न**) निषेधे (**प्र**) (**मिनन्ति**) प्रहिंसन्ति (**विदथेषु**) विज्ञानेषु संग्रामेषु वा (**धीराः**) योगिनः॥४॥

अन्वयः-हे जातवेदः कवेऽग्ने! त्वमिह ये धीरा यह्वस्य तव विदथेषु भागधेयं न प्रमिनन्ति तच्छिक्षया सहितस्सन्माध्यन्दिने सवनेऽग्निरिव पुरोडाशं जुषस्व॥४॥

भावार्थः-ये मनुष्याः प्रातर्मध्याह्नसवनं कृत्वा सुसंस्कृतान्नं मितं भुञ्जते त एव भाग्यशालिनः सन्तो महत्सुखं निश्चितं विजयं च प्राप्नुवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे (**जातवेदः**) विज्ञान से युक्त (**कवे**) उत्तम बुद्धिमान् (**अग्ने**) अग्नि के सदृश तेजयुक्त! आप (**इह**) इस संसार में जो (**धीराः**) योगी जन (**यह्वस्य**) श्रेष्ठ (**तव**) आपके (**विदथेषु**) विज्ञान वा संग्रामों में (**भागधेयम्**) भाग्य को (**न**) नहीं (**प्र**) (**मिनन्ति**) नाश करते हैं, उस शिक्षा से सहित होकर (**माध्यन्दिने**) दिन के मध्य समय के (**सवने**) होम आदि कर्म में अग्नि के सदृश (**पुरोडाशम्**) उत्तम प्रकार संस्कारयुक्त अन्न आदि का (**जुषस्व**) सेवन करो॥४॥

भावार्थः-जो मनुष्य प्रातःकाल तथा दिन के मध्यभाग समय के होमों को करके उत्तम प्रकार छौंकने आदि से संस्कारयुक्त नित्य नियमित अन्न का भोजन करते हैं, वे ही भाग्यशाली होकर बड़े सुख और निश्चित विजय को प्राप्त होते हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अग्ने॑ तृ॒तीये॒ सव॑ने॒ हि कानि॑षः पु॒रो॒ळाशं॑ सहसः सू॒न॒वाहु॑तम्।
अथा॑ दे॒वेष्व॑ध्व॒रं वि॑प॒न्यया॑ धा॒ रत्न॑वन्तम॒मृते॑षु॒ जागृ॑विम्॥५॥

अग्ने॑। तृ॒तीये॑। सव॑ने। हि॒। कानि॑षः। पु॒रो॒ळाश॑म्। स॒ह॒सः॒। सू॒नो॒ इति॑। आऽहु॑तम्। अथ॑। दे॒वेषु॑। अ॒ध्व॒रम्। वि॒प॒न्यया॑। धाः। रत्न॑ऽवन्तम्। अ॒मृते॑षु। जागृ॑विम्॥५॥

पदार्थः-(**अग्ने**) विद्युदिव बलिष्ठ (**तृतीये**) (**सवने**) (**हि**) यतः (**कानिषः**) कमनीयस्य (**पुरोडाशम्**) रोगनिवारकमन्नम् (**सहसः**) बलवतः (**सूनो**) अपत्य (**आहुतम्**) समन्तात्स्वीकृतम् (**अथ**)। अत्र **निपातस्य च** इति दीर्घः। (**देवेषु**) विद्वत्सु दिव्यगुणेषु वा (**अध्वरम्**) अहिंसादिलक्षणं धर्म्यं व्यवहारम् (**विपन्यया**) विशेषेण स्तुतया प्रशंसितया प्रज्ञया क्रियया वा (**धाः**) धेहि (**रत्नवन्तम्**) बहूनि रत्नानि विद्यन्ते यस्मिँस्तम् (**अमृतेषु**) नाशरहितेषु जगदीश्वरादिषु पदार्थेषु (**जागृविम्**) जागरूकम्॥५॥

अन्वयः-हे कानिषः सहसः सूनोऽग्ने! त्वं हि विपन्यया तृतीये सवनेऽथ देवष्वमृतेषु जागृविं रत्नवन्तमाहुतमध्वरं पुरोडाशं च धाः॥५॥

भावार्थः-ये परमेश्वरादीनां पदार्थानां विज्ञानेनाहिंसादिलक्षणे व्यवहारे वर्त्तित्वा युक्ताहारविहाराः सन्त ऐश्वर्य्यमुन्निनीषन्ति ते सर्वतः सुखिनो जायन्ते॥५॥

पदार्थः-हे (**कानिषः**) कामना करने योग्य (**सहसः**) बलयुक्त के (**सूनो**) पुत्र (**अग्ने**) बिजुली के सदृश बलयुक्त! आप (**हि**) जैसे (**विपन्यया**) विशेष करके स्तुतियुक्त प्रशंसा सहित बुद्धि वा क्रिया से (**तृतीये**) तीसरे समय के (**सवने**) होम आदि कर्म में (**अथ**) और (**देवेषु**) विद्वान् वा उत्तम गुणों में (**अमृतेषु**) नाशरहित जगदीश्वर आदि पदार्थों में (**जागृविम्**) जागनेवाले (**रत्नवन्तम्**) बहुत रत्नों से विशिष्ट (**आहुतम्**) सब प्रकार स्वीकार किये गये (**अध्वरम्**) अहिंसा आदि स्वरूप धर्मयुक्त व्यवहार और (**पुरोडाशम्**) रोग के दूर करनेवाले अन्न को (**धाः**) धारण करो॥५॥

भावार्थः-जो लोग परमेश्वर आदि पदार्थों के विज्ञान से अहिंसा आदि व्यवहार में वर्त्तमान नियमपूर्वक भोजन विहारयुक्त होकर ऐश्वर्य की वृद्धि करने की इच्छा करते हैं, वे सब प्रकार सुखी होते हैं॥५॥

पुनर्विद्वांसः कथं वर्त्तन्त इत्याह॥

फिर विद्वान् लोग कैसा वर्त्ताव करते, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अग्ने॑ वृधा॒न आहु॑तिं पु॒रो॒ळाशं॑ जातवेदः। जु॒षस्व॑ ति॒रोअ॑ह्न्यम्॥६॥३१॥

अग्ने॑। वृ॒धा॒नः। आऽहु॑तिम्। पु॒रो॒ळाश॑म्। जा॒त॒ऽवे॒दः॒। जु॒षस्व॑। ति॒रःऽअ॑ह्न्यम्॥६॥

पदार्थः-(**अग्ने**) पावक इव वर्त्तमान (**वृधानः**) वर्धमानः (**आहुतिम्**) (**पुरोडाशम्**) सुसंस्कृतमन्नादिकम् (**जातवेदः**) जातेषु विद्यमान (**जुषस्व**) (**तिरोअह्न्यम्**) तिरःस्वहस्सु साधुम्॥६॥

अन्वयः-हे जातवेदोऽग्ने! यथा वृधानोऽग्निराहुतिं तिरोअह्न्यं पुरोडाशं सेवते तथैतं त्वं जुषस्व॥६॥

भावार्थः-यथा विद्युत्सर्वत्राऽभिव्याप्य सर्वान् मूर्तान् पदार्थान् सेवते प्रसिद्धा सती वर्धते विद्यासु व्यापका विद्वांसो धर्मं सेवमाना वर्धन्त इति॥६॥

अत्राग्निविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यष्टाविंशतितमं सूक्तमेकाधिकत्रिंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(जातवेदः)** सम्पूर्ण उत्पन्न हुए पदार्थों में व्यापक **(अग्ने)** अग्नि के सदृश तेजस्वी! जैसे **(वृधानः)** बढ़ा हुआ अग्नि **(आहुतिम्)** चारों ओर अग्नि में छोड़े गये **(तिरोअह्न्यम्)** प्रातःकाल किये गये **(पुरोडाशम्)** उत्तम प्रकार संस्कारयुक्त अन्न आदि का सेवन करते हैं, वैसे उसकी आप **(जुषस्व)** सेवा करो॥६॥

भावार्थः-जैसे बिजुली सब स्थानों में व्याप्त होकर सम्पूर्ण मूर्तिमान् पदार्थों का सेवन करती है वा प्रसिद्ध हुई बढ़ती है, वैसे ही विद्याओं में व्यापक विद्वान् जन धर्म की सेवा करते हुए वृद्धि को प्राप्त होते हैं॥६॥

इस सूक्त में अग्नि और विद्वानों के गुणों के वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह अट्ठाईसवां सूक्त और इकतीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथैकोनत्रिंशत्तमस्य षोडशर्चस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। १-४, ६-१६ अग्निः। ५ ऋत्विज अग्निर्वा देवता। १ निचृदनुष्टुप्। ४ विराडनुष्टुप्। १०, १२ भुरिगनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः। २ भुरिक् पङ्क्तिः। १३ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ३, ५, ६ त्रिष्टुप्। ७-९, १६ निचृत् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ११, १४, १५ जगती छन्दः। निषादः स्वरः॥

अथ विद्युदग्निवायुभ्यां विद्वांसः किं किं साधयन्तीत्याह॥

अब तृतीय मण्डल में सोलह ऋचावाले उनतीसवें सूक्त का प्रारम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र से विद्युत् अग्नि और वायु से विद्वान् लोग किस-किस कार्य को सिद्ध करते हैं, इस विषय को कहा है॥

अस्तीदमधिमन्थनमस्ति प्रजननं कृतम्।

एतां विश्पत्नीमा भराग्निं मन्थाम पूर्वथा॥ १॥

अस्ति। इदम्। अधिऽमन्थनम्। अस्ति। प्रऽजननम्। कृतम्। एताम्। विश्पत्नीम्। आ। भर। अग्निम्। मन्थाम। पूर्वऽथा॥ १॥

पदार्थः-(**अस्ति**) (**इदम्**) (**अधिमन्थनम्**) उपरिस्थं मन्थनम् (**अस्ति**) (**प्रजननम्**) प्रकटनम् (**कृतम्**) (**एताम्**) (**विश्पत्नीम्**) प्रजायाः पालिकाम् (**आ**) (**भर**) समन्ताद्धर (**अग्निम्**) (**मन्थाम**) (**पूर्वथा**) पूर्वैरिव॥ १॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यदीदमधिमन्थनमस्ति यच्च प्रजननं कृतमस्ति ताभ्यामेतां विश्पत्नीं वयं पूर्वथाऽग्निं मन्थामेवाऽऽभर॥ १॥

भावार्थः-ये मनुष्या उपर्य्यधस्थाभ्यां मन्थनाभ्यां सङ्घर्षणेन विद्युतमग्निं जनयेयुस्ते प्रजापालिकां शक्तिं लभन्ते यथा पूर्वैः शिल्पिभिः क्रिययाऽग्न्यादिविद्या सम्पादिता भवेत्तेनैव प्रकारेण सर्व इमां संगृह्णीयुः॥ १॥

पदार्थः-हे विद्वान् पुरुष! जो (**इदम्**) यह (**अधिमन्थनम्**) ऊपर के भाग में वर्त्तमान मथने का वस्तु (**अस्ति**) विद्यमान है और जो (**प्रजननम्**) प्रकट होना (**कृतम्**) किया (**अस्ति**) है, उन दोनों से (**एताम्**) इस (**विश्पत्नीम्**) प्रजाजनों के पालन करनेवाली को हम लोग (**पूर्वथा**) प्राचीन जनों के तुल्य (**अग्निम्**) विद्युत् को (**मन्थाम**) मन्थन करें और (**आ**) (**भर**) सब ओर से आप लोग ग्रहण करो॥ १॥

भावार्थः-जो मनुष्य ऊपर नीचे के भाग में स्थित मथने की वस्तुओं के द्वारा घिसने से बिजुलीरूप अग्नि को उत्पन्न करें, वे प्रजाओं के पालन करनेवाले सामर्थ्य को प्राप्त होते हैं और जैसे पूर्व काल के कारीगरों ने शिल्पक्रिया से अग्नि आदि सम्बन्धिनी विद्या की सिद्धि हो, उस ही प्रकार से सम्पूर्ण जन इस अग्निविद्या को ग्रहण करें॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अरण्योर्निहितो जातवेदा गर्भइव सुधितो गर्भिणीषु।
दिवेदिव ईड्यो जागृवद्भिर्हविष्मद्भिर्मनुष्येभिरग्निः॥ २॥

अरण्योः। निऽहितः। जातऽवेदाः। गर्भःऽइव। सुऽधितः। गर्भिणीषु। दिवेऽदिवे। ईड्यः। जागृवत्ऽभिः। हविष्मत्ऽभिः। मनुष्येभिः। अग्निः॥ २॥

पदार्थः-**(अरण्योः)** उपर्य्यधस्थयोः साधनयोः **(निहितः)** स्थितः **(जातवेदाः)** जातेषु सर्वेषु पदार्थेषु विद्यमानोऽग्निः **(गर्भइव)** यथा गर्भस्तथा **(सुधितः)** सुष्ठु धृतः **(गर्भिणीषु)** गर्भा विद्यन्ते यासु तासु **(दिवेदिवे)** प्रतिदिनम् **(ईड्यः)** अध्यन्वेषणीयः **(जागृवद्भिः)** अविद्याऽऽलस्यनिद्रां विहाय विद्यापुरुषार्थादिकं प्राप्तैः **(हविष्मद्भिः)** बहूनि हवींष्यादत्तानि साधनानि यैस्तैः **(मनुष्येभिः)** मननशीलैः **(अग्निः)** वह्निः॥ २॥

अन्वयः-यैर्हविष्मद्भिर्जागृवद्भिर्मनुष्येभिररण्योर्निहितो गर्भिणीषु गर्भ इव स्थितो दिवेदिवे ईड्यो जातवेदा अग्निः सुधितस्ते भाग्यवन्तो विज्ञेयाः॥ २॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये मनुष्याः सृष्टिक्रमेण विद्यमानाग्न्यादिपदार्थान् प्रतिदिनं परीक्षयेयुस्ते कुतो दरिद्रा भवेयुः?॥ २॥

पदार्थः-जिन **(हविष्मद्भिः)** बहुत साधनों के ग्रहण करने तथा **(जागृवद्भिः)** अविद्या, आलस्य और निद्रा [को] त्याग विद्या और पुरुषार्थ आदि को प्राप्त होने और **(मनुष्येभिः)** मनन करनेवाले पुरुषों ने **(अरण्योः)** ऊपर और नीचे के भाग में वर्त्तमान साधनों के मध्य में **(निहितः)** स्थित **(गर्भिणीषु)** गर्भवती स्त्रियों में **(गर्भइव)** जैसे गर्भ रहता, वैसे वर्त्तमान **(दिवेदिवे)** प्रतिदिन **(ईड्यः)** खोजने योग्य **(जातवेदाः)** उत्पन्न हुए सम्पूर्ण पदार्थों में वर्त्तमान **(अग्निः)** अग्नि **(सुधितः)** उत्तम प्रकार धारण किया, उन पुरुषों को भाग्यशाली जानना चाहिये॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्य सृष्टि के क्रम से वर्त्तमान अग्नि आदि पदार्थों की प्रतिदिन परीक्षा करें-करावें तो वे क्यों दरिद्र होवें?॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उत्तानायामव भरा चिकित्वान्सद्यः प्रवीता वृषणं जजान।
अरुषस्तूपो रुशदस्य पाज इळायास्पुत्रो वयुनेऽजनिष्ट॥ ३॥

उत्तानायाम्। अव। भर। चिकित्वान्। सद्यः। प्रऽवीता। वृषणम्। जजान। अरुषऽस्तूपः। रुशत्। अस्य। पाजः। इळायाः। पुत्रः। वयुने। अजनिष्ट॥ ३॥

पदार्थः-(**उत्तानायाम्**) सरलतया शयानो मनुष्य इव वर्त्तमानायां भूमौ (**अव**) (**भर**) धर। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**चिकित्वान्**) प्राज्ञः (**सद्यः**) (**प्रवीता**) प्रकर्षेण व्याप्ता विद्युत् (**वृषणम्**) वर्षकं सूर्य्यम् (**जजान**) जनयति (**अरुषस्तूपः**) येऽरुष्षु मर्मसु सीदन्ति तेषु प्रशंसितः (**रुशत्**) हिंसन् (**अस्य**) जगतः (**पाजः**) बलम् (**इडायाः**) वाण्याः। **इडेति वाङ्नामसु पठितम्।** (निघं० १.११) (**पुत्रः**) पुत्रवद्वर्त्तमानः (**वयुने**) विज्ञाने (**अजनिष्ट**) जायते॥ ३॥

अन्वयः-हे विद्वन्! चिकित्वांस्त्वमुत्तानायां या प्रवीता वृषणं जजान तामवभर। योऽरुषस्तूपोऽस्य पाजो रुशदिडायास्पुत्रो वयुनेऽजनिष्ट तं सद्योऽवभर॥ ३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्याः पुत्रं जननीव वह्निविद्यां धरन्ति ते स्वबलं वर्धयित्वा विज्ञानं जनयन्ति। यदा अधोग्निरुपरिजलं संस्थाप्य वायुना प्रदीपयन्ति तदा वह्निजलाभ्यां बहूनि कार्य्याणि निर्वर्त्तितुं शक्नुवन्ति॥ ३॥

पदार्थः-हे विद्वान् पुरुष (**चिकित्वान्**) बुद्धिमान्! आप (**उत्तानायाम्**) सीधेपन से सोते हुए मनुष्य के तुल्य वर्त्तमान भूमि में जो (**प्रवीता**) बहुत व्याप्त बिजुली (**वृषणम्**) वृष्टिकर्त्ता सूर्य को (**जजान**) उत्पन्न करती है, उसको (**अव**) (**भर**) धारण करो और जो (**अरुषस्तूपः**) मर्मस्थलों में क्लेशदायकों में प्रशंसायुक्त (**अस्य**) इस संसार के (**पाजः**) बल के (**रुशत्**) नाशकारक (**इडायाः**) वाणी के (**पुत्रः**) पुत्र के सदृश स्थित (**वयुने**) विज्ञान में (**अजनिष्ट**) उत्पन्न होता है, उसको (**सद्यः**) शीघ्र धारण करो॥ ३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य पुत्र को माता के तुल्य अग्निविद्या को धारण करते हैं, वे अपना बल बढ़ाकर विज्ञान को उत्पन्न करते हैं और जब नीचे के भाग में अग्नि ऊपर जल स्थित करके वायु से प्रज्वलित करते हैं, तब अग्नि और जल द्वारा बहुत से कार्य सिद्ध कर सकते हैं॥ ३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इळायास्त्वा पदे वयं नाभा पृथिव्या अधि।

जातवेदो नि धीमह्यग्ने हव्याय वोळ्हवे॥ ४॥

इळायाः। त्वा। पदे। वयम्। नाभा। पृथिव्याः। अधि। जातऽवेदः। नि। धीमहि। अग्ने। हव्याय। वोळ्हवे॥ ४॥

पदार्थः-(**इळायाः**) पृथिव्याः (**त्वा**) तम् (**पदे**) प्राप्ते (**वयम्**) (**नाभा**) मध्ये (**पृथिव्याः**) अन्तरिक्षस्य (**अधि**) उपरि (**जातवेदः**) जातवित्तम् (**नि**) (**धीमहि**) नितरां धरेम (**अग्ने**) अग्निम्। अत्र सर्वत्र पुरुषव्यत्ययः। (**हव्याय**) प्रशंसनीयाय (**वोढवे**) वाहनाय॥४॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथा वयमिळाया अधि पदे पृथिव्या नाभा हव्याय वोढवे त्वां तं जातवेदाऽग्ने जातवेदसमग्निं निधीमहि तथैव यूयमपि निधत्त॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। य इमं वह्निं पृथिव्या उपर्य्यन्तरिक्षस्य मध्ये सुपरीक्ष्य यानादिचालनायाऽग्निं निदधति ते निधिमन्तो भवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! जैसे (**वयम्**) हम लोग (**इळायाः**) पृथिवी के (**अधि**) ऊपर (**पदे**) प्राप्त होने पर (**पृथिव्याः**) अन्तरिक्ष के (**नाभा**) मध्य में (**हव्याय**) प्रशंसा करने योग्य (**वोढवे**) वाहन के लिये (**त्वा**) उस (**जातवेदः**) धनों के उत्पन्नकर्त्ता (**अग्ने**) अग्नि को (**नि**) (**धीमहि**) उत्तम प्रकार धारण करें, वैसे ही आप लोग भी धारण करो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो लोग इस अग्नि को पृथिवी के ऊपर और अन्तरिक्ष के मध्य में उत्तम प्रकार परीक्षा ले के वाहन आदि चलाने के लिये अग्नि को धारण करते हैं, वे धनयुक्त होते हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

मन्थ॑ता नरः क॒विमद्व॑यन्तं॒ प्रचे॑तसम॒मृतं॑ सु॒प्रती॑कम्।

य॒ज्ञस्य॑ के॒तुं प्र॑थ॒मं पु॒रस्ता॑द॒ग्निं नरो॑ जनयता सु॒शेव॑म्॥५॥३२॥

मन्थ॑त। न॒रः॒। क॒विम्। अद्व॑यन्तम्। प्रऽचे॑तसम्। अ॒मृत॑म्। सु॒ऽप्रती॑कम्। य॒ज्ञस्य॑। के॒तुम्। प्र॒थ॒मम्। पु॒रस्ता॑त्। अ॒ग्निम्। न॒रः॒। ज॒न॒य॒त॒। सु॒ऽशेव॑म्॥५॥

पदार्थः-(**मन्थत**) मन्थनं कुरुत। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**नरः**) नायकाः (**कविम्**) क्रान्तदर्शनम् (**अद्वयन्तम्**) अद्वयमिवाचरन्तम् (**प्रचेतसम्**) प्रकर्षेण संज्ञापकम् (**अमृतम्**) स्वरूपेण नाशरहितम् (**सुप्रतीकम्**) सुष्ठु प्रतीतिकरम् (**यज्ञस्य**) (**केतुम्**) ध्वज इव विज्ञापकम् (**प्रथमम्**) प्रख्यातम् (**पुरस्तात्**) प्रथमतः (**अग्निम्**) पावकम् (**नरः**) नेतारः (**जनयत**)। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**सुशेवम्**) शोभनं निधिमिव वर्त्तमानम्॥५॥

अन्वयः-हे नरो! यूयं कविमद्वयन्तं प्रचेतसममृतं सुप्रतीकमग्निं मन्थत। हे नरो! यज्ञस्य केतुं प्रथमं सुशेवमग्निं पुरस्ताज्जनयत॥५॥

भावार्थः-ये मनुष्या मथित्वाग्निं जनयित्वा कार्य्याणि साद्धुमिच्छन्ति ते सकलैश्वर्यसंपन्ना जायन्ते॥५॥

पदार्थः-हे **(नरः)** नायको! आप लोग **(कविम्)** तेजस्वी स्वरूप युक्त **(अद्वयन्तम्)** अपने केवल रूप से रहित के सदृश आचरण करते हुए **(प्रचेतसम्)** अतिशय प्रकटकर्त्ता **(अमृतम्)** अपने स्वरूप से नाशरहित **(सुप्रतीकम्)** उत्तम प्रकार विश्वासकर्त्ता **(अग्निम्)** अग्नि का **(मन्थत)** मन्थन करो। हे **(नरः)** प्रधान पुरुषो! **(यज्ञस्य)** अहिंसारूप यज्ञ के **(केतुम्)** पताका के सदृश जाननेवाले **(प्रथमम्)** प्रसिद्ध **(सुशेवम्)** सुन्दर द्रव्यपात्र के सदृश अग्नि को **(पुरस्तात्)** प्रथम से उत्पन्न करें॥५॥

भावार्थः-जो मनुष्य मथ कर अग्नि को उत्पन्न करके कार्य्यों को सिद्ध करने की इच्छा करते हैं, वे सम्पूर्ण ऐश्वर्य्ययुक्त होते हैं॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यदी मन्थन्ति बाहुभिर्वि रोचतेऽश्वो न वाज्यरुषो वनेष्वा।

चित्रो न यामन्नश्विनोरनिवृतः परि वृणक्त्यश्मनस्तृणा दहन्॥६॥

यदि। मन्थन्ति। बाहुऽभिः। वि। रोचते। अश्वः। न। वाजी। अरुषः। वनेषु। आ। चित्रः। न। यामन्। अश्विनोः। अनिऽवृतः। परि। वृणक्ति। अश्मनः। तृणा। दहन्॥६॥

पदार्थः-**(यदि)**। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(मन्थन्ति)** विलोडयन्ति **(बाहुभिः)** **(वि)** **(रोचते)** विशेषेण प्रकाशते **(अश्वः)** उत्तमस्तुरङ्गः **(न)** इव **(वाजी)** वेगवान् **(अरुषः)** मर्मसु स्थितः **(वनेषु)** किरणेषु **(आ)** **(चित्रः)** अद्भुतः **(न)** इव **(यामन्)** यामनि **(अश्विनोः)** सूर्य्याचन्द्रमसोः **(अनिवृतः)** निरन्तरः **(परि)** सर्वतः **(वृणक्ति)** छिनत्ति **(अश्मनः)** पाषाणस्य मेघस्य वा **(तृणा)** तृणानि घासविशेषान् **(दहन्)** भस्मीकुर्वन्॥६॥

अन्वयः-ये मनुष्या बाहुभिर्यद्यग्निं मन्थन्ति तर्हि स वनेष्वरुषो वाज्यश्वो न व्यारोचतेऽश्विनोरनिवृतस्सन् यामँश्चित्रो न तृणा दहन्नश्मनः परि वृणक्ति तमित्थं सर्व उद्घाटयन्तु॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। घर्षणेन जातबलोऽग्निः काष्ठादीनि दहन्नश्ववद्वेगवान् भवन्नद्भुतानि कार्य्याणि साध्नोतीति वेद्यम्॥६॥

पदार्थः-जो मनुष्य **(बाहुभिः)** बाहुओं से **(यदि)** यदि अग्नि को **(मन्थन्ति)** मन्थते हैं तो वह **(वनेषु)** किरणों में **(अरुषः)** मर्मस्थलों में वर्त्तमान **(वाजी)** वेगयुक्त **(अश्वः)** उत्तम घोड़े के **(न)** सदृश **(वि)** **(आ)** **(रोचते)** विशेष भाव से प्रकाशित होता है **(अश्विनोः)** सूर्य्य-चन्द्रमा के मध्य में **(अनिवृतः)** निरन्तर प्राप्त [होता हुआ] **(यामन्)** रात्रि में **(चित्रः)** अद्भुत के **(न)** तुल्य **(तृणा)** घास विशेषों को

(दहन्) भस्म करता हुआ **(अश्मनः)** पत्थर वा मेघ का **(परि)** सब प्रकार **(वृणक्ति)** छेदन करता है, उसको इस प्रकार सब लोग प्रकट करें॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। घिसने से बलयुक्त हुआ अग्नि काष्ठ आदि को जलाता और घोड़े के तुल्य वेगवान् होता हुआ अद्भुत कार्य्यों को सिद्ध करता है, यह जानना चाहिये॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

जातो अग्नी रोचते चेकितानो वाजी विप्रः कविशस्तः सुदानुः।

यं देवास ईड्यं विश्वविदं हव्यवाहमदधुरध्वरेषु॥७॥

जातः। अग्निः। रोचते। चेकितानः। वाजी। विप्रः। कविऽशस्तः। सुऽदानुः। यम्। देवासः। ईड्यम्। विश्वऽविदम्। हव्यऽवाहम्। अदधुः। अध्वरेषु॥७॥

पदार्थः-**(जातः)** प्रकटः सन् **(अग्निः)** पावकः **(रोचते)** प्रदीप्यते **(चेकितानः)** प्रज्ञापकः **(वाजी)** वेगवान् **(विप्रः)** मेधावी **(कविशस्तः)** कविभिः प्रशंसितः **(सुदानुः)** सुष्ठुदाता **(यम्)** **(देवासः)** विद्वांसः **(ईड्यम्)** स्तोतुं योग्यम् **(विश्वविदम्)** यः समग्रं विन्दति तम् **(हव्यवाहम्)** हव्यानां वोढारम् **(अदधुः)** दधीरन् **(अध्वरेषु)** सङ्गतिमयेषु व्यवहारेषु॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! देवासोऽध्वरेषु यमीड्यं विश्वविदं हव्यवाहमग्निमदधुः स चेकितानः सुदानुः कविशस्तो विप्र इव जातो वाज्यग्नी रोचते॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यदि विद्युद्विद्यां साध्नुयुस्तर्हीयमाप्तविद्वद्वत्सत्यानि योग्यानि कार्य्याणि साध्नुयात्॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(देवासः)** विद्वान् लोग **(अध्वरेषु)** मेल करने रूप व्यवहारों में **(यम्)** जिस **(ईड्यम्)** स्तुति करने योग्य **(विश्वविदम्)** सम्पूर्ण वस्तुओं के ज्ञाता **(हव्यवाहम्)** हवन करने योग्य पदार्थों के धारणकर्त्ता अग्नि को **(अदधुः)** धारण करें वह **(चेकितानः)** उत्तम कार्य्यों को जताने **(सुदानुः)** उत्तम प्रकार देनेवाला और **(कविशस्तः)** उत्तम पुरुषों से प्रशंसित हुए **(विप्रः)** बुद्धिमान् के सदृश **(जातः)** प्रकटता को प्राप्त **(वाजी)** वेगयुक्त **(अग्निः)** अग्नि **(रोचते)** प्रकाशित होता है॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो बिजुली सम्बन्धी विद्या को सिद्ध करें तो यह विद्या यथार्थवक्ता विद्वान् पुरुष के तुल्य सत्य और योग्य कार्य्यों को सिद्ध करे॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सीदं होतः स्व उं लोके चिंकित्वान्त्सादयां यज्ञं सुंकृतस्य योनौं।
देवावीर्देवान् हविषां यजास्यग्नें बृहद्यजंमाने वयों धाः॥८॥

सीदं। होतरितिं। स्वे। ऊम् इतिं। लोके। चिकित्वान्। सादयं। यज्ञम्। सुऽकृतस्यं। योनौं। देवऽअवीः। देवान्। हविषां। यजासि। अग्नें। बृहत्। यजंमाने। वयंः। धाः॥८॥

पदार्थः-(**सीद**) आस्व (**होतः**) सुखप्रदातः (**स्वे**) स्वकीये (उ) वितर्के (**लोके**) दर्शने (**चिकित्वान्**) ज्ञानवान् (**सादय**) स्थापय। **संहितायामि**ति दीर्घः। (**यज्ञम्**) धर्म्यव्यवहारम् (**सुकृतस्य**) सुष्ठु निष्पादितस्य (**योनौ**) कारणे गृहे वा (**देवावीः**) यो देवानवति सः (**देवान्**) दिव्यान् गुणान् विदुषो वा (**हविषा**) दानेन (**यजासि**) यजेः (**अग्ने**) पावकवद्वर्त्तमान (**बृहत्**) महत् (**यजमाने**) सङ्गन्तधर्म्यव्यवहारकर्त्तरि (**वयः**) जीवनं धनादिकं वा (**धाः**) धेहि॥८॥

अन्वयः-हे होतरग्नेऽग्निरिव त्वं स्वे लोके सीद चिकित्वान् सन् सुकृतस्य योनौ यज्ञं सादय देवावीः सन् हविषा देवान् यजास्यु यजमाने बृहद्वयो धाः॥८॥

भावार्थः-यथाऽग्निहोत्रादिशिल्पादिसङ्गन्तव्ये व्यवहारे संप्रयुक्तोऽग्निर्दिव्यान् गुणान् प्रकटयति तथैव विदुषा धर्म्यैः कर्मभिः संप्रयुज्य दिव्यानि सुखानि जगति प्रसारणीयानि॥८॥

पदार्थः-हे (**होतः**) सुख देनेवाले (**अग्ने**) अग्नि के सदृश तेजस्वी पुरुष! आप (**स्वे**) अपने (**लोके**) दर्शन में (**सीद**) वर्त्तमान हो (**चिकित्वान्**) ज्ञानयुक्त होकर (**सुकृतस्य**) पुण्य कर्म के (**योनौ**) कारण वा स्थान में (**यज्ञम्**) धर्मसम्बन्धी व्यवहार को (**सादय**) स्थित करो (**देवावीः**) विद्वानों की रक्षाकर्त्ता (**हविषा**) दान से (**देवान्**) उत्तम गुण वा विद्वान् पुरुषों को (**यजासि**) यज्ञ करें वा स्वीकार करें (उ) यह तर्क है कि (**यजमाने**) योग्य धर्मसम्बन्धी व्यवहार के कर्त्ता पुरुष में (**बृहत्**) बड़े (**वयः**) जीवन वा धर्म आदि को (**धाः**) धारण करें॥८॥

भावार्थः-जैसे अग्निहोत्र आदि वा शिल्प आदि सङ्गति के योग्य व्यवहार में संयुक्त किया गया अग्नि उत्तम गुणों को प्रकट करता है, वैसे ही विद्वान् पुरुष को चाहिये कि धर्मसम्बन्धी कर्मों से युक्त करके उत्तम सुखों को संसार में फैलावे॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

कृणोतं धूमं वृषंणं सखायोऽस्त्रेधन्त इतन वाजमच्छं।
अयमग्निः पृतनाषाट् सुवीरो येन देवासो असंहन्त दस्यून्॥९॥

कृणोतं। धूमम्। वृषंणम्। सखायः। अस्त्रेधन्तः। इतन। वाजंम्। अच्छं। अयम्। अग्निः। पृतनाषाट्। सुऽवीरंः। येनं। देवासंः। असंहन्त। दस्यून्॥९॥

पदार्थः-(**कृणोत**) कुरुत (**धूमम्**) वाष्पाख्यम् (**वृषणम्**) जलेन सुसिक्तम् (**सखायः**) सुहृदः सन्तः (**अस्त्रेधन्तः**) अक्षीणोत्साहाः (**इतन**) प्राप्नुत (**वाजम्**) अन्नवेगविज्ञानादिकम् (**अच्छ**) सम्यक् (**अयम्**) (**अग्निः**) विद्युदिव (**पृतनाषाट्**) यः पृतनाः सेनाः सहते (**सुवीरः**) शोभना वीरा यस्य (**येन**) सह (**देवासः**) विद्वांसः शूराः (**असहन्त**) सहन्ते (**दस्यून्**) अतिदुष्टकर्मकारिणः॥९॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यूयमस्त्रेधन्तः सखायः सन्तो वृषणं धूमं कृणोत वाजमच्छेतन योऽयमग्निरिव पृतनाषाट् सुवीरोऽस्ति येन सह देवासो दस्यूनसहन्त तमितन॥९॥

भावार्थः-हे विद्वांसः! काष्ठाग्निजलसंयोगजेन धूमेनाऽनेकानि कार्य्याणि परस्परं सुहृदो भूत्वा साध्नुत यथा धार्मिका विद्वांसः शूरा दस्यून् हत्वा राजानो भवन्ति तथैवायमग्निः संप्रयुक्तः सन् दारिद्र्यादीन् हत्वाऽसंख्यं धनं निष्पादयतीति॥९॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! आप लोग (**अस्त्रेधन्तः**) उत्साह से पूरित (**सखायः**) मित्र हुए (**वृषणम्**) जल से अच्छे प्रकार सींचे गये (**धूमम्**) भाफ को (**कृणोत**) करो (**वाजम्**) अन्न, वेग और विज्ञान आदि को (**अच्छ**) उत्तम प्रकार (**इतन**) प्राप्त होओ तो (**अयम्**) यह (**अग्निः**) बिजुली के सदृश तेजस्वी (**पृतनाषाट्**) सेनाओं के सहित वर्त्तमान (**सुवीरः**) श्रेष्ठ वीरों से युक्त और (**येन**) जिस पुरुष के साथ (**देवासः**) विद्वान् वा शूर लोग (**दस्यून्**) अति दुष्ट कर्म करनेवाले जनों को (**असहन्त**) सहते हैं, उसको प्राप्त होइये॥९॥

भावार्थः-हे विद्वान् जनो! काष्ठ, अग्नि और जल के संयाग से उत्पन्न हुए धूम से अनेक कार्य्यों को परस्पर मित्रभाव के साथ सिद्ध करो जैसे धर्मपूर्वक वर्त्ताव रखनेवाले विद्यायुक्त शूरवीर पुरुष दुष्टकर्मकारियों को नाश करके राजा होते हैं, वैसे ही यह अग्नि उत्तम प्रकार यन्त्र आदि से युक्त किया गया दारिद्र्य आदि को नाश करके अनगिनत धन को उत्पन्न करता है॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अयं ते योनिर्ऋत्वियो यतो जातो अरोचथाः।

तं जानन्नग्न आ सीदाथा नो वर्धया गिरः॥१०॥३३॥

अयम्। ते। योनिः। ऋत्वियः। यतः। जातः। अरोचथाः। तम्। जानन्। अग्ने। आ। सीद। अथ। नः। वर्धय। गिरः॥१०॥

पदार्थः-(**अयम्**) अग्न्यादिपदार्थविद्याविज्ञानाधिष्ठानम् (**ते**) तव (**योनिः**) सुखगृहम् (**ऋत्वियः**) य ऋतूनर्हति सः (**यतः**) (**जातः**) प्रकटः सन् (**अरोचथाः**) रोचस्व (**तम्**) (**जानन्**) (**अग्ने**) पावक इव

(आ) **(सीद)** स्थिरो भव **(अथ)** आनन्तर्य्ये। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(नः)** अस्माकम् **(वर्धय)** उन्नय। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(गिरः)** विद्यासुशिक्षायुक्ता वाचः॥१०॥

अन्वयः-हे अग्ने विद्वन्! यस्तेऽयमृत्वियो योनिरस्ति यतो जातः सन्नरोचथास्तं जानन्नत्राऽऽसीद। अथ नो गिरो वर्धय॥१०॥

भावार्थः-मनुष्यैर्येन येन कर्मणा शरीरात्मैश्वर्य्याणां वृद्धिः स्यात्तत्तत्कर्म सदाचरणीयम्॥१०॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** अग्नि के सदृश तेजस्वी विद्वान् पुरुष! जो **(ते)** आपका **(अयम्)** यह अग्नि आदि पदार्थ विद्या के ज्ञान का आधार **(ऋत्वियः)** समयों के योग्य **(योनिः)** सुख का घर है **(यतः)** जहाँ से **(जातः)** प्रकट हुआ **(अरोचथाः)** प्रकाशित हो **(तम्)** उसको **(जानन्)** जानते हुए यहाँ **(आ)** **(सीद)** स्थिर होइये और **(अथ)** इसके अनन्तर **(नः)** हम लोगों की **(गिरः)** विद्या और उत्तम शिक्षायुक्त वाणियों की **(वर्धय)** उन्नति कीजिये॥१०॥

भावार्थः-मनुष्यों को उचित है कि जिस-जिस कर्म से शरीर, आत्मा और ऐश्वर्यों की वृद्धि हो, वह-वह कर्म सब काल में करें॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

तनूनपा॑दुच्यते॒ गर्भ॑ आसु॒रो नरा॒शंसो॑ भवति॒ यद्वि॒जाय॑ते।
मा॒तरिश्वा॒ यदमि॑मीत मा॒तरि॒ वात॑स्य॒ सर्गो॑ अभवत्सरी॑मणि॥११॥

तनू॒३॑ऽनपा॑त्। उ॒च्य॒ते॒। गर्भः॑। आ॒सु॒रः। न॒रा॒शंसः॑। भ॒व॒ति॒। यत्। वि॒ऽजाय॑ते। मा॒तरिश्वा॑। यत्। अमि॑मीत। मा॒तरि॑। वात॑स्य। सर्गः॑। अ॒भ॒व॒त्। सरी॑मणि॥११॥

पदार्थः-**(तनूनपात्)** यस्य तनूर्व्याप्तिर्न पतति **(उच्यते)** **(गर्भः)** अन्तःस्थः **(आसुरः)** असुरे प्रकाशरूपरहिते वायौ भवः **(नराशंसः)** यं नरा आशंसन्ति **(भवति)** **(यत्)** यः **(विजायते)** विशेषेणोत्पद्यते **(मातरिश्वा)** यो वायौ श्वसिति सः **(यत्)** यः **(अमिमीत)** निर्मीयते **(मातरि)** आकाशे **(वातस्य)** वायोः **(सर्गः)** उत्पत्तिः **(अभवत्)** भवेत् **(सरीमणि)** गमनाख्ये व्यवहारे॥११॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यद्यस्तनूनपादुच्यते आसुरो गर्भो नराशंसो भवति मातरिश्वा विजायते यद्यो वातस्य मातरि सर्गोऽमिमीत सरीमण्यभवत्सोऽग्निस्सर्वैर्वेदितव्यः॥११॥

भावार्थः-ये मनुष्या वाय्वग्नीभ्यां कार्य्याणि सृजन्ति ते सुखैः संसृष्टा भवन्ति॥११॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यत्)** जो **(तनूनपात्)** सर्वत्र व्यपाक **(उच्यते)** कहा जाता है **(आसुरः)** प्रकटरूप से रहित वायु से उत्पन्न **(गर्भः)** मध्य में वर्त्तमान **(नराशंसः)** मनुष्यों से प्रशंसित **(भवति)** होता है, **(मातरिश्वा)** वायु में श्वास लेनेवाला **(विजायते)** विशेषभाव से उत्पन्न होता है और **(यत्)** जो

(वातस्य) वायु सम्बन्धी **(मातरि)** आकाश में **(सर्ग:)** उत्पत्ति **(अमिमीत)** रची जाती है **(सरीमणि)** गमनरूप व्यवहार में **(अभवत्)** होवे, वह अग्नि सम्पूर्ण जनों से जानने योग्य है॥११॥

भावार्थ:-जो मनुष्य वायु और अग्नि से कार्य्यों को सिद्ध करते हैं, वे सुखों से संयुक्त होते हैं॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सुनिर्मथा निर्मथितः सुनिधा निहितः कविः।
अग्ने स्वध्वरा कृणु देवान् देवयते यज॥१२॥

सुनिःऽमथा। निःऽमथितः। सुऽनिधा। निऽहितः। कविः। अग्ने। सुऽअध्वरा। कृणु। देवान्। देवऽयते। यज॥१२॥

पदार्थ:-**(सुनिर्मथा)** शोभनेन मन्थनेन **(निर्मथितः)** नितरां विलोडितः **(सुनिधा)** शोभने निधाने। अत्र डेराकारादेशः। **(निहितः)** धृतः **(कविः)** क्रान्तदर्शनः **(अग्ने)** पावक इव विद्वन् **(स्वध्वरा)** शोभनान्यहिंसादीनि कर्माणि येषु व्यवहारेषु **(कृणु)** **(देवान्)** दिव्यगुणान् **(देवयते)** देवान् कामयमानाय **(यज)** देहि॥१२॥

अन्वय:-हे अग्ने! यथा सुनिर्मथा निर्मथितः सुनिधा निहितः कविरग्निर्बहूनि कार्य्याणि सङ्गमयति तथैव स्वध्वरा देवान् कृणु एतान् देवयते यज॥१२॥

भावार्थ:-यथा विद्यया निर्मितेषु कलायन्त्रेषु स्थापितोऽग्निर्निर्मन्थनेन घर्षणेन च वेगादिगुणान् जनयित्वा बहूनि कार्य्याणि साध्नोति तथैवोत्तमानि कर्माणि कृत्वा दिव्यान् भोगान् प्राप्नुवन्तु॥१२॥

पदार्थ:-हे **(अग्ने)** अग्नि के समान तेजस्वी विद्वान् पुरुष! जैसे **(सुनिर्मथा)** सुन्दर मथने की वस्तु से **(निर्मथितः)** अत्यन्त मथा **(सुनिधा)** उत्तम आधार वस्तु में **(निहितः)** धरा गया **(कविः)** और सर्वत्र दीख पड़ने वाला अग्नि बहुत से कार्य्यों को सिद्ध करता है, वैसे ही **(स्वध्वरा)** उत्तम अहिंसा आदि कर्मों से युक्त **(देवान्)** उत्तम गुणों को **(कृणु)** धारण करो और इन **(देवयते)** उत्तम गुणों की कामना करते हुए पुरुष के लिये उन गुणों को **(यज)** दीजिए॥१२॥

भावार्थ:-जैसे विद्या से रचे हुए कलायन्त्रों में रक्खा गया अग्नि अत्यन्त मथने और घिसने से वेग आदि गुणों को उत्पन्न कर बहुत से कार्य्यों को सिद्ध करता है, वैसे ही उत्तम कर्म्मों को करके श्रेष्ठ गुणों को प्राप्त होओ॥१२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अजीजनन्नमृतं मर्त्यासोऽस्रेमाणं तरणिं वीळुजम्भम्।

दश स्वसारो अग्रुवः समीचीः पुमांसं जातमभि सं रभन्ते॥ १३॥

अजीजनन्। अमृतम्। मर्त्यासः। अस्रेमाणम्। तरणिम्। वीळुऽजम्भम्। दश। स्वसारः। अग्रुवः। सम्ऽईचीः। पुमांसम्। जातम्। अभि। सम्। रभन्ते॥ १३॥

पदार्थः-(**अजीजनन्**) जनयन्ति (**अमृतम्**) नाशरहितम् (**मर्त्यासः**) मनुष्याः (**अस्रेमाणम्**) अक्षयम् (**तरणिम्**) अध्वनां तारकम् (**वीळुजम्भम्**) वीळु बलवज्जम्भो मुखमिव ज्वाला यस्य तम् (**दश**) (**स्वसारः**) भगिन्य इव वर्त्तमाना अङ्गुलयः। **स्वसार इत्यङ्गुलिनामसु पठितम्।** (निघं०२.५) (**अग्रुवः**) या अग्रे गच्छन्ति ताः (**समीचीः**) याः सम्यगञ्चन्ति ताः (**पुमांसम्**) पुरुषार्थयुक्तं नरम् (**जातम्**) प्रसिद्धम् (**अभि**) आभिमुख्ये (**सम्**) सम्यक् (**रभन्ते**) प्रवर्त्तयन्ति॥१३॥

अन्वयः-यथा अग्रुवः समीचीर्दश स्वसारो जातं पुमांसमभि सं रभन्ते तथा मर्त्यासो वीळुजम्भं तरणिमस्रेमाणममृतमग्निमजीजनन्॥१३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा कराऽङ्गुलयः परस्परं संहिता देहधारिणं मनुष्यं कर्मसु प्रवर्त्तयन्ति तथैव विद्वांसो वह्निं क्रियासु नियोजयन्ति॥१३॥

पदार्थः-जैसे (**अग्रुवः**) आगे चलनेवाली (**समीचीः**) उत्तम प्रकार मिली हुई (**दश**) दश संख्या परिमित (**स्वसारः**) बहिनों के समान वर्त्तमान अंगुलियाँ (**जातम्**) प्रसिद्ध (**पुमांसम्**) पुरुषार्थ से युक्त मनुष्य को (**अभि**) सम्मुख (**सम्**) उत्तम प्रकार (**रभन्ते**) प्रवृत्त करती हैं, वैसे (**मर्त्यासः**) मनुष्य (**वीळुजम्भम्**) मुख के सदृश ज्वाला से शोभित (**तरणिम्**) भागों से यत्न द्वारा इष्ट स्थान में पहुँचानेवाला (**अस्रेमाणम्**) नाशरहित (**अमृतम्**) नित्य अग्नि को (**अजीजनन्**) उत्पन्न करते हैं॥१३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे हाथों की अंगुलियाँ परस्पर मिली हुईं शरीरधारी मनुष्य को कार्य्यों में प्रवृत्त करती हैं, वैसे ही विद्वान् पुरुष अग्नि को क्रिया में लगाते अर्थात् उसके द्वारा कार्य्य सिद्ध करते हैं॥१३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

प्र सप्तहोता सनकादरोचत मातुरुपस्थे यदशोचदूधनि।

न नि मिषति सुरणो दिवेदिवे यदसुरस्य जठरादजायत॥ १४॥

प्र। सप्तऽहोता। सनकात्। अरोचत। मातुः। उपऽस्थे। यत्। अशोचत्। ऊधनि। न। नि। मिषति। सुऽरणः। दिवेऽदिवे। यत्। असुरस्य। जठरात्। अजायत॥ १४॥

पदार्थः- **(प्र)** **(सप्तहोता)** सप्त प्राणा होतार आदातारो यस्य **(सनकात्)** सनातनात्कारणात् **(अरोचत)** प्रकाशते **(मातुः)** वायोः **(उपस्थे)** समीपे **(यत्)** यः **(अशोचत्)** दीप्यते **(ऊधनि)** रात्रौ। अत्र वर्णव्यत्ययेन सस्य नः। **ऊध इति रात्रिनामसु पठितम्।** (निघं०१.७) **(न)** **(नि)** नितराम् **(मिषति)** सिञ्चति **(सुरणः)** शोभनो रणः संग्रामो यस्मात्सः **(दिवेदिवे)** प्रतिदिनम् **(यत्)** यस्मात् **(असुरस्य)** रूपरहितस्य वायोः **(जठरात्)** मध्यात् **(अजायत)** जायते॥१४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः सप्तहोताग्निः सनकाज्जातो मातुरुपस्थे प्रारोचत यद्य ऊधन्यशोचद् यः सुरणो दिवेदिवे न नि मिषति यद्योऽसुरस्य जठरादजायत तं यथावद्विजानीत॥१४॥

भावार्थः-योऽग्निः शोषको वायुनिमित्तः प्रकृत्याख्यात् कारणाज्जातोऽस्ति तं विज्ञाय बहून् व्यवहारान् सर्वे प्रकाशयन्तु॥१४॥

पदार्थः-हे मनुष्या! जो **(सप्तहोता)** सात प्राणों से ग्रहण करने योग्य अग्नि **(सनकात्)** अनादि परम्परा से सिद्ध कारण से उत्पन्न हुआ **(मातुः)** वायु के **(उपस्थे)** समीप में **(प्रारोचत)** प्रकाशित होता है **(यत्)** जो **(ऊधनि)** रात्रि में **(अशोचत्)** प्रकाशित होता है और जो **(सुरणः)** श्रेष्ठ युद्ध का साधन **(दिवेदिवे)** प्रतिदिन **(न)** नहीं **(नि)** अत्यन्त **(मिषति)** सींचता है **(यत्)** जो **(असुरस्य)** रूप से रहित वायु के **(जठरात्)** मध्य से **(अजायत)** उत्पन्न होता है, उसको अच्छे प्रकार जानो॥१४॥

भावार्थः-जो अग्नि अन्न आदि को शुष्क करनेवाला वायु रूप कारण से प्रसिद्ध प्रकृति नामक कारण से उत्पन्न हुआ है, उसको जान कर बहुत से व्यवहारों को सकल जन प्रसिद्ध करें॥१४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अमित्रायुधो मरुतामिव प्रयाः प्रथमजा ब्रह्मणो विश्वमिद्विदुः।
द्युम्नवद् ब्रह्म कुशिकास एरिर एकएको दमे अग्निं समीधिरे॥१५॥

अमित्रऽयुधः। मरुताम्ऽइव। प्रऽयाः। प्रथमऽजाः। ब्रह्मणः। विश्वम्। इत्। विदुः। द्युम्नऽवत्। ब्रह्म। कुशिकासः। आ। ईरिरे। एकःऽएकः। दमे। अग्निम्। सम्। ईधिरे॥१५॥

पदार्थः-**(अमित्रायुधः)** अमित्रेषु शत्रुषु प्रक्षिप्तान्यायुधानि यैस्ते **(मरुतामिव)** मनुष्याणामिव **(प्रयाः)** ये सद्यः प्रयान्ति ते **(प्रथमजाः)** प्रथमात्कारणाज्जातः **(ब्रह्मणः)** परमात्मनः **(विश्वम्)** सर्वं जगत् **(इत्)** एव **(विदुः)** **(द्युम्नवत्)** प्रशस्तकीर्तिमत् **(ब्रह्म)** बृहद्धनम् **(कुशिकासः)** उत्कर्षं प्राप्ताः **(आ)** **(ईरिरे)** प्राप्नुवन्ति **(एकएकः)** जनः **(दमे)** गृहे **(अग्निम्)** **(सम्)** **(ईधिरे)** प्रदीपयेयुः॥१५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये मरुतामिवाऽमित्रायुधः प्रयाः प्रथमजाः कुशिकास एकएको दमेऽग्निं समीधिरे ये च ब्रह्मणो विश्वं विदुस्त इदेव द्युम्नवद् ब्रह्मैरिरे॥१५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा वायवः सर्वत्र विजयिनोऽग्न्यादिप्रदीपका विश्वव्यापिनः सर्वान् जीवयित्वाऽऽनन्दयन्ति तथैवाग्न्यादिपदार्थविद्यायुक्ताः सर्वानानन्दयन्ति॥१५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(मरुतामिव)** मनुष्यों के सदृश **(अमित्रायुधः)** शत्रुओं के ऊपर शस्त्र चलाने **(प्रयाः)** शीघ्र चलनेवाले **(प्रथमजाः)** प्रथम कारण से उत्पन्न **(कुशिकासः)** उच्च पदवी को प्राप्त **(एकएकः)** प्रत्येक जन **(दमे)** गृह में **(अग्निम्)** अग्नि को **(सम्)** **(ईधिरे)** प्रज्वलित करें और जो **(ब्रह्मणः)** परमात्मा के **(विश्वम्)** सम्पूर्ण जगत् को **(विदुः)** जानते हैं, वे **(इत्)** ही **(द्युम्नवत्)** उत्तम यशयुक्त **(ब्रह्म)** बहुत धन को **(आ, ईरिरे)** प्राप्त होते हैं॥१५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे पवन सम्पूर्ण स्थानों में प्रबलता से प्राप्त होने, अग्नि आदि पदार्थों को प्रज्वलित करने और संसार में व्यापक होनेवाले सम्पूर्ण जीवों के प्राणों की रक्षा करके आनन्द देते हैं, वैसे ही अग्नि आदि पदार्थों की विद्यायुक्त पुरुष सम्पूर्ण जनों के लिये आनन्द देते हैं॥१५॥

अथ केषां निश्चलमैश्वर्यं जायत इत्याह॥

अब किन पुरुषों को निश्चल ऐश्वर्य प्राप्त होता, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यदुद्य त्वां प्रयति यज्ञे अस्मिन् होतश्चिकित्वोऽवृणीमहीह।

ध्रुवमया ध्रुवमुताशमिष्ठाः प्रजानन् विद्वाँ उप याहि सोमम्॥१६॥३४॥२॥१॥

यत्। अद्य। त्वा। प्रऽयति। यज्ञे। अस्मिन्। होतरिति। चिकित्वः। अवृणीमहि। इह। ध्रुवम्। अयाः। ध्रुवम्। उत। अशमिष्ठाः। प्रऽजानन्। विद्वान्। उप। याहि। सोमम्॥१६॥

पदार्थः-**(यत्)** ये **(अद्य)** इदानीम् **(त्वा)** त्वाम् **(प्रयति)** प्रयत्नसाध्ये **(यज्ञे)** सङ्गन्तव्ये व्यवहारे **(अस्मिन्)** **(होतः)** साधनोपसाधनानामादातः **(चिकित्वः)** विज्ञानवन् **(अवृणीमहि)** वृणुयाम **(इह)** अस्मिन् संसारे **(ध्रुवम्)** निश्चलम् **(अयाः)** यजेः। अत्र लङ् मध्यमैकवचने शपो लुक् श्वेतवाहादित्वात्पदान्ते डस्। **(ध्रुवम्)** **(उत)** अपि **(अशमिष्ठाः)** शमयेः **(प्रजानन्)** विद्वान् **(उप)** **(याहि)** प्राप्नुहि **(सोमम्)** ऐश्वर्य्यम्॥१६॥

अन्वयः-हे चिकित्वो होतो यद्ये वयमद्यास्मिन् प्रयति यज्ञे यं त्वाऽवृणीमहि स त्वमिह ध्रुवमशमिष्ठा उताऽपि प्रजानन् ध्रुवमयाः विद्वांत्संस्त्वं सोममुपयाहि॥१६॥

भावार्थः-येऽस्मिन् संसारे प्रयत्नेन सृष्टिपदार्थविद्याक्रमं जानन्ति ते सततमुपयोगं ग्रहीतुं शक्नुवन्ति तेषां ध्रुवमैश्वर्यं भवतीति॥१६॥

अत्राग्निवायुविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति तृतीयाष्टके प्रथमोध्यायश्चतुस्त्रिंशत्तमो वर्गश्च तृतीयमण्डले द्वितीयोऽनुवाक एकोनत्रिंशत्तमं सूक्तं च समाप्तम्॥

पदार्थः-हे **(चिकित्वः)** विज्ञानयुक्त **(होतः)** साधन जो मुख्य कारण उपसाधन अर्थात् सहायि कारणों के ग्रहणकर्त्ता! **(यत्)** जो हम लोग **(अद्य)** इस समय **(अस्मिन्)** इस **(प्रयति)** प्रयत्न से सिद्ध और **(यज्ञे)** ऐकमत्य होने योग्य व्यवहार में जिन **(त्वा)** आपको **(अवृणीमहि)** स्वीकार करें वह आप **(इह)** इस संसार में **(ध्रुवम्)** दृढ़ स्थिर **(अशमिष्ठाः)** शान्ति करो **(उत)** और भी **(प्रजानन्)** विज्ञानयुक्त हुए **(ध्रुवम्)** निश्चल धर्म को **(अयाः)** सङ्गत कीजिये **(विद्वान्)** विद्वान् पुरुष **[होकर]** आप **(सोमम्)** ऐश्वर्य्य को **(उप)** **(याहि)** प्राप्त होइये॥१६॥

भावार्थः-जो लोग इस संसार में प्रयत्न से सृष्टि के पदार्थों के विद्या-क्रम को जानते हैं, वे निरन्तर उन पदार्थों से उपकार ग्रहण कर सकते हैं, उनके निश्चय से ऐश्वर्य होता है॥१६॥

इस सूक्त में अग्नि, वायु और विद्वान् के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त में कहे अर्थ की पूर्व सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह उनतीसवां सूक्त द्वितीय अनुवाक और चौंतीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

इति श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्याणां श्रीपरमविदुषां विरजानन्दसरस्वतीस्वामिनां शिष्येण परमहंसपरिव्राजकाचार्येण श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिना निर्मिते संस्कृतार्यभाषाभ्यां विभूषिते सुप्रमाणयुक्त ऋग्वेदभाष्ये तृतीयाष्टकस्य प्रथमाध्यायः समाप्तः॥

॥ओ३म्॥

अथ तृतीयाष्टके द्वितीयाऽध्यायारम्भः॥

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद्भद्रं तन्न आ सुव॥ ऋ० ५.८२.५॥

अथ द्वाविंशर्चस्य त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, २, ९-११, १४, १७, २० निचृत्त्रिष्टुप्। ५, ६, ८, १३, १९, २१, २२ त्रिष्टुप्। १२, १५ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ३, ४, ७, १६, १८ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ विदुषः कृत्यमुपदिश्यते॥

अब तृतीयाष्टक के द्वितीय अध्याय और तीसरे मण्डल में बाईस ऋचावाले तीसवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके पहिले मन्त्र से विद्वान् के कर्त्तव्य का उपदेश करते हैं॥

इच्छन्ति त्वा सोम्यासः सखायः सुन्वन्ति सोमं दधति प्रयांसि।
तितिक्षन्ते अभिशस्तिं जनानामिन्द्र त्वदा कश्चन हि प्रकेतः॥ १॥

इच्छन्ति। त्वा। सोम्यासः। सखायः। सुन्वन्ति। सोमम्। दधति। प्रयांसि। तितिक्षन्ते। अभिऽशस्तिम्। जनानाम्। इन्द्र। त्वत्। आ। कः। चन। हि। प्रऽकेतः॥ १॥

पदार्थः-(**इच्छन्ति**) (**त्वा**) त्वाम् (**सोम्यासः**) (**सखायः**) (**सुन्वन्ति**) निष्पादयन्ति (**सोमम्**) परमैश्वर्य्यम् (**दधति**) (**प्रयांसि**) कमनीयानि वस्तूनि (**तितिक्षन्ते**) सहन्ते (**अभिशस्तिम्**) अभितो हिंसाम् (**जनानाम्**) मनुष्याणाम् (**इन्द्र**) परमैश्वर्यप्रद (**त्वत्**) तव सकाशात् (**आ**) (**कः**) (**चन**) कश्चिदपि (**हि**) यतः (**प्रकेतः**) प्रकृष्टा केतः प्रज्ञा यस्य सः॥१॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ये सोम्यासः सखायस्त्वेच्छन्ति ते सोमं सुन्वति प्रयांसि दधति जनानामभिशस्तिमा तितिक्षन्ते हि यतस्त्वदन्यः कश्चन प्रकेतो नास्ति तस्मादेतान्सर्वदा रक्ष॥१॥

भावार्थः-ये सुहृदो भूत्वा प्रयत्नेनैश्वर्य्यमिच्छन्ति ते सुखदुःखनिन्दादिकं सोढ्वा विद्वत्सङ्गं कृत्वाऽऽनन्दं वर्धयेयुः॥१॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) परम ऐश्वर्य के दाता! जो (**सोम्यासः**) परस्पर स्नेह रस के वर्द्धक (**सखायः**) मित्रभाव से वर्त्तमान (**त्वा**) आपकी (**इच्छन्ति**) इच्छा करते हैं, वे (**सोमम्**) परम ऐश्वर्य को (**सुन्वन्ति**) सिद्ध करते, (**प्रयांसि**) कामना करने योग्य वस्तुओं को (**दधति**) धारण करते और (**जनानाम्**) मनुष्य लोगों को (**अभिशस्तिम्**) चारों ओर से हिंसा को (**आ**) (**तितिक्षन्ते**) सहते हैं (**हि**) जिससे (**त्वत्**) आपसे अन्य (**कः**) (**चन**) कोई भी पुरुष (**प्रकेतः**) उत्तम बुद्धिवाला नहीं है, इससे इन मनुष्यों की सर्वदा रक्षा

कीजिये॥१॥

भावार्थः-जो लोग परस्पर मित्रभाव से वर्त्ताव करते हुए प्रयत्न के साथ ऐश्वर्य की इच्छा करते हैं, वे सुख, दु:ख, निन्दा आदि को सह और विद्वानों का सङ्ग करके आनन्द को बढ़ावें॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

न ते दूरे परमा चिद्रजांस्या तु प्र याहि हरिवो हरिभ्याम्।

स्थिराय वृष्णे सवना कृतेमा युक्ता ग्रावाणः समिधाने अग्नौ॥२॥

न। ते। दूरे। परमा। चित्। रजांसि। आ। तु। प्र। याहि। हरिऽवः। हरिऽभ्याम्। स्थिराय। वृष्णे। सवना। कृता। इमा। युक्ताः। ग्रावाणः। सम्ऽइधाने। अग्नौ॥२॥

पदार्थः-**(न)** निषेधे **(ते)** तव **(दूरे)** **(परमा)** परमाण्युत्कृष्टानि **(चित्)** अपि **(रजांसि)** लोकस्थानानि **(आ)** **(तु)** **(प्र)** **(याहि)** **(हरिवः)** प्रशस्ताऽश्वयानयुक्त **(हरिभ्याम्)** अश्वाभ्याम् **(स्थिराय)** **(वृष्णे)** बलाय **(सवना)** ऐश्वर्यसाधकानि कर्माणि **(कृता)** कृतानि **(इमा)** इमानि **(युक्ताः)** उद्युक्ताः **(ग्रावाणः)** मेघाः। **ग्रावाण इति मेघनामसु पठितम्।** (निघं०१.१०) **(समिधाने)** प्रदीप्यमाने **(अग्नौ)** वह्नौ॥२॥

अन्वयः-हे हरिवस्त्वं हरिभ्यां प्रयाह्येवं कृते परमा रजांसि ते दूरे न भविष्यन्ति यदि समिधानेऽग्नौ स्थिराय वृष्णे कृतेमा सवना कुर्यास्तर्हि तु युक्ता ग्रावाणश्चिद् बहवो भवेयुः॥२॥

भावार्थः-यदि मनुष्याः शीघ्रगाम्यश्वैर्देशान्तरं जिगमिषेयुस्तर्हि सर्वं सनीडमेवास्ति। यदि नियमेन वह्निं प्रज्वाल्य तत्र हविर्जुहुयुस्तर्हि वर्षापि सुगमैवास्तीति ज्ञेयम्॥२॥

पदार्थः-हे **(हरिवः)** उत्तम घोड़ों के वाहनों से युक्त! आप **(हरिभ्याम्)** घोड़ों से **(प्र)** **(आ, याहि)** आइये, ऐसा करने से **(परमा)** उत्तम **(रजांसि)** लोकों के स्थान **(ते)** आपके **(दूरे)** दूर **(न)** नहीं होंगे, जो **(समिधाने)** हवन करने योग्य प्रदीप्त किये जाते हुए **(अग्नौ)** अग्नि में **(स्थिराय)** दृढ़ **(वृष्णे)** बलवान् के लिये **(कृता)** किये गये **(इमा)** इन **(सवना)** ऐश्वर्य-वृद्धि के साधक कर्मों को करो **(तु)** तो **(युक्ताः)** उद्यत **(ग्रावाणः)** मेघ **(चित्)** भी बहुत से होवें॥२॥

भावार्थः-मनुष्य यदि शीघ्र चलनेवाले घोड़ों से देशान्तर जाने की इच्छा करें तो सब समीप ही है। यदि नियम से अग्नि को प्रज्वलित कर उसमें होम करें तो वर्षा होना सुगम ही जानो॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इन्द्रः सुशिप्रो मघवा तरुत्रो महाव्रातस्तुविकूर्मिर्ऋघावान्।
यदुग्रो धा बाधितो मर्त्येषु क्व१ त्या ते वृषभ वीर्याणि॥३॥

इन्द्रः। सुऽशिप्रः। मघऽवा। तरुत्रः। महाऽव्रातः। तुविऽकूर्मिः। ऋघावान्। यत्। उग्रः। धाः। बाधितः। मर्त्येषु। क्व। त्या। ते। वृषभ। वीर्याणि॥३॥

पदार्थः-(**इन्द्रः**) परमैश्वर्य्ययुक्तः (**सुशिप्रः**) शोभनहनुनासिकः (**मघवा**) परमपूजितधनयुक्तः (**तरुत्रः**) दुःखेभ्यस्तारकः (**महाव्रातः**) महान्तो व्राताः व्रतेषु कुशला जनाः सखायो यस्य सः (**तुविकूर्मिः**) तुविर्बहुविधः कूर्मिः कर्मयोगो यस्य सः (**ऋघावान्**) य ऋन् शत्रून् घ्नन्ति ते वा बहवः शूरा विद्यन्ते यस्य। अत्र हनधातोर्वर्णव्यत्ययेन हस्य घो नलोपश्च। (**यत्**) यानि (**उग्रः**) तेजस्विस्वभावः (**धाः**) धेहि (**बाधितः**) विलोडितः (**मर्त्येषु**) (**क्व**) कस्मिन् (**त्या**) तानि (**ते**) तव (**वृषभ**) बलिष्ठ (**वीर्याणि**) वीरेषु साधूनि बलानि॥३॥

अन्वयः-हे वृषभ! मर्त्येषु बाधितः उग्रः सन् यद्यानि दुःखनिवारणानि धास्ते तव त्या वीर्याणि क्व सन्ति। एवं सुशिप्रो मघवा तरुत्रो महाव्रातस्तुविकूर्मिर्ऋघावानिन्द्रस्त्वं भवेः॥३॥

भावार्थः-यदा मनुष्यस्यानेकविधा बाधाः समुत्थिताः स्युस्तदाऽनेकानुपायान् युञ्जीत। एवं पुरुषार्थेन विघ्नानि निवार्य श्रीबले सततं वर्धनीये॥३॥

पदार्थः-हे (**वृषभ**) बलिष्ठ! (**मर्त्येषु**) मनुष्यों में (**बाधितः**) पीड़ित (**उग्रः**) तेजस्वी स्वभाव से युक्त (**यत्**) जो दुःख दूर करनेवाले हैं, उनको (**धाः**) धारण करो (**ते**) आपके (**त्या**) वे (**वीर्याणि**) वीर पुरुषों में हुए योग्य बल (**क्व**) किसमें हैं, इस प्रकार (**सुशिप्रः**) सुन्दर ठोढ़ी और नासिकायुक्त (**मघवा**) अत्यन्त श्रेष्ठ धन से युक्त (**तरुत्रः**) दुःखों से छुड़ानेवाला (**महाव्रातः**) सत्य आदि व्रतों में श्रद्धालु पुरुषों का मित्र (**तुविकूर्मिः**) बहुत प्रकार के कर्मों के आरम्भ में उत्साही (**ऋघावान्**) शत्रुओं के नाशकर्त्ता बहुत से शूरवीरों के सहित वर्त्तमान (**इन्द्रः**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त आप होवें॥३॥

भावार्थः-जब मनुष्य के अनेक प्रकार की पीड़ायें प्रकट हों, तब बहुत से उपायों को युक्त करें, इस प्रकार पुरुषार्थ से विघ्नों को दूर करके शोभा और बल निरन्तर बढ़ाने योग्य हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वं हि ष्मा च्यावयन्नच्युतान्येको वृत्रा चरसि जिघ्नमानः।
तव द्यावापृथिवी पर्वतासोऽनु व्रताय निमितेव तस्थुः॥४॥

त्वम्। हि। स्म। च्यवयन्। अच्युतानि। एकः। वृत्रा। चरसि। जिघ्नमानः। तव। द्यावापृथिवी इति। पर्वतासः। अनु। व्रताय। निमिताऽइव। तस्थुः॥४॥

पदार्थः-(**त्वम्**) राजन् (**हि**) (**स्म**) एव। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**च्यावयन्**) प्रचालयन् निपातयन् (**अच्युतानि**) अक्षीणानि शत्रुसैन्यानि (**एकः**) असहायः (**वृत्रा**) मेघावयवरूपाणि घनानि (**चरसि**) (**जिघ्नमानः**) हनन् सन् (**तव**) (**द्यावापृथिवी**) प्रकाशभूमी (**पर्वतासः**) पर्वताकारा मेघाः (**अनु**) (**व्रताय**) सत्यभाषणादिकर्मणे तच्छीलाय वा (**निमितेव**) नितरां मितानीव (**तस्थुः**) तिष्ठन्ति॥४॥

अन्वयः-हे राजन्! त्वमेको ह्यच्युतानि च्यावयन् स्म चरसि यथा सूर्य्यस्य सम्बन्धे द्यावापृथिवी पर्वतासो वृत्रा निमितेव तस्थुस्तथैवानुव्रताय शत्रून् जिघ्नमानो भवेत्तर्हि ते तव ध्रुवो विजयः स्यात्॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा सूर्य्यो नियमेन वर्त्तित्वा निवारणीयानि निवार्य्य रक्षणीयानि रक्षति तथैव भवान् प्रतिषेद्धव्यान् शत्रून् प्रतिषेध्य प्रजाः सततं रक्षेत्॥४॥

पदार्थः-हे राजन्! (**त्वम्**) आप (**एकः**) सहाय के बिना स्वयं बलवान् (**हि**) जिससे (**अच्युतानि**) प्रबल शत्रुओं की सेनाओं को (**च्यावयन्**) भय से गिराते हुए (**स्म**) ही वर्त्तमान हैं, जैसे सूर्य के सम्बन्ध में (**द्यावापृथिवी**) प्रकाश और भूमि (**पर्वतासः**) पर्वत के सदृश बड़े-बड़े मेघ और (**वृत्रा**) मेघों के टुकड़े रूप बादल (**निमितेव**) जैसे निरन्तर प्रमाण किये हुए पदार्थ वैसे (**तस्थुः**) स्थिर होते हैं, वैसे ही (**अनु**) (**व्रताय**) सत्यभाषण आदि कर्म वा उत्तम स्वभाव के लिये शत्रुओं का (**जिघ्नमानः**) नाशकर्त्ता होओ तो (**ते**) आपका निश्चय से विजय होवे॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे सूर्य नियमपूर्वक वर्त्तमान होके निवारण करने योग्य पदार्थों का निवारण करके रक्षा करने योग्य पदार्थों की रक्षा करता है, वैसे ही आप वर्जने योग्य शत्रुओं का वर्जन करके प्रजाओं की निरन्तर रक्षा कीजिये॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उ॒ताभ॑ये पुरुहूत॒ श्रवो॑भि॒रेको॑ दृ॒ळ्हम॑वदो वृत्र॒हा सन्।

इ॒मे चि॑दिन्द्र॒ रोद॑सी अपा॒रे यत्सं॑गृ॒भ्णा म॑घवन्का॒शिरित्ते॑॥५॥१॥

उ॒त। अभ॑ये। पु॒रु॒ऽहू॒त॒। श्रवः॑ऽभिः। एकः॑। दृ॒ळ्हम्। अ॒व॒दः॒। वृ॒त्र॒ऽहा। सन्। इ॒मे इति॑। चि॒त्। इ॒न्द्र॒। रोद॑सी॒ इति॑। अ॒पा॒रे इति॑। यत्। स॒म्ऽगृ॒भ्णाः। म॒घ॒ऽव॒न्। का॒शिः। इत्। ते॒॥५॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**अभये**) भयरहिते व्यवहारे (**पुरुहूत**) बहुभिः प्रशंसित (**श्रवोभिः**) अनेकविधैः श्रवणैः (**एकः**) असहायः (**दृढम्**) (**अवदः**) वदेः (**वृत्रहा**) सूर्यवत् (**सन्**) (**इमे**) (**चित्**) अपि (**इन्द्र**) सूर्य्यवद्वर्त्तमान (**रोदसी**) द्यावापृथिवी (**अपारे**) अविद्यमानाऽवधी (**यत्**) या (**सङ्गृभ्णाः**) सङ्गृह्णीयाः (**मघवन्**) बहुधनयुक्त (**काशिः**) न्यायविनयादिशुभगुणप्रदीप्तिः (**इत्**) एव (**ते**) तव॥५॥

अन्वयः-हे पुरुहूत मघवन्निन्द्र! त्वमेकस्सन्नभये श्रवोभिः सह दृढमवद उतापि यथा वृत्रहा सूर्य्यश्चिदिमे अपारे रोदसी सङ्गृह्णाति तथाभूतः सन् यद्या ते काशिरस्ति तामित्सङ्गृभ्णाः॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। राजपुरुषैरनेकोपायैः प्रजासु निर्भयता सम्पादनीया सूर्य्यवन् न्यायविद्या प्रकाशनीया॥५॥

पदार्थः-हे **(पुरुहूत)** बहुत जनों से प्रशंसित **(मघवन्)** बहुत धन से युक्त **(इन्द्र)** सूर्य्य के तुल्य प्रकाशमान! आप **(एकः)** विना सहाय स्वयं बलवान् **(सन्)** हुए **(अभये)** भय से रहित व्यवहार में **(श्रवोभिः)** अनेक प्रकार के सुनने योग्य वचनों के सहित **(दृढम्)** निश्चय **(अवदः)** बोलें **(उत)** और भी जैसे **(वृत्रहा)** सूर्य्य **(चित्)** भी **(इमे)** इन **(अपारे)** अवधि रहित **(रोदसी)** अन्तरिक्ष और पृथिवी को प्राप्त होता है, वैसे होकर **(यत्)** जो **(ते)** आपके **(काशिः)** न्याय विनय आदि उत्तम गुणों का प्रकाश है, उसको **(इत्)** ही **(संगृभ्णाः)** ग्रहण करें॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। राजा के पुरुषों को चाहिये कि अनेक प्रकार के उपायों से प्रजाओं में उपद्रवों से भय का नाश और सूर्य के तुल्य न्यायविद्या का प्रकाश करें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

प्र सू त इन्द्र प्रवता हरिभ्यां प्र ते वज्रः प्रमृणन्नेतु शत्रून्।

जहि प्रतीचो अनूचः पराचो विश्वं सत्यं कृणुहि विष्टमस्तु॥६॥

प्र। सु। ते। इन्द्र। प्रऽवता। हरिऽभ्याम्। प्र। ते। वज्रः। प्रऽमृणन्। एतु। शत्रून्। जहि। प्रतीचः। अनूचः। पराचः। विश्वम्। सत्यम्। कृणुहि। विष्टम्। अस्तु॥६॥

पदार्थः-**(प्र)** **(सु)** **(ते)** तव **(इन्द्र)** सूर्य्यइव वर्त्तमान **(प्रवता)** अर्वाचीनेन मार्गेण **(हरिभ्याम्)** सुशिक्षिताभ्यामश्वाभ्याम् **(प्र)** **(ते)** तव **(वज्रः)** किरण इव शस्त्रसमूहः **(प्रमृणन्)** प्रकर्षेण हिंसन् **(एतु)** प्राप्नोतु **(शत्रून्)** दुष्टकर्मकर्तॄन् **(जहि)** हिंधि **(प्रतीचः)** पश्चात् स्थितान् **(अनूचः)** कपटेनानुकूलान् **(पराचः)** पराग्भूतान् दूरस्थान् **(विश्वम्)** **(सत्यम्)** **(कृणुहि)** **(विष्टम्)** व्याप्तम् **(अस्तु)**॥६॥

अन्वयः-हे इन्द्र! हरिभ्यां युक्ते रथे प्रवता मार्गेण भवान् वज्र इव शत्रून् प्रमृणन् प्रैतु। एवं ते विजयो भवति त्वं प्रतीचोऽनूचः पराचः शत्रून् प्र जहि विश्वं सत्यं सु कृणुहि यतो विष्टं चास्तु एवं ते सत्कीर्त्तिः प्रवर्त्तेत॥६॥

भावार्थः-ये मनुष्या दुष्टाचारिणो मनुष्यादिप्राणिनो निरुध्य सत्यं प्रवर्त्तयेयुस्ते सुखेनानन्दमाप्नुयुः॥६॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सूर्य के सदृश प्रकाशमान! **(हरिभ्याम्)** उत्तम प्रकार शिक्षायुक्त घोड़ों से

युक्त रथ में **(प्रवता)** उत्तम मार्ग से आप जैसे **(वज्रः)** किरणों के सदृश शस्त्रों का समूह और **(शत्रून्)** दुष्ट कर्म करनेवालों को **(प्रमृणन्)** अत्यन्त नाश करते हुए **(प्र, एतु)** प्राप्त हूजिये। इस प्रकार **(ते)** आपका विजय होता है आप **(प्रतीचः)** पीछे वर्त्तमान **(अनूचः)** और कपट से अनुकूल अर्थात् [निकटस्थ और] **(पराचः)** दूर स्थल में विराजमान शत्रुओं की **(प्र)** **(जहि)** हिंसा करो तथा **(विश्वम्)** सम्पूर्ण **(सत्यम्)** सत्य को **(सु, कृणुहि)** अच्छे प्रकार बढ़ाओ जिससे वह **(विष्टम्)** व्याप्त **(अस्तु)** हो॥६॥

भावार्थः-जो मनुष्य दुष्ट आचरण करनेवाले मनुष्य आदि प्राणियों का निवारण करके सत्य का प्रचार करें, वे सुख से आनन्द भोगते हैं॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

यस्मै धायुरदधा मर्त्यायाभक्तं चिद्भजते गेह्यं१ सः।

भद्रा त इन्द्र सुमतिर्घृताची सहस्रदाना पुरुहूत रातिः॥७॥

यस्मै। धायुः। अदधाः। मर्त्याय। अभक्तम्। चित्। भजते। गेह्यम्। सः। भद्रा। ते। इन्द्र। सुऽमतिः। घृताची। सहस्रऽदाना। पुरुऽहूत। रातिः॥७॥

पदार्थः-**(यस्मै)** **(धायुः)** यो दधाति सः **(अदधाः)** दध्याः **(मर्त्याय)** मनुष्याय **(अभक्तम्)** विभागरहितम् **(चित्)** अपि **(भजते)** सेवते **(गेह्यम्)** गृहेषु गृहेषु भवम् **(सः)** **(भद्रा)** कल्याणकारी **(ते)** तव **(इन्द्र)** सुखप्रदातः **(सुमतिः)** शोभना प्रज्ञा **(घृताची)** सुखप्रदा रात्रीव **(सहस्रदाना)** असंख्यप्रदाना **(पुरुहूत)** बहुभिः सेवित **(रातिः)** दानक्रिया॥७॥

अन्वयः-हे पुरुहूतेन्द्र! भवान् यस्मै मर्त्यायाऽभक्तं गेह्यं भजते यस्मै धायुश्चिदपि सुखमदधास्तस्य ते या घृताचीव भद्रा सुमतिः सहस्रदाना रातिरस्ति तां स कुर्य्यात्॥७॥

भावार्थः-ये मनुष्या पितृपैतामहं धनादिकभक्तं सेवेरन् अन्योऽन्यस्य दोषाँस्त्यक्त्वा गुणान् गृह्णीयुस्ते कल्याणभाजो भवेयुः॥७॥

पदार्थः-**(पुरुहूत)** **(इन्द्र)** सुख के दाता आप **(यस्मै)** जिस **(मर्त्याय)** मनुष्य के लिये **(अभक्तम्)** विभाग से रहित **(गेह्यम्)** गृह-गृह में उत्पन्न हुए धन की **(भजते)** सेवा करते हैं, जिसके लिये **(धायुः)** उत्तम पदार्थों के धारणकर्त्ता **(चित्)** भी आप सुख को **(अदधाः)** धारण करें उन **(ते)** आपकी जो **(घृताची)** सुख देनेवाली रात्रि के सदृश **(भद्रा)** कल्याण करनेवाली **(सुमतिः)** उत्तम बुद्धि और **(सहस्रदाना)** अनगिनती दान जिसमें दिये जाते हों, ऐसी **(रातिः)** दान सम्बन्धिनी क्रिया है, उसको **(सः)** वह स्वीकार करे॥७॥

भावार्थः-जो मनुष्य पिता और पितामह का धन आदि जो कि नहीं बटा हुआ उसकी रक्षा वा सेवा करें और परस्पर दोषों को त्याग के गुणों का ग्रहण करें, वे कल्याण के भागी होवें॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सहदानुं पुरुहूत क्षियन्तमहस्तमिन्द्र सं पिणक्कुणारुम्।

अभि वृत्रं वर्धमानं पियारुमपादमिन्द्र तवसा जघन्थ॥८॥

सहऽदानुम्। पुरुऽहूत। क्षियन्तम्। अहस्तम्। इन्द्र। सम्। पिणक्। कुणारुम्। अभि। वृत्रम्। वर्धमानम्। पियारुम्। अपादम्। इन्द्र। तवसा। जघन्थ॥८॥

पदार्थः-(**सहदानुम्**) दानेन सह वर्त्तमानम् (**पुरुहूत**) बहुभिः प्रशंसित (**क्षियन्तम्**) निवसन्तम् (**अहस्तम्**) अविद्यमानम् (**इन्द्र**) सूर्य्यवद्वर्त्तमान (**सम्**) सम्यक् (**पिणक्**) पिंष्याः (**कुणारुम्**) शब्दायमानम् (**अभि**) आभिमुख्ये (**वृत्रम्**) मेघम् (**वर्धमानम्**) (**पियारुम्**) पीयमानम् (**अपादम्**) पादरहितम् (**इन्द्र**) दुष्टानां विदारक (**तवसा**) बलेन (**जघन्थ**) जहि॥८॥

अन्वयः-हे पुरुहूतेन्द्र! यथा सूर्य्यः सहदानुं क्षियन्तमहस्तं कुणारुं वर्धमानं पियारुमपादं वृत्रं मेघमभिपिनष्टि तथा शत्रून् भवान् संपिणक्। हे इन्द्र! त्वं तवसा दुष्टान् जघन्थ॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्य्यो मेघाकर्षणवर्षणाभ्यां सर्वं जगत्पाति तथैव दुष्टानां घातेन श्रेष्ठानां धारणेन च सर्वा प्रजाः पालनीयाः॥८॥

पदार्थः-हे (**पुरुहूत**) बहुत जनों से प्रशंसित अर्थात् यश को प्राप्त (**इन्द्र**) सूर्य्य के सदृश तेजस्वी! जैसे [सूर्य] (**सुहदानुम्**) दान से युक्त (**क्षियन्तम्**) रहते हुए (**अहस्तम्**) अविद्यमान (**कुणारुम्**) शब्द करते और (**वर्धमानम्**) बढ़ते हुए (**पियारुम्**) पिये गये (**अपादम्**) पादों से हीन (**वृत्रम्**) मेघ को (**अभि**) सम्मुख पीसता है, वैसे शत्रुओं का आप (**सम्, पिणक्**) नाश करो और (**इन्द्र**) हे दुष्टों को विदीर्ण करनेवाले! आप (**तवसा**) बल से दुष्ट पुरुषों का (**जघन्थ**) नाश करें॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य मेघों के आकर्षण और वर्षाने से सम्पूर्ण जगत् को पालता है, वैसे ही दुष्टों के नाश करने और श्रेष्ठ पुरुषों के धारण करने से राजा को सम्पूर्ण प्रजाओं की पालना करनी चाहिये॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

नि सामनामिषिरामिन्द्र भूमिं महीमपारां सदने ससत्थ।

अस्तभ्नाद् द्यां वृषभो अन्तरिक्षमर्षन्त्वापस्त्वयेह प्रसूताः॥९॥

नि। साम॒नाम्। इ॒षि॒राम्। इ॒न्द्र॒। भूमि॑म्। म॒हीम्। अ॒पा॒राम्। सद॑ने। स॒स॒त्थ॒। अ॒स्त॑भ्नात्। द्याम्। वृ॒ष॒भः। अ॒न्तरि॑क्षम्। अर्ष॑न्तु। आप॑ः। त्वया॑। इ॒ह। प्रऽसू॑ताः॥९॥

पदार्थः-(**नि**) (**सामनाम्**) प्रशस्तानि सामानि विद्यन्ते यस्यां ताम् (**इषिराम्**) बहुपदार्थप्रापिकाम् (**इन्द्र**) सवितेव राजन् (**भूमिम्**) बहवः पदार्था भवन्ति यस्यां ताम् (**महीम्**) परिमाणेन महतीम् (**अपाराम्**) पाररहिताम् (**सदने**) स्थाने (**ससत्थ**) सीद (**अस्तभ्नात्**) स्तभ्नाति (**द्याम्**) (**वृषभः**) वर्षकः (**अन्तरिक्षम्**) आकाशं वा (**अर्षन्तु**) प्राप्नुवन्तु (**आपः**) जलानि (**त्वया**) (**इह**) प्रसूताः॥९॥

अन्वयः-हे इन्द्र राजँस्त्वं यथा वृषभो द्यामस्तभ्नात्तथा सामनामिषिरां महीमपारां भूमिं प्राप्येह सदने नि ससत्थ त्वया प्रसूता आपोऽन्तरिक्षमर्षन्तु॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्यो नियमेन प्रकाशं भूमिं च धरति तथैव न्यायेन राज्यं राजा धरेत्। सदैव प्रजासु बलानि वर्धयेत्॥९॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) सूर्य्य के तुल्य प्रकाश से युक्त राजन्! आप जैसे (**वृषभः**) वृष्टिकर्त्ता सूर्य (**द्याम्**) अन्तरिक्ष को (**अस्तभ्नात्**) पुष्टता से धारण करता है, वैसे (**सामनाम्**) उत्तम उपमाओं से युक्त (**इषिराम्**) बहुत पदार्थों की प्राप्ति करानेवाली (**महीम्**) बड़े परिमाण से युक्त (**अपाराम्**) जिसका पार नहीं (**भूमिम्**) जिसमें बहुत पदार्थ होते हैं, उस भूमि को प्राप्त होकर (**इह**) इस (**सदने**) स्थान में (**नि, ससत्थ**) बैठो (**त्वया**) आपसे (**प्रसूताः**) प्रेरित हुए (**आपः**) जल (**अन्तरिक्षम्**) आकाश को (**अर्षन्तु**) प्राप्त होवें॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य नियमपूर्वक प्रकाश और भूमि को धारण करता है, वैसे ही न्याय से राजा राज्य को धारण करे और सब काल में प्रजाओं में ही बल बढ़ाया करे॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अ॒ला॒तृ॒णो ब॒ल इ॑न्द्र व्र॒जो गोः पु॒रा ह॒न्तोर्भय॑मानो॒ व्या॑र।

सु॒गान् प॒थो अ॑कृणोन्नि॒रजे॒ गाः प्राव॒न् वाणी॑: पुरुहू॒तं धम॑न्तीः॥१०॥२॥

अ॒ल॒ऽतृ॒णः। ब॒लः। इ॒न्द्र॒। व्र॒जः। गोः। पु॒रा। ह॒न्तोः। भय॑मानः। वि। आ॒र॒। सु॒ऽगान्। प॒थः। अ॒कृ॒णो॒त्। निः॒ऽअजे॑। गाः। प्र। आ॒व॒न्। वाणी॑ः। पु॒रु॒ऽहू॒तम्। धम॑न्तीः॥१०॥

पदार्थः-(**अलातृणः**) योऽलं तृणाति सः (**बलः**) बलवान् (**इन्द्र**) परमैश्वर्य्यप्रापक (**व्रजः**) यो व्रजति गच्छेत् सः (**गोः**) पृथिव्याः (**पुरा**) (**हन्तोः**) हन्तुम् (**भयमानः**) भयं प्राप्तः। अत्र व्यत्ययेन

शानच्। **(वि, आर)** विशेषेण गच्छति **(सुगान्)** सुखेन गच्छति येषु तान् **(पथः)** मार्गान् **(अकृणोत्)** कुर्य्यात् **(निरजे)** नितरां गमनाय **(गाः)** या गच्छन्ति ताः **(प्र) (आवन्)** प्रकर्षेण रक्षन्ति **(वाणीः)** सुशिक्षिता वाचः **(पुरुहूतम्)** बहुभिः प्रशंसितम् **(धमन्तीः)** शब्दयन्त्यः॥१०॥

अन्वयः-हे इन्द्र! अलातृणो बलो व्रजो भयमानो भवान् सुगान् पथो व्यार यः पुरा गोर्हन्तोरकृणोद्या पुरुहूतं धमन्तीर्वाणीर्गाः प्रावन् तं ताश्च निरजे व्यार॥१०॥

भावार्थः-मनुष्यैः सदैवाऽधर्माचरणाद्भीत्वा धर्म्ये प्रवर्तितव्यं दुर्व्यसनानि हित्वा धर्म्यमार्गेण गन्तव्यम्॥१०॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** श्रेष्ठ ऐश्वर्य्य के दाता! **(अलातृणः)** सम्पूर्ण संसार के प्रलयकर्त्ता **(बलः)** बलयुक्त **(व्रजः)** चलनेवाले **(भयमानः)** भय को प्राप्त होते हुए आप **(सुगान्)** सुख से जिनमें मनुष्य आदि चलें ऐसे **(पथः)** मार्गों को **(वि) (आर)** विशेष करके प्राप्त होइये जो **(पुरा)** प्रथम **(गोः)** पृथिवी का **(हन्तोः)** नाश करने को **(अकृणोत्)** क्रिया करे वा जो **(पुरुहूतम्)** बहुतों से प्रशंसायुक्त **(धमन्तीः)** शब्द करती हुईं **(वाणीः)** उत्तम प्रकार शिक्षायुक्त **(गाः)** चलनेवाली वाणी **(प्र) (आवन्)** अतिशय रक्षा करती हैं, उसको और उनको **(निरजे)** अत्यन्त चलने के लिये विशेष करके प्राप्त होइये॥१०॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि सदा ही अधर्म के आचरण से डरके धर्म में प्रवृत्त हों और बुरे व्यसनों को त्याग के धर्मयुक्त मार्ग से चलें॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

एको द्वे वसुमती समीची इन्द्र आ पप्रौ पृथिवीमुत द्याम्।
उतान्तरिक्षादभि नः समीक इषो रथीः सयुजः शूर वाजान्॥११॥

एकः। द्वे इति। वसुमती इति वसुऽमती। समीची इति सम्ऽईची। इन्द्रः। आ। पप्रौ। पृथिवीम्। उत। द्याम्। उत। अन्तरिक्षात्। अभि। नः। सम्ऽईके। इषः। रथीः। सऽयुजः। शूर। वाजान्॥११॥

पदार्थः-**(एकः)** असहायः **(द्वे) (वसुमती)** बहवो वसवो विद्यन्ते ययोस्ते **(समीची)** ये सम्यगञ्चतः समानं प्राप्नुतस्ते **(इन्द्रः)** विद्युत् **(आ) (पप्रौ)** प्राति **(पृथिवीम्)** अन्तरिक्षं भूमिं वा **(उत)** अपि **(द्याम्)** प्रकाशम् **(उत)** अपि **(अन्तरिक्षात्)** मध्यस्थादवकाशात् **(अभि)** आभिमुख्ये **(नः)** अस्मभ्यम् **(समीके)** समीपे **(इषः)** इच्छाः **(रथीः)** प्रशस्तरथयुक्तः **(सयुजः)** ये समानं युञ्जते ते **(शूर)** दुष्टानां हिंसक **(वाजान्)** अन्नादीन्॥११॥

अन्वयः-हे शूर! यथैको रथीरिन्द्रो द्वे समीची वसुमती पृथिवीमुत द्यां चा पप्रौ समीकेऽन्तरिक्षात् सयुजो नोऽस्मभ्यमिष उत वाजानभि पप्रुः ते सर्वैः सत्कर्त्तव्याः॥११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये भूमिवत्प्रजाधारका विद्युद्वत्परमैश्वर्यप्रदाः प्रजाजनाः स्युस्ते सर्वं राज्यं रक्षितुं शक्नुयुः॥११॥

पदार्थः-हे **(शूर)** दुष्टजनों के नाशकारक! जैसे **(एकः)** सहायरहित अकिल्ली **(रथीः)** प्रशंसनीय रथरूप वाहन के सहित **(इन्द्रः)** बिजुली **(द्वे)** दो **(समीची)** समानता को प्राप्त **(वसुमती)** बहुत धनों से युक्त **(पृथिवीम्)** अन्तरिक्ष वा भूमि को **(उत)** और भी **(द्याम्)** प्रकाश को **(आ)** **(पप्रौ)** पूर्ण करती **(समीके)** समीप में **(अन्तरिक्षात्)** मध्य में वर्त्तमान अवकाश से **(सयुजः)** तुल्यता के साथ परस्पर मिले हुए मित्र जन **(नः)** हम लोगों के लिये **(इषः)** इच्छाओं को **(उत)** और **(वाजान्)** अन्न आदि वस्तुओं को **(अभि)** सब ओर से पूर्ण करते, वे सम्पूर्ण जनों से सत्कार करने योग्य हैं॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो भूमि के सदृश प्रजाओं के धारण करने और बिजुली के सदृश अति उत्तम ऐश्वर्य्य के देनेवाले प्रजाजन हों, वे सम्पूर्ण राज्य की रक्षा कर सकें॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

दिशः सूर्यो न मिनाति प्रदिष्टा दिवेदिवे हर्यश्वप्रसूताः।

सं यदानळध्वन आदिदश्वैर्विमोचनं कृणुते तत्त्वस्य॥१२॥

दिशः। सूर्यः। न। मिनाति। प्रऽदिष्टाः। दिवेऽदिवे। हर्यश्वऽप्रसूताः। सम्। यत्। आनट्। अध्वनः। आत्। इत्। अश्वैः। विऽमोचनम्। कृणुते। तत्। तु। अस्य॥१२॥

पदार्थः-**(दिशः)** पूर्वाद्याः **(सूर्यः)** सविता **(न)** इव **(मिनाति)** **(प्रदिष्टाः)** याः प्रदिश्यन्ते ताः **(दिवेदिवे)** प्रतिदिनम् **(हर्यश्वप्रसूताः)** हरयो हरणशीलाः अश्वाः किरणा यस्य तेन प्रसूता जनिताः **(सम्)** **(यत्)** **(आनट्)** व्याप्नोति **(अध्वनः)** मार्गान् **(आत्)** आनन्तर्य्ये **(इत्)** एव **(अश्वैः)** तुरङ्गैः **(विमोचनम्)** **(कृणुते)** करोति **(तत्)** **(तु)** **(अस्य)**॥१२॥

अन्वयः-यः सूर्यो न दिवेदिवे हर्यश्वप्रसूताः प्रदिष्टा दिशो मिनाति। आद्यद्योऽश्वैरध्वनः समानट् विमोचनं कृणुते तद्वित्वस्य भूषणमिति वेद्यम्॥१२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यन्मनुष्या अविद्याकुसंस्कारदुःखानि विमोच्य सूर्य्योऽन्धकारमिवाऽन्यायं निवर्त्य सर्वासु दिक्षु कीर्तिं प्रसारयन्ति तदेवैषां कर्त्तव्यं कर्माऽस्ति॥१२॥

पदार्थः-जो **(सूर्यः)** सूर्य्य के **(न)** तुल्य **(दिवेदिवे)** प्रतिदिन **(हर्यश्वप्रसूताः)** हरणशील किरणों वाले से उत्पन्न **(प्रदिष्टाः)** सूचना से दिखाई गई **(दिशः)** दिशाओं को **(मिनाति)** अलग-अलग करता है **(आत्)** अनन्तर **(यत्)** जो **(अश्वैः)** घोड़ों से **(अध्वनः)** मार्गों को **(सम्)** **(आनट्)** व्याप्त होता तथा

(विमोचनम्) त्याग **(कृणुते)** करता है **(तत्, इत्)** वही **(तु)** तो **(अस्य)** इसका भूषण है, ऐसा जानना चाहिये॥१२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो पुरुष अविद्या, दुष्ट संस्कार और दुःखों को त्याग के जैसे सूर्य्य अन्धकार को दूर करता है, वैसे अन्याय को दूर करके सम्पूर्ण दिशाओं में यश को फैलाते हैं, यही इनका कर्त्तव्य कर्म है॥१२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

दिदृक्षन्त उषसो यामन्नक्तोर्विवस्वत्या महि चित्रमनीकम्।

विश्वे जानन्ति महिना यदागादिन्द्रस्य कर्म सुकृता पुरूणि॥१३॥

दिदृक्षन्ते। उषसः। यामन्। अक्तोः। विवस्वत्याः। महि। चित्रम्। अनीकम्। विश्वे। जानन्ति। महिना। यत्। आ। अगात्। इन्द्रस्य। कर्म। सुऽकृता। पुरूणि॥१३॥

पदार्थः-**(दिदृक्षन्ते)** द्रष्टुमिच्छन्ति **(उषसः)** प्रभातान् **(यामन्)** यामनि मार्गे **(अक्तोः)** रात्रेः **(विवस्वत्याः)** यः विवस्वति साध्व्यः **(महि)** महत् **(चित्रम्)** अद्भुतम् **(अनीकम्)** सैन्यम् **(विश्वे)** सर्वे **(जानन्ति)** **(महिना)** महिम्ना। अत्र **छान्दसो वर्णलोपो** वेति न लोपः। **(यत्)** ये **(आ)** समन्तात् **(अगात्)** प्राप्नुयात् **(इन्द्रस्य)** विद्युतः **(कर्म)** कर्माणि **(सुकृता)** सुष्ठुकृतानि **(पुरूणि)** बहूनि॥१३॥

अन्वयः-यद्ये विश्वे मनुष्या विवस्वत्या उषसोऽक्तोर्यामन् दिदृक्षन्ते महिना महि चित्रमनीकं जानन्तीन्द्रस्य पुरूणि सुकृता कर्म दिदृक्षन्ते तान् य आगात् स सुखी स्यात्॥१३॥

भावार्थः-ये परीक्षकाः प्रातरुत्थाय प्रयत्नेन व्यवहारान् साध्नुवन्ति तेऽत्र ज्ञानविशेषा पूज्यन्ते बलं च लभन्ते॥१३॥

पदार्थः-**(यत्)** जो **(विश्वे)** सम्पूर्ण मनुष्य **(विवस्वत्याः)** सूर्य मण्डल के निमित्त व्यवहारवाली **(उषसः)** प्रभात वेलाओं को **(अक्तोः)** रात्रि के **(यामन्)** मार्ग में **(दिदृक्षन्ते)** देखने की इच्छा करते हैं, **(महिना)** महिमा से **(महि)** बड़ी **(चित्रम्)** अद्भुत **(अनीकम्)** सेना को **(जानन्ति)** जानते हैं, **(इन्द्रस्य)** बिजुली के **(पुरूणि)** बहुत **(सुकृता)** उत्तम प्रकार किये गये **(कर्म)** कर्मों को देखने की इच्छा करते हैं, उनको जो **(आ, अगात्)** प्राप्त हो वह सुखी होवे॥१३॥

भावार्थः-जो परीक्षक लोग प्रातःकाल उठ के प्रयत्न से व्यवहारों को सिद्ध करते हैं, वे इस संसार में ज्ञानविशेष से प्रतिष्ठा को प्राप्त और बल से युक्त होते हैं॥१३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

महि ज्योतिर्निहितं वक्षणास्वामा पक्वं चरति बिभ्रती गौः।
विश्वं स्वाद्म संभृतमुस्रियायां यत्सीमिन्द्रो अदधाद्भोजनाय॥१४॥

महि। ज्योतिः। निऽहितम्। वक्षणासु। आमा। पक्वम्। चरति। बिभ्रती। गौः। विश्वम्। स्वाद्म। सम्ऽभृतम्। उस्रियायाम्। यत्। सीम्। इन्द्रः। अदधात्। भोजनाय॥१४॥

पदार्थः-(**महि**) महत् (**ज्योतिः**) तेजः (**निहितम्**) स्थितम् (**वक्षणासु**) वहमानासु नदीषु। **वक्षणा इति नदीनामसु पठितम्।** (निघं०१.१३) (**आमा**) आमानि (**पक्वम्**) (**चरति**) गच्छति (**बिभ्रती**) धरन्ती (**गौः**) या गच्छति सा (**विश्वम्**) सर्वम् (**स्वाद्म**) अतिस्वादुमत् (**सम्भृतम्**) सम्यग्धृतं पोषितं वा (**उस्रियायाम्**) पृथिव्याम् (**यत्**) या (**सीम्**) सर्वतः (**इन्द्रः**) विद्युत् (**अदधात्**) दधाति (**भोजनाय**) पालनायाऽभ्यवहरणाय वा॥१४॥

अन्वयः-यद्या गौर्वक्षणास्वामा पक्वं बिभ्रती चरति यदत्र महि निहितं ज्योतिरुस्रियायां विश्वं स्वाद्म सम्भृतं चरति स इन्द्रो भोजनाय सर्वं सीमदधादिति सर्वैर्वेद्यम्॥१४॥

भावार्थः-या विद्युद्भूम्यब्वाय्वन्तरिक्षेषु तद्विकारेषु पदार्थेषु च व्याप्य सर्वं धृत्वा पालयति तस्या विद्यां सर्वे स्वीकुर्वन्तु॥१४॥

पदार्थः-(**यत्**) जो (**गौः**) चलनेवाली (**वक्षणासु**) बहती हुई नदियों में (**आमा**) कच्चे वा (**पक्वम्**) पके हुए को (**बिभ्रती**) धारण करती हुई (**चरति**) चलती है, जो इस संसार में (**महि**) बड़ा (**निहितम्**) स्थित (**ज्योतिः**) तेज वा (**उस्रियायाम्**) पृथिवी में (**विश्वम्**) सम्पूर्ण (**स्वाद्म**) अति स्वादुवाले (**सम्भृतम्**) उत्तम प्रकार, धारण वा पोषण किये हुए पदार्थ को प्राप्त होती है, वह (**इन्द्रः**) बिजुली (**भोजनाय**) पालन वा भोजन के लिये सबको (**सीम्**) सब ओर से (**अदधात्**) धारण करती है, यह सब जनों को जानना चाहिये॥१४॥

भावार्थः-जो बिजुली भूमि, जल, वायु और अन्तरिक्ष तथा उनके विकारों और पदार्थों में व्यापक हो और सबको धारण कर पालन करती है, उसकी विद्या को सब लोग धारण वा स्वीकार करें॥१४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इन्द्र दृह्य यामकोशा अभूवन् यज्ञाय शिक्ष गृणते सखिभ्यः।
दुर्मायवो दुरेवा मर्त्यासो निषङ्गिणो रिपवो हन्त्वासः॥१५॥३॥

इन्द्र॑। दृह्य॑। या॒म॒ऽको॒शाः। अ॒भू॒व॒न्। य॒ज्ञाय॑। शि॒क्ष॒। गृ॒ण॒ते। सखि॑ऽभ्यः। दुः॒ऽमा॒यवः॑। दुः॒ऽए॒वाः। मर्त्या॑सः। नि॒ष॒ङ्गिणः॑। रि॒पवः॑। ह॒न्त्वा॑सः॥ १५॥

पदार्थः-(**इन्द्र**) विद्यैश्वर्यप्रद (**दृह्य**) वर्द्धस्व। अत्र विकरणव्यत्ययेन श्यन्। (**यामकोशाः**) यान्ति येषु ते यामा मार्गास्तेषां कोशा यामकोशाः (**अभूवन्**) भवन्ति (**यज्ञाय**) सङ्गतिविज्ञानाय (**शिक्ष**) विद्यां धेहि (**गृणते**) स्तुवते (**सखिभ्यः**) मित्रेभ्यः (**दुर्मायवः**) दुष्टो मायुः प्रक्षेपो येषान्ते (**दुरेवाः**) ये दुष्टं यन्ति ते (**मर्त्यासः**) मनुष्याः (**निषङ्गिणः**) बहवो निषङ्गाः शस्त्रविशेषा विद्यन्ते येषान्ते (**रिपवः**) शत्रवः (**हन्त्वासः**) हन्तुं योग्याः॥ १५॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ये यामकोशा अभूवन् तेभ्यः सखिभ्यो यज्ञाय गृणते च त्वं शिक्ष ये दुर्मायवो दुरेवा हन्त्वासो निषङ्गिणो रिपवो मर्त्यासः स्युस्तान् हत्वा दृह्य॥ १५॥

भावार्थः-मनुष्यैः सर्वदा सर्वथा श्रेष्ठानां रक्षणं विद्यासुशिक्षादानं दुष्टाचाराणां हननं च कृत्वा सदैव वर्द्धनीयम्॥ १५॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) विद्या और ऐश्वर्य के दाता! जो (**यामकोशाः**) मार्गों के रोकनेवाले (**अभूवन्**) होते हैं, उन (**सखिभ्यः**) मित्रों तथा (**यज्ञाय**) सङ्गतिजन्य विशेष ज्ञान और (**गृणते**) स्तुति करनेवाले के अर्थ आप (**शिक्ष**) विद्या दान कीजिये, जो (**दुर्मायवः**) बुरे प्रकार फेंकने वा (**दुरेवाः**) दुष्ट कर्म को पहुँचानेवाले (**हन्त्वासः**) मारने के योग्य (**निषङ्गिणः**) बहुत विशेष शस्त्रोंवाले (**रिपवः**) शत्रु (**मर्त्यासः**) मनुष्य हों, उनका नाश करके (**दृह्य**) बढ़िये॥ १५॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि सर्वदा सब प्रकार श्रेष्ठ पुरुषों की रक्षा, विद्या और शिक्षा का दान और दुष्ट आचरणवालों का नाश करके सदैव बढ़ें॥ १५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सं घोषः॑ शृण्वेऽव॒मैर॒मित्रै॑र्ज॒ही न्ये॑ष्व॒शनिं॒ तपि॑ष्ठाम्।

वृ॒श्चेमधस्ता॒द्वि रु॑जा॒ सह॑स्व ज॒हि रक्षो॑ मघवन् र॒न्धय॑स्व॥ १६॥

सम्। घोषः॑। शृ॒ण्वे॒। अ॒व॒मैः। अ॒मित्रैः॑। ज॒हि। नि। ए॒षु॒। अ॒शनि॑म्। तपि॑ष्ठाम्। वृ॒श्च। ई॒म्। अ॒धस्ता॑त्। वि। रु॒ज॒। सह॑स्व। ज॒हि। रक्षः॑। म॒घ॒ऽव॒न्। र॒न्धय॑स्व॥ १६॥

पदार्थः-(**सम्**) सम्यक् (**घोषः**) वाणीः। **घोष इति वाङ्नामसु पठितम्।** (निघं० १.११) (**शृण्वे**) (**अवमैः**) अधमैः (**अमित्रैः**) शत्रुभिः (**जहि**)। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**नि**) (**एषु**) (**अशनिम्**) वज्रम् (**तपिष्ठाम्**) अतिशयेन तप्ताम् (**वृश्च**) छिन्धि (**ईम्**) सततम् (**अधस्तात्**) अधो निपात्य (**वि**) (**रुज**)

रुग्णान् कुरु। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(सहस्व)** **(जहि)** **(रक्षः)** दुष्टस्वभावं प्राणिनम् **(मघवन्)** बहुधनयुक्त **(रन्धयस्व)** ताडयस्व॥१६॥

अन्वयः-हे मघवन्नहमवमैरमित्रः यः घोषस्तं सं शृण्वे ताँस्त्वं जहि। एषु तपिष्ठामशनिं प्रक्षिप्यैतान् निवृश्च। एतानधस्तात्कृत्वें वि रुज दुःखं सहस्व रक्षो जहि पापिनो रन्धयस्व॥१६॥

भावार्थः-हे वीरा! या वाणी शत्रुभिः क्रियेत तां श्रुत्वाऽभीत्वैतेषामुपरि शस्त्राणि प्रक्षिप्य विच्छिन्नान् कुरुत अनेनैश्वर्यवन्तो भवत॥१६॥

पदार्थः-हे **(मघवन्)** बहुत धनों से युक्त मैं **(अवमैः)** नीच **(अमित्रैः)** शत्रुओं के साथ जो **(घोषः)** घोर वाणी उसको **(सम्)** बहुत **(शृण्वे)** सुनता हूँ, इससे इनको आप **(जहि)** मारिये और **(एषु)** इन शत्रुओं में **(तपिष्ठाम्)** अतिशय तपते हुए **(अशनिम्)** वज्र को फेंक के इनको **(नि, वृश्च)** उत्तम प्रकार विनाश कीजिये और इनको **(अधस्तात्)** नीचे गिराय के **(ईम्)** निरन्तर **(वि)** **(रुज)** रोगग्रस्त कीजिये और दुःख को **(सहस्व)** सहिये **(रक्षः)** दुष्ट स्वभाववाले प्राणी का **(जहि)** नाश कीजिये और पापी लोगों को **(रन्धयस्व)** ताड़िये॥१६॥

भावार्थः-हे वीर पुरुषो! जो वाणी शत्रुओं से उच्चारण की जाये, उसको सुन उनके सम्मुख जा और उनके ऊपर शस्त्रों का प्रहार करके उन्हें छिन्न-भिन्न करो, इससे ऐश्वर्यवाले होओ॥१६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

उद्वृ॑ह रक्षः॑ स॒हमू॑लमिन्द्र वृ॒श्चा मध्यं॒ प्रत्यग्रं॑ शृणीहि।

आ कीव॑तः सल॒लूकं॑ चकर्थ ब्रह्म॒द्विषे॒ तपु॑षिं हे॒तिम॑स्य॥१७॥

उत्। वृ॒ह॒। रक्षः॑। स॒हऽमू॑लम्। इ॒न्द्र॒। वृ॒श्च। मध्य॑म्। प्रति॑। अग्र॑म्। शृ॒णी॒हि॒। आ। कीव॑तः। स॒ल॒लूक॑म्। च॒क॒र्थ॒। ब्र॒ह्म॒ऽद्विषे॑। तपु॑षिम्। हे॒तिम्। अ॒स्य॒॥१७॥

पदार्थः-**(उत्)** उत्कृष्टे **(वृह)** वर्धस्व **(रक्षः)** दुष्टाचारम् **(सहमूलम्)** मूलेन सह वर्तमानम् **(इन्द्र)** दुष्टानां विदारक **(वृश्च)** छिन्धि। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(मध्यम्)** मध्ये भवम् **(प्रति)** **(अग्रम्)** अग्रभागम् **(शृणीहि)** हिन्धि **(आ)** **(कीवतः)** कियतः। अत्र वर्णव्यत्ययेन यस्य स्थाने वः। **(सललूकम्)** सम्यक् लुब्धम् **(चकर्थ)** कृन्त **(ब्रह्मद्विषे)** यो ब्रह्म परमात्मानं वेदं वा द्वेष्टि तस्मै **(तपुषिम्)** प्रतापयुक्तम् **(हेतिम्)** वज्रम् **(अस्य)** एतस्योपरि॥१७॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वमुद्वृह सहमूलं रक्षो वृश्चास्योपरि तपुषिं हेतिं प्रक्षिप्यास्य मध्यमग्रं च प्रति शृणीहि ब्रह्मद्विषे वर्त्तमानं सललूकं कीवतश्चाऽऽचकर्थ॥१७॥

भावार्थः-मनुष्यैः कदाचिदपि धार्मिकाणामुपरि शस्त्रप्रहारो नैव कार्यो न च शस्त्रैर्हननेन विना दुष्टास्त्यक्तव्याः। एवं कृते सति सर्वतो सुखस्य वृद्धिः स्यात्॥१७॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** दुष्ट पुरुषों के नाशकर्त्ता! आप **(उत्)** उत्तमता के साथ **(वृह)** सुख वृद्धि करो **(सहमूलम्)** जड़सहित **(रक्षः)** बुरे आचार को **(वृश्च)** तोड़ो **(अस्य)** इसके ऊपर **(तपुषिम्)** प्रतापयुक्त **(हेतिम्)** वज्र को फेंक के इसके **(मध्यम्)** मध्य में उत्पन्न हुए और **(अग्रम्)** अग्रभाग के **(प्रति)** प्रति **(शृणीहि)** नाश करो तथा **(ब्रह्मद्विषे)** ब्रह्म परमात्मा वा वेद के निन्दक के लिये वर्त्तमान **(सललूकम्)** अच्छी तरह लोभी **(कीवतः)** कितनों को **(आ) (चकर्थ)** सब प्रकार काटो॥१७॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि कभी भी धार्मिक पुरुषों के ऊपर शस्त्रों का प्रहार न करें और दुष्ट पुरुषों को शस्त्रों से मारे विना न छोड़ें, ऐसा करने से सब प्रकार सुख की वृद्धि होवे॥१७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स्वस्तये वाजिभिश्च प्रणेतः संयन्महीरिष आसत्सि पूर्वीः।
रायो वन्तारो बृहतः स्यामाऽस्मे अस्तु भग इन्द्र प्रजावान्॥१८॥

स्वस्तये। वाजिऽभिः। च। प्रनेतरिति प्रऽनेतः। सम्। यत्। महीः। इषः। आऽसत्सि। पूर्वीः। रायः। वन्तारः। बृहतः। स्याम। अस्मे इति। अस्तु। भगः। इन्द्र। प्रजाऽवान्॥१८॥

पदार्थः-**(स्वस्तये)** सुखाय **(वाजिभिः)** तुरङ्गैरिव वेगवद्भिरग्न्यादिभिः **(च) (प्रणेतः)** यः सत्याऽसत्ये प्रणयति तत्सम्बुद्धौ **(सम्) (यत्)** यः **(महीः)** महतीः **(इषः)** इच्छाः **(आसत्सि)** समन्तात्सीदसि। अत्र **बहुलं छन्दसीति** शपो लुक्। **(पूर्वीः)** पूर्वैः प्राप्ताः **(रायः)** धनानि **(वन्तारः)** विभाजकाः **(बृहतः)** महतः **(स्याम)** भवेम **(अस्मे)** अस्माकम् **(अस्तु)** भवतु **(भगः)** ऐश्वर्य्यम् **(इन्द्र)** परमैश्वर्य्ययुक्त **(प्रजावान्)** बह्व्यः प्रजा विद्यन्ते यस्मिन् सः॥१८॥

अन्वयः-हे प्रणेतरिन्द्र! यद्यस्त्वं वाजिभिरन्यैः साधनैश्च पूर्वीर्महीरिष समासत्सि ये बृहतो वन्तारो रायः सन्ति तेऽस्मे स्वस्तये सन्तु। प्रजावान् भगश्च तानि प्राप्य वयं सुखिनः स्याम॥१८॥

भावार्थः-ये मनुष्याः सुखाय बहूनि साधनानि समादधति ते ऐश्वर्यं प्राप्य मोदन्ते॥१८॥

पदार्थः-हे **(प्रणेतः)** सत्य और असत्य के निश्चयकारक **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य से युक्त! **(यत्)** जो आप **(वाजिभिः)** घोड़ों के सदृश वेगयुक्त अग्नि आदि पदार्थों तथा और साधनों से **(पूर्वीः)** पूर्व जनों से प्राप्त **(महीः)** बड़ी **(इषः)** इच्छाओं से **(सम्) (आसत्सि)** सब प्रकार वर्त्तमान हैं [जो] **(बृहतः)** बड़े **(वन्तारः)** विभाग करनेवाले **(रायः)** धन हैं वे **(अस्मे)** हम लोगों के **(स्वस्तये)** सुख के लिये **(अस्तु)** होवें **(प्रजावान्)** बहुत प्रजाओं से युक्त **(भगः)** ऐश्वर्य और उनको प्राप्त होकर हम लोग सुखी

(स्याम) होवें॥१८॥

भावार्थ:-जो मनुष्य लोग सुख के लिये बहुत से साधनों को एकत्र करते, वे ऐश्वर्य को प्राप्त होके आनन्द को प्राप्त होते हैं॥१८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ नो भर भर्गमिन्द्र द्युमन्तं नि ते देष्णस्य धीमहि प्ररेके।

ऊर्वइव पप्रथे कामो अस्मे तमा पृण वसुपते वसूनाम्॥१९॥

आ। नः। भर। भर्गम्। इन्द्र। द्युऽमन्तम्। नि। ते। देष्णस्य। धीमहि। प्रऽरेके। ऊर्वःऽइव। पप्रथे। कामः। अस्मे इति। तम्। आ। पृण। वसुऽपते। वसूनाम्॥१९॥

पदार्थ:-**(आ)** समन्तात् **(नः)** अस्मभ्यम् **(भर)** धर **(भगम्)** सेवनीयमैश्वर्य्यम् **(इन्द्र)** सुखप्रदातः **(द्युमन्तम्)** प्रशस्ता द्यौः प्रकाशो विद्यते यस्मिँस्तम् **(नि)** **(ते)** तव **(देष्णस्य)** दातुः **(धीमहि)** धरेम **(प्ररेके)** प्रकृष्टा रेका शङ्का यस्मिँस्तस्मिन् व्यवहारे **(ऊर्वइव)** प्राप्तेन्धनोऽग्निरिव **(पप्रथे)** प्रथताम् **(कामः)** इच्छा **(अस्मे)** अस्मभ्यम् **(तम्)** **(आ)** **(पृण)** पूर्णं कुरु **(वसुपते)** धनानां पालक **(वसूनाम्)** धनानाम्॥१९॥

अन्वय:-हे वसूनां वसुपत इन्द्र! यस्य देष्णस्य ते प्ररेके वयं निधीमहि स त्वं नो द्युमन्तं भगमाभर। योऽस्मे काम ऊर्वइव पप्रथे तमापृण॥१९॥

भावार्थ:-स एव मनुष्य आप्तोऽस्ति यस्य सर्वस्वं परोपकाराय भवति नात्र शङ्कास्ति॥१९॥

पदार्थ:-हे **(वसूनाम्)** जनों के **(वसुपते)** धनपालक **(इन्द्र)** सुख के दाता! जिस **(देष्णस्य)** देनेवाले **(ते)** आपके **(प्ररेके)** उत्तम शङ्कायुक्त व्यवहार में हम लोग **(नि)** **(धीमहि)** धारण करें वह आप **(नः)** हम लोगों के लिये **(द्युमन्तम्)** उत्तम प्रकाशयुक्त **(भगम्)** सेवन करने योग्य ऐश्वर्य्य को **(आ)** सब प्रकार **(भर)** धारण करो और जो **(अस्मे)** हम लोगों के लिये **(कामः)** इच्छा **(ऊर्वइव)** इन्धन युक्त अग्नि के सदृश **(पप्रथे)** वृद्धि को प्राप्त होवे **(तम्)** उसको **(आ)** **(पृण)** पूर्ण करो॥१९॥

भावार्थ:-वही मनुष्य यथार्थवक्ता है जिसका सर्वस्व दूसरे पुरुषादि के उपकार के लिये होता है, इस विषय में कोई शङ्का नहीं है॥१९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इमं कामं मन्दया गोभिरश्वैश्चन्द्रवता राधसा पप्रथश्च।

स्वर्यवो मतिभिस्तुभ्यं विप्रा इन्द्राय वाहः कुशिकासो अक्रन्॥२०॥

इमम्। कामम्। मन्दय। गोभिः। अश्वैः। चन्द्रऽवता। राधसा। पप्रथः। च। स्वःऽयवः। मतिऽभिः। तुभ्यम्। विप्राः। इन्द्राय। वाहः। कुशिकासः। अक्रन्॥२०॥

पदार्थः-(**इमम्**) प्रत्यक्षतया वर्त्तमानम् (**कामम्**) अभिलाषाम् (**मन्दय**) हर्षय। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**गोभिः**) धेनुभिः (**अश्वैः**) तुरङ्गैः (**चन्द्रवता**) बहूनि चन्द्राणि सुवर्णादीनि धनानि विद्यन्ते यस्मिंस्तेन (**राधसा**) धनेन (**पप्रथः**) प्रख्यापय (**च**) (**स्वर्य्यवः**) य आत्मनः स्वः सुखं कामयन्ते ते (**मतिभिः**) मननशीलैर्मनुष्यैः सह (**तुभ्यम्**) (**विप्राः**) मेधाविनः (**इन्द्राय**) ऐश्वर्य्याय (**वाहः**) ये वहन्ति ते (**कुशिकासः**) शब्दायमानाः (**अक्रन्**) कुर्युः॥२०॥

अन्वयः-हे विद्वंस्त्वं गोभिरश्वैश्चन्द्रवता राधसा च पप्रथः। इमं कामं पूरय यथा स्वर्यवो वाहः कुशिकासो विप्रा मतिभिः सह तुभ्यमिन्द्रायैनं काममक्रंस्तांस्त्वं मन्दय॥२०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! ये युष्मानभिलाषापूरकत्वेनानन्दयेयुस्तान् भवन्तोऽप्यानन्दयन्तु॥२०॥

पदार्थः-हे विद्वान् पुरुष! आप (**गोभिः**) गौओं (**अश्वैः**) घोड़ों (**च**) और (**चन्द्रवता**) बहुत सुवर्ण आदि धन जिसमें हैं ऐसे (**राधसा**) धन से (**पप्रथः**) प्रसिद्ध करो (**इमम्**) प्रत्यक्ष भाव से वर्त्तमान इस (**कामम्**) अभिलाषा को पूर्ण करो, जैसे (**स्वर्य्यवः**) अपने सुख की कामना करनेवाले (**वाहः**) स्तुतियों के धारणकर्त्ता (**कुशिकासः**) शब्द करते हुए (**विप्राः**) बुद्धिमान् लोग (**मतिभिः**) विचारशील मनुष्यों के साथ (**तुभ्यम्**) आपके तथा (**इन्द्राय**) ऐश्वर्य्य के लिये उक्त अभिलाषा को (**अक्रन्**) करें उनको आप (**मन्दय**) आनन्दित कीजिये॥२०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो लोग आप लोगों को अभिलाषा पूर्ण करने में आनन्द देवें, उनको आप लोग भी आनन्द देवें॥२०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

आ नो गोत्रा दर्दृहि गोपते गाः समस्मभ्यं सनयो यन्तु वाजाः।
दिवक्षा असि वृषभ सत्यशुष्मोऽस्मभ्यं सु मघवन् बोधि गोदाः॥२१॥

आ। नः। गोत्रा। दर्दृहि। गोऽपते। गाः। सम्। अस्मभ्यम्। सनयः। यन्तु। वाजाः। दिवक्षाः। असि। वृषभ। सत्यऽशुष्मः। अस्मभ्यम्। सु। मघऽवन्। बोधि। गोऽदाः॥२१॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**नः**) अस्माकम् (**गोत्रा**) गोत्राणि कुलानि (**दर्दृहि**) अत्यन्तं वर्धय (**गोपते**) भूपते (**गाः**) पृथिवीः (**सम्**) (**अस्मभ्यम्**) (**सनयः**) सम्भक्तयः (**यन्तु**) प्राप्नुवन्तु (**वाजाः**)

विज्ञानान्नादिप्रदा व्यवहाराः **(दिवक्षाः)** ये दिवं विज्ञानप्रकाशादिकमक्षन्ति व्याप्नुवन्ति **(असि)** **(वृषभ)** बलिष्ठ **(सत्यशुष्मः)** सत्यबलः **(अस्मभ्यम्)** **(सु)** **(मघवन्)** बहुपूजितधनयुक्त **(बोधि)** **(गोदाः)** यो गा वाण्यादीन् ददाति सः॥२१॥

अन्वयः-हे वृषभ मघवन्! यतस्त्वं गोदाः सत्यशुष्मोऽसि तस्मादस्मभ्यं सुबोधि। हे गोपते! यथाऽस्मभ्यं सनयो दिवक्षा वाजाः संयन्तु तथैव त्वं नो गोत्रा गाश्चा दर्दृहि॥२१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यदि सत्याचारसुशीला विद्वांसो मनुष्याणामुपदेष्टारः स्युस्तर्हि तेषां किमपि सुखमप्राप्तमरक्षणीयं न स्यात्॥२१॥

पदार्थः-हे **(वृषभ)** बलवान् **(मघवन्)** बहुत श्रेष्ठ धन से युक्त! जिससे आप **(गोदाः)** वाणी आदि के दाता **(सत्यशुष्मः)** सत्य बलवाले **(असि)** हैं इससे **(अस्मभ्यम्)** हम लोगों के लिये **(सु)** **(बोधि)** आनन्ददायक हूजिये, हे **(गोपते)** भूमि के स्वामी! जैसे **(अस्मभ्यम्)** हम लोगों के लिये **(सनयः)** संविभाग करने के योग्य **(दिवक्षाः)** विज्ञानरूप प्रकाश आदि से पूरित **(वाजाः)** विज्ञान और अन्न आदि के प्राप्त करानेवाले व्यवहार **(सम्)** **(यन्तु)** प्राप्त होवें, वैसे ही आप **(नः)** हम लोगों के **(गोत्रा)** कुलों और **(गाः)** पृथिवियों को **(आ)** सब प्रकार **(दर्दृहि)** अत्यन्त वृद्धि कीजिये॥२१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो सत्य आचरण करनेवाले विद्वान् लोग मनुष्यों के उपदेशकारक होवें तो उन जनों का कुछ भी सुख अप्राप्त और अरक्ष्य न होवे॥२१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन्भरे नृतमं वाजसातौ।

शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम्॥२२॥४॥

शुनम्। हुवेम। मघऽवानम्। इन्द्रम्। अस्मिन्। भरे। नृऽतमम्। वाजऽसातौ। शृण्वन्तम्। उग्रम्। ऊतये। समत्ऽसु। घ्नन्तम्। वृत्राणि। सम्ऽजितम्। धनानाम्॥२२॥

पदार्थः-**(शुनम्)** ज्ञानवृद्धम् **(हुवेम)** प्रशंसेम **(मघवानम्)** बहुधनवन्तम् **(इन्द्रम्)** दातारम् **(अस्मिन्)** **(भरे)** बिभ्रति धनानि यस्मिंस्तस्मिन् **(नृतमम्)** अतिशयेन नृषूत्तमम् **(वाजसातौ)** वाजान् धनाद्यान् पदार्थान् सनन्ति विभजन्ति यस्मिंस्तस्मिन् संग्रामे। **वाजसातावित संग्रामनामसु पठितम्।** (निघं०२.१७) **(शृण्वन्तम्)** न्यायप्रदानार्थमर्थिप्रत्यर्थिवचनश्रोतारम् **(उग्रम्)** तेजस्विस्वभावम् **(ऊतये)** रक्षणाद्याय **(समत्सु)** संग्रामेषु **(घ्नन्तम्)** हिंसन्तम् **(वृत्राणि)** आवरका घना इव शत्रुसैन्यानि **(संजितम्)** सम्यग्जयशीलम् **(धनानाम्)** श्रियाम्॥२२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यमस्मिन् भरे वाजसातौ शुनं मघवानं नृतमं शृण्वन्तमुग्रं समत्सु वृत्राणि घ्नन्तं धनानां संजितमिन्द्रं वयं हुवेम तं यूयमूतय आह्वयत॥२२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यूयं शरीरात्मबलाभ्यां प्रवृद्धमसंख्यधनप्रदं नरोत्तमं शत्रूणां विजेतारं धर्मिष्ठे साधुं दुष्टेष्वत्युग्रं पालकं स्वामिनं स्वोपरि मत्वा सततं सुखयतेति॥२२॥

अत्रेन्द्रविद्वत्कृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति त्रिंशत्तमं सूक्तं चतुर्थो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिसको **(अस्मिन्)** इस **(भरे)** संग्राम में कि जिसमें धनों को धारण करते और **(वाजसातौ)** धन आदि पदार्थों का विभाग करते हैं **(शुनम्)** ज्ञान से वृद्ध **(मघवानम्)** बहुत धन से युक्त **(नृतमम्)** अत्यन्त ही मनुष्यों में उत्तम **(शृण्वन्तम्)** सम्पूर्ण अर्थी अर्थात् मुद्दई और प्रत्यर्थी अर्थात् मुद्दाले के न्याय करने के लिये वचनों के श्रोता **(उग्रम्)** तेजःस्वभाववाले पुरुष को **(समत्सु)** संग्रामों में **(वृत्राणि)** घेरनेवाली मेघों के सदृश शत्रुओं की सेनाओं के **(घ्नन्तम्)** नाशकर्त्ता और **(धनानाम्)** लक्ष्मियों के **(संजितम्)** उत्तम प्रकार जीतने वा **(इन्द्रम्)** देनेवाले को हम लोग **(हुवेम)** प्रशंसा करें, उसका आप लोग भी **(ऊतये)** रक्षा आदि के लिये आह्वान करें॥२२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! आप लोग शरीर और आत्मबल से बड़े असंख्य धन के देने और मनुष्यों में उत्तम शत्रुओं के जीतनेवाले धर्मिष्ठ पुरुष में नम्र स्वभाव और दुष्ट पुरुषों में तीव्र स्वभावयुक्त पालनकर्त्ता स्वामी को अपने ऊपर नियत करके निरन्तर सुख को प्राप्त हूजिये॥२२॥

इस सूक्त में इन्द्र और विद्वान् के कृत्य का वर्णन होने से इस सूक्त में कहे अर्थ की पूर्व सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह तीसवां सूक्त और चौथा वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ द्वाविंशत्यृचस्यैकाऽधिकत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्रः कुशिको वा ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, १४, १६ विराट् पङ्क्तिः। ३, ६ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २, ५, ९, १५, १७-२० निचृत्त्रिष्टुप्। ४, ७, ८, १०, १२, २१, २२ त्रिष्टुप्। ११, १३ स्वराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ वह्निविषयमाह॥

अब तृतीय मण्डल में बाईस ऋचावाले ३१ वें सूक्त का प्रारम्भ है। उसके पहिले मन्त्र में अग्नि के गुणों का विषय कहा है॥

शासद्वह्निर्दुहितुर्नप्त्यं गाद् विद्वाँ ऋतस्य दीधितिं सपर्यन्।
पिता यत्र दुहितुः सेकमृञ्जन्त्सं शग्म्येन मनसा दधन्वे॥ १॥

शासत्। वह्निः। दुहितुः। नप्त्यम्। गात्। विद्वान्। ऋतस्य। दीधितिम्। सपर्यन्। पिता। यत्र। दुहितुः। सेकम्। ऋञ्जन्। सम्। शग्म्येन। मनसा। दधन्वे॥ १॥

पदार्थः-(**शासत्**) शिष्यात् (**वह्निः**) वोढा (**दुहितुः**) कन्यायाः (**नप्त्यम्**) नप्तरि भवम्। अत्र **छान्दसो वर्णलोपो वेति** रलोपः। (**गात्**) प्राप्नुयात् (**विद्वान्**) यो वेदितव्यं वेत्ति (**ऋतस्य**) सत्यस्य (**दीधितिम्**) धर्तारम् (**सपर्यन्**) सेवमानः (**पिता**) जनकः (**यत्र**) यस्मिन् व्यवहारे (**दुहितुः**) दूरे हितायाः कन्यायाः (**सेकम्**) सेचनम् (**ऋञ्जन्**) संसाध्नुवन् (**सम्**) (**शग्म्येन**) शग्मेषु सुखेषु भवेन। **शग्ममिति सुखनामसु पठितम्।** (निघं०३.६) (**मनसा**) अन्तःकरणेन (**दधन्वे**) प्रीणाति॥१॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यत्र पिता वह्निर्दुहितुः सेकमृञ्जन् गात्तत्र विद्वानृतस्य दीधितिं सपर्यन् दुहितुर्नप्त्यं शासदतः शग्म्येन मनसा संदधन्वे॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा पितुः सकाशात् कन्योत्पद्यते तथैव सूर्य्यादुषा उत्पद्यते यथा पतिर्भार्यायां गर्भं दधाति तथैव कन्यावद्वर्त्तमानायामुषसि सूर्यः किरणाख्यं वीर्य्यं दधाति तेन दिवसरूपमपत्यमुत्पद्यते॥१॥

पदार्थः-हे विद्वान् पुरुष! (**यत्र**) जिस व्यवहार में (**पिता**) उत्पन्नकर्त्ता (**वह्निः**) वाहन करने अर्थात् व्यवहार में चलानेवाला (**दुहितुः**) कन्या के (**सेकम्**) सेचन को (**ऋञ्जन्**) सिद्ध करता हुआ (**गात्**) प्राप्त होवे, उस व्यवहार में (**विद्वान्**) जानने योग्य व्यवहार का ज्ञाता (**ऋतस्य**) सत्य के (**दीधितिम्**) धारणकर्त्ता की (**सपर्यन्**) सेवा करता हुआ (**दुहितुः**) दूर में हितकारिणी कन्या के (**नप्त्यम्**) नाती में उत्पन्न हुए को (**शासत्**) शिक्षा देवे, इससे (**शग्म्येन**) सुखों में वर्त्तमान (**मनसा**) अन्तःकरण से (**सम्, दधन्वे**) सम्यक् प्रसन्न होता है॥१॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे पिता के समीप से कन्या उत्पन्न होती है, वैसे ही सूर्य्य से प्रातःकाल की वेला प्रकट होती है। जैसे पति अपनी स्त्री में गर्भ को धारण करता है, वैसे कन्या के सदृश वर्त्तमान

प्रात:काल की वेला में सूर्य्य किरणरूप वीर्य्य को धारण करता है, उससे दिवसरूप पुत्र उत्पन्न होता है॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

न जामये तान्वो रिक्थमारैक् चकार गर्भं सनितुर्निधानम्।
यदी मातरो जनयन्त वह्निमन्यः कर्ता सुकृतोरन्य ऋन्धन्॥२॥

न। जामये। तान्वः। रिक्थम्। अरैक्। चकार। गर्भम्। सनितुः। निऽधानम्। यदि। मातरः। जनयन्त। वह्निम्। अन्यः। कर्ता। सुऽकृतोः। अन्यः। ऋन्धन्॥२॥

पदार्थः-(न) (**जामये**) जामात्रे (**तान्वः**) तन्वः। अत्रा**न्येषामपी**त्याद्यचो दीर्घः। (**रिक्थम्**) धनम्। **रिक्थमिति धननामसु पठितम्।** (निघं०२.१०) (**आरैक्**) ऋणक्ति (**चकार**) (**गर्भम्**) (**सनितुः**) विभाजकस्य (**निधानम्**) नितरां दधाति यस्मिँस्तम् (**यदि**)। अत्र **निपातस्य** चेति दीर्घः। (**मातरः**) मान्यस्य कर्त्र्यः (**जनयन्त**) जनयन्ति (**वह्निम्**) प्रापकम् (**अन्यः**) (**कर्त्ता**) (**सुकृतोः**) यौ शोभनं कुरुतस्तयोः (**अन्यः**) (**ऋन्धन्**) साध्नुवन्॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो जामये तान्वो रिक्थं नारैक् सनितुर्निधानं गर्भं चकार अन्यो वह्निमिव यद्यन्य ऋन्धन्त्सुकृतोः कर्त्ता भवेत्तं मातरो जनयन्त॥२॥

भावार्थः-यथा माताऽपत्यानि जनयित्वा वर्धयति तथैव वह्निं जनयित्वा वर्धयेत् तथैव जायापत्यानि वर्धयेत्॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**जामये**) जामाता के लिये (**तान्वः**) सूक्ष्म (**रिक्थम्**) धन को (**न**) नहीं (**आरैक्**) देता जिसने (**सनितुः**) विभागकर्त्ता के (**निधानम्**) निरन्तर धारण करता है, उस (**गर्भम्**) गर्भ को (**चकार**) किया (**अन्यः**) अन्य जन (**वह्निम्**) पहुँचानेवाले को जैसे वैसे (**यदि**) जो (**अन्यः**) अन्य (**ऋन्धन्**) सिद्ध करता हुआ (**सुकृतोः**) उत्तम कर्मकारियों का (**कर्त्ता**) कर्त्ता पुरुष है, उसको (**मातरः**) आदर की करनेवाली (**जनयन्त**) उत्पन्न करती है॥२॥

भावार्थः-जैसे माता सन्तानों को उत्पन्न कर उनकी वृद्धि करती है, वैसे ही अग्नि को उत्पन्न करके उसकी वृद्धि करे और वैसे ही प्रत्येक स्त्री सन्तानों की वृद्धि करे॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अग्निर्जज्ञे जुह्वा३ रेजमानो महस्पुत्राँ अरुषस्य प्रयक्षे।
महान् गर्भो मह्या जातमेषां मही प्रवृद्धर्यश्वस्य यज्ञैः॥३॥

अग्निः। जज्ञे। जुह्वा। रेजमानः। महः। पुत्रान्। अरुषस्य। प्रऽयक्षे। महान्। गर्भः। महि। आ। जातम्। एषाम्। मही। प्रऽवृत्। हरिऽअश्वस्य। यज्ञैः॥३॥

पदार्थः-(**अग्निः**) (**जज्ञे**) जायते (**जुह्वा**) साधनोपसाधनयुक्तया क्रियया (**रेजमानः**) कम्पमानः (**महः**) महतः (**पुत्रान्**) सन्तानान् (**अरुषस्य**) अहिंसकस्य (**प्रयक्षे**) प्रकर्षेण यष्टुं सङ्गन्तुम् (**महान्**) महागुणविशिष्टः (**गर्भः**) स्तोतुमर्हः (**महि**) महान्तम् (**आ**) समन्तात् (**जातम्**) (**एषाम्**) (**मही**) महती वाक् (**प्रवृत्**) यः प्रवर्त्तते सः (**हर्यश्वस्य**) हरयो हरणशीला अश्वा यस्य (**यज्ञैः**) सङ्गतैः कर्मभिः॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथेन्धनेन जुह्वाऽग्निर्जज्ञे तथा रेजमानो महान् गर्भो जायते। अरुषस्य महः पुत्रान् प्रयक्षे जज्ञे प्रवृत्सन् हर्यश्वस्य यज्ञैर्महीर्जज्ञ एषां मह्या जातं यूयं विजानीत॥३॥

भावार्थः-यथा शमीगर्भाद्वह्निः प्रादुर्भवन् महान्ति कार्य्याणि करोति तथैव सत्पुत्राः सर्वाण्युत्तमानि कर्माणि कुर्वन्ति तस्माद् ब्रह्मचर्यादिसंस्कारेणैव सन्तानाः सत्कर्त्तव्याः॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे इन्धन और (**जुह्वा**) साधन और उपसाधनों से युक्त क्रिया से (**अग्निः**) अग्नि (**जज्ञे**) उत्पन्न होता है, वैसे (**रेजमानः**) कंपता हुआ (**महान्**) बड़े उत्तम गुणों से युक्त (**गर्भः**) स्तुति करने योग्य पदार्थ उत्पन्न होता है और (**अरुषस्य**) नहीं हिंसा करनेवाले के (**महः**) श्रेष्ठ (**पुत्रान्**) सन्तानों के (**प्रयक्षे**) अत्यन्त यजन अर्थात् सङ्गम करने को उत्पन्न होता है (**प्रवृत्**) प्रवृत्त होनेवाला (**हर्यश्वस्य**) जिसके हरणशील घोड़े उसके (**यज्ञैः**) योग्य कर्मों से (**मही**) श्रेष्ठ वाणी उत्पन्न होती है (**एषाम्**) इन सबों के (**महि**) बड़े (**आ, जातम्**) अच्छे प्रकार उत्पन्न कर्म को तुम जानो॥३॥

भावार्थः-जैसे शमी नामक काष्ठ के मध्य से अग्नि प्रकट होकर बड़े-बड़े कार्य्यों को सिद्ध करता है, वैसे ही सुपात्र पुत्र सम्पूर्ण उत्तम कर्मों को करते हैं, इससे ब्रह्मचर्य्य आदि संस्कारों के ही द्वारा सन्तानों को श्रेष्ठ बनाना चाहिये॥३॥

पुनः सूर्यरूपोऽग्निः कीदृश इत्याह॥

फिर सूर्यरूप अग्नि कैसा है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अभि जैत्रीरसचन्त स्पृधानं महि ज्योतिस्तमसो निरजानन्।
तं जानतीः प्रत्युदायन्नुषासः पतिर्गवामभवदेक इन्द्रः॥४॥

अभि। जैत्रीः। असचन्त। स्पृधानम्। महि। ज्योतिः। तमसः। निः। अजानन्। तम्। जानतीः। प्रति। उत्। आयन्। उषसः। पतिः। गवाम्। अभवत्। एकः। इन्द्रः॥४॥

पदार्थः-(**अभि**) आभिमुख्ये (**जैत्रीः**) जयशीलाः (**असचन्त**) समवयन्ति (**स्पृधानम्**) स्पर्द्धमानम् (**महि**) महत् (**ज्योतिः**) प्रकाशः (**तमसः**) अन्धकारस्य (**निः**) नितराम् (**अजानन्**) जानीयुः (**तम्**)

(जानती:) ज्ञानवत्य: **(प्रति) (उत्) (आयन्)** आयान्त्युद्यन्ति प्रति यन्ति वा **(उषास:)** प्रभातान् **(पति:)** स्वामी **(गवाम्)** किरणानाम् **(अभवत्)** भवेत् **(एक:)** असहाय: **(इन्द्र:)**॥४॥

अन्वय:-ये जैत्रीरभ्यसचन्त तमसो महि ज्योति: स्पृधानं निरजानन् तं जानतीरुषास इव प्रत्युदायन् य एक इन्द्रो गवां पतिरभवत्तमभ्यसचन्त॥४॥

भावार्थ:-यथाऽन्धकाराज्ज्योति: पृथग्भूत्वाऽन्धकारं निवर्त्तयति तथा विद्याऽविद्यां हन्ति यथैक: सूर्य्य: सर्वेषां किरणानां समत्वेन पालकोऽस्ति तथैव समभावमाश्रित्य राजा प्रजा: पालयेत्॥४॥

पदार्थ:-जो **(जैत्री:)** जोंतनेवाले **(अभि)** सम्मुख **(असचन्त)** अनुसार चलते हैं **(तमस:)** अन्धकार के **(महि)** बड़े **(ज्योति:)** प्रकाशरूप **(स्पृधानम्)** पदार्थों के साथ किरणों के सङ्घर्ष करनेवाले सूर्य को **(नि:)** निरन्तर **(अजानन्)** जानें **(तम्)** उसको **(जानती:)** जाननेवाली **(उषास:)** प्रात:काल की वेलाओं के तुल्य **(प्रति) (उत्) (आयन्)** उद्योग करें वा प्राप्त हों जो **(एक:)** सहायरहित **(इन्द्र:)** सूर्य्य **(गवाम्)** किरणों का **(पति:)** स्वामी **(अभवत्)** होवे, उसके अनुसार चलते हैं॥४॥

भावार्थ:-जैसे अन्धकार से ज्योति पृथक् होकर अन्धकार को दूर करती है, वैसे ही अविद्या से पृथक् हुई विद्या अविद्या का नाश करती है; और जैसे एक सूर्य्य सम्पूर्ण किरणों का एक साथ ही पालन करता है, वैसे ही समभाव का आश्रय करके राजा प्रजाओं का पालन करे॥४॥

अथ विद्वत्सङ्गेन किं जायत इत्याह॥

अब विद्वान् के सङ्ग से क्या होता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

वी॒ळौ स॒तीर॒भि धीरा॑ अतृन्दन् प्रा॒चाहि॑न्व॒न् मन॑सा स॒प्त विप्रा॑:।

विश्वा॑मविन्दन् प॒थ्या॑मृ॒तस्य॑ प्रजा॒नन्नित्ता नम॒सा वि॑वेश॥५॥५॥

वी॒ळौ। स॒ती:। अ॒भि। धीरा॑:। अ॒तृ॒न्द॒न्। प्रा॒चा। अ॒हि॒न्व॒न्। मन॑सा। स॒प्त। विप्रा॑:। विश्वा॑म्। अ॒वि॒न्द॒न्। प॒थ्या॑म्। ऋ॒तस्य॑। प्र॒ऽजा॒नन्। इत्। ता। नम॑सा। आ। वि॒वे॒श॥५॥

पदार्थ:-**(वीळौ)** प्रशंसनीये बले **(सती:)** विद्यमाना: प्रकृती: **(अभि) (धीरा:)** ध्यानवन्त: **(अतृन्दन्)** हिंस्यु: **(प्राचा)** प्रास्तेन **(अहिन्वन्)** वर्धयन्ति **(मनसा)** अन्त:करणेन **(सप्त)** पञ्च प्राणा बुद्धिर्मनश्च **(विप्रा:)** मेधाविन: **(विश्वाम्)** सर्वाम् **(अविन्दन्)** लभन्ते **(पथ्याम्)** पथि साध्वीं क्रियाम् **(ऋतस्य)** सत्यस्य **(प्रजानन्) (इत्)** एव **(तानि) (नमसा) (आ) (विवेश)** आविश॥५॥

अन्वय:-हे मनुष्या! यथा धीरा विप्रा: प्राचा मनसा सप्त सतीरभ्यहिन्वननृतमतृन्दन्नृतस्य वीळौ विश्वां पथ्यामविन्दन् तथा त्वं ता नमसा प्रजानन्निदा विवेश॥५॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। यथा युक्त्या सेवितानि प्राणान्त:करणानि दु:खत्यागाय सुखलाभाय च प्रभवन्ति तथैव विद्वत्सङ्गादीनि कर्म्माणि दु:खानि निर्वार्य सुखानि जनयन्ति॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(धीराः)** उत्तम विचारयुक्त **(विप्राः)** बुद्धिमान् लोग **(प्राचा)** प्राचीन **(मनसा)** अन्तःकरण से **(सप्त)** पाँच प्राण, बुद्धि और मन तथा **(सतीः)** वर्त्तमान प्रकृतियों को **(अभि)** **(अहिन्वन्)** बढ़ाते हैं और मिथ्या का **(अतृन्दन्)** नाश करें तथा **(ऋतस्य)** सत्य के **(वीळौ)** प्रशंसनीय बल में **(विश्वाम्)** सम्पूर्ण **(पथ्याम्)** मर्य्यादा के योग्य क्रिया को **(अविन्दन्)** प्राप्त होते हैं, वैसे आप **(ताः)** उनको **(नमसा)** स्तुति से **(प्रजानन्)** जानते हुए **(इत्)** ही **(आ)** **(विवेश)** शुभ कर्म में प्रवेश कीजिये॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे युक्ति से सेवन किये हुए प्राण और अन्तःकरण दुःख के त्याग और सुख के लाभ के लिये समर्थ होते हैं, वैसे ही विद्वानों के सङ्ग आदि कर्म दुःखों को निवृत्त करा के सुखों को उत्पन्न कराते हैं॥५॥

का स्त्री सुखदात्री भवतीत्याह॥

कौन स्त्री सुख देनेवाली होती है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

विदद्यदी सरमा रुग्णमद्रेर्महि पाथः पूर्व्यं सध्र्यक्कः।

अग्रं नयत्सुपद्यक्षराणामच्छा रवं प्रथमा जानती गात्॥६॥

विदत्। यदि। सरमा। रुग्णम्। अद्रेः। महि। पाथः। पूर्व्यम्। सध्र्यक्। कः। इति कः। अग्रम्। नयत्। सुऽपदी। अक्षराणाम्। अच्छ। रवम्। प्रथमा। जानती। गात्॥६॥

पदार्थः-**(विदत्)** लभेत **(यदि)**। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(सरमा)** या सरान् गतिमतः पदार्थान् मिनोति सा **(रुग्णम्)** रोगाविष्टम् **(अद्रेः)** मेघस्य **(महि)** महत् **(पाथः)** अन्नमुदकं वा **(पूर्व्यम्)** पूर्वैः कृतं निष्पादितम् **(सध्र्यक्)** यत्सहाञ्चति **(कः)** करोति **(अग्रम्)** **(नयत्)** नयति **(सुपदी)** शोभनाः पादा यस्याः सा सुपदी **(अक्षराणाम्)** वर्णानाम् **(अच्छ)** सम्यक्। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(रवम्)** शब्दम् **(प्रथमा)** आदिमा **(जानती)** **(गात्)** प्राप्नुयात्॥६॥

अन्वयः-हे विदुषि स्त्रि! यदि सुपदी भवती सरमा सत्यद्रेः सध्र्यक् पूर्व्यं महि पाथो विदद्रुग्णमौषधेन रोगं कोऽक्षराणामग्रं रवमच्छ नयत्प्रथमा जानती गात्तर्हि सर्वं सुखं प्राप्नुयात्॥६॥

भावार्थः-या स्त्री विद्युद्वद्व्याप्तविद्या संस्कारोपस्करादिकर्मसु विचक्षणा सुभाषिणी सरलस्वभावा स्यात् सा वृष्टिरिव सुखप्रदा भवति॥६॥

पदार्थः-हे बुद्धिमती स्त्री! **(यदि)** जो **(सुपदी)** उत्तम पादोंवाली आप **(सरमा)** चलनेवाले पदार्थों के मापनेवाली हुई **(अद्रेः)** मेघ के **(सध्र्यक्)** एक साथ प्रकट **(पूर्व्यम्)** प्राचीन जनों से किये गये **(महि)** बड़े **(पाथः)** अन्न वा जल को **(विदत्)** प्राप्त होवें **(रुग्णम्)** रोगों से घिरे हुए को औषध से

रोगरहित **(कः)** करती **(अक्षराणाम्)** अक्षरों के **(अग्रम्)** श्रेष्ठ **(रवम्)** शब्द को **(अच्छ)** उत्तम प्रकार **(नयत्)** प्राप्त करती है **(प्रथमा)** पहिली **(जानती)** जानती हुई **(गात्)** प्राप्त होवे तो सम्पूर्ण सुख को प्राप्त होवे॥६॥

भावार्थः-जो स्त्री बिजुली के सदृश विद्याओं में व्याप्त संस्कार और उपस्कार अर्थात् उद्योग आदि कर्म्मों में चतुर, उत्तम रीति से बोलने तथा नम्र स्वभाव रखनेवाली होवे, वह वृष्टि के सदृश सुख देनेवाली होती है॥६॥

पुनः कः पुमान् सुखदो भवतीत्याह॥

फिर कौन पुरुष सुख देनेवाला होता है, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अगच्छदु विप्रतमः सखीयन्नसूदयत्सुकृते गर्भमद्रिः।

ससान मर्यो युवभिर्मखस्यन्नथाभवदङ्गिराः सद्यो अर्चन्॥७॥

अगच्छत्। ऊम् इति। विप्रऽतमः। सखिऽयन्। असूदयत्। सुऽकृते। गर्भम्। अद्रिः। ससान। मर्यः। युवऽभिः। मखस्यन्। अथ। अभवत्। अङ्गिराः। सद्यः। अर्चन्॥७॥

पदार्थः-**(अगच्छत्)** प्राप्नुयात् (उ) वितर्के **(विप्रतमः)** अतिशयेन मेधावी **(सखीयन्)** आत्मनः सखायमिच्छन् **(असूदयत्)** सूदयत् क्षरयेत् **(सुकृते)** सुष्ठु कृतेऽनुष्ठिते **(गर्भम्)** गर्भमिव वर्त्तमानं जलसमुदायम् **(अद्रिः)** मेघः **(ससान)** सनति विभजति **(मर्यः)** मनुष्यः **(युवभिः)** प्राप्तयुवाऽवस्थैः **(मखस्यन्)** आत्मनो मखं यज्ञमिच्छन् **(अथ)** आनन्तर्ये **(अभवत्)** भवेत् **(अङ्गिराः)** अङ्गेषु रसवद्वर्त्तमानः **(सद्यः)** शीघ्रम् **(अर्चन्)** सत्कुर्वन्॥७॥

अन्वयः-यो मर्यो युवभिः सह वर्त्तमानो सखीयन् मखस्यन्नथाङ्गिराः सद्योऽर्चन् विप्रतमस्तां भार्य्यामगच्छत् सोऽद्रिर्गर्भमिव सुकृतेऽभवत् सत्याऽसत्ये ससान उ दुष्कृतमसूदयत्॥७॥

भावार्थः-यो ब्रह्मचर्येण विद्यासुशिक्षे सङ्गृह्य युवा सन् स्वतुल्यया कन्यया सह सुहृद्भावं प्रीतिं प्राप्य तां सत्कुर्वन्नुपयच्छेत् स मेघाज्जगदिव सर्वाणि सुखानि प्राप्नुयात्॥७॥

पदार्थः-जो **(मर्यः)** मनुष्य **(युवभिः)** युवावस्थापन्न पुरुषों के सहित वर्त्तमान **(सखीयन्)** मित्र को चाहता वा **(मखस्यन्)** आत्मसम्बन्धी यज्ञ करने की इच्छा करता हुआ **(अथ)** उसके अनन्तर **(अङ्गिराः)** शरीरों में रस के सदृश वर्त्तमान **(सद्यः)** शीघ्र **(अर्चन्)** सत्कार करता हुआ **(विप्रतमः)** अत्यन्त बुद्धिमान् पुरुष उस स्त्री के समीप **(अगच्छत्)** प्राप्त होवे, वह पुरुष **(अद्रिः)** मेघ जैसे **(गर्भम्)** गर्भ को वैसे **(सुकृते)** उत्तम कर्म के करने में उद्यत **(अभवत्)** होवे तथा सत्यासत्य का **(ससान)** विभाग करता है **(उ)** और भी निकृष्ट कर्म को **(असूदयत्)** नाश करे॥७॥

भावार्थः-जो ब्रह्मचर्य्य से विद्या और उत्तम शिक्षा को ग्रहण करके युवा पुरुष अपने तुल्य कन्या

के साथ सुहृद्भाव और प्रीति को प्राप्त होके उसको सत्कार करता हुआ विवाहे, वह पुरुष जैसे मेघ से संसार सुख को प्राप्त होता है, वैसे सुख को प्राप्त होवे॥७॥

पुनः के सुखिनो भवन्तीत्याह॥

फिर कौन सुखी होते हैं, विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सतःसतः प्रतिमानं पुरोभूर्विश्वा वेद जनिमा हन्ति शुष्णम्।

प्र णो दिवः पदवीर्गव्युरर्चन्त्सखा सखीँरमुञ्चन्निरवद्यात्॥८॥

सतःऽसतः। प्रतिऽमानम्। पुरःऽभूः। विश्वा। वेद। जनिम। हन्ति। शुष्णम्। प्र। नः। दिवः। पदऽवीः। गव्युः। अर्चन्। सखा। सखीन्। अमुञ्चत्। निः। अवद्यात्॥८॥

पदार्थः-(**सतःसतः**) विद्यमानस्य विद्यमानस्य (**प्रतिमानम्**) परिमाणसाधकम् (**पुरोभूः**) यः पुरस्ताद्भावयति सः (**विश्वा**) सर्वाणि (**वेद**) जानाति (**जनिमा**) जन्मानि (**हन्ति**) (**शुष्णम्**) शोककरं दुःखम् (**प्र**) (**नः**) अस्माकम् (**दिवः**) प्रकाशस्य (**पदवीः**) प्रतिष्ठाः (**गव्युः**) आत्मनो गां वाणीमिच्छुः (**अर्चन्**) सत्कुर्वन् (**सखा**) सुहृत्सन् (**सखीन्**) सुहृदः (**अमुञ्चत्**) मुच्यात् (**निः**) (**अवद्यात्**) निन्द्यादधर्म्याचरणात्॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः पुरोभूः सतःसतः प्रतिमानं विश्वा जनिमा वेद शुष्णं हन्ति स गव्युर्नो दिवः पदवीः प्र यच्छेत् सखीनर्चन् सखा सन्नवद्यान्निरमुञ्चत् सोऽतुलं सुखमाप्नुयात्॥८॥

भावार्थः-त एव मनुष्या सुखिनो भवन्ति ये कार्य्यकारणरूपां सृष्टिं विदित्वा सर्वेषां सखायो भूत्वा सर्वान् पापाचरणात् पृथक्कृत्य धर्माचरणे प्रवर्त्तयेयुः। त एव सत्यसुहृदः सन्तीति॥८॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो पुरुष (**पुरोभूः**) पहिले से चिताता (**सतःसतः**) विद्यमान विद्यमान के (**प्रतिमानम्**) परिमाण के साधक को वा (**विश्वा**) सम्पूर्ण (**जनिमा**) उत्पन्न हुए पदार्थों को (**वेद**) जानता और (**शुष्णम्**) शोककारक दुःख को (**हन्ति**) नाश करता है वह (**गव्युः**) अपने को विद्या चाहनेवाला (**नः**) हम लोगों के (**दिवः**) प्रकाश की (**पदवीः**) प्रतिष्ठाओं को (**प्र**) प्राप्त करे (**सखीन्**) मित्रों का (**अर्चन्**) सत्कार करता हुआ (**सखा**) मित्र होकर (**अवद्यात्**) धर्मरहित आचरण से (**निः**) निरन्तर (**अमुञ्चत्**) पृथक् करे, वह अत्यन्त सुख को प्राप्त हो॥८॥

भावार्थः-वे ही मनुष्य सुखी होते हैं जो कार्य्यकारणरूप सृष्टि को जान और सम्पूर्ण जनों के मित्र हो सम्पूर्ण जनों को पाप के आचरण से पृथक् करके धर्म के आचरण में प्रवृत्त करें, वे ही सत्य मित्र हैं॥८॥

अथ मोक्षमिच्छुभिः किं कार्यमित्याह॥

अब मोक्ष की इच्छा करनेवालों को क्या करना चाहिये, इस विषय को
अगले मन्त्र में कहा है॥

नि गव्यता मनसा सेदुरर्कैः कृण्वानासो अमृतत्वाय गातुम्।
इदं चिन्नु सदनं भूर्येषां येन मासाँ असिषासन्नृतेन॥ ९॥

नि। गव्यता। मनसा। सेदुः। अर्कैः। कृण्वानासः। अमृतऽत्वाय। गातुम्। इदम्। चित्। नु। सदनम्। भूरि। एषाम्। येन। मासान्। असिसासन्। ऋतेन॥ ९॥

पदार्थः-(**नि**) नित्यम् (**गव्यता**) आत्मनो गौरिवाचरता (**मनसा**) अन्तःकरणेन (**सेदुः**) प्राप्नुयुः (**अर्कैः**) अर्चनीयैर्विद्वद्भिः सह (**कृण्वानासः**) कुर्वन्तः (**अमृतत्वाय**) अमृतस्य मोक्षस्य भावाय (**गातुम्**) प्रशंसितां भूमिम्। **गातुरिति पृथिवीनामसु पठितम्।** (निघं०१.१) (**इदम्**) (**चित्**) अपि (**नु**) सद्यः (**सदनम्**) सीदन्ति यत्र तत् (**भूरि**) बहु (**एषाम्**) वर्त्तमानानाम् (**येन**) (**मासान्**) चैत्रादीन् (**असिषासन्**) विभक्तुमिच्छन्तु (**ऋतेन**) सत्याचरणेन॥ ९॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा कृण्वानासो गव्यता मनसार्कैः सहाऽमृतत्वाय गातुं नि सेदुरिदं चिद्भूरि सदनं सेदुर्येनर्त्तेन मासानसिषासँस्तेनैषां कल्याणं नु जायते॥ ९॥

भावार्थः-यदि मनुष्या मोक्षमिच्छेयुस्तर्हि तैर्विद्वत्सङ्गधर्माऽनुष्ठानं कृत्वाऽधर्मत्यागं विधाय सद्योऽन्तःकरणात्मशुद्धिः सम्पादनीया॥ ९॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**कृण्वानासः**) करते हुए जन (**गव्यता**) अपनी वाणी के सदृश (**मनसा**) अन्तःकरण से (**अर्कैः**) सत्कार करने योग्य विद्वानों के साथ (**अमृतत्वाय**) मोक्ष के होने के लिये (**गातुम्**) प्रशंसायुक्त भूमि को (**नि, सेदुः**) प्राप्त होवें तथा (**इदम्**) इस (**चित्**) भी (**भूरि**) बहुत (**सदनम्**) प्राप्त होने योग्य स्थान को प्राप्त होवें (**येन**) जिस (**ऋतेन**) सत्य आचरण से (**मासान्**) चैत्र आदि महीनों के (**असिषासन्**) विभाग करने की इच्छा करें, उससे (**एषाम्**) इन पुरुषों का कल्याण (**नु**) शीघ्र होता है॥ ९॥

भावार्थः-जो मनुष्य लोग मोक्ष की इच्छा करें तो विद्वानों का सङ्ग, धर्म का अनुष्ठान और अधर्म का त्याग करके शीघ्र ही अन्तःकरण और आत्मा की शुद्धि करें॥ ९॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् लोग क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

सम्पश्यमाना अमदन्नभि स्वं पयः प्रत्नस्य रेतसो दुघानाः।
वि रोदसी अतपद्घोष एषां जाते निःष्ठामदधुर्गोषु वीरान्॥ १०॥ ६॥

सम्ऽपश्यमानाः। अमदन्। अभि। स्वम्। पयः। प्रत्नस्य। रेतसः। दुघानाः। वि। रोदसी इति। अतपत्। घोषः। एषाम्। जाते। निःऽस्थाम्। अदधुः। गोषु। वीरान्॥ १०॥

पदार्थः-(**संपश्यमानाः**) सम्यक् प्रेक्षमाणाः (**अमदन्**) आनन्दन्ति (**अभि**) आभिमुख्ये (**स्वम्**) स्वकीयम् (**पयः**) दुग्धम् (**प्रत्नस्य**) प्राक्तनस्य (**रेतसः**) वीर्यस्य (**दुघानाः**) प्रपूरयन्तः (**वि**) (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**अतपत्**) तपति (**घोषः**) वाणी (**एषाम्**) विदुषाम् (**जाते**) (**निःष्ठाम्**) नितरां स्थितानाम् (**अदधुः**) दधीरन् (**गोषु**) पृथिव्यादिषु (**वीरान्**) प्राप्तशुभगुणान्॥ १०॥

अन्वयः-ये स्वं संपश्यमानाः प्रत्नस्य रेतसः पयो दुघाना अभ्यमदन्नेषां निःष्ठां घोषः सूर्यो रोदसी इव दुष्टान् व्यतपत् ते जातेऽस्मिञ्जगति गोषु वीरानदधुः॥ १०॥

भावार्थः-ये विचारशीला धार्मिका विद्वांसः स्वकीयं सनातनमात्मसामर्थ्यं वर्धयेयुः सर्वेभ्यः सत्याऽसत्ये उपदिश्य दुष्टतां निवार्य्य श्रेष्ठतां धारयेयुस्त एव शूरवीराः सन्तीति वेद्यम्॥ १०॥

पदार्थः-जो लोग (**स्वम्**) अपने को (**संपश्यमानाः**) उत्तम प्रकार देखते और (**प्रत्नस्य**) प्राचीन (**रेतसः**) वीर्य के (**पयः**) दुग्ध को (**दुघानाः**) पूर्ण करते हुए (**अभि**) सम्मुख (**अमदन्**) आनन्द करते हैं (**एषाम्**) इन (**निःष्ठाम्**) उत्तम प्रकार स्थित विद्वानों की (**घोषः**) वाणी सूर्य्य जैसे (**रोदसी**) अन्तरिक्ष-पृथिवी को वैसे दुष्ट पुरुषों को (**वि**) (**अतपत्**) तपाती हैं, वे पुरुष (**जाते**) उत्पन्न हुए इस संसार में (**गोषु**) पृथिवी आदिकों में (**वीरान्**) उत्तम गुणों से युक्त पुरुषों को (**अदधुः**) धारण किया करें॥ १०॥

भावार्थः-जो उत्तम विचार करनेवाले धार्मिक विद्वान् पुरुष अपने अनादि काल सिद्ध सामर्थ्य को बढ़ावें, सब लोगों के लिये सत्य और असत्य का उपदेश कर दुष्टता को दूर कर और श्रेष्ठता का धारण करें, वे ही शूरवीर होते हैं, यह जानना चाहिये॥ १०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

स जातेभिर्वृत्रहा सेदु हव्यैरुदुस्रिया असृजदिन्द्रो अर्कैः।
उरूच्यस्मै घृतवद्भरन्ती मधु स्वाद्म दुदुहे जेन्या गौः॥ ११॥

सः। जातेभिः। वृत्रऽहा। सः। इत्। ऊम् इति। हव्यैः। उत्। उस्रियाः। असृजत्। इन्द्रः। अर्कैः। उरूची। अस्मै। घृतऽवत्। भरन्ती। मधु। स्वाद्म। दुदुहे। जेन्या। गौः॥ ११॥

पदार्थः-(**सः**) (**जातेभिः**) उत्पन्नैः सह (**वृत्रहा**) मेघस्य हन्ता सूर्य्य इव (**सः**) (**इत्**) एव (**उ**) (**हव्यैः**) आदातुमर्हैः (**उत्**) (**उस्रियाः**) गावः किरणाः (**असृजत्**) सृजति (**इन्द्रः**) परमैश्वर्य्यहेतुः (**अर्कैः**) अर्चनीयैर्मनुष्यैः सह (**उरूची**) योरूणि बहून्यञ्चति सा (**अस्मै**) (**घृतवत्**) घृतमाज्यमुदकं वा प्रशस्तं

विद्यते यस्मिँस्तत् **(भरन्ती)** धरन्ती **(मधु)** मधुरगुणोपेतम् **(स्वाद्म)** स्वादिष्ठम् **(दुदुहे)** दुह्यते **(जेन्या)** जेतुं योग्या **(गौः)** पृथिवी॥११॥

अन्वयः-यो वृत्रहेन्द्र उस्त्रिया उदसृजदिवार्कैर्हव्यैर्जातेभिः सह पदार्थानसृजत् स इत्सुखमाप्नोति। या उरूची घृतवत्स्वाद्म मधु भरन्ती जेन्या गौरस्मै दुदुहे तां स उ विद्यात्॥११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्य्यः स्वप्रकाशेन सर्वानुत्पन्नान् सृष्टिपदार्थान् प्रकाशयति तथैव विद्वान् विज्ञानेन सर्वान् विदित्वा सर्वत्र प्रकाशयेत्॥११॥

पदार्थः-जो **(वृत्रहा)** मेघ के नाशकर्त्ता सूर्य्य के सदृश **(इन्द्रः)** अति श्रेष्ठ ऐश्वर्य्य का कारण **(उस्त्रियाः)** वाणियों को किरणों के सदृश **(उत्, असृजत्)** उत्पन्न करता है, **(अर्कैः)** आदर करने योग्य मनुष्यों **(हव्यैः)** ग्रहण करने के योग्य पदार्थों और **(जातेभिः)** उत्पन्न हुए व्यवहारों के साथ पदार्थों को **(असृजत्)** उत्पन्न करता है **(स, इत्)** वही सुख को प्राप्त होता है, जो **(उरूची)** बहुतों का सत्कार करती **(घृतवत्)** घृत वा जल उत्तमतायुक्त **(स्वाद्म)** स्वादिष्ठ **(मधु)** मीठे गुण से युक्त पदार्थ को **(भरन्ती)** धारण करती हुई **(जेन्या)** जीतने योग्य **(गौः)** पृथिवी **(अस्मै)** उस ऐश्वर्य्य के लिये **(दुदुहे)** दुही जाती है, उसको वह पुरुष **(उ)** ही जानें॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य अपने प्रकाश से सम्पूर्ण उत्पन्न हुए सृष्टि के पदार्थों को प्रकाश करता है, वैसे ही विद्वान् पुरुष विज्ञान से सम्पूर्ण पदार्थों को जान कर उसका सर्वत्र प्रकाश करे॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

पित्रे चिच्चक्रुः सदनं समस्मै महि त्विषीमत्सुकृतो वि हि ख्यन्।
विष्कभ्नन्तः स्कम्भनेना जनित्री आसीना ऊर्ध्वं रभसं वि मिन्वन्॥१२॥

पित्रे। चित्। चक्रुः। सदनम्। सम्। अस्मै। महि। त्विषिऽमत्। सुऽकृतः। वि। हि। ख्यन्। विऽस्कभ्नन्तः। स्कम्भनेन। जनित्री इति। आसीनाः। ऊर्ध्वम्। रभसम्। वि। मिन्वन्॥१२॥

पदार्थः-**(पित्रे)** पालकाय **(चित्)** अपि **(चक्रुः)** कुर्य्युः **(सदनम्)** स्थानम् **(सम्)** **(अस्मै)** **(महि)** महत् **(त्विषीमत्)** बह्व्यस्त्विषयो दीप्तयो विद्यन्ते यस्मिँस्तत्। अत्राऽ**न्येषामपी**ति दीर्घः। **(सुकृतः)** ये शोभनानि धर्म्याणि कर्माणि कुर्वन्ति ते **(वि)** **(हि)** यतः **(ख्यन्)** प्रकाशयन्ति **(विष्कभ्नन्तः)** ये विशेषेण स्कभ्नन्ति धरन्ति ते **(स्कम्भनेन)** धारणेन। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(जनित्री)** मातृवत्सर्वेषां महत्तत्त्वादीनामुत्पादिका **(आसीनाः)** स्थिराः **(ऊर्ध्वम्)** **(रभसम्)** वेगम् **(वि)** **(मिन्वन्)** विशेषेण प्रक्षिपन्ति॥१२॥

अन्वयः-हे सुकृतो विष्कभ्नन्तो महत्तत्वादीनां जनित्री प्रकृतिरिवासीनाः स्कम्भनेनोर्ध्वं रभसं वि मिन्वन् विद्यां विख्यन् हि चिदप्यस्मै पित्रे त्विषीमन्महि सदनं संश्चक्रुस्ते कृतकृत्या विद्वांसः स्युः॥१२॥

भावार्थः-यथा विभ्व्याः प्रकृतेः सकाशान्महत्तत्त्वादीनि निर्म्माय जगत्सर्वं जगदीश्वरो विदधाति तथैव विद्वांसः पितृवद्वर्त्तमानाः सन्तः सर्वार्थं सुखं विदधति पदार्थविद्यां साक्षात् कृत्योपदिशन्ति च॥१२॥

पदार्थः-जो **(सुकृतः)** उत्तम धर्म सम्बन्धी कर्म करने और **(विष्कभ्नन्तः)** विशेष करके धारण करनेवाले महत्तत्त्व अर्थात् बुद्धि आदि की **(जनित्री)** उत्पन्न करनेवाली प्रकृति के सदृश **(आसीनाः)** स्थिर **(स्कम्भनेन)** धारण करने से **(ऊर्ध्वम्)** ऊँचे **(रभसम्)** वेग को **(वि)** **(मिन्वन्)** विशेष करके फेंकते और विद्या को **(वि)** **(ख्यन्)** प्रकाश करते वा **(हि)** जिस कारण **(चित्)** ही **(अस्मै)** इस **(पित्रे)** पालन करनेवाले के लिये **(त्विषीमत्)** बहुत कान्तियों से युक्त **(महि)** बड़े **(सदनम्)** स्थान को **(सम्)** **(चक्रुः)** सम्पन्न करें, वे कृतकृत्य विद्वान् होवें॥१२॥

भावार्थः-जैसे व्यापक प्रकृति के द्वारा महत्तत्त्व आदि को रचकर सम्पूर्ण जगत् को ईश्वर रचता है, वैसे ही विद्वान् जन पिता के सदृश वर्त्तमान होकर सम्पूर्ण जनों के लिये सुख धारण करते और पदार्थविद्या का प्रत्यक्ष अभ्यास करके शिक्षा देते हैं॥१२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

मही यदि धिषणा शिश्नथे धात् सद्योवृधं विभ्वं१ रोदस्योः।

गिरो यस्मिन्ननवद्याः समीचीर्विश्वा इन्द्राय तविषीरनुत्ताः॥१३॥

मही। यदि। धिषणा। शिश्नथे। धात्। सद्यःऽवृधम्। विऽभ्वम्। रोदस्योः। गिरः। यस्मिन्। अनवद्याः। सम्ऽईचीः। विश्वाः। इन्द्राय। तविषीः। अनुत्ताः॥१३॥

पदार्थः-**(मही)** अतीव सत्कर्त्तव्या **(यदि)** **(धिषणा)** प्रगल्भा वाक् **(शिश्नथे)** श्नथति हिनस्ति। अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम्। **(धात्)** दधाति **(सद्योवृधम्)** यः सद्यो वर्धयति तम् **(विभ्वम्)** व्यापकम् **(रोदस्योः)** द्यावापृथिव्योः **(गिरः)** वाण्यः **(यस्मिन्)** **(अनवद्याः)** अनिन्द्याः **(समीचीः)** याः समानं सत्यमञ्चन्ति ताः **(विश्वाः)** अखिलाः **(इन्द्राय)** परमैश्वर्य्याय **(तविषीः)** बलयुक्ताः **(अनुत्ताः)** आनुकूल्येन धृताः॥१३॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! भवद्भिर्यदि मही धिषणा वाग्रोदस्योर्मध्ये सद्योवृधं विभ्वं धात्तर्हीयमविद्यां शिश्नथे एषा संग्राह्या यस्मिन्ननवद्याः समीचीस्तविषीरनुत्ता विश्वा गिर इन्द्राय प्रभवेयुस्स व्यवहारः सदा सेवनीयः॥१३॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! विविधविद्यायुक्ता वाचो धृत्वा विभुं परमात्मान ज्ञातुमिच्छेयुस्ते परमैश्वर्यं लभेरन्॥१३॥

पदार्थः-हे विद्वान जनो! आप लोगों से **(यदि)** जो **(मही)** अत्यन्त सत्कार करने योग्य **(धिषणा)** प्रगल्भ अर्थात् नहीं रुकनेवाली वाणी **(रोदस्योः)** अन्तरिक्ष और पृथिवी के मध्य में **(सद्योवृधम्)** शीघ्र वृद्धिकारक **(विभ्वम्)** व्यापक को **(धात्)** धारण करती है तो इस अविद्या का **(शिश्नथे)** नाश करती है [वह ग्रहण करने योग्य है।] **(यस्मिन्)** जिसमें **(अनवद्याः)** निन्दारहित **(समीचीः)** सत्य को धारण करनेवाली **(तविषीः)** बलयुक्त **(अनुत्ताः)** अनुकूलता से धारण की गई **(विश्वाः)** सम्पूर्ण **(गिरः)** वाणियाँ **(इन्द्राय)** परम ऐश्वर्य के लिये समर्थ होवें, वह व्यवहार सदा सेवन करने योग्य है॥१३॥

भावार्थः-जो विद्वान् लोग अनेक प्रकार की विद्याओं से युक्त वाणियों को धारण करके व्यापक परमात्मा के जानने की इच्छा करें, वे बड़े ऐश्वर्य को प्राप्त होवें॥१३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

मह्या ते सख्यं वश्मि शक्तीरा वृत्रघ्ने नियुतो यन्ति पूर्वीः।

महि स्तोत्रमव आगन्म सूरेरस्माकं सु मघवन्बोधि गोपाः॥१४॥

महि। आ। ते। सख्यम्। वश्मि। शक्तीः। आ। वृत्रऽघ्ने। निऽयुतः। यन्ति। पूर्वीः। महि। स्तोत्रम्। अवः। आ। अगन्म। सूरेः। अस्माकम्। सु। मघऽवन्। बोधि। गोपाः॥१४॥

पदार्थः-**(महि)** महत्पूजनीयम् **(आ)** **(ते)** तव **(सख्यम्)** मित्रस्य भावम् **(वश्मि)** कामये **(शक्तीः)** सामर्थ्यानि **(आ)** **(वृत्रघ्ने)** यः सूर्य्यो मेघं वृत्रं हन्ति तद्वद्वर्त्तमानाय **(नियुतः)** निश्चिताः **(यन्ति)** प्राप्नुवन्ति **(पूर्वीः)** प्राचीनाः सनातन्यः **(महि)** महत् **(स्तोत्रम्)** स्तोतुमर्हम् **(अवः)** रक्षणादिकम् **(आ)** **(अगन्म)** प्राप्नुयाम **(सूरेः)** परमविदुषः **(अस्माकम्)** [अस्माकं] मध्ये वर्त्तमानस्य **(सु)** शोभने **(मघवन्)** परमपूजितधनयुक्त **(बोधि)** बुध्यस्व **(गोपाः)** रक्षकः॥१४॥

अन्वयः-हे मघवन्नहं ते महि सख्यमा वश्मि विद्वांसो यस्मै वृत्रघ्न इव वर्त्तमानाय तुभ्यं पूर्वीर्नियुतः शक्तीरा यन्ति तस्यास्माकं मध्ये वर्त्तमानस्य सूरेस्तव सकाशान्महि स्तोत्रमवो वयमागन्म त्वमस्माकं गोपाः सन् सु बोधि॥१४॥

भावार्थः-मनुष्यैर्विद्वद्भिः सह मैत्रीं विधाय सामर्थ्यं पूर्णं कृत्वा न्यायेन सर्वान् संरक्ष्य सूर्य्यस्य प्रकाश इव जगति विद्याबोधः प्रकाशनीयः॥१४॥

पदार्थः-हे **(मघवन्)** अत्यन्त श्रेष्ठ धनयुक्त पुरुष! मैं **(ते)** आपके **(महि)** अति आदर करने योग्य **(सख्यम्)** मित्रभाव की **(आ, वश्मि)** अच्छी कामना करता हूँ, विद्वान् जन जिस **(वृत्रघ्ने)** मेघ के

नाशकर्त्ता सूर्य्य के तुल्य वर्त्तमान आपके लिये **(पूर्वीः)** अनादि काल से सिद्ध **(नियुतः)** निश्चित **(शक्तीः)** सामर्थ्यों को **(आ)** **(यन्ति)** प्राप्त होते हैं उस **(अस्माकम्)** हम लोगों के मध्य में वर्त्तमान **(सूरेः)** परमोत्तम विद्वान् आपके समीप से **(महि)** बड़े **(स्तोत्रम्)** स्तुति करने योग्य **(अवः)** रक्षा आदि को हम लोग **(आ, अगन्म)** प्राप्त होवें। आप हम लोगों की **(गोपाः)** रक्षा करते हुए **(सु)** **(बोधि)** जानिये॥१४॥

भावार्थः-मनुष्य लोगों को चाहिये कि विद्वान् जनों के साथ मित्रता कर, सामर्थ्य पूर्ण कर और न्याय से सम्पूर्ण जनों की रक्षा करके सूर्य्य के प्रकाश के सदृश संसार में विद्या के बोध का प्रकाश करें॥१४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

महि क्षेत्रं पुरु श्चन्द्रं विविद्वानादित् सखिभ्यश्चरथं समैरत्।

इन्द्रो नृभिरजनद् दीद्यानः साकं सूर्यमुषसं गातुमग्निम्॥१५॥७॥

महि। क्षेत्रम्। पुरु। चन्द्रम्। विविद्वान्। आत्। इत्। सखिऽभ्यः। चरथम्। सम्। ऐरत्। इन्द्रः। नृऽभिः। अजनत्। दीद्यानः। साकम्। सूर्यम्। उषसम्। गातुम्। अग्निम्॥१५॥

पदार्थः-**(महि)** महत् **(क्षेत्रम्)** क्षियन्ति निवसन्ति पदार्था यस्मिंस्तत् **(पुरु)** बहु **(चन्द्रम्)** सुवर्णम्। अत्र **ह्रस्वाच्चन्द्रोत्तरपदे मन्त्र** इति सुडागमः। **(विविद्वान्)** वेत्ता **(आत्)** **(इत्)** एव **(सखिभ्यः)** मित्रेभ्यः **(चरथम्)** अगमनं[१] विज्ञानं वा **(सम्)** सम्यक् **(ऐरत्)** प्रेरयेत्। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदं **बहुलं छन्दसी**ति शपो लुङ् न। **(इन्द्रः)** विद्युदिव सुखप्रदो दुःखविदारकः **(नृभिः)** नायकैः **(अजनत्)** जनयेत् **(दीद्यानः)** देदीप्यमानः **(साकम्)** सह **(सूर्य्यम्)** सवितारम् **(उषसम्)** प्रभातम् **(गातुम्)** वाणीं भूमिं वा **(अग्निम्)** भौमं पावकम्॥१५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो विविद्वान् दीद्यान इन्द्र इव सखिभ्य इन्महि पुरुश्चन्द्रं क्षेत्रं चरथं च समैरदान्नृभिः साकं सूर्य्यमुषसं गातुमग्निमजनत्तं सदा सत्कुरुत॥१५॥

भावार्थः-यथा विद्यया सुसंप्रयुक्ता विद्युत्सूर्य्यभूमिपावकाः प्रातरादिसमय ऐश्वर्य्यं जनयित्वा सखीन् सुखयन्ति तथैव विद्वांसो मनुष्यादीन् प्राणिनः सुखयन्तु॥१५॥

---

१. गमनं॥ सं०॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(विविद्वान्)** ज्ञाता और **(दीद्यानः)** प्रकाशमान **(इन्द्रः)** बिजुली के सदृश सुख का वर्द्धक और दुःख का नाशक **(सखिभ्यः)** मित्रों के लिये **(इत्)** ही **(महि)** बड़ा **(पुरु)** बहुत **(चन्द्रम्)** सुवर्ण **(क्षेत्रम्)** पदार्थों का आधार **(चरथम्)** गमन वा विज्ञान की **(सम्)** **(ऐरत्)** प्रेरणा करे **(आत्)** उसके अनन्तर **(नृभिः)** प्रधान जनों के **(साकम्)** साथ **(सूर्य्यम्)** सूर्य्य **(उषसम्)** प्रातःकाल **(गातुम्)** वाणी वा भूमि और **(अग्निम्)** अग्नि को **(अजनत्)** उत्पन्न करे, उसका सदा सत्कार करो॥१५॥

भावार्थः-जैसे विद्या से युक्त बिजुली, सूर्य्य, भूमि और अग्नि प्रातःकालादि समय में ऐश्वर्य को उत्पन्न कर मित्रों को सुख देते हैं, वैसे ही विद्वान् लोग मनुष्य आदि प्राणियों को सुख देवें॥१५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अपश्चिदेष विभ्वो३ दमूनाः प्र सध्रीचीरसृजद्विश्वश्चन्द्राः।
मध्वः पुनानाः कविभिः पवित्रैर्द्युभिर्हिन्वन्त्यक्तुभिर्धनुत्रीः॥१६॥

अपः। चित्। एषः। विऽभ्वः। दमूनाः। प्र। सध्रीचीः। असृजत्। विश्वऽचन्द्राः। मध्वः। पुनानाः। कविऽभिः। पवित्रैः। द्युऽभिः। हिन्वन्ति। अक्तुऽभिः। धनुत्रीः॥१६॥

पदार्थः-**(अपः)** जलानीव व्याप्तविद्याः **(चित्)** अपि **(एषः)** **(विभ्वः)** विभूः **(दमूनाः)** जितेन्द्रियमनस्काः **(प्र)** **(सध्रीचीः)** सहैवाञ्चन्तीः **(असृजत्)** सृजति **(विश्वश्चन्द्राः)** विश्वानि समग्राणि चन्द्राणि सुवर्णादीनि येषान्ते। अत्रापि **ह्रस्वाच्चन्द्रोत्तरपदे मन्त्र** इति सुडागमः। **(मध्वः)** मधुरस्वभावान् जनान् **(पुनानाः)** पवित्रयन्तः **(कविभिः)** विद्वद्भिः **(पवित्रैः)** शुद्धैर्व्यवहारैः **(द्युभिः)** दिनैः **(हिन्वन्ति)** वर्धयन्ति वर्धन्ते वा। अत्र पक्षेऽन्तर्भावितो ण्यर्थः। **(अक्तुभिः)** रात्रिभिः **(धनुत्रीः)** धनधान्यादियुक्ताः॥१६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये कविभिः सहिताः पवित्रैर्द्युभिरक्तुभिर्मध्वः पुनाना जना धनुत्रीर्हिन्वन्ति यश्चिदेष विभ्वो दमूनाः सध्रीचीर्विश्वश्चन्द्रा अपः प्रासृजत्ताँस्तं च सर्वे सङ्गच्छन्ताम्॥१६॥

भावार्थः-ये विद्वांसो बह्वैश्वर्य्यजनकान् पदार्थान् कार्यसिद्धये प्रयुञ्जते विद्वद्भिः सह पवित्राचरणं कृत्वा सुखैश्वर्य्यमहर्निशं वर्धयन्ति ते भाग्यशालिनः सन्ति॥१६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो लोग **(कविभिः)** विद्वान् जनों के सहित **(पवित्रैः)** उत्तम व्यवहारों तथा **(द्युभिः)** दिनों और **(अक्तुभिः)** रात्रियों से **(मध्वः)** कोमल स्वभाववाले मनुष्यों को **(पुनानाः)** पवित्र करते हुए जन **(धनुत्रीः)** धन और धान्य आदिकों से युक्त **(हिन्वन्ति)** बढ़ाते वा बढ़ते हैं जो **(चित्)** भी **(एषः)** यह **(विभ्वः)** व्यापक **(दमूनाः)** जितेन्द्रिय मनयुक्त **(सध्रीचीः)** एक साथ मिले हुए **(विश्वश्चन्द्राः)** सम्पूर्ण सुवर्ण आदिकों से युक्त **(अपः)** जलों के सदृश व्याप्त विद्याओं को **(प्र)**

(असृजत्) उत्पन्न करता है, उन और उसका सर्व जन सङ्गम करें॥१६॥

भावार्थः-जो विद्वान् लोग बहुत ऐश्वर्य्यों के जनक पदार्थों को कार्यसिद्धि के लिये उपयोग में लाते तथा विद्वान् जनों के साथ शुद्ध आचरणों को करके सुख और ऐश्वर्य दिन-रात्रि बढ़ाते, वे भाग्यशाली हैं॥१६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अनु कृष्णे वसुधिती जिहाते उभे सूर्यस्य मंहना यजत्रे।

परि यत्ते महिमानं वृजध्यै सखाय इन्द्र काम्या ऋजिप्याः॥१७॥

अनु। कृष्णे इति। वसुधिती इति वसुऽधिती। जिहाते इति। उभे इति। सूर्यस्य। मंहना। यजत्रे इति। परि। यत्। ते। महिमानम्। वृजध्यै। सखायः। इन्द्र। काम्याः। ऋजिप्याः॥१७॥

पदार्थः-**(अनु)** **(कृष्णे)** कर्षिते **(वसुधिती)** वसूनां पदार्थानां धत्र्यौ द्यावापृथिव्यौ **(जिहाते)** गच्छतः **(उभे)** **(सूर्य्यस्य)** **(मंहना)** महत्त्वेन **(यजत्रे)** सङ्गते **(परि)** **(यत्)** ये **(ते)** तव **(महिमानम्)** **(वृजध्यै)** वर्जितुम् **(सखायः)** सुहृदः सन्तः **(इन्द्र)** परमैश्वर्य्ययुक्त राजन् **(काम्याः)** कमनीयाः **(ऋजिप्याः)** ऋजीन् सरलान् व्यवहारान् प्यायन्ते वर्धयन्ति ते॥१७॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यद्ये ते काम्या ऋजिप्याः सखायो महिमानमनुकृष्णे उभे यजत्रे वसुधिती सूर्यस्य मंहना वृजध्यै परि जिहाते इव स्वास्ते वर्धयन्ति ते त्वया सत्कर्त्तव्याः॥१७॥

भावार्थः-यथा सूर्यः स्वमहिम्ना भूमिप्रकाशावनुकृष्य धरति यथा भूमिप्रकाशौ सर्वान् धरतस्तथोत्तमपुरुषेण स्वमहिमानं धृत्वा दुर्व्यसनानि वर्जित्वा सखायः सत्कर्त्तव्याः॥१७॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य से युक्त राजन्! **(यत्)** जो **(ते)** आपके **(काम्याः)** कामना करने योग्य **(ऋजिप्याः)** सरल व्यवहारों के वर्द्धक **(सखायः)** मित्र हुए **(महिमानम्)** महिमा को **(अनु)** **(कृष्णे)** खींची गयीं **(उभे)** दोनों **(यजत्रे)** परस्पर मिली हुई **(वसुधिती)** अन्तरिक्ष और पृथिवी **(सूर्यस्य)** सूर्य के **(मंहना)** महत्त्व से **(वृजध्यै)** रोकने को **(परि)** **(जिहाते)** प्राप्त होते हैं, उनको बढ़ाते हैं, वे आप से सत्कार पाने योग्य हैं॥१७॥

भावार्थः-जैसे सूर्य अपने प्रताप से भूमि और प्रकाश का आकर्षण करके धारण करता है और जैसे भूमि तथा प्रकाश सम्पूर्ण पदार्थों को धारण करते हैं, वैसे उत्तम पुरुष को चाहिये कि महिमा को धारण और दुर्व्यसनों को त्याग करके मित्रों का सत्कार करें॥१७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

पति॑र्भव वृत्रहन्त्सूनृता॑नां गि॒रां वि॒श्वायु॑र्वृष॒भो व॑यो॒धाः।

आ नो॑ गहि स॒ख्येभि॑ः शि॒वेभि॑र्म॒हान् म॒हीभि॑रू॒तीभि॑ः सर॒ण्यन्॥ १८॥

पति॑ः। भ॒व॒। वृ॒त्र॒ऽह॒न्। सू॒नृता॑नाम्। गि॒राम्। वि॒श्वऽआ॑युः। वृ॒ष॒भः। व॒यः॒ऽधाः। आ। नः॒। ग॒हि॒। स॒ख्येभि॑ः। शि॒वेभि॑ः। म॒हान्। म॒हीभि॑ः। ऊ॒तिऽभि॑ः। स॒र॒ण्यन्॥ १८॥

पदार्थः-(**पतिः**) पालकः स्वामी (**भव**) (**वृत्रहन्**) मेघहन्ता सूर्य इव वर्तमान (**सूनृतानाम्**) सुष्ठु ऋतानि सत्यानि यासु तासाम् (**गिराम्**) वाचाम् (**विश्वायुः**) पूर्णायुः (**वृषभः**) सुखवर्षकः (**वयोधाः**) यो वयो जीवनं दधाति सः (**आ**) (**नः**) अस्मान् (**गहि**) आगच्छ प्राप्नुहि (**सख्येभिः**) सखीनां कर्मभिः (**शिवेभिः**) मङ्गलकारिभिः (**महान्**) पूज्यतमः (**महीभिः**) महतीभिः (**ऊतिभिः**) रक्षणादिभिः (**सरण्यन्**) आत्मनः सरणं गमनं विज्ञानं वेच्छन्॥१८॥

अन्वयः-हे वृत्रहन्निन्द्र राजँस्त्वं महान् विश्वायुर्वृषभो वयोधाः शिवेभिः सख्येभिर्महीभिरूतिभिः सह सरण्यन् सन् सूनृतानां गिरां पतिर्भव नोऽस्मानागहि॥१८॥

भावार्थः-ये मनुष्याः सत्यवाचोऽजातशत्रवः स्वात्मवत्सर्वेषां पालकाः सूर्य्यवद्विद्याधर्मविनयप्रकाशका विद्वांसः स्वामिनस्स्युस्ते महान्तो भवेयुः॥१८॥

पदार्थः-हे (**वृत्रहन्**) मेघ के नाशकारक सूर्य्य के सदृश तेजधारी राजन्! आप (**महान्**) प्रतिष्ठित (**विश्वायुः**) पूर्ण आयु से युक्त (**वृषभः**) सुखों की वृष्टि और (**वयोधाः**) जीवन के धारण करनेवाले (**शिवेभिः**) मङ्गलकारक (**सख्येभिः**) मित्रों के कर्मों से (**महीभिः**) बड़ी (**ऊतिभिः**) रक्षाओं आदि से युक्त (**सरण्यन्**) अपने चलन वा विज्ञान की इच्छा करते हुए (**सूनृतानाम्**) उत्तम सत्य से युक्त (**गिराम्**) वाणियों के (**पतिः**) पालनकर्त्ता (**भव**) हूजिये और (**नः**) हम लोगों को (**आ, गहि**) प्राप्त हूजिये॥१८॥

भावार्थः-जो मनुष्य सत्य बोलने, शत्रुता को त्यागने, अपने प्राण के तुल्य सम्पूर्ण जनों के पालन करने और सूर्य्य के सदृश विद्या, धर्म और नम्रता के प्रकाश करनेवाले विद्वान् स्वामी हों, वे श्रेष्ठ होवें॥१८॥

पुना राजप्रजाविषयमाह॥

फिर राजा और प्रजा के विषय को कहते हैं॥

तम॑ङ्गिर॒स्वन्नम॑सा सप॒र्यन् नव्यं॑ कृणोमि॒ सन्य॑से पु॒रा॒जाम्।

द्रुहो॒ वि या॑हि बहु॒ला अदे॑वी॒: स्व॑श्च नो मघवन्त्सा॒तये॑ धाः॥ १९॥

तम्। अ॒ङ्गि॒र॒स्वत्। नम॑सा। स॒प॒र्यन्। नव्य॑म्। कृ॒णो॒मि॒। सन्य॑से। पु॒रा॒ऽजाम्। द्रु॒हः॑। वि। या॒हि॒। ब॒हु॒लाः॑। अदे॑वीः। स्व॒रिति॑ स्वः॑। च॒। नः॒। म॒घ॒ऽव॒न्। सा॒तये॑। धाः॒॥ १९॥

पदार्थः-(**तम्**) पूर्वोक्तं राजानम् (**अङ्गिरस्वत्**) अङ्गिरसो विद्वांसो विद्यन्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ (**नमसा**) सत्कारेणान्नेन वा (**सपर्यन्**) सेवमानः (**नव्यम्**) नवमिव वर्त्तमानम् (**कृणोमि**) (**सन्यसे**) सर्वान् विभजतां मध्ये प्रयत्नाय (**पुराजाम्**) पुराजातम् (**द्रुहः**) द्रोग्धीः (**वि**) (**याहि**) प्राप्नुहि (**बहुलाः**) (**अदेवीः**) अविदुषीः स्त्रियः (**स्वः**) सुखम् (**च**) (**नः**) अस्माकम् (**मघवन्**) पूजनीयवित्त (**सातये**) संविभागाय (**धाः**) धेहि॥१९॥

अन्वयः-हे अङ्गिरस्वन्मघवन् राजन्! पुराजां नव्यं तं त्वामहं सन्यसे नमसा सपर्यन् कृणोमि त्वं बहुला द्रुहोऽदेवीर्वियाहि दूरीकुरु नः सातये स्वश्च धाः॥१९॥

भावार्थः-प्रजास्थैर्जनैर्न्यायविनयादिशुभगुणान्विता राजादयो जनाः सदैव सत्कर्त्तव्या राजादिपुरुषैश्च प्रजाः सदा पितृवत्पालनीयाः स्त्रियश्च विदुष्यः सम्पादनीया अनेन बहुविधं सुखमुन्नेयम्॥१९॥

पदार्थः-हे (**अङ्गिरस्वत्**) विद्वानों के सहित विराजमान (**मघवन्**) श्रेष्ठ धनयुक्त राजन्! (**पुराजाम्**) पहिले उत्पन्न और (**नव्यम्**) नवीन के सदृश वर्तमान (**तम्**) प्रथम कहे हुए आपकी मैं (**सन्यसे**) अलग-अलग बँटे हुए पदार्थों में प्रयत्न करते हुए के लिये (**नमसा**) सत्कारपूर्वक (**सपर्यन्**) सेवा करता हुआ (**कृणोमि**) प्रसिद्ध करता हूँ आप (**बहुलाः**) बहुत (**द्रुहः**) शत्रुतायुक्त (**अदेवीः**) विद्यारहित स्त्रियों को (**वि, याहि**) दूर कीजिये (**नः**) हम लोगों के (**सातये**) संविभाग के लिये (**स्वः**) सुख को (**च**) भी (**धाः**) धारण कीजिये॥१९॥

भावार्थः-प्रजारूप जनों को चाहिये कि न्याय, विनय आदि शुभ गुणों से युक्त राजा आदि जनों का सदा ही सत्कार करें और राजा आदि पुरुषों को चाहिये कि प्रजाजनों का सदा पिता के तुल्य पालन करें और स्त्रियों को विद्यायुक्त करें, इससे अनेक प्रकार [की सुख] की वृद्धि करें॥१९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

मिहः पावकाः प्रतता अभूवन्त्स्वस्ति नः पिपृहि पारमासाम्।

इन्द्र त्वं रथिरः पाहि नो रिषो मक्षूमक्षू कृणुहि गोजितो नः॥२०॥

मिहः। पावकाः। प्रऽतताः। अभूवन्। स्वस्ति। नः। पिपृहि। पारम्। आसाम्। इन्द्र। त्वम्। रथिरः। पाहि। नः। रिषः। मक्षुऽमक्षु। कृणुहि। गोऽजितः। नः॥२०॥

पदार्थः-(**मिहः**) सेचकाः (**पावकाः**) पवित्राः पवित्रकराः (**प्रतताः**) विस्तीर्णाः स्वरूपगुणाः (**अभूवन्**) भवन्ति (**स्वस्ति**) सुखम् (**नः**) अस्मभ्यम् (**पिपृहि**) पूर्णं कुरु (**पारम्**) (**आसाम्**) (**इन्द्र**) सूर्य्य

इव राजन् **(त्वम्)** **(रथिर:)** रथादियुक्त: **(पाहि)** **(न:)** अस्मान् **(रिष:)** हिंसकात् **(मक्षूमक्षू)** शीघ्रम् शीघ्रम्। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घ:। **मक्ष्विति क्षिप्रनामसु पठितम्।** (निघं०२.१५) **(कृणुहि)** **(गोजित:)** गौर्भूमिर्जिता यैस्तान् **(न:)** अस्माकम्॥२०॥

अन्वय:-हे इन्द्र रथिरस्त्वं नो रिष: पाहि नोऽस्मान् गोजितो मक्षूमक्षू कृणुहि। आसां शत्रुसेनानां पारं नय या मिह: प्रतता: पावका अभूवन् तैर्न: स्वस्ति पिपृहि॥२०॥

भावार्थ:-प्रजासेनापुरुषै: स्वेऽध्यक्षा एवं याचनीया यूयमस्माभि: शत्रून् विजयित्वा सुखं अनयत यथा विद्युदादयो वृष्टिद्वारा क्षुधादिदोषात् पृथक्कृत्यानन्दयन्ति तथैव हिंसकेभ्य: प्राणिभ्य: सद्य: पृथक्कृत्य रक्षित्वा सततमानन्दयत॥२०॥

पदार्थ:-हे **(इन्द्र)** सूर्य्य के सदृश तेजस्वी राजन्! **(रथिर:)** रथ आदि वस्तुओं से युक्त **(त्वम्)** आप **(न:)** हम लोगों की **(रिष:)** हिंसाकारक जन से **(पाहि)** रक्षा कीजिये **(न:)** हम लोगों को **(गोजित:)** पृथिवी के जीतनेवाले **(मक्षूमक्षू)** शीघ्र शीघ्र **(कृणुहि)** करिये **(आसाम्)** इन शत्रुओं की सेनाओं के **(पारम्)** पार पहुँचाइये जो **(मिह:)** सींचनेवाले **(प्रतता:)** विस्तारस्वरूप और गुणों से युक्त **(पावका:)** पवित्र और दूसरों को पवित्र करनेवाले **(अभूवन्)** होते हैं, उन लोगों से **(न:)** हम लोगों के **(स्वस्ति)** सुख को **(पिपृहि)** पूरा कीजिये॥२०॥

भावार्थ:-प्रजा और सेना के पुरुषों को चाहिये कि अपने प्रधान पुरुषों से इस प्रकार की याचना करें कि आप लोग हम लोगों से शत्रुओं को जीत कर सुख उत्पन्न करो। जैसे बिजुली आदि पदार्थ वृष्टि के द्वारा क्षुधा आदि दोष से दूर करके आनन्द देते हैं, वैसे ही हिंसा करनेवाले प्राणियों से शीघ्र दूर कर और रक्षा करके निरन्तर आनन्द दीजिये॥२०॥

अथ के गुरवो भवितुमर्हन्तीत्याह॥

अब कौन गुरु होने के योग्य हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अदे॑दिष्ट वृत्र॒हा गोप॑ति॒र्गा अ॒न्त: कृ॒ष्णाँ अ॑रु॒षैर्धाम॑भिर्गात्।

प्र सू॒नृता॑ दि॒शमा॑न ऋ॒तेन॒ दुर॑श्च॒ विश्वा॑ अवृणो॒दप॒ स्वा:॥२१॥

अदे॑दिष्ट। वृ॒त्र॒ऽहा। गोऽप॑ति:। गा:। अ॒न्तरिति॑। कृ॒ष्णान्। अ॒रु॒षै:। धाम॑ऽभि:। गा॒त्। प्र। सू॒नृता॑:। दि॒शमा॑न:। ऋ॒तेन॑। दुर॑:। च॒। विश्वा॑:। अ॒वृ॒णो॒त्। अप॑। स्वा:॥२१॥

पदार्थ:-**(अदेदिष्ट)** भृशमुपदिशत **(वृत्रहा)** मेघहा सूर्य्य इव **(गोपति:)** गवां पालक: **(गा:)** धेनु: **(अन्त:)** मध्ये **(कृष्णान्)** कृष्णवर्णान् **(अरुषै:)** रक्तगुणविशिष्टैरश्वै:। **अरुष इत्यश्वनामसु पठितम्।** (निघं०१.१४) **(धामभि:)** स्थानविशेषै: **(गात्)** प्राप्नुयात् **(प्र)** **(सूनृता:)** सत्यादिलक्षणान्विता वाच: **(दिशमान:)** उपदिशन्। अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम्। **(ऋतेन)** सत्येनेव जलेन **(दुर:)** द्वाराणि **(च)** **(विश्वा:)** समग्रा: **(अवृणोत्)** वृणुयात् **(अप)** दूरीकरणे **(स्वा:)** स्वकीया:॥२१॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथा वृत्रहा सूर्य्यः किरणैर्जगत्पाति यथा गोपतिर्गा रक्षत्यरुषैर्धामभिः सह कृष्णानन्तर्गाद् दुरश्चाऽपावृणोत् तथर्त्तेन सहिता विश्वाः स्वाः सूनृता वाचः प्र दिशमानोऽदेदिष्ट॥२१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये सूर्य्यवद्गोपतिवत् पितृवत्सर्वान् रक्षन्ति त एव गुरवो भवितुमर्हन्ति॥२१॥

पदार्थः-हे विद्वान् पुरुष! जैसे **(वृत्रहा)** मेघ का नाशक सूर्य्य अपनी किरणों से संसार की रक्षा करता है और जैसे **(गोपतिः)** गौओं का पालनकर्त्ता **(गाः)** गौओं की रक्षा करता तथा **(अरुषैः)** लाल गुण विशिष्ट घोड़ों और **(धामभिः)** स्थान विशेषों के साथ **(कृष्णान्)** काले वर्णों को **(अन्तः)** मध्य में **(गात्)** प्राप्त होवे **(दुरः, च)** और द्वारों को **(अप, अवृणोत्)** खोले, वैसे **(ऋतेन)** सत्य के सदृश जल के सहित **(विश्वाः)** सम्पूर्ण **(स्वाः)** अपनी **(सूनृताः)** सत्य आदि लक्षणों से युक्त वाणियों के **(प्र, दिशमानः)** अच्छे प्रकार उपदेशक **(अदेदिष्ट)** आप अत्यन्त उपदेश कीजिये॥२१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो लोग सूर्य्य, गौओं के पालक और पिता के सदृश सबकी रक्षा करते हैं, वे ही गुरुजन होने योग्य हैं॥२१॥

अथ के विजयिनो भवन्तीत्याह॥

अब कौन विजयी होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ।

शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम्॥२२॥८॥

शुनम्। हुवेम। मघऽवानम्। इन्द्रम्। अस्मिन्। भरे। नृऽतमम्। वाजऽसातौ। शृण्वन्तम्। उग्रम्। ऊतये। समत्सु। घ्नन्तम्। वृत्राणि। सम्ऽजितम्। धनानाम्॥२२॥

पदार्थः-**(शुनम्)** वर्धकम् **(हुवेम)** स्वीकुर्याम प्रशंसेम **(मघवानम्)** परमधनयुक्तम् **(इन्द्रम्)** शत्रूणां विदारितारम् **(अस्मिन्)** वर्त्तमाने **(भरे)** भरणीये **(नृतमम्)** अतिशयेन नायकम् **(वाजसातौ)** अन्नादिविभाजके संग्रामे **(शृण्वन्तम्)** **(उग्रम्)** तेजस्विनम् **(ऊतये)** रक्षणाद्याय **(समत्सु)** संग्रामेषु **(घ्नन्तम्)** नाशयन्तम् **(वृत्राणि)** मेघावयवानिव **(सञ्जितम्)** सम्यग्जयशीलम् **(धनानाम्)**॥२२॥

अन्वयः-हे वीरा! यथा वयमूतये सूर्य्यो वृत्राणीवाऽस्मिन् भरे वाजसातौ धनानां सञ्जितं नृतमं समत्सु घ्नन्तं शृण्वन्तमुग्रं शुनं मघवानमिन्द्रं हुवेम तथैतं यूयमप्याह्वयत॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। तेषामेव ध्रुवो विजयो येषां पुष्कलधनबलाः सर्वेषां कथनश्रोतारो नरोत्तमा युद्धेषु शत्रूणां हन्तारो विजयमानाः स्युरिति॥२२॥

अत्र वह्निविद्वद्राजसेनावागुपदेशकप्रजागुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकाधिकत्रिंशत्तमं सूक्तमष्टमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे वीर पुरुषो! जैसे हम लोग **(ऊतये)** रक्षा आदि के लिये **(वृत्राणि)** मेघों के अवयवों को सूर्य्य के समान **(अस्मिन्)** इस वर्त्तमान **(भरे)** पुष्ट करने योग्य **(वाजसातौ)** अन्न आदि के विभागकारक संग्राम में **(धनानाम्)** धनों के **(सञ्जितम्)** उत्तम प्रकार जीतनेवाले **(नृतमम्)** अति प्रधान **(समत्सु)** संग्रामों में **(घ्नन्तम्)** नाश करते और **(शृण्वन्तम्)** सुनते हुए **(उग्रम्)** तेजस्वी **(शुनम्)** वृद्धिकर्त्ता **(मघवानम्)** अत्यन्त धन से युक्त **(इन्द्रम्)** शत्रुओं के विदारनेवाले का **(हुवेम)** स्वीकार वा प्रशंसा करें, वैसे इस पुरुष का आप लोग भी आह्वान करें॥२२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। उन्हीं लोगों की निश्चय विजय होती है कि जिनके अत्यन्त धन, बलयुक्त और सब वचनों के सुननेवाले श्रेष्ठ पुरुष जो कि संग्रामों में शत्रुओं के मारने, जीतनेवाले हों॥२२॥

इस मन्त्र **[=सूक्त]** में अग्नि, विद्वान्, राजा की सेना, मित्र,[१०] वाणी, उपदेशकर्त्ता और प्रजा के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह इकत्तीसवां सूक्त और आठवां वर्ग समाप्त हुआ॥

१०. संस्कृत में 'मित्र' पद नहीं दिया गया है, हिन्दी में यह अधिक है।

अथ सप्तदशर्चस्य द्वात्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। १-३। ७-९, १७ त्रिष्टुप्। ११-१५ निचृत्त्रिष्टुप्। १६ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ४, १० भुरिक् पङ्क्तिः। ५ निचृत्पङ्क्तिः। ६ विराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ नित्यकर्मविधिरुच्यते॥

अब सत्रह ऋचावाले बत्तीसवें सूक्त का प्रारम्भ है। उसके पहिले मन्त्र में नित्यकर्म का विधान कहते हैं॥

इन्द्र सोमं सोमपते पिबेमं माध्यंदिनं सवनं चारु यत्ते।
प्रप्रुथ्या शिप्रे मघवन्नृजीषिन् विमुच्या हरी इह मादयस्व॥ १॥

इन्द्र। सोमम्। सोमऽपते। पिब। इमम्। माध्यंदिनम्। सवनम्। चारु। यत्। ते। प्रऽप्रुथ्य। शिप्रे इति। मघऽवन्। ऋजीषिन्। विऽमुच्य। हरी इति। इह। मादयस्व॥ १॥

पदार्थः-(**इन्द्र**) ऐश्वर्योत्पादक (**सोमम्**) ऐश्वर्यकारकं सोमाद्योषधिमयम् (**सोमपते**) ऐश्वर्यस्य पालक (**पिब**) (**इमम्**) (**माध्यन्दिनम्**) मध्ये भवम्। अत्र **मध्योमध्यं दिनण् चास्मा**दिति वार्तिकेन मध्यशब्दो मध्यमिति मान्तत्वमापद्यते भवेऽर्थे दिनण् च प्रत्ययः। (**सवनम्**) भोजनं होमादिकं वा (**चारु**) सुन्दरं भोक्तव्यम् (**यत्**) ये (**ते**) तव (**प्रप्रुथ्या**) प्रपूर्य (**शिप्रे**) मुखावयवाविव (**मघवन्**) परमपूजितधनयुक्त (**ऋजीषिन्**) शोधक (**विमुच्य**) त्यक्त्वा। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**हरी**) अश्वाविव धारणाऽकर्षणे (**इह**) (**मादयस्व**) आनन्दय॥ १॥

अन्वयः-हे मघवन्त्सोमपत इन्द्र! त्वमिमं सोमं पिब चारु माध्यन्दिनं सवनं कुरु। हे ऋजीषिंस्ते यच्छिप्रे स्तस्ते प्रप्रुथ्या दुर्व्यसनानि विमुच्य हरी प्रयोज्य त्वमिह मादयस्व॥ १॥

भावार्थः-मनुष्यैः प्रथमं भोजनं मध्यन्दिनस्य निकटे कर्त्तव्यमग्निहोत्रादिव्यवहारेषु भोजनसमये बलिवैश्वदेवं विधाय दूषितं वायुं निःसार्य्याऽऽनन्दितव्यम्॥ १॥

पदार्थः-हे (**मघवन्**) अत्यन्त श्रेष्ठ धनयुक्त (**सोमपते**) ऐश्वर्य्य के पालने और (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्य की उत्पत्ति करनेवाले! आप (**इमम्**) इस (**सोमम्**) ऐश्वर्यकारक सोम आदि ओषधि स्वरूप को (**पिब**) पीओ, (**चारु**) सुन्दर भोजन करने योग्य (**माध्यन्दिनम्**) बीच में होनेवाले (**सवनम्**) भोजन वा होम आदि को सिद्ध करो। हे (**ऋजीषिन्**) शुद्धिकर्त्ता! (**ते**) आपके (**यत्**) जो (**शिप्रे**) मुख के अवयवों के सदृश ऐहिक और पारलौकिक व्यवहार हैं, उनको (**प्रप्रुथ्या**) पूर्ण कर और दुर्व्यसनों को (**विमुच्य**) त्याग के (**हरी**) घोड़ों के सदृश धारण और खींचने का प्रयोग करके आप (**इह**) इस संसार में (**मादयस्व**) आनन्द दीजिये॥ १॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये प्रथम भोजन मध्य दिन के समीप में करें और अग्निहोत्र आदि व्यवहारों में भोजन के समय बलिवैश्वदेव को कर और दूषित वायु को निकाल के आनन्दित हों॥ १॥

के श्रीमन्तो भवन्तीत्याह॥

कौन लोग श्रीमान् होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

गवाशिरं मन्थिनमिन्द्र शुक्रं पिबा सोमं ररिमा ते मदाय।
ब्रह्मकृता मारुतेना गणेन सजोषा रुद्रैस्तृपदा वृषस्व॥२॥

गोऽआशिरम्। मन्थिनम्। इन्द्र। शुक्रम्। पिब। सोमम्। ररिम। ते। मदाय। ब्रह्मऽकृता। मारुतेन। गणेन। सऽजोषाः। रुद्रैः। तृपत्। आ। वृषस्व॥२॥

पदार्थः-(**गवाशिरम्**) गावः किरणा इन्द्रियाणि वाऽश्नन्ति यस्मिँस्तम् (**मन्थिनम्**) मन्थितुं शीलं यस्य तम् (**इन्द्र**) दुःखविदारक (**शुक्रम्**) आशु सुखकरं शुद्धम् (**पिब**) अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**सोमम्**) ऐश्वर्यकारकं पेयम् (**ररिम**) दद्याम। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**ते**) तव (**मदाय**) आनन्दाय (**ब्रह्मकृता**) ब्रह्म धनमन्नं वा करोति यस्तेन (**मारुतेन**) मारुतेन हिरण्यादिसम्बन्धेन। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **मरुदिति हिरण्यनामसु पठितम्।** (निघं०१.२) (**गणेन**) गणनीयेन सङ्ख्यातेन समूहेन (**सजोषाः**) आत्मसमानप्रीतिं सेवमानः सन् (**रुद्रैः**) प्राणैरिव मध्यमैर्विद्वद्भिः सह (**तृपत्**) तृप्तः सन् (**आ**) समन्तात् (**वृषस्व**) वृष इव बलिष्ठो भव॥२॥

अन्वयः-हे इन्द्र! वयं ते मदाय यं गवाशिरं शुक्रं मन्थिनं सोमं ररिम तं त्वं पिब ब्रह्मकृता मारुतेन गणेन रुद्रैः सह सजोषास्तृपत्सन्ना वृषस्व॥२॥

भावार्थः-ये मनुष्या अन्येषु स्वात्मवद्वर्त्तित्वा तैः सह सुखादानं कृत्वा सुवर्णादिधनमुन्नीय तृप्ताः सन्तो बलिष्ठा जायन्ते, त एव श्रीमन्तो भवन्ति॥२॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) दुःख के नाश करनेवाले! हम लोग (**ते**) आपके (**मदाय**) आनन्द के अर्थ जिस (**गवाशिरम्**) किरणों वा इन्द्रियों से मिले हुए (**शुक्रम्**) शीघ्र सुख पवित्र करने वा (**मन्थिनम्**) मथने का स्वभाव रखने और (**सोमम्**) ऐश्वर्य के करनेवाले पान करने योग्य वस्तु को (**ररिम**) देवें उसको आप (**पिब**) पान करिये और (**ब्रह्मकृता**) धन वा अन्न को करनेवाले (**मारुतेन**) सुवर्ण आदि के सम्बन्धी (**गणेन**) गणना करने योग्य गिने हुए समूह से (**रुद्रैः**) प्राणों के सदृश मध्यम विद्वानों के साथ (**सजोषाः**) अपने तुल्य प्रीति का सेवन करनेवाले (**तृपत्**) तृप्त होते हुए (**आ**) सब प्रकार (**वृषस्व**) वृषभ के तुल्य बलिष्ठ हूजिये॥२॥

भावार्थः-जो मनुष्य अन्य जनों में अपने तुल्य वर्त्तमान होकर उन लोगों के साथ सुख का ग्रहण और सुवर्ण आदि धन की वृद्धि करके तृप्त हुए बलिष्ठ होते, वे ही श्रीमान् होते हैं॥२॥

पुना राजधर्ममाह॥

फिर राजधर्म विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ये ते शुष्मं ये तविषीमवर्धन्नर्चन्त इन्द्र मरुतस्त ओजः।
माध्यंदिने सवने वज्रहस्त पिबा रुद्रेभिः सगणः सुशिप्र॥ ३॥

ये। ते। शुष्मम्। ये। तविषीम्। अवर्धन्। अर्चन्तः। इन्द्र। मरुतः। ते। ओजः। माध्यंदिने। सवने। वज्रऽहस्त। पिब। रुद्रेऽभिः। सऽगणः। सुऽशिप्र॥ ३॥

पदार्थः-(**ये**) (**ते**) तव सकाशात् (**शुष्मम्**) बलम् (**ये**) (**तविषीम्**) बलवतीं सेनाम् (**अवर्धन्**) वर्धयेयुः (**अर्चन्तः**) सत्कुर्वन्तः (**इन्द्र**) दुष्टबलविदारक (**मरुतः**) वायव इव वीराः (**ते**) तव (**ओजः**) पराक्रमः (**माध्यन्दिने**) मध्यदिने भवे (**सवने**) प्रेरणे (**वज्रहस्त**) वज्रादीनि शस्त्राणि हस्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ (**पिब**)। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**रुद्रेभिः**) दुष्टान् रोदयद्भिर्वीरैः (**सगणः**) गणेन सह वर्त्तमानः (**सुशिप्र**) शोभने शिप्रे हनुनासिके यस्य॥ ३॥

अन्वयः-हे सुशिप्र वज्रहस्तेन्द्र! ये त्वामर्चन्तो मरुतस्ते तव शुष्ममवर्धन् ये ते तविषीं चावर्धंस्तविषीमोजश्चावर्धंस्तै रुद्रेभिः सह सगणः सन्माध्यन्दिने सवने सूर्य्य इव सोमं पिब॥ ३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्! ये ते सचिवाः सेनां विजयं धनं राज्यं सुशिक्षां विद्यां धर्मं च वर्धयेयुस्ताँस्त्वं सततं सत्कुर्य्यास्तैः सह राज्यसुखं सदा भुङ्क्ष्व॥ ३॥

पदार्थः-(**सुशिप्र**) सुन्दर ठोढ़ी और नासिका जिनकी (**वज्रहस्त**) वा वज्र आदि शस्त्र हाथों में जिनके वह हे (**इन्द्र**) दुष्ट पुरुषों के समूहनाशक! (**ये**) जो आपका (**अर्चन्तः**) सत्कार करनेवाले (**मरुतः**) वायु के सदृश वीर पुरुष (**ते**) आपके समीप से (**शुष्मम्**) बल को (**अवर्धन्**) बढ़ावें (**ये**) वा जो लोग (**ते**) आपकी (**तविषीम्**) सेना और (**ओजः**) पराक्रम को बढ़ावें उन (**रुद्रेभिः**) दुष्टों के रुलानेवाले वीर पुरुषों के साथ (**सगणः**) समूह के सहित वर्त्तमान आप (**माध्यन्दिने**) मध्य दिन में होनेवाले (**सवने**) प्रेरणा करने में सूर्य्य के सदृश सोमलतादि ओषधि का पान करो॥ ३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! जो आपके मन्त्री लोग सेना, विजय, धन, राज्य, उत्तम शिक्षा, विद्या और धर्म को बढ़ावें, उनका आप निरन्तर सत्कार कर उनके साथ राज्य के सुख का सदा भोग करो॥ ३॥

पुनः के विद्वांसो भवन्तीत्याह॥

फिर कौन लोग विद्वान् होते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त इन्न्वस्य मधुमद्विविप्र इन्द्रस्य शर्धो मरुतो य आसन्।
येभिर्वृत्रस्येषितो विवेदामर्मणो मन्यमानस्य मर्म॥ ४॥

ते। इत्। नु। अस्य। मधुऽमत्। विविप्रे। इन्द्रस्य। शर्धः। मरुतः। ये। आसन्। येभिः। वृत्रस्य। इषितः। विवेद। अमर्मणः। मन्यमानस्य। मर्म॥४॥

पदार्थः-(**ते**) पूर्वोक्ताः (**इत्**) एव (**नु**) सद्यः (**अस्य**) वर्त्तमानस्य (**मधुमत्**) बहूनि मधुरादि गुणयुक्तानि वस्तूनि विद्यन्ते यस्मिंस्तत् (**विविप्रे**) क्षिपन्ति (**इन्द्रस्य**) परमैश्वर्य्ययुक्तस्य (**शर्धः**) बलम् (**मरुतः**) वायव इव वेगबलयुक्ताः (**ये**) (**आसन्**) आस्ये (**येभिः**) यैः (**वृत्रस्य**) मेघस्येव शत्रोः (**इषितः**) प्रेरितः (**विवेद**) विजानीयात् (**अमर्मणः**) अविद्यमानं मर्म यस्मिंस्तस्य (**मन्यमानस्य**) विज्ञातुः (**मर्म**) यस्मिन् प्रहते म्रियते तत्॥४॥

अन्वयः-ये मरुतोऽस्येन्द्रस्य शर्धो विविप्रे आसन्मधुमदिद्विविप्रे यो येभिरिषितो वृत्रस्येवाऽमर्मणो मर्म मन्यमानस्य विवेद ते स च नु स्वाभीष्टं प्राप्नुवन्ति॥४॥

भावार्थः-ये धनादिनैश्वर्य्येण सर्वस्य सुखं वर्धयित्वा दुःखानि निवार्य सर्वान् प्रसादयन्ति त एव धार्मिका विद्वांसो मन्तव्याः॥४॥

पदार्थः-(**ये**) जो (**मरुतः**) पवनों से सदृश वेग और बल से युक्त पुरुष (**अस्य**) इस वर्त्तमान (**इन्द्रस्य**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त पुरुष के (**शर्धः**) बल को (**विविप्रे**) फेंकते हैं (**आसन्**) मुख में (**मधुमत्**) बहुत मधुर आदि गुणों से युक्त वस्तुओं से पूर्ण पदार्थ को (**इत्**) ही रखते हैं जो (**येभिः**) जिन्हों से (**इषितः**) प्रेरित हुआ (**वृत्रस्य**) मेघ के सदृश शत्रु वा (**अमर्मणः**) मर्म से रहित (**मर्म**) प्रहार करने से नाश होनेवाले स्थान को (**मन्यमानस्य**) जाननेवाले को (**विवेद**) जाने (**ते**) वे पूर्व कहे हुए और वह पुरुष (**नु**) निश्चय अपने वाञ्छित बल को प्राप्त होते हैं॥४॥

भावार्थः-जो लोग धन आदि ऐश्वर्य्य से सबके सुख की वृद्धि और दुःखों का निवारण करके सब लोगों को प्रसन्न करते हैं, उनको ही धार्मिक विद्वान् मानना चाहिये॥४॥

पुनर्विद्वांसः किं कुर्युरित्याह॥

फिर विद्वान् जन क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मनुष्वदिन्द्र सवनं जुषाणः पिबा सोमं शश्वते वीर्याय।
स आ ववृत्स्व हर्यश्व यज्ञैः सरण्युभिरपो अर्णा सिसर्षि॥५॥९॥

मनुष्वत्। इन्द्र। सवनम्। जुषाणः। पिब। सोमम्। शश्वते। वीर्याय। सः। आ। ववृत्स्व। हरिऽअश्व। यज्ञैः। सरण्युऽभिः। अपः। अर्णा। सिसर्षि॥५॥

पदार्थः-(**मनुष्वत्**) मननशीलेन विदुषा तुल्यः (**इन्द्र**) परमैश्वर्यप्रद (**सवनम्**) ऐश्वर्यम् (**जुषाणः**) सेवमानः (**पिब**) अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**सोमम्**) शरीरात्मबलविज्ञानवर्धकं महौषध्यादिरसम् (**शश्वते**) निरन्तरायाऽनादिभूताय (**वीर्याय**) बलाय (**सः**) (**आ**) (**ववृत्स्व**) वर्त्तते (**हर्यश्व**) हरणशीला

हरिता वा अश्वा व्यापनस्वभावा यस्य तत्सम्बुद्धौ अश्वाइव अग्न्यादयो विदिता येन तत्सम्बुद्धौ वा **(यज्ञैः)** विद्वत्सत्कारशिल्पक्रियाविद्यादिदानाख्यैर्व्यवहारैः **(सरण्युभिः)** आत्मनः सरणं गमनमिच्छुभिः **(अपः)** अन्तरिक्षं प्रति **(अर्णा)** अर्णांसि जलानि। अत्र **सुपां सुलुगि**ति विभक्तेराकारादेशः **छान्दसो वर्णलोप** इति सलोपः। **(सिसर्षि)** गमयसि। अत्र **बहुलं छन्दसी**त्यभ्यासस्येत्वम्॥५॥

अन्वयः-हे हर्य्यश्वेन्द्र! यतस्त्वं सरण्युभिर्यज्ञैरर्णा अपः सिसर्षि तस्मात्स त्वं सवनं जुषाणः शश्वते वीर्याय सोमं पिब। मनुष्वत्सवनं जुषाणः सन्त्सोमं पिब आ ववृत्स्व॥५॥

भावार्थः-ये मनुष्या ब्रह्मचर्यविद्यासुशिक्षायुक्ताहारविहारसत्पुरुषसङ्गधर्मसेवनेन सनातनं परमात्मात्मयोगजं बलं वर्धयन्ति ते सर्वत उन्नता भवन्ति यथा सूर्यो जलमन्तरिक्षं प्रति वायुना सह क्षिपति तथैव विद्वांसः सर्वानुन्नतिं प्रति नयन्ति॥५॥

पदार्थः-**(हर्य्यश्व)** हरणकर्त्ता वा हरे रङ्ग और व्यापन स्वभाववाले घोड़ों के समान अग्नि आदि पदार्थ जिन्होंने जाने वह हे **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य के दाता! जिससे आप **(सरण्युभिः)** अपने शरण प्राप्त होने की इच्छायुक्त पुरुषों और **(यज्ञैः)** विद्वानों का सत्कार शिल्पक्रिया और विद्या आदि के दानरूप व्यवहारों से **(अर्णा)** जलों को **(अपः)** अन्तरिक्ष के प्रति **(सिसर्षि)** पहुंचाते हैं इससे **(सः)** वह आप **(सवनम्)** ऐश्वर्य्य के **(जुषाणः)** सेवनेवाले **(शश्वते)** निरन्तर अनादि सिद्ध **(वीर्याय)** बल के लिये **(सोमम्)** शरीर और आत्मा के बल तथा विज्ञान के बढ़ानेवाले महौषधि आदि के रस को **(पिब)** पीवो और **(मनुष्वत्)** विचार करनेवाले विद्वान् पुरुष के तुल्य ऐश्वर्य्य का सेवनेवाले शरीर और आत्मा के बल और विज्ञान के बढ़ानेवाले महौषधि आदि के रस को पीजिये तथा **(आ)** **(ववृत्स्व)** अच्छे प्रकार वर्त्ताव कीजिये॥५॥

भावार्थः-जो मनुष्य ब्रह्मचर्य, विद्या उत्तम शिक्षायुक्त, भोजन, विहार, सत्पुरुष का सङ्ग और धर्म के सेवन करने में उत्तम आत्मा और परमात्मा के योग से उत्पन्न हुए बल को बढ़ाते हैं, वे लोग सब प्रकार उन्नत होते हैं। जैसे सूर्य जल को अन्तरिक्ष के प्रति वायु के साथ ऊपर ले जाता है, वैसे ही विद्वान् लोग सम्पूर्ण जनों को प्रतिष्ठा के साथ उन्नति पर पहुँचाते हैं॥५॥

पुना राजजनाः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर राजपुरुष क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

त्वं सुपो यद्ध वृत्रं जघन्वाँ अत्याँइव प्रासृजः सर्तवाजौ।

शयानमिन्द्र चरता वधेन वव्रिवांसं परि देवीरदेवम्॥६॥

त्वम्। अपः। यत्। ह। वृत्रम्। जघन्वान्। अत्यान्ऽइव। प्र। असृजः। सर्तवै। आजौ। शयानम्। इन्द्र। चरता। वधेन। वव्रिऽवांसम्। परि। देवीः। अदेवम्॥६॥

पदार्थः-(**त्वम्**) (**अपः**) जलानि (**यत्**) यः (**ह**) किल (**वृत्रम्**) (**जघन्वान्**) हतवान् (**अत्यानिव**) अश्वानिव (**प्र, असृजः**) प्रासृज (**सर्तवै**) सर्तव्ये गन्तव्ये (**आजौ**) युद्धे। **आजाविति संग्रामनामसु पठितम्।** (निघं०२.१७) (**शयानम्**) शयानमिव वर्त्तमानम् (**इन्द्र**) शत्रुविदारक (**चरता**) प्राप्तेन (**वधेन**) (**वव्रिवांसम्**) व्रियमाणम् (**परि**) सर्वतः (**देवीः**) दिव्याः किरणाः (**अदेवम्**) प्रकाशरहितमविद्वांसं दुष्टं वा॥६॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यद्यस्त्वं यथा सूर्य्योऽत्यानिवाऽदेवं वृत्रं जघन्वांश्चरता वधेन शयानं वव्रिवांसं देवीरपो ह प्रसृजति तथैव सर्त्तवा आजौ परि प्राऽसृजः सोऽस्माभिः सत्कर्त्तव्योऽसि॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। ये राजादयो वीराः सूर्य्यो मेघमिव संग्रामे प्रसृष्टैः शस्त्रास्त्रैः शत्रून् विजयन्ते त एव प्रतापवन्तो जायन्ते॥६॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) शत्रुओं के नाशक! (**यत्**) जो (**त्वम्**) आपने जैसे (**अत्यानिव**) घोड़ों को सूर्य के समान (**अदेवम्**) विद्या प्रकाश से रहित अविद्वान् वा (**वृत्रम्**) दुष्ट को (**जघन्वान्**) नाश किया वा सूर्य (**चरता**) प्राप्त (**वधेन**) नाश से (**शयानम्**) सोते हुए से वर्त्तमान (**वव्रिवांसम्**) ढपे हुए को (**देवीः**) उत्तम किरणों और (**अपः**) जलों को (**ह**) निश्चय से उत्पन्न करता है, उसी प्रकार से (**सर्त्तवै**) जानने योग्य (**आजौ**) युद्ध में (**परि**) चारों ओर से (**प्र, असृजः**) उत्पन्न करते हो, वे आप हम लोगों से सत्कार पाने योग्य हैं॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जो राजा आदि वीर पुरुष जैसे सूर्य मेघ को वैसे संग्राम में चलाये शस्त्र और अस्त्रों से शत्रुओं को जीतते हैं, वे ही प्रतापयुक्त होते हैं॥८॥

पुनः किं भूतस्येश्वरस्योपासना कार्येत्युच्यते॥

फिर कैसे ईश्वर की उपासना करनी चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यजाम इन्नमसा वृद्धमिन्द्रं बृहन्तमृष्वमजरं युवानम्।
यस्य प्रिये ममतुर्यज्ञियस्य न रोदसी महिमानं ममाते॥७॥

यजामः। इत्। नमसा। वृद्धम्। इन्द्रम्। बृहन्तम्। ऋष्वम्। अजरम्। युवानम्। यस्य। प्रिये इति। ममतुः। यज्ञियस्य। न। रोदसी इति। महिमानम्। ममाते इति॥७॥

पदार्थः-(**यजामः**) पूजयामः (**इत्**) एव (**नमसा**) सत्कारेण (**वृद्धम्**) भुक्ताऽऽयुष्कं विद्यया महान्तं वा (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्यकारकम् (**बृहन्तम्**) (**ऋष्वम्**) महान्तम्। **ऋष्व इति महन्नामसु पठितम्।** (निघं०३.३) (**अजरम्**) जरारहितम् (**युवानम्**) सर्वस्य जगतः संयोजकं विभाजकं च (**यस्य**) (**प्रिये**)

कमनीये प्रीतिकारके **(ममतुः)** परिमीयेते **(यज्ञियस्य)** पूजनाऽर्हस्य **(न)** निषेधे **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ **(महिमानम्)** महत्त्वम् **(ममाते)** मिमाते परिछिन्तः। अत्र **बहुलं छन्दसी**त्यभ्यासेत्त्वप्रतिषेधः॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! वयं यस्य यज्ञियस्य परमेश्वरस्य महिमानं रोदसी न ममाते प्रिये ऐहिकपारलौकिकसुखे च न ममतुस्तमिद्युवानमजरमृष्वं बृहन्तं वृद्धमिन्द्रं नमसा यजामस्तं यूयमपि पूजयत॥७॥

भावार्थः-यस्य परमेश्वरस्य कश्चित्पदार्थस्तुल्योऽधिको वा न विद्यते यः सर्वेषां गुरुर्व्यापकोऽविनाशी पूज्यो वर्त्तते तमेव परमात्मनं वयं सततमुपासीमहि॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! हम लोग **(यस्य)** जिस **(यज्ञियस्य)** पूजा अर्थात् प्रीति करने योग्य परमेश्वर के **(महिमानम्)** महत्तत्त्व को **(रोदसी)** अन्तरिक्ष और पृथिवी **(न)** नहीं **(ममाते)** नाप सकते और **(प्रिये)** प्रीति करानेवाले इस लोक और परलोक के सुखों ने नहीं **(ममतुः)** नापे हैं **(इत्)** उसी **(युवानम्)** सम्पूर्ण संसार के संयोग और विभाग के करनेवाले **(अजरम्)** बुढ़ापे से रहित **(ऋष्वम्)** श्रेष्ठ **(बृहन्तम्)** बड़े **(वृद्धम्)** आयु को भोगे हुए वा विद्या से श्रेष्ठ **(इन्द्रम्)** परम ऐश्वर्य्य करनेवाले परमेश्वर की **(नमसा)** सत्कार से **(यजामः)** पूजा करते हैं, उसकी तुम लोग भी पूजा करो॥७॥

भावार्थः-जिस परमेश्वर की अपेक्षा कोई पदार्थ तुल्य वा अधिक नहीं, जो सबसे श्रेष्ठ, व्यापक, विनाशरहित और पूज्य है, उसी परमात्मा की हम लोग निरन्तर उपासना करें॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इन्द्र॑स्य॒ कर्म॒ सुकृ॑ता पु॒रूणि॑ व्र॒तानि॑ दे॒वा न मि॑नन्ति॒ विश्वे॑।

दा॒धार॒ यः पृ॑थि॒वीं द्यामु॒तेमां ज॒जान॒ सूर्य॑मु॒षसं॑ सु॒दंसाः॥८॥

इन्द्र॑स्य। कर्म॑। सु॒ऽकृ॑ता। पु॒रूणि॑। व्र॒तानि॑। दे॒वाः। न। मि॒न॒न्ति॒। विश्वे॑। दा॒धार॑। यः। पृ॒थि॒वीम्। द्याम्। उ॒त। इ॒माम्। ज॒जान॑। सूर्य॑म्। उ॒षस॑म्। सु॒ऽदंसाः॥८॥

पदार्थः-**(इन्द्रस्य)** परमात्मनः **(कर्म)** कर्माणि **(सुकृता)** सुकृतानि **(पुरूणि)** **(व्रतानि)** सत्याचरणानि **(देवाः)** पृथिव्यादयो विद्वांसो वा **(न)** निषेधे **(मिनन्ति)** हिंसन्ति **(विश्वे)** सर्वे **(दाधार)** धरति पुष्णाति वा **(यः)** **(पृथिवीम्)** भूमिम् **(द्याम्)** प्रकाशात्मकलोकादिकम् **(उत)** अपि **(इमाम्)** प्रत्यक्षाम् **(जजान)** जनयति **(सूर्य्यम्)** सवितारम् **(उषसम्)** दिनम् **(सुदंसाः)** शोभनानि धर्म्याणि दंसांसि कर्माणि यस्य सः॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः सुदंसाः परमेश्वर इमां पृथिवीं द्यां सूर्य्यमुतोषसं जजान दाधार यस्येन्द्रस्य विश्वे देवा व्रतानि सुकृता पुरूणि कर्म न मिनन्ति तमेव यूयं वयं चोपासीमहि॥८॥

भावार्थः-परमेश्वरस्य पवित्रत्वात् सर्वशक्तिमतः सर्वस्य जनकस्य धातुः स्वरूपपरिमितं सामर्थ्यं कर्म वा कोऽपि हिंसितुं न शक्नोति य त्वं सत्यभावेनोपासते तेऽपि पवित्राः सन्तः समर्था जायन्ते॥८॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(सुदंसाः)** सुन्दर धर्म सम्बन्धी कर्मों से युक्त परमेश्वर **(इमाम्)** इस **(पृथिवीम्)** भूमि और **(द्याम्)** प्रकाशस्वरूप आदि लोक को तथा **(सूर्यम्)** सूर्य लोक को **(उत)** और भी **(उषसम्)** दिन को **(जजान)** उत्पन्न करता **(दाधार)** धारण करता वा पुष्ट करता है, जिस **(इन्द्रस्य)** परमात्मा के **(विश्वे)** सम्पूर्ण **(देवाः)** पृथिवी आदि वा विद्वान् लोग **(व्रतानि)** सत्य विचारों को **(सुकृता)** उत्तम **(पुरूणि)** बहुत **(कर्म)** कामों को **(न)** नहीं **(मिनन्ति)** नाश करते हैं, उसकी आप और हम लोग उपासना करें॥८॥

भावार्थः-परमेश्वर के पवित्र होने से सम्पूर्ण सामर्थ्ययुक्त सबके उत्पन्न वा धारणकर्त्ता परमेश्वर के स्वरूपपरिमित सामर्थ्य वा कर्म को कोई भी नाश नहीं कर सकता है और जो लोग इस परमेश्वर की सत्यभावना से उपासना करते हैं, वे भी पवित्र होकर सामर्थ्ययुक्त होते हैं॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अद्रोघ सत्यं तव तन्महित्वं सद्यो यज्जातो अपिबो ह सोमम्।

न द्याव इन्द्र तवसस्त ओजो नाहा न मासाः शरदो वरन्त॥९॥

अद्रोघ। सत्यम्। तव। तत्। महिऽत्वम्। सद्यः। यत्। जातः। अपिबः। ह। सोमम्। न। द्यावः। इन्द्र। तवसः। ते। ओजः। न। अहा। न। मासाः। शरदः। वरन्त॥९॥

पदार्थः-**(अद्रोघ)** द्रोहरहित **(सत्यम्)** सत्यभाषणादिक्रियोज्ज्वलम् **(तव)** **(तत्)** सः **(महित्वम्)** महिमानम् **(सद्यः)** **(यत्)** यः **(जातः)** प्रकटः **(अपिबः)** पिबति **(ह)** किल **(सोमम्)** सर्वस्माज्जगतो रसम् **(न)** **(द्यावः)** प्रकाशमया लोकाः **(इन्द्र)** परमैश्वर्य्यप्रद **(तवसः)** बलस्य **(ते)** तव **(ओजः)** पराक्रमम् **(न)** **(अहा)** अहानि दिनानि **(न)** निषेधे **(मासाः)** चैत्रादयः **(शरदः)** वसन्तादयः **(वरन्त)** वारयन्ति॥९॥

अन्वयः-हे अद्रोघेन्द्र जगदीश्वर! यद्यः सद्यो जातः सूर्यः सोममपिबस्तद्यस्य तव सत्यं महित्वं नोल्लङ्घयति ते तवस ओजो न द्यावो नाहा न मासाः शरदश्च वरन्त तं ह भवन्तं वयं निरन्तरं सेवेमहि॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा परमेश्वरः कञ्चिन्न दुह्यति तथा यूयमपि भवत यस्य सृष्टौ सूर्य्यादयो महान्तः पदार्था विद्यन्ते यस्य स्वरूपस्य प्रभावस्य वान्तं कोऽपि न गच्छति स एवाऽस्माकमिष्ट-देवोऽस्ति॥९॥

पदार्थः-हे **(अद्रोघ)** द्रोह से रहित **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य के दाता जगदीश्वर! **(यत्)** जो **(सद्यः)** तत्काल **(जातः)** प्रकट हुआ सूर्य **(सोमम्)** सब जगत् से रस को **(अपिबः)** पीता-खींचता है **(तत्)** वह जिन **(तव)** आपके **(सत्यम्)** सत्य **(महित्वम्)** महिमा को **(न)** नहीं उल्लङ्घन कर सकता है **(ते)** आपके **(तवसः)** बल के **(ओजः)** प्रभाव को न **(द्यावः)** प्रकाशस्वरूप लोक **(न)** न **(अहा)** दिन **(न)** न **(मासाः)** चैत्र आदि महीने और न **(शरदः)** वसन्त आदि ऋतुएँ **(वरन्त)** वारण करती हैं **(ह)** उन्हीं आपकी हम लोग निरन्तर सेवा करें॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे परमेश्वर किसी से द्रोह नहीं करता है, वैसे आप लोग भी हूजिये। जिस परमेश्वर की सृष्टि में सूर्य्य आदि बड़े-बड़े पदार्थ विद्यमान हैं और जिसके स्वरूप वा प्रभाव के अन्त को कोई भी नहीं प्राप्त होता है, वही हम लोगों का इष्टदेव है॥९॥

कथं जन्मनः साफल्यं स्यादित्याह॥

किस प्रकार जन्म की सफलता हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वं स॒द्यो अ॑पिबो जा॒त इ॑न्द्र॒ मदा॑य॒ सोमं॑ प॒र॒मे व्यो॑मन्।

यद्ध॒ द्यावा॑पृथि॒वी आवि॑वेशी॒रथा॑भवः पू॒र्व्यः का॑रु॒धाया॑ः॥१०॥१०॥

त्वम्। स॒द्यः। अ॒पि॒बः। जा॒तः। इ॒न्द्र॒। मदा॑य। सोम॑म्। प॒र॒मे। वि॒ऽओ॑मन्। यत्। ह। द्यावा॑पृथि॒वी इति॑। आ। अवि॑वेशीः। अथ॑। अ॒भ॒वः। पू॒र्व्यः। का॒रु॒ऽधाया॑ः॥१०॥

पदार्थः-**(त्वम्)** **(सद्यः)** शीघ्रम् **(अपिबः)** पिबसि **(जातः)** उत्पन्नः सन् **(इन्द्र)** इन्द्रियाऽधिष्ठातर्जीव **(मदाय)** आनन्दाय **(सोमम्)** बलबुद्धिवर्धकं रसम् **(परमे)** सर्वोत्कृष्टे **(व्योमन्)** व्यापके **(यत्)** यः **(ह)** किल **(द्यावापृथिवी)** प्रकाशभूमी **(आ)** समन्तात् **(अविवेशीः)** पुनः पुनराविश **(अथ)** आनन्तर्ये **(अभवः)** भवेः **(पूर्व्यः)** पूर्वैः कृतः **(कारुधायाः)** यः कारून् शिल्पीन् दधाति सः॥१०॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं परमे व्योमन् सद्यो जातः सन् मदाय सोममपिबोऽथ यद्यः पूर्व्यः कारुधाया अभवः स त्वं ह द्यावापृथिवी आविवेशीः॥१०॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ब्रह्मचर्य्येण शीघ्रं विद्वांसो भूत्वा युक्ताऽऽहारविहारणोऽरोगाः सन्तः परमात्मन्यासीनाः सृष्टिपदार्थविद्यासु सर्वे प्रविशन्तु येन जन्मसाफल्यं स्यात्॥१०॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** इन्द्रियों के अधिष्ठाता जीव! **(त्वम्)** आप **(परमे)** उत्तम **(व्योमन्)** आकाशवत् व्यापक आत्मज्ञान में **(सद्यः)** शीघ्र **(जातः)** प्रकट वा प्रसिद्ध हुए **(मदाय)** आनन्द के लिये **(सोमम्)** बल और बुद्धि को बढ़ानेवाले रस को **(अपिबः)** पीते हैं **(अथ)** इसके अनन्तर **(यत्)** जो **(पूर्व्यः)** पूर्व लोगों में श्रेष्ठ **(कारुधायाः)** शिल्पी जनों का धारणकर्त्ता **(अभवः)** हो वह आप **(ह)** निश्चय से **(द्यावापृथिवी)** प्रकाश और भूमि में **(आ)** सब ओर से **(आविवेशीः)** बारम्बार प्रवेश कीजिये॥१०॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! ब्रह्मचर्य्य से शीघ्र विद्वान् और नियमित आहार-विहार से रोगरहित होके परमात्मा की आराधना करते हुए सृष्टि और पदार्थ विद्याओं में आप सब प्रवेश करें, जिससे जन्म की सफलता हो॥१०॥

पुना राजपुरुषाः किं कुर्य्युरित्याह॥

फिर राजपुरुष क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

अहन्नहिं परिशयानमर्णं ओजायमानं तुविजात तव्यान्।
न ते महित्वमनु भूदध द्यौर्यदन्यया स्फिग्या३ क्षामवस्थाः॥११॥

अहन्। अहिम्। परिऽशयानम्। अर्णः। ओजायमानम्। तुविऽजात। तव्यान्। न। ते। महिऽत्वम्। अनु। भूत्। अध। द्यौः। यत्। अन्यया। स्फिग्या। क्षाम्। अवस्थाः॥११॥

पदार्थः-**(अहन्)** हन्ति **(अहिम्)** मेघम् **(परिशयानम्)** सर्वत आकाशे शयानमिव वर्त्तमानम् **(अर्णः)** उदकम् **(ओजायमानम्)** बलयन्तम् **(तुविजात)** बहुषु प्रसिद्ध **(तव्यान्)** अतिशयेन बलवान्। अत्रेयसुन् ईकारलोपः। **(न)** **(ते)** तव **(महित्वम्)** महत्त्वम् **(अनु)** **(भूत्)** भवेत् **(अध)** अथ **(द्यौः)** प्रकाशः **(यत्)** यः **(अन्यया)** **(स्फिग्या)** मध्यस्थावयवरूपया **(क्षाम्)** पृथिवीम् **(अवस्थाः)** वस्ते॥११॥

अन्वयः-हे तुविजात! तव्यान् यद्यस्त्वं यथा द्यौरोजायमानं परिशयानमहिमहन्नर्णो निपातयति यथा सूर्य्यस्य महित्वमनुभूद्यथाऽयं मेघोऽधान्यया स्फिग्या क्षामाच्छादयति तथा त्वं शत्रूनवस्था यतस्ते महित्वं न छिन्द्युः॥११॥

भावार्थः-हे राजपुरुषा! यथा सूर्योऽन्तरिक्षगतं बलायमानं हत्वा भूमौ निपात्य तज्जलेन प्राणिनः पोषयति तथैवाऽधर्मिष्ठं शत्रुं हत्वा तद्वैभवेन राज्यं पालयत॥११॥

पदार्थः-हे **(तुविजात)** बहुत लोगों में प्रसिद्ध **(तव्यान्)** अत्यन्त बलयुक्त! **(यत्)** जो आप जैसे **(द्यौः)** सूर्यप्रकाश **(ओजायमानम्)** बल को प्राप्त होते हुए **(परिशयानम्)** सब ओर से आकाश में सोते जैसे वर्त्तमान **(अहिम्)** मेघ को **(अहन्)** नाश करता है **(अर्णः)** जल को गिराता है और जैसे सूर्य्य का **(महित्वम्)** बड़ापन **(अनु)** **(भूत्)** हो वा जैसे यह मेघ **(अध)** तदनन्तर **(अन्यया)** दूसरी **(स्फिग्या)** मध्य के अवयवरूप से **(क्षाम्)** पृथिवी को ढांपता है, वैसे आप शत्रुओं को **(अवस्थाः)** घेर के वर्त्तमान हूजिये जिससे **(ते)** वे आपकी महिमा को **(न)** नहीं काटें॥११॥

भावार्थः-हे राजपुरुषो! जैसे सूर्य्य अन्तरिक्ष में वर्त्तमान बलवान् मेघ का नाश और भूमि में गिरा कर उसके जल से प्राणियों का पोषण करता है, वैसे ही अधर्म में वर्त्तमान शत्रु का नाश करके उसके ऐश्वर्य्य से राज्य का पालन करो॥११॥

पुनर्मनुष्याः किं कुर्युरित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

य॒ज्ञो हि त॑ इन्द्र॒ वर्ध॑नो भू॒दुत प्रि॒यः सु॒तसो॑मो मि॒येधः॑।

य॒ज्ञेन॑ य॒ज्ञम॑व य॒ज्ञियः॒ सन् य॒ज्ञस्ते॒ वज्र॑महि॒हत्य॑ आवत्॥१२॥

य॒ज्ञः। हि। ते॒। इ॒न्द्र॒। वर्ध॑नः। भू॒त्। उ॒त। प्रि॒यः। सु॒तऽसो॑मः। मि॒येधः॑। य॒ज्ञेन॑। य॒ज्ञम्। अ॒व॒। य॒ज्ञियः॑। सन्। य॒ज्ञः। ते॒। वज्र॑म्। अ॒हि॒ऽहत्ये॑। आ॒व॒त्॥१२॥

पदार्थः-(**यज्ञः**) सङ्गन्तव्यो व्यवहारः (**हि**) यतः (**ते**) तव (**इन्द्र**) परमैश्वर्य्यप्रापक (**वर्धनः**) उन्नेता (**भूत्**) भवति (**उत**) अपि (**प्रियः**) प्रीतिसम्पादकः (**सुतसोमः**) सुतं निष्पन्नं सोम ऐश्वर्य्यं यस्मात्सः (**मियेधः**) येन मिनोति दुःखं प्रक्षिपति सः। अत्र बहुलकादौणादिक एध प्रत्ययः। (**यज्ञेन**) सङ्गतेन कर्मणा (**यज्ञम्**) सङ्गन्तव्यं व्यवहारम् (**अव**) रक्ष (**यज्ञियः**) यज्ञेषु कुशलः (**सन्**) (**यज्ञः**) सङ्गतो व्यवहारः (**ते**) तव (**वज्रम्**) शस्त्रविशेषम् (**अहिहत्ये**) अहेर्मेघस्य हत्या हननं पतनं येन तस्मिन्। निमित्तार्थेऽत्र सप्तमी। (**आवत्**) रक्षेत्॥१२॥

अन्वयः-हे इन्द्र! हि यतस्तेऽहिहत्ये वर्षकर्मनिमित्तो यज्ञो वर्धनः सुतसोमो मियेध उत प्रियो भूत्। यस्य ते यज्ञो वज्रमावत् स यज्ञियः संस्त्वं यज्ञेन यज्ञमव॥१२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यूयं यदि सत्क्रियया सत्क्रिया वर्धयेत् तर्हि यूयं रक्षिताः सन्तोऽन्यानपि रक्षितुमर्हत॥१२॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य के प्राप्त करानेवाले (**हि**) जिससे कि (**ते**) आपका (**अहिहत्ये**) वर्षा का निमित्त (**यज्ञः**) पदार्थों का संयोग करना रूप व्यवहार (**वर्धनः**) उन्नतिकर्त्ता (**सुतसोमः**) ऐश्वर्य्य की उत्पत्तिकर्त्ता (**मियेधः**) दुःख का नाशकर्त्ता (**उत**) और भी (**प्रियः**) प्रीति का उत्पत्ति करनेवाला (**भूत्**) होता है जिन (**ते**) आपका (**यज्ञः**) पदार्थों का मेल करना रूप व्यवहार (**वज्रम्**) शस्त्र विशेष की (**आवत्**) रक्षा करे वह (**यज्ञियः**) यज्ञों में चतुर (**सन्**) हुए आप (**यज्ञेन**) सङ्गत कर्म से (**यज्ञम्**) सङ्गत व्यवहार की (**अव**) रक्षा करो॥१२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! आप लोग जो उत्तम क्रिया से उत्तम क्रियाओं को बढ़ावें तो आप लोग रक्षित हुए अन्य जनों की भी रक्षा करने के योग्य होवें॥१२॥

अथ कीदृशा जनाः सुखमाप्तुमर्हन्तीत्याह॥

अब कैसे मनुष्य सुख को प्राप्त हो सकते हैं, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यज्ञेनेन्द्रमवसा चक्रे अर्वागैनं सुम्नाय नव्यसे ववृत्याम्।
यः स्तोमेभिर्वावृधे पूर्व्येभिर्यो मध्यमेभिरुत नूतनेभिः॥ १३॥

यज्ञेन। इन्द्रम्। अवसा। आ। चक्रे। अर्वाक्। आ। एनम्। सुम्नाय। नव्यसे। ववृत्याम्। यः। स्तोमेभिः। ववृधे। पूर्व्येभिः। यः। मध्यमेभिः। उत। नूतनेभिः॥ १३॥

पदार्थः-(**यज्ञेन**) युक्तेन व्यवहारेण (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्य्यम् (**अवसा**) रक्षणाद्येन (**आ**) (**चक्रे**) समन्तात् करोति (**अर्वाक्**) पश्चात् (**आ**) (**एनम्**) (**सुम्नाय**) सुखाय (**नव्यसे**) अतिशयेन नवीनाय (**ववृत्याम्**) वर्त्तयेयम्। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदं **बहुलं छन्दसी**ति शपः श्लुः। (**यः**) (**स्तोमेभिः**) प्रशंसितैः कर्मभिः (**वावृधे**) वर्धते। अत्र**ान्येषामपी**त्यभ्यासदीर्घः। (**पूर्व्येभिः**) पूर्वेषु साधुभिः (**यः**) (**मध्यमेभिः**) मध्ये भवैः (**उत**) (**नूतनेभिः**) नवीनैः॥ १३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथाऽहं यः पूर्व्येभिर्मध्यमेभिरुत नूतनेभिः स्तोमेभिर्वावृधे यो नव्यसे सुम्नाय यज्ञेनावसेन्द्रमा चक्रे। अर्वागेनं रक्षति तमाववृत्यां तथा भवन्तोऽप्येतत्कर्माऽनुतिष्ठन्तु॥ १३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! अतीतव्यवहारशेषज्ञतया मध्यमानां रक्षणेन नूतनेन प्रयत्नेन वर्धन्ते तेऽग्रे नवीनं नवीनं सुखं प्राप्तुमर्हन्ति नेतरेऽलसा मूढाः॥ १३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे मैं (**यः**) जो (**पूर्व्येभिः**) प्राचीनों में कुशल और (**मध्यमेभिः**) बीच में हुए (**उत**) और भी (**नूतनेभिः**) नवीन (**स्तोमेभिः**) प्रशंसायुक्त कर्मों से (**वावृधे**) बढ़ता है (**यः**) जो (**नव्यसे**) नवीन (**सुम्नाय**) सुख के लिये (**यज्ञेन**) युक्त व्यवहार (**अवसा**) रक्षा आदि से (**इन्द्रम्**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य को (**आ चक्रे**) अच्छा करता है (**अर्वाक्**) पीछे (**एनम्**) इसकी रक्षा करता है, उसके समीप (**आ**) (**ववृत्याम्**) प्राप्त होऊं, वैसे आप लोग भी इस कर्म को करें॥ १२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य व्यतीत हुए व्यवहार के शेष मर्म को जानने, मध्यम पुरुषों की रक्षा करने और नवीन प्रयत्न से वृद्धि को प्राप्त होते हैं, वे लोग उससे अनन्तर नवीन-नवीन सुख को प्राप्त होने योग्य होते हैं, न कि अन्य आलस्ययुक्त और मूर्ख पुरुष॥ १३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

विवेष यन्मा धिषणा जजान स्तवै पुरा पार्यादिन्द्रमह्नः।
अंहसो यत्र पीपरद्यथा नो नावेव यान्तमुभये हवन्ते॥ १४॥

विवेष। यत्। मा। धिषणा। जजान। स्तवै। पुरा। पार्यात्। इन्द्रम्। अह्नः। अंहसः। यत्र। पीपरत्। यथा। नः। नावाऽइव। यान्तम्। उभये। हवन्ते॥१४॥

पदार्थः-(**विवेष**) व्याप्नोति (**यत्**) या (**मा**) माम् (**धिषणा**) वाणी (**जजान**) जनयति (**स्तवै**) प्रशंसानि (**पुरा**) (**पार्यात्**) पारं गमयेत् (**इन्द्रम्**) ऐश्वर्य्यम् (**अह्नः**) दिवसात् (**अंहसः**) अपराधात् (**यत्र**) यस्मिन् व्यवहारे (**पीपरत्**) पारयेत् (**यथा**) येन प्रकारेण (**नः**) अस्मभ्यम् (**नावेव**) नौवत् (**यान्तम्**) गच्छन्तम् (**उभये**) दूरसमीपस्था जनाः (**हवन्ते**) आह्वयन्ते॥१४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यद्या धिषणा मा विवेष जजान तामहं स्तवै याह्न इन्द्रं पुरा पार्याद् यत्रांऽहसो मां पीपरद्यथा नो यान्तमुभये नावेव हवन्ते तथा नोऽस्मान् सर्व आह्वयन्तु॥१४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। मनुष्यैः सा वाणी प्रज्ञा च संग्राह्या या सर्वदा दुष्टाचारात् पृथग्रक्ष्य दुःखान्नौवत् पारं नयेत्॥१४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यत्**) जो (**धिषणा**) वाणी (**मा**) मुझको (**विवेष**) व्याप्त होती और (**जजान**) उत्पन्न करती है, उसकी मैं (**स्तवै**) प्रशंसा करूं जो (**अह्नः**) दिन से (**इन्द्रम्**) ऐश्वर्य को (**पुरा**) प्रथम (**पार्यात्**) पार पहुँचावे वा (**यत्र**) जिस व्यवहार में (**अंहसः**) अपराध से मुझको (**पीपरत्**) पार लगावे वा (**यथा**) जिस प्रकार से (**नः**) हम लोगों के अर्थ (**यान्तम्**) जाते हुए को (**उभये**) दूर और समीप में वर्त्तमान लोग (**नावेव**) नौका के सदृश (**हवन्ते**) पुकारते हैं, वैसे हम लोगों को सब लोग पुकारें॥१४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि उस वाणी और बुद्धि को ग्रहण करें जो सब समय में दुष्ट आचारण से पृथक् रख के दुःख से नौका के सदृश पार उतारें॥१४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आपूर्णो अस्य कलशः स्वाहा सेक्तेव कोशं सिसिचे पिबध्यै।
समु प्रिया आववृत्रन् मदाय प्रदक्षिणिदभि सोमास इन्द्रम्॥१५॥

आऽपूर्णः। अस्य। कलशः। स्वाहा। सेक्ताऽइव। कोशम्। सिसिचे। पिबध्यै। सम्। ऊम् इति। प्रियाः। आ। अववृत्रन्। मदाय। प्रऽदक्षिणित्। अभि। सोमासः। इन्द्रम्॥१५॥

पदार्थः-(**आपूर्णः**) समन्तात् पूरितः (**अस्य**) (**कलशः**) कुम्भः (**स्वाहा**) सत्यया क्रियया (**सेक्तेव**) पूरकवत् (**कोशम्**) मेघम्। **कोश इति मेघनामसु पठितम्।** (निघं०१.१०) (**सिसिचे**) सिञ्चति (**पिबध्यै**) पातुम् (**सम्**) (**उ**) (**प्रियाः**) कमनीयाः (**आ**) समन्तात् (**अववृत्रन्**) आवृण्वन्ति (**मदाय**)

आनन्दाय **(प्रदक्षिणित्)** यः प्रदक्षिणमेति सः। अत्र **शकन्ध्वादे**राकृतिगणत्वात् पररूप-मेकादेशः। **(अभि)** आभिमुख्ये **(सोमासः)** ऐश्वर्य्ययुक्ताः **(इन्द्रम्)** सूर्य्यम्॥१५॥

अन्वयः-ये सोमासः प्रिया मदायेन्द्रमभ्याववृत्रन् त उ अस्य जगतो मध्ये पिबध्यै सेक्तेव कोशं सं सिसिचे स्वाहा आपूर्णः कलशः प्रदक्षिणिदापूर्णः कलश इव सुखकरो जायते॥१५॥

भावार्थः-ये धनादिकं प्राप्यान्येभ्यो यथा सुपात्रं सद्व्यवहारं च विज्ञाय ददति ते सेक्ता कुम्भमिव सर्वान् पूर्णसुखान् कुर्वन्ति॥१५॥

पदार्थः-जो **(सोमासः)** ऐश्वर्य्य से युक्त **(प्रियाः)** कामना करने योग्य **(मदाय)** आनन्द के लिये **(इन्द्रम्)** सूर्य्य को **(अभि)** सम्मुख **(आ)** चारों ओर से **(अववृत्रन्)** घेरते हैं वे **(उ)** **(अस्य)** इस संसार के मध्य में **(पिबध्यै)** पान करने के लिये **(सेक्तेव)** पूर्ण करनेवाले के तुल्य **(कोशम्)** मेघ को **(सम्)** **(सिसिचे)** सींचते हैं **(स्वाहा)** सत्य क्रिया से **(आपूर्णः)** चारों ओर से भरा हुआ **(कलशः)** घड़ा **(प्रदक्षिणित्)** दाहिनी ओर चलनेवाला पूर्ण घड़े के तुल्य सुखकारक होता है॥१५॥

भावार्थः-जो लोग धन आदि को प्राप्त होके औरों के लिये सुपात्र और उत्तम व्यवहार करनेवाले को जान के देते हैं, वे लोग सींचनेवाला घड़े को जैसे वैसे सम्पूर्ण जनों को पूर्ण सुखयुक्त करते हैं॥१५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

न त्वा॑ ग॒भी॒रः पु॑रुहूत॒ सिन्धु॒र्नाद्र॑यः॒ परि॒ षन्तो॑ वरन्त।

इ॒त्था सखि॑भ्य इषि॒तो यदि॒न्द्रा दृ॒ळ्हं चि॒दरु॑जो॒ गव्य॑मू॒र्वम्॥१६॥

न। त्वा॒। ग॒भी॒रः। पु॒रु॒ऽहू॒त॒। सिन्धुः॑। न। अद्र॑यः। परि॑। सन्तः॑। व॒र॒न्त॒। इ॒त्था। सखि॑ऽभ्यः। इ॒षि॒तः। यत्। इ॒न्द्र॒। आ। दृ॒ळ्हम्। चि॒त्। अरु॑जः। गव्य॑म्। ऊ॒र्वम्॥१६॥

पदार्थः-**(न)** निषेधे **(त्वा)** त्वाम् **(गभीरः)** गाम्भीर्यगुणोपेतः **(पुरुहूत)** बहुभिः प्रशंसित **(सिन्धुः)** समुद्रः **(न)** **(अद्रयः)** मेघाः पर्वता वा **(परि)** सर्वतः **(सन्तः)** **(वरन्त)** वारयन्ति **(इत्था)** अनेन प्रकारेण **(सखिभ्यः)** मित्रेभ्यः **(इषितः)** प्रेरितः **(यत्)** यः **(इन्द्र)** परमैश्वर्यप्रद **(आ)** समन्तात् **(दृढम्)** स्थिरम् **(चित्)** **(अरुजः)** रुजति **(गव्यम्)** गवामिदम् **(ऊर्वम्)** निरोधस्थानम्॥१६॥

अन्वयः-हे पुरुहूतेन्द्र राजन्! यं त्वा गभीरः सिन्धुर्न परि वरन्ताऽद्रयः सन्तो न परि वरन्त यद्यश्चिद् दृढं गव्यमूर्वमारुजः स सखिभ्य इषितस्त्वमित्था केनासत्कर्त्तव्यो भवेः॥१६॥

भावार्थः-हे विद्वांसो! यथा समुद्राः पर्वताश्च सूर्य्यं निवारयितुं न शक्नुवन्ति तथैव बहुमित्राः शत्रुभिर्निरोद्धुमशक्या जायन्ते॥१६॥

पदार्थः-हे **(पुरुहूत)** बहुतों से प्रशंसा किये गये **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य के दाता राजन्! जिन **(त्वा)** आपको **(गभीरः)** गाम्भीर्य गुणों से युक्त **(सिन्धुः)** समुद्र **(न)** नहीं **(परि)** सब ओर से **(वरन्त)** वारण करते हैं, **(अद्रयः)** मेघ वा पर्वत **(सन्तः)** वर्त्तमान होते हुए **(न)** नहीं सब ओर से वारण करते हैं, **(यत्)** जो **(दृढम्)** स्थिर **(चित्)** भी **(गव्यम्)** गौओं का **(ऊर्वम्)** निरोधस्थान का **(आ, अरुजः)** भङ्ग करते हो, वह **(सखिभ्यः)** मित्रों के लिये **(इषितः)** प्रेरित हुए आप **(इत्था)** इस प्रकार किसी जन से सत्कार नहीं करने योग्य होवें॥१६॥

भावार्थः-हे विद्वान् लोगो! जैसे समुद्र और पर्वत सूर्य्य को निवारण नहीं कर सकते, वैसे ही बहुत मित्रोंवाले जन शत्रुओं से निवारण करने के शक्य नहीं होते हैं॥१६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम्॥१७॥११॥

शुनम्। हुवेम। मघऽवानम्। इन्द्रम्। अस्मिन्। भरे। नृऽतमम्। वाजऽसातौ। शृण्वन्तम्। उग्रम्। ऊतये। समत्ऽसु। घ्नन्तम्। वृत्राणि। सम्ऽजितम्। धनानाम्॥१७॥

पदार्थः-**(शुनम्)** सुखम्। **शुनमिति सुखनामसु पठितम्।** (निघं०३.६) **(हुवेम)** आह्वयेम **(मघवानम्)** परमधनवन्तम् **(इन्द्रम्)** दुष्टविदारकम् **(अस्मिन्)** **(भरे)** संग्रामे **(नृतमम्)** शुभैर्गुणैः सर्वोत्कृष्टम् **(वाजसातौ)** धनान्नादिविभाजके **(शृण्वन्तम्)** **(उग्रम्)** तेजस्वभावम् **(ऊतये)** रक्षणाद्याय **(समत्सु)** संग्रामेषु **(घ्नन्तम्)** हन्तारम् **(वृत्राणि)** सुवर्णादीनि धनानि। **वृत्रमिति धननामसु पठितम्।** (निघं०२.१०) **(सञ्जितम्)** सम्यग्जिताः शत्रवो येन तम् **(धनानाम्)** द्रव्याणाम्॥१७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा वयमूतये समत्सु घ्नन्तमुग्रं धनानां सञ्जितं वृत्राणि शृण्वन्तमस्मिन् वाजसातौ भरे नृतमं मघवानमिन्द्रं हुवेम तत्सङ्गेन शुनं प्राप्नुयाम तथैतं स्तुत्वा यूयमप्येतत्प्राप्नुत॥१७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यदि राजादयोऽध्यक्षा राजविद्याकुशलान् योद्धृन् न्यायाधीशान् प्राड्विवाकान् सेवकाँश्च सत्कृत्य संगृह्णीयुस्तर्हि तेषां सदैव विजयः कीर्तिरैश्वर्य्यं च जायत इति॥१७॥

अत्र सोममनुष्येश्वरविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्वात्रिंशत्तमं सूक्तमेकादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे हम लोग **(ऊतये)** रक्षा आदि के लिये **(समत्सु)** संग्रामों में **(घ्नन्तम्)**

नाश करनेवाले **(उग्रम्)** तेजस्वभावयुक्त **(धनानाम्)** द्रव्यों के **(सञ्जितम्)** और उत्तम प्रकार शत्रुओ को जीतनेवाले **(वृत्राणि)** सुवर्ण आदि धनों को **(शृण्वन्तम्)** सुनते हुए को **(अस्मिन्)** इस **(वाजसातौ)** धन और अन्न आदि के विभाग करनेवाले **(भरे)** संग्राम में **(नृतमम्)** उत्तम गुणों से सर्वोत्तम **(मघवानम्)** परम धनवान् और **(इन्द्रम्)** दुष्ट जनों के नाशकर्त्ता को **(हुवेम)** पुकारें और उसके सङ्ग से **(शुनम्)** सुख को प्राप्त होवें, वैसे इसकी स्तुति करके आप लोग भी इसको प्राप्त हों॥१७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा आदि प्रधान पुरुष, राजविद्या में चतुर, योद्धा, न्यायाधीश पुरुषों, प्राड्विवाकों (वकीलों) और सेवक पुरुषों का सत्कार करके ग्रहण करें तो उन राजाओं का सदैव विजय, यश, कीर्त्ति और ऐश्वर्य्य होता है॥१७॥

इस मन्त्र **[**=सूक्त**]** में सोम, मनुष्य, ईश्वर और बिजुली के गुण वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह बत्तीसवां सूक्त और ग्यारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ त्रयोदशर्चस्य त्रयस्त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। नद्यो देवताः। १ भुरिक् पङ्क्तिः। ५ स्वराट् पङ्क्तिः। ७ पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २, १० विराट् त्रिष्टुप्। ३, ८, ११, १२ त्रिष्टुप्। ४, ६, ९ निचृत् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। १३ उष्णिक् छन्दः। ऋषभः स्वरः॥

अथ नदीदृष्टान्तेन स्त्रीवर्णनमाह॥

अब तेरह ऋचावाले तैंतीसवे सूक्त का आरम्भ है। उसके पहिले मन्त्र में नदी के दृष्टान्त से स्त्री का वर्णन करते हैं॥

प्र पर्वतानामुशती उपस्थादश्वेइव विषिते हासमाने।
गावेव शुभ्रे मातरा रिहाणे विपाट्छुतुद्री पयसा जवेते॥ १॥

प्र। पर्वतानाम्। उशती इति। उपऽस्थात्। अश्वे इवेत्यश्वेऽइव। विसिते इति विऽसिते। हासमाने इति। गावाऽइव। शुभ्रे इति। मातरा। रिहाणे इति। विऽपाट्। शुतुद्री। पयसा। जवेते इति॥ १॥

पदार्थः-(**प्र**) (**पर्वतानाम्**) मेघानाम् (**उशती**) कामयमाने (**उपस्थात्**) समीपात् (**अश्वेइव**) अश्ववडवाविव (**विषिते**) विद्याशुभगुणकर्मव्याप्ते (**हासमाने**) (**गावेव**) यथा धेनुवृषभौ (**शुभ्रे**) श्वेते शुभगुणयुक्ते (**मातरा**) मान्यप्रदे (**रिहाणे**) आस्वदित्र्यौ। अत्र वर्णव्यत्ययेन लस्य स्थाने रः। (**विपाट्**) या विविधं पटति गच्छति विपाटयति वा सा (**शुतुद्री**) शु शीघ्रं तुदति व्यथयति सा (**पयसा**) जलेन। **पय इत्युदकनामसु पठितम्।** (निघं०१.१२) (**जवेते**) गच्छतः॥ १॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये अध्यापिकोपदेशिके मातरेव कन्यानां शिक्षामुशती पर्वतानामुपस्थादश्वेइव विषिते अश्वेइव हासमाने रिहाणे शुभ्रे गावेव पयसा विपाट्छुतुद्री प्रजवेते इव वर्त्तमाने भवेतां ते कन्यास्त्रीणामध्ययनोपदेशव्यवहारे नियोजयत॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यथा पर्वतानां मध्ये वर्त्तमाना नद्योऽश्वा इव धावन्ति गाव इव शब्दायन्ते तथैव प्रसन्नाः शुभगुणकर्मस्वभावाः विद्योन्नतिं कामयमानाः स्त्रियः कन्याः स्त्रियश्च सततं सुशिक्षरेन्॥ १॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो पढ़ाने और उपदेश देनेवाली (**मातरा**) मान्य देनेवालियों सी कन्याओं की शिक्षा को (**उशती**) कामना करनेवाली (**पर्वतानाम्**) मेघों के (**उपस्थात्**) समीप से (**अश्वेइव**) घोड़े और घोड़ी के सदृश (**विषिते**) विद्या और शुभ गुणयुक्त कर्मों से व्याप्त वा घोड़े और घोड़ी के सदृश (**हासमाने**) परस्पर प्रेम करती (**रिहाणे**) प्रीति से एक-दूसरे को सूंघती हुई (**शुभ्रे**) उत्तम गुणों से युक्त (**गावेव**) गौ और बैल के सदृश (**पयसा**) जल से (**विपाट्**) कई प्रकार चलने वा ढांपनेवाली (**शुतुद्री**) शीघ्र दुःखदायक (**प्र**) (**जवेते**) चलती हैं, वैसे वर्त्तमान होवें, उन अध्यापिका और उपदेशिका को कन्या और स्त्रियों के पढ़ाने और उपदेश करने में नियुक्त करो॥ १॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जैसे पर्वतों के मध्य में वर्त्तमान नदियां घोड़ों के सदृश दौड़ती और गौओं के सदृश शब्द करती हैं, वैसे ही प्रसन्न और उत्तम गुण, कर्म, स्वभावयुक्त विद्या की उन्नति की कामना करनेवाली स्त्रियाँ कन्याओं और स्त्रियों को निरन्तर शिक्षा देवें॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रेषिते प्रसवं भिक्षमाणे अच्छा समुद्रं रथ्येव याथः।

समाराणे ऊर्मिभिः पिन्वमाने अन्या वामन्यामप्येति शुभ्रे॥२॥

इन्द्रेषिते इतीन्द्रऽइषिते। प्रऽसवम्। भिक्षमाणे इति। अच्छ। समुद्रम्। रथ्याऽइव। याथः। समाराणे इति समऽआराणे। ऊर्मिऽभिः। पिन्वमाने इति। अन्या। वाम्। अन्याम्। अपि। एति। शुभ्रे इति॥२॥

पदार्थ:-(**इन्द्रेषिते**) इन्द्रेण सूर्य्येण वर्षाद्वारा प्रेरिते (**प्रसवम्**) प्रकृष्टमैश्वर्य्यम् (**भिक्षमाणे**) (**अच्छ**) सम्यक्। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**समुद्रम्**) समुद्द्रवन्त्यापो यस्मिंस्तं मेघं सागरं वा। **समुद्र इति मेघनामसु पठितम्।** (निघं०१.१०)[११] (**रथ्येव**) रथेषु साधू अश्वा इव (**याथः**) गच्छथः (**समाराणे**) सम्यक् समन्ताद्राणं दानं ययोस्ते (**ऊर्मिभिः**) तरङ्गैः (**पिन्वमाने**) सेक्त्र्यौ (**अन्या**) भिन्ना (**वाम्**) युवयोः (**अन्याम्**) (**अपि**) (**एति**) (**शुभ्रे**) शोभायमाने॥२॥

अन्वय:-हे मनुष्या! ये इन्द्रेषिते पिन्वमाने ऊर्मिभिः समुद्रं रथ्येव नद्याविव प्रसवं भिक्षमाणे समाराणे शुभ्रे अध्यापिकोपदेशिके अच्छ याथः। अन्या अन्यामप्येतीव हे अध्यापिकोपदेशिके! वामध्येतुं श्रोतुं वा प्राप्नुयुस्ता युवाभ्यां विद्याव्यवहारे नियोजनीया अध्यापनीयाश्च॥२॥

भावार्थ:-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यथा युवतयो यूनः पतीन् प्राप्य प्रसवमिच्छन्ति नद्यः समुद्रं गच्छन्त्यश्वा मार्गे रथं नयन्ति तथैवाऽध्यापिकोपदेशिकाभिर्विद्यासुशिक्षादानेन सर्वाः स्त्रियः शुभगुणकर्मस्वभावाः सम्पादनीयाः॥२॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जो (**इन्द्रेषिते**) सूर्य्य से वृष्टि के द्वारा प्रेरित की गईं (**पिन्वमाने**) सींचनेवाली (**उर्मिभिः**) तरङ्गों से (**समुद्रम्**) बहनेवाले जलों से युक्त मेघ वा सागर को (**रथ्येव**) रथों में चलने योग्य घोड़ों वा नदियों के सदृश (**प्रसवम्**) उत्तम ऐश्वर्य्य की (**भिक्षमाणे**) याचना करती हुई (**समाराणे**) उत्तम प्रकार सब तरह दान देनेवाली (**शुभ्रे**) शोभायुक्त होकर पढ़ाने और उपदेश करनेवाली स्त्रियाँ (**अच्छ**)

---

११. मेघवाचकनामसु समुद्रः पदं न दृश्यते, परन्तु अन्तरिक्षनामसु उपलभ्यते। सं०

अच्छे प्रकार **(याथः)** जावें **(अन्या)** कोई एक स्त्री **(अन्याम्)** दूसरी स्त्री को **(अपि)** **(एति)** प्रीति से मिलाती है वा हे पढ़ाने और उपदेश देनेवालियो! **(वाम्)** तुम दोनों के सम्बन्ध से जो स्त्रियाँ पढ़ने वा सुनने को प्राप्त हों, वे स्त्रियाँ तुमको विद्यासम्बन्धी व्यवहार में नियुक्त करनी तथा पढ़ानी चाहियें॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जैसे जवान स्त्रियाँ जवान पतियों को प्राप्त होके गर्भोत्पत्ति की इच्छा करती हैं और नदियां समुद्र के प्रति जाती हैं और घोड़े मार्ग में रथ को ले चलते हैं, वैसे ही पढ़ने और उपदेश देनेवालियों को चाहिये कि विद्या और उत्तम शिक्षा के दान से सम्पूर्ण स्त्रियों को उत्तम गुण, कर्म, स्वभावयुक्त करें॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अच्छा सिन्धुं मातृतमामयासं विपाशमुर्वीं सुभगामगन्म।
वत्समिव मातरा संरिहाणे समानं योनिमनु सञ्चरन्ती॥३॥

अच्छ। सिन्धुम्। मातृऽतमाम्। अयासम्। विऽपाशम्। उर्वीम्। सुऽभगाम्। अगन्म। वत्सम्ऽइव। मातरा। संरिहाणे इति सम्ऽरिहाणे। समानम्। योनिम्। अनु। सञ्चरन्ती इति सम्ऽचरन्ती॥३॥

पदार्थः-**(अच्छ)** उत्तमरीत्या। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। **(सिन्धुम्)** समुद्रम् **(मातृतमाम्)** अतिशयेन मातरो मातृवत्पालिका नद्यः। **मातर इति नदीनामसु पठितम्।** (निघं०१.१३) अत्र सुपां व्यत्ययः। **(अयासम्)** अयासिषं प्राप्नुयाम्। अत्र **वाच्छन्दसीतीडभावः।** **(विपाशम्)** विगता पाट् बन्धनं यस्यान्ताम् **(उर्वीम्)** महतीम् **(सुभगाम्)** सौभाग्ययुक्ताम् **(अगन्म)** प्राप्नुयाम **(वत्समिव)** यथा गौर्वत्सम् **(मातरा)** मातृवद्वर्त्तमाने **(संरिहाणे)** सम्यगास्वादकत्र्यौ **(समानम्)** **(योनिम्)** गृहम् **(अनु)** **(सञ्चरन्ती)** सम्यग्गच्छन्त्यौ जानन्त्यौ॥३॥

अन्वयः-यथा मातृतमां सिन्धुं प्राप्नुवन्ति तथैव वयं विपाशमुर्वीं सुभगामध्यापिकामुपदेशिकामगन्म। यथा संरिहाणे समानं योनिमनुसञ्चरन्ती मातरा वत्समिव मामध्यापनशिक्षार्थं प्राप्नुयातस्ते अहमच्छायासम्॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यथा समुद्रं नद्यो वत्सान् गावो दम्पती समानं गृहं च प्राप्नुतस्तथैवाध्यापिकोपदेशिका अस्मान् प्राप्नुवन्तु वयं च याः कन्याः सौभाग्यवत्यश्च ताः प्राप्नुयाम॥३॥

पदार्थः-जैसे **(मातृतमाम्)** अत्यन्त माता के सदृश पालने करनेवाली नदियां **(सिन्धुम्)** समुद्र के प्रति प्राप्त होती हैं, वैसे ही हम **(विपाशम्)** बन्धनरहित **(उर्वीम्)** बड़ी **(सुभगाम्)** सौभाग्य से युक्त पढ़ने और उपदेश देनेवाली स्त्री को **(अगन्म)** प्राप्त हों और जैसे **(संरिहाणे)** उत्तम प्रकार आस्वाद

करनेवाली स्त्रियाँ **(समानम्)** तुल्य **(योनिम्)** गृह को **(अनु) (सञ्चरन्ती)** अनुकूलता से उत्तम प्रकार चलतीं और जानती हुईं **(मातरा)** माता के सदृश वर्त्तमान **(वत्समिव)** जैसे गौ बछड़े को वैसे मुझको पढ़ाने और शिक्षा देने के लिये प्राप्त होवें, उनको मैं **(अच्छ)** अच्छे प्रकार **(अयासम्)** प्राप्त होऊं॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा [और] वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जैसे समुद्र को नदियां और बछड़ों को गौवें और स्त्री-पुरुष एक गृह को प्राप्त होते हैं, वैसे ही पढ़ाने और उपदेश देनेवाली स्त्रियाँ हम लोगों को प्राप्त हों और हम लोग जो कन्या और सौभाग्यवाली स्त्रियाँ हों, उनको प्राप्त हों॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एना वयं पयसा पिन्वमाना अनु योनिं देवकृतं चरन्तीः।

न वर्तवे प्रसवः सर्गतक्तः किंयुर्विप्रो नद्यो जोहवीति॥४॥

एना। वयम्। पयसा। पिन्वमानाः। अनु। योनिम्। देवऽकृतम्। चरन्तीः। न। वर्तवे। प्रऽसवः। सर्गऽतक्तः। किम्ऽयुः। विप्रः। नद्यः। जोहवीति॥४॥

पदार्थः-**(एना)** एनेन **(वयम्) (पयसा)** उदकेन **(पिन्वमानाः)** सिञ्चमानाः **(अनु) (योनिम्)** उदकम्। **योनिरित्युदकनामसु पठितम्।** (निघं०१.१२) **(देवकृतम्)** देवैर्विद्वद्भिः कृतं निष्पादितं शास्त्रम् **(चरन्तीः)** प्राप्नुवन्त्यः **(न) (वर्त्तवे)** वरितुं स्वीकर्त्तुम् **(प्रसवः)** सन्तानः **(सर्गतक्तः)** यः सर्ग उत्पत्तौ तक्तो हसितः। अत्र **वाच्छन्दसी**तीडभावः। **(किंयुः)** आत्मनः किमिच्छुः। अत्र **वाच्छन्दसी**ति क्यच् प्रतिषेधो न। **(विप्रः)** मेधावी **(नद्यः)** सरितः **(जोहवीति)** भृशं शब्दयति॥४॥

अन्वयः-या एना पयसा पिन्वमाना देवकृतं योनिमनु सञ्चरन्तीर्नद्यो वर्त्तवे न भवन्ति न निवर्त्तन्ते ता वयं प्राप्नुयाम। यः सर्गतक्तः प्रसवः किंयुर्विप्रो जोहवीति सोऽस्मान् प्राप्नुयात्॥४॥

भावार्थः-यथा सोदका नद्यः सर्वोपकारका भवन्ति कदाचिज्जलहीनां न भवन्ति तथैव यः कृतब्रह्मचर्य्ययोः स्त्रीपुरुषयोः सन्तानो भूत्वा धर्म्येण ब्रह्मचर्य्येणाऽखिला विद्याः प्राप्य विद्वान् जायते स एव सर्वानुपकर्त्तुं शक्नोति॥४॥

पदार्थः-जो **(एना)** इस **(पयसा)** जल से **(पिन्वमानाः)** सींचती हुई **(देवकृतम्)** विद्वानों ने किये शास्त्र और **(योनिम्)** जल को **(अनु, चरन्तीः)** अनुकूल प्राप्त होनेवाली **(नद्यः)** नदियां **(वर्त्तवे)** स्वीकार करने को **(न)** नहीं निवृत्त होती हैं, उनको **(वयम्)** हम लोग प्राप्त होवें जो **(सर्गतक्तः)** उत्पत्ति में प्रसन्न **(प्रसवः)** सन्तान **(किंयुः)** अपने को क्या इच्छा करनेवाला **(विप्रः)** बुद्धिमान् पुरुष **(जोहवीति)** बारम्बार शब्द करता है, वह हम लोगों को प्राप्त होवे॥४॥

भावार्थः-जैसे जल सहित नदियां सबकी उपकार करनेवाली होतीं और कभी जल से हीन नहीं

होती हैं, वैसे जो ब्रह्मचर्य से युक्त स्त्री और पुरुष का सन्तान उत्पन्न हो और धर्मसम्बन्धी ब्रह्मचर्य्य से सम्पूर्ण विद्याओं को प्राप्त होकर विद्वान् होता है, वही सबका उपकार कर सकता है॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

रमध्वं मे वचसे सोम्याय ऋतावरीरुप मुहूर्तमेवैः।

प्र सिन्धुमच्छा बृहती मनीषाऽवस्युरह्वे कुशिकस्य सूनुः॥५॥ १२॥

रमध्वम्। मे। वचसे। सोम्याय। ऋतऽवरीः। उप। मुहूर्तम्। एवैः। प्र। सिन्धुम्। अच्छ। बृहती। मनीषा। अवस्युः। अह्वे। कुशिकस्य। सूनुः॥५॥

पदार्थः-(**रमध्वम्**) क्रीडध्वम् (**मे**) मम (**वचसे**) वचनाय (**सोम्याय**) सोम इव शान्तिगुणयुक्ताय (**ऋतावरीः**) ऋतं पुष्कलमुदकं विद्यते यासु ताः (**उप**) (**मुहूर्तम्**) कालावयवम् (**एवैः**) प्रापकैर्गुणैः (**प्र**) (**सिन्धुम्**) समुद्रम् (**अच्छ**) सम्यक्। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**बृहती**) महती (**मनीषा**) प्रज्ञा (**अवस्युः**) आत्मनोऽव इच्छुः (**अह्वे**) प्रशंसामि (**कुशिकस्य**) विद्यानिष्कर्षप्राप्तस्य। अत्र वर्णव्यत्ययेन मूर्द्धन्यस्य तालव्यः। (**सूनुः**) अपत्यमिव वर्त्तमानः॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यूयं यथा ऋतावरीः सिन्धुमुपगच्छन्ति स्थिरा भवन्ति तथैवैवैर्मुहूर्त्तं मे सोम्याय वचसे रमध्वं तथैव कुशिकस्य सूनुरवस्युरहं या बृहती मनीषा तामच्छ प्राह्वे॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा नद्यः समुद्राऽभिमुखं गच्छन्ति तथैव मनुष्या विद्याधर्म्यव्यवहारं प्रत्यभिगच्छन्तु येन सुखेन समयो गच्छेत्॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! आप लोग जैसे (**ऋतावरीः**) बहुत जलों से युक्त नदी (**सिन्धुम्**) समुद्र को (**उप**) प्राप्त और स्थिर होती हैं, वैसे ही (**एवैः**) प्राप्त करानेवाले गुणों से (**मुहूर्त्तम्**) दो-दो घड़ी (**मे**) मेरे (**सोम्याय**) चन्द्रमा के तुल्य शान्तिगुणयुक्त (**वचसे**) वचन के लिये (**रमध्वम्**) क्रीड़ा करो, वैसे ही (**कुशिकस्य**) विद्या के निचोड़ को प्राप्त हुए सज्जन के (**सूनुः**) पुत्र के सदृश वर्त्तमान (**अवस्युः**) अपने को रक्षा चाहनेवाला मैं जो (**बृहती**) बड़ी (**मनीषाः**) बुद्धि उसकी (**अच्छ**) उत्तम प्रकार (**प्र**) (**अह्वे**) प्रशंसा करता हूं॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे नदियां समुद्र के सम्मुख जाती हैं, वैसे ही मनुष्य लोग विद्या और धर्मसम्बन्धी व्यवहार को प्राप्त हों, जिससे सुखपूर्वक समय व्यतीत होवे॥५॥

अथ सूर्यदृष्टान्तेन मनुष्यकर्त्तव्यमाह॥

अब सूर्य के दृष्टान्त से मनुष्य के कर्त्तव्य को कहते हैं॥

इन्द्रो॑ अ॒स्माँ अ॑रदद् वज्र॑बाहु॒रपा॑हन् वृ॒त्रं प॑रि॒धिं न॒दीना॑म्।
दे॒वो॑ऽनयत् सवि॒ता सु॑पा॒णिस्तस्य॑ व॒यं प्र॑स॒वे या॑म उ॒र्वीः॥६॥

इन्द्रः॑। अ॒स्मान्। अ॒र॒द॒त्। वज्र॑ऽबाहुः। अप॑। अ॒ह॒न्। वृ॒त्रम्। प॒रि॒ऽधिम्। न॒दीना॑म्। दे॒वः। अ॒न॒य॒त्। स॒वि॒ता। सु॒ऽपा॒णिः। तस्य॑। व॒यम्। प्र॒ऽस॒वे। या॒मः। उ॒र्वीः॥६॥

पदार्थः-(**इन्द्रः**) परमैश्वर्य्यवान् राजा (**अस्मान्**) (**अरदत्**) विलिखेत् (**वज्रबाहुः**) शस्त्रभुजः (**अप**) (**अहन्**) हन्ति (**वृत्रम्**) आवरकं मेघम् (**परिधिम्**) सर्वतो धीयन्ते नद्यो यस्मिँस्तम् (**नदीनाम्**) (**देवः**) दिव्यगुणस्वभावः (**अनयत्**) नयति (**सविता**) सूर्यः (**सुपाणिः**) शोभनहस्तः (**तस्य**) (**वयम्**) (**प्रसवे**) ऐश्वर्य्ये (**यामः**) प्राप्नुयामः (**उर्वीः**) बहुसुखप्रदाः प्रजाः॥६॥

अन्वयः-हे राजन्निन्द्रस्त्वं यथा सविता देवो नदीनां परिधिं वृत्रमपाहन् तदवयवानरदज्जलं भूमिं चानयत्तथा वज्रबाहुः सन्नस्मान् संरक्ष्य ससेवकांश्छत्रून् हन्यात् यः सुपाणिर्देवस्त्वमुर्वी रक्षेस्तस्य प्रसवे वयमानन्दं यामः॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्यो भूम्यादीनाकर्षणेन व्यवस्थाप्य वर्षाः कृत्वैश्वर्य्यं जनयति तथैव वयं सद्गुणानाकृष्याऽरीन् विजित्य राज्यश्रियं जनयेम॥

पदार्थः-हे राजन् (**इन्द्रः**) अत्यन्त ऐश्वर्य्यवान्! आप जैसे (**सविता**) सूर्य (**देवः**) उत्तम गुण, कर्म और स्वभावयुक्त (**नदीनाम्**) नदियों के (**परिधिम्**) चारों ओर वर्त्तमान (**वृत्रम्**) ढांपनेवाले मेघ को (**अप**) (**अहन्**) नाश करता है, उसके अवयवों को (**अरदत्**) खोदे और जल, भूमि को (**अनयत्**) प्राप्त करता, वैसे (**वज्रबाहुः**) शस्त्रधारी हो (**अस्मान्**) हम लोगों की रक्षा करके सेवकों के सहित शत्रुओं का नाश करें, जो (**सुपाणिः**) उत्तम हाथों से और उत्तम गुण, कर्म, स्वभाव से युक्त आप (**उर्वीः**) बहुत सुख की देनेवाली प्रजाओं की रक्षा करें (**तस्य**) उसके (**प्रसवे**) ऐश्वर्य्य में (**वयम्**) हम लोग आनन्द को (**यामः**) प्राप्त होवें॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य, भूमि आदि पदार्थों को आकर्षण से यथास्थान ठहरा और वृष्टि करके ऐश्वर्य को उत्पन्न करता है, वैसे ही हम लोग उत्तम गुणों का आकर्षण और शत्रुओं को जीत करके राज्य की शोभा को प्राप्त करें॥६॥

पुनर्मनुष्यः किं कुर्यादित्याह॥

फिर मनुष्य क्या करे, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र॒वाच्यं॑ शश्व॒धा वी॒र्यं१॒॑ तदिन्द्र॑स्य॒ कर्म॒ यद॒हिं॑ वि॒वृश्च॑त्।
वि वज्रे॑ण परि॒षदो॑ जघा॒नाय॒न्नापो॑ऽयन॑मि॒च्छमा॑नाः॥७॥

प्रऽवाच्यम्। शश्वधा। वीर्यम्। तत्। इन्द्रस्य। कर्म। यत्। अहिम्। विऽवृश्चत्। वि। वज्रेण। परिऽसदः। जघान। आयन्। आपः। अयनम्। इच्छमानाः॥७॥

पदार्थः-(**प्रवाच्यम्**) प्रवक्तुं योग्यम् (**शश्वधा**) शश्वदेव (**वीर्य्यम्**) बलम् (**तत्**) (**इन्द्रस्य**) सूर्य्यस्य (**कर्म**) (**यत्**) (**अहिम्**) (**विवृश्चत्**) छिनत्ति (**वि**) (**वज्रेण**) किरणेन (**परिषदः**) परिषीदन्ति यासु ताः सभाः (**जघान**) हन्ति (**आयन्**) प्राप्नुयुः (**आपः**) (**अयनम्**) भूमिस्थानम् (**इच्छमानः**) अभिलषन्तः॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः सूर्य्योऽहिं विवृश्चद्यदिन्द्रस्य वीर्य्यं कर्मास्ति तच्छश्वधा प्रवाच्यं यथा वज्रेण हता मेघस्याऽऽपोऽयनमायन् मेघं विजघान तथैवेच्छमानाः परिषदः कुर्य्युः॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यो धर्म्यं कर्म कृत्वा दुष्टनिवारणाय स्वबलं दर्शयेत् तस्य तत्कर्मप्रशंसनं सदैव कार्य्यं ये परिषदि सभ्याः स्युस्ते न्यायेन सर्वोन्नतिं चिकीर्षेयुः॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो सूर्य्य (**अहिम्**) मेघ को (**विवृश्चत्**) काटता है (**यत्**) जो (**इन्द्रस्य**) सूर्य्य का (**वीर्य्यम्**) बलरूप (**कर्म**) कर्म है (**तत्**) वह (**शश्वधा**) निरन्तर ही (**प्रवाच्यम्**) कहने योग्य, और जैसे (**वज्रेण**) किरण से विदीर्ण किये गये मेघ के (**आपः**) जल (**अयनम्**) भूमि स्थान को (**आयन्**) प्राप्त होवें मेघ को (**विजघान**) नाश करता है, वैसे ही (**इच्छमानाः**) इच्छा करते हुए जन (**परिषदः**) जिनमें बैठें, उन सभा को करें॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो धर्मसम्बन्धी काम करके दुष्ट पुरुषों के निवारण के लिये अपना पराक्रम दिखावे उसके उस कर्म की प्रशंसा सब काल में करनी चाहिये। जो लोग सभा में श्रेष्ठ होवें, वे न्याय से सब लोगों की उन्नति करने की इच्छा करें॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

एतद्वचो जरितर्मापि मृष्ठा आ यत्ते घोषानुत्तरा युगानि।

उक्थेषु कारो प्रति नो जुषस्व मा नो नि कः पुरुषत्रा नमस्ते॥८॥

एतत्। वचः। जरितरिति। मा। अपि। मृष्ठाः। आ। यत्। ते। घोषान्। उत्ऽतरा। युगानि। उक्थेषु। कारो इति। प्रति। नः। जुषस्व। मा। नः। नि। करिति कः। पुरुषऽत्रा। नमः। ते॥८॥

पदार्थः-(**एतत्**) (**वचः**) (**जरितः**) प्रशंसक (**मा**) निषेधे (**अपि**) (**मृष्ठाः**) सहेः। अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम्। (**आ**) (**यत्**) यानि (**ते**) तव (**घोषान्**) वाक्प्रयोगान् (**उत्तरा**) उत्तराणि युगानि वर्षाणि

(उक्थेषु) प्रशंसनीयेषु व्यवहारेषु **(कारो)** यः करोति तत्सम्बुद्धौ **(प्रति)** **(नः)** अस्मान् **(जुषस्व)** सेवस्व **(मा)** **(नः)** अस्मान् **(नि)** **(कः)** निकुर्य्याः **(पुरुषत्रा)** पुरुषान् **(नमः)** **(ते)** तुभ्यम्॥८॥

अन्वयः-हे जरितस्त्वमेतद्वचो माऽपि मृष्ठास्ते यद्यान्युत्तरा युगानि घोषान् प्राप्नुयुस्तान्युक्थेषु नोऽस्मान् प्राप्नुवन्तु। हे कारो! तैर्नोऽस्मान् प्रत्याजुषस्व पुरुषत्रा नो मा नि कोऽतस्ते नमोऽस्तु॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यावान् भूतकालो गतस्तत्रत्यानां कर्मणां शिष्टं कार्य्यं कर्त्तव्यं विज्ञाय वर्त्तमाने भविष्यति च यथोन्नतिर्भूत्वा विघ्नानि निवर्त्तेरँस्तथैवाऽनुतिष्ठत॥८॥

पदार्थः-हे **(जरितः)** प्रशंसा करनेवाले! आप **(एतत्)** इस **(वचः)** वचन को **(मा)** नहीं **(अपि मृष्ठाः)** सहो **(ते)** आपके **(यत्)** जो **(उत्तरा)** आगे के **(युगानि)** वर्ष **(घोषान्)** वाणी के प्रयोगों को प्राप्त होवे, वह **(उक्थेषु)** प्रशंसा करने योग्य व्यवहारों में **(नः)** हम लोगों को प्राप्त होवें। हे **(कारो)** हे कर्त्ता पुरुष! उनसे **(नः)** हम लोगों की **(प्रति, आ, जुषस्व)** सेवा करो हम **(पुरुषत्रा)** पुरुषों का **(मा, नि, कः)** अपकार मत करो इससे **(ते)** आपके लिये **(नमः)** नमस्कार हो॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जितना भूतकाल गया उसमें व्यतीत हुए कर्मों के शेष करने योग्य कार्य्य को जान के वर्त्तमान और भविष्यत् काल में जिस प्रकार उन्नति ही के विघ्न निवृत्त होवें, वैसे ही करो॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ओ षु स्व॑सारः का॒रवे॑ शृणोत य॒यौ वो॑ दू॒रादन॑सा रथे॑न।

नि षू न॑मध्वं भव॑ता सुपा॒रा अ॑धोअ॒क्षाः सिन्ध॑वः स्रोत्याभि॑ः॥९॥

ओ इति॑। सु। स्व॒सा॒रः॒। का॒रवे॑। शृ॒णो॒त॒। य॒यौ। व॒ः। दू॒रात्। अन॑सा। रथे॑न। नि। सु। न॒म॒ध्व॒म्। भव॑त। सु॒ऽपा॒राः। अ॒धः॒ऽअ॒क्षाः। सि॒न्ध॒वः॒। स्रोत्याभि॑ः॥९॥

पदार्थः-**(ओ)** सम्बोधने **(सु)** **(स्वसारः)** भगिनीवद्वर्त्तमानाः अङ्गुलयः **(कारवे)** शिल्पिने **(शृणोत)** **(ययौ)** प्राप्नोति **(वः)** युष्मान् **(दूरात्)** **(अनसा)** शकटेन **(रथेन)** **(नि)** नितराम् **(सु)** **(नमध्वम्)** **(भवत)** अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(सुपाराः)** शोभनः पारः पालनादिकर्म येषान्ते **(अधोअक्षाः)** अधोऽर्वाचीना अक्षाः इन्द्रियाणि येषान्ते। **अक्षा इति पदनामसु पठितम्।** (निघं०५.३) **(सिन्धवः)** नद्यः **(स्रोत्याभिः)** स्रोतःसु भवाभिर्गतिभिः॥९॥

अन्वयः-ओ विद्वांसो यूयं कारवे स्वसार इव स्रोत्याभिः सिन्धव इव अधोअक्षाः सुपाराः सुभवत योऽनसा रथेन दूराद्वो ययौ तं सुशृणोत तत्र निनमध्वम्॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये परस्मिन् परस्मिन् प्रीता बहुश्रुता अन्यरचितानि शीघ्रगामीनि यानानि दृष्ट्वा तादृशानि निर्माय पाराऽवारौ गच्छन्तो नम्राः स्युस्तान् स्रोतांसि नदीरिवैश्वर्य्यगुणाः प्राप्नुवन्ति॥९॥

पदार्थः-(**ओ**) हे विद्वान् पुरुषो! आप लोग (**कारवे**) शिल्पीजन के लिये (**स्वसारः**) भगिनी के तुल्य वर्त्तमान अङ्गुलियों (**स्रोत्याभिः**) वा स्रोतों में होनेवाली गतियों से (**सिन्धवः**) नदियों के समान (**अधोअक्षाः**) नीचे को प्राप्त होती हुई इन्द्रियों से युक्त (**सुपाराः**) सुन्दर पालन आदि कर्म करनेवाले (**सु**) (**भवत**) उत्तम प्रकार से हूजिये जो (**अनसा**) शकट और (**रथेन**) रथ से (**दूरात्**) दूर (**वः**) आप लोगों को (**ययौ**) प्राप्त होता है, उसको (**सु, शृणोत**) उत्तम प्रकार सुनिये उसमें (**नि**) अत्यन्त (**नमध्वम्**) नम्र हूजिये॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो लोग दूसरे-दूसरे में प्रसन्न, बहुत बातों को सुने हुए पुरुष, औरों से बनाए हुए शीघ्र चलनेवाले वाहनों को देख और वैसे ही बनाय के जलाशयों के आर-पार जाते हुए नम्र होवें, उनको जैसे स्रोता नदियों को वैसे ऐश्वर्य्य गुण प्राप्त होते हैं॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ ते॑ कारो शृणवामा॒ वचां॑सि य॒याथ॑ दू॒राद॑न॑सा॒ रथे॑न।

नि ते॑ नंसै पीप्या॒नेव॒ योषा॒ मर्या॑येव क॒न्या॑ शश्व॒चै ते॑॥१०॥१३॥

आ। ते॒। का॒रो॒ इति॑। शृ॒णवा॒म॒। वचां॑सि। य॒याथ॑। दू॒रात्। अन॑सा। रथे॑न। नि। ते॒। नं॒सै॒। पी॒प्या॒नाऽइ॑व। योषा॑। मर्या॑यऽइव। क॒न्या॑। श॒श्व॒चै। ते॒ इति॑ ते॒॥१०॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**ते**) तव (**कारो**) शिल्पविद्यासु कुशल (**शृणवाम**)। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**वचांसि**) विद्याप्रज्ञापकानि वचनानि (**ययाथ**) प्राप्नुयाः (**दूरात्**) (**अनसा**) (**रथेन**) (**नि**) (**ते**) तव (**नंसै**) नमेः (**पीप्यानेव**) विद्यावृद्धाविव (**योषा**) (**मर्यायेव**) यथा पुरुषाय (**कन्या**) (**शश्वचै**) परिष्वङ्गाय (**ते**) तुभ्यम्॥१०॥

अन्वयः-हे कारो! ते तव वचांस्यानसा रथेन दूरादागत्य वयमाशृणवाम यथा त्वमस्मान् ययाथ तथा वयं त्वां प्राप्नुयाम। यस्त्वं पीप्यानेव नि नंसै ते तुभ्यं वयमपि नमाम योषा मर्यायेव कन्या शश्वचै इव ते तुभ्यं वयमभिलषेम॥१०॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। ये दूरादागत्य विदुषां सकाशाद्विविधा विद्याः प्राप्य नम्रा भवन्ति ते विद्यावृद्धाः सन्तः पतिव्रता स्त्री पतिमिव कन्याऽभीष्टं वरमिव विद्यां प्राप्याऽऽनन्दन्ति॥१०॥

पदार्थः-हे **(कारो)** शिल्पविद्याओं में चतुर! **(ते)** आपके **(वचांसि)** विद्या के प्राप्त करानेवाले वचनों को **(अनसा)** शकट और **(रथेन)** रथ से **(दूरात्)** दूर से आय के हम लोग **(आ)** सब प्रकार **(शृणवाम)** सुनें और जैसे आप हम लोगों को **(ययाथ)** प्राप्त होवें, वैसे हम लोग आपको प्राप्त होवें। जो आप **(पीप्यानेव)** विद्या के वृद्ध दो पुरुषों के सदृश **(नि, नंसै)** नमस्कार करें **(ते)** आपके लिये हम लोग भी नम्र होवें **(योषा)** स्त्री **(मर्यायेव)** जैसे पुरुष के लिये और **(कन्या)** कन्या **(शश्वचै)** प्रीति से मिलने के लिये वैसे **(ते)** आपके लिये हम लोग अभिलाषा करें॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में **[**उपमा और**]** वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जो लोग दूर से आय के विद्वानों के समीप से अनेक प्रकार की विद्याओं को प्राप्त करके नम्र होते हैं, वे विद्यावृद्ध होकर जैसे पतिव्रता स्त्री पति और कन्या अभीष्ट वर को वैसे विद्या को प्राप्त होके आनन्दित होते हैं॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यद॒ङ्ग त्वा॑ भर॒ताः सं॒तरे॑युर्ग॒व्यन् ग्राम॑ इषि॒त इन्द्र॑जूतः।

अर्षा॒दह॑ प्रस॒वः सर्ग॑तक्तः आ वो॑ वृणे सु॒म॒तिं य॒ज्ञिया॑नाम्॥११॥

यत्। अ॒ङ्ग। त्वा। भ॒रताः। स॒म्ऽतरे॑युः। ग॒व्यन्। ग्राम॑ः। इ॒षि॒तः। इन्द्र॑ऽजूतः। अर्षा॑त्। अह॑। प्र॒ऽस॒वः। सर्ग॑ऽतक्तः। आ। व॒ः। वृ॒णे। सु॒ऽम॒तिम्। य॒ज्ञिया॑नाम्॥११॥

पदार्थः-**(यत्)** यम् **(अङ्ग)** मित्र **(त्वा)** त्वाम् **(भरताः)** सर्वेषां धर्त्तारः पोषकाः **(सन्तरेयुः)** **(गव्यन्)** गौरिवाचरन् **(ग्रामः)** मनुष्यसमूह इव **(इषितः)** प्रेरितः **(इन्द्रजूतः)** इन्द्रो विद्युदिव प्रतापयुक्तः **(अर्षात्)** प्राप्नुयात् **(अह)** विनिग्रहे **(प्रसवः)** प्रकृष्टैश्वर्य्यः **(सर्गतक्तः)** जलस्य संकोचकः। अत्र **सर्ग इत्युदकनामसु पठितम्।** (निघं०१।१२) **(आ)** समन्तात् **(वः)** युष्माकम् **(वृणे)** स्वीकुर्वे **(सुमतिम्)** शोभनां प्रज्ञाम् **(यज्ञियानाम्)** यज्ञस्य साधकानाम्॥११॥

अन्वयः-हे अङ्ग! यद्यं त्वा भरताः सन्तरेयुः स ग्राम इषित इन्द्रजूतः प्रसवः सर्गतक्तो गव्यन् भवानहार्षात्। हे विद्वांसो! यथाहं यज्ञियानां वः सुमतिमावृणे तथा यूयं मम प्रज्ञां स्वीकुरुत॥११॥

भावार्थः-यथा विद्वांसो विद्यापारं गत्वा प्राज्ञा जायन्ते तथेतरे मनुष्या अपि भवन्तु एवं कृते सर्वे दुःखान्तं गत्वा सुखिनः स्युः॥११॥

पदार्थः-हे **(अङ्ग)** मित्र! **(यत्)** जिस **(त्वा)** आपको **(भरताः)** सबके धारण वा पोषण

करनेवाले **(सन्तरेयुः)** संतरे अर्थात् आपके स्वभाव से पार हो वह **(ग्रामः)** मनुष्यों के समूह के समान **(इषितः)** प्रेरणा को प्राप्त **(इन्द्रजूतः)** बिजुली के सदृश प्रताप और **(प्रसवः)** अत्यन्त ऐश्वर्य्ययुक्त **(सर्गतक्तः)** जल के संकोच करनेवाले **(गव्यन्)** गौ के तुल्य आचरण करते हुए आप **(अह)** ग्रहण करने में **(अर्षात्)** प्राप्त होवें वा हे विद्वानो! जैसे मैं **(यज्ञियानाम्)** यज्ञ के सिद्ध करनेवाले **(वः)** आप लोगों की **(सुमतिम्)** उत्तम बुद्धि को **(आ)** सब प्रकार **(वृणे)** स्वीकार करता हूँ, वैसे आप लोग मेरी बुद्धि को स्वीकार करिये॥११॥

भावार्थः-जैसे विद्वान् लोग विद्या के पार जाय अर्थात् सम्पूर्ण विद्याओं को पढ़ के बुद्धिमान् होते हैं, वैसे और लोग भी हों। ऐसा करने से सम्पूर्ण जन दुःख के पार जाय अर्थात् दुःख को उल्लङ्घन करके सुखी होवें॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अतारिषुर्भरता गव्यवः समभक्त विप्रः सुमतिं नदीनाम्।
प्र पिन्वध्वमिषयन्तीः सुराधा आ वक्षणाः पृणध्वं यात शीभम्॥१२॥

अतारिषुः। भरता। गव्यवः। सम्। अभक्त। विप्रः। सुऽमतिम्। नदीनाम्। प्र। पिन्वध्वम्। इषयन्तीः। सुऽराधाः। आ। वक्षणाः। पृणध्वम्। यात। शीभम्॥१२॥

पदार्थः-**(अतारिषुः)** तरन्तु **(भरताः)** धारकपोषकाः **(गव्यवः)** आत्मनो गां सुशिक्षितां वाचमिच्छवः **(सम्)** **(अभक्त)** सम्यग्भजेत **(विप्रः)** मेधावी **(सुमतिम्)** श्रेष्ठां बुद्धिम् **(नदीनाम्)** सरितामिव वर्त्तमानानां विदुषीणाम् **(प्र)** **(पिन्वध्वम्)** सेवध्वम् **(इषयन्तीः)** इषमन्नं कुर्वन्त्यः **(सुराधः)** शोभनं राधो यस्य सः **(आ)** **(वक्षणाः)** वहमाना नद्यः **(पृणध्वम्)** पालयध्वम् **(यात)** प्राप्नुत **(शीभम्)** क्षिप्रम्। **शीभमिति क्षिप्रनामसु पठितम्।** (निघं०२.१५)॥१२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा गव्यवो भरता नौकादिना नदीनां प्रवाहानतारिषुर्यथा सुराधा विप्रः सुमतिं समभक्त यथा वक्षणा वहन्ति तथेषयन्तीः प्र पिन्वध्वं सर्वानापृणध्वं शुभगुणान् शीभं यात॥१२॥

भावार्थः-मनुष्या नदीसमुद्रादीन् जलाशयान् विद्वद्वत्प्रतीर्य्य सुखं सद्यः सेवन्ताम्॥१२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(गव्यवः)** अपनी उत्तम शिक्षायुक्त वाणी की इच्छा करने तथा **(भरताः)** धारण और पोषण करनेवाले नौका आदि से **(नदीनाम्)** नदियों के सदृश वर्त्तमान पढ़ी हुई स्त्रियों के ज्ञानप्रवाहों को **(अतरिषुः)** तरें, जैसे **(सुराधाः)** उत्तम धनयुक्त **(विप्रः)** बुद्धिमान् पुरुष **(सुमतिम्)** उत्तम बुद्धि को **(सम्, अभक्त)** अच्छे प्रकार सेवन करे और जैसे **(वक्षणाः)** बहती हुई

नदियां और बहती हैं, वैसे **(इषयन्तीः)** अन्न को सिद्ध करनेवाली स्त्रियों को **(प्र, पिन्वध्वम्)** सेवन करो, सबका **(आ) (पृणध्वम्)** पालन करो और उत्तम गुणों को **(शीभम्)** शीघ्र **(यात)** प्राप्त होओ॥१२॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि नदी और समुद्र आदि जलाशयों को विद्वानों के सदृश पार होके सुख का शीघ्र सेवन करें॥१२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फि उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उद्वं ऊर्मिः शम्यां हुन्त्वापो योक्त्राणि मुञ्चत।
मादुंष्कृतौ व्येनसाऽघ्न्यौ शूनमारंताम्॥१३॥१४॥

उत्। वः। ऊर्मिः। शम्याः। हुन्तु। आपः। योक्त्राणि। मुञ्चत। मा। अदुःऽकृतौ। विऽएंनसा। अघ्न्यौ। शूनम्। आ। अरताम्॥१३॥

पदार्थः-**(उत्)** उत्कृष्टे **(वः)** युष्मान् **(ऊर्मिः)** तरङ्ग इवोत्साहः **(शम्याः)** शम्यां कर्मणि भवाः **(हन्तु)** दूरीकुर्वन्तु **(आपः)** जलानीव **(योक्त्राणि)** योजनानि **(मुञ्चत)** त्यजत **(मा)** निषेधे **(अदुष्कृतौ)** अदुष्टाचारिणौ **(व्येनसा)** विनष्टपापाचरणेन **(अघ्न्यौ)** हन्तुमनर्हे **(शूनम्)** सुखम्। अत्रा**न्येषामपी**ति दीर्घः। **(आ) (अरताम्)** प्राप्नुताम्॥१३॥

अन्वयः-हे स्त्रियो! भवन्त्यः शम्या आप इव दुःखं हन्तु यो व ऊर्मिरिवोत्साहेन योक्त्राणि यूयं मुञ्चत। हे स्त्रीपुरुषौ! युवामदुष्कृतौ दुष्टं मारतां व्येनसाघ्न्यौ सत्यौ पतिः पत्नी च द्वौ शूनं सुखमुदारतां प्राप्नुताम्॥१३॥

भावार्थः-यौ स्त्रीपुरुषौ दुःखबन्धनानि च्छित्वा दुष्टाचारं विहाय विद्योन्नतिं कुर्य्यातां तौ सततं सुखमाप्नुयातामिति॥१३॥

अत्र मेघनदीविद्वत्सखिशिल्पनौकादिस्त्रीपुरुषकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति त्रयस्त्रिंशत्तमं सूक्तं चतुर्दशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे स्त्रियो! आप **(शम्याः)** कर्म में उत्पन्न **(आपः)** जलों के सदृश दुःख को **(हन्तु)** दूर करें और **(वः)** आपका जो **(ऊर्मिः)** तरङ्ग के सदृश उत्साह उससे **(योक्त्राणि)** जोड़नों को तुम **(मुञ्चत)** त्याग करो। हे स्त्री और पुरुष! तुम दोनों **(अदुष्कृतौ)** दुष्टाचरण से रहित हुए दुष्ट कर्म को **(मा)** नहीं

प्राप्त होओ **(व्येनसा)** पाप का आचरण नष्ट होने से **(अघ्न्यौ)** नहीं मारने योग्य होते हुए पति और स्त्री दोनों **(शूनम्)** सुख को **(उत्)** उत्तम प्रकार **(आ)** **(अरताम्)** प्राप्त होवें॥१३॥

भावार्थः-जो स्त्री और पुरुष दुःख के बन्धनों को काट और दुष्ट आचरण को त्याग के विद्या की उन्नति करें तो वे निरन्तर सुख को प्राप्त होवें॥१३॥

इस सूक्त में मेघ, नदी, विद्वान्, मित्र, शिल्पी, नौका आदि और स्त्री-पुरुष का कृत्य वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह तेंतीसवां सूक्त और चौदहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथैकादशर्चस्य चतुस्त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, २, ११ त्रिष्टुप्। ४, ५, ७, १० निचृत्त्रिष्टुप्। ९ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ३, ६, ८ भुरिक्पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ सूर्यगुणा उपदिश्यन्ते॥

अब ग्यारह ऋचावाले ३४ चौतीसवें सूक्त का प्रारम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र से सूर्य के गुणों का उपदेश करते हैं॥

इन्द्रः पूर्भिदातिरद् दासमर्कैर्विदद्वसुर्दयमानो वि शत्रून्।
ब्रह्मजूतस्तन्वा वावृधानो भूरिदात्र आपृणद्रोदसी उभे॥ १॥

इन्द्रः। पूःऽभित्। आ। अतिरत्। दासम्। अर्कैः। विदत्ऽवसुः। दयमानः। वि। शत्रून्। ब्रह्मऽजूतः। तन्वा। ववृधानः। भूरिऽदात्रः। आ। अपृणत्। रोदसी इति। उभे इति॥ १॥

पदार्थः-(**इन्द्रः**) परमैश्वर्यवान् (**पूर्भित्**) पुरां भेत्ता (**आ**) (**अतिरत्**) उल्लङ्घयतु (**दासम्**) दातुं योग्यम् (**अर्कैः**) अर्चनीयैर्मन्त्रैर्विचारैः (**विदद्वसुः**) विदन्ति वसूनि येन सः (**दयमानः**) कृपालुः सन् (**वि**) (**शत्रून्**) (**ब्रह्मजूतः**) धनानि प्राप्तः (**तन्वा**) शरीरेण (**वावृधानः**) वर्धमानः (**भूरिदात्रः**) भूरि बहुविधं दात्रं दानं यस्य सः (**आ**) (**अपृणत्**) प्रपूरयेत् (**रोदसी**) द्यावापृथिव्याविव विद्याविनयौ (**उभे**)॥ १॥

अन्वयः-हे राजपुरुष! यथा सूर्य उभे रोदसी आपृणत्तथा विदद्वसुर्ब्रह्मजूतो दासं दयमानस्तन्वा वावृधानो भूरिदात्रः पूर्भिदिन्द्रो भवानर्कैः शत्रून् व्यातिरत्॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्य्यः स्वकीयैः किरणैर्भूम्यन्तरिक्षे पूर्त्वाऽन्धकारं जयति तथैवाप्तैः सह कृतैर्विचारैः शत्रून् जयेत्सर्वदा शरीरात्मबलं वर्धयित्वा श्रेष्ठान् सत्कृत्य दुष्टान् पराभवेत्॥ १॥

पदार्थः-हे राजपुरुष! जैसे सूर्य्य (**उभे**) दोनों (**रोदसी**) अन्तरिक्ष और पृथिवी के तुल्य विद्या और विनय को (**आ**) (**अपृणत्**) पूर्ण करे, वैसे (**विदद्वसुः**) धनों से संपन्न (**ब्रह्मजूतः**) धनों को प्राप्त (**दासम्**) देने योग्य पर (**दयमानः**) कृपालु (**तन्वा**) शरीर से (**वावृधानः**) वृद्धि को प्राप्त होते हुए (**भूरिदात्रः**) अनेक प्रकार के दान देने (**पूर्भित्**) शत्रुओं के नगरों को तोड़ने और (**इन्द्रः**) अत्यन्त ऐश्वर्य के रखनेवाले आप (**अर्कैः**) आदर करने योग्य विचारों से (**शत्रून्**) शत्रुओं का (**वि, आ, अतिरत्**) उल्लङ्घन करो॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य अपने किरणों से भूमि और अन्तरिक्ष को पूर्ण करके अन्धकार को जीतता है, वैसे ही श्रेष्ठ और ऐक्यमतयुक्त विचारों से शत्रुओं को जीते तथा सब काल में शरीर और आत्मा के बल को बढ़ाये और श्रेष्ठ पुरुषों को सत्कार करके दुष्ट जनों का अपमान करे॥ १॥

अथ राजप्रजाविषयमाह॥

अब राजा-प्रजा सम्बन्धी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मखस्य॑ ते तवि॒षस्य॒ प्र जू॒तिमिय॑र्मि॒ वाच॑म॒मृता॑य॒ भूष॑न्।

इन्द्र॑ क्षिती॒नाम॑सि॒ मानु॑षीणां वि॒शां दैवी॑नामु॒त पू॑र्व॒यावा॑॥ २॥

म॒खस्य॑। ते॒। त॒वि॒षस्य॑। प्र। जू॒तिम्। इय॑र्मि। वाच॑म्। अ॒मृता॑य। भूष॑न्। इन्द्र॑। क्षि॒ती॒नाम्। अ॒सि॒। मानु॑षीणाम्। वि॒शाम्। दैवी॑नाम्। उ॒त। पू॒र्व॒ऽयावा॑॥ २॥

पदार्थः-(**मखस्य**) प्राप्तस्य सङ्गतस्य व्यवहारस्य (**ते**) तव (**तविषस्य**) बलस्य (**प्र**) (**जूतिम्**) वेगम् (**इयर्मि**) प्राप्नोमि (**वाचम्**) सत्यामादिष्टां वाणीम् (**अमृताय**) अविनाशिसुखाय (**भूषन्**) अलङ्कुर्वन् (**इन्द्र**) परमैश्वर्य्यप्रद (**क्षितीनाम्**) स्वराज्ये निवसन्तीनाम् (**असि**) (**मानुषीणाम्**) मनुषसम्बन्धिनीम् (**विशाम्**) प्रजानाम् (**दैवीनाम्**) दिव्यगुणयुक्तानाम् (**उत**) (**पूर्वयावा**) प्राचीनराजनीतिं प्राप्तः॥ २॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ते मखस्य तविषस्य जूतिममृताय वाचं भूषन् सन् प्रेयर्मि यतस्त्वं दैवीनां क्षितीनां मानुषीणां विशां पूर्वयावा असि उत वा स्वयं विद्याविनययुक्तोऽसि तस्माच्छ्रेष्ठैः सत्कर्त्तव्योऽसि॥ २॥

भावार्थः-सर्वैः प्रजाराजजनैः सर्वाधीशस्याऽऽज्ञा नैवोल्लङ्घनीया सर्वाधीशेन धर्म्येण कर्मणा सततं प्रजाः पालनीयाः॥ २॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य के देनेवाले! (**ते**) आपके (**मखस्य**) मेल करने रूप व्यवहार और (**तविषस्य**) बल के (**जूतिम्**) वेग और (**अमृताय**) अविनाशि सुख के लिये (**वाचम्**) कही हुई सत्य वाणी को (**भूषन्**) शोभित करता हुआ मैं (**प्र, इयर्मि**) प्राप्त होता हूँ, जिससे आप (**दैवीनाम्**) उत्तम गुणों से युक्त (**क्षितीनाम्**) अपने राज्य में बसनेवाली (**मानुषीणाम्**) मनुष्यरूप (**विशाम्**) प्रजाओं की (**पूर्वयावा**) प्राचीन राजनीति को प्राप्त (**उत**) अथवा अपने ही से विद्या और विनय से युक्त हो, इससे श्रेष्ठ पुरुषों से सत्कार करने योग्य (**असि**) हो॥ २॥

भावार्थः-सम्पूर्ण प्रजा और राजजनों को चाहिये कि सब लोगों के स्वामी की आज्ञा का उल्लङ्घन न करें और सब लोगों के स्वामी को चाहिये कि धर्मयुक्त कर्मों से निरन्तर प्रजाओं का पालन करें॥ २॥

अथ सूर्यदृष्टान्तेन राजधर्मविषयमाह॥

फिर सूर्य के दृष्टान्त से राजधर्म विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रो॑ वृ॒त्रम॑वृणो॒च्छर्ध॑नीतिः॒ प्र मा॒यिना॑ममिना॒द्वर्प॑णीतिः।

अहन् व्यंसमुशधग्वनेष्वाविर्धेना अकृणोद्राम्याणाम्॥ ३॥

इन्द्रः। वृत्रम्। अवृणोत्। शर्धऽनीतिः। प्र। मायिनाम्। अमिनात्। वर्पऽनीतिः। अहन्। विऽअंसम्। उशधक्। वनेषु। आविः। धेनाः। अकृणोत्। राम्याणाम्॥ ३॥

पदार्थः-(**इन्द्रः**) सूर्य्य इव प्रतापवान् राजा (**वृत्रम्**) मेघमिव शत्रुम् (**अवृणोत्**) वृणुयात् (**शर्धनीतिः**) बलस्य सैन्यस्य नीतिर्नायकः (**प्र**) (**मायिनाम्**) कुत्सिता माया प्रज्ञा विद्यते येषां तेषाम् (**अमिनात्**) हिंसेत् (**वर्पणीतिः**) वर्पस्य रूपस्य नीतिर्नायकः। अत्रोभयत्र नीतौ कर्त्तरि क्तिच्। (**अहन्**) हन्ति (**व्यंसम्**) विगता अंसा यस्य तम् (**उशधक्**) य उशान् युद्धं कामयमानान् दहति सः (**वनेषु**) जङ्गलेषु (**आविः**) प्राकट्ये (**धेनाः**) वाचः। **धेनेति वाङ्नामसु पठितम्।** (निघं०१.११) (**अकृणोत्**) कुर्यात् (**राम्याणाम्**) रमणीयानाम्॥ ३॥

अन्वयः-हे राजन्! यथा सूर्य्यो वृत्रं व्यंसमहन् तथा शर्धनीतिर्वर्पणीतिरिन्द्रो भवान् मायिनां मायां प्रमिनात्। उशधक् वनेषु धेना अवृणोद् राम्याणां धेना आविरकृणोत्॥ ३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्य्यो मेघं हन्ति तथैव दुष्टाचारान् हत्वा विद्यावाचः प्रचार्य सर्वैः सेना शिक्षा च वर्धनीया॥ ३॥

पदार्थः-हे राजन्! जैसे सूर्य्य (**वृत्रम्**) मेघ को (**व्यंसम्**) कटे बाहु जिसके उस पुरुष के समान (**अहन्**) नाश करता है, वैसे (**शर्धनीतिः**) सेना का नायक (**वर्पणीतिः**) रूप को प्राप्त करानेवाले (**इन्द्रः**) सूर्यवत् प्रतापी राजा आप (**मायिनाम्**) बुरी बुद्धि से युक्त पुरुषों की माया का (**प्र, अमिनात्**) नाश करें (**उशधक्**) और युद्ध करनेवालों का नाशकर्त्ता पुरुष (**वनेषु**) जङ्गलों में (**धेनाः**) वाणियों को (**अवृणोत्**) घेरे (**राम्याणाम्**) सुन्दरों की वाणियों को (**आविः**) प्रकट (**अकृणोत्**) करे॥ ३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य मेघ का नाश करता है, वैसे ही दुष्ट आचरणवाले जनों का नाश और विद्या सम्बन्धी वाणियों का प्रचार करके सब लोगों को सेना और शिक्षा की वृद्धि करनी चाहिये॥ ३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रः स्वर्षा जनयन्नहानि जिगायोशिग्भिः पृतना अभिष्टिः।
प्रारोचयन्मनवे केतुमह्नामविन्दज्ज्योतिर्बृहते रणाय॥ ४॥

इन्द्रः। स्वःऽसाः। जनयन्। अहानि। जिगाय। उशिक्ऽभिः। पृतनाः। अभिष्टिः। प्र। अरोचयत्। मनवे। केतुम्। अह्नाम्। अविन्दत्। ज्योतिः। बृहते। रणाय॥ ४॥

पदार्थः-(**इन्द्रः**) सूर्य इव तेजस्वी (**स्वर्षाः**) यः स्वः सुखं सनति विभजति सः (**जनयन्**) प्रकटयन् (**अहानि**) दिनानि (**जिगाय**) जयेत् (**उशिग्भिः**) कामयमानैर्वीरैः (**पृतनाः**) वीरसेनाः (**अभिष्टिः**) अभिमुखा इष्टिः सङ्गतिर्यस्य सः (**प्र, अरोचयत्**) रोचयेत् (**मनवे**) मननशीलाय मनुष्याय (**केतुम्**) प्रज्ञाम् (**अह्नाम्**) दिनानाम् (**अविन्दत्**) विन्देत् प्राप्नुयात् (**ज्योतिः**) युद्धविद्याप्रकाशम् (**बृहते**) महते (**रणाय**) संग्रामाय॥४॥

अन्वयः-यः स्वर्षा अभिष्टिरिन्द्रः पृतना अहानि सूर्य्य इव जनयन्नुशिग्भिः शत्रून् जिगाय बृहते रणायाऽह्नां ज्योतिरिव मनवे केतुमविन्दत् संग्रामं प्रारोचयत् स एव विजयविभूषितः स्यात्॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये राजानः सर्वेभ्योऽधिकं प्रयत्नं युद्धविद्यायां कुर्युस्ते सुहर्षितैर्युद्धाय रुचिं प्रदर्शितैर्वीरैः सह शत्रून् जित्वा सूर्य्यस्येव विजयप्रकाशं प्रथयेरन्॥४॥

पदार्थः-जो (**स्वर्षाः**) सुख के विभाग करने (**अभिष्टिः**) सम्मुख मेल करनेवाले (**इन्द्रः**) सूर्य्य के सदृश तेजस्वी (**पृतनाः**) वीर पुरुषों को सेनाओं और (**अहानि**) दिनों को सूर्य्य के सदृश (**जनयन्**) प्रकट करनेवाला पुरुष (**उशिग्भिः**) युद्ध की इच्छा रखते हुए वीरों के साथ शत्रुओं को (**जिगाय**) जीते (**बृहते**) बड़े (**रणाय**) संग्राम के लिये (**अह्नाम्**) दिनों के (**ज्योतिः**) युद्ध की विद्या के प्रकाश को (**मनवे**) और मनन करनेवाले मनुष्य के लिये (**केतुम्**) बुद्धि को (**अविन्दत्**) प्राप्त होवे और संग्राम का (**प्र**) (**अरोचयत्**) उत्तम प्रकार प्रकाश करे, वही पुरुष विजयरूप आभूषण से शोभित होवे॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो राजा लोग सम्पूर्ण जनों से अधिक प्रयत्न युद्धविद्या में करें, वे उत्तम प्रकार प्रसन्नतायुक्त, जो कि युद्ध के लिये पारितोषिक आदि से रुचि दिखाये गये वीर लोग, उनके साथ शत्रुओं को जीत कर सूर्य्य के सदृश विजय के प्रकाश को प्रकट करें॥४॥

कीदृशो जनो राज्येऽधिकृतः स्यादित्याह॥

कैसा मनुष्य राज्य में अधिकारी हो, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रस्तुजो बर्हणा आ विवेश नृवद्दधानो नर्या पुरूणि।

अचेतयद्धिय इमा जरित्रे प्रेमं वर्णमतिरच्छुक्रमासाम्॥५॥१५॥

इन्द्रः। तुजः। बर्हणाः। आ। विवेश। नृऽवत्। दधानः। नर्या। पुरूणि। अचेतयत्। धियः। इमाः। जरित्रे। प्र। इमम्। वर्णम्। अतिरत्। शुक्रम्। आसाम्॥५॥

पदार्थः-(**इन्द्रः**) राजा (**तुजः**) शत्रुहिंसकबलादियुक्ताः सेनाः (**बर्हणाः**) वर्धमानाः (**आ, विवेश**) आविशेत् (**नृवत्**) नायकवत् (**दधानः**) (**नर्या**) नृभ्यो हितानि सैन्यानि (**पुरूणि**) बहूनि

(अचेतयत्) चेतयेत् सञ्ज्ञापयेत् **(धियः)** प्रज्ञा **(इमाः)** वर्त्तमाने प्राप्ताः **(जरित्रे)** स्तावकाय **(प्र)** **(इमम्)** **(वर्णम्)** स्वीकारम् **(अतिरत्)** सन्तरेत् **(शुक्रम्)** क्षिप्रं कार्यकरम् **(आसाम्)** प्रजानाम्॥५॥

अन्वयः-य इन्द्रो आसां प्रजानां पुरूणि नर्या नृवद्दधानो बर्हणास्तुज आविवेश जरित्रे इमा धियः प्राचेतयत् स इमं शुक्रं वर्णमतिरत्॥५॥

भावार्थः-स एव राज्ये प्रवेष्टुं शक्नोति यो बुद्धिमतो धार्मिकान् जनान् सर्वेष्वधिकारेषु नियोज्य सेनोन्नतिं विधाय पितृवत्प्रजाः पालयितुमर्हेत्॥५॥

पदार्थः-जो **(इन्द्रः)** राजा **(आसाम्)** इन प्रजाओं की **(पुरूणि)** बहुत **(नर्या)** मनुष्यों के लिये हितकारिणी सेनाओं को **(नृवत्)** प्रधान पुरुष के सदृश **(दधानः)** धारण करनेवाला **(बर्हणाः)** वृद्धि को प्राप्त **(तुजः)** शत्रुओं के नाश करनेवाले बल आदि से युक्त सेनाओं को **(आ)** **(विवेश)** प्राप्त होवें **(जरित्रे)** स्तुति करनेवाले के लिये **(इमाः)** इन वर्त्तमान में पाई हुई **(धियः)** बुद्धियों को **(प्र)** **(अचेतयत्)** बोध सहित करे, वह पुरुष **(इमम्)** इस **(शुक्रम्)** शीघ्र कार्य्य करनेवाले **(वर्णम्)** स्वीकार के **(अतिरत्)** पार उतरे॥५॥

भावार्थः-वही पुरुष राज्य में प्रविष्ट हो सकता है कि जो बुद्धियुक्त धार्मिक पुरुषों को सब अधिकारों में नियुक्त कर और सेना की उन्नति करके पिता के सदृश प्रजाओं का पालन कर सके॥५॥

पुना राजप्रजापुरुषैरनुष्ठेयमाह॥

फिर राजा तथा प्रजाजनों के कर्त्तव्य विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

म॒हो म॒हानि॑ पनयन्त्य॒स्येन्द्र॑स्य॒ कर्म॒ सुकृ॑ता पु॒रूणि॑।

वृ॒जने॑न वृजि॒नान्त्सं पि॑पेष मा॒याभि॒र्दस्यूँ॑र॒भिभू॑त्योजाः॥६॥

म॒हः। म॒हानि॑। प॒न॒य॒न्ति॒। अ॒स्य। इन्द्र॑स्य। कर्म॑। सु॒ऽकृ॑ता। पु॒रूणि॑। वृ॒जने॑न। वृ॒जि॒नान्। सम्। पि॒पे॒ष॒। मा॒याभिः॑। दस्यू॑न्। अ॒भिभू॑तिऽओजाः॥६॥

पदार्थः-**(महः)** महतः **(महानि)** महान्ति **(पनयन्ति)** पनायन्ति प्रशंसन्ति। अत्र **वाच्छन्दसी**ति ह्रस्वः। **(अस्य)** वर्त्तमानस्य **(इन्द्रस्य)** सकलैश्वर्ययुक्तस्य **(कर्म)** कर्माणि **(सुकृता)** शोभनेन धर्मयोगेन कृतानि **(पुरूणि)** बहूनि **(वृजनेन)** बलेन **(वृजिनान्)** पापान् **(सम्)** **(पिपेष)** पिष्यात् **(मायाभिः)** प्रज्ञाभिः **(दस्यून्)** साहसेन उत्कोचकान् चोरान् **(अभिभूत्योजाः)** अभिभूतिः पराजयकरमोजो बलं यस्य सः॥६॥

अन्वयः-योऽभिभूत्योजा वृजनेन मायाभिर्वृजिनान् दस्यून् संपिपेष यान्यस्य मह इन्द्रस्य पुरूणि महानि सुकृता कर्म पनयन्ति तानि सङ्गृह्णीयात् स एव राजाऽमात्यतामर्हेत्॥६॥

भावार्थः-यथा राजप्रजाजनैः सर्वाधीशस्य धर्म्याणि कर्माणि स्वीकर्त्तव्यानि सन्ति तथैव सर्वाऽधिष्ठात्रा राज्ञा सर्वेषामुत्तमान्याचरणानि स्वीकर्त्तव्यानि नेतराणि केनचित्॥६॥

पदार्थः-जो **(अभिभूत्योजाः)** शत्रुपराजय करनेवाले बल से युक्त राजपुरुष **(वृजनेन)** बल और **(मायाभिः)** बुद्धियों से **(वृजिनान्)** पापी **(दस्यून्)** साहसी चोरों को **(सम्)** **(पिपेष)** पीसे और जो **(अस्य)** इस **(महः)** श्रेष्ठ **(इन्द्रस्य)** सम्पूर्ण ऐश्वर्ययुक्त पुरुष के **(पुरूणि)** बहुत **(महानि)** बड़े **(सुकृता)** उत्तम धर्म के योग से किये गये **(कर्म)** कार्य्यों की **(पनयन्ति)** प्रशंसा करते हैं, उनका ग्रहण करे, वही पुरुष राजा का मन्त्री होने योग्य होवे॥६॥

भावार्थः-जैसे राजा और प्रजाजनों को सब लोगों के स्वामी के धर्मयुक्त कर्म स्वीकार करने योग्य हैं, वैसे ही सबके स्वामी राजा को चाहिये कि सब लोगों के उत्तम आचरणों को स्वीकार करे और अनिष्ट आचरणों का स्वीकार कोई न करे॥६॥

पुनर्विद्वद्राजपुरुषविषयमाह॥

फिर विद्वान् तथा राजपुरुष के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

युधेन्द्रो॑ म॒ह्ना वरि॑वश्चकार दे॒वेभ्यः॒ सत्प॑तिश्चर्षणि॒प्राः।

वि॒वस्व॑तः॒ सद॑ने अस्य॒ तानि॒ विप्रा॑ उ॒क्थेभिः॑ क॒वयो॑ गृणन्ति॥७॥

यु॒धा। इन्द्रः॑। म॒ह्ना। वरि॑वः। च॒कार॒। दे॒वेभ्यः॑। सत्ऽप॑तिः। च॒र्ष॒णि॒ऽप्राः। वि॒वस्व॑तः। सद॑ने। अ॒स्य॒। तानि॑। विप्राः॑। उ॒क्थेभिः॑। क॒वयः॑। गृ॒ण॒न्ति॒॥७॥

पदार्थः-**(युधा)** संग्रामेण **(इन्द्रः)** ऐश्वर्ययुक्तः **(मह्ना)** महता **(वरिवः)** सेवनम् **(चकार)** कुर्यात् **(देवेभ्यः)** विद्वद्भ्यः **(सत्पतिः)** सतां पालकः **(चर्षणिप्राः)** यः चर्षणीन् मनुष्यान् सत्यविद्याशिक्षासुशीलैः प्राति प्रपूर्त्ति सः **(विवस्वतः)** सवितुः **(सदने)** मण्डले **(अस्य)** **(तानि)** **(विप्राः)** मेधाविनः **(उक्थेभिः)** प्रशंसावचनैः **(कवयः)** विद्वांसः **(गृणन्ति)** स्तुवन्ति॥७॥

अन्वयः-यो देवेभ्यः शिक्षां प्राप्य सत्पतिश्चर्षणिप्रा इन्द्रो मह्ना युधा येषां कर्मणां वरिवश्चकार तस्याऽस्य तानि विवस्वतः सदने कवयो विप्रा उक्थेभिर्गृणन्ति॥७॥

भावार्थः-त एव विद्वांसो धार्मिका विज्ञेया ये राजादीनां मिथ्यास्तुतिं विहाय धर्म्याणि कर्माणि प्रशंसन्ति त एव राजानो भवितुमर्हन्ति ये धर्म्याणि कर्माण्याचरन्ति॥७॥

पदार्थः-जो **(देवेभ्यः)** विद्वानों से शिक्षा पाके **(सत्पतिः)** श्रेष्ठ पुरुषों का पालन करने **(चर्षणिप्राः)** मनुष्यों को सत्य विद्या, शिक्षा और उत्तम स्वभाव से पूर्ण करनेवाला **(इन्द्रः)** राज्य के ऐश्वर्य से युक्त **(मह्ना)** बड़े **(युधा)** संग्राम से जिन कर्मों का **(वरिवः)** सेवन **(चकार)** करे उस **(अस्य)**

इस राजपुरुष के **(तानि)** उन कर्मों की **(विवस्वतः)** सूर्य्य के **(सदने)** मण्डल में **(कवयः)** विद्यायुक्त **(विप्राः)** बुद्धिमान् लोग **(उक्थेभिः)** प्रशंसा के वचनों से **(गृणन्ति)** स्तुति करते हैं॥७॥

भावार्थः-उन्हीं लोगों को विद्वान् और धार्मिक जानना चाहिये कि जो राजा आदिकों की झूठी स्तुति को त्याग के धर्मसम्बन्धी कर्मों की प्रशंसा करते हैं और वे ही राजा होने के योग्य हैं कि जो धर्मयुक्त आचरणों को करते हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स॒त्रा॒सा॒हं वरे॑ण्यं सहो॒दां स॑स॒वांसं॒ स्व॑र॒पश्च॑ दे॒वीः।

स॒सा॒न॒ यः पृ॑थि॒वीं द्यामु॒तेमामिन्द्रं॑ मद॒न्त्यनु॒ धीर॑णासः॥८॥

स॒त्रा॒ऽसहम्। वरे॑ण्यम्। स॒हः॒ऽदाम्। स॒स॒ऽवांस॑म्। स्व॑रिति॑ स्वः॑। अ॒पः। च॒। दे॒वीः॑। स॒सान॑। यः। पृ॒थि॒वीम्। द्याम्। उ॒त। इ॒माम्। इन्द्र॑म्। म॒द॒न्ति॒। अनु॑। धीऽर॑णासः॥८॥

पदार्थः-**(सत्रासाहम्)** यः सत्रा सत्यानि सहते स तम् **(वरेण्यम्)** स्वीकर्तुं योग्यम् **(सहोदाम्)** बलप्रदम् **(ससवांसम्)** पापपुण्ययोर्विभक्तारम् **(स्वः)** सुखम् **(अपः)** प्राणान् **(च)** **(देवीः)** दिव्याः **(ससान)** विभजेत् **(यः)** **(पृथिवीम्)** अन्तरिक्षं भूमिं वा **(द्याम्)** विद्युतम् **(उत)** **(इमाम्)** वर्त्तमानम् **(इन्द्रम्)** **(मदन्ति)** आनन्दन्ति **(अनु)** **(धीरणासः)** धीः प्रशस्ता प्रज्ञा रणः संग्रामो येषान्ते॥८॥

अन्वयः-यः सत्रासाहं वरेण्यं सहोदां ससवांसं स्वर्देवीरपश्चेमां पृथिवीमुतेमां द्यां ससान तमिन्द्रं धीरणासो मदन्ति सताननुमदेदानन्देत्॥८॥

भावार्थः-योऽसत्यत्यागी सत्यग्राही बलवर्धकः प्रजासुखेच्छुर्विद्युत्पृथिव्यादिगुणान् विद्यया विभाजकः स्यात् तमेव परीक्षकं धीमन्तो वीराः प्राप्याऽऽनन्दन्ति तेऽपीदृशादेवानन्दं प्राप्तुमर्हन्ति॥८॥

पदार्थः-**(यः)** जो **(सत्रासाहम्)** सत्यों के सहनेवाले **(वरेण्यम्)** स्वीकार करने योग्य **(सहोदाम्)** बल के देने तथा **(ससवांसम्)** पाप और पुण्य का विभाग करनेवाले **(स्वः)** सुख **(च)** और **(देवीः)** उत्तम **(अपः)** प्राणों को **(इमाम्)** प्रत्यक्ष वर्त्तमान इस **(पृथिवीम्)** अन्तरिक्ष वा पृथिवी **(उत)** और इस **(द्याम्)** बिजुली को **(ससान)** अलग-अलग करे, उस **(इन्द्रम्)** तेजस्वी पुरुष को **(धीरणासः)** उत्तम बुद्धि और संग्राम से युक्त लोग **(मदन्ति)** आनन्दित करते हैं, वह उनके **(अनु)** पीछे आनन्द को प्राप्त होवे॥८॥

भावार्थः-जो असत्य का त्याग और सत्य का ग्रहण करने, बल को बढ़ाने और प्रजा के सुख की इच्छा करनेवाला पुरुष बिजुली और पृथिवी आदि के गुणों का विद्या से विभागकर्त्ता हो, उसी परीक्षा करनेवाले जन को बुद्धिमान् वीर लोग प्राप्त होके आनन्द करते हैं और वे भी ऐसे ही पुरुष से आनन्द

को प्राप्त हो सकते हैं॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स॒सानात्याँ उ॒त सूर्यं॑ ससा॒नेन्द्रः॑ ससान पु॒रुभोज॑सं॒ गाम्।
हि॒र॒ण्यय॑मु॒त भोग॑ं ससान ह॒त्वी दस्यू॑न् प्रार्यं॑ वर्ण॑मावत्॥९॥

स॒सान॑। अत्या॑न्। उ॒त। सूर्य॑म्। स॒सा॒न॒। इन्द्रः॑। स॒सा॒न॒। पु॒रु॒ऽभोज॑सम्। गाम्। हि॒र॒ण्यय॑म्। उ॒त। भोग॑म्। स॒सा॒न॒। ह॒त्वी। दस्यू॑न्। प्र। आर्य॑म्। वर्ण॑म्। आ॒व॒त्॥९॥

पदार्थः-(**ससान**) विभजेत् (**अत्यान्**) सुशिक्षयाऽश्वान् (**उत**) (**सूर्य्यम्**) सूर्य्यमिव वर्त्तमानं प्राज्ञम् (**ससान**) (**इन्द्रः**) सकलैश्वर्ययुक्तः सर्वाधिपतिः (**ससान**) (**पुरुभोजसम्**) बहूनां पालकं बह्वन्नभोक्तारं वा (**गाम्**) वाणीं भूमिं वा (**हिरण्ययम्**) सुवर्णादिप्रचुरं धनम् (**उत**) (**भोगम्**) (**ससान**) (**हत्वी**) (**दस्यून्**) (**प्र**) (**आर्यम्**) उत्तमगुणकर्मस्वभावं धार्मिकम् (**वर्णम्**) स्वीकर्त्तव्यम् (**आवत्**) रक्षेत्॥९॥

अन्वयः-स इन्द्रो राजा अमात्यसमूहो वाऽत्यान् ससान सूर्य्यं ससान पुरुभोजसं गामुत हिरण्ययं ससानोत भोगं ससान दस्यून् हत्व्यार्यं वर्णं प्रावत्॥९॥

भावार्थः-ये सुपरीक्ष्य श्रेष्ठाश्रेष्ठानश्वान् वीरान् न्यायाधीशान् श्रियं भोगं च विभक्तुं शक्नुयुस्त एव दुष्टान् हत्वा श्रेष्ठान् रक्षितुं शक्नुयुः॥९॥

पदार्थः-वह (**इन्द्रः**) सम्पूर्ण ऐश्वर्य से युक्त राजा वा मन्त्रियों का समूह (**अत्यान्**) उत्तम शिक्षा से घोड़ों के (**ससान**) विभाग को और (**सूर्यम्**) सूर्य के सदृश प्रतापयुक्त वीर पुरुष को (**ससान**) अलग करे, (**पुरुभोजसम्**) बहुतों का पालन वा बहुतों को नहीं भोजन देनेवाले पुरुष की (**गाम्**) वाणी वा भूमि का (**उत**) और (**हिरण्ययम्**) सुवर्ण आदि पदार्थों का (**ससान**) विभाग करे (**उत**) और (**भोगम्**) उत्तम भोजन आदि के पदार्थों का (**ससान**) विभाग करे, वह पुरुष (**दस्यून्**) साहस कर्म करनेवाले चोर आदि का (**हत्वी**) नाश करके (**आर्यम्**) उत्तम गुण, कर्म, स्वभावयुक्त धार्मिक (**वर्णम्**) स्वीकार करने योग्य पुरुष की (**प्र**) (**आवत्**) रक्षा करे॥९॥

भावार्थः-जो लोग उत्तम प्रकार परीक्षा करके भले और बुरे घोड़े, वीर पुरुष, न्यायाधीश, लक्ष्मी और उत्तम भोग का विभाग कर सकें, वे ही पुरुष दुष्ट पुरुषों का नाश कर श्रेष्ठ पुरुषों की रक्षा कर सकें॥९॥

पुना राजादिजनैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

फिर राजादि जनों को क्या करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्र ओषधीरसनोदहानि वनस्पतीँरसनोदन्तरिक्षम्।

बिभेद बलं नुनुदे विवाचोऽथाभवद्दमिताभिक्रतूनाम्॥ १०॥

इन्द्रः। ओषधीः। असनोत्। अहानि। वनस्पतीन्। असनोत्। अन्तरिक्षम्। बिभेद। बलम्। नुनुदे। विऽवाचः। अथ। अभवत्। दमिता। अभिऽक्रतूनाम्॥ १०॥

पदार्थः-(**इन्द्रः**) ऐश्वर्य्यप्रदः (**ओषधीः**) सोमाद्याः (**असनोत्**) सुनुयात् (**अहानि**) दिनानि (**वनस्पतीन्**) अश्वत्थादीन् (**असनोत्**) सुनुयात् (**अन्तरिक्षम्**) उदकम्। **अन्तरिक्षमित्युदकनामसु पठितम्।** (निघं०१.१२)[१२] (**बिभेद**) भिन्द्यात् (**बलम्**) (**नुनुदे**) प्रेरयेत् (**विवाचः**) विविधा वाणीः (**अथ**) (**अभवत्**) भवेत् (**दमिता**) नियन्ता (**अभिक्रतूनाम्**) आभिमुख्येन क्रतुः कर्म येषां तेषां बलीयसां शत्रूणाम्॥१०॥

अन्वयः-स राजेन्द्रोऽहानि नित्यमोषधीरसनोद् वनस्पतीनसनोदन्तरिक्षं बलं च बिभेद विवाचो नुनुदेऽथाभिक्रतूनां दमिताऽभवत्॥१०॥

भावार्थः-राजादिजनैः प्रत्यहमोषधिरसं निर्माय तद्रसपानं विद्यावाक्प्रचारणं सर्वेषां प्रज्ञानां स्वप्रज्ञाधिक्येन दमनं च कर्त्तव्यं यत आरोग्यं विद्याप्रभावाश्च प्रतिदिनं वर्धेरन्॥१०॥

पदार्थः-वह (**इन्द्रः**) ऐश्वर्य देनेवाला राजा (**अहानि**) दिनों दिन (**ओषधीः**) सोम आदि ओषधियों को (**असनोत्**) देवे, (**वनस्पतीन्**) पीपल आदि वनस्पतियों को (**असनोत्**) देवे, (**अन्तरिक्षम्**) जल और (**बलम्**) बल का (**बिभेद**) भेदन करे, (**विवाचः**) अनेक प्रकार की वाणियों की (**नुनुदे**) प्रेरणा करे (**अथ**) और भी (**अभिक्रतूनाम्**) सहसा शीघ्र कर्म करनेवाले शत्रुओं को (**दमिता**) दमन करनेवाला (**अभवत्**) होवे॥१०॥

भावार्थः-राजा आदि श्रेष्ठ जनों को चाहिये कि प्रतिदिन ओषधियों के रसादि उत्पन्न कर उनके रस का पान, विद्या सम्बन्धी वाणी का प्रचार और सब जनों की बुद्धियों का अपनी बुद्धि से भी अधिकता के सहित दमन अर्थात् विषयों से निवृत्ति करें, जिससे आरोग्य और विद्याओं के प्रभाव प्रतिदिन बढ़ें॥१०॥

मनुष्यैः कीदृशो राजा सेव्य इत्याह॥

मनुष्यों को कैसे राजा का सेवन करना चाहिये, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ।

---

१२. अन्तरिक्षपदमुदकनामसु नोपलभ्यते। तत्र त्वेतत्पदम् अन्तरिक्षनामसु (निघ०१.३.६) दृश्यते। सं०

शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम्॥ ११॥ १६॥

शुनम्। हुवेम। मघऽवानम्। इन्द्रम्। अस्मिन्। भरे। नृऽतमम्। वाजऽसातौ। शृण्वन्तम्। उग्रम्। ऊतये। समत्ऽसु। घ्नन्तम्। वृत्राणि। सम्ऽजितम्। धनानाम्॥ ११॥

पदार्थः-(**शुनम्**) सुखप्रदम् (**हुवेम**) प्रशंसेम (**मघवानम्**) पुष्कलधनम् (**इन्द्रम्**) दुष्टानां विदारकम् (**अस्मिन्**) वर्त्तमाने (**भरे**) मूर्खविद्वद्ज्ञानज्ञानविषयविरोधरूपे युद्धे (**नृतमम्**) अतिशयेन सत्याऽसत्ययोर्नेतारम् (**वाजसातौ**) विज्ञानाऽविज्ञानसत्यासत्यविभाजके (**शृण्वन्तम्**) अर्थिप्रत्यर्थिनोः श्रवणाऽनन्तरं न्यायस्य कर्त्तारम् (**उग्रम्**) दुष्टानामुपरि कठिनस्वभावं श्रेष्ठेषु शान्तम् (**ऊतये**) रक्षणाद्याय (**समत्सु**) संग्रामेषु (**घ्नन्तम्**) (**वृत्राणि**) मेघावयवानिव शत्रुसैन्यानि (**सञ्जितम्**) सम्यगुत्कर्षप्राप्तम् (**धनानाम्**) विज्ञानादिपदार्थानां मध्ये॥ ११॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यं शुनं मघवानमस्मिन् वाजसातौ भरे नृतममिन्द्रमूतये शृण्वन्तमुग्रं समत्सु वृत्राणि घ्नन्तं धनानां सञ्जितं राजानं हुवेम तं यूयमप्याह्वयत॥ ११॥

भावार्थः-मनुष्या दुष्टश्रेष्ठानां परीक्षितारं वादिप्रतिवादिनोर्वचांसि श्रुत्वा न्यायकर्त्तारं पण्डितमूर्खसत्काराऽसत्कारविधातारं पक्षपातरहितं सर्वेषां सुहृदं राजानं स्वीकृत्याऽऽनन्दन्त्विति॥ ११॥

अत्र सूर्यविद्युद्वीरराज्यराजसेनाप्रजागुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुस्त्रिंशत्तमं सूक्तं षोडशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिस (**शुनम्**) सुख देनेवाले (**मघवानम्**) बहुत धन से युक्त (**अस्मिन्**) इस वर्त्तमान (**वाजसातौ**) विज्ञान-अविज्ञान, सत्य और असत्य के विभागकारक (**भरे**) मूर्ख और विद्वान् के अज्ञान और ज्ञान के विषय के विरोध रूप युद्ध में (**नृतमम्**) अत्यन्त सत्य और असत्य के निर्णय करने (**इन्द्रम्**) और दुष्ट जनों के नाश करनेवाले पुरुष की (**ऊतये**) रक्षा आदि के लिये (**शृण्वन्तम्**) अर्थी-प्रत्यर्थी अर्थात् मुद्दई-मुद्दाले के वचन सुनने के पीछे न्याय करने, (**उग्रम्**) दुष्ट पुरुषों पर कठोर स्वभाव और श्रेष्ठ पुरुषों में शान्त स्वभाव रखने, (**समत्सु**) संग्रामों में (**वृत्राणि**) मेघों के अवयवों के सदृश शत्रुओं की सेनाओं के (**घ्नन्तम्**) नाश करने और (**धनानाम्**) विज्ञान आदि पदार्थों के मध्य में (**सञ्जितम्**) उत्तम प्रकार श्रेष्ठता को प्राप्त होनेवाले राजा की (**हुवेम**) प्रशंसा करें, उसकी आप लोग भी प्रशंसा

करो॥११॥

भावार्थः-मनुष्य लोग दुष्ट और श्रेष्ठ पुरुषों की परीक्षा करने, वादी और प्रतिवादी के वचनों को सुनके न्याय करने, पण्डित और मूर्ख जन का आदर और निरादर करने, पक्षपात से अलग रहने और सम्पूर्ण जनों के सुख देनेवाले पुरुष को राजा मान के आनन्द करें॥११॥

इस सूक्त में सूर्य्य, बिजुली, वीर, राज्य, राजा की सेना और प्रजा के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह चौतीसवां सूक्त और सोलहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथैकादशर्चस्य पञ्चत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ७, १०, ११ त्रिष्टुप्। २, ३, ६, ८ निचृत्त्रिष्टुप्। ९ विराट् त्रिष्टुप्छन्दः। धैवतः स्वरः। ४ भुरिक् पङ्क्तिः। ५ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ मनुष्यैः किं कर्त्तव्यमित्याह॥

अब ग्यारह ऋचावाले पैंतीसवें सूक्त का प्रारम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र से मनुष्यों को क्या करना चाहिये, इस विषय को कहते हैं॥

तिष्ठा हरी रथ आ युज्यमाना याहि वायुर्न नियुतो नो अच्छ।
पिबास्यन्धो अभिसृष्टो अस्मे इन्द्र स्वाहा ररिमा ते मदाय॥१॥

तिष्ठ। हरी इति। रथे। आ। युज्यमाना। याहि। वायुः। न। निऽयुतः। नः। अच्छ। पिबासि। अन्धः। अभिऽसृष्टः। अस्मे इति। इन्द्र। स्वाहा। ररिम। ते। मदाय॥१॥

पदार्थः-(**तिष्ठ**)। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**हरी**) अश्वौ (**रथे**) (**आ**) समन्तात् (**युज्यमाना**) संयुक्तौ (**याहि**) गच्छ (**वायुः**) पवनः (**न**) इव (**नियुतः**) श्रेष्ठैर्मिश्रितान् दुष्टैर्वियुक्तान् (**नः**) अस्मान् (**अच्छ**) सम्यक् (**पिबासि**) पिबेः (**अन्धः**) सुसंस्कृतमन्नम् (**अभिसृष्टः**) आभिमुख्येन प्रेरितः (**अस्मे**) अस्मासु (**इन्द्र**) परमैश्वर्य्ययुक्त (**स्वाहा**) सत्यया वाचा (**ररिम**) दद्याम। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**ते**) तुभ्यम् (**मदाय**) आनन्दाय॥१॥

अन्वयः-हे इन्द्र राजँस्त्वं यस्मिन् रथे युज्यमाना हरी इव जलाग्नी वर्त्तेते तस्मिन्नातिष्ठ तेन वायुर्न नियुतो नोऽस्मानच्छ याहि। अभिसृष्टः सँस्तेऽस्मे यदन्धो मदाय ररिम तत्स्वाहा पिबासि॥१॥

भावार्थः-ये मनुष्या अग्न्यादिपदार्थचालिरथे स्थित्वा देशान्तरं वायुवद् गच्छन्ति ते पुष्कलानि भक्ष्यभोज्यपेयचूष्यानि प्राप्नुवन्ति॥१॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त राजन्! आप जिस (**रथे**) रथ में (**युज्यमाना**) जुड़े हुए (**हरी**) घोड़ों के सदृश जल और अग्नि वर्त्तमान हैं, उस रथ में (**आ**) सब प्रकार (**तिष्ठ**) वर्त्तमान हूजिये, इससे (**वायुः**) पवन के (**न**) तुल्य (**नियुतः**) श्रेष्ठ पुरुषों के साथ मिले और दुष्ट पुरुषों से अनमिले (**नः**) हम लोगों को (**अच्छ**) अच्छे प्रकार (**याहि**) प्राप्त हूजिये और (**अभिसृष्टः**) सम्मुख प्रेरित हुआ जन (**ते**) आपके लिये (**अस्मे**) हमारे निकट से (**अन्धः**) उत्तम प्रकार संस्कार किये हुए अन्न को (**मदाय**) आनन्द के अर्थ (**ररिम**) देवें, उसका (**स्वाहा**) सत्य वाणी से (**पिबासि**) पान कीजिये॥१॥

भावार्थः-जो मनुष्य अग्नि आदि पदार्थों से चलनेवाले रथ पर चढ़ के अन्य अन्य देशों को वायु के सदृश जाते हैं, वे बहुत भक्षण, भोजन करने, पीने और चूषने योग्य पदार्थों को प्राप्त होते हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उपा॑जि॒रा पु॑रुहू॒ताय॒ सप्ती॒ हरी॒ रथ॑स्य धू॒र्ष्वा यु॑नज्मि।
द्र॒वद्यथा॒ संभृ॑तं वि॒श्वत॑श्चि॒दुपे॒मं य॒ज्ञमा व॑हात॒ इन्द्र॑म्॥ २॥

उप॑। अ॒जि॒रा। पु॒रु॒ऽहू॒ताय॑। सप्ती॒ इति॑। हरी॒ इति॑। रथ॑स्य। धू॒ःऽसु। आ। यु॒न॒ज्मि॒। द्र॒वत्। यथा॑। सम्ऽभृ॑तम्। वि॒श्वत॑ः। चि॒त्। उप॑। इ॒मम्। य॒ज्ञम्। आ। व॒हा॒त॒ः। इन्द्र॑म्॥ २॥

पदार्थः-(**उप**) सामीप्ये (**अजिरा**) यानानां प्रक्षेप्तारौ (**पुरुहूताय**) बहुभिराहूताय (**सप्ती**) सद्यः सर्पन्तौ। अत्र **वाच्छन्दसी**ति गुण कृते रेफलोपः। (**हरी**) हरणशीलौ (**रथस्य**) यानस्य (**धूर्षु**) रथाधारावयवेषु (**आ**) समन्तात् (**युनज्मि**) (**द्रवत्**) द्रवं प्राप्नुवत् (**यथा**) (**सम्भृतम्**) सम्यग्धृतम् (**विश्वतः**) सर्वतः (**चित्**) अपि (**उप**) (**इमम्**) प्रत्यक्षम् (**यज्ञम्**) शिल्पविद्यासाध्यम् (**आ**) (**वहातः**) वहेताम् (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्य्यम्॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथाऽहं याविमं यज्ञमिन्द्रमावहातो विश्वतो द्रवत् सम्भृतं चिदप्युपावहातस्तौ पुरुहूताय वर्त्तमानावजिरा सप्ती हरी रथस्य धूर्षु युनज्मि तौ यूयमपि युङ्ग्ध्वम्॥ २॥

भावार्थः-ये यानेषु विद्युदादिपदार्थान् संयोज्य चालयन्ति ते कं कं देशं न गच्छेयु? तेषां किमैश्वर्य्यमप्राप्तं स्यात्?॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यथा**) जैसे मैं जो (**इमम्**) इस प्रत्यक्ष (**यज्ञम्**) शिल्प विद्या से होने योग्य (**इन्द्रम्**) अत्यन्त ऐश्वर्य्यवान् काम को सब प्रकार चलाते (**विश्वतः**) वा सब ओर से (**द्रवत्**) पिघलने को प्राप्त होते हुए (**सम्भृतम्**) उत्तम प्रकार धारण किये गये पदार्थ को (**चित्**) भी (**उप**) समीप में (**आ, वहातः**) वहाते उन (**पुरुहूताय**) बहुतों ने बुलाये गये के लिये वर्त्तमान (**अजिरा**) वाहनों के फेंकने (**सप्ती**) शीघ्र चलने (**हरी**) और यान को ले जानेवाले का (**रथस्य**) वाहन की (**धूर्षु**) धुरियों में जिनको (**उप, आ, युनज्मि**) जोड़ता हूँ, उनको आप लोग भी जोड़िये॥ २॥

भावार्थः-जो लोग वाहनों में बिजुली आदि पदार्थों को संयुक्त करके चलाते हैं, वे किस-किस देश को न जा सकें? और उनको कौन सा ऐश्वर्य्य है, जो न प्राप्त होवे?॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उपो॑ नयस्व॒ वृष॑णा तपु॒ष्पोतेम॑व॒ त्वं वृ॑षभ स्वधावः।
ग्रसे॑ता॒मश्वा॒ वि मु॑चे॒ह शोणा॑ दि॒वेऽदि॑वे स॒दृशी॑रद्धि धा॒नाः॥ ३॥

उपो॒ इति॑। न॒य॒स्व॒। वृष॑णा। त॒पु॒ःऽपा। उ॒त। ई॒म्। अ॒व॒। त्वम्। वृ॒ष॒भ॒। स्व॒धा॒ऽव॒ः। ग्रसे॑ताम्। अश्वा॑। वि। मु॒च॒। इ॒ह। शोणा॑। दि॒वेऽदि॑वे। स॒ऽदृशी॑ः। अ॒द्धि॒। धा॒नाः॥ ३॥

पदार्थः-(**उपो**) सामीप्ये (**नयस्व**) (**वृषणा**) बलिष्ठौ (**तपुष्पा**) यौ तपूंषि पातो रक्षतस्तौ (**उत**) (**ईम्**) उदकम्। **ईमित्युदकनामसु पठितम्।** (निघं०१.१२) (**अव**) प्रवेशय (**त्वम्**) (**वृषभ**) बलिष्ठ (**स्वधावः**) पुष्कलान्नयुक्त (**ग्रसेताम्**) (**अश्वा**) सद्योगामिनौ (**वि**) (**मुच**) त्यज (**इह**) अस्मिन् याने (**शोणा**) रक्तगुणविशिष्टौ (**दिवेदिवे**) नित्यम् (**सदृशीः**) समाना गतीः (**अद्धि**) भुङ्क्ष्व (**धानाः**) अग्निसंस्कृतान्नविशेषान्॥३॥

अन्वयः-हे वृषभ स्वधावस्त्वमिह यौ तपुष्पा वृषणा शोणाऽश्वेन्धनानि ग्रसेतां तत्र कला विमुचेमुपो नयस्व। उत दिवेदिवे सदृशीर्धाना अद्धि तत्र सम्भारानव॥३॥

भावार्थः-ये शिल्पिनो मनुष्या अग्निजलादीन् पदार्थान् सुकलायुक्तेषु यानेषु संयुज्य चालयन्ति ते दारिद्र्यं विमुच्य धनधान्यमाप्नुवन्ति॥३॥

पदार्थः-हे (**वृषभ**) बलवान् (**स्वधावः**) अत्यन्त अन्नयुक्त! (**त्वम्**) आप (**इह**) इस वाहन में जो (**तपुष्पा**) तपते हुए पदार्थों को रखनेवाले (**वृषणा**) बल और (**शोणा**) लाल रङ्गयुक्त (**अश्वा**) शीघ्रगामी अग्नि आदि इन्धनों को (**ग्रसेताम्**) भक्षण करे, उनमें कलाओं को (**वि, मुच**) छोड़ो (**ईम्**) जल को (**उपो**) उनके समीप में (**नयस्व**) पहुँचाओ (**उत**) और (**दिवेदिवे**) नित्य (**सदृशीः**) तुल्य परिणामवाले (**धानाः**) अग्नि से संस्कार किये अन्नविशेषों को (**अद्धि**) भक्षण करो, उनमें बोझों को (**अव**) पेश करो॥३॥

भावार्थः-जो शिल्पी जन अग्नि, जल आदि पदार्थों को उत्तम कलाओं से युक्त वाहनों में संयुक्त करके चलाते हैं, वे दारिद्र्य को छोड़ के धन और धान्य को प्राप्त होते हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

ब्रह्म॑णा ते ब्रह्म॒युजा॑ युनज्मि॒ हरी॒ सखा॑या सध॒माद॑ आ॒शू।

स्थि॒रं रथं॑ सु॒खमि॑न्द्राधि॒तिष्ठ॑न् प्रजा॒नन् वि॒द्वाँ उप॑ याहि॒ सोम॑म्॥४॥

ब्रह्म॑णा। ते॒। ब्र॒ह्म॒ऽयुजा॑। यु॒न॒ज्मि॒। हरी॒ इति॑। सखा॑या। स॒ध॒ऽमादे॑। आ॒शू इति॑। स्थि॒रम्। रथ॑म्। सु॒ऽखम्। इ॒न्द्र॒। अ॒धि॒ऽतिष्ठ॑न्। प्र॒ऽजा॒नन्। वि॒द्वान्। उप॑। या॒हि॒। सोम॑म्॥४॥

पदार्थः-(**ब्रह्मणा**) अन्नादिना (**ते**) तव (**ब्रह्मयुजा**) यौ ब्रह्म धनं योजयतस्तौ (**युनज्मि**) (**हरी**) जलाग्नी (**सखाया**) सुहृदाविव (**सधमादे**) समानस्थाने (**आशू**) शीघ्रं गमयितारौ (**स्थिरम्**) ध्रुवम् (**रथम्**) यानम् (**सुखम्**) सुहितं खेभ्यस्तम् (**इन्द्र**) शिल्पविद्यैश्वर्य्ययुक्त (**अधितिष्ठन्**) उपरि स्थितः सन् (**प्रजानन्**) प्रकृष्टतया बुद्ध्यमानः (**विद्वान्**) साङ्गोपाङ्गामेतद्विद्यां विदन् (**उप**) (**याहि**) (**सोमम्**) ऐश्वर्य्यम्॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्र! अहं ते तव यस्मिन् याने ब्रह्मणा सह वर्त्तमानौ ब्रह्मयुजा आशू हरी सखाया इव सधमादे युनज्मि तं सुखं स्थिरं रथमधितिष्ठन् विद्वान् सन्नेतद्विद्यां प्रजानन् सोममुपयाहि॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। येऽग्निजलादिप्रयुक्ते याने स्थित्वा यथावद्विद्यया प्रचालयन्तो देशान्तरं गत्वागत्यैश्वर्य्यं प्राप्य सखीन् सत्कुर्युस्त एव विद्याधर्मावुन्नेतुं शक्नुयुः॥४॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** शिल्पविद्यारूप ऐश्वर्य्य से युक्त पुरुष! मैं **(ते)** आपके जिस वाहन में **(ब्रह्मणा)** अन्न आदि के सहित विद्यमान **(ब्रह्मयुजा)** धन के संग्रह कराने और **(आशू)** शीघ्र ले चलनेवाले **(हरी)** जल और अग्नि को **(सखाया)** मित्रों के तुल्य **(सधमादे)** बरोबर के स्थान में **(युनज्मि)** संयुक्त करता हूँ, उस **(सुखम्)** आकाश मार्गियों के लिये हित करनेवाले **(स्थिरम्)** दृढ़ **(रथम्)** वाहन **(अधि, तिष्ठन्)** पर स्थिर हों तो **(विद्वान्)** इस विद्या को अङ्ग और उपाङ्गों के सहित जानते और **(प्रजानन्)** उत्तम प्रकार ज्ञान को प्राप्त होते हुए आप **(सोमम्)** ऐश्वर्य को **(उप, याहि)** प्राप्त हूजिये॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो लोग अग्नि और जल आदि पदार्थों से चलाये गये वाहन पर बैठ अच्छे प्रकार विद्या द्वारा उसको चलाते हुए देशदेशान्तरों में जाय-आय और ऐश्वर्य को पाय मित्रों का सत्कार करें, वे ही विद्या और धर्म की वृद्धि कर सकें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मा ते हरी वृषणा वीतपृष्ठा नि रीरमन् यजमानासो अन्ये।
अत्यायाहि शश्वतो वयं तेऽरं सुतेभिः कृणवाम सोमैः॥५॥१७॥

मा। ते। हरी इति। वृषणा। वीतऽपृष्ठा। नि। रीरमन्। यजमानासः। अन्ये। अतिऽआयाहि। शश्वतः। वयम्। ते। अरम्। सुतेभिः। कृणवाम। सोमैः॥५॥

पदार्थः-**(मा)** निषेधे **(ते)** तव **(हरी)** यानहारकौ **(वृषणा)** बलिष्ठौ **(वीतपृष्ठा)** वीते व्याप्तिशीले पृष्ठे ययोस्तौ **(नि)** **(रीरमन्)** रमयेयुः **(यजमानासः)** विद्यासङ्गतिविदः **(अन्ये)** एतद्भिन्नाः **(अत्यायाहि)** अतिवेगेनागच्छोल्लङ्घ्य वा **(शश्वतः)** सनातनाः **(वयम्)** **(ते)** तव **(अरम्)** अलम् **(सुतेभिः)** निष्पन्नैः **(कृणवाम)** कुर्य्याम **(सोमैः)** ऐश्वर्य्यैः॥५॥

अन्वयः-हे इन्द्र! येऽन्ये यजमानासस्ते तव वीतपृष्ठा वृषणा हरी मा नि रीरमन् ताँस्त्वमत्यायाहि। शश्वत आगच्छ यस्य ते सुतेभिः सोमैररं कामं वयं कृणवाम स त्वमस्माकमलं कामं कुरु॥५॥

भावार्थः-येऽग्न्यादिपदार्थविद्यामविदित्वैतद्विद्याविदो जनान्नोत्साहयन्ति तानुल्लङ्घ्यानादि-विद्याविदां विदुषां शरणं गत्वा शिल्पविद्यानिष्पन्नैः कार्य्यैः पूर्णकामा वयं भवेमेषित्वा नित्यं प्रयतेरन्॥५॥

पदार्थः-हे प्रतापयुक्त पुरुष! जो **(अन्ये)** इससे और **(यजमानासः)** विद्या की सङ्गति के जाननेवाले **(ते)** आपके **(वीतपृष्ठा)** चौड़ी पीठों से युक्त **(वृषणा)** बलिष्ठ **(हरी)** वाहनों के ले चलनेवालों को **(मा)** नहीं **(नि, रीरमन्)** रमावें उनको आप **(अत्यायाहि)** बड़े वेग से प्राप्त हूजिये वा छोड़िये और **(शश्वतः)** अनादि काल से सिद्ध विद्यायुक्त पुरुषों को प्राप्त हूजिये जिस **(ते)** आपके **(सुतेभिः)** उत्पन्न **(सोमैः)** ऐश्वर्य्यों से **(अरम्)** पूरे काम को **(वयम्)** हम लोग **(कृणवाम)** करें, वह आप हमारे पूरे काम को करो॥५॥

भावार्थः-जो लोग अग्नि आदि पदार्थों की विद्या को जाने विना इस विद्या के जाननेवाले जनों का उत्साह नहीं बढ़ाते, उनका उल्लङ्घन कर अनादि काल से सिद्ध विद्या के जाननेवाले विद्वानों की शरण जाके शिल्पविद्या से उत्पन्न कार्यों से पूर्ण मनोरथवाले हम लोग होवें, इस प्रकार इच्छा करके नित्य प्रयत्न करें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तवायं सोमस्त्वमेह्यर्वाङ् शश्वत्तमं सुमना अस्य पाहि।
अस्मिन् यज्ञे बर्हिष्या निषद्या दधिष्वेमं जठर इन्दुमिन्द्र॥६॥

तव। अयम्। सोमः। त्वम्। आ। इहि। अर्वाङ्। शश्वत्ऽतमम्। सुऽमनाः। अस्य। पाहि। अस्मिन्। यज्ञे। बर्हिषि। आ। निऽसद्य। दधिष्व। इमम्। जठरे। इन्दुम्। इन्द्र॥६॥

पदार्थः-**(तव)** **(अयम्)** **(सोमः)** ऐश्वर्य्ययोगः **(त्वम्)** **(आ)** **(इहि)** प्राप्नुहि **(अर्वाङ्)** अधस्ताद्वर्त्तमानः **(शश्वत्तमम्)** अतिशयेनाऽनादिभूतम् **(सुमनाः)** प्रसन्नचित्तः **(अस्य)** बोधस्य **(पाहि)** **(अस्मिन्)** **(यज्ञे)** शिल्पसम्पाद्ये व्यवहारे **(बर्हिषि)** अत्युत्तमे **(आ)** समन्तात् **(निषद्य)** नितरां स्थित्वा। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(दधिष्व)** धेहि **(इमम्)** **(जठरे)** उदरे **(इन्दुम्)** सार्द्रपदार्थम् **(इन्द्र)** परमैश्वर्य्यमिच्छुक॥६॥

अन्वयः-हे इन्द्र! तव योऽयमर्वाङ् सोमस्तं शश्वत्तमं त्वमेहि। अस्मिन् बर्हिषि यज्ञे निषद्य सुमनाः सन्निमं पाहि। अस्य सकाशात् प्राप्तमिन्दुं जठर आ दधिष्व॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! अस्मिन्त्सर्वोत्तमे शिल्पसाध्ये व्यवहारे निपुणा भूत्वाऽनादिभूतं पूर्वैर्विद्वद्भिः प्राप्तमैश्वर्य्यं विधाय सर्वस्यास्य जगतो रक्षणे निधाय युक्ताहारविहारेणाऽनन्दं भुङ्क्त॥६॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य की इच्छा करनेवाले! **(तव)** आपका जो **(अयम्)** यह **(अर्वाङ्)** अधोभाग में विद्यमान **(सोमः)** ऐश्वर्य्य का संयोग उस **(शश्वत्तमम्)** अत्यन्त अनादि काल से

सिद्ध ऐश्वर्य्य संयोग को **(त्वम्)** आप **(आ)** **(इहि)** प्राप्त हूजिये **(अस्मिन्)** इस **(बर्हिषि)** अति उत्तम **(यज्ञे)** शिल्पविद्या से होने योग्य व्यवहार में **(निषद्य)** निरन्तर स्थिर होकर **(सुमनाः)** प्रसन्नचित्त हुए **(इमम्)** इसकी **(पाहि)** रक्षा करो और **(अस्य)** इस ज्ञान की उत्तेजना से प्राप्त **(इन्दुम्)** गीले पदार्थ को **(जठरे)** उदर में **(आ)** सब प्रकार **(दधिष्व)** धारण कीजिये॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! इस सबसे उत्तम शिल्पविद्या से साध्य व्यवहार में चतुर होके अनादि काल से उत्पन्न और प्राचीन विद्वानों से प्राप्त ऐश्वर्य्य को सिद्ध कर इस संसार की रक्षा के लिये स्थित करके योग्य आहार और विहार से आनन्द भोगो॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स्तीर्णं ते बर्हिः सुत इन्द्र सोमः कृता धाना अत्तवे ते हरिभ्याम्।
तदोकसे पुरुशाकाय वृष्णे मरुत्वते तुभ्यं राता हवींषि॥७॥

स्तीर्णम्। ते। बर्हिः। सुतः। इन्द्र। सोमः। कृताः। धानाः। अत्तवे। ते। हरिऽभ्याम्। तत्ऽओकसे। पुरुऽशाकाय । वृष्णे। मरुत्वते। तुभ्यम्। राता। हवींषि॥७॥

पदार्थः-**(स्तीर्णम्)** आच्छादितम् **(ते)** तव **(बर्हिः)** वृद्धमुदकम्। **बर्हिरित्युदकनामसु पठितम्।** (निघं०१.१२) **(सुतः)** निष्पादितः **(इन्द्र)** दारिद्र्यविदारक **(सोमः)** ऐश्वर्य्ययोगः **(कृताः)** निष्पन्नाः **(धानाः)** पक्वान्नविशेषाः **(अत्तवे)** अत्तुम् **(ते)** **(हरिभ्याम्)** **(तदोकसे)** तद्यानमोकः स्थानं यस्य तस्मै **(पुरुशाकाय)** बहुशक्तये **(वृष्णे)** वर्षणशीलाय **(मरुत्वते)** मरुतो बहवो मनुष्याः कार्य्यसाधका विद्यन्ते यस्य तस्मै **(तुभ्यम्)** **(राता)** दत्तानि **(हवींषि)** अत्तुमर्हाण्यन्नादीनि॥७॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ते स्तीर्णं बर्हिस्सुतस्सोमः कृता धाना हरिभ्यां युक्ते याने स्थिता यत्ते तदोकसे पुरुशाकाय वृष्णे मरुत्वते तुभ्यमत्तवे यानि हवींषि राता सन्ति तानि भुङ्क्ष्व॥७॥

भावार्थः-सर्वे मनुष्या निसृष्टपदार्थभोक्तारस्स्युर्नैवाऽन्यायेनोपार्जितं किञ्चिदपि भुञ्जीरन्नेवं वर्त्तमाने कृते धनशक्तिविद्याऽऽयूंषि वर्धन्ते॥७॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** दरिद्रता के नाश करनेवाले! **(ते)** आपका **(स्तीर्णम्)** ढंपा और **(बर्हिः)** बढ़ा हुआ जल वा **(सुतः)** उत्पन्न किया गया **(सोमः)** ऐश्वर्य्य का संयोग वा **(कृताः)** सिद्ध किये गये **(धानाः)** पके हुए अन्न विशेष वा **(हरिभ्याम्)** घोड़ों से संयुक्त वाहन पर बैठे हुए जो **(ते)** आपके जन और **(तदोकसे)** वाहनरूप स्थानवाले **(पुरुशाकाय)** अनेक प्रकार की शक्ति से **(वृष्णे)** वृष्टि करानेवाले **(मरुत्वते)** कार्य्य करानेवाले बहुत मनुष्यों के सहित विराजमान **(तुभ्यम्)** आपके लिये **(अत्तवे)** भोजन करने को जो **(हवींषि)** भोजन करने के योग्य अन्न आदि **(राता)** वर्त्तमान उनको भोगो॥७॥

भावार्थः-सम्पूर्ण जन उत्तम पदार्थों के भोजन करनेवाले हों और अन्याय से इकट्ठे किये हुए किसी भी पदार्थ का भोग न करें। इस प्रकार वर्त्ताव करने पर धन, सामर्थ्य, विद्या और आयु बढ़ते हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इमं नरः पर्वतास्तुभ्यमापः समिन्द्र गोभिर्मधुमन्तमक्रन्।
तस्यागत्या सुमना ऋष्व पाहि प्रजानन् विद्वान् पथ्या३ अनु स्वाः॥८॥

इमम्। नरः। पर्वताः। तुभ्यम्। आपः। सम्। इन्द्र। गोभिः। मधुऽमन्तम्। अक्रन्। तस्य। आऽगत्य। सुऽमनाः। ऋष्व। पाहि। प्रऽजानन्। विद्वान्। पथ्याः। अनु। स्वाः॥८॥

पदार्थः-(**इमम्**) (**नरः**) नायकाः (**पर्वताः**) मेघाः (**तुभ्यम्**) (**आपः**) जलानि (**सम्**) (**इन्द्र**) परमैश्वर्य्यप्रापक (**गोभिः**) पृथिव्यादिभिस्सह (**मधुमन्तम्**) मधुरादिबहुरसयुक्तम् (**अक्रन्**) कुर्युः (**तस्य**) (**आगत्य**)। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**सुमनाः**) शोभनं निरीर्ष्यकं मनो यस्य सः (**ऋष्व**) प्राप्तविद्य (**पाहि**) (**प्रजानन्**) (**विद्वान्**) (**पथ्याः**) पथोऽपेताः (**अनु**) (**स्वाः**) स्वकीया गतीः॥८॥

अन्वयः-हे ऋष्वेन्द्र! ये नरस्तुभ्यं पर्वता आपश्चेव गोभिरिमं मधुमन्तं समक्रंस्तान् पाहि। सुमनाः प्रजानन् विद्वान्सँस्तस्य स्वाः पथ्या आगत्य सर्वाननुपाहि॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा वर्षाभिः सर्वेषां पालनं जायते तथैव विमानादेर्यानस्य निर्मातारो जगत्यां सर्वेषां रक्षका भवन्ति॥८॥

पदार्थः-हे (**ऋष्व**) विद्या से पूर्ण (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य की प्राप्ति करानेवाले! जो (**नरः**) प्रधान पुरुष (**तुभ्यम्**) आपके लिये (**पर्वताः**) मेघ और (**आपः**) जल के समान (**गोभिः**) पृथिवी आदि पदार्थों के सहित (**इमम्**) इस वर्त्तमान (**मधुमन्तम्**) मधुर आदि बहुत रसों से युक्त पदार्थ को (**सम्, अक्रन्**) अच्छे प्रकार करें उनका (**पाहि**) पालन करो (**सुमनाः**) और ईर्ष्यारहित मनवाले आप (**प्रजानन्**) जानते और (**विद्वान्**) विद्वान् होते हुए (**तस्य**) उस काम की (**स्वाः, पथ्याः**) मार्ग से निज चालियों को (**आगत्य**) प्राप्त होकर सबका (**अनु**) पालन करो॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे वृष्टियों से सबका पालन होता है, वैसे ही विमान आदि वाहन बनानेवाले जन संसार में सबके रक्षा करनेवाले होते हैं॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

याँ आभंजो मुरुतं इन्द्र सोमे ये त्वामवर्धन्नभंवन् गुणस्ते।
तेभिरेतं सुजोषां वावशानो३ग्नेः पिंब जिह्वया सोमंमिन्द्र॥९॥

यान्। आ। अभंजः। मुरुतंः। इन्द्र। सोमें। ये। त्वाम्। अवंर्धन्। अभंवन्। गुणः। ते। तेभिंः। एतम्। सुऽजोषाः। वावशानः। अग्नेः। पिब। जिह्वया। सोमंम्। इन्द्र॥९॥

पदार्थः-(**यान्**) विदुषः (**आ**) (**अभजः**) सेवेथाः (**मरुतः**) प्राणानिव प्रियानाप्तान् (**इन्द्र**) सकलैश्वर्यप्रद (**सोमे**) ऐश्वर्ये (**ये**) (**त्वाम्**) (**अवर्धन्**) वर्धयेयुः (**अभवन्**) भवेयुः (**गणः**) समूहः (**ते**) तव (**तेभिः**) तैस्सह (**एतम्**) (**सजोषाः**) समानप्रीतिसेवी (**वावशानः**) भृशं कामयमानः (**अग्नेः**) पावकस्य (**पिब**) (**जिह्वया**) ज्वालेव वर्त्तमानया (**सोमम्**) रसम् (**इन्द्र**) दुःखविदारक॥९॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं सोमे यान् विदुषो मरुता इवाभजो ये सोमे त्वामवर्धन् यस्ते गणस्तं प्राप्याऽऽनन्दिता अभवँस्तेभिः सह हे इन्द्र! सजोषा वावशानः सन्नग्नेर्जिह्वयैतं सोमं पिब॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यदि प्राणानिव प्रियानाप्तान् विदुषो मनुष्याः सेवेरन् तर्ह्येतांस्ते सर्वतो वर्धयेयुर्यथाऽग्निर्ज्वालया सर्वान् रसान् पिबति तथैव तीव्रक्षुधा सह वर्त्तमानोऽन्नं भुञ्जीत पेयं पिबेच्च॥९॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) सम्पूर्ण ऐश्वर्य्य के देनेवाले! आप ऐश्वर्य्य में (**यान्**) जिन विद्वानों को (**मरुतः**) प्राणों के सदृश प्रिय और श्रेष्ठ जान के (**आ, अभजः**) सेवन करो (**ये**) जो लोग (**सोमे**) ऐश्वर्य में (**त्वाम्**) आपकी (**अवर्धन्**) वृद्धि करें जो (**ते**) आपका (**गणः**) समूह उसको प्राप्त होके आनन्दित (**अभवन्**) होवें (**तेभिः**) उन लोगों के साथ (**इन्द्र**) हे दुःख के नाश करनेवाले! (**सजोषाः**) तुल्य प्रीति के सेवनकर्त्ता (**वावशानः**) अत्यन्त कामना करते हुए आप (**अग्नेः**) अग्नि की (**जिह्वया**) ज्वाला के सदृश वर्त्तमान गुण से (**एतम्**) इस (**सोमम्**) सोम रस का (**पिब**) पान करो॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो प्राण के सदृश प्रिय और श्रेष्ठ विद्वान् जनों की मनुष्य लोग सेवा करें तो इन मनुष्यों की वे विद्वान् लोग सब प्रकार वृद्धि करें और जैसे अग्नि ज्वाला से सम्पूर्ण रसों का पान करता है, वैसे ही तीक्ष्ण क्षुधा के सहित वर्त्तमान पुरुष अन्न का भोजन करे और पान करने योग्य वस्तु का पान करे॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इन्द्र पिबं स्वधयां चित्सुतस्याग्नेर्वा पाहि जिह्वयां यजत्र।
अध्वर्योर्वा प्रयंतं शक्र हस्ताद्धोतुर्वा यज्ञं हविषों जुषस्व॥१०॥

इन्द्र। पिब। स्वधया। चित्। सुतस्य। अग्नेः। वा। पाहि। जिह्वया। यजत्र। अध्वर्योः। वा। प्रऽयतम्। शक्र। हस्तात्। होतुः। वा। यज्ञम्। हविषः। जुषस्व॥१०॥

पदार्थः-(**इन्द्र**) ऐश्वर्य्यवन् (**पिब**) (**स्वधया**) अन्नेन (**चित्**) अपि (**सुतस्य**) निष्पन्नस्य (**अग्नेः**) पावकस्य (**वा**) (**पाहि**) (**जिह्वया**) ज्वालेव वर्त्तमानया (**यजत्र**) पूजनीय (**अध्वर्योः**) य आत्मनोऽध्वरमिच्छति तस्य (**वा**) (**प्रयतम्**) प्रयत्नेन सिद्धम् (**शक्र**) शक्तिमन् (**हस्तात्**) (**होतुः**) दातुः (**वा**) (**यज्ञम्**) (**हविषः**) साकल्यात् (**जुषस्व**) सेवस्व॥१०॥

अन्वयः-हे यजत्र शक्रेन्द्र! त्वमग्नेर्ज्वालेव जिह्वया स्वधया वा चित्सुतस्य रसं पिब अध्वर्योर्वा प्रयतं यज्ञं पाहि। होतुर्हस्ताद्धविषो वा यज्ञं जुषस्व॥१०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यैर्मनुष्यैः सुसाधितस्याऽन्नस्य भोजनं रसस्य पानं कृत्वाऽरोगा भूत्वा विद्वद्भिः सह सङ्गत्य यज्ञः सेव्येत ते सदा सुखिनः स्युः॥१०॥

पदार्थः-हे (**यजत्र**) आदर करने योग्य (**शक्र**) शक्तिमान् (**इन्द्र**) ऐश्वर्यवाले! आप (**अग्नेः**) अग्नि की (**जिह्वया**) ज्वाला के सदृश वर्त्तमान लपट से (**वा**) वा (**स्वधया**) अन्न से (**चित्**) भी (**सुतस्य**) सिद्ध हुए रस का (**पिब**) पान करिये (**अध्वर्योः**) आत्मसम्बन्धी यज्ञ की इच्छा करते हुए पुरुष के (**वा**) अथवा (**प्रयतम्**) प्रयत्न से सिद्ध (**यज्ञम्**) यज्ञ का (**पाहि**) पालन करो (**होतुः**) देनेवाले के (**हस्तात्**) हाथ और (**हविषः**) हवन की सामग्री से (**वा**) अथवा यज्ञ का (**जुषस्व**) सेवन करो॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जिन मनुष्यों से उत्तम प्रकार सिद्ध किये हुए अन्न का भोजन और रस का पान कर, रोगरहित हो और विद्वानों के साथ मेल करके यज्ञ का सेवन किया जाये, वे सदा सुखी होवें॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम्॥११॥१८॥

शुनम्। हुवेम। मघऽवानम्। इन्द्रम्। अस्मिन्। भरे। नृऽतमम्। वाजऽसातौ। शृण्वन्तम्। उग्रम्। ऊतये। समत्ऽसु। घ्नन्तम्। वृत्राणि। सम्ऽजितम्। धनानाम्॥११॥

पदार्थः-(**शुनम्**) सुखकरम् (**हुवेम**) (**मघवानम्**) बहुधनयुक्तम् (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्यम् (**अस्मिन्**) शिल्पव्यवहारे (**भरे**) संग्रामे (**नृतमम्**) पुरुषोत्तमम् (**वाजसातौ**) अन्नानां विभागे (**शृण्वन्तम्**)

सत्पुरुषवचनानां श्रोतारम् **(उग्रम्)** तेजस्विनम् **(ऊतये)** रक्षणाद्याय **(समत्सु)** संग्रामेषु **(घ्नन्तम्)** नाशयन्तम् **(वृत्राणि)** अस्मद्बलाऽऽवरकाणि शत्रुसैन्यानि **(सञ्जितम्)** **(धनानाम्)** विद्यासुवर्णादीनाम्॥११॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा वयमूतये समत्सु वृत्राणि सूर्य इव शत्रून् घ्नन्तमुग्रं शृण्वन्तं धनानां सञ्जितमस्मिन् भरे वाजसातौ नृतमं शुनं मघवानमिन्द्रं हुवेम तथाऽप्येतं यूयमपि प्रशंसत॥११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! येषां निष्फलं कर्म नास्ति तान् सर्वस्य रक्षणाय यूयं वृणुतेति॥११॥

अत्राग्न्यादीनां पदार्थानां तुरङ्गदृष्टान्तेनोपदेशादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति पञ्चत्रिंशत्तमं सूक्तमष्टादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे हम लोग **(ऊतये)** रक्षा आदि के लिये **(समत्सु)** संग्रामों में **(वृत्राणि)** हम लोगों के बल को घेरनेवाली शत्रु की सेनाओं को सूर्य्य के सदृश शत्रुओं के **(घ्नन्तम्)** नाशकारक **(उग्रम्)** तेजस्वी **(शृण्वन्तम्)** सत्पुरुष के वचनों के सुनने **(धनानाम्)** विद्या और सुवर्ण आदिकों के **(सञ्जितम्)** उत्तम प्रकार जीतनेवाले **(अस्मिन्)** इस शिल्प व्यवहार, **(वाजसातौ)** अन्नों के विभाग और **(भरे)** युद्ध में **(नृतमम्)** पुरुषोत्तम **(शुनम्)** सुखकारक **(मघवानम्)** बहुत धनयुक्त **(इन्द्रम्)** परम ऐश्वर्यवाले जन को **(हुवेम)** प्रशंसा से पुकारें, वैसे इसकी आप लोग भी प्रशंसा करें॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जिन लोगों का निष्फल कर्म नहीं है, उनको सबकी रक्षा के लिये आप लोग स्वीकार करें॥११॥

इस सूक्त में अग्नि आदि पदार्थों और घोड़े के दृष्टान्त से उपदेश करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह पैंतीसवां सूक्त और अठारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथैकादशर्चस्य षट्त्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य १-९, ११ विश्वामित्रः। १० घोर आङ्गिरस ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ७, १०, ११ त्रिष्टुप्। २, ३, ६, ८ निचृत्त्रिष्टुप्। ९ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ४ भुरिक् पङ्क्तिः। ५ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ मनुष्याः केनाचरणेन सुखमाप्नुयुरित्याह॥

अब ग्यारह ऋचावाले छत्तीसवें सूक्त का प्रारम्भ है। उसके पहिले मन्त्र से मनुष्य किस प्रकार के आचरण से सुख को प्राप्त हों, इस विषय को कहते हैं॥

इमामू षु प्रभृतिं सातये धाः शश्वच्छश्वदूतिभिर्यादमानः।
सुतेसुते वावृधे वर्धनेभिर्यः कर्मभिर्महद्भिः सुश्रुतो भूत्॥ १॥

इमाम्। ऊम् इति। सु। प्रऽभृतिम्। सातये। धाः। शश्वत्ऽशश्वत्। ऊतिऽभिः। यादमानः। सुतेऽसुते। ववृधे। वर्धनेऽभिः। यः। कर्मऽभिः। महत्ऽभिः। सुऽश्रुतः। भूत्॥ १॥

पदार्थः-(**इमाम्**) (उ) वितर्के (**सु**) शोभने (**प्रभृतिम्**) प्रकृष्टां धारणाम् (**सातये**) संविभागाय (**धाः**) दध्याः (**शश्वच्छश्वत्**) व्यापकं व्यापकं वस्तु (**ऊतिभिः**) रक्षणादिभिः (**यादमानः**) याचमानः। अत्र वर्णव्यत्ययेन चस्य दः। (**सुतेसुते**) निष्पन्ने निष्पन्ने पदार्थे (**वावृधे**) वर्धेत (**वर्धनेभिः**) वर्धकैः साधनैः (**यः**) (**कर्मभिः**) कर्त्तुरीप्सिततमैः (**महद्भिः**) (**सुश्रुतः**) शोभनं श्रुतं यस्य सः (**भूत्**) भवेत्। अत्राडभावः॥१॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यो विद्यां यादमानस्त्वमूतिभिः सातय इमां प्रभृतिं शश्वच्छश्वद्वस्तु च सु धा वर्धनेभिर्महद्भिः कर्मभिः सुतेसुते वावृधे स उ सुश्रुतो भूत्॥१॥

भावार्थः-ये मनुष्या कार्य्यविज्ञानमारभ्य परस्परं सूक्ष्मकारणपर्य्यन्तं विभुं पदार्थं विज्ञाय उपयुञ्जीरन् तेऽत्र जगति वर्धेरन्। ये विद्वद्भ्यो विद्यामेव याचन्ते ते बहुश्रुतो जायन्ते॥१॥

पदार्थः-हे विद्वान् पुरुष! (**यः**) जो विद्या की (**यादमानः**) याचना करते हुए आप (**ऊतिभिः**) रक्षण आदिकों से (**सातये**) संविभाग के लिये (**इमाम्**) इस (**प्रभृतिम्**) उत्तम धारणा और (**शश्वच्छश्वत्**) व्यापक व्यापक वस्तु को (**सु**) उत्तम प्रकार (**धाः**) धारण करें, (**वर्धनेभिः**) वृद्धि के साधनों और (**महद्भिः**) बड़े (**कर्मभिः**) करनेवाले के अतीव चाहे हुए व्यवहारों से (**सुतेसुते**) उत्पन्न उत्पन्न हुए पदार्थ में (**वावृधे**) बढ़े (**उ**) वही (**सुश्रुतः**) उत्तम प्रकार श्रोता (**भूत्**) होवे॥१॥

भावार्थः-जो मनुष्य कार्य्य के विज्ञान का प्रारम्भ करके पर पर अर्थात् बड़े से छोटे, उससे और छोटे, उससे भी छोटे इत्यादि सूक्ष्म कारण पर्य्यन्त व्यापक परमाणुरूप पदार्थ को जान कर उपयोग करें, कार्य में लावें, वे इस संसार में अत्यन्त वृद्धि को प्राप्त होवें और जो लोग विद्वान् जनों से केवल विद्या की ही याचना करते हैं, वे बहुश्रुत होते हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

इन्द्रा॑य॒ सोमा॑: प्र॒दिवो॒ विदा॑ना ऋ॒भुर्येभि॒र्वृष॑पर्वा॒ विहा॑या:।
प्र॒यम्यमा॑नान् प्रति॒ षू गृ॑भा॒येन्द्र॒ पिब॒ वृष॑धूतस्य॒ वृष्णा॑:॥२॥

इन्द्रा॑य। सोमा॑:। प्र॒ऽदिव॑:। विदा॑ना:। ऋ॒भु:। येभि॑:। वृष॑ऽपर्वा। विऽहा॑या:। प्र॒ऽय॒म्यमा॑नान्। प्रति॑। सु। गृ॒भा॒य॒। इन्द्र॑। पिब॑। वृष॑ऽधूतस्य। वृष्णा॑:॥२॥

पदार्थ:-(**इन्द्राय**) परमैश्वर्याय (**सोमा:**) ये सुन्वन्ति सूयन्ते वा ते पदार्था: (**प्रदिव:**) प्रकृष्टा द्यौ: प्रकाशमाना विद्या येषान्ते (**विदाना:**) लभमाना: (**ऋभु:**) मेधावी। **ऋभुरिति मेधाविनामसु पठितम्।** (निघं०३.१५) (**येभि:**) यै: (**वृषपर्वा**) वृषाणि समर्थानि पर्वाणि पालनानि यस्य स:। (**विहाया:**) योऽनर्थान् विजहाति स: (**प्रयम्यमानान्**) प्रकर्षेण प्रापितनियमान् (**प्रति**) (**सु**) (**गृभाय**) गृहाण (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्ययुक्त (**पिब**) (**वृषधूतस्य**) वृषै: सेचनैर्यो धूतो विलोडितस्तस्य (**वृष्ण:**) वर्धकस्य॥२॥

अन्वय:-हे मनुष्या! यथा वृषपर्वा विहाया ऋभुर्येभि: प्रयम्यमानान् जानाति तथेन्द्राय सोमा: प्रदिवो विदाना: सन्त्यैतान् यूयं विजानीत। हे इन्द्र! त्वमेतान् प्रति सुगृभाय वृषधूतस्य वृष्णो रसं पिब॥२॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! इह संसारे यथाऽऽप्ता दुष्टं व्यवहारं त्यक्त्वा श्रेष्ठमाचर्य्य युक्ताहारविहारेणारोगा दीर्घायुषो भवन्ति तथैव यूयमपि भवत॥२॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जैसे (**वृषपर्वा**) समर्थ पालनोंवाला (**विहाया:**) अनर्थों का नाशकारी (**ऋभु:**) बुद्धिमान् जन (**येभि:**) जिन लोगों से (**प्रयम्यमानान्**) अत्यन्त नियमयुक्तों को जानता है, वैसे (**इन्द्राय**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य के लिये (**सोमा:**) उत्पन्न करनेवाले वा उत्पन्न किये गये पदार्थ (**प्रदिव:**) प्रकाशित विद्यायुक्त (**विदाना:**) प्राप्त हुए हों, इनको आप लोग जानिये (**इन्द्र**) हे ऐश्वर्य्य से युक्त पुरुष! आप इन लोगों को (**प्रति, सु, गृभाय**) अच्छे प्रकार ग्रहण कीजिये और (**वृषधूतस्य**) सेचनों से मथे हुए (**वृष्ण:**) बढ़ानेवाले रस का (**पिब**) पान कीजिये॥२॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! इस संसार में जैसे श्रेष्ठ यथार्थवक्ता पुरुष दुष्ट व्यवहार का त्याग और श्रेष्ठ आचरण का ग्रहण करके नियमित आहार-विहार से रोगरहित और अधिक अवस्थावाले होते हैं, वैसे ही आप लोग भी हूजिये॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

पिबा॒ वर्ध॑स्व॒ तव॑ घा सु॒तास॒ इन्द्र॒ सोमा॑स: प्र॒थमा उ॒तेमे।
यथापि॑ब: पू॒र्व्याँ इ॑न्द्र॒ सोमाँ॑ ए॒वा पा॑हि॒ पन्यो॒ अ॒द्या नवी॑यान्॥३॥

पिब। वर्धस्व। तव। घ। सुतासः। इन्द्र। सोमासः। प्रथमाः। उत। इमे। यथा। अपिबः। पूर्व्यान्। इन्द्र। सोमान्। एव। पाहि। पन्यः। अद्य। नवीयान्॥३॥

पदार्थः-(**पिब**)। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**वर्धस्व**) (**तव**) (**घा**) एव। अत्र **निपातस्य चेति** दीर्घः। (**सुतासः**) निष्पन्नाः (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्यमिच्छो (**सोमासः**) ऐश्वर्य्यकराः पदार्थाः (**प्रथमाः**) आदिमाः (**उत**) (**इमे**) (**यथा**) (**अपिबः**) पिबति (**पूर्व्यान्**) पूर्वैर्निष्पादितान् (**इन्द्र**) (**सोमान्**) उत्तमान् सोमरसैश्वर्य्यादियुक्तान् (**एव**) निश्चये (**पाहि**) (**पन्यः**) स्तुत्यः (**अद्य**) इदानीम्। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**नवीयान्**) नूतनः॥३॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यथा पन्यो नवीयाँस्त्वमद्य पूर्व्यान् सोमानपिबस्तथैतान् पाहि। हे इन्द्र! तव य इमे प्रथमाः सुतासः सोमासो घ सन्ति तान् पाहि उतोत्तमान् रसान् पिब तैरेव वर्धस्व॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये मनुष्याः सुसंस्कृतान् रसान् पिबेयुस्ते वर्धेरन्। ये वृद्धा भूत्वा धर्ममाचरेयुस्ते सर्वैश्वर्य्यमाप्नुयुः॥३॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) ऐश्वर्य की इच्छा करनेवाले! (**यथा**) जैसे (**पन्यः**) स्तुति करने योग्य (**नवीयान्**) नवीन आप (**अद्य**) इस समय (**पूर्व्यान्**) पूर्व हुए जनों से उत्पन्न (**सोमान्**) श्रेष्ठ सोमलता रसरूप ऐश्वर्य आदि से युक्त पदार्थों का (**अपिबः**) पान करते हैं, वैसे ही उनका (**पाहि**) पालन करो। (**इन्द्र**) हे तेजस्वी उन (**तव**) आपके जो (**इमे**) ये (**प्रथमाः**) पहिले (**सुतासः**) उत्पन्न हुए (**सोमासः**) ऐश्वर्य करनेवाले पदार्थ (**घ**) ही हैं, उनका पालन करो (**उत**) और उत्तम रसों का (**पिब**) पान करो उनसे (**एव**) ही (**वर्धस्व**) वृद्धि को प्राप्त होओ॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो मनुष्य उत्तम प्रकार संस्कारयुक्त रसों का पान करें, उनकी वृद्धि होवे और जो वृद्धि को प्राप्त होकर धर्म का आचरण करें, वे सम्पूर्ण ऐश्वर्य को प्राप्त होवें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

महाँ अमत्रो वृजने विरप्श्यु१ग्रं शवः पत्यते धृष्णवोजः।
नाह विव्याच पृथिवी चनैनं यत्सोमासो हर्यश्वममन्दन्॥४॥

महान्। अमत्रः। वृजने। विऽरप्शी। उग्रम्। शवः। पत्यते। धृष्णु। ओजः। न। अह। विव्याच। पृथिवी। चन। एनम्। यत्। सोमासः। हरिऽअश्वम्। अमन्दन्॥४॥

पदार्थः-**(महान्)** **(अमत्रः)** ज्ञानवान् **(वृजने)** बले **(विरप्शी)** विविधा विरप्शा प्रसिद्धा उपदेशा विद्यन्ते यस्य सः **(उग्रम्)** कठिनं दृढम् **(शवः)** बलम् **(पत्यते)** प्राप्नोति **(धृष्णु)** प्रगल्भम् **(ओजः)** पराक्रमः **(न)** निषेधे **(अह)** विनिग्रहे **(विव्याच)** छलयति **(पृथिवी)** भूमिः **(चन)** **(एनम्)** **(यत्)** ये **(सोमासः)** ऐश्वर्ययुक्ताः **(हर्यश्वम्)** हरयो हरणशीला अश्वा यस्य तम् **(अमन्दन्)** आनन्दयेयुः॥४॥

अन्वयः-योऽमत्रो विरप्शी महान् वृजने उग्रं शवो धृष्णवोजः पत्यते। एनं कश्चन न विव्याचाह एनं पृथिवी प्राप्नुयात् यद्यं हर्यश्वं सोमासोऽमन्दन्त्स तान् सततं हर्षयेत्॥४॥

भावार्थः-मनुष्येषु स एव महान् भवति यः शरीरात्मसेनामित्रबलाऽऽरोग्यधर्मविद्या वर्धयति स छलादिदोषांस्त्यक्त्वा सर्वोपकारं करोति॥४॥

पदार्थः-जो **(अमत्रः)** ज्ञानी **(विरप्शी)** अनेक प्रकार के प्रसिद्ध उपदेशों से पूर्ण **(महान्)** श्रेष्ठ **(वृजने)** बल में **(उग्रम्)** कठिन दृढ़ **(शवः)** बल और **(धृष्णु)** प्रचण्ड **(ओजः)** पराक्रम **(पत्यते)** प्राप्त होता है **(एनम्)** इसको कोई पुरुष **(चन)** कुछ **(न)** नहीं **(विव्याच)** छलता है, **(अह)** हा! इसको **(पृथिवी)** भूमि प्राप्त होवे **(यत्)** जिस **(हर्यश्वम्)** ले चलनेवाले घोड़ोंयुक्त जन को **(सोमासः)** ऐश्वर्य से युक्त पुरुष **(अमन्दन्)** पसन्द करें, वह उनको निरन्तर प्रसन्न करें॥४॥

भावार्थः-मनुष्यों में वही पुरुष श्रेष्ठ होता है जो शरीर, आत्मा, सेना, मित्र, बल, आरोग्य, धर्म और विद्या की वृद्धि करता है, वह छल आदि दोषों का त्याग करके सबका उपकार करता है॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहा है॥

महाँ उग्रो वावृधे वीर्याय समाचक्रे वृषभः काव्येन।

इन्द्रो भगो वाजदा अस्य गावः प्र जायन्ते दक्षिणा अस्य पूर्वीः॥५॥१९॥

महान्। उग्रः। ववृधे। वीर्याय। सम्ऽआचक्रे। वृषभः। काव्येन। इन्द्रः। भगः। वाजऽदाः। अस्य। गावः। प्र। जायन्ते। दक्षिणाः। अस्य। पूर्वीः॥५॥

पदार्थः-**(महान्)** पूज्यतमो महाशयः **(उग्रः)** तीव्रभाग्योदयः **(वावृधे)** वर्धते **(वीर्याय)** बलाय **(समाचक्रे)** समाकरोति **(वृषभः)** बलिष्ठः **(काव्येन)** कविना मेधाविना निर्मितेन शास्त्रेण **(इन्द्रः)** ऐश्वर्यवान् **(भगः)** भजनीयः **(वाजदाः)** यो वाजमन्नादिकं ददाति सः **(अस्य)** **(गावः)** धेनवः **(प्र)** **(जायन्ते)** उत्पद्यन्ते **(दक्षिणाः)** दानानि **(अस्य)** **(पूर्वीः)** पूर्णाः॥५॥

अन्वयः-यो वाजदा भगो वृषभ उग्रो महानिन्द्रः काव्येन वीर्याय वावृधे समाचक्रेऽस्य गावोऽस्य दक्षिणाः पूर्वीः प्रजायन्ते॥५॥

भावार्थः-यो विद्वान् सुपात्रकुपात्रौ सुपरीक्ष्य सत्काराऽपकारौ करोति तस्यैव सर्वे पशव आनन्दाश्चोपकृता भवन्ति॥५॥

पदार्थः-जो **(वाजदाः)** अन्न आदि का देनेवाला **(भगः)** सेवा करने योग्य **(वृषभः)** बलयुक्त **(उग्रः)** उत्तम भाग्योदय विशिष्ट **(महान्)** अति आदर करने योग्य महाशय **(इन्द्रः)** ऐश्वर्य्यवाला **(काव्येन)** बुद्धिमान पुरुष ने बनाये हुए शास्त्र से **(वीर्याय)** बल के लिये **(वावृधे)** बढ़ता और **(समाचक्रे)** संयुक्त करता है **(अस्य)** इस पुरुष की **(गावः)** गौवें और **(अस्य)** इसकी **(दक्षिणाः)** दान कर्म **(पूर्वीः)** पूर्ण रूप से सिद्ध **(प्र, जायन्ते)** होते हैं॥५॥

भावार्थः-जो विद्यावान् पुरुष श्रेष्ठ और अश्रेष्ठ सुपात्र-कुपात्रों की उत्तम प्रकार परीक्षा करके सत्कार और अपकार यथायोग्य करता है, उसी पुरुष के सम्पूर्ण पशु और आनन्द उपकारयुक्त होते हैं॥५॥

अथ विद्वद्गुणानाह॥

अब विद्वान् के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र यत्सिन्धवः प्रसवं यथायन्नापः समुद्रं रथ्येव जग्मुः।

अतश्चिदिन्द्रः सदसो वरीयान् यदीं सोमः पृणति दुग्धो अंशुः॥६॥

प्र। यत्। सिन्धवः। प्रऽसवम्। यथा। आयन्। आपः। समुद्रम्। रथ्याऽइव। जग्मुः। अतः। चित्। इन्द्रः। सदसः। वरीयान्। यत्। ईम्। सोमः। पृणति। दुग्धः। अंशुः॥६॥

पदार्थः-**(प्र) (यत्)** ये **(सिन्धवः)** नद्यः **(प्रसवम्)** प्रसूयन्ते यस्मात्तं मेघम् **(यथा) (आयन्)** गच्छन्ति **(आपः)** जलानि **(समुद्रम्)** अन्तरिक्षम् **(रथ्येव)** रथेषु साध्वी गतिरिव **(जग्मुः) (अतः) (चित्)** अपि **(इन्द्रः)** राजा **(सदसः)** सभाः **(वरीयान्) (यत्)** यः **(ईम्)** जलम् **(सोमः)** ओषधिगणः **(पृणति)** सुखयति **(दुग्धः)** प्रपूर्णः **(अंशुः)** ओषधिसारः॥६॥

अन्वयः-यथा सिन्धवः प्रसवमापः समुद्रमायँस्तथा यद्ये शुभान् गुणानीयू रथ्येव सर्वत्र प्रजग्मुस्तैः सह चिदिन्द्रो वरीयान् सन् सदसो गच्छदतः स दुग्धोंऽशुः सोम ईं प्राप्त इव सर्वान् पृणति॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। ये मनुष्या निर्वैरा भूत्वा सर्वेषामुपकारं कर्त्तुमिच्छेयुस्तान् प्रति नद्यः समुद्रमिव जलान्यन्तरिक्षमिवाऽऽभिमुख्यं गच्छन्ति तेभ्यः सुशिक्षां प्राप्य सुषिक्त ओषधिगण इव सर्वान् सुखयितुं प्रभवन्ति॥६॥

पदार्थः-**(यथा)** जैसे **(सिन्धवः)** नदियां **(प्रसवम्)** मेघ को वा **(आपः)** जल **(समुद्रम्)** अन्तरिक्ष

को **(आयन्)** प्राप्त होते हैं, जैसे **(यत्)** जो उत्तम गुणों को प्राप्त होवें वा **(रथ्येव)** रथों में जो उत्तम चाल उसके सदृश सब स्थानों में **(प्र, जग्मुः)** प्राप्त हुए उनके साथ **(चित्)** भी **(यत्)** जो **(इन्द्रः)** राजा **(वरीयान्)** श्रेष्ठ पुरुष होता हुआ **(सदसः)** सभाओं को प्राप्त होवे **(अतः)** इससे वह **(दुग्धः)** गुणों से पूर्ण **(अंशुः)** ओषधियों का सार भाग और **(सोमः)** ओषधियों का समूह **(ईम्)** जल को जैसे प्राप्त हो, वैसे सम्पूर्ण प्राणियों को **(पृणति)** सुख देता है॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जो मनुष्य वैर को त्याग के सम्पूर्ण प्राणियों के उपकार करने की इच्छा करें उनके प्रति जैसे नदियां समुद्र को और जल अन्तरिक्ष के सम्मुख को प्राप्त होते हैं, वैसे सम्मुख जाते हैं, उनसे उत्तम शिक्षा को प्राप्त उत्तम प्रकार से सींचे गये औषधियों के समूह के सदृश सम्पूर्ण प्राणियों के सुख देने को समर्थ होते हैं॥६॥

अथ राजप्रजागुणानाह॥

अब राजा और प्रजा के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

समुद्रेण सिन्धवो यादमाना इन्द्राय सोमं सुषुतं भरन्तः।
अंशुं दुहन्ति हस्तिनो भरित्रैर्मध्वः पुनन्ति धारया पवित्रैः॥७॥

समुद्रेण। सिन्धवः। यादमानाः। इन्द्राय। सोमम्। सुऽसुतम्। भरन्तः। अंशुम्। दुहन्ति। हस्तिनः। भरित्रैः। मध्वः। पुनन्ति। धारया। पवित्रैः॥७॥

पदार्थः-**(समुद्रेण)** सागरेण सह **(सिन्धवः)** नद्य इव **(यादमानाः)** याचमानाः **(इन्द्राय)** ऐश्वर्य्याय **(सोमम्)** पदार्थसमूहम् **(सुषुतम्)** सुष्ठु निष्पादितम् **(भरन्तः)** धरन्तः पुष्णन्तः **(अंशुम्)** सारम् **(दुहन्ति)** पिपुरति **(हस्तिनः)** प्रशस्ता हस्ता विद्यन्ते येषान्ते **(भरित्रैः)** धृतैः पोषितैः साधनैः **(मध्वः)** मधुरस्य **(पुनन्ति)** **(धारया)** **(पवित्रैः)** शुद्धैः॥७॥

अन्वयः-ये समुद्रेण सिन्धव इव विदुषः सङ्गत्येन्द्राय विद्यां यादमानाः सुषुतमंशुं सोमं भरन्तो हस्तिनो मध्वः पवित्रैर्भरित्रैर्धारया पुनन्ति ते कामं दुहन्ति॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सर्वतो जलादिकं हृत्वा नद्यो वेगेन गत्वा समुद्रं प्राप्य रत्नवत्यः सत्यः शुद्धजला भवन्ति तथैव ब्रह्मचर्य्येण विद्या धृत्वा तीव्रसंवेगेनालंज्ञाना भूत्वा पवित्रोपचिताः परमेश्वरं प्राप्य सिद्धिमन्तो भूत्वा शुद्धाऽऽनन्दा मनुष्या जायन्ते॥७॥

पदार्थः-जो **(समुद्रेण)** सागर के साथ **(सिन्धवः)** नदियां जैसे वैसे विद्वानों के साथ मेल करके **(इन्द्राय)** ऐश्वर्य्य के लिये विद्या की **(यादमानाः)** याचना करते हुए **(सुषुतम्)** उत्तम प्रकार उत्पन्न **(अंशुम्)** सारभाग और **(सोमम्)** पदार्थों के समूह को **(भरन्तः)** धारण और पुष्ट करते हुए **(हस्तिनः)** उत्तम हाथों से युक्त पुरुष **(मध्वः)** मधुरगुण सम्बन्धी **(पवित्रैः)** उत्तम शुद्ध **(भरित्रैः)** धारण और पोषण किये गये धनों के साथ **(धारया)** तीक्ष्ण धार से **(पुनन्ति)** पवित्र करते हैं, वे काम को **(दुहन्ति)** पूर्ण

करते हैं॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सब ओर से जल आदि का ग्रहण कर नदियां वेग से समुद्र का प्राप्त हो रत्नवाली और शुद्ध जलयुक्त होती हैं, वैसे ही ब्रह्मचर्य्य से विद्याओं को धारण करके तीक्ष्ण बुद्धि से पूर्ण ज्ञानवाले हो पवित्र हुए और परमेश्वर को प्राप्त होकर सिद्धियों से परिपूर्ण शुद्ध आनन्दी मनुष्य होते हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ह्रदाइव कुक्षयः सोमधानाः समी विव्याच सवना पुरूणि।

अन्ना यदिन्द्रः प्रथमा व्याश वृत्रं जघन्वाँ अवृणीत सोमम्॥८॥

ह्रदाःऽइव। कुक्षयः। सोमऽधानाः। सम्। ईमिति। विव्याच। सवना। पुरूणि। अन्ना। यत्। इन्द्रः। प्रथमा। वि। आश। वृत्रम्। जघन्वान्। अवृणीत। सोमम्॥८॥

पदार्थः-(**ह्रदाइव**) यथा गम्भीरा जलाशयास्तथा (**कुक्षयः**) उभयत उदरावयवाः (**सोमधानाः**) सोमानां धानाः येषु ते (**सम्**) (**ईम्**) जलम् (**विव्याच**) छलयति (**सवना**) सुन्वन्ति येषु तानि (**पुरूणि**) बहूनि (**अन्ना**) अन्नानि (**यत्**) यः (**इन्द्रः**) सूर्य्य इव महाप्रकाशः (**प्रथमा**) प्रख्यातानि (**वि**) (**आश**) अश्नाति (**वृत्रम्**) मेघम् (**जघन्वान्**) हतवान् (**अवृणीत**) स्वीकरोति (**सोमम्**) ओषधिगणम्॥८॥

अन्वयः-यस्य कुक्षयः सोमधाना ह्रदाइव सन्ति यद्यः पुरूणि सवना प्रथमा अन्ना ईं संविव्याच स इन्द्रो वृत्रं जघन्वान् सूर्य्य इव सोममवृणीत स्वादिष्ठान् भोगान् व्याश॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये गम्भीराशयाः सूर्य्यवत्प्रतापवन्तो धृतैश्वर्य्याः स्वपरदोषान् हत्वा गुणैरैश्वर्य्यं स्वीकुर्वन्ति त एव प्रसन्नात्मानो भवन्ति॥८॥

पदार्थः-जिस पुरुष के (**कुक्षयः**) दोनों ओर के उदर के अवयव (**सोमधानाः**) सोमरूप ओषधियों के बीजों से युक्त (**ह्रदाइव**) गम्भीर जलाशयों के सदृश वर्त्तमान हैं (**यत्**) तथा जो (**पुरूणि**) बहुत (**सवना**) ओषधियों के उत्पन्न रसों से युक्त (**प्रथमा**) प्रसिद्ध (**अन्ना**) अन्न और (**ईम्**) जल को (**सम्, विव्याच**) छलता है वह (**इन्द्रः**) सूर्य्य के समान महाप्रकाशमान (**वृत्रम्**) मेघ के (**जघन्वान्**) नाश करनेवाले सूर्य्य के समान (**सोमम्**) ओषधियों के समूह को (**अवृणीत**) स्वीकार करता तथा स्वादुयुक्त पदार्थों को (**वि, आश**) स्वीकार करता है॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो पुरुष गम्भीर अभिप्राय से युक्त, सूर्य्य के सदृश प्रतापी, ऐश्वर्य्य के धारण करनेवाले, अपने और दूसरों के दोषों को नाश करके ऐश्वर्य्य को स्वीकार करते

हैं, वे ही प्रसन्नात्मा होते हैं॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ तू भ॑र॒ माकि॑रे॒तत्परि॑ष्ठाद् वि॒द्मा हि त्वा॒ वसु॑पतिं॒ वसू॑नाम्।
इन्द्र॒ यत्ते॒ माहि॑नं॒ दत्र॒मस्त्य॒स्मभ्यं॒ तद्ध॑र्यश्व॒ प्र य॑न्धि॥९॥

आ। तु। भ॒र॒। माकिः॑। ए॒तत्। परि॑। स्था॒त्। वि॒द्म। हि। त्वा॒। वसु॑ऽपतिम्। वसू॑नाम्। इन्द्र॑। यत्। ते॒। माहि॑नम्। दत्र॑म्। अस्ति॑। अ॒स्मभ्य॑म्। तत्। ह॒रि॒ऽअ॒श्व॒। प्र। य॒न्धि॥९॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**तु**) पुनः। अत्र **ऋचीत्यादिना** दीर्घः। (**भर**) धर (**माकिः**) निषेधे (**एतत्**) (**परि**) सर्वतः (**स्थात्**) तिष्ठेत् (**विद्म**) जानीयाम्। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**हि**) यतः (**त्वा**) त्वाम् (**वसुपतिम्**) धनस्वामिनम् (**वसूनाम्**) धनानाम् (**इन्द्र**) ऐश्वर्यप्रद (**यत्**) (**ते**) तव (**माहिनम्**) महत्तमम् (**दत्रम्**) दानम् (**अस्ति**) (**अस्मभ्यम्**) (**तत्**) (**हर्य्यश्व**) हरयो वेगवन्तोऽश्वा यस्य तत्सम्बुद्धौ (**प्र**) (**यन्धि**) प्रयच्छ॥९॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यत्ते माहिनं दत्रमस्ति तदस्मभ्यं त्वं प्रयन्धि। हे हर्य्यश्व! भवानेतन्माकिः परिष्ठाद्धि वसूनां वसुपतिं त्वा वयं विद्म तु त्वमेतत्सर्वमाभर॥९॥

भावार्थः-विद्वद्भिः सर्वान् प्रत्येवमुपदेष्टव्यं भवन्तो दोषान् विहाय गुणान् धृत्वा धनैश्वर्य्यं प्राप्यान्येभ्यः सुपात्रेभ्यो देयम्॥९॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) ऐश्वर्य के देनेवाले (**यत्**) जो (**ते**) आपका (**माहिनम्**) अति श्रेष्ठ (**दत्रम्**) दान (**अस्ति**) है (**तत्**) उसे (**अस्मभ्यम्**) हम लोगों के लिये आप (**प्र, यन्धि**) अच्छे प्रकार दीजिये और (**हर्यश्व**) हे वेगयुक्त घोड़ोंवाले! आप (**एतत्**) इसको (**माकिः**) न (**परि, ष्ठात्**) सब ओर से रोकिये (**हि**) जिससे (**वसूनाम्**) धनों के (**वसुपतिम्**) स्वामी (**त्वा**) आपको हम लोग (**विद्म**) जानें, इससे (**तु**) शीघ्र फिर आप इस सबको (**आ**) सब ओर से (**भर**) धारण करो॥९॥

भावार्थः-विद्वान् जनों को चाहिये कि सम्पूर्ण जनों के प्रति ऐसा उपदेश देवें कि आप लोग दोषों को त्याग, गुणों को धारण और धन तथा ऐश्वर्य्य को प्राप्त होके अन्य सुपात्र पुरुषों के लिये देवें॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अ॒स्मे प्र य॑न्धि मघवन्नृजीषि॒न्निन्द्र॑ रा॒यो वि॒श्ववा॑रस्य॒ भूरेः॑।
अ॒स्मे श॒तं श॒रदो॑ जी॒वसे॑ धा अ॒स्मे वी॒राञ्छश्व॑त इन्द्र शिप्रिन्॥१०॥

अस्मे इति। प्र। यन्धि। मघऽवन्। ऋजीषिन्। इन्द्र। रायः। विश्वऽवारस्य। भूरेः। अस्मे इति। शतम्। शरदः। जीवसे। धाः। अस्मे इति। वीरान्। शश्वतः। इन्द्र। शिप्रिन्॥१०॥

पदार्थः-(**अस्मे**) अस्मभ्यम् (**प्र**) (**यन्धि**) प्रयच्छ (**मघवन्**) बहुसत्कृतधनयुक्त (**ऋजीषिन्**) सरलस्वभाव (**इन्द्र**) सुखदातः (**रायः**) धनस्य (**विश्ववारस्य**) समग्रं सुखं स्वीकृतं यस्मात्तस्य (**भूरेः**) बहुविधस्य (**अस्मे**) अस्मान् (**शतम्**) (**शरदः**) शतं वर्षाणि (**जीवसे**) जीवितुम् (**धाः**) धेहि (**अस्मे**) अस्माकम् (**वीरान्**) विक्रान्तान् जनान् (**शश्वतः**) निरन्तरान् (**इन्द्र**) सूर्य इव प्रभावयुक्त (**शिप्रिन्**) शोभनहनुनासिक॥१०॥

अन्वयः-हे शिप्रिन्निन्द्र! त्वमस्मे शश्वतो वीरान् धाः। हे मघवन्नृजीषिन्निन्द्र! त्वमस्मे विश्ववारस्य भूरे रायो भागं प्रयन्धि। अस्मे जीवसे शतं शरदो धाः॥१०॥

भावार्थः-त एव सरलस्वभावा आप्ता विद्वांसः सन्ति ये श्रियं विभज्य भुञ्जते ब्रह्मचर्य्योपदेशेन शतायुषः कृत्वा सर्वेषु कर्म्मसूत्साहितान्निर्भयान् पुरुषार्थिनः कुर्वन्ति॥१०॥

पदार्थः-हे (**शिप्रिन्**) सुन्दर नासिका और ठोढ़ीवाले (**इन्द्र**) सुख के दाता! आप (**अस्मे**) हम लोगों के लिये (**शश्वतः**) निरन्तर वर्त्तमान (**वीरान्**) पराक्रमी मनुष्यों को धारण करो, (**मघवन्**) हे बहुत सत्कारयुक्त धन से परिपूर्ण (**ऋजीषिन्**) सरल स्वभाववाले (**इन्द्र**) सूर्य के सदृश प्रतापी! आप (**अस्मे**) हम लोगों का (**विश्ववारस्य**) सम्पूर्ण सुख स्वीकार किया जाता है जिससे उस (**भूरेः**) अनेक प्रकार (**रायः**) धन के भाग को (**प्र, यन्धि**) दीजिये, (**अस्मे**) हम लोगों को (**जीवसे**) जीवन के लिये (**शतम्**) सौ (**शरदः**) वर्षों को (**धाः**) धारण कीजिये॥१०॥

भावार्थः-वे ही उत्तम स्वभाववाले यथार्थवक्ता विद्वान् लोग हैं कि जो लक्ष्मी का विभाग करके अर्थात् अन्य जनों को बाँट के फिर आप भोजन करते हैं और मनुष्यों को ब्रह्मचर्य्य के उपदेश से सौ वर्ष की अवस्थावाले करके सम्पूर्ण कर्मों में उत्साही, भयरहित और पुरुषार्थी करते हैं॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम्॥११॥२०॥

शुनम्। हुवेम। मघवानम्। इन्द्रम्। अस्मिन्। भरे। नृऽतमम्। वाजऽसातौ। शृण्वन्तम्। उग्रम्। ऊतये। समत्ऽसु। घ्नन्तम्। वृत्राणि। सम्ऽजितम्। धनानाम्॥११॥

पदार्थः-(**शुनम्**) सर्वेषां सुखकरम् (**हुवेम**) स्वीकुर्याम (**मघवानम्**) बहुविद्याधनम् (**इन्द्रम्**) दुष्टविदारकं राजानम् (**अस्मिन्**) (**भरे**) पोषणे (**नृतमम्**) अतिशयेन नायकम् (**वाजसातौ**) वाजानामन्नादीनां विभागो यस्मिंस्तस्मिन् (**शृण्वन्तम्**) सकलशास्त्रश्रोतारम् (**उग्रम्**) तेजस्विनम् (**ऊतये**) रक्षणाद्याय (**समत्सु**) संग्रामेषु (**घ्नन्तम्**) (**वृत्राणि**) मेघावयवान् सूर्य इव शत्रून् (**सञ्जितम्**) सम्यग् जयशीलम् (**धनानाम्**)॥११॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा वयमस्मिन् वाजसातौ भरे शुनं मघवानं नृतममूतये शृण्वन्तमुग्रं समत्सु वृत्राणि घ्नन्तं धनानां सञ्जितमिद्रं हुवेम तथैतं यूयमपि स्वीकुरुत॥११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः योऽखिलविद्याशुभगुणः सर्वेषां सुखप्रदः प्रजापालनतत्परः शत्रुविनाशने रतो धार्मिको नरोत्तमो भवेत्तं राज्येऽधिकृत्य तच्छासने वर्त्तित्वा सर्वेऽतुलं सुखं भुञ्जतामिति॥११॥

अत्रेन्द्रविद्वद्राजप्रजागुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षट्त्रिंशत्तमं सूक्तं विंशतितमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे हम लोग (**अस्मिन्**) इस (**वाजसातौ**) अन्न आदि का विभाग जिसमें ऐसे (**भरे**) पालन में (**शुनम्**) सब प्राणियों के सुखकारक (**मघवानम्**) बहुत विद्या और धनयुक्त (**नृतमम्**) अतिशय पुरुषों में अग्रणी (**ऊतये**) रक्षा आदि के लिये (**शृण्वन्तम्**) सकल शास्त्र सुननेवाले (**उग्रम्**) तेजधारी (**समत्सु**) संग्रामों में (**वृत्राणि**) मेघों के अवयवों को जैसे सूर्य वैसे शत्रुओं को (**सञ्जितम्**) उत्तम प्रकार जीतनेवाले (**इन्द्रम्**) दुष्ट जनों के नाशकर्त्ता राजा को (**हुवेम**) स्वीकार करें, वैसे इसको आप लोग भी स्वीकार करें॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो सम्पूर्ण विद्याविशिष्ट, शुभ गुणी, सबको सुख देनेवाला, प्रजाओं के पालन में तत्पर, शत्रुओं के नाश करने में उद्यत, धर्मी और पुरुषों में श्रेष्ठ पुरुष हो, उसके लिये राज्य में अधिकार दे और उसकी आज्ञा में वर्त्तमान होकर सब लोग अत्यन्त सुख भोग करो॥११॥

इस सूक्त में इन्द्र, विद्वान्, राजा और प्रजा के गुण-वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह छत्तीसवां सूक्त और बीसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथैकादशर्चस्य सप्तत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ३, ७ निचृद्गायत्री। २, ४-६, ८-१० गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः। ११ निचृदनुष्टुप् छन्दः। ऋषभः स्वरः॥

अथ राजगुणानाह॥

अब ग्यारह ऋचावाले सैंतीसवें सूक्त का प्रारम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में राजा के गुणों को कहते हैं॥

वार्त्रहत्याय शवसे पृतनाषाह्याय च। इन्द्र त्वा वर्तयामसि॥ १॥

वार्त्रऽहत्याय। शवसे। पृतनाऽसह्याय। च। इन्द्र। त्वा। आ। वर्तयामसि॥ १॥

पदार्थः-(**वार्त्रहत्याय**) वृत्रहत्याया इदं तस्मै (**शवसे**) बलाय (**पृतनाषाह्याय**) पृतना सह्या येन तस्मै (**च**) (**इन्द्र**) सेनाधीश (**त्वा**) त्वाम् (**आ**) (**वर्त्तयामसि**) वर्त्तयामः॥१॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यथा वयं वार्त्रहत्याय सूर्यमिव पृतनाषाह्याय शवसे त्वा वर्त्तयामसि तथा त्वं चास्मानेतस्मै वर्त्तय॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। युद्धविद्याशिक्षकैः सेनाध्यक्षाभृत्याश्च सम्यक् शिक्षणीया यतो ध्रुवो विजयः स्यात्॥१॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) सेना के अधीश! जैसे हम लोग (**वार्त्रहत्याय**) मेघ के नाश करने के लिये जो बल उसके लिये सूर्य के समान (**पृतनाषाह्याय**) संग्राम के सहनेवाले (**शवसे**) बल के लिये (**त्वा**) आपका (**वर्त्तयामसि**) आश्रय करते हैं, वैसे आप (**च**) भी हम लोगों को इस बल के लिये वर्त्तो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। युद्ध करने की विद्या के शिक्षकों को चाहिये कि सेनाओं के अध्यक्ष और नौकरों को उत्तम प्रकार शिक्षा देवें, जिससे निश्चय विजय होवे॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अर्वाचीनं सु ते मन उत चक्षुः शतक्रतो। इन्द्र कृण्वन्तु वाघतः॥ २॥

अर्वाचीनम्। सु। ते। मनः। उत। चक्षुः। शतक्रतो इति शतऽक्रतो। इन्द्र। कृण्वन्तु। वाघतः॥ २॥

पदार्थः-(**अर्वाचीनम्**) इदानीं सुशिक्षितम् (**सु**) (**ते**) तव (**मनः**) अन्तःकरणम् (**उत**) (**चक्षुः**) चक्षुरादीन्द्रियम् (**शतक्रतो**) शतमसङ्ख्यः क्रतुः प्रज्ञा यस्य तत्सम्बुद्धौ (**इन्द्र**) दुष्टानां विदारक (**कृण्वन्तु**) निष्पादयन्तु (**वाघतः**) ये वाचा दोषान् घ्नन्ति ते मेधाविनः। **वाघत इति मेधाविनामसु पठितम्।** (निघं० ३.१५)॥२॥

अन्वयः-हे शतक्रतो इन्द्र! यथा वाघतस्तेऽर्वाचीनं मन उत चक्षुश्च शुभगुणान्वितं सुकृण्वन्तु तथैव भवानाचरतु॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। राजादयो जनाः सदाऽऽप्तशिक्षायां वर्त्तित्वा धर्मार्थकाममोक्षान् साध्नुवन्तु॥२॥

पदार्थः-हे **(शतक्रतो)** असंख्य बुद्धियुक्त **(इन्द्र)** दुष्ट पुरुषों के नाश करनेवाले! जैसे **(वाघतः)** वाणी से दोषों के नाश करनेवाले बुद्धिमान् लोग **(ते)** आपके **(अर्वाचीनम्)** इस समय उत्तम शिक्षायुक्त **(मनः)** अन्तःकरण **(उत)** और **(चक्षुः)** नेत्र आदि इन्द्रिय को उत्तम गुणों से युक्त **(सु, कृण्वन्तु)** सिद्ध करें, वैसे ही आप आचरण करें॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। राजा आदि जन सदा यथार्थवक्ता पुरुष की शिक्षा में वर्त्तमान होके धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को सिद्ध करें॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नामा॑नि ते शतक्रतो विश्वा॑भिर्गी॒र्भिरी॑महे। इन्द्रा॑भिमाति॒षाह्ये॑॥३॥

नामा॑नि। ते॒। श॒त॒क्र॒तो॒ इति॑ शतऽक्रतो। विश्वा॑भिः। गीः॒ऽभिः। ई॒म॒हे॒। इन्द्र॑। अ॒भि॒मा॒ति॒ऽसह्ये॑॥३॥

पदार्थः-**(नामानि)** संज्ञाः **(ते)** तव **(शतक्रतो)** बहुप्रज्ञान **(विश्वाभिः)** सर्वाभिः **(गीर्भिः)** विद्यासुशिक्षाधर्मयुक्ताभिर्वाग्भिः **(ईमहे)** याचामहे **(इन्द्र)** परमैश्वर्य्यहेतो राजन् **(अभिमातिषाह्ये)** अभिमातयोऽभिमानयुक्ताः शत्रुवत्सह्या यस्मिन् संग्रामे तस्मिन्॥३॥

अन्वयः-हे शतक्रतो इन्द्र! यथा वयं विश्वाभिर्गीर्भिर्यस्य ते नामानि सार्थकानीमहे स त्वमस्मभ्यमभिमातिषाह्ये साहाय्यं देहि॥३॥

भावार्थः-राजते विद्याविनयाभ्यां प्रकाशते स राजा, यो नॄन् पाति स नृपो यो भुवं पाति स भूमिप इत्यादीनि सर्वाणि राज्ञो नामानि सार्थकानि सन्तु। यदा शत्रुभिः सह संग्रामो भवेत्तदा सर्वप्रकारेण रक्षको राजा भवेत्। एवं सति ध्रुवो विजयोऽन्यथा विपर्ययः॥३॥

पदार्थः-हे **(शतक्रतो)** बहुत बुद्धिमान् **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य के कारण से राजन्! जैसे हम लोग **(विश्वाभिः)** सम्पूर्ण **(गीर्भिः)** विद्या, उत्तम शिक्षा और धर्म से युक्त वाणियों से जिन **(ते)** आपके **(नामानि)** संज्ञाओं को अर्थयुक्त होने की **(ईमहे)** याचना करते हैं, वह आप हम लोगों के लिये **(अभिमातिषाह्ये)** अभिमानयुक्त शत्रु लोग सहने योग्य हैं, जिनमें ऐसे संग्राम में सहायता दीजिये॥३॥

भावार्थः-राजमान, विद्या और विनयों से प्रकाशमान वह राजा; मनुष्यों की पालना करता वह नृप; और भूमि का पालन करता है, वह भूमिप इत्यादि सब राजा के नाम सार्थक हों और जब शत्रुओं के साथ संग्राम होवे तो सब प्रकार से रक्षा करनेवाला राजा होवे। ऐसा होने से निश्चित विजय होता, नहीं तो नहीं होता है॥३॥

अथ प्रजागुणानाह॥

अब प्रजा के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

पुरुष्टुतस्य धामभिः शतेन महयामसि। इन्द्रस्य चर्षणीधृतः॥४॥

पुरुऽस्तुतस्य। धामऽभिः। शतेन। महयामसि। इन्द्रस्य। चर्षणिऽधृतः॥४॥

पदार्थः-(**पुरुष्टुतस्य**) बहुभिः प्रशंसितस्य (**धामभिः**) जन्मस्थाननामभिः (**शतेन**) असंख्येन (**महयामसि**) पूजयाम (**इन्द्रस्य**) परमैश्वर्ययुक्तस्य राज्ञः (**चर्षणीधृतः**) यश्चर्षणीन् मनुष्यान्धरति तस्य॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा वयं पुरुष्टुतस्य चर्षणीधृत इन्द्रस्य शतेन धामभिर्महयामसि। तथैतस्य सत्कारं यूयमपि कुरुत॥४॥

भावार्थः-मनुष्यै राजादिन्यायकारिणां सर्वथा सत्कारः कर्त्तव्यो राजादयोऽपि प्रजास्थान् सदा सत्कुर्युरेवंकृते सत्युभयेषां मङ्गलोन्नतिर्भवति॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे हम लोग (**पुरुष्टुतस्य**) बहुतों से प्रशंसा पाये हुए और (**चर्षणीधृतः**) मनुष्यों को धारण करनेवाले (**इन्द्रस्य**) अत्यन्त ऐश्वर्य से युक्त राजा का (**शतेन**) असंख्य (**धामभिः**) जन्म, स्थान और नामों से (**महयामसि**) पूजन करें, वैसे उस प्रशंसित का सत्कार आप लोग भी करो॥४॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि राजा आदि न्यायकारी जनों का सब प्रकार सत्कार करें और राजा आदि भी प्रजाजनों का सदा सत्कार करें। ऐसा करने पर राजा और प्रजा इन दोनों के मङ्गल की उन्नति होती है॥४॥

पुना राजविषयमाह॥

फिर राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रं वृत्राय हन्तवे पुरुहूतमुप ब्रुवे। भरेषु वाजसातये॥५॥२१॥

इन्द्रम्। वृत्राय। हन्तवे। पुरुऽहूतम्। उप। ब्रुवे। भरेषु। वाजऽसातये॥५॥

पदार्थः-(**इन्द्रम्**) परमैश्वर्य्यप्रदम् (**वृत्राय**) मेघ इव न्यायावरकाय शत्रवे (**हन्तवे**) हन्तुम् (**पुरुहूतम्**) बहुभिराहूतं प्रशंसितं वा (**उप**) समीपे (**ब्रुवे**) कथयामि (**भरेषु**) संग्रामेषु (**वाजसातये**) धनादिसंविभागाय॥५॥

अन्वयः-हे सेनास्थवीरा! यथा सेनाधीशोऽहं वृत्राय हन्तवे भरेषु वाजसातये पुरुहूतमिन्द्रमुपब्रुवे तथा यूयमप्येतमुपब्रुवन्तु॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यदा संग्रामः प्रवर्त्तेत तदा योद्धॄन् प्रत्यध्यक्षैर्यथा विजयः स्यात्तथोपदेष्टव्यम्। योद्धारश्चाधिष्ठातॄणामाज्ञायां सर्वथा वर्त्तेरन्नेवं सति कुतः पराजयः ?॥५॥

पदार्थः-हे सेना में वर्त्तमान वीर पुरुषो! जिस प्रकार सेना का अधीश मैं **(वृत्राय)** न्याय के आवरण करनेवाले शत्रु के **(हन्तवे)** नाश के लिये तथा **(भरेषु)** संग्रामों में **(वाजसातये)** धन आदि को बांटने के लिये **(पुरुहूतम्)** बहुतों से पुकारे वा प्रशंसा किये गये **(इन्द्रम्)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य के देनेवाले राजा को **(उप)** समीप में **(ब्रुवे)** कहता हूँ, वैसे आप लोग भी इसके समीप कहो॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जब संग्राम में प्रवृत्त होवे तो योद्धाओं के प्रति अध्यक्ष पुरुषों को चाहिये कि जिस प्रकार विजय हो वैसा उपदेश दें और योद्धा लोग अधिष्ठाता पुरुषों की आज्ञा में सब प्रकार वर्त्तमान होवें, ऐसा करने से कैसे पराजय हो ?॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वाजे॑षु सास॒हिर्भ॑व॒ त्वामी॑महे शतक्रतो। इन्द्र॑ वृ॒त्राय॒ हन्त॑वे॥६॥

वाजे॑षु। स॒स॒हिः। भ॒व॒। त्वाम्। ई॒म॒हे॒। श॒त॒क्र॒तो॒ इति॑ शतऽक्रतो। इन्द्र॑। वृ॒त्राय॑। हन्त॑वे॥६॥

पदार्थः-**(वाजेषु)** बह्वन्नविज्ञानादिसामग्र्यपेक्षेषु संग्रामेषु **(सासहिः)** भृशं सोढा **(भव)** **(त्वम्)** **(ईमहे)** युद्धोपकरणैर्याचामहे **(शतक्रतो)** अमितप्रज्ञ **(इन्द्र)** दुष्टदलविदारक **(वृत्राय)** मेघमिव शत्रुम् **(हन्तवे)** हन्तुम्॥६॥

अन्वयः-हे शतक्रतो इन्द्र! वयं यं त्वां वृत्राय हन्तव ईमहे स त्वं वाजेषु सासहिर्भव॥६॥

भावार्थः-यस्मिन् कर्मणि यस्य स्थापनं सभा कुर्यात् स तमधिकारं यथावदुन्नयेत् यस्याऽधिकारे यस्य नियोजनं स्यात्तदाज्ञां स कदाचिन्नोल्लङ्घयेत्॥६॥

पदार्थः-हे **(शतक्रतो)** अति सूक्ष्म बुद्धियुक्त **(इन्द्र)** दुष्ट पुरुषों के दल के नाश करनेवाले! हम लोग जिन **(त्वाम्)** आपको **(वृत्राय)** मेघ के सदृश शत्रु के **(हन्तवे)** नाश करने को **(ईमहे)** युद्ध के उपकारक वस्तुओं के साथ याचना करते हैं, वह आप **(वाजेषु)** जिनमें बहुत अन्न और विज्ञान आदि सामग्री अपेक्षित हैं, ऐसे संग्रामों में **(सासहिः)** अत्यन्त सहनेवाले **(भव)** हूजिये॥६॥

भावार्थः-जिस कर्म में जिसका स्थापन सभा करे, वह पुरुष उस अधिकार की यथायोग्य उन्नति करे और जिस अधिकार में जिसका नियोग होवे, वहाँ जो आज्ञा उसका वह कदाचित् उल्लङ्घन न करे॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

द्युम्नेषु पृतनाज्ये पृत्सुतूर्षु श्रवःसु च। इन्द्र साक्ष्वाभिमातिषु॥७॥

द्युम्नेषु। पृतनाज्ये। पृत्सुतूर्षु। श्रवःऽसु। च। इन्द्र। साक्ष्व। अभिऽमातिषु॥७॥

पदार्थः-(**द्युम्नेषु**) यशस्विषु धनप्रापकेषु वा (**पृतनाज्ये**) पृतनायाः सेनायाः संग्रामे (**पृत्सुतूर्षु**) पृत्सासु सेनासु त्वरमाणेषु हिंसकेषु (**श्रवःसु**) श्रवणेष्वन्नादिषु वा (**च**) (**इन्द्र**) (**साक्ष्व**) सहस्व (**अभिमातिषु**) अभिमानयुक्तेषु योद्धृषु॥७॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं पृत्सुतूर्षु श्रवःसु द्युम्नेष्वभिमातिषु च सत्सु पृतनाज्ये साक्ष्व॥७॥

भावार्थः-ये विद्यमानेषु धनादिषु वीरसेनासु व्याख्यातृषु युद्धाऽभिमानिषु स्वप्रियेषु हृष्टपुष्टेषु सत्सु च शत्रुभिः सह संग्रामं कुर्वन्ति त एव ध्रुवं विजयं लभन्ते॥७॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) तेजस्वी पुरुष! आप (**पृत्सुतूर्षु**) सेनाओं में शीघ्रता के नाश करनेवाले जनों वा (**श्रवःसु**) श्रवण वा अन्न आदि पदार्थों (**द्युम्नेषु**) वा यशस्वी वा धन की प्राप्ति करानेवाले विषयों में वा (**पृतनाज्ये**) सेना सम्बन्धी संग्राम में (**साक्ष्व**) सहन करो॥७॥

भावार्थः-जो विद्यमान धन आदि पदार्थ वीर सेनाओं में व्याख्यान देनेवाले और युद्ध के अभिमानी अपने प्रिय आनन्दित और पुष्ट पुरुषों के होने पर शत्रुओं के साथ संग्राम करते हैं, वे ही पुरुष निश्चित विजय को प्राप्त होते हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शुष्मिन्तमं न ऊतये द्युम्निनं पाहि जागृविम्। इन्द्र सोमं शतक्रतो॥८॥

शुष्मिन्ऽतमम्। नः। ऊतये। द्युम्निनम्। पाहि। जागृविम्। इन्द्र। सोमम्। शतक्रतो इति शतऽक्रतो॥८॥

पदार्थः-(**शुष्मिन्तमम्**) प्रशंसितं बहुविधं वा बलं विद्यते यस्य तमतिशयितम् (**नः**) अस्माकम् (**ऊतये**) रक्षणाद्याय (**द्युम्निनम्**) यशस्विनं श्रीमन्तम् (**पाहि**) (**जागृविम्**) जागरूकम् (**इन्द्र**) सर्वाभिरक्षक राजन् (**सोमम्**) ऐश्वर्यम् (**शतक्रतो**) बहुप्रज्ञ बहुकर्मन् वा॥८॥

अन्वयः-हे शतक्रतो इन्द्र! त्वं न ऊतये शुष्मिन्तमं द्युम्निनं जागृविं सोमं च पाहि॥८॥

भावार्थः-सर्वैः प्रजाराजजनैः सर्वाधीशं राजानमन्यानध्यक्षान् प्रति चैवं वाच्यं भवन्तोऽस्माकं रक्षकाणामैश्वर्य्यस्य च रक्षायामनलसा उद्यता भवन्तु॥८॥

पदार्थः-हे (**शतक्रतो**) बहुत बुद्धि वा बहुत कर्मयुक्त (**इन्द्र**) सबके रक्षक राजन्! आप (**नः**) हम लोगों की (**ऊतये**) रक्षा आदि के लिये (**शुष्मिन्तमम्**) प्रशंसित वा बहुत प्रकार का बल जिसके उस अतीव (**द्युम्निनम्**) यशस्वी लक्ष्मीवान् और (**जागृविम्**) जागनेवाले जन और (**सोमम्**) ऐश्वर्य्य की

(पाहि) रक्षा करो॥८॥

भावार्थ:-सब प्रजा और राजजनों को चाहिये कि सबके अधीश राजा और अन्य अध्यक्षों के प्रति ऐसा कहें कि आप लोग हम लोगों के रक्षक पुरुषों की और ऐश्वर्य्य की रक्षा में निरालस और उद्यत होवें॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रियाणि शतक्रतो या ते जनेषु पञ्चसु। इन्द्र तानि त आ वृणे॥९॥

इन्द्रियाणि। शतक्रतो इति शतऽक्रतो। या। ते। जनेषु। पञ्चऽसु। इन्द्र। तानि। ते। आ। वृणे॥९॥

पदार्थ:-**(इन्द्रियाणि)** इन्द्रस्य जीवस्य लिङ्गानि **(शतक्रतो)** अमितबुद्धे **(या)** यानि **(ते)** तव **(जनेषु)** प्रसिद्धेष्वध्यक्षेषु **(पञ्चसु)** राज्यसेनाकोशदूतत्वप्राड्विवाकत्वसंपन्नेष्वधिकारिषु **(इन्द्र)** ऐश्वर्ययोजक **(तानि)** **(ते)** तव **(आ)** **(वृणे)** शुभगुणैराच्छादयामि॥९॥

अन्वय:-हे शतक्रतो इन्द्र! पञ्चसु जनेषु या त इन्द्रियाणि सन्ति तानि तेऽहमावृणे॥९॥

भावार्थ:-स एव राज्यं कर्त्तुमर्हति योऽमात्यानां चरित्राणि चक्षुषा रूपमिव प्रत्यक्षीकरोति तथा शरीरेन्द्रियगोलकसम्बन्धेन जीवस्य सर्वाणि कार्याणि सिध्यन्ति तथैव राजाऽमात्यसेनायोगेन राजकार्याणि साद्धुं शक्नोति॥९॥

पदार्थ:-हे **(शतक्रतो)** अपार बुद्धियुक्त **(इन्द्र)** ऐश्वर्य्य को योग करनेवाले! **(पञ्चसु)** पाँच राज्य, सेना, कोश, दूतत्व, प्राड्विवाकत्व आदि पदवियों से युक्त अधिकारी और **(जनेषु)** प्रत्यक्ष अध्यक्षों में **(या)** जो **(ते)** आपके **(इन्द्रियाणि)** जीव के चिह्न हैं **(तानि)** उन **(ते)** आपके चिह्नों को मैं **(आ)** **(वृणे)** उत्तम गुणों से आच्छादन करता हूँ॥९॥

भावार्थ:-वही पुरुष राज्य करने के योग्य है **[कि]** जो मन्त्रियों के चरित्रों को नेत्र से रूप के सदृश प्रत्यक्ष करता है। जैसे शरीर के इन्द्रिय के गोलक अर्थात् काले तारेवाले नेत्र के सम्बन्ध से जीव के सम्पूर्ण कार्य्य सिद्ध होते हैं, वैसे राजा मन्त्री और सेना के योग से राजकार्यों को सिद्ध कर सकता है॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अगन्निन्द्र श्रवो बृहद् द्युम्नं दधिष्व दुष्टरम्। उत्ते शुष्मं तिरामसि॥१०॥

अगन्। इन्द्र। श्रवः। बृहत्। द्युम्नम्। दधिष्व। दुस्तरम्। उत्। ते। शुष्मम्। तिरामसि॥१०॥

पदार्थः-(**अगन्**) प्राप्नुवन्ति (**इन्द्र**) परमैश्वर्ययुक्त (**श्रवः**) अन्नं श्रवणं वा (**बृहत्**) महत् (**द्युम्नम्**) यशो धनं वा (**दधिष्व**) धर (**दुष्टरम्**) शत्रुभिर्दुःखेन तरितुमुल्लङ्घयितुं योग्यम् (**उत्**) उत्कृष्टे (**ते**) तव (**शुष्मम्**) बलम् (**तिरामसि**) तराम॥१०॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यद् बृहद् दुष्टरं श्रवो द्युम्नं शुष्मं विद्वांसोऽगन् यत्ते वयमुत्तिरामसि तत्सर्वं त्वं दधिष्व॥१०॥

भावार्थः-तावदैश्वर्य्यं राजा धर्त्तव्यं यावत्सेनायै प्रजापालनायाऽमात्यरक्षणायाऽलं स्यादेवं जाते सति महद्यशो वर्धेत॥१०॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य से युक्त! जिस (**बृहत्**) बड़े (**दुष्टरम्**) शत्रुओं से दुःख से उल्लङ्घन करने योग्य (**श्रवः**) अन्न वा श्रवण (**द्युम्नम्**) यश वा धन और (**शुष्मम्**) बल को विद्वान् लोग (**अगन्**) प्राप्त होते हैं वा जिस (**ते**) आपके पूर्वोक्त अन्न, श्रवण, यश, धन और बल को हम लोग (**उत्**) उत्तम प्रकार (**तिरामसि**) तरें उल्लङ्घें अर्थात् उससे अधिक सम्पादन करें, उस सबको आप (**दधिष्व**) धारण करो॥१०॥

भावार्थः-उतना ही ऐश्वर्य राजा को धारण करना चाहिये कि जितना सेना और प्रजा के पालन के और मन्त्रियों की रक्षा के लिये पूरा होवे, ऐसा करने से बड़ा यश बढ़े॥१०॥

अथ राजप्रजाजनविषयं परस्परेणाह॥

अब राजा और प्रजा विषय को परस्पर सम्बन्ध से कहते हैं॥

अर्वावतो न आ गह्यथो शक्र परावतः।

उ लोको यस्ते अद्रिव इन्द्रेह तत आ गहि॥११॥२२॥

अर्वाऽवतः। नः। आ। गहि। अथो इति। शक्र। पराऽवतः। ऊम् इति। लोकः। यः। ते। अद्रिऽवः। इन्द्र। इह। ततः। आ। गहि॥११॥

पदार्थः-(**अर्वावतः**) अर्वाचीनात् (**नः**) अस्मान् (**आ**) (**गहि**) आगच्छ प्राप्नुहि (**अथो**) आनन्तर्ये (**शक्र**) शक्तिमन् (**परावतः**) दूरात् (**उ**) (**लोकः**) निवासस्थानम् (**यः**) (**ते**) तव (**अद्रिवः**) अद्रयो बहवो मेघा विद्यन्ते यस्य सूर्यस्य तद्वद्वर्त्तमान (**इन्द्र**) ऐश्वर्येण सुखप्रद (**इह**) अस्मिन् संसारे (**ततः**) तस्मात् (**आ**) (**गहि**)॥११॥

अन्वयः-हे अद्रिवः शक्रेन्द्र! इह यस्ते लोकोऽस्ति तस्मादर्वावतो न आ गह्यथो परावतो न आ गहि तत उ अन्यत्र गच्छ॥११॥

भावार्थः-यथा मनुष्याः प्रीत्या राजानमाह्वयेयुस्तत्सामीप्यं स स्वदेशादागच्छेत् तस्मादन्यत्र गच्छेदेवं राजप्रजाजनाः परस्परेषु स्नेहवर्धनाय कर्माणि सततं कुर्युरिति॥११॥

अत्र राजप्रजाकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति सप्तत्रिंशत्तमं सूक्तं द्वाविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(अद्रिवः)** बहुत मेघों से युक्त सूर्य के सदृश वर्त्तमान **(शक्र)** सामर्थ्यवान् **(इन्द्र)** ऐश्वर्य से सुख के दाता! **(इह)** इस संसार में **(यः)** जो **(ते)** आपका **(लोकः)** निवासस्थान है, **[(अर्वावतः)]** इस स्थान से **(नः)** हम लोगों को **(आ, गहि)** प्राप्त हूजिये **(अथो)** इसके अनन्तर **(परावतः)** दूर से भी हम लोगों को प्राप्त हूजिये **(ततः)** और इससे **(आगहि)** उत्तम प्रकार अन्य स्थान में जाइये॥११॥

भावार्थः-जैसे मनुष्य लोग प्रीति से राजा को बुलावे और वह राजा उन प्रजाजनों के समीप अपने देश को प्राप्त हो और उस देश से अन्य देश में भी जाये, इस प्रकार राजा और प्रजा जन परस्पर स्नेह की वृद्धि के लिये कर्मों को निरन्तर करें॥११॥

इस सूक्त में राजा और प्रजा के कामों का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इस सूक्त से पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह सैंतीसवां सूक्त और बाईसवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ दशर्चस्याष्टत्रिंशत्तमस्य सूक्तस्य प्रजापतिर्ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ६, १० त्रिष्टुप्। २-५, ८, ९ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ७ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब दश ऋचावाले अड़तीसवें सूक्त का प्रारम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में विद्वान् के विषय को कहते हैं॥

अभि तष्टेव दीधया मनीषामत्यो न वाजी सुधुरो जिहानः।
अभि प्रियाणि मर्मृशत्पराणि कवीँरिच्छामि संदृशे सुमेधाः॥१॥

अभि। तष्टाऽइव। दीधय। मनीषाम्। अत्यः। न। वाजी। सुऽधुरः। जिहानः। अभि। प्रियाणि। मर्मृशत्। पराणि। कवीन्। इच्छामि। सम्ऽदृशे। सुऽमेधाः॥१॥

पदार्थः-(**अभि**) आभिमुख्ये (**तष्टेव**) यथा काष्ठानां सूक्ष्मत्वस्य कर्त्ता (**दीधय**) प्रकाशय। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**मनीषाम्**) प्रज्ञाम् (**अत्यः**) सततं गन्ता (**न**) इव (**वाजी**) वेगवान् (**सुधुरः**) शोभना धूर्यस्य सः (**जिहानः**) प्राप्नुवन् (**अभि**) (**प्रियाणि**) कमनीयानि सेवनानि सुखानि (**मर्मृशत्**) भृशं विचारयन् (**पराणि**) उत्कृष्टानि (**कवीन्**) धार्मिकान् विदुषः (**इच्छामि**) (**संदृशे**) सम्यग्दर्शनाय (**सुमेधाः**) शोभनप्रज्ञः॥१॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथाऽहं संदृशे कवीनभीच्छामि तथा सुमेधा जिहानः पराणि प्रियाण्यभिमर्मृशत् सन् सुधुरोऽत्यो वाजी न मनीषां तष्टेवाऽभि दीधय॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यथा धुरन्धरा सुशिक्षितास्तुरङ्गा अभीष्टानि कार्य्याणि साध्नुवन्ति तथैव साधारणा जना विदुषः प्रज्ञां प्राप्य तक्षेव व्यसनानि छिन्द्युः॥१॥

पदार्थः-हे विद्वान् पुरुष! जैसे मैं (**संदृशे**) उत्तम प्रकार दर्शन के लिये (**कवीन्**) धार्मिक विद्वानों की (**इच्छामि**) इच्छा करता हूँ, वैसे (**सुमेधाः**) उत्तम बुद्धिवाले (**जिहानः**) प्राप्त होते और (**पराणि**) परम उत्तम (**प्रियाणि**) कामना और आदर करने योग्य सुखों को (**अभि, मर्मृशत्**) अत्यन्त विचारते हुए (**सुधुरः**) सुन्दर धुरा को धारण किये हुए (**अत्यः**) निरन्तर चलनेवाले (**वाजी**) वेगयुक्त घोड़े के (**न**) समान (**मनीषाम्**) बुद्धि को (**तष्टेव**) काष्ठों के सूक्ष्मत्व अर्थात् छीलने से पतले करनेवाले बढ़ई के सदृश आप (**अभि**) सम्मुख (**दीधय**) प्रकाश करो॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जैसे धुरियों के धारण करनेवाले उत्तम प्रकार शिक्षित घोड़े वाञ्छित कर्मों को सिद्ध करते हैं, वैसे ही साधरण जन विद्वानों की उत्तम बुद्धि को ग्रहण करके बढ़ई के सदृश व्यसनों का छेदन करें॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इनोत पृच्छ जनिमा कवीनां मनोधृतः सुकृतस्तक्षत द्याम्।
इमा उ ते प्रण्यो३ वर्धमाना मनोवाता अध नु धर्मणि ग्मन्॥२॥

इना। उत। पृच्छ। जनिम। कवीनाम्। मनःऽधृतः। सुऽकृतः। तक्षत। द्याम्। इमाः। ऊम् इति। ते। प्रऽन्यः। वर्धमानाः। मनःऽवाताः। अध। नु। धर्मणि। ग्मन्॥२॥

पदार्थः-(**इना**) इनान् प्रभून् समर्थान् (**उत**) अपि (**पृच्छ**) (**जनिमा**) जन्मानि (**कवीनाम्**) मेधाविनाम् (**मनोधृतः**) मनो विज्ञानं धृतं यैस्ते (**सुकृतः**) ये शोभनं कर्म कुर्वन्ति ते (**तक्षत**) सूक्ष्मान् कुरुत (**द्याम्**) विद्युतम् (**इमाः**) वर्त्तमानाः (**उ**) (**ते**) तव (**प्रण्यः**) प्रकृष्टा नीतिर्यासां ताः (**वर्धमानाः**) वृद्धिशीलाः (**मनोवाताः**) मन इव वातो वेगो यासां ताः (**अध**) अथ (**नु**) सद्यः (**धर्मणि**) (**ग्मन्**) प्राप्नुयुः॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! या कवीनां मनोधृतः सुकृत उ इमा प्रण्यो वर्धमाना मनोवाता धर्मणि नु ग्मन् अध या द्यां प्राप्नुयुर्ये ते जनिमा ग्मन् ता उत तानिना त्वं पृच्छ, यूयमविद्यां तक्षत॥२॥

भावार्थः-ये पुरुषाः स्त्रियश्च धर्मानुष्ठानपुरःसरं मेधाविलक्षणानि धृत्वा प्रश्नोत्तराणि विधायान्तःकरणं संशोध्य समर्था जायन्ते ते ताश्चैव सर्वतोऽभिवर्धन्ते॥२॥

पदार्थः-हे विद्वान् वा साधारण मनुष्यो! जो (**कवीनाम्**) बुद्धिमान् लोगों के (**मनोधृतः**) विज्ञान के धारण करने और (**सुकृतः**) उत्तम कर्म करनेवाले पुरुष (**उ**) और (**इमाः**) ये वर्त्तमान (**प्रण्यः**) उत्तम नीतियुक्त (**वर्धमानाः**) बढ़ती हुई (**मनोवाताः**) मन के सदृश वेगवाली स्त्रियाँ (**धर्मणि**) धर्मव्यवहार में (**नु**) शीघ्र (**ग्मन्**) प्राप्त हों, (**अध**) इसके अनन्तर जो (**द्याम्**) बिजुली को प्राप्त हों और जो लोग (**ते**) तुम्हारे (**जनिमा**) जन्मों को प्राप्त हों, उन स्त्रियों (**उत**) वा उन (**इना**) समर्थ पुरुषों को आप (**पृच्छ**) पूछिये और आप लोग भी अविद्या को (**तक्षत**) काटिये॥२॥

भावार्थः-जो पुरुष और स्त्रियाँ धर्म के अनुष्ठानपूर्वक बुद्धिमान् लोगों के लक्षणों को धारण कर प्रश्नोत्तर और अन्तःकरण को शुद्ध करके समर्थ होते हैं, वे पुरुष और वैसी स्त्रियाँ सब प्रकार वृद्धि को प्राप्त होती हैं॥२॥

अथ भूमिविषयमाह॥

अब भूमि विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नि षीमिदत्र गुह्या दधाना उत क्षत्राय रोदसी समञ्जन्।
सं मात्राभिर्ममिरे येमुरुर्वी अन्तर्मही समृते धायसे धुः॥३॥

नि। सीम्। इत्। अत्र। गुह्या। दधानाः। उत। क्षत्राय। रोदसी इति। सम्। अञ्जन्। सम्। मात्राभिः। ममिरे। येमुः। उर्वी इति। अन्तरिति। मही इति। समृते इति सम्ऽऋते। धायसे। धुरिति धुः॥३॥

पदार्थः-(**नि**) नितराम् (**सीम्**) सर्वतः (**इत्**) एव (**अत्र**) अस्मिन् संसारे (**गुह्या**) गूढानि विज्ञानानि (**दधानाः**) (**उत**) अपि (**क्षत्राय**) राज्याय (**रोदसी**) भूमिविद्याप्रकाशौ (**सम्**) (**अञ्जन्**) प्रकटीकुर्य्युः (**सम्**) (**मात्राभिः**) सूक्ष्माऽवयवैः (**ममिरे**) निर्मिमीरन् (**येमुः**) यच्छेयुः (**उर्वी**) महती (**अन्तः**) मध्ये (**मही**) (**समृते**) सम्यक् सत्ये व्यवहारे (**धायसे**) धातुम् (**धुः**) धरेयुः॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! याः स्त्रियोऽत्र गुह्या दधानाः सत्यः क्षत्राय रोदसी सीं समञ्जन्नुत मात्राभिर्निर्ममिरे उर्वी मही समृते धायसेऽन्तः सं येमुस्ता इदेव सुखं धुः॥३॥

भावार्थः-या स्त्रियो ब्रह्मचर्य्येण विद्याविज्ञानानि प्राप्य पृथिव्यादिपदार्थानां सकाशादुपकारं ग्रहीतुं शक्नुयुस्ता राज्यो भवितुमर्हन्ति॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो स्त्रियाँ (**अत्र**) इस संसार में (**गुह्या**) गूढ़ विज्ञानों को (**दधानाः**) धारण किये हुईं (**क्षत्राय**) राज्य के लिये (**रोदसी**) भूमि और विद्या के प्रकाश को (**सीम्**) सब प्रकार (**सम्, अञ्जन्**) प्रकट करें (**उत**) और (**मात्राभिः**) सूक्ष्म अवयवों से (**नि**) निरन्तर पदार्थों को (**ममिरे**) मापें और (**उर्वी**) बड़ी (**मही**) पृथ्वी को (**समृते**) अच्छे प्रकार सत्य व्यवहार में (**धायसे**) धारण करने को अपने अन्तःकरण के (**अन्तः**) मध्य में (**सम्, येमुः**) संयुक्त करें वे (**इत्**) ही सुख को (**धुः**) धारण करें॥३॥

भावार्थः-जो स्त्रियाँ ब्रह्मचर्य्य से विद्या के विज्ञानों को प्राप्त होकर पृथिवी आदि पदार्थों से उपकार का ग्रहण कर सकें, वे रानी होने के योग्य होती हैं॥३॥

अथ सूर्यविषयमाह॥

अब सूर्य्य के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आतिष्ठन्तं परि विश्वे अभूषञ्छ्रियो वसानश्चरति स्वरोचिः।

महत्तद्वृष्णो असुरस्य नामा विश्वरूपो अमृतानि तस्थौ॥४॥

आऽतिष्ठन्तम्। परि। विश्वे। अभूषन्। श्रियः। वसानः। चरति। स्वऽरोचिः। महत्। तत्। वृष्णः। असुरस्य। नाम। आ। विश्वऽरूपः। अमृतानि। तस्थौ॥४॥

पदार्थः-(**आतिष्ठन्तम्**) समन्तात् स्थितम् (**परि**) सर्वतः (**विश्वे**) सर्वे (**अभूषन्**) अलंकुर्वन् (**श्रियः**) लक्ष्मीः (**वसानः**) आच्छादयन् गृह्णन् (**चरति**) गच्छति (**स्वरोचिः**) स्वकीयं रोचिर्दीपनं यस्य सः (**महत्**) (**तत्**) (**वृष्णः**) वर्षकस्य (**असुरस्य**) योऽस्यति दोषान् प्राणेषु रममाणो वा तस्य (**नामा**) उदकानि। **नामेत्युदकनामसु पठितम्।** (निघं०१.१२) (**विश्वरूपः**) विश्वानि रूपाणि यस्मात् सः (**अमृतानि**) अमृतात्मकानि (**तस्थौ**) तिष्ठति॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! विश्वरूपः श्रियो वसानः स्वरोचिः सूर्यो वृष्णोऽसुरस्य वायोरमृतानि नामा तस्थाविव यन्महत्तच्चरति तमातिष्ठन्तं विश्वे विद्वांसो पर्य्यभूषन्॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! वाय्वाधारे स्थिताः सूर्य्यादयो लोका जलवर्षणादिद्वारा सर्वानानन्दयन्ति तथैव श्रीकरः पुरुषः सर्वान् विभूषयति॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(विश्वरूपः)** सम्पूर्ण रूप हैं जिससे वा जो **(श्रियः)** धनों वा पदार्थों की शोभाओं को **(वसानः)** ढांपता वा ग्रहण करता हुआ और **(स्वरोचिः)** अपना प्रकाश जिसमें विद्यमान वह सूर्य्य **(वृष्णः)** वृष्टिकारक **(असुरस्य)** दोषों को दूर करने वा प्राणों में रमनवाले वायु सम्बन्धी **(अमृतानि)** अमृतस्वरूप **(नामा)** जलों को व्याप्त होकर **(आ, तस्थौ)** स्थित होता वा उसके समान जो **(महत्)** बड़ा है **(तत्)** उसको **(चरति)** प्राप्त होता है, उस **(आतिष्ठन्तम्)** चारों ओर से स्थिर हुए को **(विश्वे)** सम्पूर्ण विद्वान् लोग **(परि)** सब प्रकार **(अभूषन्)** शोभित करें॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! वायुरूप आधार में वर्त्तमान सूर्य्य आदि लोक जल वृष्टि आदि के द्वारा सब लोगों को आनन्द देते हैं, वैसे ही लक्ष्मी उत्पादन करनेवाला पुरुष सबको शोभित करता है॥४॥

अथ राजविषयमाह॥

अब राजा के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

असूत पूर्वो वृषभो ज्यायानिमा अस्य शुरुधः सन्ति पूर्वीः।
दिवो नपाता विदथस्य धीभिः क्षत्रं राजाना प्रदिवो दधाथे॥५॥२३॥

असूत। पूर्वः। वृषभः। ज्यायान्। इमाः। अस्य। शुरुधः। सन्ति। पूर्वीः। दिवः। नपाता। विदथस्य। धीभिः। क्षत्रम्। राजाना। प्रऽदिवः। दधाथे इति॥५॥२३॥

पदार्थः-**(असूत)** सूते **(पूर्वः)** पालकः प्रथमः **(वृषभः)** वर्षकः **(ज्यायान्)** महान् वृद्धः **(इमाः)** **(अस्य)** **(शुरुधः)** याः शु शीघ्रं रुन्धन्ति ताः **(सन्ति)** **(पूर्वीः)** प्राचीनाः **(दिवः)** अन्तरिक्षात् **(नपाता)** यौ न पततो विनश्यतस्तत्सम्बुद्धौ **(विदथस्य)** विज्ञानकरस्य **(धीभिः)** प्रज्ञाभिः कर्मभिर्वा **(क्षत्रम्)** रक्षितव्यं राज्यम् **(राजाना)** सूर्यविद्युताविव प्रकाशमानौ राजन्यायेशौ **(प्रदिवः)** प्रकृष्टान् विद्याविनयप्रकाशान् **(दधाते)** धरथः॥५॥

अन्वयः-हे नपाता राजाना! युवां यथा पूर्वो वृषभो ज्यायानिमाः पूर्वीः शुरुधोऽसूताऽस्य सकाशाद् वृष्टिकाः सन्ति तथैव दिवो विदथस्य प्रदिवो धीभिः क्षत्रं दधाथे॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽनुक्रमेण सूर्यो जलधारणवर्षणाभ्यामस्य जगतो हितं करोति तथैव शुभगुणन्यायैः सह वर्त्तमानाः सन्तो राजादयः सुरक्षितं राज्यं पान्तु॥५॥

पदार्थः-हे **(नपाता)** नाशरहित **(राजाना)** सूर्य्य और बिजुली के सदृश प्रकाशयुक्त राजा और

न्यायधीश! आप दोनों जैसे **(पूर्वः)** पालन करनेवाला प्रथम **(वृषभः)** वृष्टिकर्त्ता **(ज्यायान्)** बड़ा वृद्ध **(इमाः)** इन **(पूर्वीः)** प्राचीन **(शुरुधः)** शीघ्र रुचिकारकों को **(असूत)** उत्पन्न करता है और **(अस्य)** इसके समीप से वृष्टिका वर्षायें हैं, वैसे ही **(दिवः)** अन्तरिक्ष से **(विदथस्य)** विज्ञान करनेवाले के **(प्रदिवः)** विद्या और विनय के प्रकाशों को तथा **(धीभिः)** बुद्धि वा कर्मों से **(क्षत्रम्)** रक्षा करने योग्य राज्य को **(दधाथे)** धारण करते हो॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे क्रम से सूर्य जल के धारण और वृष्टि से इस संसार का हित करता है, वैसे ही उत्तम गुण और न्यायों के सहित वर्त्तमान हुए राजा आदि लोग उत्तम प्रकार रक्षित राज्य का पालन करें॥५॥

अथ सभाकार्य्यमुपदिश्यते॥

अब सभा के कार्य्य का उपदेश अगले मन्त्र में किया है॥

त्रीणि राजाना विदथे पुरूणि परि विश्वानि भूषथः सदांसि।
अपश्यमत्र मनसा जगन्वान् व्रते गन्धर्वाँ अपि वायुकेशान्॥६॥

त्रीणि। राजाना। विदथे। पुरूणि। परि। विश्वानि। भूषथः। सदांसि। अपश्यम्। अत्र। मनसा। जगन्वान्। व्रते। गन्धर्वान्। अपि। वायुऽकेशान्॥६॥

पदार्थः-**(त्रीणि)** **(राजाना)** विद्यादिशुभगुणैः प्रकाशमानौ राजप्रजाजनौ **(विदथे)** विज्ञानप्रापके व्यवहारे **(पुरूणि)** बहूनि **(परि)** सर्वतः **(विश्वानि)** अखिलानि **(भूषथः)** अलंकुरुथः **(सदांसि)** सभाः **(अपश्यम्)** पश्यामि **(अत्र)** अस्मिन् राजव्यवहारे **(मनसा)** विज्ञानेन **(जगन्वान्)** गन्ता **(व्रते)** सत्यभाषणादिव्यवहारे **(गन्धर्वान्)** ये गां सुशिक्षितां वाचं पृथिवीं वा धरन्ति तान् **(अपि)** **(वायुकेशान्)** वायुरिव केशाः प्रकाशा येषां तान्॥६॥

अन्वयः-हे राजानाऽहमत्र स्थितान् यान् व्रते गन्धर्वान् वायुकेशानन्यानपि शिष्टान् मनसा जगन्वान् सन्नपश्यं तैस्त्रीणि सदांसि निर्माय विदथे पुरूणि विश्वानि यतः परिभूषथस्तस्मात् सकलकार्य्यसिद्धिकरौ भवथः॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! युष्माभिरुत्तमगुणकर्मस्वभावानामाप्तानां विदुषां राजविद्याधर्मसभाः संस्थाप्य सर्वाणि राजकार्याणि यथावत्संसाध्य सर्वाः प्रजाः सततं सुखयेत॥६॥

पदार्थः-हे **(राजाना)** राजा और प्रजाजनो! मैं इस संसार में वर्त्तमान जिन **(व्रते)** सत्यभाषणादि व्यवहार में **(गन्धर्वान्)** उत्तम प्रकार शिक्षित वाणी वा पृथिवी को धारण करने और **(वायुकेशान्)** वायु के सदृश प्रकाशवाले तथा अन्य भी शिष्ट अर्थात् उत्तम पुरुषों को **(मनसा)** विज्ञान से **(जगन्वान्)** प्राप्त

हुआ **(अपश्यम्)** देखता हूँ, उन लोगों से **(त्रीणि)** तीन **(सदांसि)** सभायें नियत कराके **(विदथे)** विज्ञान को प्राप्त करानेवाले व्यवहार में **(पुरूणि)** बहुत **(विश्वानि)** सम्पूर्ण व्यवहारों को **(परि)** सब प्रकार **(भूषथ:)** शोभित करते हो, इससे सम्पूर्ण कार्यों के सिद्ध करनेवाले होते हो॥६॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! आप लोग उत्तम गुण, कर्म और स्वभाववाले यथार्थवक्ता विद्वान् पुरुषों की राजसभा, विद्यासभा और धर्मसभा नियत कर और सम्पूर्ण राज्यसम्बन्धी कर्मों को यथायोग्य सिद्ध कर सकल प्रजा को निरन्तर सुख दीजिये॥६॥

अथ राजविषयमाह॥

अब राजविषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तदिन्न्वस्य वृषभस्य धेनोरा नामभिर्ममिरे सक्म्यं गो:।
अन्यदन्यदसुर्यं१ वसाना नि मायिनो ममिरे रूपमस्मिन्॥७॥

तत्। इत्। नु। अस्य। वृषभस्य। धेनो:। आ। नामऽभि:। ममिरे। सक्म्यम्। गो:। अन्यत्ऽअन्यत्। असुर्यम्। वसाना:। नि। मायिन:। ममिरे। रूपम्। अस्मिन्॥७॥

पदार्थ:-**(तत्)** **(इत्)** एव **(नु)** सद्य: **(अस्य)** **(वृषभस्य)** बलिष्ठस्य **(धेनो:)** वाण्या: **(आ)** समन्तात् **(नामभि:)** संज्ञाभि: **(ममिरे)** **(सक्म्यम्)** सचति संयुनक्ति यस्मिँस्तत्र भवम् **(गो:)** वाण्या: **(अन्यदन्यत्)** पृथक्पृथग्वर्त्तमानम् **(असुर्यम्)** असुरस्य मेघस्य स्वम् **(वसाना:)** आच्छादयन्त: **(नि)** **(मायिन:)** प्रशस्ता माया प्रज्ञा विद्यते येषान्ते **(ममिरे)** सृजन्ति **(रूपम्)** **(अस्मिन्)** राज्ये॥७॥

अन्वय:-ये मनुष्या अस्य वृषभस्य धेनोर्नामभिर्नु यदा ममिरे तत्सक्म्यं गोरन्यदन्यदसुर्यं वसाना मायिनोऽस्मिन् रूपं नि ममिरे त इदेव राज्यं कर्त्तुं शक्नुयु:॥७॥

भावार्थ:-ये मनुष्या अस्य राज्यस्य कोमलवचनै: पालनं विदधति ते मेघाज्जलमिव बहुविधमैश्वर्य्यं लभन्ते॥७॥

पदार्थ:-जो मनुष्य **(अस्य)** इस **(वृषभस्य)** बलिष्ठ की **(धेनो:)** वाणी के **(नामभि:)** नामों से **(नु)** शीघ्र जिसको **(आ, ममिरे)** सब ओर से नापते हैं **(तत्)** उस **(सक्म्यम्)** संयोग जिस पदार्थ में करता है, उसमें उत्पन्न **(गो:)** वाणी से **(अन्यदन्यत्)** पृथक्-पृथक् वर्त्तमान **(असुर्यम्)** मेघपन को **(वसाना:)** ढांपते हुए **(मायिन:)** उत्तम बुद्धिवाले **(अस्मिन्)** इस राज्य में **(रूपम्)** रूप को **(नि, ममिरे)** उत्पन्न करते हैं वे **(इत्)** ही राज्य कर सकते हैं॥७॥

भावार्थ:-जो मनुष्य इस राज्य का कोमल वचनों से पालन करते हैं, वे मेघ से जल के सदृश अनेक प्रकार के ऐश्वर्य को प्राप्त होते हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तदिन्वस्य सवितुर्नकिर्मे हिरण्ययीममतिं यामशिश्रेत्।
आ सुष्टुती रोदसी विश्वमिन्वे अपीव योषा जनिमानि वव्रे॥८॥

तत्। इत्। नु। अस्य। सवितुः। नकिः। मे। हिरण्ययीम्। अमतिम्। याम्। अशिश्रेत्। आ। सुऽस्तुती। रोदसी इति। विश्वमिन्वे इति विश्वम्ऽइन्वे। अपिऽइव। योषा। जनिमानि। वव्रे॥८॥

पदार्थः-(**तत्**) (**इत्**) (**नु**) (**अस्य**) (**सवितुः**) सूर्य्यस्येव (**नकिः**) निषेधे (**मे**) मम (**हिरण्ययीम्**) हिरण्यादिबहुधनयुक्ताम् (**अमतिम्**) सुरूपां लक्ष्मीम् (**याम्**) (**अशिश्रेत्**) आश्रयेत् (**आ**) (**सुष्टुती**) सुष्ठु प्रशंसया (**रोदसी**) द्यावापृथिव्याविव राजप्रजाव्यवहारौ (**विश्वमिन्वे**) विश्वव्यापिके (**अपीव**) समुच्चिता इव (**योषा**) भार्या (**जनिमानि**) जन्मानि (**वव्रे**) वृणोति॥८॥

अन्वयः-योऽस्य सवितुः सकाशाद्दीप्तिमिव यां हिरण्ययीममतिं योषापीव जनिमानि वव्रे सुष्टुती विश्वमिन्वे रोदसी न्वाशिश्रेत्तदिन्मे नकिर्मा भूत्॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा चन्द्रादयो लोकाः सूर्य्यप्रकाशमाश्रित्य सुशोभिता दृश्यन्ते यथा स्त्री हृद्यं स्वप्रियं शुभलक्षणान्वितं पतिं प्राप्य सन्तानान् जनयित्वाऽनन्दति तथैव पृथिवीराज्यं प्राप्य नष्टदुःखाः सन्तो राजानः सततमानन्देयुः॥८॥

पदार्थः-जो (**अस्य**) इस (**सवितुः**) सूर्य्य की प्रकटता से उत्पन्न हुए प्रकाश के सदृश (**याम्**) जिस (**हिरण्ययीम्**) सुवर्ण आदि बहुत रत्नों से युक्त (**अमतिम्**) उत्तम शोभायुक्त लक्ष्मी को (**योषा**) स्त्री (**अपीव**) इकट्ठा की गई सी (**जनिमानि**) जन्मों को (**वव्रे**) स्वीकार करती और (**सुष्टुती**) उत्तम प्रशंसा से (**विश्वमिन्वे**) सर्वत्र व्यापक (**रोदसी**) प्रकाश और पृथिवी के सदृश राजा और प्रजा के व्यवहारों का (**नु**) निश्चय (**आ, अशिश्रेत्**) आश्रय करें (**तत्**) वह (**इत्**) ही (**मे**) मेरे (**नकिः**) नहीं हुई॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे चन्द्र आदि लोक सूर्य के प्रकाश का आश्रय करके उत्तम शोभित देख पड़ते हैं और जैसे स्त्री स्नेहपात्र अपने प्रिय और उत्तम लक्षणों से युक्त पति को प्राप्त होकर सन्तानों को उत्पन्न करके आनन्द करती है, वैसे ही पृथिवी के राज्य को प्राप्त होकर दुःखों से रहित हुए राजजन निरन्तर आनन्द करें॥८॥

अथ परस्परेण राजप्रजाविषयमाह॥

अथ परस्परभाव से राजा-प्रजा विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

युवं प्रत्नस्य साधथो महो यद् दैवी स्वस्तिः परि णः स्यातम्।

गोपाजिह्वस्य तस्थुषो विरूपा विश्वे पश्यन्ति मायिनः कृतानि॥९॥

युवम्। प्रत्नस्य। साधथः। महः। यत्। दैवी। स्वस्तिः। परि। नः। स्यातम्। गोपाजिह्वस्य। तस्थुषः। विऽरूपा। विश्वे। पश्यन्ति। मायिनः। कृतानि॥९॥

पदार्थः-(**युवम्**) युवाम् (**प्रत्नस्य**) पुरातनस्य (**साधथः**) (**महः**) महती (**यत्**) या (**दैवी**) देवानामियम् (**स्वस्तिः**) स्वास्थ्यम् (**परि**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**स्यातम्**) (**गोपाजिह्वस्य**) गोरक्षका जिह्वा यस्य तस्य (**तस्थुषः**) स्थिरस्य (**विरूपा**) विविधानि रूपाणि येषु तानि (**विश्वे**) सर्वे (**पश्यन्ति**) (**मायिनः**) प्रशस्तप्रज्ञाः (**कृतानि**) निष्पन्नानि॥९॥

अन्वयः-हे राजप्रजाजनौ! युवं यथा विश्वे मायिनस्तस्थुषः कृतानि विरूपा पश्यन्ति तथा प्रत्नस्य गोपाजिह्वस्य यन्महो दैवी स्वस्तिरस्ति ता नः परिसाधथः [तथा] सर्वेषां सुखकरौ स्यातम्॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा विपश्चितः शिल्पिनो विविधरूपाणि वस्तूनि निर्माय सर्वान् सुभूषयन्ति तथैव राजादयो जनाः प्रजायां स्वास्थ्यं संस्थाप्य सर्वेषां कार्याणि साध्नुवन्तु॥९॥

पदार्थः-हे राजा और प्रजा जनो! (**युवम्**) आप दोनों जैसे (**विश्वे**) सम्पूर्ण (**मायिनः**) उत्तम बुद्धिवाले (**तस्थुषः**) स्थिर पुरुष के (**कृतानि**) उत्पन्न किये हुए (**विरूपा**) अनेक प्रकार के रूपों से युक्त पदार्थों को (**पश्यन्ति**) देखते हैं, वैसे (**प्रत्नस्य**) प्राचीन (**गोपाजिह्वस्य**) रक्षा करनेवाली जिह्वावाले पुरुष का (**यत्**) जो (**महः**) बड़ी (**दैवी**) देवताओं की (**स्वस्तिः**) स्वस्थता अर्थात् शान्ति है उसको (**नः**) हम लोगों के लिये (**परि, साधथः**) सब प्रकार सिद्ध करते हैं, वैसे सबके सुखकारक हूजिये॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे बुद्धिमान् शिल्पीजन अनेक प्रकार की वस्तुओं को रच के सबको शोभित करते हैं, वैसे ही राजा आदि जन प्रजा में स्वस्थता को स्थिर करके सबके कार्यों को सिद्ध करें॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम्॥१०॥२४॥३॥

शुनम्। हुवेम। मघऽवानम्। इन्द्रम्। अस्मिन्। भरे। नृऽतमम्। वाजऽसातौ। शृण्वन्तम्। उग्रम्। ऊतये। समत्ऽसु। घ्नन्तम्। वृत्राणि। संऽजितम्। धनानाम्॥१०॥

पदार्थः-(**शुनम्**) राजप्रजाजनितं सुखम् (**हुवेम**) गृह्णीयाम (**मघवानम्**) बहुधनवन्तं वैश्यम् (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्यं राजानम् (**अस्मिन्**) (**भरे**) पालनीये राज्ये (**नृतमम्**) प्रशस्तनायकम् (**वाजसातौ**) सत्यासत्यविभागे (**शृण्वन्तम्**) (**उग्रम्**) पापनाशाय तेजस्विनम् (**ऊतये**) रक्षणाद्याय (**समत्सु**) संग्रामेषु

(घ्नन्तम्) **(वृत्राणि)** धनानि। **वृत्रमिति धननामसु पठितम्।** (निघं०२.१०) **(सञ्जितम्)** सम्यग्जयशीलं शूरवीरम् **(धनानाम्)**॥१०॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा वयमूतयेऽस्मिन् वाजसातौ भरे शुनं मघवानं शृण्वन्तं नृतममुग्रं समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि ददतं धनानां सञ्जितमिन्द्रं हुवेम तथैतं यूयमप्याह्वयत॥१०॥

भावार्थः-ये राजप्रजाजनाः परस्परं प्रीता अन्योऽन्यस्य सुखदुःखवार्त्ताः शृण्वन्तो दुष्टान् ताडयन्तः सत्पुरुषान् सत्कुर्वन्तोऽन्योऽन्येषां सत्कर्माणि प्रशंसेयुस्ते परमैश्वर्य्यं लब्ध्वा सुखिनः स्युरिति॥१०॥

अस्मिन्सूक्ते विद्वच्छिल्पिसभाराजप्रजासूर्य्यभूम्यादिगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति ३८ सूक्तं २४ वर्गः ३ मण्डले ३ अनुवाकश्च समाप्तः॥

[इत्यष्टात्रिंशत्तमं सूक्तं चतुर्विंशो वर्गस्तृतीये मण्डले द्वितीयोऽनुवाकश्च समाप्तः॥]

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे हम लोग **(ऊतये)** रक्षा आदि के लिये **(अस्मिन्)** इस **(वाजसातौ)** सत्य और असत्य के विभाग और **(भरे)** पालन करने योग्य राज्य में **(शुनम्)** राजप्रजाजनित अर्थात् राजा प्रजा से उत्पन्न हुए सुख **(मघवानम्)** बहुत धन से युक्त वैश्य **(शृण्वन्तम्)** सुनते हुए **(नृतमम्)** उत्तम नायक **(उग्रम्)** पाप के नाश के लिये प्रतापी **(समत्सु)** संग्रामों में **(घ्नन्तम्)** शत्रुओं के नाश करने **(वृत्राणि)** धनों को देने और **(धनानाम्)** धनों को **(सञ्जितम्)** उत्तम प्रकार जीतनेवाले **(इन्द्रम्)** परमैश्वर्यवान् राजा को **(हुवेम)** ग्रहण करें, वैसे इसको आप लोग भी ग्रहण करो॥१०॥

भावार्थः-जो राजा और प्रजाजन परस्पर प्रसन्न, परस्पर के सुख और दुःख की वार्त्ताओं को सुनते, दुष्ट पुरुषों को ताड़न करते और सत्पुरुषों का सत्कार करते हुए परस्पर के उत्तम कर्मों की प्रशंसा करें, वे अत्यन्त ऐश्वर्य को प्राप्त होकर सुखी होवें॥१०॥

इस सूक्त में विद्वान्, शिल्पी, सभा, राजा, प्रजा, सूर्य और भूमि आदि के गुणों का वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह [अड़तीसवाँ] ३८वाँ सूक्त [चौबीसवाँ] २४वाँ वर्ग और [तीसरे] ३ मण्डल में [तीसरा] ३ अनुवाक समाप्त हुआ॥

अथ नवर्चस्यैकोनचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ९ विराट् त्रिष्टुप्। ३-७ निचृत् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २, ८ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब नव ऋचावाले तीसरे मण्डल में उनतालीसवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में विद्वान् के विषय को कहते हैं॥

इन्द्रं म॒तिर्हृ॒द आ व॒च्यमा॒नाच्छा॒ पतिं॒ स्तोम॑तष्टा जिगाति।
या जागृ॑विर्वि॒दथे॑ श॒स्यमा॒नेन्द्र॒ यत्ते॒ जाय॑ते वि॒द्धि तस्य॑॥ १॥

इन्द्र॑म्। म॒तिः। हृ॒दः। आ। व॒च्यमा॑ना। अच्छ॑। पति॑म्। स्तोम॑ऽतष्टा। जि॒गा॒ति। या। जागृ॑विः। वि॒दथे॑। श॒स्यमा॑ना। इन्द्र॑। यत्। ते॒। जाय॑ते। वि॒द्धि। तस्य॑॥ १॥

पदार्थः-(**इन्द्रम्**) परमसुखप्रदम् (**मतिः**) प्रज्ञा (**हृदः**) हृदयात् (**आ**) समन्तात् (**वच्यमाना**) उच्यमाना। अत्र **वाच्छन्दसी**ति सम्प्रसारणाऽभावः। (**अच्छ**) सम्यक्। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**पतिम्**) पालकं स्वामिनम् (**स्तोमतष्टा**) स्तोमैः स्तुतिभिस्तष्टा विस्तृता (**जिगाति**) स्तौति (**या**) (**जागृविः**) जागरूका: (**विदथे**) विज्ञाने (**शस्यमाना**) स्तूयमाना (**इन्द्र**) परमैश्वर्य्ययुक्त (**यत्**) या (**ते**) तव (**जायते**) (**विद्धि**) (**तस्य**)॥१॥

अन्वयः-हे इन्द्र विद्वन्! या वच्यमाना विदथे जागृविः शस्यमाना स्तोमतष्टा मतिर्हृद इन्द्रं पतिमच्छा जिगाति यद्या प्रज्ञा ते जायते तथा तस्य शुभगुणकर्मस्वभावान् विद्धि॥१॥

भावार्थः-येषां हृदये प्रमोत्पद्यते सर्वेषां ते गुणदोषान् विज्ञाय गुणान् गृहीत्वा दोषांश्च त्यक्त्वा गुणप्रशंसां दोषनिन्दां कृत्वोत्तमानि कर्माणि कुर्य्युस्तर्ह्येवं तेऽत्र प्रशंसिताः स्युः॥१॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य्ययुक्त विद्वान् पुरुष! (**या**) जो (**वच्यमाना**) कही गई (**विदथे**) विज्ञाने में (**जागृविः**) जागनेवाली और विज्ञान में (**शस्यमाना**) स्तुति से युक्त हुई (**स्तोमतष्टा**) स्तुतियों से विस्तारयुक्त (**मतिः**) बुद्धि (**हृदः**) हृदय से (**इन्द्रम्**) अत्यन्त सुख देने (**पतिम्**) और पालनेवाले स्वामी की (**अच्छ**) उत्तम प्रकार (**आ**) सब ओर से (**जिगाति**) स्तुति करती है (**यत्**) जो बुद्धि (**ते**) आपकी (**जायते**) उत्पन्न होती है, उस बुद्धि से (**तस्य**) उस पालनेवाले के उत्तम गुण, कर्म और स्वभावों को (**विद्धि**) जानो॥१॥

भावार्थः-जिनके हृदय में यथार्थ ज्ञान उत्पन्न होता है, वे सब लोगों के गुण और दोषों को जान, गुणों का ग्रहण, दोषों का त्याग, गुणों की प्रशंसा और दोषों की निन्दा करके उत्तम कर्मों को करें, ऐसा होने से वे इस संसार में प्रशंसायुक्त होवें॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

दि॒वश्चि॒दा पू॒र्व्या जाय॑माना॒ वि जागृ॑विर्वि॒दथे॑ श॒स्यमा॑ना।

भ॒द्रा वस्त्रा॒ण्यर्जु॑ना॒ वसा॑ना॒ सेयम॒स्मे स॑न॒जा पित्र्या॒ धीः॥ २॥

दि॒वः। चि॒त्। आ। पू॒र्व्या। जाय॑माना। वि। जागृ॑विः। वि॒दथे॑। श॒स्यमा॑ना। भ॒द्रा। वस्त्रा॑णि। अर्जु॑ना। वसा॑ना। सा। इयम्। अ॒स्मे इति॑। स॒न॒ऽजा। पित्र्या॑। धीः॥ २॥

पदार्थः-(**दिवः**) विज्ञानप्रकाशात् (**चित्**) अपि (**आ**) (**पूर्व्या**) पूर्वैर्विद्वद्भिर्निष्पादिता (**जायमाना**) (**वि**) (**जागृविः**) जागरूका: (**विदथे**) विज्ञानवर्द्धके व्यवहारे (**शस्यमाना**) स्तूयमाना (**भद्रा**) सेवनीयानि कल्याणकराणि (**वस्त्राणि**) (**अर्जुना**) सुरूपाणि। **अर्जुनमिति रूपनामसु पठितम्।** (निघं०३.७) (**वसाना**) धारयन्ती (**सा**) (**इयम्**) (**अस्मे**) अस्मासु (**सनजा**) सनेन विभागेन जाता (**पित्र्या**) पितृषु भवा (**धीः**) प्रज्ञा॥ २॥

अन्वयः-हे मनुष्या! याऽस्मे दिवो जायमाना पूर्व्या विदथे जागृविः शस्यमाना भद्राऽर्जुना वस्त्राणि वसाना सुन्दरी स्त्रीव सनजा पित्र्या धीर्विजायते सेयं युष्मासु चिदा जायताम्॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। त एवाप्ताः पुरुषा ये स्वात्मवत्सर्वेषु बुद्ध्यादिपदार्थान् जनयितुमुद्यताः स्युः॥ २॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**अस्मे**) हम लोगों में (**दिवः**) विज्ञान के प्रकाश से (**जायमाना**) उत्पन्न हुई (**पूर्व्या**) प्राचीन विद्वानों से सिद्ध की गई (**विदथे**) विज्ञान के बढ़ानेवाले व्यवहार में (**जागृविः**) जागनेवाली (**शस्यमाना**) स्तुति की जाती और (**भद्रा**) धारण करने योग्य और कल्याणकारक (**अर्जुना**) सुन्दररूपयुक्त (**वस्त्राणि**) वस्त्रों को (**वसाना**) ओढ़ती हुई सुन्दर स्त्री के तुल्य (**सनजा**) विभाग से प्रसिद्ध (**पित्र्या**) वा पितरों में प्रकट हुई (**धीः**) उत्तम बुद्धि (**वि**) विशेषता से उत्पन्न होती (**सा, इयम्**) सो यह आप लोगों में (**चित्, आ**) भी सब ओर से उत्पन्न होवे॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। वे ही श्रेष्ठ पुरुष हैं जो कि अपने आत्मा के तुल्य सम्पूर्ण जनों में बुद्धि आदि पदार्थों को उत्पन्न कराने को उद्यत होवें॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

य॒मा चि॒दत्र॑ यम॒सूर॑सूत जि॒ह्वाया॒ अग्रं॒ पत॒दा ह्यस्था॑त्।

वपूं॑षि जा॒ता मि॑थु॒ना स॑चेते तमो॒हना॒ तपु॑षो बु॒ध्न एता॑॥ ३॥

य॒मा। चि॒त्। अत्र॑। य॒म॒ऽसूः। अ॒सू॒त॒। जि॒ह्वाया॑ः। अग्र॑म्। पत॑त्। आ। हि। अस्था॑त्। वपूं॑षि। जा॒ता। मि॒थु॒ना। स॒चे॒ते॒ इति॑। त॒मः॒ऽहना॑। तपु॑षः। बु॒ध्ने। आऽइ॑ता॥ ३॥

पदार्थः-(**यमा**) यमावुपरतौ (**चित्**) अपि (**अत्र**) (**यमसूः**) या यमं सूर्य्यं सूते सा विद्युत् (**असूत**) सूते जनयति (**जिह्वायाः**) (**अग्रम्**) (**पतत्**) पतति गच्छति प्राप्नोति वा (**आ**) समन्तात् (**हि**) यतः (**अस्थात्**) तिष्ठति (**वपूंषि**) रूपाणि (**जाता**) उत्पन्नानि (**मिथुना**) मिथुनौ परस्परसङ्गतौ (**सचेते**) सम्बध्नीतः (**तमोहना**) यौ तमोहतस्तौ (**तपुषः**) तपत्यस्मिन् सूर्य्यस्तस्य दिनस्य मध्ये (**बुध्ने**) बध्नन्त्यापो यस्मिँस्तस्मिन्नन्तरिक्षे (**एता**) एतौ वर्त्तमानौ॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो यमसूश्चिदत्र यमा मिथुना तमोहना तपुषो बुध्न एता सूर्य्याचन्द्रमसावसूत जिह्वाया अग्रं हि पतज्जाता वपूंष्यास्थाद्यौ तमोहना मिथुनैता सूर्य्याचन्द्रमसौ तपुषो बुध्ने सचेते ताँस्तौ विद्धि विजानीत॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा विद्युत्सूर्यं सूर्यश्चन्द्रादिकं प्रकाशयति तमो हन्ति तथैव परस्परस्यानुकूला भूत्वा सद्व्यवहारे सचन्ताम्॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**यमसूः**) सूर्य्य को उत्पन्न करनेवाली बिजुली (**चित्**) अथवा (**अत्र**) इस संसार में (**यमा**) सहचारी (**मिथुना**) परस्पर मिले हुए (**तमोहना**) अन्धकार का नाश करनेवाले (**तपुषः**) जिसमें सूर्य्य तपता है, उस दिन के बीच वा (**बुध्ने**) बंधते अर्थात् इकट्ठे होते जल जिसमें उस अन्तरिक्ष में (**एता**) वर्त्तमान इन सूर्य्य और चन्द्रमा को (**असूत**) उत्पन्न करती है (**जिह्वायाः**) तथा जिह्वा के (**अग्रम्**) अग्रभाग को (**हि**) जिस कारण (**पतत्**) जाती वा प्राप्त होती है और (**जाता**) उत्पन्न हुए (**वपूंषि**) रूपों को प्राप्त हो (**आ, अस्थात्**) स्थिर होती है, जो अन्धकार के नाश करनेवाले परस्पर मिले हुए सूर्य्य और चन्द्रमा सूर्य्यमण्डल जिसमें तपता है, उस दिन के बीच और जल जिसमें इकट्ठें हों उस अन्तरिक्ष में (**सचेते**) सम्बन्ध करते हैं, उनको (**विद्धि**) जानिये॥३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! आप जैसे बिजुली सूर्य का और सूर्य चन्द्रादिक का प्रकाश और अन्धकार का नाश करता है, वैसे ही परस्पर अनुकूल होकर उत्तम व्यवहार में तत्पर होओ॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नकिरेषां निन्दिता मर्त्येषु ये अस्माकं पितरो गोषु योधाः।
इन्द्र एषां दृंहिता माहिनावानुद्गोत्राणि ससृजे दंसनावान्॥४॥

नकिः। एषाम्। निन्दिता। मर्त्येषु। ये। अस्माकम्। पितरः। गोषु। योधाः। इन्द्रः। एषाम्। दृंहिता। माहिनऽवान्। उत्। गोत्राणि। ससृजे। दंसनाऽवान्॥४॥

पदार्थः-(**नकिः**) (**एषाम्**) (**निन्दिता**) गुणेषु दोषारोपको दोषेषु गुणारोपकश्च (**मर्त्येषु**) मनुष्येषु (**ये**) (**अस्माकम्**) (**पितरः**) पालकाः (**गोषु**) पृथिवीषु (**योधाः**) योद्धारः (**इन्द्रः**) सूर्य इव वर्त्तमानः

(एषाम्) **(दृंहिता)** वर्द्धक: **(माहिनावान्)** प्रशस्तानि माहिनानि पूजनानि विद्यन्ते यस्य **(उत्)** **(गोत्राणि)** वंशान् **(ससृजे)** **(दंसनावान्)** प्रशस्तकर्मयुक्त:॥४॥

अन्वय:-हे मनुष्या! य इन्द्रो येऽस्माकं गोषु मर्त्येषु च योधा: पितर: सन्त्येषां दृंहिता माहिनावान् दंसनावान् गोत्राण्युत्ससृजे तं भजत यत एषां निन्दिता नकिर्भवेत्॥४॥

भावार्थ:-मनुष्यैस्तथा प्रयतितव्यं यथा मनुष्येषु निन्दितारो न स्यु: प्रशंसका भवेयुर्यथा सूर्य्य: सर्वं जगत् पाति तथा रक्षका: पितर: संसेवनीया:॥४॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जो **(इन्द्र:)** सूर्य्य के सदृश वर्त्तमान **(ये)** वा जो **(अस्माकम्)** हम लोगों के **(गोषु)** पृथिवियों और **(मर्त्येषु)** मनुष्यों में **(योधा:)** योद्धा लोग और **(पितर:)** पालन करनेवाले हैं **(एषाम्)** इन लोगों का **(दृंहिता)** बढ़ानेवाला **(माहिनावान्)** प्रशंसित पूजन हैं जिसके वह और **(दंसनावान्)** जो उत्तम कर्मों से युक्त है वह **(गोत्राणि)** वंशों को **(उत्, ससृजे)** उत्पन्न करता है, उसकी सेवा करो, जिससे **(एषाम्)** इन लोगों का **(निन्दिता)** गुणों में दोषों का आरोपक और दोषों में गुणों का आरोपक **(नकि:)** नहीं होवे॥४॥

भावार्थ:-मनुष्यों को चाहिये कि ऐसा प्रयत्न करें कि जिससे निन्दित न हों और आप दूसरों की स्तुति करनेवाले हों और जैसे सूर्य्य सम्पूर्ण जगत् का पालन करता है, वैसे रक्षा करनेवाले पितरों की सेवा करनी चाहिये॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सखा॑ ह॒ यत्र॒ सखि॑भि॒र्नव॑ग्वैरभि॒ज्ञ्वा सत्व॑भि॒र्गा अ॑नु॒ग्मन्।

स॒त्यं तदिन्द्रो॑ द॒शभि॒र्दश॑ग्वैः सूर्यं॑ विवेद॒ तम॑सि क्षि॒यन्त॑म्॥५॥२५॥

सखा॑। ह॒। यत्र॑। सखि॑ऽभिः। नव॑ऽग्वैः। अ॒भि॒ऽज्ञु। आ। सत्व॑ऽभिः। गाः। अ॒नु॒ऽग्मन्। स॒त्यम्। तत्। इन्द्रः॑। द॒शऽभिः॑। दश॑ऽग्वैः। सूर्य॑म्। वि॒वे॒द॒। तम॑सि। क्षि॒यन्त॑म्॥५॥

पदार्थ:-**(सखा)** **(ह)** खलु **(यत्र)** **(सखिभि:)** **(नवग्वै:)** नवीनगतिभि: **(अभिज्ञु)** आभिमुख्ये जानुनी यस्य स: **(आ)** समन्तात् **(सत्त्वभि:)** पदार्थै: सह **(गा:)** सुशिक्षिता वाचो भूमिर्वा **(अनुग्मन्)** अनुकूलं गच्छन् **(सत्यम्)** सत्सु साधु **(तत्)** तम् **(इन्द्र:)** विद्युत् **(दशभि:)** दशविधैर्वायुभि: **(दशग्वै:)** दशविधा गतयो येषान्तै: **(सूर्य्यम्)** **(विवेद)** विन्दति **(तमसि)** अन्धकारे रात्रौ **(क्षियन्तम्)** निवसन्तम्॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यत्र नवग्वैः सखिभिः सहाऽभिज्ञु सखा सत्त्वभिर्ह गा आनुग्मन् यत्सत्यं दशग्वैर्दशभिः सहेन्द्रो तमसि क्षियन्तं सूर्य्यं विवेद तद्विवेद तदनुकरणं सर्वे कुर्वन्तु॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सखिवद्वर्त्तमानेन वायुना विद्युदाख्योऽग्निरन्धकारे सूर्य्यपरिणामं प्राप्य सर्वान् प्रकाश्याऽऽनन्दति तथैव धार्मिकैर्मित्रैः सहितो सुहृद्विद्वान् शुद्धान्तःकरणतया विद्यया च प्रकटीभूत्वा सर्वेषामात्मनः प्रकाश्याऽऽनन्दति॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यत्र)** जिस स्थल में **(नवग्वैः)** नवीन गतियों और **(सखिभिः)** मित्रों के साथ **(अभिज्ञु)** सम्मुख जाङ्गों से युक्त **(सखा)** मित्र **(सत्त्वभिः)** पदार्थों के साथ **(ह)** निश्चय **(गाः)** उत्तम प्रकार शिक्षित वाणी वा भूमियों के **(आ, अनुग्मन्)** अनुकूल प्राप्त होता हुआ जो **(सत्यम्)** श्रेष्ठ व्यवहारों में उत्तम अर्थात् सच्चापन जैसे हो, वैसे **(दशग्वैः)** दश प्रकार की गतियों से युक्त **(दशभिः)** दश प्रकार के पवनों के साथ **(इन्द्रः)** बिजुली **(तमसि)** रात्रि में **(क्षियन्तम्)** निवास करते अर्थात् अपना काम प्रकाश न करते हुए **(सूर्य्यम्)** सूर्य को **(विवेद)** प्राप्त होती है **(तत्)** उसको जो जानता है, उसका अनुकरण सब लोग करो॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे मित्र के तुल्य वर्त्तमान वायु से बिजुली नामक अग्नि अन्धकार में सूर्य के परिणाम को प्राप्त हो और सबको प्रकाशित कर आनन्द देती है, वैसे ही धार्मिक मित्रों के सहित मित्र विद्वान् शुद्धान्तकरणता तथा विद्या से प्रकट होकर सबके आत्माओं का प्रकाश करके आनन्द देता है॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रो मधु संभृतमुस्रियायां पद्वद्विवेद शफवन्नमे गोः।
गुहा हितं गुह्यं गूळ्हमप्सु हस्ते दधे दक्षिणे दक्षिणावान्॥६॥

इन्द्रः। मधु। सम्ऽभृतम्। उस्रियायाम् पत्ऽवत्। विवेद। शफऽवत्। नमे। गोः। गुहा। हितम्। गुह्यम्। गूळ्हम्। अप्ऽसु। हस्ते। दधे। दक्षिणे। दक्षिणऽवान्॥६॥

पदार्थः-**(इन्द्रः)** विद्युदिव नरः **(मधु)** मधुरादिकं रसम् **(सम्भृतम्)** सम्यग्धृतम् **(उस्रियायाम्)** भूमौ **(पद्वत्)** पद्भ्यां तुल्यम् **(विवेद)** **(शफवत्)** शफा विद्यन्ते यस्मिन् पदे तत् **(नमे)** नमेत् **(गोः)** वाचः **(गुहा)** गुहायां बुद्धौ **(हितम्)** स्थितम् **(गुह्यम्)** गुप्तम् **(गूढम्)** **(अप्सु)** प्राणेषु जलेषु वा **(हस्ते)** **(दधे)** दध्यात् **(दक्षिणे)** **(दक्षिणावान्)** दक्षिणा विद्यते यस्य स इव॥६॥

अन्वयः-य इन्द्रो उस्रियायां पद्वच्छफवन्न मधु सम्भृतं नमे विवेद गोर्गुहा हितमप्सु गुह्यं गूढं दक्षिणावानिव दक्षिणे हस्ते दधे तं सर्वे जानन्तु॥६॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। यथा मनुष्याः पद्भ्यां पशवः शफैर्गमनं कृत्वा देशान्तरं साक्षात्कुर्वन्ति तथैव बाह्याभ्यन्तरस्थां विद्युतं विद्वानेव हस्तगतदक्षिणावद्विदित्वाऽऽभ्यन्तरं स्वात्मानं परमात्मानं च बाह्यं सूर्यादिकं विजानात्येतत्सहायेन धर्मार्थकाममोक्षान् सर्वे साध्नुवन्तु॥६॥

पदार्थः-जो **(इन्द्रः)** बिजुली के समान मनुष्य **(उस्त्रियायाम्)** भूमि में **(पद्वत्)** पैरों के और **(शफवत्)** खुरों के सदृश **(मधु)** मधुर आदि रस **(सम्भृतम्)** जो कि उत्तम धारण किया गया उसे **(नमे)** नमें स्वीकार करे **(विवेद)** जाने **(गोः)** वाणी और **(गुहा)** बुद्धि में **(हितम्)** स्थित **(अप्सु)** प्राणों वा जलों में **(गुह्यम्)** गुप्त और **(गूढम्)** ढपे हुए व्यवहार को **(दक्षिणावान्)** दक्षिणा को धारण किये हुए के समान **(दक्षिणे)** दाहिने **(हस्ते)** हाथ में **(दधे)** धारण करे, उसको सब लोग जानो॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जैसे मनुष्य पैरों और पशु खुरों से गमन करके दूसरे स्थान को प्रत्यक्ष करते हैं, वैसे ही बाहर-भीतर वर्त्तमान बिजुली को विद्वान् पुरुष हस्तप्राप्त दक्षिणा के सदृश जानकर और हृदय में वर्त्तमान अपने आत्मा और परमात्मा तथा बाह्य सूर्य आदि को जानता है, इसके सहाय से धर्म, अर्थ, काम और मोक्षों को सब सिद्ध करें॥६॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ज्योतिर्वृणीत तमसो विजानन्नारे स्याम दुरितादभीके।

इमा गिरः सोमपाः सोमवृद्ध जुषस्वेन्द्र पुरुतमस्य कारोः॥७॥

ज्योतिः। वृणीत। तमसः। विऽजानन्। आरे। स्याम। दुःऽइतात्। अभीके। इमाः। गिरः। सोमऽपाः। सोमऽवृद्ध। जुषस्व। इन्द्र। पुरुऽतमस्य। कारोः॥७॥

पदार्थः-**(ज्योतिः)** प्रकाशमिव विद्याम् **(वृणीत)** स्वीकुर्य्यात् **(तमसः)** अन्धकारादविद्याया इव **(विजानन्)** विशेषेण विदन् **(आरे)** दूरे **(स्याम)** **(दुरितात्)** दुष्टाचाराच्छ्रेष्ठाचारात् **(अभीके)** समीपे **(इमाः)** **(गिरः)** वाचः **(सोमपाः)** सोममैश्वर्यं पाति। अत्र कर्त्तरि क्विप्। **(सोमवृद्ध)** सोमेन विश्वैश्वर्येण वृद्धस्तत्सम्बुद्धौ **(जुषस्व)** सेवस्व **(इन्द्र)** परमैश्वर्ययुक्त **(पुरुतमस्य)** अतिशयेन बहुविद्यायुक्तस्य **(कारोः)** कारकस्य शिल्पिनः॥७॥

अन्वयः-हे सोमवृद्धेन्द्र सोमपा! त्वं पुरुतमस्य कारो इमाः गिर जुषस्व यथा विजानञ्ज्योतिरस्माकमारेऽभीके दुरितात् पृथग् भूत्वा तमसो ज्योतिर्वृणीत तथैतस्यैताः सेवित्वा वयं विद्वांसः स्याम॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा वयं पापाचरणात् पृथग् भूत्वा धर्माचरणमविद्यायाः पृथग् भूत्वा विद्या वरित्वाऽऽत्मबोधं शिल्पक्रियाकौशलं च जुषामहे तथैव यूयमपि भवत सर्वे वयं दूरे समीपे च स्थिता अपि मैत्रीं न जह्याम॥७॥

पदार्थः-हे **(सोमवृद्ध)** विद्यारूपी ऐश्वर्य से वृद्ध और **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्ययुक्त **(सोमपाः)** ऐश्वर्य्य की रक्षा करनेवाले! आप **(पुरुतमस्य)** अत्यन्त बहुत विद्या से युक्त **(कारोः)** शिल्पीजन की जो **(इमाः)** उन **(गिरः)** वाणियों का **(जुषस्व)** सेवन करो और जैसे **(विजानन्)** विशेष प्रकार से जानते हुए आप हम लोगों से **(आरे)** दूरस्थल और **(अभीके)** समीप स्थल में **(दुरितात्)** दुष्ट आचरण से पृथक् होकर श्रेष्ठ आचरण और **(तमसः)** अविद्या से पृथक् होकर विद्या और **(ज्योतिः)** प्रकाश के समान विद्या का **(वृणीत)** स्वीकार करें, वैसे इन आपकी उन वाणियों का सेवन करके हम लोग विद्वान् होवें॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे हम लोग पाप के आचरण से पृथक् होकर धर्म के आचरण, और अविद्या से पृथक् होकर विद्या का ग्रहण करके आत्मसम्बन्धी ज्ञान और शिल्प-क्रिया-कौशल का सेवन करते हैं, वैसे ही आप लोग भी सेवन करनेवाले हूजिये और हम सब लोग दूर और समीप में वर्त्तमान हुए भी मित्रता का त्याग नहीं करें॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ज्योतिर्यज्ञाय रोदसी अनु ष्यादारे स्याम दुरितस्य भूरेः।

भूरि चिद्धि तुजतो मर्त्यस्य सुपारासो वसवो बर्हणावत्॥८॥

ज्योतिः। यज्ञाय। रोदसी इति। अनु। स्यात्। आरे। स्याम। दुःऽइतस्य। भूरेः। भूरि। चित्। हि। तुजतः। मर्त्यस्य। सुऽपारासः। वसवः। बर्हणाऽवत्॥८॥

पदार्थः-**(ज्योतिः)** सूर्यप्रकाश इव विज्ञानदीप्तिः **(यज्ञाय)** विद्वत्सत्काराद्यनुष्ठानाय **(रोदसी)** भूमिप्रकाशाविव विद्यानयौ **(अनु)** पश्चात् **(स्यात्)** भवेत् **(आरे)** दूरे समीपे वा **(स्याम)** **(दुरितस्य)** दुःखेनेतस्य प्राप्तस्य **(भूरेः)** बहोः **(भूरि)** बहु **(चित्)** अपि **(हि)** यतः **(तुजतः)** बलवतः **(मर्त्यस्य)** मनुष्यस्य **(सुपारासः)** शोभनो विद्यायाः पारो येषान्ते **(वसवः)** ये विद्यासु वसन्त्यन्यान् वासयन्ति ते **(बर्हणावत्)** बर्हणं वृद्धिकारकं विज्ञानं धनं वा विद्यते यस्मिंस्तत्॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा सुपारासो वसवो वयं यज्ञाय रोदसी इवारे दुरितस्य भूरेर्भूरि चित्तुजतो मर्त्यस्य बर्हणावज्ज्योतिः स्यादिति कामयमाना अनु ष्याम तथाहि भवन्तो भवन्तु॥८॥

भावार्थः-त एवाप्ता ये दूरस्थेषु समीपस्थेषु च कृपामनुसंधाय विद्योपदेशौ प्रचार्य्यातिकठिनस्य बोधस्य सुगमतां सम्पादयेयुस्त एव सर्वैः सत्कर्त्तव्या भवन्तु॥८॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(सुपारासः)** सुन्दर विद्या का पार है जिनका और **(वसवः)** विद्याओं में स्वयं वसते वा अन्य जनों को वसाते वह हम लोग **(यज्ञाय)** विद्वानों के सत्कार आदि अनुष्ठान के लिये **(रोदसी)** भूमि और प्रकाश के सदृश विद्या और नीति को **(आरे)** दूर वा समीप में **(दुरितस्य)** दु:ख से प्राप्त हुए **(भूरेः)** बहुत का **(भूरि)** बहुत **(चित्)** भी **(तुजतः)** बलवान् **(मर्त्यस्य)** मनुष्य का **(बर्हणावत्)** वृद्धिकारक विज्ञान वा धन जिसमें विद्यमान ऐसा **(ज्योतिः)** सूर्य के प्रकाश के सदृश विज्ञान का प्रकाश **(स्यात्)** होवे, ऐसी कामना करते हुए **(अनु)** पीछे **(स्याम)** होवें, वैसे **(हि)** ही आप हूजिये॥८॥

भावार्थः-वे ही श्रेष्ठ पुरुष हैं जो लोग दूर और समीप में वर्त्तमान पुरुषों में कृपा का अनुसन्धान विद्या और उपदेश का प्रचार करके कड़े कठिन बोध की सरलता को उत्पन्न करें, वे ही सब लोगों का सत्कार करने योग्य होवें॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम्॥९॥२६॥२॥

शुनम्। हुवेम। मघऽवानम्। इन्द्रम्। अस्मिन्। भरे। नृऽतमम्। वाजऽसातौ। शृण्वन्तम्। उग्रम्। ऊतये। समत्ऽसु। घ्नन्तम्। वृत्राणि। सम्ऽजितम्। धनानाम्॥९॥

पदार्थः-**(शुनम्)** सुखकारकं विज्ञानम् **(हुवेम)** स्वीकुर्याम **(मघवानम्)** बहुधनप्रदानकरम् **(इन्द्रम्)** विद्युतम् **(अस्मिन्)** **(भरे)** भरणीये संसारे **(नृतमम्)** अतिशयेन नायकम् **(वाजसातौ)** पदार्थानां विभागविद्यायाम् **(शृण्वन्तम्)** श्रोतारं न्यायाधीशं दण्डप्रदमिव **(उग्रम्)** तेजस्विस्वभावम् **(ऊतये)** व्यवहारसिद्धिप्रवेशाय **(समत्सु)** संग्रामेषु **(घ्नन्तम्)** विद्यावन्तं शूरवीरमिव **(वृत्राणि)** धनानि **(सञ्जितम्)** सम्यक् जयति येन **(धनानाम्)** श्रियाम्॥९॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यं वयमूतयेऽस्मिन् भरे नृतमं मघवानं वाजसातौ शृण्वन्तमिवोग्रं समत्सु घ्नन्तमिव धनानां सञ्जितमिन्द्र विज्ञाय वृत्राणि शुनं च हुवेम तथैतं विज्ञाय सर्वमेतद्यूयं प्राप्नुत॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। आप्ता विद्वांसो भूगर्भविद्युद्भूगोलखगोलसृष्टिस्थानां पदार्थानां विद्योपदेशेन पदार्थविद्याः प्रापय्य सर्वान्त्सततमुन्नयेयुरिति॥९॥

अत्र विद्वद्गुणवर्णनं निन्दितजननिवारणं मैत्रीभावनमज्ञानं विज्ञाय विद्याप्राप्तीच्छाकरणमत एतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यृग् संहितायां तृतीयाष्टके द्वितीयोऽध्यायः षड्विंशो वर्गस्तृतीये मण्डल एकोनचत्वारिंशत्तमं सूक्तञ्च समाप्तम्॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिसको हम लोग **(ऊतये)** व्यवहार-सिद्धिप्रवेश के लिये **(अस्मिन्)** इस **(भरे)** पालन करने योग्य संसार में **(नृतमम्)** अत्यन्त नायक **(मघवानम्)** बहुत धन के दान करने और **(वाजसातौ)** पदार्थों की विभाग विद्या में **(शृण्वन्तम्)** सुननेवाले न्यायाधीश दण्ड देनेवाले के सदृश **(उग्रम्)** तेजस्वीरूप और **(समत्सु)** संग्रामों **(घ्नन्तम्)** विद्यावान् शूरवीर के सदृश **(धनानाम्)** लक्ष्मियों को **(सञ्जितम्)** शीघ्र जीतता है जिससे उस **(इन्द्रम्)** बिजुली रूप अग्नि को जान कर **(वृत्राणि)** धनों को और **(शुनम्)** सुखकारक विज्ञान को **(हुवेम)** स्वीकार करें, वैसे इसको जानकर आप लोग प्राप्त हूजिये॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। यथार्थवक्ता विद्वान् लोग भूगर्भ, बिजुली, भूगोल, खगोल और सृष्टिस्थ पदार्थों की विद्या के उपदेश से पदार्थ-विद्याओं को प्राप्त करा के सबकी निरन्तर वृद्धि करें॥९॥

इस सूक्त में विद्वानों के गुणों का वर्णन, निन्दित जनों का निवारण, मित्रता करना, अज्ञान का त्याग कर, विद्या की प्राप्ति की इच्छा करना इत्यादि विषय वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, यह समझना चाहिये॥

यह ऋग्वेद संहिता में तृतीय अष्टक में दूसरा अध्याय छब्बीसवां वर्ग और तृतीय मण्डल में उन्तालीसवां सूक्त समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ ऋक्संहितायां तृतीयाष्टके तृतीयाऽध्यायारम्भः॥

ओं विश्वा॑नि देव सवितर्दुरि॒तानि॒ परा॑ सुव। यद्भ॒द्रं तन्न॒ आ सु॑व॥ ऋ०५.८२.५॥

अथ नवर्चस्य चत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। १-४। ६-९ गायत्री। ५ निचृद्गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथ राजप्रजाविषयमाह॥

अथ तृतीयाष्टक के तृतीयाध्याय का आरम्भ तथा तृतीय मण्डल में नव ऋचावाले चालीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में राजा-प्रजा के विषय को कहते हैं॥

इन्द्र॑ त्वा वृष॒भं व॒यं सु॒ते सोमे॑ हवामहे। स पा॑हि॒ मध्वो॒ अन्ध॑सः॥ १॥

इन्द्र॑। त्वा॒। वृ॒ष॒भम्। व॒यम्। सु॒ते। सोमे॑। ह॒वा॒म॒हे॒। सः। पा॒हि॒। मध्वः॑। अन्ध॑सः॥ १॥

पदार्थः- **(इन्द्र)** परमैश्वर्य्यप्रद! **(त्वा)** त्वाम् **(वृषभम्)** बलिष्ठम् **(वयम्)** **(सुते)** निष्पन्ने **(सोमे)** ऐश्वर्य्ये ओषधिगणे वा **(हवामहे)** **(सः)** **(पाहि)** रक्ष **(मध्वः)** मधुरादिगुणयुक्तस्य **(अन्धसः)** अन्नादेः॥ १॥

अन्वयः-हे इन्द्र! वयं मध्वोऽन्धसः सुते सोमे यं वृषभं त्वा हवामहे स त्वमस्मान् पाहि॥ १॥

भावार्थः-ये प्रजाजना राजानं हृदयेन सत्कृत्याऽस्मा ऐश्वर्य्यं प्रयच्छेयुस्तान् राजा स्वात्मवद्वैद्य ओषधै रोगिणमिव रक्षेत्॥ १॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य के देनेवाले! **(वयम्)** हम लोग **(मध्वः)** मधुर आदि गुणों से युक्त **(अन्धसः)** अन्न आदि के **(सुते)** उत्पन्न **(सोमे)** ऐश्वर्य्य वा ओषधियों के समूह में जिस **(वृषभम्)** बलिष्ठ **(त्वा)** आपको **(हवामहे)** पुकारें **(सः)** वह आप हम लोगों की **(पाहि)** रक्षा कीजिये॥ १॥

भावार्थः-जो प्रजाजन राजा का हृदय से सत्कार करके इस राजा के लिये ऐश्वर्य्य देवें, उनकी राजा अपने आत्मा के सदृश वा जैसे वैद्यजन ओषधियों से रोगी की रक्षा करता है, वैसे रक्षा करे॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्र॑ क्रतु॒विदं॑ सु॒तं सोमं॑ हर्य पुरुष्टुत। पिबा वृ॑षस्व॒ तातृ॑पिम्॥ २॥

इन्द्र॑। क्र॒तु॒ऽविद॑म्। सु॒तम्। सोम॑म्। ह॒र्य॒। पु॒रु॒ऽस्तु॒त॒। पिब॑। आ। वृ॒ष॒स्व॒। तातृ॑पिम्॥ २॥

पदार्थः-(**इन्द्र**) विद्यैश्वर्य्यमिच्छुक! (**क्रतुविदम्**) क्रतुः प्रज्ञा तां विन्दति येन तम् (**सुतम्**) सुसंस्कारैर्निष्पादितम् (**सोमम्**) ओषधिगणम् (**हर्य्य**) कामयस्व (**पुरुष्टुत**) बहुभिः प्रशंसित (**पिब**) (**आ**) (**वृषस्व**) वृष इव बलिष्ठो भव (**तातृपिम्**) अतिशयेन तृप्तिकरम्॥२॥

अन्वयः-हे पुरुष्टुतेन्द्र! त्वं तातृपिं क्रतुविदं सुतं सोमं हर्य्य पिब तेनाऽऽवृषस्व॥२॥

भावार्थः-हे राजन्! भवान् प्रज्ञावर्द्धकं भोजनं पानं च कृत्वा तृप्तो भूत्वा बलारोग्यबुद्धिविनयान् वर्द्धय॥२॥

पदार्थः-(**पुरुष्टुत**) बहुतों से प्रशंसित (**इन्द्र**) विद्या और ऐश्वर्य की इच्छा करनेवाले! आप (**तातृपिम्**) अत्यन्त तृप्ति करने और (**क्रतुविदम्**) यज्ञ के सिद्ध करनेवाले और (**सुतम्**) उत्तम संस्कारों से उत्पन्न (**सोमम्**) ओषधियों के समूह की (**हर्य्य**) कामना और (**पिब**) पान करो, उनसे (**आ, वृषस्व**) बल के सदृश बलिष्ठ होओ॥२॥

भावार्थः-हे राजन्! आप बुद्धि के बढ़ानेवाले खाने तथा पीने योग्य वस्तु का भोजन और पान कर तृप्त होकर बल, आरोग्य, बुद्धि और नम्रता को बढ़ाइये॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्र प्र णो धितावानं यज्ञं विश्वेभिर्देवेभिः। तिर स्तवान विश्पते॥३॥

इन्द्र। प्र। नः। धितऽवानम्। यज्ञम्। विश्वेभिः। देवेभिः। तिर। स्तवान। विश्पते॥३॥

पदार्थः-(**इन्द्र**) दुष्टानां विदारक (**प्र**) (**नः**) अस्माकम् (**धितावानम्**) धितो धृतो वानः संविभागो येन तम् (**यज्ञम्**) विद्याविनयाभ्यां सङ्गतं पालनाख्यम् (**विश्वेभिः**) सर्वैः (**देवेभिः**) धार्मिकैः सभ्यैर्विद्वद्भिः सह (**तिर**) प्लवदुःखात्पारं गच्छ (**स्तवान**) यः सत्यं स्तौति तत्सम्बुद्धौ (**विश्पते**) प्रजापालक॥३॥

अन्वयः-हे विश्पते स्तवानेन्द्र! त्वं विश्वेभिर्देवेभिः सह नो धितावानं यज्ञं प्र तिर॥३॥

भावार्थः-प्रजाजनै राजैवमुपदेष्टव्यो भवान् नोऽस्माकं रक्षको भवैवमाज्ञापय भवतः सर्वे श्रेष्ठमध्यमकनिष्ठा भृत्याधर्मेणाऽस्मान् सततं रक्षन्त्विति॥३॥

पदार्थः-हे (**विश्पते**) प्रजा का पालन (**स्तवान**) सत्य की स्तुति और (**इन्द्र**) दुष्टों का नाश करनेवाले! आप (**विश्वेभिः**) सम्पूर्ण (**देवेभिः**) धार्मिक श्रेष्ठ विद्वानों के साथ (**नः**) हम लोगों के (**धितावानम्**) धारण किया है विभाग जिससे उस (**यज्ञम्**) विद्या और विनय से सङ्गत पालन करने रूप कर्म को (**प्र, तिर**) पार हो समाप्त करो अर्थात् उक्त कर्म से दुःख से पार पहुँचो॥३॥

भावार्थः-प्रजाजनों को चाहिये कि राजा को इस प्रकार का उपदेश देवें कि आप हम लोगों के रक्षक हूजिये और ऐसी आज्ञा दीजिये कि आपके सब श्रेष्ठ, मध्यम, कनिष्ठ कर्मचारी लोग धर्मपूर्वक हम लोगों की निरन्तर रक्षा करें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्र॒ सोमाः॑ सु॒ता इ॒मे तव॒ प्र य॑न्ति सत्पते। क्षयं॑ च॒न्द्रास॒ इन्द॑वः॥४॥

इन्द्र॑। सोमाः॑। सु॒ताः। इ॒मे। तव॑। प्र। य॒न्ति॒। स॒त्ऽप॒ते॒। क्षय॑म्। च॒न्द्रासः॑। इन्द॑वः॥४॥

पदार्थः-(**इन्द्र**) सकलौषधिविद्यावित् (**सोमाः**) ओषध्यादयः पदार्थाः (**सुताः**) सुविचारेणाऽभिसंस्कृताः (**इमे**) (**तव**) (**प्र**) (**यन्ति**) प्राप्नुवन्ति (**सत्पते**) सतां रक्षक (**क्षयम्**) निवासस्थानम् (**चन्द्रासः**) आह्लादकराः (**इन्दवः**) सार्द्राः॥४॥

अन्वयः-हे सत्पते इन्द्र राजन्! य इमे चन्द्रास इन्दवः सुताः सोमास्तव क्षयं प्र यन्ति ताँस्त्वं सेवस्व॥४॥

भावार्थः-हे राजन्! यावान् राज्यादंशो भवता गृहीतव्यस्तावन्तं गृहीत्वा भुङ्क्ष्व नाऽधिकं न न्यूनमेवं कृतेन न कदाचिद्भवतः क्षतिर्भविष्यति॥४॥

पदार्थः-हे (**सत्पते**) सत्पुरुषों के रक्षा करने और (**इन्द्र**) सम्पूर्ण ओषधियों की विद्या के जाननेवाले राजन्! जो (**इमे**) ये (**चन्द्रासः**) आनन्दकारक (**इन्दवः**) गीले (**सुताः**) उत्तम प्रकार से पाक आदि संस्कार से युक्त (**सोमाः**) ओषधी आदि पदार्थ (**तव**) आपके (**क्षयम्**) रहने के स्थान को (**प्र, यन्ति**) प्राप्त होते हैं, उनका आप सेवन करो॥४॥

भावार्थः-हे राजन्! जितना आपको राज्य का भाग लेना चाहिये उतना ही ग्रहण कर भोग करिये, न अधिक न न्यून, ऐसा करने से कभी नहीं आपकी हानि होगी॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

द॒धि॒ष्वा ज॒ठरे॑ सु॒तं सोम॑मिन्द्र॒ वरे॑ण्यम्। तव॑ द्यु॒क्षास॒ इन्द॑वः॥५॥१॥

द॒धि॒ष्व। ज॒ठरे॑। सु॒तम्। सोम॑म्। इ॒न्द्र॒। वरे॑ण्यम्। तव॑। द्यु॒क्षासः॑। इन्द॑वः॥५॥

पदार्थः-(**दधिष्व**) धरस्व। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**जठरे**) जायते सुखं यस्मात्तस्मिन्नुदरे (**सुतम्**) सुसंस्कृतम् (**सोमम्**) महौषधिविशिष्टमन्नम् (**इन्द्र**) पूर्णायुःकामुक (**वरेण्यम्**) स्वीकर्त्तुं भोक्तुमर्हम् (**तव**) (**द्युक्षासः**) दिवि प्रकाशे क्षियन्ति निवासयन्ति ते (**इन्दवः**) सस्नेहाः॥५॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ये तव द्युक्षासः इन्दवः स्युस्तेषां सकाशाद्वरेण्यं सुतं सोमं जठरे त्वं दधिष्व॥५॥

भावार्थः-राजादिभिर्मनुष्यैः सर्वेषां पदार्थानां मध्यात्त एव पदार्था भोक्तव्याः पेयाश्च ये प्रज्ञायुर्बलानि वर्धयेयुः॥५॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** पूर्ण अवस्था की कामना करनेवाले! जो **(तव)** आपके **(द्युक्षासः)** प्रकाश में रहने **(इन्दवः)** और स्नेह करनेवाले होवें उनके समीप से **(वरेण्यम्)** भोग करने योग्य **(सुतम्)** उत्तम प्रकार बनाया **(सोमम्)** श्रेष्ठ औषधियों से युक्त अन्न को **(जठरे)** उत्पन्न हो सुख जिसमें उस पेट में आप **(दधिष्व)** धरो॥५॥

भावार्थः-राजा आदि मनुष्यों को सम्पूर्ण पदार्थों के मध्य से उन्हीं पदार्थों का खान और पान करना चाहिये कि जो बुद्धि, अवस्था और बल को निरन्तर बढ़ावें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

गिर्वणः पाहि नः सुतं मधोर्धाराभिरज्यसे। इन्द्र त्वादातमिद्यशः॥६॥

गिर्वणः। पाहि। नः। सुतम्। मधोः। धाराभिः। अज्यसे। इन्द्र। त्वाऽदातम्। इत्। यशः॥६॥

पदार्थः-**(गिर्वणः)** यो गीर्भिर्वन्यते याच्यते तत्सम्बुद्धौ **(पाहि)** **(नः)** अस्मान् **(सुतम्)** **(मधोः)** मधुरादिगुणयुक्तस्य **(धाराभिः)** प्रवाहैः **(अज्यसे)** प्राप्यसे **(इन्द्र)** **(त्वादातम्)** त्वया गृहीतम् **(इत्)** एव **(यशः)** आरोग्यप्रदमुदकमन्नं धनं वा। **यश इति उदकनामसु पठितम्।** (निघं०१.१२) **अन्ननामसु च।** २.७॥**धननामसु च।** (निघं०२.१०)॥६॥

अन्वयः-हे गिर्वण इन्द्र! यत्त्वादातं यशोऽस्ति तेन मधोर्धाराभिश्च सह सुतं सोमं प्राप्तोऽस्माभिरज्यसे स त्वमस्मान् पाहि॥६॥

भावार्थः-हे राजन्! यावत्पेयमन्नं धनं चास्मद्भवता स्वीकृतं तेन स्वस्याऽस्माकं च रक्षा विधेहि॥६॥

पदार्थः-हे **(गिर्वणः)** वाणियों से याचना किये जाते **(इन्द्र)** तेजस्विन्! जो **(त्वादातम्)** आपसे ग्रहण किया हुआ **(इत्)** ही **(यशः)** रोगनाशक जल, अन्न वा धन है, उससे और **(मधोः)** मधुर आदि गुणों से युक्त वस्तु के **(धाराभिः)** प्रवाहों के साथ **(सुतम्)** उत्पन्न हुए **(सोमम्)** ओषधि आदि पदार्थों को पाये हुए हम लोगों से जाने जाते हो वह आप **(नः)** हमारी **(पाहि)** रक्षा कीजिये॥६॥

भावार्थः-हे राजन्! जितना पीने योग्य वस्तु अन्न और धन हम लोगों का आपने स्वीकार किया है, उससे अपनी और हम लोगों की रक्षा कीजिये॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अ॒भि द्यु॒म्नानि॑ व॒निन॒ इन्द्रं॑ सचन्ते॒ अक्षि॑ता। पी॒त्वी सोम॑स्य वावृधे॥७॥

अ॒भि। द्यु॒म्नानि॑। व॒निनः॑। इन्द्र॑म्। स॒च॒न्ते॒। अक्षि॑ता। पी॒त्वी। सोम॑स्य। व॒वृ॒धे॒॥७॥

पदार्थः-(**अभि**) आभिमुख्ये (**द्युम्नानि**) यशांसि जलान्यन्नानि धनानि वा (**वनिनः**) याच्ञावन्तः (**इन्द्रम्**) ऐश्वर्य्यकरम् (**सचन्ते**) सम्बध्नन्ति (**अक्षिता**) क्षयरहितानि (**पीत्वी**) (**सोमस्य**) ओषध्यैश्वर्य्यस्य योगेन (**वावृधे**) वर्धते॥७॥

अन्वयः-ये राजन्! यथा वनिनोऽक्षिता द्युम्नान्यभीन्द्रं सचन्ते यथाऽहं सोमस्य पीत्वी वावृधे तथा त्वमाचर॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। सर्वैर्मनुष्यैर्धर्मयुक्तेन परमपुरुषार्थेनाऽक्षयमैश्वर्यं प्राप्य युक्ताऽऽहारविहारेणाऽऽरोग्यं सम्पाद्य च जगति सुकीर्त्तिर्विस्तारणीया॥७॥

पदार्थः-हे राजन्! जैसे (**वनिनः**) मांगनेवाले जन (**अक्षिता**) नाश से रहित (**द्युम्नानि**) यशों के (**अभि**) सम्मुख (**इन्द्रम्**) ऐश्वर्य करनेवाले का (**सचन्ते**) सम्बन्ध होते हैं और जैसे मैं (**सोमस्य**) ओषधिरूप ऐश्वर्य्य के योग से (**पीत्वी**) पान करके (**वावृधे**) वृद्धि करूं, वैसे आप करो॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। सब मनुष्यों को चाहिये कि धर्म्मयुक्त अत्यन्त पुरुषार्थ से नहीं नाश होने योग्य ऐश्वर्य्य को प्राप्त होकर नियमित भोजन और विहार से आरोग्य को उत्पन्न करके संसार में उत्तम कीर्ति का विस्तार करें॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अ॒र्वा॒वतो॑ न॒ आ ग॑हि परा॒वत॑श्च वृत्रहन्। इ॒मा जु॑षस्व नो॒ गिरः॑॥८॥

अ॒र्वा॒ऽवतः॑। नः॒। आ। ग॒हि॒। प॒रा॒ऽवतः॑। च॒। वृ॒त्र॒ऽह॒न्। इ॒माः। जु॒ष॒स्व॒। नः॒। गिरः॑॥८॥

पदार्थः-(**अर्वावतः**) प्रशस्ता अश्वा विद्यन्ते येषाम् (**नः**) अस्मान् (**आ**) समन्तात् (**गहि**) प्राप्नुहि (**परावतः**) दूरदेशात् (**च**) समीपात् (**वृत्रहन्**) यो वृत्रं धनं हन्ति प्राप्नोति तत्सम्बुद्धौ (**इमाः**) (**जुषस्व**) (**नः**) अस्माकम् (**गिरः**) वाचः॥८॥

अन्वयः-हे वृत्रहँस्त्वमर्वावतो नोऽस्मान् परावतश्चागहि न इमा गिरो जुषस्व॥८॥

भावार्थः-हे राजन्! दूरे समीपे वा स्थिता सेनाङ्गयुक्ता वीरा वयं यदा भवन्तमाह्वयेम तदैव श्रीमताऽऽगन्तव्यमस्माकं वचनानि श्रोतव्यानि च यथार्थो न्यायश्च कर्त्तव्यः॥८॥

पदार्थः-हे (**वृत्रहन्**) धन को प्राप्त होनेवाले! आप (**अर्वावतः**) प्रशंसा करने योग्य घोड़ों से युक्त (**नः**) हम लोगों को (**परावतः**) दूर देश से (**च**) और समीप से (**आ**) सब ओर से (**गहि**) प्राप्त

हूजिये और **(नः)** हम लोगों की **(इमाः)** इन **(गिरः)** वाणियों का **(जुषस्व)** सेवन करो॥८॥

भावार्थः-हे राजन्! दूर वा समीप में स्थित सेना के अङ्ग शस्त्र आदि से युक्त वीर हम लोग जब आपको पुकारें, उसी समय आपको आना चाहिये तथा हम लोगों के वचना सुनना और यथार्थ न्याय करना चाहिये॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यदन्तरा परावतमर्वावतं च हूयसे। इन्द्रेह तत आ गहि॥९॥२॥

यत्। अन्तरा। पराऽवतम्। अर्वाऽवतम्। च। हूयसे। इन्द्र। इह। ततः। आ। गहि॥९॥

पदार्थः-**(यत्)** यः **(अन्तरा)** व्यवधाने **(परावतम्)** दूरदेशस्थम् **(अर्वावतम्)** प्राप्तसामीप्यम् **(च)** **(हूयसे)** स्तूयसे **(इन्द्र)** परमैश्वर्य्यप्रद **(इह)** अस्मिन् राज्ये **(ततः)** **(आ)** **(गहि)** आगच्छ॥९॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वमिह यद्यमन्तरा परावतमर्वावतं चाह्वयति तैश्च हूयसे ततोऽस्मानागहि॥९॥

भावार्थः-राजा दूरदेशे प्रजासेनाऽमात्यजनोऽन्यत्रापि वर्त्तेत तथापि भृत्यद्वारा सर्वैः सह समीपस्थो भवेदिति॥९॥

अत्र राजाप्रजागुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चत्वारिंशत्तमं सूक्तं द्वितीयो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य के दाता! आप **(इह)** इस राज्य में **(यत्)** जो **(अन्तरा)** व्यवधान अर्थात् मध्य में **(परावतम्)** दूर देश और **(अर्वावतम्)** समीप में वर्त्तमान को **(च)** और पुकारते हैं, उन लोगों से **(हूयसे)** पुकारे जाते हो **(ततः)** इससे हम लोगों को **(आ, गहि)** प्राप्त हूजिये॥९॥

भावार्थः-राजा दूर देश में हो और प्रजा, सेना और मन्त्री जन अन्यत्र भी वर्त्तमान हों, तथापि दूतों के द्वारा सब लोगों के साथ में समीप वर्त्तमान हो सके॥९॥

इस सूक्त में राजा और प्रजा के गुण वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह चालीसवां सूक्त और दूसरा वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ नवर्चस्यैकाधिकचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। १ यवमध्या गायत्री। २, ३, ५, ९ गायत्री। ४, ७, ८ निचृत् गायत्री। ६ विराट् गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथाग्निविषयमाह॥

अब नव ऋचावाले एकतालीसवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में अग्नि के विषय को कहते हैं॥

आ तू न इन्द्र मद्र्यग्घुवानः सोमपीतये। हरिभ्यां याह्यद्रिवः॥१॥

आ। तु। नः। इन्द्र। मद्र्यक्। हुवानः। सोमऽपीतये। हरिऽभ्याम्। याहि। अद्रिऽवः॥१॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**तु**)। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। (**नः**) अस्मान् (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्यकारक (**मद्र्यक्**) मामञ्चतीति मद्र्यक् (**हुवानः**) आहूतः (**सोमपीतये**) सोमः पीतो यस्मिंस्तस्मै (**हरिभ्याम्**) अश्वाभ्याम् (**याहि**) (**अद्रिवः**) मेघवान् सूर्य्य इव वर्त्तमान॥१॥

अन्वयः-हे अद्रिव इन्द्र! त्वं सोमपीतये मद्र्यग्घुवानो हरिभ्यां नोऽस्मानायाहि वयन्तु भवन्तमायाम॥१॥

भावार्थः-मनुष्यैरुत्सवेषु परस्परेषामाह्वानं कृत्वाऽन्नपानादिभिः सत्कारः कर्त्तव्यः॥१॥

पदार्थः-हे (**अद्रिवः**) मेघों से युक्त सूर्य्य के तुल्य वर्त्तमान (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्य के करनेवाले! आप (**सोमपीतये**) सोमलतारूप औषध का रस पीया जावे जिस कर्म में उसके लिये (**मद्र्यक्**) मेरी पूजा अर्थात् उपासना करनेवाला (**हुवानः**) पुकारा गया जन (**हरिभ्याम्**) घोड़ों से (**नः**) हम लोगों को (**आ**) सब प्रकार (**याहि**) प्राप्त हो और हम लोग (**तु**) शीघ्र आपको प्राप्त होवें॥१॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि शुभ कार्य्य आदि के उत्सवों में परस्पर एक-दूसरे का आह्वान करके अन्न और जल आदिकों से सत्कार करें॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सत्तो होता न ऋत्वियस्तिस्तिरे बर्हिरानुषक्। अयुज्रन् प्रातरद्रयः॥२॥

सत्तः। होता। नः। ऋत्वियः। तिस्तिरे। बर्हिः। आनुषक्। अयुज्रन्। प्रातः। अद्रयः॥२॥

पदार्थः-(**सत्तः**) निषण्णः (**होता**) आदाता (**नः**) अस्मान् (**ऋत्वियः**) य ऋतुमर्हति सः (**तिस्तिरे**) स्तृणात्याच्छादयति (**बर्हिः**) उत्तममासनं वस्तु वा (**आनुषक्**) य आनुकूल्यं सचति समवैति सः (**अयुज्रन्**) युञ्जन्ति (**प्रातः**) (**अद्रयः**) मेघाः॥२॥

अन्वयः-यः सत्तो होतर्त्विय आनुषक सन्नोऽस्मान् बर्हिरद्रयः प्रातरयुज्रन्निव तिस्तिरे ते क्रियायज्ञं कर्त्तुमर्हन्ति॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा प्रभातकालीना मेघाः सूर्य्यप्रकाशमाच्छाद्य छायां जनयन्ति तथैव क्रियाविदो जना वस्त्रादिपदार्थैः शरीराण्याच्छाद्याऽऽनुकूल्येन सुखं जनयन्ति॥२॥

पदार्थः-जो **(सत्तः)** बैठा हुआ **(होता)** ग्रहण करनेवाला और **(ऋत्वियः)** जो ऋतु को योग्य होता वा **(आनुषक्)** अनुकूलता के साथ मिलता ये **(नः)** हम लोगों के लिये **(बर्हिः)** उत्तम आसन वा वस्तु को **(अद्रयः)** मेघों के सदृश **(प्रातः)** प्रातःकाल में **(अयुज्रन्)** युक्त करते हैं और **(तिस्तिरे)** वस्त्रों से आच्छादन करते हैं, वे क्रियारूप यज्ञ करने को योग्य हैं॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे प्रभातकाल के मेघ सूर्य्य के प्रकाश का आच्छादन करके छाया को उत्पन्न करते हैं, वैसे ही क्रियाओं को जाननेवाले लोग वस्त्र आदि पदार्थों से शरीरों को ढाँप के अनुकूलता से सुख को उत्पन्न करते हैं॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इमा ब्रह्म ब्रह्मवाहः क्रियन्त आ बर्हिः सीद। वीहि शूर पुरोळाशम्॥३॥

इमा। ब्रह्म। ब्रह्मऽवाहः। क्रियन्ते। आ। बर्हिः। सीद। वीहि। शूर। पुरोळाशम्॥३॥

पदार्थः-**(इमा)** **(ब्रह्म)** धनम् **(ब्रह्मवाहः)** धनप्रापिकाः **(क्रियन्ते)** **(आ)** **(बर्हिः)** अन्तरिक्षम् **(सीद)** **(वीहि)** प्राप्नुहि **(शूर)** दुष्टानां हिंसक **(पुरोडाशम्)** विशेषसंस्कृतमन्नम्॥३॥

अन्वयः-हे शूर! या इमा ब्रह्मवाहः क्रियाः क्रियन्ते ताभिर्ब्रह्म वीहि बर्हिरासीद पुरोडाशं वीहि॥३॥

भावार्थः-मनुष्यैर्निष्फलाः क्रियाः कदाचिन्नैव कर्त्तव्याः। यया यया धर्मार्थकाममोक्षसिद्धिः स्यात्तां तां प्रयत्नेनानुतिष्ठन्तु॥३॥

पदार्थः-हे **(शूर)** दुष्टों के नाश करनेवाले! जो **(इमा)** ये **(ब्रह्मवाहः)** धनों को प्राप्त करानेवाली क्रियायें **(क्रियन्ते)** की जाती हैं उनसे **(ब्रह्म)** धन को **(वीहि)** प्राप्त **(बर्हिः)** अन्तरिक्ष में **(आ, सीद)** वर्त्तमान और **(पुरोडाशम्)** उत्तम प्रकार संस्कारयुक्त अन्न को प्राप्त हो॥३॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि निष्फल क्रियाओं को कभी न करें। जिस-जिस क्रिया से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि हो, उस उसको प्रयत्न से करो॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

रारन्धि सवनेषु ण एषु स्तोमेषु वृत्रहन्। उक्थेष्विन्द्र गिर्वणः॥४॥

ररन्धि। सवनेषु। नः। एषु। स्तोमेषु। वृत्रऽहन्। उक्थेषु। इन्द्र। गिर्वणः॥४॥

पदार्थः-(**रारन्धि**) रमस्व रमय वा (**सवनेषु**) ऐश्वर्येषु (**नः**) अस्मान् (**एषु**) (**स्तोमेषु**) प्रशंसनीयेषु (**वृत्रहन्**) प्राप्तधन (**उक्थेषु**) वक्तुमर्हेषु (**इन्द्र**) परमैश्वर्य्यप्रद (**गिर्वणः**) यो गीर्भिर्वन्यते याच्यते तत्सम्बुद्धौ॥४॥

अन्वयः-हे गिर्वणो वृत्रहन्निन्द्र! त्वं स्तोमेषूक्थेषु सवनेषु नोऽस्मान् रारन्धि॥४॥

भावार्थः-दरिद्रैर्धनाढया: सदैव याचनीया यतस्ते सुखमाप्नुयुः॥४॥

पदार्थः-हे (**गिर्वणः**) वाणियों से जिससे याचना करें वह (**वृत्रहन्**) धनों से युक्त (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य के देनेवाले! आप (**स्तोमेषु**) प्रशंसा करने और (**उक्थेषु**) कहने के योग्य (**सवनेषु**) ऐश्वर्यों में (**नः**) हम लोगों को (**रारन्धि**) रमाओ॥४॥

भावार्थः-दरिद्र लोगों को चाहिये कि धनयुक्त पुरुषों से सदा याचना करें, जिससे कि वे दरिद्र लोग सुख को प्राप्त होवें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मतयः सोमपामुरुं रिहन्ति शवसस्पतिम्। इन्द्रं वत्सं न मातरः॥५॥३॥

मतयः। सोमऽपाम्। उरुम्। रिहन्ति। शवसः। पतिम्। इन्द्रम्। वत्सम्। न। मातरः॥५॥३॥

पदार्थः-(**मतयः**) प्रज्ञायुक्ता मनुष्याः (**सोमपाम्**) ऐश्वर्य्यरक्षकम् (**उरुम्**) बह्वैश्वर्य्यम् (**रिहन्ति**) लिहन्ति (**शवसः**) बलस्य (**पतिम्**) पालकम् (**इन्द्रम्**) ऐश्वर्य्ययुक्तम् (**वत्सम्**) (**न**) इव (**मातरः**) गावः॥५॥

अन्वयः-ये मतयः शवसस्पतिमुरुं सोमपामिन्द्रं मातरो वत्सं न रिहन्ति ते सुखं लभन्ते॥५॥

भावार्थः-यथा गावो वात्सल्यभावमाश्रित्य वत्सेषूत्तमं प्रेम दधति तथैव राजादयोऽध्यक्षाः सेनाः वात्सल्यभावेन रक्षन्तु॥५॥

पदार्थः-जो (**मतयः**) उत्तम बुद्धि से युक्त मनुष्य लोग (**शवसः**) बल के (**पतिम्**) पालन करनेवाले (**उरुम्**) बहुत ऐश्वर्य से पूर्ण (**सोमपाम्**) ऐश्वर्य्य के रक्षक (**इन्द्रम्**) ऐश्वर्य्य से युक्त पुरुष (**मातरः**) गौवें (**वत्सम्**) बछड़े को (**न**) जैसे (**रिहन्ति**) चाटती वैसे मिलते हैं, वे सुख को प्राप्त होते हैं॥५॥

भावार्थः-जैसे गौवें प्रेमभाव का आश्रयण करके बछड़ों में प्रेम धारण करती हैं, वैसे ही राजा आदि अध्यक्ष पुरुष सेनाओं की प्रजाओं के प्रेमभाव से रक्षा करें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स मन्दस्वा ह्यन्धसो राधसे तन्वा महे। न स्तोतारं निदे करः॥६॥

सः। मन्दस्व। हि। अन्धसः। राधसे। तन्वा। महे। न। स्तोतारम्। निदे। करः॥६॥

पदार्थः-(**सः**) (**मन्दस्व**) आनन्द। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**हि**) यतः (**अन्धसः**) अन्नादेः (**राधसे**) संसिद्धिकराय धनाय (**तन्वा**) शरीरेण (**महे**) महते (**न**) निषेधे (**स्तोतारम्**) विद्वांसम् (**निदे**) निन्दनाय (**करः**) कुर्यात्॥६॥

अन्वयः-हे विद्वन्! हि यतस्त्वं स्तोतारं निदे न करस्तस्मात् स त्वं तन्वाऽन्धसो महे राधस मन्दस्व॥६॥

भावार्थः-ये मनुष्या स्तुत्यर्हान् निन्दितान् न कुर्वन्ति ते महदैश्वर्य्यं प्राप्य शरीरेणात्मना च सदैव सुखयन्ति॥६॥

पदार्थः-हे विद्वान् पुरुष! (**हि**) जिससे आप (**स्तोतारम्**) विद्वान् पुरुष की (**निदे**) निन्दा करने के लिये (**न**) नहीं (**करः**) करें इससे (**सः**) वह आप (**तन्वा**) शरीर से (**अन्धसः**) अन्न आदि की (**महे**) बड़ी (**राधसे**) सिद्धि करनेवाले धन के लिये (**मन्दस्व**) आनन्द करो॥६॥

भावार्थः-जो मनुष्य स्तुति करने योग्य पुरुषों की निन्दा नहीं करते, वे बड़े ऐश्वर्य को प्राप्त होकर शरीर और आत्मा से सदा ही सुखी होते हैं॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वयमिन्द्र त्वायवो हविष्मन्तो जरामहे। उत त्वमस्मयुर्वसो॥७॥

वयम्। इन्द्र। त्वाऽयवः। हविष्मन्तः। जरामहे। उत। त्वम्। अस्मऽयुः। वसो इति॥७॥

पदार्थः-(**वयम्**) (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्ययुक्त (**त्वायवः**) त्वत्कामयमानाः (**हविष्मन्तः**) बहूनि हवींषि दातव्यानि वस्तूनि विद्यन्ते येषान्ते (**जरामहे**) प्रशंसेम (**उत**) अपि (**त्वम्**) (**अस्मयुः**) अस्मान् कामयमानः (**वसो**) वासहेतो॥७॥

अन्वयः-हे वसो इन्द्र! हविष्मन्तो त्वायवो वयं त्वां जरामहे उतापि त्वमस्मयुः सन्नस्मान् स्तुहि॥

भावार्थः-ये मनुष्याः सर्वेषां गुणानां प्रशंसां दोषाणां निन्दां कुर्य्युस्ते विवेकिनो भूत्वा गुणान् ग्रहीतुं दोषांस्त्यक्तुं समर्था भवन्ति॥७॥

पदार्थः-हे (**वसो**) निवास के कारण (**इन्द्र**) ऐश्वर्य से और (**हविष्मन्तः**) बहुत देने योग्य वस्तुओं से युक्त! (**त्वायवः**) आपकी कामना करते हुए (**वयम्**) हम लोग आपकी (**जरामहे**) प्रशंसा करें (**उत**) और भी (**त्वम्**) आप (**अस्मयुः**) हम लोगों की कामना करते हुए हम लोगों की प्रशंसा करो॥७॥

भावार्थः-जो मनुष्य सब लोगों के गुणों की प्रशंसा और दोषों की निन्दा करें, वे विवेकी अर्थात् विचारशील होके गुणों के ग्रहण करने और दोषों के त्याग करने को समर्थ होते हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मारे अस्मद्वि मुमुचो हरिप्रियार्वाङ् याहि। इन्द्र स्वधावो मत्स्वेह॥८॥

मा। आरे। अस्मत्। वि। मुमुचः। हरिऽप्रिय। अर्वाङ्। याहि। इन्द्र। स्वधाऽवः। मत्स्व। इह॥८॥

पदार्थः-(**मा**) निषेधे (**आरे**) समीपे दूरे वा (**अस्मत्**) (**वि**) (**मुमुचः**) मोचयेः (**हरिप्रिय**) यो हरीन् हरणशीलान् प्रीणाति तत्सम्बुद्धौ (**अर्वाङ्**) अर्वाचीनं देशं गच्छन् (**याहि**) गच्छ (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्ययुक्त (**स्वधावः**) बह्वन्नादिप्राप्त (**मत्स्व**) आनन्द (**इह**) अस्मिञ्जगति॥८॥

अन्वयः-हे हरिप्रियेन्द्र स्वधावस्त्वमस्मदारे मा वि मुमुचोऽर्वाङ् याहीह मत्स्व॥८॥

भावार्थः-हे मित्रजना! यूयमस्मद्दूरे समीपे वा स्थिताः सन्तोऽस्माकं प्रियमाचरत प्रीतिं मा त्यजत वयमपि युष्मासु तथा वर्त्तेम ह्येवं परस्परं वर्त्तमानं कृत्वेह सुखिनो भवेम॥८॥

पदार्थः-हे (**हरिप्रिय**) हरनेवालों को प्रसन्न करनेवाले (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्य से युक्त (**स्वधावः**) बहुत अन्नादि वस्तुओं से पूर्ण! आप (**अस्मत्**) हम लोगों से (**आरे**) समीप वा दूर देश में (**मा**) मत (**वि, मुमुचः**) त्याग करिये (**अर्वाङ्**) नीचे के स्थान को जाते हुए (**याहि**) जाइये और (**इह**) इस संसार में (**मत्स्व**) आनन्द करिये॥८॥

भावार्थः-हे मित्र जनो! आप लोग हम लोगों से दूर वा समीप स्थान में वर्त्तमान हुए हम लोगों का कल्याण करो और प्रीति का त्याग मत करो और हम लोग भी आप लोगों में ऐसे ही वर्त्ताव करें, इस प्रकार परस्पर वर्त्ताव करके इस संसार में सुखी होवें॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अर्वाञ्चं त्वा सुखे रथे वहतामिन्द्र केशिना। घृतस्नू बर्हिरासदे॥९॥४॥

अर्वाञ्चम्। त्वा। सुऽखे। रथे। वहताम्। इन्द्र। केशिना। घृतस्नू इति घृतऽस्नू। बर्हिः। आऽसदे॥९॥४।

पदार्थः-(**अर्वाञ्चम्**) योऽर्वागधोऽञ्चति गच्छति तम् (**त्वा**) त्वाम् (**सुखे**) सुखकारके (**रथे**) रमणीये याने (**वहताम्**) (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्ययुक्त (**केशिना**) बहवः केशा विद्यन्ते ययोस्तौ (**घृतस्नू**) यौ घृतमुदकं स्नातः शोधयतस्तौ (**बर्हिः**) अन्तरिक्षे (**आसदे**) आसादनीयाय॥९॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यौ घृतस्नू केशिनाऽर्वाञ्चं त्वा सुखे रथे बर्हिरासदे वहतां तौ त्वं जानीहि॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्या! द्वाभ्यामग्निभ्यां चालितेषु यानेषु स्थित्वाऽध ऊर्ध्वं तिर्य्यग्देशं च गत्वाऽऽगच्छत॥९॥

अत्र विद्वन्मनुष्यगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इत्येकाधिकचत्वारिंशत्तमं सूक्तं [चतुर्थो] ४ वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** ऐश्वर्य्य से युक्त! जो **(घृतस्नू)** घृत अर्थात् जल को पवित्र करनेवाले **(केशिना)** बहुत केशों से युक्त **(अर्वाञ्चम्)** नीचे जानेवाले **(त्वा)** आपको **(सुखे)** सुख करानेवाले **(रथे)** सुन्दर वाहन और **(बर्हिः)** अन्तरिक्ष में **(आसदे)** वर्त्तमान होने के लिये **(वहताम्)** पहुँचावें, उनको आप जानिये॥९॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! दो अग्नियों से चलाये हुए वाहनों पर स्थित होकर नीचे, ऊपर और तिरछे देश में जाकर आइये॥९॥

इस सूक्त में विद्वान्-मनुष्यों के गुण वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, ऐसा जानना चाहिये॥

यह इकतालीसवां सूक्त और चौथा वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ उप नः सुतमित्यस्य नवर्चस्य द्विचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ४-७ गायत्री। २, ३, ८, ९ निचृद्गायत्रीच्छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब नव ऋचावाले बयालीसवें सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में विद्वान् के गुणों को कहते हैं॥

उप॑ नः सु॒तमा ग॑हि॒ सोम॑मिन्द्र॒ गवा॑शिरम्। हरि॑भ्यां॒ यस्ते॑ अस्म॒युः॥१॥

उप॑। नः॒। सु॒तम्। आ। ग॒हि॒। सोम॑म्। इ॒न्द्र॒। गोऽआ॑शिरम्। हरि॑ऽभ्याम्। यः। ते॒। अ॒स्म॒ऽयुः॥१॥

पदार्थः-(**उप**) (**नः**) अस्माकम् (**सुतम्**) सुसाधितम् (**आ**) (**गहि**) समन्तात् प्राप्नुहि (**सोमम्**) ओषधिगणमिवैश्वर्य्यम् (**इन्द्र**) बह्वैश्वर्य्ययुक्त (**गवाशिरम्**) गावोऽश्नन्ति यं तम् (**हरिभ्याम्**) अश्वाभ्यां युक्तेन रथेन (**यः**) (**ते**) तव (**अस्मयुः**) आत्मनोऽस्मानिच्छुरिव॥१॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं हरिभ्यां युक्तेन रथेन यस्ते रथोऽस्मयुर्वर्त्तते तेन हरिभ्यां युक्तेन नः सुतं [गवाशिरम्] सोममुपागहि॥१॥

भावार्थः-त एव सर्वेषां सुहृदः सन्ति ये स्वैश्वर्येण सर्वानामन्त्र्य सत्कुर्वन्ति॥१॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य्ययुक्त! आप (**हरिभ्याम्**) घोड़ों से युक्त रथ से (**यः**) जो (**ते**) आपका वाहन (**अस्मयुः**) अपने को हम लोगों की इच्छा करता हुआ सा वर्त्तमान है, घोड़ों से युक्त उस रथ से (**नः**) हम लोगों के (**सुतम्**) उत्तम प्रकार सिद्ध (**गवाशिरम्**) किरणों से सेवन करने योग्य (**सोमम्**) ओषधिगणों के सदृश ऐश्वर्य्य को (**उप, आ, गहि**) समीप में सब प्रकार प्राप्त हूजिये॥१॥

भावार्थः-वे लोग ही सब लोगों के मित्र हैं कि जो लोग अपने ऐश्वर्य्य से सब लोगों को बुला कर सत्कार करते हैं॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तमि॑न्द्र॒ मद॒मा ग॑हि ब॒र्हि॒ष्ठां ग्राव॑भिः सु॒तम्। कु॒विन्न्व॑स्य तृ॒ष्णव॑ः॥२॥

तम्। इ॒न्द्र॒। मद॑म्। आ। ग॒हि॒। ब॒र्हिः॒ऽस्थाम्। ग्राव॑ऽभिः। सु॒तम्। कु॒वित्। नु। अ॒स्य॒। तृ॒ष्णव॑ः॥२॥

पदार्थः-(**तम्**) पूर्वोक्तम् (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्यमिच्छो (**मदम्**) आनन्दकरम् (**आ**) (**गहि**) सर्वतः प्राप्नुहि (**बर्हिष्ठाम्**) यो बर्हिष्यन्तरिक्षे तिष्ठति तम् (**ग्रावभिः**) मेघैः (**सुतम्**) निष्पन्नम् (**कुवित्**) महान् सन् (**नु**) सद्यः (**अस्य**) सोमस्य (**तृष्णवः**) ये तृप्यन्ति ते॥२॥

अन्वयः-हे इन्द्र! येऽस्य तृष्णवः सन्ति तैः कुवित्सन् तं ग्रावभिः सुतं मदं बर्हिष्ठां सोमं न्वागहि॥२॥

भावार्थ:-ये सोमलतादयो वर्षाभिरुत्पद्यन्ते रोगविनाशकत्वेन तृप्तिकरा भवन्ति सूक्ष्मांशैरन्तरिक्षं प्राप्य सर्वत्र प्रसरन्ति तान् युक्त्या संसेव्य सदाऽऽनन्दो भोक्तव्य:॥२॥

पदार्थ:-हे **(इन्द्र)** ऐश्वर्य्य की इच्छा करनेवाले! जो **(अस्य)** इस सोमलता की **(तृण्णव:)** तृप्ति करनेवाले हैं, उनसे **(कुवित्)** श्रेष्ठ होकर **(तम्)** उस पूर्वोक्त को **(ग्रावभि:)** मेघों से **(सुतम्)** उत्पन्न **(मदम्)** आनन्दकारक **(बर्हिष्ठाम्)** अन्तरिक्ष में वर्त्तमान होनेवाले ओषधिगणों के सदृश वर्त्तमान ऐश्वर्य को **(नु)** शीघ्र **(आ, गहि)** सब प्रकार प्राप्त हूजिये॥२॥

भावार्थ:-जो सोमलता आदि ओषधियां वृष्टियों से उत्पन्न होतीं, रोगविनाशक होने से तृप्तिकारक होती और सूक्ष्म अवयवों के द्वारा अन्तरिक्ष को प्राप्त होके सब स्थानों में फैलती हैं, उनका युक्ति से सेवन करके सदा आनन्द का भोग करना चाहिये॥२॥

अथ विद्वत्सत्कारविषयमाह॥

अब विद्वानों के सत्कार विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रमित्था गिरो ममाच्छागुरिषिता इत:। आवृते सोमपीतये॥३॥

इन्द्रम्। इत्था। गिर:। मम। अच्छ। अगु:। इषिता:। इत:। आऽवृते। सोमऽपीतये॥३॥

पदार्थ:-**(इन्द्रम्)** परमैश्वर्य्यवन्तम् **(इत्था)** अनेन प्रकारेण **(गिर:)** सुशिक्षिता वाच: **(मम)** **(अच्छ)** **(अगु:)** प्राप्नुवन्तु **(इषिता:)** प्रेरिता: **(इत:)** अस्मात् **(आवृते)** सर्वत आच्छादिते स्थानविशेषे **(सोमपीतये)** सोमस्य पानाय॥३॥

अन्वय:-हे मनुष्या! यथाऽऽवृते सोमपीतये ममेषिता गिर इत इन्द्रमच्छागुरित्था युष्माकमप्येनं प्राप्नुवन्तु॥३॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। विद्वांसोऽन्यान् प्रत्येवमुपदिशेयुर्वयं यानाहूय सत्कुर्य्याम यूयमपि तानेव सत्कुरुत॥३॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जैसे **(आवृते)** सब ओर से ढांपे हुए स्थान विशेष में **(सोमपीतये)** सोमलता के रस के पान करने के लिये **(मम)** मेरी **(इषिता:)** प्रेरणा की गई **(गिर:)** उत्तम प्रकार शिक्षित वाणियां **(इत:)** इससे **(इन्द्रम्)** अत्यन्त ऐश्वर्यवाले को **(अच्छ)** अच्छे प्रकार **(अगु:)** प्राप्त हों **(इत्था)** इस प्रकार से आप लोगों की भी वाणियां इसको प्राप्त हों॥३॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। विद्वान् लोग अन्य जनों के प्रति इस प्रकार से उपदेश देवें कि हम लोग जिनको बुला कर सत्कार करें, आप लोग भी उन्हीं का सत्कार करें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रं सोम॑स्य पी॒तये॒ स्तोमै॑रि॒ह ह॑वामहे। उ॒क्थेभि॑: कु॒विदा॒गम॑त्॥४॥

इन्द्र॑म्। सोम॑स्य। पी॒तये॑। स्तोमै॑:। इ॒ह। ह॒वा॒म॒हे॒। उ॒क्थेभि॑:। कु॒वित्। आ॒ऽगम॑त्॥४॥

पदार्थः-(**इन्द्रम्**) परमविद्यैश्वर्य्यम् (**सोमस्य**) सुसाधितमहौषधिरसस्य (**पीतये**) पानाय (**स्तोमैः**) प्रशंसावचनैः (**इह**) अस्मिन् संसारे (**हवामहे**) आह्वयामहे (**उक्थेभिः**) वक्तुमर्हैः (**कुवित्**) बहुवारम्। **कुविदिति बहुनामसु पठितम्।** (निघं०३.१) (**आगमत्**) आगच्छतु॥४॥

अन्वयः-हे विद्वन्! वयं स्तोमैरुक्थेभिः सोमस्य पीतये यमिन्द्रमिह हवामहे सोऽस्माकं समीपं कुविदागमत्॥४॥

भावार्थः-यद्यविद्वांसः प्रीत्या विदुष आह्वयेयुस्तदा ते तत्सन्निधिं बहुवारं गच्छन्तु॥४॥

पदार्थः-हे विद्वज्जन! हम लोग (**स्तोमैः**) प्रशंसा के वचन जो (**उक्थेभिः**) कहने के योग्य उनसे (**सोमस्य**) उत्तम प्रकार निकाले हुए बड़ी ओषधि के रस के (**पीतये**) पान करने के लिये जिस (**इन्द्रम्**) अत्यन्त विद्या और ऐश्वर्य्यवाले को (**इह**) इस संसार में (**हवामहे**) पुकारें, वह हम लोगों के समीप (**कुवित्**) बहुत वार (**आगमत्**) आवे॥४॥

भावार्थः-जो अविद्वान् लोग प्रीति से विद्वान् लोगों को बुलावें तो वे उनके समीप बहुत वार जावें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्र॒ सोमा॑: सु॒ता इ॒मे तान् द॑धिष्व शतक्रतो। ज॒ठरे॑ वाजिनीवसो॥५॥५॥

इन्द्र॑। सोमा॑:। सु॒ताः। इ॒मे। तान्। द॒धि॒ष्व॒। श॒त॒क्र॒तो॒ इति॑ शतऽक्रतो। ज॒ठरे॑। वा॒जि॒नी॒व॒सो॒ इति॑ वाजिनीऽवसो॥५॥

पदार्थः-(**इन्द्र**) परमैश्वर्य्यभोक्तः (**सोमाः**) पदार्थाः (**सुताः**) निष्पन्नाः (**इमे**) (**तान्**) (**दधिष्व**) (**शतक्रतो**) बहुकर्मप्रज्ञ (**जठरे**) जातेऽस्मिन् जगति (**वाजिनीवसो**) यो वाजिनीमुषसं वासयति तत्सम्बुद्धौ। **वाजिनीत्युषसो नामसु पठितम्।** (निघं०१.८)॥५॥

अन्वयः-हे वाजिनीवसो शतक्रतो इन्द्र! य इमे जठरे सोमाः सुतास्तान् दधिष्व॥५॥

भावार्थः-तदैव मनुष्याः पूर्णविद्यैश्वर्य्याः स्युर्यदा सृष्टिस्थपदार्थविद्यां विजानन्तु॥५॥

पदार्थः-हे (**वाजिनीवसो**) रात्रि को वसानेवाले (**शतक्रतो**) बहुत कर्मों में कुशल (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य के भोक्ता! जो (**इमे**) ये (**जठरे**) प्रसिद्ध हुए इस संसार में (**सोमाः**) पदार्थ (**सुताः**) उत्पन्न हुए हैं, उनको (**दधिष्व**) धारण करो॥५॥

भावार्थः-तभी मनुष्य पूर्ण विद्या और ऐश्वर्यवाले होवें कि जब सृष्टि में वर्त्तमान पदार्थों की विद्या को जानें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

विद्मा हि त्वा धनंजयं वाजेषु दधृषं कवे। अधा ते सुम्नमीमहे॥६॥

विद्म। हि। त्वा। धनम्ऽजयम्। वाजेषु। दधृषम्। कवे। अध। ते। सुम्नम्। ईमहे॥६॥

पदार्थः-(**विद्म**) विजानीयाम। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**हि**) यतः (**त्वा**) त्वाम् (**धनञ्जयम्**) यो धनं जयति तम् (**वाजेषु**) संग्रामेषु (**दधृषम्**) प्रगल्भम् (**कवे**) विद्वन्! (**अध**) अथ। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**ते**) तव सकाशात् (**सुम्नम्**) सुखम् (**ईमहे**) याचामहे॥६॥

अन्वयः-हे कवे! वयं वाजेषु दधृषं धनञ्जयं त्वा विद्म। अध हि ते सुम्नमीमहे॥६॥

भावार्थः-मनुष्या यं सुखप्रदानेषु योग्यं शूरवीरं न्यायाधीशं विजानीयुस्तस्मादेव सुखाऽलङ्कृतिः कार्य्या॥६॥

पदार्थः-हे (**कवे**) विद्वान् पुरुष! हम लोग (**वाजेषु**) संग्रामों में (**दधृषम्**) प्रचण्ड (**धनञ्जयम्**) धनों के जीतनेवाले (**त्वा**) आपको (**विद्म**) जानें (**अध**) इसके अनन्तर (**हि**) जिससे (**ते**) आपके समीप से (**सुम्नम्**) सुख की (**ईमहे**) याचना करते हैं॥६॥

भावार्थः-मनुष्य जिसको सुखों के प्रदानों में योग्य, शूरवीर, न्यायाधीश जानें, उसी से सुखों की पूर्ति करनी चाहिये॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इममिन्द्र गवाशिरं यवाशिरं च नः पिब। आगत्या वृषभिः सुतम्॥७॥

इमम्। इन्द्र। गोऽआशिरम्। यवऽआशिरम्। च। नः। पिब। आऽगत्य। वृषऽभिः। सुतम्॥७॥

पदार्थः-(**इमम्**) (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्यप्रद (**गवाशिरम्**) गावः किरणा अश्नन्ति यं तम् (**यवाशिरम्**) यवा अस्यन्ते यस्मिँस्तम् (**च**) (**नः**) अस्माकम् (**पिब**) (**आगत्य**)। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**वृषभिः**) वर्षकैर्मेघैः (**सुतम्**) उत्पादितम्॥७॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वमागत्य नो वृषभिः सुतं गवाशिरं यवाशिरं चेमं सोमं पिब॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यं किरणा वायवश्च पिबन्ति तमेव रसं यूयं पीत्वा बलिष्ठा भवत॥७॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्य के देनेवाले! आप (**आगत्य**) आय के (**नः**) हम लोगों के (**वृषभिः**) वृष्टिकर्त्ता मेघों से (**सुतम्**) उत्पन्न किये गये (**गवाशिरम्**) किरणें जिसको पीती हैं उस और (**यवाशिरम्**)

यव अन्न का भोजन किया जाये जिसमें उस **(च)** और **(इमम्)** इस पदार्थ को **(पिब)** पान करो॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिसको सूर्य की किरणें और पवनें पीती हैं, उसी रस का आप लोग पान करके बलिष्ठ होइये॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तुभ्येदिन्द्र स्व ओक्ये३ सोमं चोदामि पीतये। एष रारन्तु ते हृदि॥८॥

तुभ्य। इत्। इन्द्र। स्वे। ओक्ये। सोमम्। चोदामि। पीतये। एषः। ररन्तु। ते। हृदि॥८॥

पदार्थः-**(तुभ्य)** तुभ्यम्। अत्र **सुपां सुलुगिति** विभक्तेर्लुक्। **(इत्)** एव **(इन्द्र)** ऐश्वर्ययुक्त **(स्वे)** स्वकीये **(ओक्ये)** गृहे **(सोमम्)** रसम् **(चोदामि)** प्रेरयामि **(पीतये)** **(एषः)** **(रारन्तु)** भृशं रमताम् **(ते)** तव **(हृदि)** हृदये॥८॥

अन्वयः-हे इन्द्र! य एष ते हृदि रारन्तु तं सोमं स्व ओक्ये पीतये तुभ्येच्चोदामि॥८॥

भावार्थः-प्राणिभिर्यद्भुज्यते पीयते च तत्सर्वं रुधिरादिकं भूत्वा हृदि संसृत्य मस्तकद्वारा सर्वत्र प्रसरति॥८॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** ऐश्वर्ययुक्त जन! जो **(एषः)** यह **(ते)** आपके **(हृदि)** हृदय में **(रारन्तु)** अत्यन्त रमे उस **(सोमम्)** रस को **(स्वे)** अपने **(ओक्ये)** गृह में **(पीतये)** पीने को **(तुभ्य)** आपके लिये **(इत्)** ही **(चोदामि)** प्रेरणा करता हूँ॥८॥

भावार्थः-प्राणी लोग जो खाते और पीते हैं, वह सब पदार्थ रुधिर आदि हो और हृदय में फैल कर मस्तक के द्वारा सर्वत्र फैलता है॥८॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्वां सुतस्य पीतये प्रत्नमिन्द्र हवामहे। कुशिकासो अवस्यवः॥९॥६॥

त्वाम्। सुतस्य। पीतये। प्रत्नम्। इन्द्र। हवामहे। कुशिकासः। अवस्यवः॥९॥

पदार्थः-**(त्वाम्)** **(सुतस्य)** सुसंस्कृतस्य रसस्य **(पीतये)** **(प्रत्नम्)** प्राक्तनम् **(इन्द्र)** सुखप्रद **(हवामहे)** दद्याम **(कुशिकासः)** विद्याविनयादिभिराप्ता निष्पन्नाः **(अवस्यवः)** य आत्मनो रक्षणादिकमिच्छवः॥९॥

अन्वयः-हे इन्द्र! कुशिकासोऽवस्यवो वयं **[सुतस्य]** पीतये यं प्रत्नं त्वां हवामहे स त्वमस्मानाह्वय॥९॥

भावार्थः-नूतनेभ्यो विद्वद्भ्यः प्राक्तना विद्वांसः श्रेष्ठाः सन्तीति निश्चेतव्यमिति॥९॥

अत्रेन्द्रविद्वत्सोमगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति द्विचत्वारिंशत्तमं सूक्तं षष्ठो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** सुख के दाता! **(कुशिकासः)** विद्या और विनय आदिकों से श्रेष्ठ हुए **(अवस्यवः)** आप लोगों के आत्माओं की रक्षा की इच्छा करनेवाले हम लोग **(सुतस्य)** उत्तम प्रकार संस्कारयुक्त रस के **(पीतये)** पान करने के लिये जिस **(प्रत्नम्)** प्राचीन काल से सिद्ध **(त्वाम्)** आपको **(हवामहे)** देवें, वह आप हम लोगों को बुलाइये॥९॥

भावार्थः-नवीन विद्वानों से प्राचीन विद्वान् श्रेष्ठ हैं, ऐसा निश्चय करना चाहिये॥९॥

इस मन्त्र में इन्द्र, विद्वान् और सोम के गुणवर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह वैयालीसवां सूक्त और छठा वर्ग समाप्त हुआ॥

अथाष्टर्चस्य त्रिचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ३ विराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २, ४, ६ निचृत् त्रिष्टुप्। ५ भुरिक् त्रिष्टुप्। ७, ८ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब आठ ऋचावाले तैंतालीसवे सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में विद्वानों के विषय को कहते हैं॥

आ याह्यर्वाङुप वन्धुरेष्ठास्तवेदनु प्रदिवः सोमपेयम्।

प्रिया सखाया वि मुचोप बर्हिस्त्वामिमे हव्यवाहो हवन्ते॥ १॥

आ। याहि। अर्वाङ्। उप। वन्धुरेऽस्थाः। तव। इत्। अनु। प्रऽदिवः। सोमऽपेयम्। प्रिया। सखाया। वि। मुच। उप। बर्हिः। त्वाम्। इमे। हव्यऽवाहः। हवन्ते॥ १॥

पदार्थः- **(आ)** **(याहि)** आगच्छ **(अर्वाङ्)** अर्वाचीनः **(उप)** **(वन्धुरेष्ठाः)** यो वन्धुरे बन्धने तिष्ठति सः **(तव)** **(इत्)** एव **(अनु)** पश्चात् **(प्रदिवः)** प्रकृष्टो द्यौः प्रकाशो येषान्ते **(सोमपेयम्)** सोमश्चासौ पेयश्च तम् **(प्रिया)** प्रसन्नताकरौ **(सखाया)** सखायौ अध्यापकोपदेशकौ **(वि)** **(मुच)** त्यज **(उप)** समीपे **(बर्हिः)** अन्तरिक्षे **(त्वाम्)** **(इमे)** **(हव्यवाहः)** ये हव्यं वहन्ति ते **(हवन्ते)** गृह्णन्ति॥ १॥

अन्वयः-हे विद्वंस्त्वमर्वाङ् सन् यस्तव वन्धुरेष्ठाः रथोऽस्ति तेन प्रदिवः सोमपेयमुपा याहि यौ प्रिया सखायाऽध्यापकोपदेशकौ तावुपायाहि। यद्बर्हिस्त्वामन्विमे तद्विमुच यान् हव्यवाह उप हवन्ते तैस्सहेद् दुःखं विमुच॥ १॥

भावार्थः-ये विद्याप्रकाशं प्राप्य विमानादीनि यानानि निर्माय तत्राऽग्न्यादिकं प्रयुज्यान्तरिक्षे गच्छन्ति ते प्रियाचारान् सखीन् प्राप्यैव दारिद्र्यमुच्छिन्दन्ति॥ १॥

पदार्थः-हे विद्वज्जन! आप **(अर्वाङ्)** नीचे के स्थल में वर्त्तमान होकर जो **(तव)** आपके **(वन्धुरेष्ठाः)** बन्धन में वर्त्तमान रथ है उससे **(प्रदिवः)** उत्तम प्रकाशवाले **(सोमपेयम्)** पीने योग्य सोमलता के रस के **(उप, आ, याहि)** समीप आइये और जो **(प्रिया)** प्रसन्नता के करनेवाले **(सखाया)** मित्र, अध्यापक और उपदेशक हैं, उनके समीप प्राप्त हूजिये। जो **(बर्हिः)** अन्तरिक्ष में **(त्वाम्)** आपके **(अनु)** पीछे **(इमे)** ये हैं उनका **(वि, मुच)** त्याग कीजिये, जिनको **(हव्यवाहः)** हवनसामग्री धारण करनेवाले **(उप, हवन्ते)** ग्रहण करते हैं, उनके साथ **(इत्)** ही दुःख का त्याग कीजिये॥ १॥

भावार्थः-जो लोग विद्या के प्रकाश को प्राप्त हो विमानादि वाहनों के निर्माण और उसमें अग्नि आदि का प्रयोग करके अन्तरिक्ष में जाते हैं, वे प्रिय आचरण करनेवाले मित्रों को प्राप्त होकर दारिद्र्य का नाश करते हैं॥ १॥

अथ मित्रतागुणविषयमाह॥

अब मित्रता के गुण के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ याहि पूर्वीरति चर्षणीराँ अर्य आशिष उप नो हरिभ्याम्।
इमा हि त्वा मतयः स्तोमतष्टा इन्द्र हवन्ते सख्यं जुषाणाः॥२॥

आ। याहि। पूर्वीः। अति। चर्षणीः। आ। अर्यः। आऽशिषः। उप। नः। हरिऽभ्याम्। इमाः। हि। त्वा। मतयः। स्तोमऽतष्टाः। इन्द्र। हवन्ते। सख्यम्। जुषाणाः॥२॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**याहि**) गच्छ (**पूर्वीः**) पूर्वं भूताः (**अति**) (**चर्षणीः**) मनुष्यादिप्रजाः (**आ**) (**अर्य्यः**) स्वामी (**आशिषः**) आशीर्वादान् (**उप**) (**नः**) अस्मान् (**हरिभ्याम्**) वाय्वग्निभ्याम् (**इमाः**) वर्त्तमानाः (**हि**) यतः (**त्वा**) त्वाम् (**मतयः**) प्रज्ञाः (**स्तोमतष्टाः**) विस्तृतस्तुतयः (**इन्द्र**) बह्वैश्वर्यप्रद (**हवन्ते**) आददति (**सख्यम्**) मित्रत्वम् (**जुषाणाः**) सेवमानाः॥२॥

अन्वयः-हे इन्द्र! या इमाः स्तोमतष्टाः सख्यं जुषाणा मतयस्त्वाऽऽहवन्ते ताभिः सह नोऽस्माना याहि। यथार्य्यश्चर्षणीः प्राप्याऽऽशिष उपलभते तथा ताः पूर्वीर्हि हरिभ्यामत्यायाहि॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्याः! यया प्रज्ञया सर्वैः सह मित्रता स्यात्तया युक्ताः सन्तः सर्वाशिषः प्राप्य सुखं सततं प्राप्नुत॥२॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) बहुत ऐश्वर्य्यों के देनेवाले! जो (**इमाः**) इन वर्त्तमान (**स्तोमतष्टाः**) विस्तारयुक्त स्तुतियों से विशिष्ट और (**सख्यम्**) मित्रता का (**जुषाणाः**) सेवन करती हुई (**मतयः**) बुद्धियां (**त्वा**) आपको (**आ, हवन्ते**) ग्रहण करती हैं, उनके साथ (**नः**) हम लोगों को (**आ**) सब प्रकार (**याहि**) प्राप्त हूजिये, जिस प्रकार (**अर्य्यः**) स्वामी (**चर्षणीः**) मनुष्य आदि प्रजाओं को प्राप्त होकर (**आशिषः**) आशीर्वादों को प्राप्त होता है, वैसे उन (**पूर्वीः**) प्राचीन काल में उत्पन्न हुई आशिषों को (**हि**) ही (**हरिभ्याम्**) वायु और अग्नि से (**अति, आ**) सब ओर से अत्यन्त प्राप्त हूजिये॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जिस बुद्धि से सब लोगों के साथ मित्रता हो, उससे युक्त हुए सबके आशीर्वादों को प्राप्त होकर सुख को निरन्तर प्राप्त होइये॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ नो यज्ञं नमोवृधं सजोषा इन्द्र देव हरिभिर्याहि तूयम्।
अहं हि त्वा मतिभिर्जोहवीमि घृतप्रयाः सधमादे मधूनाम्॥३॥

आ। नः। यज्ञम्। नमःऽवृधम्। सऽजोषाः। इन्द्र। देव। हरिऽभिः। याहि। तूयम्। अहम्। हि। त्वा। मतिऽभिः। जोहवीमि। घृतऽप्रयाः। सधऽमादे। मधूनाम्॥३॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**नः**) अस्माकम् (**यज्ञम्**) प्रयत्नसाध्यम् (**नमोवृधम्**) अन्नाद्यैश्वर्य्यवर्धकम् (**सजोषाः**) समानप्रीतिसेवनाः (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्ययोजक (**देव**) विद्वन्! (**हरिभिः**) अश्वैरिव वह्न्यादिभिः (**याहि**) गच्छ (**तूयम्**) तूर्णम् (**अहम्**) (**हि**) (**त्वा**) त्वाम् (**मतिभिः**) प्रज्ञाभिः (**जोहवीमि**) भृशं प्रशंसाम्याह्वयामि वा (**घृतप्रयाः**) यो घृतेन प्रीणाति सः (**सधमादे**) समानस्थाने (**मधूनाम्**) मधुरादिगुणयुक्तानां पदार्थानाम्॥३॥

अन्वयः-हे देवेन्द्र! घृतप्रया अहं मतिभिर्मधूनां सधमादे हि त्वा जोहवीमि तस्मात् सजोषास्त्वं हरिभिर्नो नमोवृधं यज्ञं तूयमायाहि॥३॥

भावार्थः-मनुष्यैस्तेषामेव प्रशंसा कार्य्या ये सर्वेषां सुखं वर्द्धयेयुः॥३॥

पदार्थः-हे (**देव**) विद्वन् (**इन्द्र**) ऐश्वर्य से युक्त करनेवाले! (**घृतप्रयाः**) घृत से प्रसन्न होनेवाला (**अहम्**) मैं (**मतिभिः**) बुद्धियों से (**मधूनाम्**) और मधुर आदि गुणों से युक्त पदार्थों के (**सधमादे**) तुल्य स्थान में (**हि**) जिससे कि (**त्वा**) आपकी (**जोहवीमि**) प्रशंसा करता वा बुलाता हूँ इससे (**सजोषाः**) तुल्य प्रीति के सेवनेवाले आप (**हरिभिः**) घोड़ों के सदृश अग्नि आदिकों से (**नः**) हम लोगों के (**नमोवृधम्**) अन्न आदि ऐश्वर्य्य के बढ़ानेवाले (**यज्ञम्**) प्रयत्न से सिद्ध होने योग्य सङ्गत व्यवहार के प्रति (**तूयम्**) शीघ्र (**आ**) सब प्रकार (**याहि**) प्राप्त हूजिये॥३॥

भावार्थः-मनुष्यों को उन लोगों की ही प्रशंसा करनी चाहिये कि जो सबके सुखों की वृद्धि करें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ च त्वामेता वृषणा वहांतो हरी सखाया सुधुरा स्वङ्गा।

धानावदिन्द्रः सवनं जुषाणः सखा सख्युः शृणवद्वन्दनानि॥४॥

आ। च। त्वाम्। एता। वृषणा। वहांतः। हरी इति। सखाया। सुऽधुरा। सुऽअङ्गा। धानाऽवत्। इन्द्रः। सवनम्। जुषाणः। सखा। सख्युः। शृणवत्। वन्दनानि॥४॥

पदार्थः-(**आ**) (**च**) (**त्वाम्**) (**एता**) प्राप्तौ (**वृषणा**) वृष्टिकरौ वायुविद्युतौ (**वहातः**) प्राप्नुतः (**हरी**) हरणशीलावश्वाविव (**सखाया**) सुहृदाविव वर्त्तमानौ (**सुधुरा**) शोभना धुरो ययोस्तौ (**स्वङ्गा**) शोभनान्यङ्गानि ययोस्तौ (**धानावत्**) परिपक्वा धाना विद्यन्ते यस्मिँस्तत् (**इन्द्रः**) परमैश्वर्यप्रदः (**सवनम्**) ऐश्वर्य्यम् (**जुषाणः**) सेवमानः (**सखा**) सुहृत् (**सख्युः**) मित्रस्य (**शृणवत्**) शृणुयात् (**वन्दनानि**) अभिवादनानि स्तवनानि वा॥४॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथा धानावत्सवनं जुषाण इन्द्रस्सखा सख्युर्वन्दनानि शृणवत्स्वङ्गा सखाया इव सुधुरा वृषणा त्वामेता हरी सर्वानावहातश्च तथा त्वं सर्वेषां वचांसि शृणु प्रियाणि कार्य्याणि साध्नुहि॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। त एव सखायो भवितुमर्हन्ति ये महद्दुःखमपि प्राप्य सखीन् न जहति यथा द्वावनेका वाऽश्वाः सङ्गता भूत्वाऽभीष्टानि स्थानानि गमयन्ति तथैव स्वात्मवत्प्रिया जना इच्छासिद्धिं प्राप्नुवन्ति॥४॥

पदार्थः-हे विद्वन्! पुरुष! जैसे **(धानावत्)** पकाये हुए यवों से युक्त **(सवनम्)** ऐश्वर्य्य का **(जुषाणः)** सेवन करता हुआ **(इन्द्रः)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य का देनेवाला **(सखा)** मित्र पुरुष **(सख्युः)** मित्र के अभिवादन आदि वा स्तुतियों को **(शृणवत्)** सुने और **(स्वङ्गा)** सुन्दर अङ्गों से विशिष्ट **(सखाया)** मित्रों के तुल्य वर्त्तमान तथा **(सुधुरा)** उत्तम धुरों से युक्त **(वृषणा)** वृष्टि करनेवाले वायु और बिजुली **(त्वाम्)** आपको **(एता)** प्राप्त हुए **(हरी)** ले चलनेवाले घोड़ों के सदृश सबको **(आ, वहातः)** प्राप्त होते हैं, वैसे आप लोगों के वचनों को सुनिये और प्रिय कार्य्यों को सिद्ध कीजिये॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। वे लोग ही मित्र होने योग्य हैं कि जो बड़े दुःख को प्राप्त होकर भी मित्रों का त्याग नहीं करते और जैसे दो वा बहुत घोड़े इकट्ठे होकर यथेष्ट स्थानों में पहुँचाते हैं, वैसे अपने आत्मा के सदृश प्रिय जन इच्छा की सिद्धि को प्राप्त होते हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कुविन्मा गोपां करसे जनस्य कुविद्राजानं मघवन्नृजीषिन्।

कुविन्म ऋषिं पपिवांसं सुतस्य कुविन्मे वस्वो अमृतस्य शिक्षाः॥५॥

कुवित्। मा। गोपाम्। करसे। जनस्य। कुवित्। राजानम्। मघऽवन्। ऋजीषिन्। कुवित्। मा। ऋषिम्। पपिऽवांसम्। सुतस्य। कुवित्। मे। वस्वः। अमृतस्य। शिक्षाः॥५॥

पदार्थः-**(कुवित्)** महान्तम् **(मा)** माम् **(गोपाम्)** धार्मिकाणां रक्षकम् **(करसे)** कुर्य्याः **(जनस्य)** **(कुवित्)** महान्तम् **(राजानम्)** **(मघवन्)** परमपूजितधनयुक्त **(ऋजीषिन्)** ऋजुभावमिच्छन् **(कुवित्)** महान्तम् **(मा)** माम्। अत्र **ऋत्यक** इति ह्रस्वो भूत्वा प्रकृतिभावः। **(ऋषिम्)** सकलवेदमन्त्रार्थवेत्तारम् **(पपिवांसम्)** पीतवन्तम् **(सुतस्य)** निष्पादितस्य सोमस्य रसम् **(कुवित्)** महतः **(मे)** मम **(वस्वः)** धनस्य **(अमृतस्य)** नाशरहितस्य **(शिक्षाः)** शिक्षस्व। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम्॥५॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यस्त्वं जनस्य कुविद् गोपां मा करसे। हे मघवन्नृजीषिन्! यस्त्वं जनस्य कुविद्राजानं करसे सुतस्य पपिवांसं कुविदृषिं मा शिक्षाः कुविदमृतस्य मे वस्वः करसे तं त्वां वयं भजामहे॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये युष्मान् विद्याविनयसुशिक्षादानेन महतो राज्ञः कुर्वन्ति वेदार्थं विज्ञाप्य मोक्षं साधयन्ति तान् यूयं स्वात्मवत्प्रीणीत॥५॥

पदार्थः-हे विद्वज्जन! जो आप **(जनस्य)** सब लोगों के **(कुवित्)** श्रेष्ठ **(गोपाम्)** धार्मिक पुरुषों के रक्षा करनेवाले **(मा)** मुझको **(करसे)** करें। हे **(मघवन्)** परम प्रशंसनीय धनयुक्त **(ऋजीषिन्)** कोमलपन को चाहनेवाले! जो आप जनसमूह का [**(कुवित्)** श्रेष्ठ] **(राजानम्)** राजा करें, वह **(सुतस्य)** उत्पन्न किये हुए सोम के रस को **(पपिवांसम्)** पीते हुए **(कुवित्)** श्रेष्ठ **(ऋषिम्)** सम्पूर्ण वेदों के अर्थ के जाननेवाले होने की **(मा)** मुझ को **(शिक्षाः)** शिक्षा दीजिये और आप **(कुवित्)** श्रेष्ठ **(अमृतस्य)** नाश से रहित **(मे)** मेरे **(वस्वः)** धन को करें, उन आपकी हम लोग सेवा करें॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो लोग आप लोगों को विद्या, विनय और उत्तम शिक्षादान से बड़े राजा करते और वेद के अर्थों को समझा के मोक्ष सिद्ध करते हैं, उनको आप अपने आत्मा के सदृश प्रसन्न करें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ त्वा बृहन्तो हरयो युजाना अर्वागिन्द्र सधमादो वहन्तु।

प्र ये द्विता दिव ऋञ्जन्त्याताः सुसंमृष्टासो वृषभस्य मूराः॥६॥

आ। त्वा। बृहन्तः। हरयः। युजानाः। अर्वाक्। इन्द्र। सधऽमादः। वहन्तु। प्र। ये। द्विता। दिवः। ऋञ्जन्ति। आताः। सुऽसंमृष्टासः। वृषभस्य। मूराः॥६॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(त्वा)** त्वाम् **(बृहन्तः)** महान्तः **(हरयः)** सुशिक्षतास्तुरङ्गा इवाऽग्न्यादयः **(युजानाः)** समादधानाः **(अर्वाक्)** योऽर्वागञ्चति **(इन्द्र)** परमपूजनीय **(सधमादः)** समानस्थानाः **(वहन्तु)** प्राप्नुवन्तु **(प्र)** **(ये)** **(द्विता)** द्वयोर्भावः **(दिवः)** विद्याप्रकाशमानान् **(ऋञ्जन्ति)** साध्नुवन्ति **(आताः)** व्याप्ता दिशः। **आता इति दिङ्नामसु पठितम्।** (निघं १.६) **(सुसंमृष्टासः)** श्रेष्ठरीत्या सम्यक् शुद्धः **(वृषभस्य)** बलिष्ठस्य **(मूराः)** मूढाः॥६॥

अन्वयः-हे इन्द्र! ये बृहन्तो युजाना सधमादो हरय इव त्वाऽऽवहन्तु द्विता दिव ऋञ्जन्ति सुसंमृष्टास आता इव वृषभस्य वेगं प्र वहन्तु तैर्ये मूरा मूढाः स्युस्तानर्वाक् त्वमावह॥६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये विद्वांसोऽश्वा इवाऽभीष्टस्थाने मूढान् प्रापयन्ति ते समग्रमृद्धिं साद्धुं शक्नुवन्ति॥६॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** अत्यन्त सेवा करने योग्य विद्वान्! **(ये)** जो **(बृहन्तः)** बड़े **(युजानाः)**

समाधान देते हुए **(सधमादः)** समान स्थानवाले **(हरयः)** उत्तम प्रकार शिक्षित घोड़ों के सदृश अग्नि आदि पदार्थ **(त्वा)** आपको **(आ)** सब प्रकार **(वहन्तु)** एक स्थान से दूसरे स्थान को पहुँचावें और वे तथा **(द्विता)** दो-दो पदार्थों का होना जैसे वैसे विद्वान् **(दिवः)** विद्याओं से प्रकाशमानों को **(ऋञ्जन्ति)** सिद्ध करते हैं **(सुसंमृष्टासः)** वा श्रेष्ठ रीति से उत्तम प्रकार शुद्ध किये हुए **(आताः)** व्याप्त हुईं दिशाओं के सदृश **(वृषभस्य)** बलवान् पदार्थ के वेग को **(प्र, वहन्तु)** प्राप्त हों उनसे जो **(मूराः)** मूढ़ होवें, उन पुरुषों को **(अर्वाक्)** नीचे के स्थल में आप पहुँचाइये॥६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलप्तोपमालङ्कार है। जो विद्वान् लोग घोड़ों के सदृश अभीष्ट स्थान में मूढ़ों को पहुँचाते हैं, वे सम्पूर्ण समृद्धि सिद्ध कर सकते हैं॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्र पिब वृषधूतस्य वृष्ण आ यं ते श्येन उशते जभार।
यस्य मदे च्यावयसि प्र कृष्टीर्यस्य मदे अप गोत्रा ववर्थ॥७॥

इन्द्र। पिब। वृषऽधूतस्य। वृष्णः। आ। यम्। ते। श्येनः। उशते। जभार। यस्य। मदे। च्यवयसि। प्र। कृष्टीः। यस्य। मदे। अप। गोत्रा। ववर्थ॥७॥

पदार्थः-**(इन्द्र)** विशेषैश्वर्य्यप्रद! **(पिब)** **(वृषधूतस्य)** वृषा बलिष्ठाः पदार्था धूताः कम्पिता येन तस्य **(वृष्णः)** बलिष्ठस्य **(आ)** **(यम्)** **(ते)** तुभ्यम् **(श्येनः)** एतत् पक्षीव **(उशते)** कामयमानाय **(जभार)** धरति **(यस्य)** **(मदे)** आनन्दे **(च्यावयसि)** प्रापयसि **(प्र)** **(कृष्टीः)** मनुष्यान् **(यस्य)** **(मदे)** आनन्दे **(अप)** **(गोत्रा)** पृथिवी **(ववर्थ)** वर्त्तते॥७॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं वृषधूतस्य वृष्णो रसं पिब श्येन इव यमुशते [ते] तुभ्यं यमा जभार यस्य मदे त्वं कृष्टीः प्र च्यावयसि। यस्य मदे गोत्रा अप ववर्थ तं स्वात्मवत्सेवस्व॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! ये श्येनवत्सद्योगामिनः सर्वस्य सुखं कामयमाना मनुष्यान् सुखयन्ति तेषां सन्निधौ स्थित्वा विद्याव्यवहाराऽऽनन्दं प्राप्नुत॥७॥

पदार्थः-हे **(इन्द्रः)** विशेष ऐश्वर्य के देनेवाले! आप **(वृषधूतस्य)** बलिष्ठ पदार्थों के कंपानेवाले **(वृष्णः)** बलिष्ठ पदार्थ के रस का **(पिब)** पान करो **(श्येनः)** वाज पक्षी के सदृश **(यम्)** जिसकी **(उशते)** कामना करनेवाले **(ते)** आपके लिये जिसको **(आ, जभार)** धारण करता है **(यस्य)** जिसके **(मदे)** आनन्द में आप **(कृष्टीः)** मनुष्यों को **(प्र, च्यावयसि)** प्राप्त कराते हैं और **(यस्य)** जिसके **(मदे)** आनन्द के निमित्त **(गोत्रा)** पृथिवी **(अप, ववर्थ)** वर्त्तमान है, उसकी अपने तुल्य सेवा करो॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो श्येन पक्षी के सदृश शीघ्र

चलने और सबके सुख की कामना करनेवाले पुरुष मनुष्यों को सुख देते हैं, उन लोगों के समीप वर्त्तमान होकर विद्यासम्बन्धी व्यवहार के आनन्द को प्राप्त होओ॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम्॥८॥७॥

शुनम्। हुवेम। मघऽवानम्। इन्द्रम्। अस्मिन्। भरे। नृऽतमम्। वाजऽसातौ। शृण्वन्तम्। उग्रम्। ऊतये। समत्ऽसु। घ्नन्तम्। वृत्राणि। सम्ऽजितम्। धनानाम्॥८॥

पदार्थः-(**शुनम्**) महौषधिसेवनजन्यं सुखम् (**हुवेम**) आदद्याम (**मघवानम्**) सकलविद्या-जनितारम् (**इन्द्रम्**) अविद्यादिक्लेशविदर्त्तारम् (**अस्मिन्**) (**भरे**) देवासुरविद्वदविद्वत्संग्रामे (**नृतमम्**) अतिशयेन विद्यायाः प्रापकम् (**वाजसातौ**) ज्ञानाऽज्ञानयोर्विभागे (**शृण्वन्तम्**) सम्यक् परीक्षां कुर्वन्तम् (**उग्रम्**) उत्कृष्टस्वभावम् (**ऊतये**) विद्यादिशुभगुणप्रवेशाय (**समत्सु**) धार्मिकाऽधार्मिकविरोधाख्येषु युद्धेषु (**घ्नन्तम्**) विरोधं विनाशयन्तम् (**वृत्राणि**) धनानि (**सञ्जितम्**) जयशीलम् (**धनानाम्**) ऐश्वर्य्याणाम्॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथाऽस्मिन् वाजसातौ भर ऊतये समत्सु घ्नन्तं धनानां सञ्जितं वृत्राणि शृण्वन्तमुग्रं मघवानं नृतममिन्द्रं प्राप्य शुनं हुवेम तथैतं प्राप्याऽऽनन्दं लभध्वम्॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्यैर्विद्वच्छरणं प्राप्याऽविद्यादारिद्र्ये हत्वा विद्याश्रियौ जनयित्वा सततमानन्दो वर्द्धनीय इति॥८॥

अथेन्द्रविद्वत्सखिसोमपानादिगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति त्रिचत्वारिंशत्तमं सूक्तं सप्तमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**अस्मिन्**) इस (**वाजसातौ**) ज्ञान और अज्ञान के विभाग और (**भरे**) विद्वान् और अविद्वान् के संग्राम में (**ऊतये**) विद्या आदि उत्तम गुणों में प्रवेश होने के लिये (**समत्सु**) धार्मिक और अधार्मिकों के विरोधनामक युद्धों में (**घ्नन्तम्**) विरोध का नाश करते हुए (**धनानाम्**) ऐश्वर्य्यों के (**सञ्जितम्**) जीतने का स्वभाव रखनेवाले (**वृत्राणि**) धनों की (**शृण्वन्तम्**) उत्तम प्रकार परीक्षा करते हुए (**उग्रम्**) उत्तम स्वभावयुक्त (**मघवानम्**) सम्पूर्ण विद्याओं के उत्पन्न करने (**नृतमम्**) अतिशय करके विद्या के प्राप्त कराने और (**इन्द्रम्**) अविद्या आदि क्लेशों के नाश करनेवाले को प्राप्त होकर (**शुनम्**) महौषधियों के सेवन से उत्पन्न हुए सुख को (**हुवेम**) ग्रहण करें, वैसे इसको प्राप्त होकर आनन्द को प्राप्त हूजिये॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि विद्वानों के शरण को पहुँच कर अविद्या और दारिद्र्य का नाश तथा विद्या और लक्ष्मी को उत्पन्न कर निरन्तर आनन्द बढ़ावें॥८॥

इस सूक्त में विद्वान्, सखि और सोमपानादिकों के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह तेंतालीसवां सूक्त और सातवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्य चतुश्चत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, २ निचृद्बृहती। ३, ५ बृहती छन्दः। मध्यमः स्वरः। ४ स्वराडनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः॥

अथ सूर्य्यविषयमाह॥

अब पाँच ऋचावाले चवालीसवें सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में सूर्य्य के विषय को कहते हैं॥

अयं ते अस्तु हर्यतः सोम आ हरिभिः सुतः।
जुषाण इन्द्र हरिभिर्न आ गह्या तिष्ठ हरितं रथम्॥ १॥

अयम्। ते। अस्तु। हर्यतः। सोमः। आ। हरिऽभिः। सुतः। जुषाणः। इन्द्र। हरिऽभिः। नः। आ। गहि। आ। तिष्ठ। हरितम्। रथम्॥ १॥

पदार्थः-(**अयम्**) (**ते**) तव (**अस्तु**) (**हर्यतः**) कामयमानस्य (**सोमः**) ऐश्वर्य्यवृन्दः (**आ**) (**हरिभिः**) अश्वैरिव साधनैः (**सुतः**) प्राप्तः (**जुषाणः**) सेवमानः (**इन्द्र**) परमैश्वर्य्यमिच्छो (**हरिभिः**) हरणशीलैरश्वैः (**नः**) अस्मान् (**आ**) (**गहि**) आगच्छ (**आ**) (**तिष्ठ**) (**हरितम्**) अग्न्यादिभिर्वाहितम् (**रथम्**) रमणीयं यानम्॥ १॥

अन्वयः-हे इन्द्र! हर्यतस्ते हरिभिर्योऽयं सोमः सुतोऽस्तु तं जुषाणः सन् हरिभिर्हरितं रथमातिष्ठानेन नोऽस्मानागहि॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। त एव दयालवः सन्ति येऽन्येषामैश्वर्यवृद्धिमिच्छेयुरैश्वर्यवत आगतान् दृष्ट्वा प्रसन्ना भवेयुः॥ १॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) परम ऐश्वर्य की इच्छा करनेवाले! (**हर्यतः**) कामना करते हुए (**ते**) आपके (**हरिभिः**) घोड़ों के सदृश साधनों से जो (**अयम्**) यह (**सोमः**) ऐश्वर्यों का समूह (**सुतः**) प्राप्त हुआ (**अस्तु**) हो उसका (**जुषाणः**) सेवन करता हुआ (**हरिभिः**) ले चलनेवाले घोड़ों से (**हरितम्**) अग्नि आदिको से चलाये गये (**रथम्**) मनोहर यान पर (**आ, तिष्ठ**) स्थिर हूजिये इससे (**नः**) हम लोगों को (**आ, गहि**) प्राप्त हूजिये॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। वे ही लोग दयालु हैं कि जो अन्य जनों के ऐश्वर्य की वृद्धि की इच्छा करें और ऐश्वर्यवालों को आते हुए देख के प्रसन्न होवें॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

हर्यन्नुषसमर्चयः सूर्यं हर्यन्नरोचयः।
विद्वाँश्चिकित्वान् हर्यश्व वर्द्धस इन्द्र विश्वा अभि श्रियः॥ २॥

हर्यन्। उषसम्। अर्चयः। सूर्यम्। हर्यन्। अरोचयः। विद्वान्। चिकित्वान्। हरिऽअश्व। वर्धसे। इन्द्र। विश्वाः। अभि। श्रियः॥ २॥

पदार्थः-(**हर्यन्**) कामयमानः (**उषसम्**) प्रत्यूषकालमिव सत्पुरुषान् (**अर्चयः**) सत्कुरु (**सूर्यम्**) सवितारमिव न्यायम् (**हर्यन्**) प्राप्नुवन् प्रापयन् (**अरोचयः**) रोचय (**विद्वान्**) (**चिकित्वान्**) ज्ञानवान् (**हर्य्यश्व**) हर्याः कामयमाना अश्वा आशुगामिनोऽग्न्यादयस्तुरङ्गा वा यस्य तत्सम्बुद्धौ (**वर्धसे**) (**इन्द्र**) धनमिच्छुक (**विश्वाः**) सर्वाः (**अभि**) आभिमुख्ये (**श्रियः**) शोभाः सम्पत्तयः॥ २॥

अन्वयः-हे हर्यन्नुषसं सूर्य्य इव सत्पुरुषांस्त्वमर्चयः। हे हर्यन्! सूर्य्यं विद्युदिव न्यायमरोचयः। हे हर्य्यश्वेन्द्र! यतश्चिकित्वान् **[**विद्वान्**]**त्सन् विश्वा अभिश्रियः प्राप्तुमिच्छसि तस्माद्वर्धसे॥ २॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मनुष्या उषर्वद्विद्याप्रकाशाभिमुखाः सूर्यवद्धर्माचरणं कामयमानाः सन्तः प्रयत्नेनैश्वर्य्यमिच्छेयुस्ते सर्वथा श्रीमन्तो भूत्वा सततं वर्धन्ते॥ २॥

पदार्थः-हे (**हर्यन्**) कामना करनेवाले! (**उषसम्**) प्रातःकाल को सूर्य के सदृश सत्पुरुषों का आप (**अर्चयः**) सत्कार करिये और हे (**हर्यन्**) अनेक पदार्थों को प्राप्त होने वा प्राप्त करानेवाले! (**सूर्यम्**) सूर्य को बिजुली जैसे वैसे न्याय का (**अरोचयः**) प्रकाश करो और हे (**हर्यश्व**) कामना करते हुए शीघ्र चलनेवाले अश्व वा अग्नि आदि पदार्थों से युक्त (**इन्द्र**) धन की इच्छा करनेवाले! जिससे (**चिकित्वान्**) ज्ञानवान् (**विद्वान्**) विद्वान् होते हुए (**विश्वाः**) सम्पूर्ण (**अभि**) सम्मुख वर्त्तमान (**श्रियः**) सुन्दर सम्पत्तियों को प्राप्त होने की इच्छा करते हो इससे (**वर्धसे**) वृद्धि को प्राप्त होते हो॥ २॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य प्रातःकाल के सदृश विद्याओं के प्रकाश में तत्पर और सूर्य के सदृश धर्माचरण की कामना करते हुए प्रयत्न से ऐश्वर्य्य की इच्छा करें, वे सब प्रकार लक्ष्मीयुक्त होकर निरन्तर वृद्धि को प्राप्त होते हैं॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

द्यामिन्द्रो हरिधायसं पृथिवीं हरिवर्पसम्।
अधारयद्धरितोर्भूरि भोजनं ययोरन्तर्हरिश्चरत्॥ ३॥

द्याम्। इन्द्रः। हरिऽधायसम्। पृथिवीम्। हरिऽवर्पसम्। अधारयत्। हरितोः। भूरि। भोजनम्। ययोः। अन्तः। हरिः। चरत्॥ ३॥

पदार्थः-(**द्याम्**) प्रकाशम् (**इन्द्रः**) विद्युत् सूर्यो वा (**हरिधायसम्**) या हरीन् किरणान् दधाति ताम् (**पृथिवीम्**) भूमिम् (**हरिवर्पसम्**) हरयः किरणा वर्पसो रूपस्य प्रकाशका यस्यास्ताम् (**अधारयत्**)

धारयति **(हरितोः)** हरणशीलयोर्गुणयोः **(भूरि)** बहु **(भोजनम्)** पालनं भक्षणं वा **(ययोः)** **(अन्तः)** मध्ये **(हरिः)** हरणशीलो वायुः **(चरत्)** चरति॥३॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यथेन्द्रो हरिधायसं द्यां हरिवर्पसं पृथिवीमधारयद् यथा हरिर्वायुर्ययो-र्हरितोरन्तर्वर्त्तमानः सन् भूरि भोजनं चरत्तथा त्वं भव॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये सूर्यवन्नियमेन धर्म्यकार्याणि साध्नुवन्ति वायुरिव सततं प्रयत्नं कुर्वन्ति ते बह्वैश्वर्यं लब्ध्वाऽऽनन्दन्ति॥३॥

पदार्थः-हे विद्वन् पुरुष! जैसे **(इन्द्रः)** बिजुली वा सूर्य **(हरिधायसम्)** किरणों को धारण करने वा **(द्याम्)** प्रकाश लोक और **(हरिवर्पसम्)** जिसके रूप का प्रकाश करनेवाली किरणें विद्यमान उस **(पृथिवीम्)** पृथिवी को **(अधारयत्)** धारण करता है और जैसे **(हरिः)** हरनेवाला वायु **(ययोः)** जिन **(हरितोः)** हरनेवाले गुणों के **(अन्तः)** मध्य में वर्त्तमान हुआ **(भूरि)** बहुत **(भोजनम्)** पालन वा भक्षण का **(चरत्)** आचरण करता है, वैसे आप हूजिये॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो लोग सूर्य के सदृश नियमपूर्वक धर्मयुक्त कर्मों को सिद्ध करते और वायु के सदृश निरन्तर प्रयत्न करते हैं, वे बहुत ऐश्वर्य को प्राप्त होकर आनन्दित होते हैं॥३॥

अथविद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

जज्ञानो हरितो वृषा विश्वमा भाति रोचनम्।
हर्यश्वो हरितं धत्त आयुधमा वज्रं बाह्वोर्हरिम्॥४॥

जज्ञानः। हरितः। वृषा। विश्वम्। आ। भाति। रोचनम्। हरिऽअश्वः। हरितम्। धत्ते। आयुधम्। आ। वज्रम्। बाह्वोः। हरिम्॥४॥

पदार्थः-**(जज्ञानः)** जायमानः **(हरितः)** हरितादिवर्णः **(वृषा)** वृष्टिकरः **(विश्वम्)** **(आ)** **(भाति)** **(रोचनम्)** रोचन्ते यस्मिँस्तत् **(हर्यश्वः)** हर्याः कामयमाना आशुगामिनो गुणा यस्य विद्युद्रूपस्य सः **(हरितम्)** कमनीयम् **(धत्ते)** धरति **(आयुधम्)** समन्तात् युध्यन्ति येन तत् **(आ)** **(वज्रम्)** शस्त्रमिव किरणसमूहम् **(बाह्वोः)** भुजयोः **(हरिम्)** हरणशीलम्॥४॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यो जज्ञानो हरितो हर्यश्वो वृषा हरितं रोचनं विश्वं बाह्वोर्हरितं वज्रमायुधमिवाऽऽधत्त आ भाति तं विज्ञायोपयुञ्जत॥४॥

भावार्थः-विद्वांसो यथा प्रसिद्धः सूर्यः सर्वं जगत् प्रकाश्य रोचयति तथैव सद्विद्योपदेशेन धर्मं रोचयन्तु॥४॥

पदार्थः-हे विद्वान् लोगो! जो **(जज्ञानः)** उत्पन्न होता हुआ **(हरितः)** हरित आदि वर्णों से युक्त **(हर्यश्वः)** कामना करते हुए शीघ्र चलनेवाले गुण हैं जिस बिजुली रूप के वह **(वृषा)** वृष्टिकारक **(हरितम्)** कामना करने योग्य **(रोचनम्)** और सब ओर से जिसमें प्रीति करते हैं ऐसे **(विश्वम्)** सम्पूर्ण लोक को **(बाह्वोः)** भुजाओं के **(हरितम्)** हरनेवाले **(वज्रम्)** शस्त्रों के सदृश किरणों के समूह को **(आ, धत्ते)** धारण करता और **(आ, भाति)** प्रकाशित होता है, उसको जान कर उपयोग करो॥४॥

भावार्थः-विद्वान् लोग जैसे प्रसिद्ध सूर्य्य सम्पूर्ण जगत् को प्रकाशित करके आप प्रकाशित होता है, वैसे ही सद्विद्या के उपदेश से धर्म का प्रकाश करावें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रो हर्यन्तमर्जुनं वज्रं शुक्रैरभीवृतम्।
अपावृणोद्धरिभिरद्रिभिः सुतमुद्गा हरिभिराजत॥५॥८॥

इन्द्रः। हर्यन्तम्। अर्जुनम्। वज्रम्। शुक्रैः। अभिऽवृतम्। अप। अवृणोत्। हरिऽभिः। अद्रिऽभिः। सुतम्। उत्। गाः। हरिऽभिः। आजत॥५॥

पदार्थः-**(इन्द्रः)** सूर्य्यः **(हर्यन्तम्)** कामयन्तम् **(अर्जुनम्)** रूपम्। **अर्जुनमिति रूपनामसु पठितम्।** (निघं०३.७) **(वज्रम्)** किरणसमूहम् **(शुक्रैः)** आशुकरैर्गुणैः **(अभीवृतम्)** अभितो वृतं युक्तम् **(अप) (अवृणोत्)** दूरीकरोति **(हरिभिः)** हरणशीलैः किरणैः **(अद्रिभिः)** मेघैः **(सुतम्)** सिद्धम् **(उत्) (गाः)** पृथिवी **(हरिभिः)** मनुष्यैः सह राजा। **हरय इति मनुष्यनामसु पठितम्।** (निघं०२.३) **(आजत)** प्रक्षिपति॥५॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यथेन्द्रः शुक्रैरभीवृतमर्जुनं वज्रं हर्यन्तं हरिभिरद्रिभिः सुतमपावृणोत् तथा हरिभिः सह राजा गा इवोदाजत॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये सूर्य्यवद्विद्याविनयसेनाधनादिकं प्रकाश्याऽविद्यादि निवर्त्य सुसहायेन राज्ञा सहाऽऽमन्त्र्य राज्यं पालयन्ति ते पूर्णकामा भवन्तीति॥५॥

अत्र सूर्य्यविद्युद्वायुविद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुश्चत्वारिंशत्तमं सूक्तमष्टमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे विद्वान् लोगो! जैसे **(इन्द्रः)** सूर्य्य **(शुक्रैः)** शीघ्रता करनेवाले गुणों से **(अभीवृतम्)** सब ओर से युक्त **(अर्जुनम्)** रूप और **(वज्रम्)** किरणों के समूह की **(हर्यन्तम्)** कामना करते हुए **(हरिभिः)** हरनेवाली किरणों और **(अद्रिभिः)** मेघों से **(सुतम्)** सिद्ध हुए पदार्थ को **(अप, अवृणोत्)** दूर

करता है, वैसे **(हरिभिः)** मनुष्यों के साथ राजा **(गाः)** पृथिवियों के तुल्य और पदार्थों को **(उत् आजत)** फेंकता है॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो लोग सूर्य्य के सदृश विद्या, नम्रता, सेना और धन आदि का प्रकाश और अविद्या आदि की निवृत्ति कर जिसका उत्तम सहाय उस राजा के साथ सलाह करके राज्य का पालन करते हैं, वे पूर्ण मनोरथवाले होते हैं॥५॥

इस सूक्त में सूर्य्य, बिजुली, वायु और विद्वान् के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह चवालीसवां सूक्त और आठवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्य पञ्चचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, २ निचृद्बृहती। ३, ५ बृहती छन्दः। मध्यमः स्वरः। ४ स्वराडनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब पाँच ऋचावाले पैंतीलीसवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में विद्वान् के विषय को कहते हैं॥

आ मन्द्रैरिन्द्र हरिभिर्याहि मयूररोमभिः।

मा त्वा केचिन्नि यमन् विं न पाशिनोऽति धन्वेव ताँ इहि॥ १॥

आ। मन्द्रैः। इन्द्र। हरिऽभिः। याहि। मयूररोमऽभिः। मा। त्वा। के। चित्। नि। यमन्। विम्। न। पाशिनः। अति। धन्वऽइव। तान्। इहि॥ १॥

पदार्थः-(**आ**) (**मन्द्रैः**) आनन्दप्रदैः (**इन्द्र**) परमैश्वर्य्ययुक्त (**हरिभिः**) प्रयत्नवद्भिर्मनुष्यैरिवाऽश्वैः किरणैर्वा (**याहि**) आगच्छ (**मयूररोमभिः**) मयूराणां लोमानीव लोमानि येषान्तैः (**मा**) निषेधे (**त्वा**) त्वाम् (**के**) (**चित्**) अपि (**नि**) नितराम् (**यमन्**) यच्छन्तु (**विम्**) पक्षिणम् (**न**) इव (**पाशिनः**) पाशवन्तो बन्धनाय प्रवृत्ताः (**अति**) (**धन्वेव**) यथा शस्त्रविशेषः (**तान्**) (**इहि**) गच्छ॥ १॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं मयूररोमभिर्मन्द्रैर्हरिभिरायाहि यतः केचित्वा पाशिनो विं न मा नि यमन् धन्वेव तानतीहि॥ १॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। राजपुरुषैस्तादृश्या सेनया तादृशैर्यानैर्युद्धादि-व्यवहारसिद्धये गन्तुमतिचातुर्य्येण संग्रामं कृत्वा विजयो लब्धव्यो येन केचित्तान्न निगृह्णीयुस्तथाऽनुष्ठातव्यम्॥ १॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य से युक्त! आप (**मयूररोमभिः**) मयूरों के रोमों के सदृश रोम हैं जिनके उन (**मन्द्रैः**) आनन्द को देनेवाले (**हरिभिः**) प्रयत्नवान् मनुष्यों के सदृश घोड़ों वा किरणों से (**आ, याहि**) आओ जिससे (**के, चित्**) कोई लोग (**त्वा**) आपको (**पाशिनः**) बन्धन के लिये प्रवृत्त हुए (**विम्**) पक्षी को (**न**) तुल्य (**मा**) नहीं (**नि**) अत्यन्त (**यमन्**) निग्रह क्लेश देवें, किन्तु (**धन्वेव**) शस्त्र विशेष धनुष् के तुल्य (**तान्**) उनको (**अति, इहि**) अतिक्रमण कर प्राप्त हूजिये॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। राजपुरुषों को चाहिये कि ऐसी सेना, ऐसे रथ आदि कि जिनसे युद्धादि व्यवहारसिद्धि के लिये जाने को अति चतुराई के साथ संग्राम करके विजय पावें और जिससे और जन उनको ग्रहण न करें, ऐसा उपाय करें॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वृत्रखादो वलंरुजः पुरां दर्मो अपामजः।

स्थाता रथस्य हर्योरभिस्वर इन्द्रो दृळहा चिदारुजः॥२॥

वृत्रऽखादः। वलम्ऽरुजः। पुराम्। दर्मः। अपाम्। अजः। स्थाता। रथस्य। हर्योः। अभिऽस्वरे। इन्द्रः। दृळहा। चित्। आऽरुजः॥२॥

पदार्थः-(**वृत्रखादः**) यो वृत्रं मेघं खादति किरणो वायुर्वा (**वलंरुजः**) यो वलं मेघं रुजति (**पुराम्**) शत्रूणां नगराणाम् (**दर्मः**) दृणुयास्म (**अपाम्**) जलानाम् (**अजः**) प्रेरकः (**स्थाता**) (**रथस्य**) **[**रथस्य**]** मध्ये (**हर्योः**) अश्वयोः (**अभिस्वरे**) योऽभितः स्वरति शब्दयति तस्मिन् (**इन्द्रः**) सूर्यः (**दृढा**) दृढानि (**चित्**) अपि (**आरुजः**) यः समन्ताद्रुजति भनक्ति॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा वृत्रखादो वलंरुजोऽपामज आरुज इन्द्रो दृढा दृणाति तथैव वयं चिच्छत्रूणां पुरा मध्ये स्थितान् वीरान् दर्मः। यथा हर्योरभिस्वरे स्थितस्य रथस्य मध्ये स्थाता वीरान् जयति तथैव वयं जयेम॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा विद्युत्सूर्यवायवो मेघाऽवयवाञ्छिन्दन्ति तथैव धार्मिका राजादयश्शत्रून् विछिन्द्युः॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**वृत्रखादः**) मेघों को भक्षण करनेवाला किरण वा वायु (**वलंरुजः**) मेघ का नाश करने और (**अपाम्**) जलों को (**अजः**) प्रेरणा करने तथा (**आरुजः**) चारों ओर से तोड़नेवाला (**इन्द्रः**) सूर्य्य (**दृढा**) दृढ़ भङ्ग करता है, वैसे हम लोग (**चित्**) भी (**पुराम्**) शत्रुओं के नगरों के मध्य में वर्त्तमान वीरों को (**दर्मः**) नाश करें और जैसे (**हर्योः**) दो घोड़ों के (**अभिस्वरे**) चारों ओर शब्द करनेवाले में वर्त्तमान (**रथस्य**) रथ के मध्य में (**स्थाता**) वर्त्तमान होनेवाला पुरुष वीर पुरुषों को जीतता है, वैसे ही हम लोग भी जीतें॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे बिजुली, सूर्य और पवन मेघों के अवयवों का काटते हैं, वैसे ही धार्मिक राजा आदि लोग शत्रुओं को काटें॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

गम्भीराँ उदधीरिव क्रतुं पुष्यसि गा इव।
प्र सुगोपा यवसं धेनवो यथा ह्रदं कुल्या इवाशत॥३॥

गम्भीरान्। उदधीन्ऽइव। क्रतुम्। पुष्यसि। गाःऽइव। प्र। सुऽगोपाः। यवसम्। धेनवः। यथा। ह्रदम्। कुल्याःऽइव। आशत॥३॥

पदार्थः-(**गम्भीरान्**) अगाधान् (**उदधीनिव**) उदकानि धीयन्ते येषु तानिव (**क्रतुम्**) प्रज्ञाम् (**पुष्यसि**) (**गाइव**) पृथिव्य इव (**प्र**) (**सुगोपाः**) यः सुष्ठु रक्षति सः (**यवसम्**) धान्यपलादिकम् (**धेनवः**) गावः (**यथा**) (**ह्रदम्**) जलाशयम् (**कुल्याइव**) वाटिकादिषु जलचालनमार्गा इव (**आशत**) व्याप्नुत॥३॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यतस्त्वं गम्भीरानुदधीनिव गाइव क्रतुं सुगोपाः सन् पुष्यसि यथा धेनवो यवसं ह्रदं कुल्याइव ये प्राशत तस्मात्तथा च त्वमेते सर्वाणि सुखानि लभन्ते॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। येषां समुद्रवदक्षोभ्या प्रज्ञा पृथिवीवत् क्षमा पालनशक्तिर्धेनुवद्दानं कुल्यावद्वर्धनं वर्त्तते त एव सर्वसुखा जायन्ते॥३॥

पदार्थः-हे विद्वन् पुरुष! जिससे आप (**गम्भीरान्**) अथाह (**उदधीनिव**) जल जिसमें रहें, उन समुद्रों के सदृश और (**गाइव**) पृथिवियों के सदृश (**क्रतुम्**) बुद्धि को (**पुष्यसि**) पूर्ण करते हो, (**सुगोपाः**) उत्तम प्रकार रक्षा करनेवाले होकर (**यथा**) जैसे (**धेनवः**) गौयें (**यवसम्**) धान्य तृण आदि (**ह्रदम्**) और जल के स्थान को (**कुल्याइव**) वाटिका आदि में जल चलाने के मार्गों के तुल्य जो (**प्र, आशत**) प्राप्त हों, इससे और वैसे आप और ये लोग सम्पूर्ण सुखों को प्राप्त होते हैं॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जिन लोगों की समुद्र के सदृश अचल गम्भीर बुद्धि, पृथिवी के सदृश क्षमा और पालने का सामर्थ्य, गौ के सदृश दान और नदी के सदृश वृद्धि है, वे ही सम्पूर्ण सुखों से युक्त होते हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ नस्तुजं रयिं भरांशं न प्रतिजानते।
वृक्षं पक्वं फलमङ्कीव धूनुहीन्द्र संपारणं वसु॥४॥

आ। नः। तुजम्। रयिम्। भर। अंशम्। न। प्रतिऽजानते। वृक्षम्। पक्वम्। फलम्। अङ्कीऽइव। धूनुहि। इन्द्र। सम्ऽपारणम्। वसु॥४॥

पदार्थः-(**आ**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**तुजम्**) आदातव्यम् (**रयिम्**) धनम् (**भर**) धेहि (**अंशम्**) भागम् (**न**) इव (**प्रतिजानते**) प्रतिज्ञया व्यवहारस्य साधकाय (**वृक्षम्**) (**पक्वम्**) (**फलम्**) (**अङ्कीव**) यथाङ्कुशो तथा (**धूनुहि**) कम्पय (**इन्द्र**) धनप्रद (**संपारणम्**) सम्यग् दुःखस्य पारं गच्छति येन तत् (**वसु**) धनम्॥४॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वमंशं न नोऽस्मभ्यं प्रतिजानते च तुजं रयिमाभर। वृक्षं पक्वं फलमङ्कीव संपारणं वसु धूनुहि॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। त एव धार्मिका ये परसुखाय श्रियं धृत्वा परदुःखभञ्जनाः स्युः॥४॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** धन के दाता! आप **(अंशम्)** भाग के **(न)** तुल्य **(नः)** हम लोगों के लिये **(प्रतिजानते)** प्रतिज्ञा से व्यवहार के सिद्ध करनेवाले के लिये और **(तुजम्)** ग्रहण करने के योग्य **(रयिम्)** धन को **(आ)** सब ओर से **(भर)** दीजिये **(वृक्षम्)** वृक्ष को और **(पक्वम्)** पाकयुक्त **(फलम्)** फल को **(अङ्कीव)** अंकुश धारण किये हुए के सदृश **(संपारणम्)** उत्तम प्रकार दुःख के पार जाता है जिससे ऐसे **(वसु)** धन को **(धूनुहि)** कंपाइये अर्थात् भेजिये॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। वे ही धार्मिक पुरुष हैं जो अन्य लोगों के सुख के लिये लक्ष्मी धारण करके औरों के दुःख नाश करनेवाले होवें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स्वयुरिन्द्र स्वराळसि स्मद्दिष्टिः स्वयशस्तरः।

स वावृधान ओजसा पुरुष्टुत भवा नः सुश्रवस्तमः॥५॥९॥

स्वऽयुः। इन्द्र। स्वऽराट्। असि। स्मत्ऽदिष्टिः। स्वयशःऽतरः। सः। ववृधानः। ओजसा। पुरुऽस्तुत। भव। नः। सुश्रवःऽतमः॥५॥९।

पदार्थः-**(स्वयुः)** यः स्वं धनं याति सः **(इन्द्र)** परमैश्वर्यवन् **(स्वराट्)** यः स्वेनैव राजते **(असि)** **(स्मद्दिष्टिः)** कल्याणोपदेष्टा **(स्वयशस्तरः)** स्वकीयं यशो धनं प्रशंसनं वा यस्य सोऽतिशयितः **(सः)** **(वावृधानः)** वर्द्धमानः **(ओजसा)** पराक्रमेण **(पुरुष्टुत)** बहुभिः प्रशंसित **(भव)**। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(नः)** अस्मभ्यम् **(सुश्रवस्तमः)** सुष्ठु धनः श्रवणयुक्तः सोऽतिशयितः॥५॥

अन्वयः-हे पुरुष्टुतेन्द्र! यस्त्वं स्वयुः स्वराट् स्मद्दिष्टिः स्वयशस्तरोऽसि स त्वमोजसा वावृधानः सुश्रवस्तमो नोऽस्मभ्यं भव॥५॥

भावार्थः-स एव सम्राड् भवितुं योग्यो जायते योऽतिशयेन प्रशंसितगुणकर्मस्वभावो भवति स एव सम्राट् सर्वेषां वर्द्धको भवतीति॥५॥

अत्र सूर्य्यविद्राजगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति पञ्चचत्वारिंशत्तमं सूक्तं नवमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(पुरुष्टुत)** बहुतों से प्रशंसित **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्यवाले! जो आप **(स्वयुः)** धन को प्राप्त **(स्वराट्)** स्वतन्त्र राज्यकर्त्ता **(स्मद्दिष्टिः)** कल्याण कर्म का उपदेश देनेवाले और **(स्वयशस्तरः)** अपने यश, धन और प्रशंसा से गम्भीर **(असि)** हैं **(सः)** वह **(ओजसा)** पराक्रम से **(वावृधानः)** वृद्धि को प्राप्त **(सुश्रवस्तमः)** श्रेष्ठ धन से युक्त बातचीत के अत्यन्त सुननेवाले **(नः)** हम लोगों के लिये

(भव) होइये॥५॥

भावार्थः-वही चक्रवर्ती राजा होने के योग्य होता है कि जो अत्यन्त प्रशंसायुक्त गुण, कर्म और स्वभाववाला है और वही राजा सबका वृद्धिकारक होता है॥५॥

इस सूक्त में सूर्य, विद्वान् और राजा के गुणवर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह पैंतालीसवां सूक्त और नववां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्य षट्चत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। १ विराट् त्रिष्टुप्। २, ५ निचृत् त्रिष्टुप्। ३, ४ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ राजा कीदृशो भवेदित्याह॥

अब पाँच ऋचावाले छियालीसवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में राजा कैसा हो, इस विषय को कहते हैं॥

युध्मस्य॑ ते वृष॒भस्य॑ स्व॒राज॑ उ॒ग्रस्य॒ यूनः॒ स्थवि॑रस्य॒ घृष्वेः॑।
अजू॑र्यतो व॒ज्रिणो॑ वी॒र्या॒३॑णीन्द्र॑ श्रु॒तस्य॑ मह॒तो म॒हानि॑॥ १॥

यु॒ध्मस्य॑। ते॒। वृ॒ष॒भस्य॑। स्व॒ऽराजः॑। उ॒ग्रस्य॑। यूनः॑। स्थवि॑रस्य। घृष्वेः॑। अजू॑र्यतः। व॒ज्रिणः॑। वी॒र्या॑णि। इन्द्र॑। श्रु॒तस्य॑। म॒ह॒तः। म॒हानि॑॥ १॥

पदार्थः-(**युध्मस्य**) योद्धुं शीलस्य (**ते**) तव (**वृषभस्य**) बलिष्ठस्य (**स्वराजः**) यः स्वेन राजते तस्य (**उग्रस्य**) तेजस्विस्वभावस्य (**यूनः**) यौवनावस्थां प्राप्तस्य (**स्थविरस्य**) वृद्धस्य (**घृष्वेः**) शत्रूणां घर्षकस्य (**अजूर्यतः**) अजीर्णस्य (**वज्रिणः**) वज्रं बहुविधं शस्त्रं विद्यते यस्य तस्य (**वीर्य्याणि**) वीरस्य कर्माणि (**इन्द्र**) परमैश्वर्य्ययोजक (**श्रुतस्य**) प्रसिद्धस्य (**महतः**) पूज्यस्य (**महानि**)॥ १॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यस्य युध्मस्य स्वराजो वृषभस्योग्रस्य यूनः स्थविरस्य घृष्वेरजूर्यतो वज्रिणो महतः श्रुतस्य ते तव यानि महानि वीर्य्याणि सन्ति, तैर्युक्तस्त्वमस्माभिः सत्कर्त्तव्योऽसि॥ १॥

भावार्थः-यदि सर्वलक्षणसम्पन्नो युवा वा वृद्धोऽपि राजा स्यात्तथैव प्रयत्नेन स्वसामर्थ्यवर्द्धको भवेत्॥ १॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य के दाता! जिस (**युध्मस्य**) युद्ध करने और (**स्वराजः**) अपने से प्रकाशित (**वृषभस्य**) बलवाले (**उग्रस्य**) तेजस्वी स्वभाव और (**यूनः**) यौवन अवस्था को प्राप्त पुरुष तथा (**स्थविरस्य**) वृद्धावस्थायुक्त पुरुष के और (**घृष्वेः**) शत्रुओं को घसीटनेवाले (**अजूर्यतः**) शरीर की शिथिलता से रहित और (**वज्रिणः**) बहुत प्रकार के शस्त्रों से युक्त (**महतः**) सेवा करने योग्य (**श्रुतस्य**) प्रसिद्ध (**ते**) आपके जो (**महानि**) श्रेष्ठ (**वीर्य्याणि**) वीर पुरुषों के कर्म हैं, उनसे युक्त आप हम लोगों से सत्कार पाने योग्य हैं॥ १॥

भावार्थः-जो सम्पूर्ण लक्षणों से युक्त युवा वा वृद्ध भी राजा हो, वैसे ही अपने प्रयत्न से अपने सामर्थ्य का बढ़ानेवाला होवे॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

म॒हाँ अ॑सि महिष॒ वृष्ण्ये॑भिर्धन॒स्पृदु॑ग्र॒ सह॑मानो अ॒न्यान्।

एको॒ विश्व॑स्य॒ भुव॑नस्य॒ राजा॒ स यो॒धया॑ च क्ष॒यया॑ च॒ जना॑न्॥ २॥

म॒हान्। अ॒सि॒। म॒हि॒ष॒। वृष्ण्ये॑भिः। ध॒न॒ऽस्पृत्। उ॒ग्र॒। सह॑मानः। अ॒न्यान्। एकः॑। विश्व॑स्य। भुव॑नस्य। राजा॑। सः। यो॒धय॑। च॒। क्ष॒यय॑। च॒। जना॑न्॥ २॥

पदार्थः-(**महान्**) महागुणविशिष्टः (**असि**) (**महिष**) पूजनीयतम (**वृष्ण्येभिः**) वृषेषु बलिष्ठेषु भवैर्गुणैः (**धनस्पृत्**) यो धनं स्पृणोति सेवते सः (**उग्र**) बलादियुक्त (**सहमानः**) (**अन्यान्**) शत्रून् (**एकः**) असहायः (**विश्वस्य**) समग्रस्य (**भुवनस्य**) भूताधिकरणस्य (**राजा**) प्रकाशमानः (**सः**) (**योधय**)। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**च**) (**क्षयय**) क्षायय निवासय पराजयं प्रापय वा। अत्रापि **संहितायामि**ति दीर्घः। (**च**) (**जनान्**) प्रसिद्धान् वीरान्॥ २॥

अन्वयः-हे महिषोग्र राजन्! यतस्त्वं वृष्ण्येभिः सह महान् धनस्पृदेकोऽन्यान् सहमानो विश्वस्य भुवनस्य महान् राजासि स त्वं जनान् योधय च क्षयय शत्रून् पराजयं प्रापय सज्जनान् निवासय॥ २॥

भावार्थः-ये शरीरात्मनोः पूर्णं बलं कृत्वा शत्रून् निवारयन्ति सज्जनान् सत्कृत्याऽऽनन्दन्ति ते महान्तो भवन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे (**महिष**) अत्यन्त आदर करने योग्य! (**उग्र**) बल आदिकों से युक्त और (**राजन्**) प्रकाशित जिससे आप (**वृष्ण्येभिः**) बलवान् पुरुषों में उत्पन्न गुणों के साथ (**महान्**) श्रेष्ठ गुणों से युक्त और (**धनस्पृत्**) धन के सेवक (**एकः**) सहायरहित (**अन्यान्**) शत्रुओं को (**सहमानः**) सहते हुए (**विश्वस्य**) सम्पूर्ण (**भुवनस्य**) प्राणियों के निवास के स्थान के श्रेष्ठ गुणों से युक्त (**राजा**) [प्रकाशमान] (**असि**) हैं (**सः**) वह आप (**जनान्**) प्रसिद्ध वीरों को (**योधय**) लड़ाइये, शत्रुओं को (**क्षयय**) पराजय को पहुँचाइये (**च**) और सज्जनों को अपने देश में बसाइये॥ २॥

भावार्थः-जो लोग शरीर और आत्मा का पूर्ण बल करके शत्रुओं को निवारण करते और सज्जनों का सत्कार करके आनन्द देते हैं, वे श्रेष्ठ होते हैं॥ २॥

अथ विद्युद्विषयमाह॥

अब बिजुली के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र मात्रा॑भी रिरिचे॒ रोच॑मानः॒ प्र दे॒वेभि॑र्वि॒श्वतो॒ अप्र॑तीतः।
प्र म॒ज्मना॑ दि॒व इन्द्रः॑ पृथि॒व्याः प्रोरोर्म॒हो अ॒न्तरि॑क्षादृजी॒षी॥ ३॥

प्र। मात्रा॑भिः। रि॒रि॒चे॒। रोच॑मानः। प्र। दे॒वेभिः॑। वि॒श्वतः॑। अप्र॑तिऽइतः। प्र। म॒ज्मना॑। दि॒वः। इन्द्रः॑। पृ॒थि॒व्याः। प्र। उ॒रोः। म॒हः। अ॒न्तरि॑क्षात्। ऋ॒जी॒षी॥ ३॥

पदार्थः-(**प्र**) (**मात्राभिः**) शब्दादिभिः सूक्ष्मैर्व्यवहाराऽवयवैर्वा (**रिरिचे**) अतिरिच्यते (**रोचमानः**) रुचिं कुर्वन् (**प्र**) (**देवेभिः**) विद्वद्भिः सह (**विश्वतः**) सर्वतः (**अप्रतीतः**) प्रसिद्धिमप्राप्तः (**प्र**) (**मज्मना**)

बलेन **(दिवः)** प्रकाशात् **(इन्द्रः)** पराक्रमवान् सूर्य्य इव तेजस्वी **(पृथिव्याः)** भूमेः **(प्र)** **(उरोः)** बहुविधगुणयुक्तात् **(महः)** महतः **(अन्तरिक्षात्)** आकाशात् **(ऋजीषी)** सरलस्वभावः॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा रोचमानो विश्वतोऽप्रतीत ऋजीषी इन्द्रो विद्युद्रूपोऽग्निर्मात्राभिः प्र रिरिचे देवेभिः सह प्र रिरिचे मज्मना दिवः पृथिव्या उरोर्महोऽन्तरिक्षात् प्ररिरिचे तथाऽऽचरन्तो यूयं प्रतिष्ठां प्रलभध्वम्॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यथाऽविकृता विद्युद्गन्धकादिष्वपि स्थिता न विरुणद्धि तथैव सर्वैः सह मैत्रीं कृत्वा विरोधं विजहत॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे **(रोचमानः)** प्रीति करता हुआ **(विश्वतः)** सर्वत्र **(अप्रतीतः)** प्रसिद्धि को नहीं प्राप्त **(ऋजीषी)** सीधे स्वभाववाला **(इन्द्रः)** और पराक्रम से युक्त सूर्य्य के सदृश तेजस्वी बिजुलीरूप अग्नि **(मात्राभिः)** शब्द आदि वा सूक्ष्म व्यवहारों के अवयवों से **(प्र, रिरिचे)** अधिक होता है और **(देवेभिः)** विद्वानों के साथ **(प्र)** वृद्धि को प्राप्त होता है **(मज्मना)** बल से **(दिवः)** प्रकाश से **(पृथिव्याः)** भूमि **(उरोः)** अनेक प्रकार गुणों के समूह से युक्त **(महः)** बड़े **(अन्तरिक्षात्)** आकाश से **(प्र)** अधिक होता है, वैसा आचरण करते हुए आप लोग प्रतिष्ठा को **(प्र)** अच्छे प्रकार प्राप्त हूजिये॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जैसे विकार को नहीं प्राप्त हुई बिजुली गन्धक आदिकों में वर्त्तमान हुई भी कुछ हानि नहीं करती, वैसे ही सब लोगों के साथ मित्रता करके विरोध का त्याग करो॥३॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उरुं गभीरं जनुषाभ्यु१ग्रं विश्वव्यचसमवतं मतीनाम्।

इन्द्रं सोमासः प्रदिवि सुतासः समुद्रं न स्रवत आ विशन्ति॥४॥

उरुम्। गभीरम्। जनुषा। अभि। उग्रम्। विश्वऽव्यचसम्। अवतम्। मतीनाम्। इन्द्रम्। सोमासः। प्रऽदिवि। सुतासः। समुद्रम्। न। स्रवतः। आ। विशन्ति॥४॥

पदार्थः-**(उरुम्)** बहुविधगुणम् **(गभीरम्)** गूढाशयम् **(जनुषा)** जन्मना **(अभि)** आभिमुख्ये **(उग्रम्)** सर्वैः सह समवेतम् **(विश्वव्यचसम्)** विश्वव्यापकम् **(अवतम्)** रक्षकम् **(मतीनाम्)** मनुष्याणाम् **(इन्द्रम्)** विद्युतम् **(सोमासः)** ऐश्वर्य्यवन्तः **(प्रदिवि)** प्रकृष्टप्रकाशे **(सुतासः)** विद्याविनयाभ्यां निष्पन्नाः **(समुद्रम्)** **(न)** इव **(स्रवतः)** चलन्त्यः सरितः। अत्र **वाच्छन्दसी**ति वर्णलोपो वेतीकाराऽभावे नुमोऽप्यभावः। **(आ)** **(विशन्ति)** प्रविशन्ति॥४॥

अन्वयः-ये प्रदिवि सुतासः सोमासो विद्वांसो जनुषोरुं गभीरमुग्रं विश्वव्यचसं मतीनामवतमिन्द्रं स्रवतः समुद्रं नाभ्याविशन्ति तथैव ये सर्वत्र प्रविशन्ति तेऽक्षयैश्वर्या भवन्ति॥४॥

भावार्थः-ये विद्युद्विद्यां विज्ञायोपकारं ग्रहीतुं शक्नुवन्ति ते समग्राः श्रिय उपलभन्ते॥४॥

पदार्थः-जो लोग **(प्रदिवि)** उत्तम प्रकाश में **(सुतासः)** विद्या और विनय से प्रसिद्ध **(सोमासः)** ऐश्वर्य्यवाले विद्वान् लोग **(जनुषा)** जन्म से **(उरुम्)** अनेक प्रकार के गुणों से युक्त **(गभीरम्)** गूढ़ अभिप्रायवाले **(उग्रम्)** सबके साथ मिले हुए **(विश्वव्यचसम्)** सर्वत्र व्यापक **(मतीनाम्)** मनुष्यों के **(अवतम्)** रक्षा करनेवाले **(इन्द्रम्)** बिजुली रूप अग्नि को **(स्रवतः)** बहती हुई नदियां **(समुद्रम्)** समुद्र को **(न)** जैसे **(अभि, आ, विशन्ति)** सब ओर से प्रविष्ट होती हैं, वैसे जो सब ओर से प्रवेश करते अर्थात् उसमें चित्त देते हैं, वे उस ऐश्वर्यवाले होते हैं, जो ऐश्वर्य कभी नष्ट नहीं होता है॥४॥

भावार्थः-जो लोग बिजुली सम्बन्धी विद्या को जान कर उसके द्वारा उपकार ग्रहण कर सकते हैं, वे अनेक प्रकार की लक्ष्मियों को प्राप्त होते हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर भी उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यं सोम॑मिन्द्र पृथि॒वीद्यावा॒ गर्भं॒ न मा॒ता बि॑भृ॒तस्त्वा॒या।
तं ते॑ हिन्वन्ति॒ तमु॑ ते मृजन्त्यध्व॒र्यवो॑ वृषभ॒ पात॒वा उ॑॥५॥१०॥

यम्। सोम॑म्। इ॒न्द्र॒। पृ॒थि॒वीद्यावा॑। गर्भ॑म्। न। मा॒ता। बि॒भृ॒तः। त्वा॒ऽया। तम्। ते॒। हि॒न्व॒न्ति॒। तम्। ऊ॒म् इति॑। ते॒। मृ॒ज॒न्ति॒। अ॒ध्व॒र्यवः॑। वृ॒ष॒भ॒। पात॑वै। ऊ॒म् इति॑॥५॥

पदार्थः-**(यम्)** **(सोमम्)** ऐश्वर्यम् **(इन्द्र)** ऐश्वर्ययोजक **(पृथिवीद्यावा)** भूमिविद्युतौ **(गर्भम्)** **(न)** इव **(माता)** **(बिभृतः)** धरतः **(त्वाया)** त्वां प्राप्ते **(तम्)** **(ते)** तुभ्यम् **(हिन्वन्ति)** वर्द्धयन्ति **(तम्)** **(उ)** **(ते)** तुभ्यम् **(मृजन्ति)** शुन्धन्ति **(अध्वर्यवः)** आत्मनोऽध्वरमहिंसां कामयमानाः **(वृषभ)** बलिष्ठ **(पातवै)** पातुं रक्षितुम् **(उ)**॥५॥

अन्वयः-हे वृषभेन्द्र! ये त्वाया पृथिवीद्यावा माता गर्भं न यं सोमं बिभृतस्तं ते ये हिन्वन्ति तमु ते येऽध्वर्यवो हिन्वन्तु ते ये मृजन्ति तानु पातवै त्वमुद्युक्तो भव॥५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये विद्वांसो पृथिवीवत्सूर्यवत् सर्वान् विद्याबलाभ्यां वर्धयन्ति सुशिक्षया शुन्धन्ति ते मातृवत्पालकाः सन्तीति मत्वा सर्वैः सत्कर्त्तव्या इति॥५॥

अत्र राजविद्युत्पृथिव्यादिगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षट्चत्वारिंशत्तमं सूक्तं दशमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(वृषभ)** बलिष्ठ **(इन्द्र)** ऐश्वर्य से युक्त करनेवाले! जो **(त्वाया)** आपको प्राप्त हुई

(पृथिवीद्यावा) भूमि और बिजुली **(माता)** माता **(गर्भम्)** गर्भ को **(न)** जैसे वैसे **(यम्)** जिस **(सोमम्)** ऐश्वर्य को **(बिभृतः)** धारण करते हैं **(तम्)** उसको **(ते)** तुम्हारे लिये जो **(हिन्वन्ति)** वृद्धि करते हैं **(तम्, उ)** उसी को **(ते)** आपके लिये जो **(अध्वर्यवः)** अपनी हिंसा नहीं चाहते हुए बढ़ाते हैं वा तुम्हारे लिये उसी को जो लोग **(मृजन्ति)** शुद्ध करते हैं उनकी **(उ)** ही **(पातवै)** रक्षा के लिये आप उद्युक्त होइये॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो विद्वान् लोग पृथिवी और सूर्य्य के सदृश सबको विद्या और बल से बढ़ाते और उत्तम शिक्षा से पवित्र करते वे माता के सदृश पालन करनेवाले हैं। ऐसा जान कर वे सब लोगों से सत्कार करने योग्य हैं॥५॥

इस सूक्त में राजा, बिजुली और पृथिवी आदिकों के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह छयालीसवां सूक्त और दशवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्य सप्तचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। १-३ निचृत् त्रिष्टुप्। ४ त्रिष्टुप्। ५ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ राजविषयमाह॥

अब पाँच ऋचावाले सैंतालीसवें सूक्त का आरम्भ है। इसके प्रथम मन्त्र में राजा के विषय को कहते हैं॥

मरुत्वाँ इन्द्र वृषभो रणाय पिबा सोममनुष्वधं मदाय।
आ सिञ्चस्व जठरे मध्व ऊर्मिं त्वं राजासि प्रदिवः सुतानाम्॥ १॥

मरुत्वान्। इन्द्र। वृषभः। रणाय। पिब। सोमम्। अनुऽस्वधम्। मदाय। आ। सिञ्चस्व। जठरे। मध्वः। ऊर्मिम्। त्वम्। राजा। असि। प्रऽदिवः। सुतानाम्॥ १॥

पदार्थः-(**मरुत्वान्**) मरुतः प्रशस्ता मनुष्या विद्यन्ते यस्य सः (**इन्द्र**) परमैश्वर्ययुक्त! (**वृषभः**) बलिष्ठः (**रणाय**) संग्रामाय (**पिब**)। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**सोमम्**) महौषधिरसम् (**अनुष्वधम्**) अनुकूलं स्वधान्नं विद्यते यस्मिँस्तम् (**मदाय**) आनन्दाय (**आ**) (**सिञ्चस्व**) (**जठरे**) उदरे (**मध्वः**) मधुरस्य (**ऊर्मिम्**) तरङ्गम् (**त्वम्**) (**राजा**) प्रकाशमानः (**असि**) (**प्रदिवः**) प्रकर्षेण विद्याविनयप्रकाशस्य (**सुतानाम्**) उत्पन्नानामैश्वर्यादीनाम्॥ १॥

अन्वयः-हे इन्द्र मरुत्वान् वृषभस्त्वं रणाय मदायानुष्वधं सोमं पिब। जठरे मध्व ऊर्मिमासिञ्चस्व [**येन त्वं**] प्रदिवः सुतानां राजाऽसि तस्मादेतदाचर॥ १॥

भावार्थः-हे राजन्! भवान् यदि विजयमारोग्यं बलं दीर्घमायुश्चेच्छेत्तर्हि ब्रह्मचर्य्यं धनुर्वेदविद्यां जितेन्द्रियत्वं युक्ताऽऽहारविहारञ्च करोतु॥ १॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य से युक्त (**मरुत्वान्**) श्रेष्ठ मनुष्यों से युक्त (**वृषभः**) बलवान्! आप (**रणाय**) संग्राम के और (**मदाय**) आनन्द के लिये (**अनुष्वधम्**) अनुकूल स्वधा अन्न वर्त्तमान जिसमें ऐसे (**सोमम्**) श्रेष्ठ ओषधी के रस का (**पिब**) पान करो और (**जठरे**) पेट में (**मध्वः**) मधुर की (**ऊर्मिम्**) लहर को (**आ, सिञ्चस्व**) सेवन करो जिससे (**त्वम्**) आप (**प्रदिवः**) अत्यन्त विद्या और विनय से प्रकाशित के (**सुतानाम्**) उत्पन्न हुए ऐश्वर्य आदिकों के (**राजा**) प्रकाशकर्त्ता (**असि**) हैं, इससे ऐसा आचरण करो॥ १॥

भावार्थः-हे राजन्! आप जो विजय, आरोग्य, बल और अधिक अवस्था की इच्छा करें तो ब्रह्मचर्य, धनुर्वेदविद्या, जितेन्द्रियत्व और नियमित आहार-विहार को करिये॥ १॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सजोषा इन्द्र सगणो मरुद्भिः सोमं पिब वृत्रहा शूर विद्वान्।

जहि शत्रूँरप मृधो नुदस्वाथाभयं कृणुहि विश्वतो नः॥२॥

सऽजोषाः। इन्द्र। सऽगणः। मरुत्ऽभिः। सोमम्। पिब। वृत्रऽहा। शूर। विद्वान्। जहि। शत्रून्। अप। मृधः। नुदस्व। अथ। अभयम्। कृणुहि। विश्वतः। नः॥२॥

पदार्थः-(**सजोषाः**) समानप्रीतिसेवनः (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्यप्रयोजक (**सगणः**) गणैः सह वर्त्तमानः (**मरुद्भिः**) वायुभिरिव वीरैः सह (**सोमम्**) (**पिब**) (**वृत्रहा**) मेघस्य हन्ता सूर्य्य इव (**शूर**) शत्रूणां हिंसक (**विद्वान्**) सकलविद्यावित् (**जहि**) नाशय (**शत्रून्**) (**अप**) दूरीकरणे (**मृधः**) संग्रामान् (**नुदस्व**) प्रेरस्व (**अथ**) (**अभयम्**) (**कृणुहि**) (**विश्वतः**) सर्वतः (**नः**) अस्मान्॥२॥

अन्वयः-हे शूरेन्द्र राजन्! मरुद्भिः सगणो वृत्रहा सूर्य्य इव सजोषाः सगणो मरुद्भिः सह विद्वान् सोमं पिब शत्रूनपजहि मृधो नुदस्वाथ विश्वतो नोऽभयं कृणुहि॥२॥

भावार्थः-ये राजादयो मनुष्याः परस्परेषु सुहृदो भूत्वा युक्ताहारविहारब्रह्मचर्यजितेन्द्रियत्वादिभिः पूर्णशरीरात्मबलाः सन्तः शत्रून् हत्वा संग्रामान् जित्वा प्रजासु सर्वथाऽभयं स्थापयन्ति त एव सर्वत्राऽभयं सुखं प्राप्नुवन्ति॥२॥

पदार्थः-हे (**शूर**) शत्रुओं के नाशकर्त्ता (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्य से युक्त करनेवाले! (**मरुद्भिः**) पवनों के सदृश वीर पुरुषों के और (**सगणः**) गणों के सहित वर्त्तमान (**वृत्रहा**) मेघ का नाशकर्त्ता सूर्य्य जैसे वैसे (**सजोषाः**) तुल्य प्रीति का सेवन करनेवाला गणों के सहित वर्त्तमान होकर और पवनों के सदृश वीर पुरुषों के सहित (**विद्वान्**) सकल विद्याओं का जाननेवाला पुरुष (**सोमम्**) सोमलता के रस को (**पिब**) पीजिये और (**शत्रून्**) शत्रुओं को (**अप, जहि**) देश से बाहर करके नष्ट करिये, (**मृधः**) संग्रामों की (**नुदस्व**) प्रेरणा अर्थात् प्रवृत्ति का उत्साह दीजिये, (**अथ**) उसके अनन्तर (**विश्वतः**) सब ओर से (**नः**) हम लोगों को (**अभयम्**) भयरहित (**कृणुहि**) कीजिये॥२॥

भावार्थः-जो राजा आदि मनुष्य परस्पर मित्र होकर नियमित भोजन, विहार, ब्रह्मचर्य्य, जितेन्द्रिय होने आदि से पूर्ण शरीर आत्मा के बलवाले हो शत्रुओं को नाश कर और संग्रामों को जीत कर प्रजाओं में सब प्रकार भयरहित करते हैं, वे ही सर्वत्र भयरहित सुख को प्राप्त होते हैं॥२॥

अथ सूर्य्यविषयमाह॥

अब सूर्य्य के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उत ऋतुभिर्ऋतुपाः पाहि सोममिन्द्र देवेभिः सखिभिः सुतं नः।
याँ आभजो मरुतो ये त्वान्वहन् वृत्रमदधुस्तुभ्यमोजः॥३॥

उत। ऋतुऽभिः। ऋतुऽपाः। पाहि। सोमम्। इन्द्र। देवेभिः। सखिऽभिः। सुतम्। नः। यान्। आ। अभजः। मरुतः। ये। त्वा। अनु। अहन्। वृत्रम्। अदधुः। तुभ्यम्। ओजः॥ ३॥

पदार्थः-(**उत**) अपि (**ऋतुभिः**) वसन्तादिभिः (**ऋतुपाः**) य ऋतून् पाति रक्षति स सूर्य्यः (**पाहि**) रक्ष (**सोमम्**) सूयन्ते यस्मिँस्तं संसारम् (**इन्द्र**) दुःखविदारक (**देवेभिः**) विद्वद्भिः (**सखिभिः**) सुहृद्भिः (**सुतम्**) निष्पन्नम् (**नः**) अस्मान् (**यान्**) (**आ**) समन्तात् (**अभजः**) सेवस्व (**मरुतः**) मरणधर्मामनुष्यान् (**ये**) (**त्वा**) त्वाम् (**अनु**) (**अहन्**) हन्ति (**वृत्रम्**) सर्वसुखकरं धनम् (**अदधुः**) दध्युः (**तुभ्यम्**) (**ओजः**) बलम्॥ ३॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वमृतुभिस्सहर्त्तुपाः सूर्य इव देवेभिः सखिभिः सह सुतं सोमं पाहि यान् मरुतो नोऽस्माँस्त्वमाभजो ये तुभ्यमोजो वृत्रं त्वा त्वां चान्वदधुस्तांस्त्वं पाहि उतापि यथा सूर्यो वृत्रमहँस्तथा शत्रून् हिन्धि॥ ३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजादयो मनुष्या यथा सूर्य्यो वसन्तादिभिः सर्वं जगद्रक्षति जलादिकमाकृष्य वर्षित्वा पाति तथैव विद्वद्भिर्मित्रैः सह विचार्य विजयपुरुषार्थाभ्यां सर्वान् रक्षन्तु॥ ३॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) दुःख के नाशकर्त्ता पुरुष! आप (**ऋतुभिः**) वसन्त आदि ऋतुओं के साथ (**ऋतुपाः**) ऋतुओं की रक्षा करनेवाले सूर्य के सदृश (**देवेभिः**) विद्वान् (**सखिभिः**) मित्रों के साथ (**सुतम्**) उत्पन्न (**सोमम्**) संसार की (**पाहि**) रक्षा करो और (**यान्**) जिन (**मरुतः**) मरणधर्मवाले मनुष्य (**नः**) हम लोगों का आप (**आ**) सब प्रकार (**अभजः**) सेवन करें (**ये**) जो लोग (**तुभ्यम्**) आपके लिये (**ओजः**) पराक्रम और (**वृत्रम्**) सब सुखों के कर्त्ता धन को (**त्वा**) और आपको (**अनु, अदधुः**) अनूकूलता से धारण करें, उनकी आप रक्षा कीजिये (**उत**) और भी जैसे सूर्य मेघ का (**अहन्**) नाश करता है, वैसे शत्रुओं का नाश करिये॥ ३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजा आदि मनुष्यो! जैसे सूर्य्य वसन्त आदि ऋतुओं से सम्पूर्ण जगत् की रक्षा करता, जलादि रसों का आकर्षण और पुनः वृष्टि करके पालन करता है, वैसे ही विद्वान् मित्रों के साथ विचार करके विजय और पुरुषार्थ से सबकी रक्षा कीजिये॥ ३॥

पुनाराजविषयमाह॥

फिर राजा के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ये त्वाहिहत्ये मघवन्नवर्धन् ये शाम्बरे हरिवो ये गविष्टौ।
ये त्वा नूनमनुमदन्ति विप्राः पिबेन्द्र सोमं सगणो मरुद्भिः॥ ४॥

ये। त्वा। अहिऽहत्ये। मघऽवन्। अवर्धन्। ये। शाम्बरे। हरिऽवः। ये। गोऽइष्टौ। ये। त्वा। नूनम्। अनुऽमदन्ति। विप्राः। पिब। इन्द्र। सोमम्। सऽगणः। मरुत्ऽभिः॥४॥

पदार्थः-(**ये**) (**त्वा**) त्वाम् (**अहिहत्ये**) अहेर्मेघस्य हत्या हननं यस्मिँस्तस्मिन् (**मघवन्**) पूजितपुष्कलधनयुक्त (**अवर्धन्**) वर्धयेयुः (**ये**) (**शाम्बरे**) शम्बरस्याऽयं संग्रामस्तस्मिन् (**हरिवः**) प्रशस्ता हरयो विद्यन्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ (**ये**) (**गविष्टौ**) गवां किरणानां सङ्गमने (**ये**) (**त्वा**) त्वाम् (**नूनम्**) निश्चितम् (**अनुमदन्ति**) आनुकूल्येनाऽऽनन्दयन्ति (**विप्राः**) मेधाविनः (**पिब**) (**इन्द्र**) ऐश्वर्यकारक (**सोमम्**) ओषधिजन्यं घृतदुग्धादिकं रसम् (**सगणः**) गणेन वीरसमूहेन सहितः (**मरुद्भिः**) वायुभिरिव स्वमित्रैः सह॥४॥

अन्वयः-हे हरिवो मघवन्निन्द्र! ये विप्रास्त्वा त्वां मरुद्भिः सह सूर्योऽहिहत्ये शाम्बर इवाऽवर्द्धन् ये गविष्टौ त्वा त्वामवर्धन् ये युद्धे नूनमनुमदन्ति ये च सर्वान् रक्षन्त्यानन्दयन्ति तैः सह सगणः सन् सोमं पिब॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽनुन्मदं मेघं सूर्यो वर्द्धयित्वोन्मदं हन्ति तथैव धार्मिका राजादयो धार्मिकाञ्छान्तान् रक्षित्वा दुष्टान् हत्वा स्वयं प्रसन्ना भूत्वा प्रजा अनुमदन्तु॥४॥

पदार्थः-हे (**हरिवः**) उत्तम घोड़ों से युक्त (**मघवन्**) श्रेष्ठ बहुत धनोंवाले (**इन्द्र**) ऐश्वर्य के कर्त्ता! (**ये**) जो (**विप्राः**) बुद्धिमान् लोग (**त्वाम्**) आपको (**मरुद्भिः**) पवनों के सदृश अपने मित्रों के साथ सूर्य (**अहिहत्ये**) मेघ का नाश हो जिसमें ऐसे (**शाम्बरे**) मेघसम्बन्धी संग्राम में जैसे वैसे (**अवर्धन्**) वृद्धि करें और (**ये**) जो (**गविष्टौ**) किरणों के समूह में आपकी वृद्धि करें (**ये**) जो युद्ध में (**नूनम्**) निश्चित (**अनु, मदन्ति**) अनुकूलता से आनन्द देते हैं, उन पवनों के सदृश मित्रों के[१३] और (**सगणः**) वीर पुरुषों के सहित (**सोमम्**) ओषधियों से उत्पन्न हुए घृत, दुग्ध आदि रसों का (**पिब**) पान कीजिये॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे नहीं बढ़े हुए मेघ को सूर्य बढ़ाय के और बढ़े हुए का नाश करता है, वैसे ही धार्मिक राजा आदि पुरुष धार्मिक शान्त पुरुषों की रक्षा और दुष्ट पुरुषों का नाश कर स्वयं प्रसन्न होकर प्रजाओं को प्रसन्न करें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

---

१३. अन्वय के अनुसार 'उन पवनों के सदृश मित्रों के' इस वाक्य के स्थान पर 'जो सबकी रक्षा करते हैं, आनन्द देते हैं, उन' यह वाक्यांश होना चाहिये। सं०

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मरुत्वन्तं वृषभं वावृधानमकवारिं दिव्यं शासमिन्द्रम्।
विश्वासाहमवसे नूतनायोग्रं सहोदामिह तं हुवेम॥५॥११॥

मरुत्वन्तम्। वृषभम्। ववृधानम्। अकवऽअरिम्। दिव्यम्। शासम्। इन्द्रम्। विश्वऽसहम्। अवसे। नूतनाय। उग्रम्। सहःऽदाम्। इह। तम्। हुवेम॥५॥

पदार्थः-(**मरुत्वन्तम्**) प्रशस्ता मरुतो मनुष्या विद्यन्ते यस्य तम् (**वृषभम्**) बलिष्ठम् (**वावृधानम्**) वर्द्धमानं वर्द्धयितारं वा (**अकवारिम्**) अविद्यमानशत्रुम् (**दिव्यम्**) शुद्धगुणकर्मस्वभावम् (**शासम्**) प्रशासितारम् (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्य्यवन्तम् (**विश्वासाहम्**) सर्वसहम् (**अवसे**) रक्षणाद्याय (**नूतनाय**) नवीनाय (**उग्रम्**) दुष्टानां दमयितारम् (**सहोदाम्**) बलप्रदम् (**इह**) अस्मिन् राज्यव्यवहारे (**तम्**) (**हुवेम**) प्रशंसेम॥५॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यूयमिह नूतनायावसे यं मरुत्वन्तं वृषभं वावृधानमकवारिं दिव्यं विश्वासाहमुग्रं सहोदामिन्द्रं शासन्नूतनायावसे प्रशंसत तं वयं हुवेम॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। मनुष्यैः स एव स्वकीयो राजा कर्त्तव्यो यस्मिन् सर्वे राजधर्माः साङ्गोपाङ्गा वर्त्तन्ते॥५॥

अत्र राजसूर्य्यगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेदितव्यम्॥

इति सप्तचत्वारिंशत्तमं सूक्तमेकादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे विद्वान् पुरुषो! आप लोग (**इह**) इस राज्यव्यवहार में (**नूतनाय**) नवीन (**अवसे**) रक्षण आदि के लिये जिस (**मरुत्वन्तम्**) प्रशंसा करने योग्य मनुष्य हों जिसके उस और (**वृषभम्**) बलवाले और (**वावृधानम्**) बढ़ने वा बढ़ानेवाले (**अकवारिम्**) शत्रुओं से रहित (**दिव्यम्**) शुद्ध गुण, कर्म और स्वभाव से युक्त (**विश्वासहम्**) सबको सहने और (**उग्रम्**) दुष्टों के नाश करने (**सहोदाम्**) बल के देने और (**इन्द्रम्**) अत्यन्त ऐश्वर्य्यवाले (**शासम्**) शासन करनेवाले की [नवीन रक्षण आदि के लिये] प्रशंसा करो (**तम्**) उसकी हम लोग (**हुवेम**) प्रशंसा करें॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। मनुष्यों को चाहिये कि उसी को अपना राजा करें कि जिसमें सम्पूर्ण राजा के धर्म अङ्ग और उपाङ्ग सहित वर्त्तमान हैं॥५॥

इस सूक्त में राजा और सूर्य्य के गुणवर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह सैंतालीसवां सूक्त और ग्यारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्याष्टचत्वारिंशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, २ निचृत् त्रिष्टुप्। ३, ४ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ५ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ राज्ञो विषयमाह॥

अब पाँच ऋचावाले अड़तालीसवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में राजा के विषय को कहते हैं॥

स॒द्यो ह॑ जा॒तो वृ॑ष॒भः क॒नीनः॒ प्रभ॑र्तु॒माव॒दन्ध॑सः सु॒तस्य॑।
सा॒धोः पि॑ब प्रतिका॒मं यथा॑ ते॒ रसा॑शिरः प्रथ॒मं सो॒म्यस्य॑॥ १॥

स॒द्यः। ह॒। जा॒तः। वृ॒ष॒भः। क॒नीनः॑। प्र॒ऽभ॑र्तु॒म्। आ॒व॒त्। अन्ध॑सः। सु॒तस्य॑। सा॒धोः। पि॒ब। प्र॒ति॒ऽका॒मम्। यथा॑। ते॒। रस॑ऽआशिरः। प्र॒थ॒मम्। सो॒म्यस्य॑॥ १॥

पदार्थः-(**सद्यः**) (**ह**) खलु (**जातः**) उत्पन्नः (**वृषभः**) वर्षकः (**कनीनः**) दीप्तिमान् (**प्रभर्त्तुम्**) प्रकर्षेण धर्त्तुम् (**आवत्**) रक्षेत् (**अन्धसः**) अन्नस्य (**सुतस्य**) सुसंस्कृतस्य (**साधोः**) सन्मार्गे स्थितस्य (**पिब**) (**प्रतिकामम्**) कामं कामं प्रति (**यथा**) (**ते**) तव (**रसाशिरः**) यो रसानश्नाति सः (**प्रथमम्**) (**सोम्यस्य**) सोम ऐश्वर्ये भवस्य॥१॥

अन्वयः-हे राजन्! यथा सद्यो जातो वृषभः कनीनो रसाशिरः सूर्योऽन्धसः सुतस्य सोम्यस्य प्रथममावत् तथाभूतस्त्वं प्रतिकामं सोमं पिबैवं भूतस्य साधोस्ते ह प्रजाः प्रभर्त्तुं शक्तिर्जायेत॥१॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे राजादयो मनुष्याः! यथा सूर्यादयः पदार्थाः स्वप्रभावैरीश्वरनियोगेन सर्वान् पदार्थान् रक्षित्वा दोषान् घ्नन्ति तथैव साधून् रक्षित्वा दुष्टान् हन्युः॥१॥

पदार्थः-हे राजन्! (**यथा**) जैसे (**सद्यः**) शीघ्र (**जातः**) उत्पन्न हुआ (**वृषभः**) वृष्टि करनेवाला (**कनीनः**) प्रकाशवान् (**रसाशिरः**) रसों का भोजन करनेवाला सूर्य्य (**अन्धसः**) अन्न के (**सुतस्य**) उत्तम प्रकार संस्कारयुक्त (**सोम्यस्य**) ऐश्वर्य में उत्पन्न का (**प्रथमम्**) प्रथम (**आवत्**) रक्षा करे, उस प्रकार के आप (**प्रतिकामम्**) कामना-कामना के प्रति ओषधियों के रस को (**पिब**) पान करो और इस प्रकार के (**साधोः**) उत्तम मार्गों में वर्त्तमान (**ते**) आपका (**ह**) निश्चय से प्रजाओं को (**प्रभर्त्तुम्**) प्रकर्षता से धारण करने का सामर्थ्य होवे॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे राजा आदि मनुष्यो! जैसे सूर्य्य आदि पदार्थ अपने प्रतापों और ईश्वर के नियोग से सब पदार्थों की रक्षा करके दोषों का नाश करते हैं, वैसे ही साधु पुरुषों की रक्षा करके दुष्ट पुरुषों का नाश करें॥१॥

अथ सन्तानोत्पत्तिविषयमाह॥

अब सन्तान की उत्पत्ति के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यज्जाय॑था॒स्तदह॑रस्य॒ कामे॒ऽंशोः पी॒यूष॑मपिबो गिरि॒ष्ठाम्।

तं ते माता परि योषा जनित्री महः पितुर्दम आसिञ्चदग्रे॥ २॥

यत्। जायथाः। तत्। अहः। अस्य। कामे। अंशोः। पीयूषम्। अपिबः। गिरिऽस्थाम्। तम्। ते। माता। परि। योषा। जनित्री। महः। पितुः। दमे। आ। असिञ्चत्। अग्रे॥ २॥

पदार्थः-(**यत्**) (**जायथाः**) (**तत्**) (**अहः**) दिने (**अस्य**) (**कामे**) (**अंशोः**) प्राप्तस्य (**पीयूषम्**) अमृतात्मकं रसम् (**अपिबः**) पिब (**गिरिष्ठाम्**) यो गिरौ मेघे तिष्ठति (**तम्**) (**ते**) तव (**माता**) (**परि**) सर्वतः (**योषा**) (**जनित्री**) (**महः**) महत् (**पितुः**) पालकस्य जनकस्य (**दमे**) गृहे। **दम इति गृहनामसु पठितम्।** (निघं० ३.४) (**आ**) (**असिञ्चत्**) समन्तात् सिञ्चति (**अग्रे**) प्रथमतः॥ २॥

अन्वयः-हे राजँस्त्वं यदहर्जायथास्तदहः कामेऽस्यांशोर्गिरिष्ठां पीयूषं ते तव पिताऽपिबस्तं तव पितुर्योषा तव जनित्री माताऽग्रे दमे महः पर्य्यासिञ्चत्॥ २॥

भावार्थः-यदा स्त्रीपुरुषौ गर्भमादधेयातां तदा दुष्टान्नपानादिसेवनं विहाय श्रेष्ठान्नपानं कृत्वा गर्भमाधाय सन्तानमुत्पाद्य पुनस्तस्याप्येवमेव पालनं वर्धनं कुर्य्याद्यो राजा भवितुमर्हेत्॥ २॥

पदार्थः-हे राजन्! आप (**यत्**) जिस (**अहः**) दिन (**जायथाः**) उत्पन्न हुए (**तत्**) उस दिन की (**कामे**) कामना में (**अस्य**) इस (**अंशोः**) प्राप्त हुए भाग के (**गिरिष्ठाम्**) मेघ में विद्यमान (**पीयूषम्**) अमृतरूप रस को (**ते**) आपके पिता (**अपिबः**) पान करें (**तम्**) उसको आपके (**पितुः**) पालक और उत्पादक पिता की (**योषा**) स्त्री आपकी (**जनित्री**) उत्पन्न करनेवाली (**माता**) माता (**अग्रे**) पहिले (**दमे**) घर में (**महः**) बड़े को (**परि, आ, असिञ्चत्**) चारों ओर से सींचता है॥ २॥

भावार्थः-जब स्त्री और पुरुष गर्भ को धारण करें तब दुष्ट अन्न-पान आदि के सेवन **[का]** त्याग, श्रेष्ठ अन्न-पान, गर्भधारण और सन्तान उत्पन्न करके फिर उसको भी इसी प्रकार पालन और वृद्धि करे, जो कि राजा होने को योग्य हो॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उपस्थाय मातरमन्नमैट्ट तिग्ममपश्यदभि सोममूधः।
प्रयावयन्नचरद् गृत्सो अन्यान् महानि चक्रे पुरुधप्रतीकः॥ ३॥

उपऽस्थाय। मातरम्। अन्नम्। ऐट्ट। तिग्मम्। अपश्यत्। अभि। सोमम्। ऊधः। प्रऽयवयन्। अचरत्। गृत्सः। अन्यान्। महानि। चक्रे। पुरुधऽप्रतीकः॥ ३॥

पदार्थः-(**उपस्थाय**) सामीप्यं प्राप्य (**मातरम्**) जननीम् (**अन्नम्**) अत्तुं योग्यम् (**ऐट्ट**) प्रशंसेत (**तिग्मम्**) तीव्रम् (**अपश्यत्**) पश्येत् (**अभि**) आभिमुख्ये (**सोमम्**) ऐश्वर्य्यम् (**ऊधः**) यथोषाः (**प्रयावयन्**)

संयोजयन् विभाजयन् वा **(अचरत्)** आचरेत् **(गृत्सः)** मेधावी **(अन्यान्)** **(महानि)** महान्त्यपत्यानि **(चक्रे)** कुर्य्यात् **(पुरुधप्रतीकः)** पुरुन् बहून् दधति ते पुरुधा यः पुरुधान् प्रत्यायेति सः॥३॥

अन्वयः-यो गृत्सः पुरुधप्रतीकः सूर्य्य ऊधइव मातरमुपस्थायान्नमैट्ट प्रयावयन् सन् तिग्मं सोममभ्यपश्यदन्यानचरन्महानि चक्रे स एव राजा भवितुमर्हेत्॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्य्य उषसं प्राप्य दिनं जनयति तथैवाऽपत्यमातरं सन्तानपितोपस्थाय गर्भमादधेत तथैव संस्कारान्मातापितरौ विदधेयातां यथाऽपत्यानि शुभगुणकर्मलक्षणस्वभावानि राजकर्माणि कर्त्तुमर्हेयुः॥३॥

पदार्थः-जो **(गृत्सः)** बुद्धिमान् **(पुरुधप्रतीकः)** बहुतों को धारण करनेवालों के प्रति प्राप्त होनेवाला सूर्य्य **(ऊधः)** प्रातःकाल की रात्रि को जैसे वैसे **(मातरम्)** पुत्र की माता को **(उपस्थाय)** समीप प्राप्त होकर **(अन्नम्)** खाने योग्य पदार्थ की **(ऐट्ट)** प्रशंसा करे और **(प्रयावयन्)** संयोग वा विभाग करता हुआ [**(तिग्मम्)** तीव्र] **(सोमम्)** ऐश्वर्य को **(अभि)** चारों ओर से **(अपश्यत्)** देखे और **(अन्यान्)** औरों को **(अचरत्)** आचरण करे, **(महानि)** बड़े सन्तानों को **(चक्रे)** उत्पन्न करे, वही राजा होने योग्य है॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य प्रातःकाल की रात्रि को प्राप्त होकर दिन को उत्पन्न करता है, वैसे ही सन्तान की माता को सन्तान का पिता प्राप्त होकर गर्भस्थिति करे और वैसे ही संस्कारों को माता और पिता करें कि जैसे सन्तान उत्तम गुण, कर्म, लक्षण, स्वभावों से युक्त राजकर्मों को करने योग्य होवें॥३॥

अथ प्रजापालनविषयमाह॥

अब प्रजा के पालन का विषय अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उ॒ग्रस्तु॑रा॒षाळ॒भिभू॑त्योजा यथाव॒शं त॒न्वं॑ चक्र ए॒षः।
त्वष्टा॑रमिन्द्रो॑ ज॒नुषा॑भि॒भूया॒मुष्या॒ सोम॑मपिबच्च॒मूषु॑॥४॥

उ॒ग्रः। तु॒रा॒षाट्। अ॒भिभू॑तिऽओजाः। य॒था॒ऽव॒शम्। त॒न्व॑म्। च॒क्रे॒। ए॒षः। त्वष्टा॑रम्। इन्द्रः॑। ज॒नुषा॑। अ॒भि॒ऽभूय॑। आ॒ऽमुष्य॑। सोम॑म्। अ॒पि॒ब॒त्। च॒मूषु॑॥४॥

पदार्थः-**(उग्रः)** तेजस्वी **(तुराषाट्)** यस्तुरा त्वरिताञ्छीघ्रकारिणः सहते सः **(अभिभूत्योजाः)** शत्रूणामभिभवकरः पराक्रमो यस्य सः **(यथावशम्)** वशमनतिक्रम्य वर्त्तते तत् **(तन्वम्)** शरीरम् **(चक्रे)** करोति **(एषः)** **(त्वष्टारम्)** तेजस्विनम् **(इन्द्रः)** परमैश्वर्यवान् **(जनुषा)** जन्मना **(अभिभूय)** शत्रून् तिरस्कृत्य **(आमुष्य)** चोरयित्वा। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(सोमम्)** ओषधिरसम् **(अपिबत्)** पिबेत् **(चमूषु)** भक्षयित्रीषु सेनासु॥४॥

अन्वयः-य एषश्चमूषु सोममामुष्याऽपिबत् तं त्वष्टारमभिभूय जनुषोग्रस्तुराषाडभिभूत्योजा इन्द्रो यथावशं तन्वं चक्रे स राज्यं कर्त्तुमर्हेत्॥४॥

भावार्थः-ये विद्वांसो धार्मिका राजजनास्ते स्तेनादीन् दुष्टाँस्तिरस्कृत्य मादकद्रव्यसेविनो दण्डयित्वा स्वयमव्यसनिनो भूत्वा प्रजाः पालयितुं क्षमाः स्युस्त एव राज्यमुन्नेतुमर्हेयुः॥४॥

पदार्थः-जो **(एषः)** यह **(चमूषु)** भक्षण करनेवाली सेनाओं में **(सोमम्)** ओषधियों के रस की **(आमुष्य)** चोरी करके **(अपिबत्)** पीवे उस **(त्वष्टारम्)** तेजस्वी और शत्रुओं का **(अभिभूय)** तिरस्कार करके **(जनुषा)** जन्म से **(उग्रः)** तेजस्वी **(तुराषाट्)** शीघ्रकारियों को सहनेवाला **(अभिभूत्योजाः)** शत्रुओं के तिरस्कार करनेवाले पराक्रम से युक्त **(इन्द्रः)** अत्यन्त ऐश्वर्यवाला पुरुष **(यथावशम्)** यथासामर्थ्य **(तन्वम्)** शरीर को **(चक्रे)** करता है, वह राज्य करने के योग्य होवे॥४॥

भावार्थः-जो विद्वान् धार्मिक राजा जन हैं, वे चोर आदि दुष्ट जनों का तिरस्कार और मादक द्रव्य अर्थात् उन्मत्तता करनेवाले द्रव्यों के सेवनकर्त्ताओं का दण्ड करके और अपने आप अव्यसनी होकर प्रजाओं के पालन करने को समर्थ होवें, वे ही राज्य की वृद्धि करने के योग्य होवें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि सञ्जितं धनानाम्॥५॥१२॥

शुनम्। हुवेम। मघऽवानम्। इन्द्रम्। अस्मिन्। भरे। नृऽतमम्। वाजऽसातौ। शृण्वन्तम्। उग्रम्। ऊतये। समत्ऽसु। घ्नन्तम्। वृत्राणि। सम्ऽजितम्। धनानाम्॥५॥

पदार्थः-**(शुनम्)** राजधर्मजं सुखम् **(हुवेम)** आह्वयेम **(मघवानम्)** न्यायोपार्जितबहुधन- सत्कृतम् **(इन्द्रम्)** राजानम् **(अस्मिन्)** **(भरे)** भर्त्तव्ये राज्ये **(नृतमम्)** नरोत्तमम् **(वाजसातौ)** सत्यासत्यव्यवहारविभाजके **(शृण्वन्तम्)** सत्याऽसत्ये निश्चित्याज्ञापयन्तम् **(उग्रम्)** दुष्टेषु कठिनस्वभावं श्रेष्ठेषु सरलम् **(ऊतये)** रक्षणाद्याय **(समत्सु)** धर्म्यसंग्रामेषु **(घ्नन्तम्)** दुष्टान् विनाशयन्तम् **(वृत्राणि)** धनानि **(सञ्जितम्)** पालकं दातारं वा **(धनानाम्)**॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! वयमस्मिन् वाजसातौ भर ऊतये मघवानं नृतमं शृण्वन्तमुग्रं समत्सु घ्नन्तं धनानां सञ्जितं वृत्राणि प्राप्तमिन्द्रं प्राप्य शुनं हुवेम तथैव तादृशं राजानं प्राप्य यूयमप्येतदाह्वयत॥५॥

भावार्थः-सर्वैः सभ्यैर्विद्वज्जनैरवश्यं सकलशास्त्रविशारदं शुभगुणकर्मस्वभावं राजधर्मकोविदं कुलीनं परमैश्वर्य्यवन्तं सर्वाधीशं कृत्वा राष्ट्रस्य सततं रक्षाञ्च विधाय दस्यवः परिहन्तव्या इति॥५॥

अत्र राजधर्मसन्तानोत्पत्तिराज्यपालनादिगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यष्टचत्वारिंशत्तमं सूक्तं द्वादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! हम लोग **(अस्मिन्)** इस **(वाजसातौ)** सत्य और असत्य व्यवहार के विभाग करनेवाले **(भरे)** पोषण करने योग्य राज्य में **(ऊतये)** रक्षण आदि के लिये **(मघवानम्)** न्याय से इकट्ठे किये गये बहुत धन से सत्कृत **(नृतमम्)** मनुष्यो में उत्तम मनुष्य **(शृण्वन्तम्)** सत्य और असत्य का निश्चय करके आज्ञा देते हुए **(उग्रम्)** दुष्ट जनों में कठिन और श्रेष्ठ पुरुषों में सरल स्वभाववाले **(समत्सु)** धर्मयुक्त संग्रामों में **(घ्नन्तम्)** दुष्ट पुरुषों के नाशकर्त्ता **(धनानाम्)** धनों के **(सञ्जितम्)** पालन करने वा देनेवाले **(वृत्राणि)** धनों को प्राप्त **(इन्द्रम्)** राजा को प्राप्त होकर **(शुनम्)** राजाओं के धर्म से उत्पन्न हुए सुख को **(हुवेम)** ग्रहण करें, वैसे ही ऐसे राजा को प्राप्त होकर आप लोग भी इसका ग्रहण करो॥५॥

भावार्थः-सम्पूर्ण श्रेष्ठ सभासद् विद्वज्जनों को चाहिये कि अवश्य सम्पूर्ण शास्त्रों में निपुण, उत्तम गुण, कर्म और स्वभाववाले राजधर्म में चतुर व उत्तम कुलयुक्त, अत्यन्त ऐश्वर्य्यवान् पुरुष को सबका अधीश करके और राज्य की निरन्तर रक्षा करके चौरादिकों का नाश करें॥५॥

इस सूक्त में राजधर्म, सन्तानोत्पत्ति और राज्यपालन आदि के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह अड़तालीसवां सूक्त और बारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्यैकोनपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ४ निचृत्त्रिष्टुप्। २, ५ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ३ भुरिक् पङ्क्तिः छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ प्रजाविषयमाह॥

अब पाँच ऋचावाले उञ्चासवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में प्रजा के विषय को कहते हैं॥

शंसा॑ म॒हामिन्द्रं॒ यस्मि॒न् विश्वा॒ आ कृ॒ष्टयः॑ सोम॒पाः काम॒मव्य॑न्।
यं सु॒क्रतुं॑ धि॒षणे॑ विभ्व॒तष्टं॑ घ॒नं वृ॒त्राणां॑ ज॒नय॑न्त दे॒वाः॥ १॥

शंस। म॒हाम्। इन्द्र॑म्। यस्मि॑न्। विश्वाः॑। आ। कृ॒ष्टयः॑। सो॒म॒ऽपाः। काम॑म्। अव्य॑न्। यम्। सु॒ऽक्रतु॑म्। धि॒षणे॒ इति॑। वि॒भ्व॒ऽत॒ष्टम्। घ॒नम्। वृ॒त्राणा॑म्। ज॒नय॑न्त। दे॒वाः॥ १॥

पदार्थः-(**शंस**) स्तुहि। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**महाम्**) महान्तं पूजनीयम् (**इन्द्रम्**) राजानम् (**यस्मिन्**) (**विश्वाः**) समग्राः (**आ**) समन्तात् (**कृष्टयः**) मनुष्याः (**सोमपाः**) ऐश्वर्य्यपालकाः (**कामम्**) अभिलाषम् (**अव्यन्**) कामयन्ताम् (**यम्**) (**सुक्रतुम्**) शोभनकर्मकर्तृप्रज्ञम् (**धिषणे**) द्यावापृथिव्याविव विद्यानीती (**विभ्वतष्टम्**) विभुना जगदीश्वरेण निर्मितम् (**घनम्**) घनीभूतम् (**वृत्राणाम्**) मेघानाम् (**जनयन्त**) जनयन्ति (**देवाः**) विद्वांसः॥ १॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यस्मिन् विश्वाः सोमपाः कृष्टयः काममाव्यन् वृत्राणां घनं विभ्वतष्टं महामिन्द्रं धिषणे प्रकाशवन्तं सूर्य्यमिव विद्यानीती प्रकाश्य यं सुक्रतुं देवा जनयन्त तं राजानं त्वं शंस॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! यथा महानेकः सूर्य्यः प्रत्येकभूगोले स्थितान् मेघान् हन्ति प्राणिनां सुखं जनयति तथैव राजा दुष्टान् हत्वा श्रेष्ठानामिच्छां प्रपूर्य्याऽऽनन्दयति॥ १॥

पदार्थः-हे विद्वन्! (**यस्मिन्**) जिसमें (**विश्वाः**) सम्पूर्ण (**सोमपाः**) ऐश्वर्य्य के पालन करनेवाले (**कृष्टयः**) मनुष्य (**कामम्**) अभिलाषा की (**आ**) सब प्रकार (**अव्यन्**) इच्छा करें, (**वृत्राणाम्**) मेघों के (**घनम्**) समूह को (**विभ्वतष्टम्**) व्यापक परमेश्वर ने रचा, (**महाम्**) श्रेष्ठ और सेवा करने योग्य (**इन्द्रम्**) राजा को (**धिषणे**) अन्तरिक्ष और पृथिवी को प्रकाशित करते हुए सूर्य्य के सदृश विद्या और नीति को प्रकाशित करते हुए (**यम्**) जिस (**सुक्रतुम्**) उत्तम कर्म करनेवाली बुद्धि से युक्त पुरुष को (**देवाः**) विद्वान् लोग (**जनयन्त**) उत्पन्न करते हैं, उस राजा की आप (**शंस**) स्तुति करिये॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वान् लोगो! जैसे बड़ा एक सूर्य्य प्रत्येक भूगोल में वर्त्तमान मेघों को नाश करता और प्राणियों के सुख को उत्पन्न करता है, वैसे ही राजा जन दुष्ट पुरुषों का नाश और श्रेष्ठ पुरुषों की इच्छा पूर्ण करके आनन्द देता है॥ १॥

अथ राजविषयमाह॥

अब राजा के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यं नु नकिः पृतनासु स्वराजं द्विता तरति नृतमं हरिष्ठाम्।
इनतमः सत्वभिर्यो ह शूषैः पृथुज्रया अमिनादायुर्दस्योः॥ २॥

यम्। नु। नकिः। पृतनासु। स्वऽराजम्। द्विता। तरति। नृऽतमम्। हरिऽस्थाम्। इनऽतमः। सत्वऽभिः। यः। ह। शूषैः। पृथुऽज्रयाः। अमिनात्। आयुः। दस्योः॥ २॥

पदार्थः-(**यम्**) (**नु**) सद्यः (**नकिः**) निषेधे (**पृतनासु**) वीरसेनासु (**स्वराजम्**) यः स्वेन सूर्य्य इव राजते तम् (**द्विता**) द्वयोर्भावः (**तरति**) उल्लङ्घने (**नृतमम्**) अतिशयेन नायकम् (**हरिष्ठाम्**) हरयो मनुष्यास्तिष्ठन्ति यस्मिन् स तम् (**इनतमः**) अतिशयेनेश्वरः समर्थः (**सत्वभिः**) शत्रून् सीदयद्भिर्वीरैः सह (**यः**) (**ह**) किल (**शूषैः**) बलयुक्तैः (**पृथुज्रयाः**) पृथुस्तीव्रो ज्रयो वेगो यस्य सः (**अमिनात्**) हिंस्यात् (**आयुः**) (**दस्योः**) दुष्टस्य॥ २॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यं हरिष्ठां नृतमं स्वराजं पृतनासु द्विता नकिस्तरति यः पृथुज्रया इनतमो ह शूषैः सत्वभिः सह दस्योरायुर्न्वमिनात् तं सर्वाऽधीशं कुरुत॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यं शत्रोर्द्विगुणमपि बलं जेतुं न शक्नोति य उत्कृष्टसामर्थ्यो दुष्टान् सततं हन्ति तमेव सर्वबलाध्यक्षं कृत्वा सदैव विजयः कर्त्तव्यः॥ २॥

पदार्थः-हे विद्वान् लोगो! (**यम्**) जिस (**हरिष्ठाम्**) मनुष्य वर्त्तमान हों जिसमें उस (**नृतमम्**) अतिशय करके नायक (**स्वराजम्**) अपने से सूर्य्य के सदृश प्रकाशमान (**पृतनासु**) वीरों की सेनाओं में (**द्विता**) दोपन का (**नकिः**) नहीं (**तरति**) उल्लङ्घन करता है और (**यः**) जो (**पृथुज्रयाः**) तीव्र वेग से युक्त (**इनतमः**) अत्यन्त समर्थ (**ह**) निश्चय से (**शूषैः**) बलयुक्त (**सत्वभिः**) शत्रुओं को दुःख देनेवाले वीरों के साथ (**दस्योः**) दुष्ट पुरुष के (**आयुः**) अवस्था का (**नु**) शीघ्र (**अमिनात्**) नाश करे, उसको सबका स्वामी करो॥ २॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस पुरुष को शत्रु का द्विगुना भी बल जीत नहीं सकता और जो अधिक सामर्थ्ययुक्त पुरुष दुष्ट पुरुषों का निरन्तर नाश करता है, उसी को सब सेना का अध्यक्ष करके सदैव विजय करना चाहिये॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सहावा पृत्सु तरणिर्नार्वा व्यानशी रोदसी मेहनावान्।
भगो न कारे हव्यो मतीनां पितेव चारुः सुहवो वयोधाः॥ ३॥

सहऽवा। पृत्ऽसु। तरणिः। न। अर्वा। विऽआनशिः। रोदसी इति। मेहनाऽवान्। भगः। न। कारे। हव्यः। मतीनाम्। पिताऽइव। चारुः। सुऽहवः। वयःऽधाः॥ ३॥

पदार्थः-(**सहावा**) सोढा। अत्राऽ**न्येषामपी**ति दीर्घः। (**पृत्सु**) स्पर्द्धमानेषु संग्रामेषु (**तरणिः**) सद्यो गन्ता (**न**) इव (**अर्वा**) अश्वः (**व्यानशिः**) व्याप्तः (**रोदसी**) द्यावाभूमी (**मेहनावान्**) मेहनानि सेचनानि बहूनि विद्यन्ते यस्य सः (**भगः**) ऐश्वर्य्ययोगः (**न**) इव (**कारे**) कर्त्तव्ये व्यवहारे (**हव्यः**) आदातुमर्हः (**मतीनाम्**) मननशीलानां मनुष्याणाम् (**पितेव**) यथा जनकः (**चारुः**) सुन्दरः (**सुहवः**) शोभनाऽऽह्वानस्तुतिः (**वयोधाः**) यो वयो जीवनं दधाति सः॥ ३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः पृत्सु तरणिरर्वा न सहावा रोदसी इव मेहनावान् कारे व्यानशिर्हव्यो भगो न मतीनां वयोधाः सुहवश्चारुः पितेव वर्त्तते तमेव यूयं भूपतिं कुरुत॥ ३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। योऽश्ववद्वेगवान् बलिष्ठो योद्धा सूर्य्यभूमीवत् सर्वेषां सुखद ऐश्वर्य्यवत्कार्य्यसिद्धिकरः पितृवत्सर्वेषां पालको भवेत् स एव राज्याऽभिषेकमर्हेत्॥ ३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**पृत्सु**) स्पर्द्धा करते हुए संग्रामों में (**तरणिः**) शीघ्र चलनेवाले (**अर्वा**) घोड़े के (**न**) तुल्य (**सहावा**) सहनेवाला (**रोदसी**) अन्तरिक्ष और भूमि के सदृश (**मेहनावान्**) सेचन बहुत विद्यमान हैं, जिसके वह (**कारे**) करने योग्य व्यवहार में (**व्यानशिः**) व्याप्त (**हव्यः**) ग्रहण करने के योग्य (**भगः**) ऐश्वर्य्य के योग के (**न**) तुल्य (**मतीनाम्**) मनन करनेवाले मनुष्यों के (**वयोधाः**) जीवन को धारण करनेवाला (**सुहवः**) उत्तम पुकारने की स्तुतियुक्त (**चारुः**) सुन्दर (**पितेव**) पिता के सदृश वर्त्तमान है, उसी को आप लोग राजा करिये॥ ३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो घोड़े के सदृश वेग और बलयुक्त, योद्धा, सूर्य्य और भूमि के सदृश सबको सुख देने और ऐश्वर्य्य सदृश कार्य्य की सिद्धि करनेवाला पिता के सदृश सबका पालनकर्त्ता होवे, वही राज्याऽभिषेक करने के योग्य होवे॥ ३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

धर्ता दिवो रजसस्पृष्ट ऊर्ध्वो रथो न वायुर्वसुभिर्नियुत्वान्।
क्षपां वस्ता जनिता सूर्यस्य विभक्ता भागं धिषणेव वाजम्॥ ४॥

धर्ता। दिवः। रजसः। पृष्टः। ऊर्ध्वः। रथः। न। वायुः। वसुऽभिः। नियुत्वान्। क्षपाम्। वस्ता। जनिता। सूर्यस्य। विऽभक्ता। भागम्। धिष्णाऽइव। वाजम्॥ ४॥

पदार्थः-(**धर्त्ता**) धाता (**दिवः**) प्रकाशमयस्य (**रजसः**) लोकसमूहस्य (**पृष्टः**) प्रष्टुं योग्यः (**ऊर्ध्वः**) उत्कृष्टः (**रथः**) रमणीयं यानम् (**न**) इव (**वायुः**) पवन इव बलवान् (**वसुभिः**) सर्वैर्लोकैः सह

(नियुत्वान्) नियमकर्त्ता। **नियुत्वानितीश्वरनामसु पठितम्।** (निघं०२.२१) **(क्षपाम्)** रात्रिम् **(वस्ता)** आच्छादयिता **(जनिता)** उत्पादकः **(सूर्यस्य)** सवितृमण्डलस्य **(विभक्ता)** विभागकर्त्ता **(भागम्)** अंशम् **(धिषणेव)** द्यावापृथिव्याविव **(वाजम्)** अन्नादिकम्॥४॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यो दिवः सूर्यस्य रजसश्च जनिता धर्त्ता पृष्ट ऊर्ध्वो रथो न वसुभिर्वायुरिव क्षपां वस्ता धिषणेव वाजं भागं विभक्ता नियुत्वानस्ति तं परमात्मानमिव राजानं मन्यध्वम्॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो राजा परमेश्वरवत्प्रजासु वर्त्तते तमेव सततं सेवध्वम्॥४॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! जो **(दिवः)** प्रकाशस्वरूप **(सूर्यस्य)** सूर्य **(रजसः)** लोकों के समूह का **(जनिता)** उत्पन्न करने **(धर्त्ता)** धारण करनेवाला **(पृष्टः)** पूछने योग्य **(ऊर्ध्वः)** उत्तम **(रथः)** सुन्दर वाहन के **(न)** तुल्य **(वसुभिः)** सम्पूर्ण लोकों से **(वायुः)** पवन के सदृश बलवान् **(क्षपाम्)** रात्रि को **(वस्ता)** आच्छादन करनेवाला और **(धिषणेव)** अन्तरिक्ष और भूमि के सदृश **(वाजम्)** घोड़े आदि **(भागम्)** अंश का **(विभक्ता)** विभाग करने और **(नियुत्वान्)** नियम करनेवाला है, उसको परमात्मा के सदृश राजा मानो॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो राजा परमेश्वर के सदृश प्रजाओं में वर्त्तमान है, उसी की निरन्तर सेवा करो॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ।

शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम्॥५॥१३॥

शुनम्। हुवेम। मघऽवानम्। इन्द्रम्। अस्मिन्। भरे। नृऽतमम्। वाजऽसातौ। शृण्वन्तम्। उग्रम्। ऊतये। समत्ऽसु। घ्नन्तम्। वृत्राणि। सम्ऽजितम्। धनानाम्॥५॥

पदार्थः-**(शुनम्)** सुखम् **(हुवेम)** स्वीकुर्याम **(मघवानम्)** बह्वैश्वर्यम् **(इन्द्रम्)** परमेश्वरवद्वर्त्तमानं राजानम् **(अस्मिन्)** **(भरे)** पालनीये जगति **(नृतमम्)** अतिशयेन न्यायकारिणम् **(वाजसातौ)** स्वस्य स्वस्यांशस्य दानमये व्यवहारे **(शृण्वन्तम्)** यथावच्छ्रोतारम् **(उग्रम्)** दुष्टानां दुःखप्रदम् **(ऊतये)** रक्षणाद्याय **(समत्सु)** संग्रामेषु **(घ्नन्तम्)** हन्तारम् **(वृत्राणि)** धनानि **(सञ्जितम्)** जयशीलम् **(धनानाम्)** ऐश्वर्य्याणाम्॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! वयं यमिन्द्रमिव वर्त्तमानं राजानं धनानामूतयेऽस्मिन् भरे वाजसातौ नृतमं मघवानं समत्सु शत्रून् घ्नन्तं वृत्राणि शृण्वन्तमुग्रं सञ्जितं राजानं समागत्य शुनं हुवेम तं यूयमपि स्वीकुरुत॥५॥

भावार्थः-राजभिः प्रजासु पितृवदीश्वरवद्वर्त्तित्वा सर्वस्याः प्रजायाः पालनं कर्त्तव्यमित्युपदिशन्तु॥५॥

अत्र प्रजाराजधर्मवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकोनपञ्चाशत्तमं सूक्तं त्रयोदशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! हम लोग जिस **(इन्द्रम्)** परमेश्वर के सदृश वर्त्तमान राजा को **(धनानाम्)** ऐश्वर्य्यों के **(ऊतये)** रक्षण आदि के लिये **(अस्मिन्)** इस **(भरे)** पालन करने योग्य संसार और **(वाजसातौ)** अपने-अपने अंश के दानस्वरूप व्यवहार में **(नृतमम्)** अत्यन्त न्यायकारी **(मघवानम्)** बहुत ऐश्वर्य्यवाले **(समत्सु)** संग्रामों में शत्रुओं के **(घ्नन्तम्)** नाशकर्त्ता **(वृत्राणि)** धनों को **(शृण्वन्तम्)** यथावत् सुनते हुए **(उग्रम्)** दुष्टों के दुःख देने और **(सञ्जितम्)** जीतनेवाले राजा को प्राप्त होकर **(शुनम्)** सुख का **(हुवेम)** स्वीकार करे, उसको आप लोग भी स्वीकार करो॥५॥

भावार्थः-राजाओं को चाहिये कि प्रजाओं में पिता के और ईश्वर के तुल्य वर्त्तमान होकर सम्पूर्ण प्रजाओं का पालन करें, ऐसा उपदेश दीजिये॥५॥

इस सूक्त में प्रजा और राजा के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह उनचासवां सूक्त और तेरहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ पञ्चर्चस्य पञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, २, ४ निचृत् त्रिष्टुप्। ३, ५ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ राजविषयमाह॥

अब पाँच ऋचावाले पचासवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में राजा के विषय को कहते हैं॥

इन्द्रः स्वाहा पिबतु यस्य सोम आगत्या तुम्रो वृषभो मरुत्वान्।
ओरुव्यचाः पृणतामेभिरन्नैरास्य हविस्तन्वः काममृध्याः॥ १॥

इन्द्रः। स्वाहा। पिबतु। यस्य। सोमः। आऽगत्य। तुम्रः। वृषभः। मरुत्वान्। आ। उरुऽव्यचाः। पृणताम्। एभिः। अन्नैः। आ। अस्य। हविः। तन्वः। कामम्। ऋध्याः॥ १॥

पदार्थः-(**इन्द्रः**) ऐश्वर्य्यकर्त्ता (**स्वाहा**) सत्यया क्रियया (**पिबतु**) (**यस्य**) (**सोमः**) ऐश्वर्य्यसमूहः (**आगत्य**)। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**तुम्रः**) आहन्ता (**वृषभः**) बलिष्ठः (**मरुत्वान्**) प्रशस्तपुरुषयुक्तः (**आ**) (**उरुव्यचाः**) बहुशुभगुणव्याप्तः (**पृणताम्**) सुखयतु (**एभिः**) वर्त्तमानैः (**अन्नैः**) यवादिभिः (**आ**) (**अस्य**) (**हविः**) आदातव्यम् (**तन्वः**) शरीरस्य (**कामम्**) (**ऋध्याः**) साध्नुयाः॥ १॥

अन्वयः-हे विद्वन्! यस्[सोमस्]तुम्रो वृषभो मरुत्वानुरुव्यचा इन्द्रः स्वाहा यस्य सोमस्तस्यास्यैभिरन्नैरागत्य हविः पिबतु तन्वः काममापृणतां तं त्वमाध्याः॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः सत्यन्यायेन स्वांऽशं भुक्त्वा प्रजायाः सुखवर्द्धनायाऽन्यायं दुष्टांश्च हन्ति स समृद्धो भवति॥ १॥

पदार्थः-हे विद्वान्! जो (**सोमः**) ऐश्वर्यों का समूह (**तुम्रः**) विघ्नकारियों का हिंसक (**वृषभः**) बलिष्ठ (**मरुत्वान्**) उत्तम पुरुषों से युक्त (**उरुव्यचाः**) बहुत श्रेष्ठ गुणों से व्याप्त (**इन्द्रः**) ऐश्वर्य्यों का कर्त्ता (**स्वाहा**) सत्यक्रिया से (**यस्य**) जिसका (**सोमः**) ऐश्वर्य्यों का समूह उस (**अस्य**) इसके (**एभिः**) इन वर्तमान (**अन्नैः**) यव आदि अन्नों से (**आगत्य**) प्राप्त होकर (**हविः**) ग्रहण करने योग्य वस्तु का (**पिबतु**) पान कीजिये और (**तन्वः**) शरीर के (**कामम्**) मनोरथ को (**आ**) (**पृणताम्**) सब प्रकार पूर्ण करके सुख दीजिये और उसको आप (**आ, ऋध्याः**) सिद्ध कीजिये॥ १॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो सत्य न्याय से अपने अंश का भोग करके प्रजा के सुख बढ़ाने के लिये अन्याय और दुष्ट पुरुषों का नाश करता है, वह पुरुष समृद्धियुक्त होता है॥ १॥

अथ प्रीतिविषयमाह॥

अब प्रीति के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ ते सपर्यू जवसे युनज्मि ययोरनु प्रदिवः श्रुष्टिमावः।

इह त्वा धेयुर्हरय: सुशिप्र पिबा त्वश्स्य सुषुतस्य चारो:॥२॥

आ। ते। सपर्यू इति। जवसे। युनज्मि। ययो:। अनु। प्रऽदिव:। श्रुष्टिम्। आव:। इह। त्वा। धेयु:। हरय:। सुऽशिप्र। पिब। तु। अस्य। सुऽसुतस्य। चारो:॥२॥

पदार्थ:-(**आ**) समन्तात् (**ते**) तव (**सपर्य्यू**) सेवकौ (**जवसे**) वेगाय (**युनज्मि**) (**ययो:**) (**अनु**) (**प्रदिव:**) प्रकृष्टप्रकाशान् (**श्रुष्टिम्**) शीघ्रम् (**आव:**) रक्षे: (**इह**) (**त्वा**) त्वाम् (**धेयु:**) दध्यु:। अत्र **छन्दस्युभयथे**ति सार्वधातुकमाश्रित्य सलोप:। (**हरय:**) पुरुषार्थिनो मनुष्या: (**सुशिप्र**) सुवदन (**पिब**)। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घ:। (**तु**) (**अस्य**) (**सुषुतस्य**) सुष्ठु संस्कृतस्य (**चारो:**) अत्युत्तमस्य॥२॥

अन्वय:-हे सुशिप्र! त्वं ययोरनु प्रदिव: श्रुष्टिमावस्ताविह सपर्य्यू ते जवस आ युनज्मि। ये हरयस्त्वा धेयुस्तै: सह त्वस्य सुषुतस्य चारो: सोमस्यांशं पिब॥२॥

भावार्थ:-अस्मिन् संसारे ये येषां सेवकास्तैस्ते पोषणीया: सर्वै: परस्परं प्रीत्या सुखोन्नति: कार्य्या॥२॥

पदार्थ:-हे (**सुशिप्र**) सुन्दर मुखवाले! आप (**ययो:**) जिनके (**अनु, प्रदिव:**) उत्तम प्रकाशों को (**श्रुष्टिम्**) शीघ्र (**आव:**) रक्षा करें वे (**इह**) इस संसार में (**सपर्य्यू**) सेवा करनेवाले (**ते**) आपके (**जवसे**) वेग के लिये (**आ, युनज्मि**) संयुक्त करता हूँ। और जो (**हरय:**) पुरुषार्थी मनुष्य (**त्वा**) आपको (**धेयु:**) धारण करें, उनके साथ (**तु**) शीघ्र (**अस्य**) इस (**सुषुतस्य**) उत्तम प्रकार संस्कारयुक्त (**चारो:**) अतिश्रेष्ठ इस सोमलतारूप ओषधियों के अंश का (**पिब**) पान कीजिये॥२॥

भावार्थ:-इस संसार में जो लोग जिनके सेवक उन स्वामियों को चाहिये कि उन सेवकों का पोषण करें और सब लोग परस्पर प्रीति से सुख की उन्नति करें॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

गोभिर्मिमिक्षुं दधिरे सुपारमिन्द्रं ज्यैष्ठ्याय धायसे गृणाना:।
मन्दान: सोमं पपिवाँ ऋजीषिन्त्सम॒स्मभ्यं पुरुधा गा इषण्य॥३॥

गोभि:। मिमिक्षुम्। दधिरे। सुऽपारम्। इन्द्रम्। ज्यैष्ठ्याय। धायसे। गृणाना:। मन्दान:। सोमम्। पपिऽवान्। ऋजीषिन्। सम्। अस्मभ्यम्। पुरुधा। गा:। इषण्य॥३॥

पदार्थ:-(**गोभि:**) किरणै: (**मिमिक्षुम्**) सेक्तुमिच्छुम् (**दधिरे**) धरन्तु (**सुपारम्**) सुखेन पारं गन्तुं योग्यम् (**इन्द्रम्**) विद्यैश्वर्य्यवन्तम् (**ज्यैष्ठ्याय**) वृद्धस्य भावाय (**धायसे**) धातुम् (**गृणाना:**) स्तुवन्त: (**मन्दान:**) आनन्दन् (**सोमम्**) (**पपिवान्**) पीतवान् (**ऋजीषिन्**) सरलस्वभाव: (**सम्**) (**अस्मभ्यम्**) (**पुरुधा**) बहुभि: प्रकारै: (**गा:**) पृथिव्याद्या: (**इषण्य**) प्रेरय॥३॥

अन्वयः-हे ऋजीषिन्! ये गृणाना गोभिर्धायसे ज्यैष्ठ्याय मिमिक्षुं सुपारमिन्द्रं त्वा दधिरे यश्च सोमं पपिवान् मन्दानः सन्नस्मभ्यमिषण्य प्रेरय सोमं पुरुधा गाश्च संदधति ताँस्त्वं ते त्वां च सत्कुर्वन्तु॥३॥

भावार्थः-यथा सूर्य्यः किरणैर्वृष्टिं कृत्वा सर्वान् पुष्णाति तथैव विद्वांसोऽध्यापनोपदेशाभ्यां विद्यासत्ये वर्षित्वा सर्वान् मनुष्यान् पुष्णन्तु॥३॥

पदार्थः-हे **(ऋजीषिन्)** नम्र स्वभाव और **(गृणानाः)** स्तुति करते हुए! **(गोभिः)** किरणों से **(धायसे)** धारण करने को **(ज्यैष्ठ्याय)** वृद्ध होने के लिये **(मिमिक्षुम्)** सेचन करने की इच्छा करनेवाले को **(सुपारम्)** सुख से पार जाने के योग्य **(इन्द्रम्)** विद्या और ऐश्वर्यवान् आपको **(दधिरे)** धारण करो और जिसने **(सोमम्)** सोमलता के रस को **(पपिवान्)** पीया **(मन्दानः)** आनन्द करते हुए **(अस्मभ्यम्)** हम लोगों के **(इषण्य)** प्रेरणा करिये **(सोमम्)** सोम ओषधि के रस को और **(पुरुधा)** अनेक प्रकारों से **(गाः)** पृथिवी आदि को धारण करता है, उनका आप और वे आपका सत्कार करें॥३॥

भावार्थः-जैसे सूर्य अपने किरणों से वृष्टि करके सबकी पुष्टि करता है, वैसे ही विद्वान् लोग पढ़ाने और उपदेश से विद्या और सत्य की वृष्टि करके सब मनुष्यों की पुष्टि करें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इमं कामं मन्दया गोभिरश्वैश्चन्द्रवता राधसा पप्रथश्च।

स्वर्यवो मतिभिस्तुभ्यं विप्रा इन्द्राय वाहः कुशिकासो अक्रन्॥४॥

इमम्। कामम्। मन्दय। गोभिः। अश्वैः। चन्द्रऽवता। राधसा। पप्रथः। च। स्वःऽयवः। मतिऽभिः। तुभ्यम्। विप्राः। इन्द्राय। वाहः। कुशिकासः। अक्रन्॥४॥

पदार्थः-**(इमम्)** प्रत्यक्षम् **(कामम्)** **(मन्दय)** प्रापय। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(गोभिः)** धेन्वादिभिः **(अश्वैः)** तुरङ्गादिभिः **(चन्द्रवता)** पुष्कलं चन्द्रं सुवर्णं विद्यते यस्मिँस्तेन। **चन्द्र इति हिरण्यनामसु पठितम्।** (निघं०१.२) **(राधसा)** धनेन **(पप्रथः)** प्रख्यातो भव **(च)** अन्यान् प्रख्यापय **(स्वर्य्यवः)** ये सुखं यावयन्ति मिश्रयन्ति ते **(मतिभिः)** मनुष्यैः **(तुभ्यम्)** **(विप्राः)** पूर्णविद्या मेधाविनः **(इन्द्राय)** परमैश्वर्याय **(वाहः)** प्रापकाः **(कुशिकासः)** सर्वशास्त्रसिद्धान्तवेत्तारः **(अक्रन्)** कुर्युः॥४॥

अन्वयः-हे राजन्! ये स्वर्य्यवः कुशिकासो वाहो विप्रा मतिभिरिन्द्राय तुभ्यमिमं काममक्रँस्तेषामिमं कामं गोभिरश्वैश्चन्द्रवता राधसा त्वं पप्रथश्चैतान् मन्दय॥४॥

भावार्थः-यदि सत्पुरुषैः सहाऽऽनुकूल्येन वर्त्तित्वा परस्पराऽनुभूत्या पशुधनादिभिरिच्छामलं-कुर्युस्ते सदा सुखिनः स्युः॥४॥

पदार्थ:-हे राजन्! जो **(स्वर्यव:)** सुख को प्राप्त कराने **(कुशिकास:)** सम्पूर्ण शास्त्रों के सिद्धान्त जानने और **(वाह:)** प्राप्त करानेवाले **(विप्रा:)** पूर्ण विद्या से युक्त बुद्धिमान् लोग **(मतिभि:)** मनुष्यों से **(इन्द्राय)** अत्यन्त धन से युक्त **(तुभ्यम्)** आपके लिये **(इमम्)** इस प्रत्यक्ष **(कामम्)** मनोरथ को **(अक्रन्)** करें, उन लोगों के इस मनोरथ को **(गोभि:)** गौ आदि और **(अश्वै:)** घोड़े आदि और **(चन्द्रवता)** प्रसिद्ध बहुत सुवर्ण विद्यमान है जिसमें उस **(राधसा)** धन से आप **(पप्रथ:)** प्रसिद्ध होइये **(च)** और इनको **(मन्दय)** पहुँचाइये॥४॥

भावार्थ:-जो श्रेष्ठ पुरुषों के साथ अनुकूलता से वर्त्तमान होकर परस्पर ऐश्वर्य्य से और पशु आदि धन आदिकों से इच्छा को पूर्ण करें, वे सदा सुखी होवें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि संजितं धनानाम्॥५॥ १४॥

शुनम्। हुवेम। मघऽवानम्। इन्द्रम्। अस्मिन्। भरे। नृऽतमम्। वाजऽसातौ। शृण्वन्तम्। उग्रम्। ऊतये। समत्ऽसु। घ्नन्तम्। वृत्राणि। सम्ऽजितम्। धनानाम्॥५॥

पदार्थ:-**(शुनम्)** परस्परमेलजन्यं सुखम् **(हुवेम)** **(मघवानम्)** पूजितधनवन्तम् **(इन्द्रम्)** विरोधविदारकम् **(अस्मिन्)** **(भरे)** प्रेम्णा पालनीये व्यवहारे **(नृतमम्)** अतिशयेन प्रीतेर्नेतारं प्रापकम् **(वाजसातौ)** विज्ञानसेवने **(शृण्वन्तम्)** **(उग्रम्)** द्वेषविनाशकम् **(ऊतये)** ऐक्यभावप्रवेशाय **(समत्सु)** विरोधव्यवहारेषु **(घ्नन्तम्)** विनाशयन्तम् **(वृत्राणि)** प्रेमास्पदवस्तूनि **(सञ्जितम्)** सम्यग् जयशीलम् **(धनानाम्)** द्रव्याणाम्॥५॥

अन्वय:-हे मनुष्या! वयमस्मिन् वाजसातौ भरे ऊतये मघवानं नृतमं वृत्राणि शृण्वन्तं समत्सु वर्त्तमानानि निमित्तानि घ्नन्तमुग्रं धनानां सञ्जितमिन्द्रं शुनमिव हुवेम तं यूयमपि सेवध्वम्॥५॥

भावार्थ:-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कार:। त एव धन्या मनुष्या ये विरोधं परिहाय सहाऽनुभूतिं जनयन्तीति॥५॥

अत्र परस्परेषां प्रीतिवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति पञ्चाशत्तमं सूक्तं चतुर्दशो वर्गश्च समाप्त:॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! हम लोग **(अस्मिन्)** इस **(वाजसातौ)** विज्ञान के सेवन करने और **(भरे)** प्रेम से पालन करने योग्य व्यवहार में **(ऊतये)** ऐक्यभाव में प्रवेश होने के लिये **(मघवानम्)** श्रेष्ठ धनवाले और **(नृतमम्)** अत्यन्त प्रीति के प्राप्त करानेवाले और **(वृत्राणि)** प्रेम के स्थानभूत वस्तुओं को **(शृण्वन्तम्)** सुननेवाले **(समत्सु)** विरोध के व्यवहारों में वर्त्तमान कारणों को **(घ्नन्तम्)** नाश करते हुए

(उग्रम्) द्वेष के विनाशकर्त्ता **(धनानाम्)** द्रव्यों को **(सञ्जितम्)** उत्तम प्रकार जीतने और **(इन्द्रम्)** विरोध के नाश करनेवाले को **(शुनम्)** परस्पर मेल से उत्पन्न सुख को जैसे वैसे **(हुवेम)** ग्रहण करें, उसका आप लोग भी सेवन करें॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। वे ही धन्य मनुष्य कि जो विरोध का त्याग करके एक साथ ऐश्वर्य उत्पन्न करते हैं॥५॥

इस सूक्त में परस्पर की प्रीति वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह पचासवां सूक्त और चौदहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ द्वादशर्चस्यैकाधिकपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। ४, ७-९ त्रिष्टुप्। ५, ६ निचृत् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। १-३ निचृज्जगती छन्दः। निषादः स्वरः। १०, ११ यवमध्या गायत्री। १२ विराट् गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथ राजविषयमाह॥

अब बारह ऋचावाले इक्कावनवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में राजा के विषय को कहते हैं॥

चर्षणीधृतं मघवानमुक्थ्य१मिन्द्रं गिरो बृहतीरभ्यनूषत।

वावृधानं पुरुहूतं सुवृक्तिभिरमर्त्यं जरमाणं दिवेदिवे॥ १॥

चर्षणिऽधृतम्। मघऽवानम्। उक्थ्यम्। इन्द्रम्। गिरः। बृहतीः। अभि। अनूषत। ववृधानम्। पुरुऽहूतम्। सुवृक्तिऽभिः। अमर्त्यम्। जरमाणम्। दिवेऽदिवे॥ १॥

पदार्थः-(**चर्षणीधृतम्**) मनुष्याणां धर्त्तारम् (**मघवानम्**) बहुधनयुक्तम् (**उक्थ्यम्**) प्रशंसनीयम् (**इन्द्रम्**) राजानम् (**गिरः**) विदुषां वाचः (**बृहतीः**) बृहद्विषयाः (**अभि, अनूषत**) प्रशंसेयुः (**वावृधानम्**) वर्द्धमानम् (**पुरुहूतम्**) बहुभिः सत्कृतम् (**सुवृक्तिभिः**) सुष्ठु संविभागैः (**अमर्त्यम्**) मरणधर्मरहितम् (**जरमाणम्**) स्तुवन्तम् (**दिवेदिवे**) प्रतिदिनम्॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! बृहतीर्गिरो दिवेदिवे सुवृक्तिभिर्यं चर्षणीधृतं मघवानमुक्थ्यं वावृधानं पुरुहूतममर्त्यं जरमाणमिन्द्रमभ्यनूषत तं यूयमाश्रयत॥१॥

भावार्थः-हे राजपुरुषा! बहुभिः सत्कृतं प्रजाधारणक्षमं राजानं विद्वांसः प्रशंसेयुस्तस्यैव यूयं शरणं गच्छत॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**बृहतीः**) बड़े विषय अर्थात् तात्पर्यवाली (**गिरः**) विद्वानों की वाणियों को (**दिवेदिवे**) प्रतिदिन (**सुवृक्तिभिः**) उत्तम संविभागों से जिस (**चर्षणीधृतम्**) मनुष्यों के धारण करनेवाले (**मघवानम्**) बढ़े हुए धन से युक्त (**उक्थ्यम्**) प्रशंसा करने योग्य (**वावृधानम्**) बढ़े हुए (**पुरुहूतम्**) बहुतों से सत्कार किये गये (**अमर्त्यम्**) मरणधर्म से रहित (**जरमाणम्**) स्तुति करते हुए (**इन्द्रम्**) राजा की (**अभ्यनूषत**) प्रशंसा करें, उसका आप लोग भी आश्रयण करो॥१॥

भावार्थः-हे राजपुरुषो! बहुत जनों से सत्कृत प्रजाओं के धारण करने में समर्थ जिस राजा की विद्वान् लोग प्रशंसा करें, उसी के आप लोग शरण जाओ॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शतक्रतुमर्णवं शाकिनं नरं गिरो म इन्द्रमुप यन्ति विश्वतः।

वाजसनिं पूर्भिदं तूर्णिमप्तुरं धामसाचमभिषाचं स्वर्विदम्॥२॥

शतऽक्रतुम्। अर्णवम्। शाकिनम्। नरम्। गिरः। मे। इन्द्रम्। उप। यन्ति। विश्वतः। वाजऽसनिम्। पूःऽभिदम्। तूर्णिम्। अप्ऽतुरम्। धामऽसाचम्। अभिऽसाचम्। स्वःऽविदम्॥२॥

पदार्थः-(**शतक्रतुम्**) अमितप्रज्ञम् (**अर्णवम्**) समुद्रमिव गम्भीरम् (**शाकिनम्**) शक्तिमन्तम् (**नरम्**) नायकम् (**गिरः**) वाण्याः (**मे**) मम (**इन्द्रम्**) परमैश्वर्य्यप्रदम् (**उप**) (**यन्ति**) प्राप्नुवन्ति (**विश्वतः**) सर्वतः (**वाजसनिम्**) अन्नविज्ञानविभाजकम् (**पूर्भिदम्**) शत्रूणां नगराभिदारकम् (**तूर्णिम्**) शीघ्रकारिणम् (**अप्तुरम्**) प्राणप्रेरकम् (**धामसाचम्**) समवयन्तम् (**अभिषाचम्**) अभिमुख्ये प्राचन्तम् (**स्वर्विदम्**) सुखप्राप्तम्॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! मे गिरोऽर्णवमिव शतक्रतुं शाकिनं नरं वाजसनिं पूर्भिदं तूर्णिमप्तुरं धामसाचमभिषाचं स्वर्विदमिन्द्रं विश्वत उ यन्ति तस्यैव शरणमुपगच्छत॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यदि मनुष्या अखिलविद्यासु निपुणं शक्तिमन्तं सत्यसन्धिं दुष्टताडकं राजानमुपगच्छेयुस्तर्हि तेषां कुतश्चिदपि भयं न जायते॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**मे**) मेरी (**गिरः**) वाणियों को (**अर्णवम्**) समुद्र के सदृश गम्भीर (**शतक्रतुम्**) नापरहित बुद्धि और (**शाकिनम्**) शक्तियुक्त (**नरम्**) नायक (**वाजसनिम्**) अन्न और विज्ञान के विभागकर्त्ता (**पूर्भिदम्**) शत्रुओं के नगर के भेदन करने और (**तूर्णिम्**) शीघ्रता करनेवाले (**अप्तुरम्**) प्राणों के प्रेरणकर्त्ता (**धामसाचम्**) रक्षा करते हुए (**अभिषाचम्**) सम्मुख भाव और (**स्वर्विदम्**) सुख को प्राप्त (**इन्द्रम्**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य के देनेवाले को (**विश्वतः**) सब प्रकार (**उप, यन्ति**) प्राप्त होते हैं, उस ही के शरण जाओ॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्य लोग सम्पूर्ण विद्याओं में कुशल सामर्थ्ययुक्त सत्यधारणकर्त्ता दुष्ट पुरुषों के ताड़न करनेवाले राजा के समीप जावें तो उसका किसी से भी भय नहीं होता है॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आकरे वसोर्जरिता पनस्यतेऽनेहसः स्तुभ इन्द्रो दुवस्यति।
विवस्वतः सदन आ हि पिप्रिये सत्रासाहमभिमातिहनं स्तुहि॥३॥

आऽकरे। वसोः। जरिता। पनस्यते। अनेहसः। स्तुभः। इन्द्रः। दुवस्यति। विवस्वतः। सदने। आ। हि। पिप्रिये। सत्राऽसहम्। अभिमातिऽहनम्। स्तुहि॥३॥

पदार्थः-(**आकरे**) समूहे (**वसोः**) धनस्य (**जरिता**) स्तोता (**पनस्यते**) व्यवहरति (**अनेहसः**) अहन्तव्यस्य (**स्तुभः**) यः स्तोभते सः (**इन्द्रः**) विद्युदिव सर्वाधीशो राजा (**दुवस्यति**) परिचरति (**विवस्वतः**) सूर्यस्य (**सदने**) स्थाने (**आ**) समन्तात् (**हि**) खलु (**पिप्रिये**) प्रीणाति (**सत्रासाहम्**) सत्यसहम् (**अभिमातिहनम्**) योऽभिमानयुक्तं शत्रुं हन्ति तम् (**स्तुहि**)॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः स्तुभो जरिता अनेहसो वसोराकरे विवस्वतः सदने इन्द्र इव पनस्यते विदुषो धर्मं च दुवस्यति सत्रासाहमभिमातिहनमा पिप्रिये तं हि स्तुहि॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथेश्वरेण विद्युत उत्पादितः सूर्य एकत्र वर्त्तमानः सन् सर्वत्र सन्निहितं सर्वं प्रकाशते तथैवैकस्मिन् देशे स्थितो राजा अमात्यदूतचारसेनादिप्रबन्धेन सर्वं राज्यं विद्याविनयाभ्यामुज्ज्वल्यैश्वर्यसमूहेन धर्मोन्नतये व्यवहरेत्॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**स्तुभः**) फलों को प्राप्त होने (**जरिता**) स्तुति करनेवाला (**अनेहसः**) नहीं नाश करने योग्य (**वसोः**) धन के (**आकरे**) समूह में (**विवस्वतः**) सूर्य के (**सदने**) स्थान में (**इन्द्रः**) बिजुली के सदृश सबका स्वामी राजा (**पनस्यते**) व्यवहार करता है और विद्वान् के धर्म का (**दुवस्यति**) सेवन करता और (**सत्रासाहम्**) सत्य के सहनेवाले (**अभिमातिहनम्**) अभिमानयुक्त शत्रु के नाश करनेवाले को (**आ, पिप्रिये**) प्रसन्न करता है, उसकी (**हि**) निश्चय (**स्तुहि**) स्तुति करो॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे ईश्वर से बिजुली द्वारा उत्पन्न किया गया सूर्य एकत्र वर्त्तमान हुआ सर्वत्र विद्यमान सब वस्तुओं को प्रकाशित करता है, वैसे ही एक स्थान में वर्त्तमान राजा, मन्त्री, दूत, पियादे और सेनादि के प्रबन्ध से सम्पूर्ण राज्य को विद्या और विनय से प्रकाशित करके ऐश्वर्य के समूह से धर्म की उन्नति के लिये व्यवहार करे॥३॥

अथ प्रजाप्रशंसाविषयमाह॥

अब प्रजा के प्रशंसा के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नृणामु त्वा नृतमं गीर्भिरुक्थैरभि प्र वीरमर्चता सबाधः।
सं सहसे पुरुमायो जिहीते नमो अस्य प्रदिव एक ईशे॥४॥

नृणाम्। ऊम् इति। त्वा। नृऽतमम्। गीःऽभिः। उक्थैः। अभि। प्र। वीरम्। अर्चत। सऽबाधः। सम्। सहसे। पुरुऽमायः। जिहीते। नमः। अस्य। प्रऽदिवः। एकः। ईशे॥४॥

पदार्थः-(**नृणाम्**) नायकानां मनुष्याणाम् (उ) (**त्वा**) त्वाम् (**नृतमम्**) अतिशयेन नायकम् (**गीर्भिः**) वाग्भिः (**उक्थैः**) प्रशंसावचनैः (**अभि**) (**प्र**) (**वीरम्**) व्याप्तराजविद्याबलम् (**अर्चत**) सत्कुरुत। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**सबाधः**) बाधेन सह वर्त्तमानः (**सम्**) (**सहसे**) बलाय (**पुरुमायः**) यः पुरून् बहून् मिनोति (**जिहीते**) प्राप्नोति (**नमः**) अन्नं संस्कारं वा (**यस्य**) (**प्रदिवः**) प्रकृष्टप्रकाशस्य (**एकः**) असहायः (**ईशे**) ईष्टे। **आत्मनेपदेष्वि**ति तलोपः॥४॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! यूयं यः सबाधः पुरुमाय एकः सेनेशोऽस्य प्रदिव ईशे सहसे नमः सं जिहीते तं वीरं प्रार्चत। हे राजन्! ये गीर्भिरुक्थैर्नृणां नृतमं त्वा सत्कुर्युस्तानु त्वमभ्यर्च॥४॥

भावार्थः-विद्वद्भिस्तस्यैव प्रशंसा कार्या यः प्रशंसाऽर्हाणि कर्माणि कुर्यात्॥४॥

पदार्थः-हे विद्वान् जनो! आप लोग जो **(सबाधः)** बाध के सहित वर्त्तमान **(पुरुमायः)** बहुत कार्यों का कर्त्ता **(एकः)** सहायरहित सेनाधिपति पुरुष **(अस्य)** इस **(प्रदिवः)** उत्तम प्रकाश का **(ईशे)** स्वामी है **(सहसे)** बल के लिये **(नमः)** अन्न वा सत्कार को **(सम्, जिहीते)** प्राप्त होता है, उस **(वीरम्)** राजविद्या और बल से व्याप्त पुरुष का **(प्र, अर्चत)** सत्कार करिये। और हे राजन्! जो **(गीर्भिः)** वाणियों और **(उक्थैः)** प्रशंसा के वचनों से **(नृणाम्)** अग्रणी मनुष्यों के **(नृतमम्)** अत्यन्त नायक **(त्वा)** आपका सत्कार करें उनका **(उ)** ही आप सत्कार करिये॥४॥

भावार्थः-विद्वानों को चाहिये कि उस ही की प्रशंसा करें कि जो प्रशंसा योग्य कर्मों को करे॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

पूर्वीरस्य निष्षिधो मर्त्येषु पुरू वसूनि पृथिवी बिभर्ति।
इन्द्राय द्याव ओषधीरुतापो रयिं रक्षन्ति जीरयो वनानि॥५॥१५॥

पूर्वीः। अस्य। निःऽसिधः। मर्त्येषु। पुरु। वसूनि। पृथिवी। बिभर्ति। इन्द्राय। द्यावः। ओषधीः। उत। आपः। रयिम्। रक्षन्ति। जीरयः। वनानि॥५॥

पदार्थः-**(पूर्वीः)** सनातनीः **(अस्य)** राज्ञः **(निष्षिधः)** नितरां साधिकाः **(मर्त्येषु)** मनुष्येषु **(पुरू)** पुरूणि बहूनि **(वसूनि)** द्रव्याणि **(पृथिवी)** **(बिभर्त्ति)** **(इन्द्राय)** ऐश्वर्याय **(द्यावः)** सूर्यादिप्रकाशः **(ओषधीः)** सोमाद्याः **(उत)** अपि **(आपः)** प्राणा जलानि **(रयिम्)** श्रियम् **(रक्षन्ति)** **(जीरयः)** ये जीर्यन्ते ते मनुष्याः **(वनानि)** वनन्ति सम्भजन्ति सुखानि यैस्तानि॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये जीरयोऽस्य मर्त्येषु पूर्वीर्निष्षधो रक्षन्ति पुरू वसूनि पृथिवीव यो बिभर्त्ति द्याव इन्द्राय रयिं वनानि च उताप्याप ओषधी रक्षन्तीव राज्यं बिभर्त्ति स एव राजा भवितुमर्हति॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये मर्त्येषु धनानि विज्ञानं भैषज्यं धरन्ति त एव राजकर्मचारिणो भवितुमर्हन्ति॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(जीरयः)** वृद्ध होनेवाले मनुष्य **(अस्य)** इस राजा के **(मर्त्येषु)** मनुष्यों में **(पूर्वीः)** अनादि काल से सिद्ध **(निष्षिधः)** अत्यन्त सिद्ध करनेवालियों की **(रक्षन्ति)** रक्षा करते हैं और

(पुरू) बहुत **(वसूनि)** द्रव्यों को **(पृथिवी)** भूमि के सदृश जो पुरुष **(बिभर्त्ति)** धारण करता है **(द्याव:)** सूर्य्य आदि के प्रकाश **(इन्द्राय)** ऐश्वर्य्य के लिये **(रयिम्)** लक्ष्मी और **(वनानि)** सम्मुख हों सुख जिनसे उनको **(उत)** भी **(आप:)** प्राण वा जल जैसे **(ओषधी:)** सोमलता और ओषधियों की रक्षा करते हैं, वैसे राज्य का **(बिभर्त्ति)** पोषण करता है, वही राजा होने के योग्य हो॥५॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो मनुष्यों में धन, विज्ञान और ओषधि धारण करते, वे ही राजाओं के कर्मचारी होने के योग्य हैं॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तुभ्यं ब्रह्माणि गिर इन्द्र तुभ्यं सत्रा दधिरे हरिवो जुषस्व।
बोध्या३पिरवसो नूतनस्य सखे वसो जरितृभ्यो वयो धा:॥६॥

तुभ्यम्। ब्रह्माणि। गिर:। इन्द्र। तुभ्यम्। सत्रा। दधिरे। हरिऽव:। जुषस्व। बोधि। आपि:। अवस:। नूतनस्य। सखे। वसो इति। जरितृऽभ्य:। वय:। धा:॥६॥

पदार्थ:-**(तुभ्यम्)** **(ब्रह्माणि)** धनानि **(गिर:)** वाच: **(इन्द्र)** ऐश्वर्य्यधारक **(तुभ्यम्)** **(सत्रा)** सत्यम् **(दधिरे)** धरेयु: **(हरिव:)** प्रशस्ताऽश्वादियुक्त **(जुषस्व)** सेवस्व **(बोधि)** बुध्यस्व **(आपि:)** व्याप्त: सन् **(अवस:)** रक्षणादे: **(नूतनस्य)** नवीनस्य **(सखे)** मित्र **(वसो)** प्राप्तधन **(जरितृभ्य:)** स्तावकेभ्यो विद्वद्भ्य: **(वय:)** जीवनम् **(धा:)** धेहि॥६॥

अन्वय:-हे इन्द्र! या गिरस्तुभ्यं ब्रह्माणि, हे हरिवो! या वाचस्तुभ्यं सत्रा दधिरे तास्त्वं जुषस्व। हे सखे! नूतनस्याऽवस आपिस्सँस्ता बोधि। हे वसो! त्वं जरितृभ्यो वयो धा:॥६॥

भावार्थ:-मनुष्यैस्तादृशी वाग् ग्राह्या श्राव्या यादृश्या धनं जायते सत्यं रक्ष्यते जीवनं वर्द्धयते॥६॥

पदार्थ:-हे **(इन्द्र)** ऐश्वर्य्य के धारणकर्त्ता! जो **(गिर:)** वाणियां **(तुभ्यम्)** आपके लिये **(ब्रह्माणि)** धनों को और हे **(हरिव:)** उत्तम घोड़े आदि से युक्त! जो वाणियां **(तुभ्यम्)** आपके लिये **(सत्रा)** सत्य को **(दधिरे)** धारण करें, उनको आप **(जुषस्व)** सेवन करो। हे **(सखे)** मित्र! **(नूतनस्य)** नवीन **(अवस:)** रक्षणादि के **(आपि:)** व्याप्त हुए आप उनको **(बोधि)** जानिये, हे **(वसो)** धन को प्राप्त! आप **(जरितृभ्य:)** स्तुतिकर्त्ता विद्वानों के लिये **(वय:)** जीवन को **(धा:)** धारण कीजिये॥६॥

भावार्थ:-मनुष्यों को चाहिये कि ऐसी वाणी ग्रहण करें और सुनें कि जिससे धनसंग्रह होता है, सत्य की रक्षा की जाती और जीवन बढ़ता है॥६॥

अथ राजविषयमाह॥

अब राजा के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रं मरुत्व इह पाहि सोमं यथा शार्याते अपिबः सुतस्य।

तव प्रणीती तवं शूर शर्मन्ना विवासन्ति कवयः सुयज्ञाः॥७॥

इन्द्रं। मरुत्वः। इह। पाहि। सोमम्। यथा। शार्याते। अपिबः। सुतस्य। तवं। प्रऽनीती। तवं। शूर। शर्मन्। आ। विवासन्ति। कवयः। सुऽयज्ञाः॥७॥

पदार्थः-(**इन्द्र**) ऐश्वर्य्यधारक (**मरुत्वः**) प्रशंसितधनयुक्त (**इह**) अस्मिन् संसारे (**पाहि**) रक्ष (**सोमम्**) ऐश्वर्य्यकारकम् (**यथा**) (**शार्याते**) यः शरीरे हिंसकान् याति प्राप्नोति तस्यास्मिन् व्यवहारे (**अपिबः**) पिब (**सुतस्य**) निष्पन्नस्य (**तव**) (**प्रणीती**) प्रकृष्टया नीत्या (**तव**) (**शूर**) दुष्टानां हिंसक (**शर्मन्**) सुखकारके गृहे (**आ**) (**विवासन्ति**) परिचरन्ति (**कवयः**) विद्वांसः (**सुयज्ञाः**) शोभना यज्ञाः सङ्गताः क्रिया येषान्ते॥७॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वमिह सोमं पाहि। हे मरुत्वो! यथा शार्याते सुतस्य त्वमपिबः। हे शूर! ये सुयज्ञाः कवयस्तव प्रणीती तव शर्मन्त्सोममाविवासन्ति तांस्त्वं पाहि॥७॥

भावार्थः-हे राजन्! यथा भवान् स्वं राष्ट्रमैश्वर्य्यं न्यायं धर्मं च रक्षति तथा येऽमात्यभृत्याः स्युस्तेषां सत्कारस्त्वया सदैव कर्त्तव्यः॥७॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्य के धारण करनेवाले! आप (**इह**) इस संसार में (**सोमम्**) ऐश्वर्य्य करनेवाले की (**पाहि**) रक्षा कीजिये। और हे (**मरुत्वः**) उत्तम धनों से युक्त! (**यथा**) जिस प्रकार (**शार्याते**) हिंसा करनेवालों को प्राप्त होनेवालों के इस व्यवहार में (**सुतस्य**) उत्पन्न को आप (**अपिबः**) पान कीजिये। हे (**शूर**) दुष्टों के नाशकर्त्ता! जो (**सुयज्ञाः**) श्रेष्ठ संयुक्त क्रियायें जिनकी वे (**कवयः**) विद्वान् लोग (**तव**) आपकी (**प्रणीती**) उत्तम नीति से और (**तव**) आपके (**शर्मन्**) सुखकारक गृह में ऐश्वर्य्यकर्त्ता को (**आ, विवासन्ति**) प्राप्त होते हैं, उनकी आप रक्षा कीजिये॥७॥

भावार्थः-हे राजन्! जैसे आप अपने राज्य, ऐश्वर्य्य, न्याय और धर्म की रक्षा करते हैं, उसी प्रकार के आपके मन्त्री और नौकर आदि होवें, उनका सत्कार आपको सदा ही करना चाहिये॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स वावशान इह पाहि सोमं मरुद्भिरिन्द्र सखिभिः सुतं नः।

जातं यत्त्वा परि देवा अभूषन् महे भराय पुरुहूत विश्वे॥८॥

सः। वावशानः। इह। पाहि। सोमम्। मरुत्ऽभिः। इन्द्र। सखिऽभिः। सुतम्। नः। जातम्। यत्। त्वा। परि। देवाः। अभूषन्। महे। भराय। पुरुऽहूत। विश्वे॥८॥

पदार्थः-(**सः**) (**वावशानः**) कामयमानः (**इह**) अस्मिन् राज्यव्यवहारे (**पाहि**) (**सोमम्**) ऐश्वर्यम् (**मरुद्भिः**) वायुभिः सूर्य इव (**इन्द्र**) सकलैश्वर्यसम्पन्न (**सखिभिः**) सुहृद्भिः (**सुतम्**) उत्पन्नम् (**नः**) अस्माकम् (**जातम्**) प्रकटम् (**यत्**) येन (**त्वा**) त्वाम् (**परि**) सर्वतः (**देवाः**) विद्वांसः (**अभूषन्**) अलङ्कुर्युः (**महे**) महते (**भराय**) भरणीयाय संग्रामाय (**पुरुहूत**) बहुभिः प्रशंसित (**विश्वे**) सर्वे॥८॥

अन्वयः-हे इन्द्र! इह स वावशानस्त्वं मरुद्भिः सूर्यइव सखिभिः सह नो जातं सुतं सोमं पाहि। हे पुरुहूत! विश्वे देवा यद्येन महे भराय त्वा पर्यभूषंस्तेन त्वमस्मान्त्सर्वतोऽलङ्कुरु॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्यो वायुसहायेन सर्वं रक्षति तथैवाप्तैर्मित्रैः सह राजा सर्वं राष्ट्रं रक्षेद्येऽमात्यभृत्या राज्यहितकारिणः स्युस्तान् सर्वदा सत्कुर्यात्॥८॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) सम्पूर्ण ऐश्वर्यों से युक्त! (**इह**) इस राज्य के व्यवहार में (**सः**) वह (**वावशानः**) कामना करते हुए आप (**मरुद्भिः**) पवनों से सूर्य के सदृश (**सखिभिः**) मित्रों के साथ (**नः**) हम लोगों के (**जातम्**) प्रकट और (**सुतम्**) उत्पन्न (**सोमम्**) ऐश्वर्य की (**पाहि**) रक्षा कीजिये और हे (**पुरुहूत**) बहुतों से प्रशंसित! (**विश्वे**) सम्पूर्ण (**देवाः**) विद्वान् लोग (**यत्**) जिससे (**महे**) बड़े (**भराय**) पोषण करने योग्य संग्राम के लिये (**त्वा**) आपको (**परि**) सब प्रकार (**अभूषन्**) शोभित करें, जिससे आप हम लोगों को सब प्रकार शोभित करें॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य वायुरूप सहाय से सबकी रक्षा करता है, वैसे ही यथार्थवक्ता मित्रों के साथ राजा सम्पूर्ण राज्य की रक्षा करे और जो मन्त्री और नौकर राज्य के हितकारी होवें, उनका सब काल में सत्कार करें॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अप्तूर्ये मरुत आपिरेषोऽमन्दन्निन्द्रमनु दातिवाराः।
तेभिः साकं पिबतु वृत्रखादः सुतं सोमं दाशुषः स्वे सधस्थे॥९॥

अप्ऽतूर्ये। मरुतः। आपिः। एषः। अमन्दन्। इन्द्रम्। अनु। दातिऽवाराः। तेभिः। साकम्। पिबतु। वृत्रऽखादः। सुतम्। सोमम्। दाशुषः। स्वे। सधऽस्थे॥९॥

पदार्थः-(**अप्तूर्य्ये**) अपोभिः कर्मभिः प्रेरयितव्ये (**मरुतः**) मनुष्याः (**आपिः**) यः समन्तात् पिबति शुभगुणव्याप्तो वा (**एषः**) (**अमन्दन्**) आनन्दयेयुः (**इन्द्रम्**) राजानम् (**अनु**) (**दातिवाराः**) ये दातिं लवनं

छेदनं वृण्वन्ति **(तेभिः)** **(साकम्)** सह **(पिबतु)** **(वृत्रखादः)** यो वृत्रं खादति स्थिरीकरोति सः **(सुतम्)** सिद्धम् **(सोमम्)** ऐश्वर्यम् **(दाशुषः)** दातुः **(स्वे)** स्वकीये **(सधस्थे)** समानस्थाने॥९॥

अन्वयः-ये दातिवारा मरुतोऽप्तूर्य्ये इन्द्रममन्दँस्तेभिस्साकमेष आपिर्वृत्रखादो दाशुषस्स्वे सधस्थे सुतं सोममनु पिबतु ताँस्तञ्च राजा सततं हर्षयेत्॥९॥

भावार्थः-ये नराः सत्याचारं प्रति प्रेरित्वा दुष्टाचारान् निषेध्य सर्वान् धार्मिकान् कृत्वाऽऽनन्देयुस्तैः सह राजाऽन्वानन्देत्॥९॥

पदार्थः-जो **(दातिवाराः)** छेदन करनेवाले **(मरुतः)** मनुष्य **(अप्तूर्य्ये)** कर्मों से प्रेरणा करने योग्य **(इन्द्रम्)** राजा को **(अमन्दन्)** आनन्द देवें **(तेभिः)** उनके **(साकम्)** साथ **(एषः)** यह **(आपिः)** सब प्रकार पीनेवाला वा शुभ गुणों से व्याप्त **(वृत्रखादः)** मेघ को स्थिर करनेवाला **(दाशुषः)** दान करनेवाले के **(स्वे)** अपने **(सधस्थे)** तुल्य स्थान में **(सुतम्)** सिद्ध **(सोमम्)** ऐश्वर्य्य को **(अनु, पिबतु)** पीछे पान करे, उसको आप राजा निरन्तर प्रसन्न करें॥९॥

भावार्थः-जो मनुष्य सत्य आचरण की प्रेरणा और दुष्ट आचरणों का निषेध और सबको धार्मिक करके आनन्द देवें, उनके साथ राजा आनन्द करे॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इदं ह्यन्वोजसा सुतं राधानां पते। पिबा त्वस्य गिर्वणः॥१०॥

इदम्। हि। अनु। ओजसा। सुतम्। राधानाम्। पते। पिब। तु। अस्य। गिर्वणः॥१०॥

पदार्थः-**(इदम्)** **(हि)** खलु **(अनु)** **(ओजसा)** बलेन **(सुतम्)** साधितम् **(राधानाम्)** धनानाम् **(पते)** पालक **(पिब)**। अत्र **द्व्यचोतस्तिङ** इति दीर्घः। **(तु)** **(अस्य)** **(गिर्वणः)** यौ गीर्यते याच्यते तत्सम्बुद्धौ॥१०॥

अन्वयः-हे गिर्वणो राधानां पते! त्वमोजसाऽस्येदं सुतं तु पिब हि अनु पिपासयेदं पिब॥१०॥

भावार्थः-हे राजँस्त्वं हि सदैव धनैश्वर्य्यं रक्षित्वा प्राप्तं राज्यमन्वेक्षणेन वर्द्धयित्वा सुखी भव॥१०॥

पदार्थः-हे **(गिर्वणः)** प्रार्थित हुए **(राधानाम्)** धनों के **(पते)** पालन करनेवाले! आप **(ओजसा)** बल से **(अस्य)** इसके **(इदम्)** इस **(सुतम्)** सिद्ध किये गये सोमलतारूप रस का **(पिब)** पान कीजिये **(हि)** निश्चय से और पान करने की इच्छा से इस सोमलता का पान करो॥१०॥

भावार्थः-हे राजन्! आप निश्चय सब काल में धन और ऐश्वर्य्य की रक्षा करके और जो प्राप्त

राज्य उसकी देख-भाल से वृद्धि करके सुखी होइये॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

यस्ते अनु स्वधामसत् सुते नि यच्छ तन्वम्। स त्वा ममत्तु सोम्यम्॥ ११॥

यः। ते। अनु। स्वधाम्। असत्। सुते। नि। यच्छ। तन्वम्। सः। त्वा। ममत्तु। सोम्यम्॥ ११॥

पदार्थः-(**यः**) विद्वान् (**ते**) तव (**अनु**) (**स्वधाम्**) अन्नम् (**असत्**) भवेत् (**सुते**) (**नि**) (**यच्छ**) निगृह्णीहि (**तन्वम्**) शरीरम् (**सः**) (**त्वा**) त्वाम् (**ममत्तु**) आनन्दतु (**सोम्यम्**) सोमे भवम्॥११॥

अन्वयः-हे राजन्! यस्ते सुते स्वधामन्वसत् स त्वा ममत्तु त्वं तन्वं नियच्छ सोम्यमाचर॥११॥

भावार्थः-हे राजन्! यो भवदनुकूलो भूत्वा धर्मात्मा सन् प्रजा आनन्दयेत् स श्रीमत ऐश्वर्यं प्राप्नुयात् त्वं जितेन्द्रियो भूत्वा प्रजाः साधिः॥११॥

पदार्थः-हे राजन्! (**यः**) जो (**ते**) आपके (**सुते**) उत्पन्न सोमलता के रस में (**स्वधाम्**) अन्न (**अनु, असत्**) पीछे होवे (**सः**) वह (**त्वा**) आपको (**ममत्तु**) आनन्द देवे और आप (**तन्वम्**) शरीर को (**नियच्छ**) ग्रहण कीजिये (**सोम्यम्**) सोमलता में उत्पन्न का पान आदि आचरण कीजिये॥११॥

भावार्थः-हे राजन्! जो आपके अनुकूल और धर्मात्मा होकर प्रजाजनों को आनन्दित करे, वह लक्ष्मीवान् से ऐश्वर्य को प्राप्त होवे और आप इन्द्रियजित् होकर प्रजाओं को सिद्ध कीजिये॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र ते अश्नोतु कुक्ष्योः प्रेन्द्र ब्रह्मणा शिरः। प्र बाहू शूर राधसे॥ १२॥ १६॥

प्र। ते। अश्नोतु। कुक्ष्योः। प्र। इन्द्र। ब्रह्मणा। शिरः। प्र। बाहू इति। शूर। राधसे॥ १२॥

पदार्थः-(**प्र**) (**ते**) तव (**अश्नोतु**) प्राप्नोतु। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम्। (**कुक्ष्योः**) उदरपार्श्वयोः (**प्र**) (**इन्द्र**) राजवर (**ब्रह्मणा**) धनेन (**शिरः**) उत्तमाङ्गम् (**प्र**) (**बाहू**) भुजौ (**शूर**) (**राधसे**) धनाय॥१२॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यस्ते कुक्ष्योर्ब्रह्मणा सह रसः प्राश्नोतु। हे शूर! तव शिरो बाहू राधसे प्राश्नोतु तं त्वं पालय॥१२॥

भावार्थः-हे राजँस्तदेव त्वयाऽऽशितव्यं पातव्यं च यदुदरं प्राप्य विकृतं सद्रोगानुत्पाद्य बुद्धिं न हिंस्याद् येन सततं त्वयि प्रज्ञा वर्द्धित्वा राज्यमैश्वर्यं च वर्धेतेति॥१२॥

अत्र राजप्रजाधर्मवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकाऽधिकपञ्चाशत्तमं सूक्तं षोडशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) राजाओं में श्रेष्ठ जो (**ते**) आपके (**कुक्ष्योः**) पेट के आस-पास के भागों में

(ब्रह्मणा) धन के साथ रस को **(प्र)** **(अश्नोतु)** प्राप्त होवे और हे **(शूर)** वीर पुरुष! **(ते)** आपके **(शिरः)** श्रेष्ठ अङ्ग मस्तक को **(बाहू)** भुजाओं को **(राधसे)** धन के लिये प्राप्त होवे, उसका आप पालन करिये॥१२॥

भावार्थः-हे राजन्! वही वस्तु आपको खाना तथा पीना चाहिये कि जो पेट में प्राप्त हो तथा विकृत हो रोगों को उत्पन्न करके बुद्धि का न नाश करे और जिससे आप में बुद्धि बढ़ कर राज्य और ऐश्वर्य बढ़े॥१२॥

इस सूक्त में राजा और प्रजा के धर्म **[का]** वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह इक्यावनवां सूक्त और सोलहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथाऽष्टर्चस्य द्विपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। इन्द्रो देवता। १, ३, ४ गायत्री। २ निचृद्गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः। ६ जगती छन्दः। निषादः स्वरः। ५, ७ निचृत् त्रिष्टुप्। ८ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ राजविषयमाह॥

अब आठ ऋचावाले बावनवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में राजा के विषय को कहते हैं॥

धानावन्तं करम्भिणमपूपवन्तमुक्थिनम्। इन्द्र प्रातर्जुषस्व नः॥ १॥

धानाऽवन्तम्। करम्भिणम्। अपूपऽवन्तम्। उक्थिनम्। इन्द्र। प्रातः। जुषस्व। नः॥ १॥

पदार्थः-(**धानावन्तम्**) बह्व्यो धाना विद्यन्ते यस्य तम् (**करम्भिणम्**) बहवः करम्भा पुरुषार्थेन संशोधिता दध्यादयः पदार्था विद्यन्ते यस्य तम् (**अपूपवन्तम्**) प्रशस्ता अपूपा विद्यन्ते यस्य तम् (**उक्थिनम्**) बहून्युक्थानि वक्तुं योग्यानि वेदस्तोत्राणि विद्यन्ते यस्य तम् (**इन्द्र**) ऐश्वर्यधारक (**प्रातः**) प्रातःकाले (**जुषस्व**) सेवस्व (**नः**) अस्मान्॥ १॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं यथा प्रातर्धानावन्तं करम्भिणमपूपवन्तमुक्थिनं प्रातर्जुषस्व तथा नोऽस्मान् जुषस्व॥ १॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽर्थ्यैश्वर्यवन्तं याचते तथैव राजा राजधर्मबोधायाऽऽप्तान् विदुषो याचेत॥ १॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) ऐश्वर्य के धारण करनेवाले! आप जैसे (**प्रातः**) प्रातःकाल में (**धानावन्तम्**) बहुत भूंजे हुए यव विद्यमान जिसके उस (**करम्भिणम्**) बहुत पुरुषार्थ अर्थात् परिश्रम से शुद्ध किये गये दधि आदि पदार्थों से युक्त (**अपूपवन्तम्**) उत्तम पूवा विद्यमान जिसके उस (**उक्थिनम्**) बहुत कहने योग्य वेद के स्तोत्र विद्यमान जिसके उसका (**प्रातः**) प्रातःकाल सेवन करते हो, वैसे (**नः**) हम लोगों का (**जुषस्व**) सेवन करो॥ १॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे अर्थी जन ऐश्वर्यवाले से याचना करता है, वैसे ही राजा जन राजधर्म जानने के लिये श्रेष्ठ यथार्थवक्ता विद्वानों से याचना करे॥ १॥

पुनः राजधर्मविषयमाह॥

फिर राजधर्म विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

पुरोळाशं पचत्यं जुषस्वेन्द्रा गुरस्व च। तुभ्यं हव्यानि सिस्रते॥ १॥

पुरोळाशम्। पचत्यम्। जुषस्व। इन्द्र। आ। गुरस्व। च। तुभ्यम्। हव्यानि। सिस्रते॥ २॥

पदार्थः-(**पुरोळाशम्**) सुसंस्कारैर्निष्पादितमन्नविशेषम् (**पचत्यम्**) पचने साधुम् (**जुषस्व**) सेवस्व (**इन्द्र**) भोक्तः (**आ**) (**गुरस्व**) उद्यमं कुरुष्व। अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम्। (**च**) (**तुभ्यम्**) (**हव्यानि**) (**सिस्रते**) प्राप्नुवन्तु॥२॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं पचत्यं पुरोळाशं जुषस्व तदा गुरस्व च यतस्तुभ्यं हव्यानि सिस्रते॥२॥

भावार्थः-हे राजँस्त्वं रोगनाशकं बुद्धिवर्द्धकमन्नपानं भुक्त्वाऽरोगो भूत्वा सततमुद्यमं कुरु येन भवन्तं सर्वाणि सुखानि प्राप्नुयुः॥२॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) ऐश्वर्य्यों के भोगनेवाले! आप (**पचत्यम्**) उत्तम प्रकार पाकयुक्त (**पुरोळाशम्**) उत्तम संस्कारों से उत्पन्न किये गये अन्न विशेष का (**जुषस्व**) सेवन करिये तब (**गुरस्व**) उद्यम करो और जिससे (**तुभ्यम्**) आपके लिये (**हव्यानि**) हवन करने योग्य पदार्थों को (**सिस्रते**) प्राप्त हों॥२॥

भावार्थः-हे राजन्! आप रोगनाशक और बुद्धि के बढ़ानेवाले अन्नपान का भोग कर तथा रोगरहित होकर निरन्तर उद्यम को करो, जिससे आपको सम्पूर्ण सुख प्राप्त होवें॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

पुरोळाशं च नो घसो जोषयासे गिरश्च नः। वधूयुरिव योषणाम्॥३॥

पुरोळाशम्। च। नः। घसः। जोषयासे। गिरः। च। नः। वधूयुःऽइव। योषणाम्॥३॥

पदार्थः-(**पुरोळाशम्**) पुरस्ताद्दातुं योग्यम् (**च**) (**नः**) अस्माकम् (**घसः**) भक्षय (**जोषयासे**) सेवयस्व (**गिरः**) वाचः (**च**) (**नः**) अस्माकम् (**वधूयुरिव**) यथाऽऽत्मनो वधूमिच्छुः (**योषणाम्**) स्वस्त्रियम्॥३॥

अन्वयः-हे इन्द्र! राजँस्त्वं नः पुरोळाशं घसोऽस्मान् भोजय च। योषणां वधूयुरिव नो जोषयासे वयं तव च गिरो जोषयेम॥३॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। राजप्रजाजनाः परस्परैश्वर्य्यं स्वकीयमेव मन्येरन्। यथा स्त्रीकामः प्रियां भार्य्यां प्राप्याऽऽनन्दति तथैव राजा धार्मिकीः प्रजा लब्ध्वा सततं हर्षेत्॥३॥

पदार्थः-हे राजन्! आप (**नः**) हम लोगों के (**पुरोडाशम्**) प्रथम देने के योग्य को (**घसः**) भक्षण करो और हम लोगों के लिये भक्षण कराओ (**च**) और (**योषणाम्**) अपनी स्त्री को (**वधूयुरिव**) अपनी स्त्रीविषयिणी इच्छा करनेवाले के सदृश (**नः**) हम लोगों की (**जोषयासे**) सेवा करो (**च**) और हम लोग आपकी (**गिरः**) वाणियों का (**जोषयेम**) सेवन करें॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। राजा और प्रजाजन आपस के ऐश्वर्य्य को अपना ही

समझें और जैसे स्त्री की कामना करनेवाला पुरुष प्रिया स्त्री को प्राप्त होकर आनन्दित होता है, वैसे ही राजा धर्म करनेवाली प्रजाओं को प्राप्त कर निरन्तर प्रसन्न होवे॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

पुरोळाशं सनश्रुत प्रातःसावे जुषस्व नः। इन्द्र क्रतुर्हि ते बृहन्॥४॥

पुरोळाशम्। सनऽश्रुत। प्रातःऽसावे। जुषस्व। नः। इन्द्र। क्रतुः। हि। ते। बृहन्॥४॥

पदार्थः-(**पुरोळाशम्**) सुसंस्कृतमन्नविशेषम् (**सनश्रुत**) सत्याऽसत्यविवेकिनां सकाशाच्छुतं येन यद्वा सनं सत्यासत्यविभाजकं वचनं श्रुतं येन तत्सम्बुद्धौ (**प्रातःसावे**) यः प्रातः सूयते निष्पद्यते तस्मिन् (**जुषस्व**) सेवस्व (**नः**) अस्माकम् (**इन्द्र**) विद्यैश्वर्ययुक्त (**क्रतुः**) प्रज्ञा कर्म वा (**हि**) यतः (**ते**) तव (**बृहन्**) महान्॥४॥

अन्वयः-हे सनश्रुतेन्द्र! हि यतस्ते क्रतुर्बृहन्नस्ति तस्मात्त्वं प्रातःसावे नः पुरोळाशं जुषस्व॥४॥

भावार्थः-मनुष्यैर्येषु यादृशी विद्या शीलता भवेत् तादृश्येव तेषु सत्कृपा कार्या॥४॥

पदार्थः-हे (**सनश्रुत**) सत्य और असत्य के विचारकर्त्ताओं से उत्तम कृत्य सुना जिसने ऐसे (**इन्द्र**) विद्या और ऐश्वर्य से युक्त (**हि**) जिससे (**ते**) आपकी (**क्रतुः**) बुद्धि वा कर्म्म (**बृहन्**) बड़ा है तिससे आप (**प्रातःसावे**) जो प्रातःकाल में किया जाय उसमें (**नः**) हम लोगों के (**पुरोळाशम्**) उत्तम प्रकार संस्कारयुक्त अन्न विशेष का (**जुषस्व**) सेवन करो॥४॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि जिन पुरुषों में जैसी विद्या और शीलता होवे, वैसी ही उन पर उत्तम कृपा करें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

माध्यंदिनस्य सवनस्य धानाः पुरोळाशमिन्द्र कृष्वेह चारुम्।

प्र यत् स्तोता जरिता तूर्ण्यर्थो वृषायमाण उप गीर्भिरीट्टे॥५॥१७॥

माध्यंदिनस्य। सवनस्य। धानाः। पुरोळाशम्। इन्द्र। कृष्व। इह। चारुम्। प्र। यत्। स्तोता। जरिता। तूर्णिऽअर्थः। वृषऽयमाणः। उप। गीःऽभिः। ईट्टे॥५॥

पदार्थः-(**माध्यन्दिनस्य**) मध्यन्दिने भवस्य (**सवनस्य**) कर्मविशेषस्य (**धानाः**) भृष्टान्नानि (**पुरोळाशम्**) (**इन्द्र**) (**कृष्व**) कुरुष्व (**इह**) (**चारुम्**) भक्षणीयं सुन्दरम् (**प्र**) (**यत्**) यः (**स्तोता**) प्रशंसकः (**जरिता**) भवतः सेवकः (**तूर्ण्यर्थः**) तूर्णिः सद्योऽर्थो यस्य सः (**वृषायमाणः**) वृषं बलं कुर्वाणः (**उप**) (**गीर्भिः**) (**ईट्टे**) ऐश्वर्यवान् भवेत्॥५॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वं माध्यन्दिनस्य सवनस्य मध्ये या धानाश्चारुं पुरोळाशं त्वमिह कृष्व। यद्यो वृषायमाणस्तूर्ण्यर्थो जरिता स्तोता गीर्भिः प्रोपेट्टे स तव सत्कर्त्तव्यो भवेत्॥५॥

भावार्थः-ये राजजना ऋत्विग्वद्राज्यं वर्धयेयुस्तान् राजा सत्कारेण हर्षयेत्॥५॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** प्रतापयुक्त! आप **(माध्यन्दिनस्य)** मध्य दिन में होनेवाले **(सवनस्य)** कर्म विशेष के मध्य में जो **(धानाः)** भूंजे हुए अन्न और **(चारुम्)** भक्षण करने योग्य सुन्दर **(पुरोळाशम्)** अन्न विशेष का आप **(इह)** इस उत्तम कर्म में **(कृष्व)** संग्रह कीजिये और **(यत्)** जो **(वृषायमाणः)** जल को करनेवाला **(तूर्ण्यर्थः)** शीघ्र है प्रयोजन जिसका वह **(जरिता)** आपका सेवाकारी और **(स्तोता)** प्रशंसा करनेवाला **(प्र, उप)** समीप में **(गीर्भिः)** वाणियों से **(ईट्टे)** ऐश्वर्य्यवान् हो, वह आपके सत्कार करने योग्य होवे॥५॥

भावार्थः-जो राजा के जन ऋत्विजों के सदृश राज्य की वृद्धि करें, उनको राजा सत्कार से प्रसन्न करे॥५॥

अथाऽध्यापकविषयमाह॥

अब अध्यापक के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तृतीये धानाः सवने पुरुष्टुत पुरोळाशमाहुतं मामहस्व नः।

ऋभुमन्तं वाजवन्तं त्वा कवे प्रयस्वन्त उप शिक्षेम धीतिभिः॥६॥

तृतीये। धानाः। सवने। पुरुऽस्तुत। पुरोळाशम्। आऽहुतम्। ममहस्व। नः। ऋभुऽमन्तम्। वाजऽवन्तम्। त्वा। कवे। प्रयस्वन्तः। उप। शिक्षेम। धीतिऽभिः॥६॥

पदार्थः-**(तृतीये)** त्रयाणां पूरके **(धानाः)** अग्निना भृष्टाऽन्नविशेषाः **(सवने)** सायंकाले कर्त्तव्ये कर्मणि **(पुरुष्टुत)** बहुभिः प्रशंसित **(पुरोळाशम्)** सुसंस्कृतान्नविशेषम् **(आहुतम्)** कृताऽऽह्वानम् **(मामहस्व)** भृशं सत्कुरु **(नः)** अस्मान् **(ऋभुमन्तम्)** प्रशस्ता ऋभवो मेधाविनो विद्यन्ते यस्य तम् **(वाजवन्तम्)** वाजाः शुष्कान्नविशेषा विद्यन्ते यस्य तम् **(त्वा)** त्वाम् **(कवे)** विद्वन्! **(प्रयस्वन्तः)** प्रयतमानाः **(उप)** **(शिक्षेम)** **(धीतिभिः)** अङ्गुलीभिर्निर्दिष्टैर्वचनार्थैः॥६॥

अन्वयः-हे पुरुष्टुत कवे! प्रयस्वन्तो वयं धीतिभिस्तृतीये सवने पुरोळाशं धाना ऋभुमन्तं वाजवन्तमाहुतं त्वोपशिक्षेम स त्वं नो मामहस्व॥६॥

भावार्थः-यथा विद्वांस ऋत्विजो यजमानादिभ्यो यज्ञकृत्यं शिक्षन्ति तथैव सर्वा विद्या हस्तादिक्रियया प्रत्यक्षीकृत्याऽन्यान् प्रत्यध्यापकाः साक्षात्कारयन्तु॥६॥

पदार्थः-हे **(पुरुष्टुत)** बहुतों से प्रशंसित **(कवे)** विद्वान् पुरुष! **(प्रयस्वन्तः)** प्रयत्न करते हुए हम

लोग **(धीतिभिः)** अंगुलियों से दिखाये गये वचनार्थों से **(तृतीये)** तीन की पूर्त्ति करनेवाले **(सवने)** सायंकाल में करने योग्य कर्म में **(पुरोळाशम्)** उत्तम संस्कारयुक्त अन्नविशेष और **(धानाः)** अग्नि से भूंजे गये अन्न विशेषों के तुल्य **(ऋभुमन्तम्)** श्रेष्ठ बुद्धिमानों से युक्त **(वाजवन्तम्)** शुष्क अन्नविशेष विद्यमान जिसके उस **(आहुतम्)** पुकारे गये **(त्वा)** आपको **(उप, शिक्षेम)** शिक्षा देवें वह आप **(नः)** हम लोगों का **(मामहस्व)** अत्यन्त सत्कार करिये॥६॥

भावार्थः-जैसे विद्वान् यज्ञ करनेवाले यजमानों के लिये यज्ञकृत्य की शिक्षा देते हैं, वैसे ही सम्पूर्ण विद्याओं का हस्त आदि क्रियाओं से प्रत्यक्ष अर्थात् अभ्यास करके अन्य जनों के लिये अध्यापक लोग प्रत्यक्ष करावें॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

पूषण्वते ते चकृमा करम्भं हरिवते हर्यश्वाय धानाः।
अपूपमद्धि सगणो मरुद्भिः सोमं पिब वृत्रहा शूर विद्वान्॥७॥

पूषण्ऽवते। ते। चकृम। करम्भम्। हरिऽवते। हरिऽअश्वाय। धानाः। अपूपम्। अद्धि। सऽगणः। मरुत्ऽभिः। सोमम्। पिब। वृत्रऽहा। शूर। विद्वान्॥७॥

पदार्थः-**(पूषण्वते)** बहवः पूषणः पुष्टिकरा विद्यन्ते यस्य तस्मै **(ते)** तुभ्यम् **(चकृम)** कुर्य्याम। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(करम्भम्)** दध्यादियुक्तं भक्ष्यविशेषम् **(हरिवते)** प्रशस्ताऽश्वादियुक्ताय **(हर्य्यश्वाय)** हरणशीला आशुगमिनोऽश्वास्तुरङ्गा अग्न्यादयो वा विद्यन्ते यस्य तस्मै **(धानाः)** **(अपूपम्)** **(अद्धि)** भक्ष **(सगणः)** गणेन सह वर्त्तमानः **(मरुद्भिः)** उत्तमैर्मनुष्यैः सह **(सोमम्)** उत्तमौषधिरसम् **(पिब)** **(वृत्रहा)** प्राप्तधनः **(शूरः)** दुष्टानां हिंसक **(विद्वान्)**॥७॥

अन्वयः-हे शूर! यथा वृत्रहा विद्वान् पूषण्वते हरिवते हर्य्यश्वाय ते करम्भं धाना अपूपं दद्यात् तं सगणस्त्वं मरुद्भिः सहाऽद्धि सोमं पिब। तथैव वयं त्वदर्थं चकृम॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये विद्याविनयसंपन्नास्तेऽर्हाय राज्ञ उत्तमान् पदार्थान् दत्वैनं सततं सत्कुर्य्युस्ते राज्ञाऽपि सर्वदा सत्कर्त्तव्याः॥७॥

पदार्थः-हे **(शूर)** दुष्ट पुरुष के नाशकर्त्ता! जैसे **(वृत्रहा)** धन से युक्त विद्वान् पुरुष **(पूषण्वते)** पुष्टि करनेवाले विद्यमान हैं जिसके उस **(हरिवते)** उत्तम घोड़े आदि से युक्त के तथा **(हर्य्यश्वाय)** हरणशील और शीघ्र चालवाले घोड़े वा अग्नि आदि विद्यमान हैं जिसके उस **(ते)** आपके लिये **(करम्भम्)** दधि आदि से युक्त भोजन करने के पदार्थविशेष और **(धानाः)** भूंजे हुए अन्न तथा **(अपूपम्)** पुआ को देवें उसको **(सगणः)** समूह के सहित वर्त्तमान आप **(मरुद्भिः)** उत्तम मनुष्यों के पास **(अद्धि)** भक्षण कीजिये और **(सोमम्)** उत्तम ओषधि के रस को **(पिब)** पान कीजिये और वैसे ही हम लोग

आपके लिये **(चकृम)** करें॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो विद्या और नम्रता से युक्त हैं, वे श्रेष्ठ राजा के लिये उत्तम पदार्थों को देकर इसका निरन्तर सत्कार करें और वे राजा से भी सर्वदा सत्कार के योग्य हैं॥७॥

अथ यज्ञान्नसञ्चयनविषयमाह॥

अब यज्ञ के अन्न के इकट्ठे करने के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्रति॑ धा॒ना भ॑रत॒ तूय॑मस्मै पुरो॒ळाशं॑ वी॒रत॑माय नृ॒णाम्।
दि॒वेदि॑वे स॒दृशी॑रिन्द्र॒ तुभ्यं॒ वर्ध॑न्तु त्वा सोम॒पेया॑य धृष्णो॥८॥ १८॥

प्रति॑। धा॒नाः। भ॒र॒त॒। तूय॑म्। अ॒स्मै॒। पु॒रो॒ळाश॑म्। वी॒रऽत॑माय। नृ॒णाम्। दि॒वेऽदि॑वे। स॒ऽदृशीः॑। इ॒न्द्र॒। तुभ्य॑म्। वर्ध॑न्तु। त्वा॒। सो॒म॒ऽपेया॑य। धृ॒ष्णो॒ इति॑॥८॥

पदार्थः-**(प्रति)** **(धानाः)** **(भरत)** **(तूयम्)** तूर्णं सुखकरम् **(अस्मै)** **(पुरोळाशम्)** **(वीरतमाय)** अत्युत्तमाय वीराय **(नृणाम्)** नायकानां मध्ये **(दिवेदिवे)** प्रतिदिनम् **(सदृशीः)** समानस्वरूपाः सेनाः **(इन्द्र)** दुष्टदलविदारक **(तुभ्यम्)** **(वर्द्धन्तु)** वर्धन्ताम्। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम्। **(त्वा)** त्वाम् **(सोमपेयाय)** पेयः सोमो येन तस्मै **(धृष्णो)** प्रगल्भ॥८॥

अन्वयः-हे धृष्णो इन्द्र! याः सदृशीः सेना दिवेदिवे नृणां वीरतमाय सोमपेयाय तुभ्यं वर्द्धन्तु। ये विद्वांसस्त्वा वर्द्धयन्तु ताँस्त्वं वर्धयस्व। हे विद्वांसो! यूयमस्मै धानाः पुरोळाशं च तूयं प्रति भरत॥८॥

भावार्थः-सर्वे राजजनाः प्रजाजना राज्योन्नतये सर्वान् सम्भारान् सञ्चिन्वतु तैः सुपरीक्षिता वीरसेनाः सम्पाद्य दुष्टानां पराजयं श्रेष्ठानां विजयं कृत्वा प्रतिदिनमानन्दयितव्यमिति॥८॥

अत्र राजप्रजायज्ञाऽन्नसंस्कारादिवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इति द्विपञ्चाशत्तमं सूक्तं अष्टादशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे **(धृष्णो)** वाणी में चतुर **(इन्द्र)** दुष्टों के समूह के नाश करनेवाले! जो **(सदृशीः)** तुल्य स्वरूपवाली सेना **(दिवेदिवे)** प्रतिदिन **(नृणाम्)** अग्रणी पुरुषों के मध्य में **(वीरतमाय)** अत्यन्त श्रेष्ठ वीर पुरुष **(सोमपेयाय)** पान किया सोम के रस का जिसने उन आप के लिये **(वर्द्धन्तु)** वृद्धि को प्राप्त हों और जो विद्वान् लोग **(त्वा)** आपके लिये वृद्धि करें, उनकी आप वृद्धि करो और हे विद्वानो! आप लोग

(अस्मै) इसके लिये **(धानाः)** भूंजे हुए अन्न और **(पुरोळाशम्)** उत्तम प्रकार संस्कारयुक्त अन्न विशेष और जो कि **(तूयम्)** शीघ्र सुखकारक उसको **(प्रति भरत)** पूर्ण कीजिये॥८॥

भावार्थः-सम्पूर्ण राजजन और प्रजा के जन राज्य की वृद्धि के लिये सम्पूर्ण पदार्थों को इकट्ठे करें, उनसे उत्तम प्रकार परीक्षित वीर सेनाओं को करके और दुष्ट पुरुषों का पराजय और श्रेष्ठ पुरुषों का विजय करके प्रतिदिन आनन्द करना चाहिये॥८॥

इस सूक्त में राजा, प्रजा और यज्ञान्नसंस्कारादि के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, यह जानना चाहिये॥

यह बावनवां सूक्त और अठारहवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ चतुर्विंशत्यृचस्य त्रिपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। १ इन्द्रापर्वतौ। २-१४, २१-२४ इन्द्रः। १५, १६ वाक्। १७-२० रथाङ्गानि देवताः। १, ५, ९, २१ निचृत् त्रिष्टुप्। २, ६, ७, १४, १७, १९, २३, २४ त्रिष्टुप्। ३, ४, ८, १५ स्वराट् त्रिष्टुप्। ११ भुरिक् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। १२, २२ अनुष्टुप्। २० भुरिगनुष्टुप् छन्दः। गान्धारः स्वरः। १०, १६ निचृज्जगती छन्दः। निषादः स्वरः। १३ निचृद्गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः। १८ निचृद्बृहती छन्दः। मध्यमः स्वरः॥

अथ राजसेनाविषयमाह॥

अब चौबीस ऋचावाले तिरेपनवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में राजा की सेना के विषय को कहते हैं॥

इन्द्रा॑पर्वता बृ॒ह॒ता रथे॑न वा॒मीरिष॒ आ व॑हतं सु॒वीरा॑ः।
वी॒तं ह॒व्यान्य॑ध्व॒रेषु॑ देवा॒ वर्धे॑थां गी॒र्भिरिळ॑या॒ मद॑न्ता॥१॥

इन्द्रा॑पर्वता बृ॒ह॒ता। रथे॑न। वा॒मीः। इष॑ः। आ। व॒ह॒त॒म्। सु॒ऽवीरा॑ः। वी॒तम्। ह॒व्यानि॑। अ॒ध्व॒रेषु॑। दे॒वा॒। वर्धे॑थाम्। गी॒ःऽभिः। इळ॑या। मद॑न्ता॥१॥

पदार्थः-(**इन्द्रापर्वता**) विद्युन्मेघामिव राज्यसेनाधीशौ (**बृहता**) महता (**रथेन**) (**वामीः**) प्रशस्ताः (**इषः**) अन्नाद्याः (**आ**) (**वहतम्**) प्राप्नुतम् (**सुवीराः**) शोभना वीरा याभ्यस्ताः (**वीतम्**) व्याप्नुतम् (**हव्यानि**) दातुमादातुमर्हाणि (**अध्वरेषु**) अहिंसनीयेषु यज्ञेषु (**देवा**) दिव्यसुखप्रदौ (**वर्धेथाम्**) (**गीर्भिः**) सुशिक्षिताभिर्वाग्भिः (**इळया**) सर्वशास्त्रप्रकाशिकया वाचा। **इळेति वाङ्नामसु पठितम्।** (निघं०१.११) (**मदन्ता**) का[म]यमानौ विद्वांसौ॥१॥

अन्वयः-हे सभासेनेशौ! युवामिन्द्रापर्वतेव बृहता रथेन सुवीरा वामीरिष आ वहतमध्वरेषु हव्यानि वीतमिळया मदन्ता देवा सन्तौ गीर्भिर्वर्धेथाम्॥१॥

भावार्थः-हे राजसेनाजना! यथा मेघः सर्वान् जलाशयानोषधीश्च पाति तथैव सेनापालका पुष्कलाभिः सामग्रीभिः सर्वाः सेना अलंभोगाः कुर्य्युः सेनाश्च विद्युद्वच्छत्रून् दहन्तु सर्वेषु सर्वे युद्धराजविद्यावृद्धा भूत्वा सर्वान् कामान् प्राप्नुवन्तु॥१॥

पदार्थः-हे सभा और सेना के ईश! आप दोनों (**इन्द्रापर्वता**) बिजुली और मेघ के सदृश राज्य सेना के अधीश (**बृहता**) बड़े (**रथेन**) वाहन से (**सुवीराः**) सुन्दर वीर जिनसे उन (**वामीः**) श्रेष्ठ (**इषः**) अन्न आदि को (**आ, वहतम्**) प्राप्त होइये और (**अध्वरेषु**) नहीं हिंसा करने योग्य यज्ञों में (**हव्यानि**) देने और ग्रहण करने योग्यों को (**वीतम्**) प्राप्त होइये और (**इळया**) सम्पूर्ण शास्त्रों को प्रकाश करनेवाली वाणी से (**मदन्ता**) कामना करते हुए विद्वान् लोग (**देवा**) उत्तम सुख देनेवाले होकर (**गीर्भिः**) उत्तम प्रकार शिक्षायुक्त वाणियों से (**वर्धेथाम्**) बढ़ें॥१॥

भावार्थः-हे राजसेनाओं के जन! जैसे मेघ सम्पूर्ण जलाशय और ओषधियों की रक्षा करता है, वैसे ही सेना के पालन करनेवाले पुरुष बहुतसी सामग्रियों से सम्पूर्ण सेनाओं को भोग से परिपूर्ण करिये और सेना बिजुलियों के सदृश शत्रुओं का नाश करें और सबमें सब युद्ध और राजविद्या में परिपूर्ण होकर सम्पूर्ण मनोरथों को प्राप्त हों॥१॥

अथ राजविषयमाह॥

अब राजा के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तिष्ठा सु कं मघवन्मा परा गाः सोमस्य नु त्वा सुषुतस्य यक्षि।

पितुर्न पुत्रः सिचमा रभे त इन्द्र स्वादिष्ठया गिरा शचीवः॥२॥

तिष्ठ। सु। कम्। मघऽवन्। मा। परा। गाः। सोमस्य। नु। त्वा। सुऽसुतस्य। यक्षि। पितुः। न। पुत्रः। सिचम्। आ। रभे। ते। इन्द्र। स्वादिष्ठया। गिरा। शचीऽवः॥२॥

पदार्थः-(**तिष्ठ**)। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**सु**) (**कम्**) सुखम् (**मघवन्**) पुष्कलधनवन् (**मा**) निषेधे (**परा**) (**गाः**) दूरं गच्छेः (**सोमस्य**) महौषधिगणस्यैश्वर्यस्य (**नु**) सद्यः (**त्वा**) त्वाम् (**सुषुतस्य**) यथावत्सिद्धस्य (**यक्षि**) सङ्गच्छस्व (**पितुः**) जनकस्य (**न**) इव (**पुत्रः**) (**सिचम्**) (**आ**) (**रभे**) (**ते**) तव (**इन्द्र**) ऐश्वर्यकारक (**स्वादिष्ठया**) अतिशयेन मधुरादिरसयुक्तया (**गिरा**) वाण्या (**शचीवः**) प्रशस्ताः शचीः प्रजा विद्यन्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ॥२॥

अन्वयः-हे मघवन्निन्द्र! त्वं सुषुतस्य सोमस्य सकाशात् कं सुतिष्ठ। हे शचीवो! यथा ते स्वादिष्ठया गिरा सिचमा रभे त्वा नु पुत्रः पितुर्नाऽऽरभे स त्वमस्मान् यक्ष्यस्मन्मा परा गाः॥२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे राजन्! यथा पुत्रः पितरं सेवते तथैव वृद्धान् विदुषः सेवस्व। कदाचिद्धर्मात्पृथग् न भवेरन्यान् सुखिनः कृत्वा सुखी भव॥२॥

पदार्थः-हे (**मघवन्**) बहुत धनयुक्त (**इन्द्र**) ऐश्वर्य के करनेवाले! आप (**सुषुतस्य**) उत्तम प्रकार सिद्ध (**सोमस्य**) बड़ी ओषधियों के समूहरूप ऐश्वर्य्य के समीप के (**कम्**) सुख को (**सु, तिष्ठ**) करिये। और हे (**शचीवः**) उत्तम प्रजाओं से युक्त! जैसे (**ते**) आपकी (**स्वादिष्ठया**) अत्यन्त मधुर आदि रस से युक्त (**गिरा**) वाणी से (**सिचम्**) सिंचन का (**आ, रभे**) प्रारम्भ करें (**त्वा**) आपको (**नु**) शीघ्र (**पुत्रः**) पुत्र (**पितुः**) पिता से (**न**) नहीं (**आ, रभे**) प्रारम्भ करते हैं, वह आप हम लोगों को (**यक्षि**) प्राप्त होइये और हम लोगों से (**मा**) नहीं (**परा, गाः**) दूर जाइये॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे राजन्! जैसे पुत्र पिता की सेवा करता है, वैसे ही विद्वानों की सेवा करो और कभी धर्म से पृथक् न होओ, अन्य जनों को सुखी करके सुखी होओ॥२॥

अथ प्रजाविषयमाह॥

अब प्रजा के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

शंसावाध्वर्यो प्रति मे गृणीहीन्द्राय वाहः कृणवाव जुष्टम्।
एदं बर्हिर्यजमानस्य सीदाऽथा च भूदुक्थमिन्द्राय शस्तम्॥ ३॥

शंसाव। अध्वर्यो इति। प्रति। मे। गृणीहि। इन्द्राय। वाहः। कृणवाव। जुष्टम्। आ। इदम्। बर्हिः। यजमानस्य। सीद। अथ। च। भूत्। उक्थम्। इन्द्राय। शस्तम्॥ ३॥

पदार्थः-(**शंसाव**) प्रशंसेव (**अध्वर्यो**) अहिंसक (**प्रति**) (**मे**) मह्यम् (**गृणीहि**) स्तुहि (**इन्द्राय**) परमैश्वर्य्ययुक्ताय (**वाहः**) प्राप्तान् (**कृणवाव**) (**जुष्टम्**) सेवितम् (**आ**) (**इदम्**) (**बर्हिः**) उत्तमं स्थानम् (**यजमानस्य**) सङ्गन्तुः (**सीद**) (**अथ**) आनन्तर्ये (**च**) (**भूत्**) भवेत् (**उक्थम्**) वक्तुमर्हम् (**इन्द्राय**) ऐश्वर्य्याय (**शस्तम्**) प्रशंसितम्॥ ३॥

अन्वयः-हे अध्वर्यो! त्वमिन्द्राय यदुक्थं शस्तं जुष्टमिदं बर्हिर्यजमानस्य भूत्तदासीद। अथ चाऽन्यानासीदावाप्नोमि इन्द्राय या वाहः शंसाव सिद्धीः कृणवाव तांस्त्वं मे प्रति गृणीहि॥ ३॥

भावार्थः-सर्वैः राजप्रजाजनैर्यैः कर्मभिरैश्वर्य्यवृद्धिः स्यात्तानि सेवनीयानि राजाज्ञायां वर्त्तित्वा प्रशंसा च प्रापणीया॥ ३॥

पदार्थः-हे (**अध्वर्यो**) नहीं हिंसा करनेवाले! आप (**इन्द्राय**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त पुरुष के लिये जो (**उक्थम्**) कहने योग्य (**शस्तम्**) प्रशंसा किये गये और (**जुष्टम्**) सेवित (**इदम्**) इस (**बर्हिः**) उत्तम स्थान को (**यजमानस्य**) प्राप्त हुए आपको (**भूत्**) प्रशंसित होवे, उसके ऊपर (**आ, सीद**) विराजो। (**अथ**) अनन्तर (**च**) और अन्यों को प्राप्त होइये और मैं भी प्राप्त होऊं, ऐश्वर्य्य से युक्त पुरुष के लिये जो (**वाहः**) प्राप्त हुओं की (**शंसाव**) प्रशंसा करें और सिद्धि (**कृणवाव**) करें उनकी आप (**मे**) मेरे लिये (**प्रति, गृणीहि**) स्तुति करिये॥ ३॥

भावार्थः-सब राजा और प्रजा के जनों को चाहिये कि जिन कर्मों से ऐश्वर्य की वृद्धि हो, उन कर्मों का सेवन करें। और राजा की आज्ञा में वर्त्तमान होकर प्रशंसा को प्राप्त होवें॥ ३॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

जायेदस्तं मघवन्त्सेदु योनिस्तदित्त्वा युक्ता हरयो वहन्तु।
यदा कदा च सुनवाम सोममग्निष्ट्वा दूतो धन्वात्यच्छ॥ ४॥

जाया। इत्। अस्तम्। मघऽवन्। सा। इत्। ऊम् इति। योनिः। तत्। इत्। त्वा। युक्ताः। हरयः। वहन्तु। यदा। कदा। च। सुनवाम। सोमम्। अग्निः। त्वा। दूतः। धन्वाति। अच्छ॥ ४॥

पदार्थः-(**जाया**) पत्नी (**इत्**) एव (**अस्तम्**) गृहम् (**मघवन्**) ऐश्वर्ययुक्त (**सा**) (**इत्**) (**उ**) (**योनिः**) सन्ताननिमित्ता (**तत्**) ताम् (**इत्**) एव (**त्वा**) त्वाम् (**युक्ताः**) योजिताः (**हरयः**) अश्वाः (**वहन्तु**) (**यदा**) (**कदा**) (**च**) (**सुनवाम**) निष्पादयेम (**सोमम्**) (**अग्निः**) विद्युदिव (**त्वा**) (**दूतः**) यो दुनोति परितापयति शत्रून् सः (**धन्वाति**) प्राप्नुयात् (**अच्छ**)॥४॥

अन्वयः-हे मघवन्! या ते जायाऽस्तं प्राप्नुयात् सेत् उ सन्तानस्य योनिर्भूयात् तत्तां त्वा चिदेव युक्ता हरयो सोमं वहन्तु। यदा कदा च वयं सोमं सुनवाम तं त्वं दूतोऽग्निश्च धन्वातीव त्वेदच्छाऽऽप्नोतु॥४॥

भावार्थः-यथोत्तमौ द्वावश्वौ वोढेन रथेन सुखेन रथस्य स्वामिनं स्थानान्तरं प्रापयतस्तथैव परस्परस्मिन् प्रीतौ योग्यौ विद्वांसौ गृहाश्रममलङ्कर्त्तुं शक्नुयाताम्॥४॥

पदार्थः-हे (**मघवन्**) ऐश्वर्य से युक्त! जो (**ते**) आपकी (**जाया**) स्त्री (**अस्तम्**) गृह को प्राप्त होवे (**सा**) वह (**इत्**) ही (**उ**) भी सन्तान का (**योनिः**) कारण होवे (**तत्**) उसको और (**त्वा**) आपको (**च, इत्**) ही (**युक्ताः**) संयुक्त (**हरयः**) घोड़े (**सोमम्**) सोमलता के रस को (**वहन्तु**) धारण करें। और (**यदा**) जब (**कदा**) कब हम लोग सोमलता के रस को (**सुनवाम**) सञ्चित करें, उसको आप (**दूतः**) शत्रुओं के सन्ताप देनेवाले (**अग्निः**) बिजुली के समान (**धन्वाति**) प्राप्त होवें (**त्वा**) आपको ही (**अच्छ**) उत्तम प्रकार प्राप्त हो॥४॥

भावार्थः-जैसे श्रेष्ठ दो घोड़े ले चलनेवाले वाहन से सुखपूर्वक रथ के स्वामी को एक स्थान से दूसरे स्थान को प्राप्त कराते हैं, वैसे ही परस्पर में प्रसन्न और योग्य दो विद्वान् गृहाश्रम को शोभित करने को समर्थ हों॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

परा याहि मघवन्ना च याहीन्द्र भ्रातरुभयत्रा ते अर्थम्।

यत्रा रथस्य बृहतो निधानं विमोचनं वाजिनो रासभस्य॥५॥१९॥

परा। याहि। मघऽवन्। आ। च। याहि। इन्द्र। भ्रातः। उभयत्र। ते। अर्थम्। यत्र। रथस्य। बृहतः। निऽधानम्। विऽमोचनम्। वाजिनः। रासभस्य॥५॥

पदार्थः-(**परा**) (**याहि**) दूरं गच्छ (**मघवन्**) (**आ**) (**च**) (**याहि**) आगच्छ (**इन्द्र**) मृदूग्रस्वभाव (**भ्रातः**) बन्धो (**उभयत्र**) गमनाऽऽगमनयोः। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। (**ते**) तव (**अर्थम्**) (**यत्र**)। अत्रापि **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। (**रथस्य**) रमणीययानस्य (**बृहतः**) महतः (**निधानम्**) स्थापनम् (**विमोचनम्**) पृथक्करणम् (**वाजिनः**) वेगवतः (**रासभस्य**) विद्युदादिसम्बन्धिन इव॥५॥

अन्वयः-हे मघवन्निन्द्र! त्वमितः परा याहि। हे भ्रातस्त्वं तस्मादायाहि यत्र बृहतो रथस्य रासभस्येव वाजिनो निधानं च विमोचनं स्यात्तत्रोभयत्र तेऽर्थं वयं प्राप्नुयाम॥५॥

भावार्थः-मनुष्यैः सर्वत्र भ्रमणं कार्य्यसिद्धये कर्त्तव्यं न सदा भ्रमणमेव, किन्तु गृहेऽपि स्थित्वा सर्वैर्बन्धुभिः सह सङ्गत्य पुनरप्यैश्वर्य्यप्राप्तये देशान्तरे गन्तव्यमागन्तव्यञ्च॥५॥

पदार्थः-हे **(मघवन्)** धनयुक्त और **(इन्द्र)** सज्जनों के प्रति कोमल और दुष्टों के प्रति उग्र स्वभाववाले! आप यहाँ से **(परा)** **(याहि)** दूर जाइये। हे **(भ्रातः)** बन्धु जन! आप उससे प्राप्त होइये **(यत्र)** जहाँ **(बृहतः)** बड़े **(रथस्य)** सुन्दर वाहन के **(रासभस्य)** बिजुली आदि के सम्बन्धी के सदृश **(वाजिनः)** वेगयुक्त के **(निधानम्)** स्थापन **(च)** और **(विमोचनम्)** पृथक् करना होवे **(यत्र)** जहाँ **(उभयत्र)** गमन और आगमन में **(ते)** आपके **(अर्थम्)** प्रयोजन को हम लोग प्राप्त होवें॥५॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि सर्वत्र भ्रमण, कार्य्यसिद्धि के लिये करें। और नहीं सदा भ्रमण ही करना, किन्तु गृह में स्थित हो सम्पूर्ण बन्धुओं के साथ मेल करके फिर भी ऐश्वर्य्य की प्राप्ति के लिये एक देश से दूसरे देश में जावें और आवें॥५॥

अथ राजविषयमाह॥

अब राजा के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अपाः सोममस्तमिन्द्र प्र याहि कल्याणीर्जाया सुरणं गृहे ते।

यत्रा रथस्य बृहतो निधानं विमोचनं वाजिनो दक्षिणावत्॥६॥

अपाः। सोमम्। अस्तम्। इन्द्र। प्र। याहि। कल्याणीः। जाया। सुऽरणम्। गृहे। ते। यत्र। रथस्य। बृहतः। निऽधानम्। विऽमोचनम्। वाजिनः। दक्षिणाऽवत्॥६॥

पदार्थः-**(अपाः)** पिब **(सोमम्)** सर्वरोगनाशकं महौषधिरसम् **(अस्तम्)** गृहम् **(इन्द्र)** ऐश्वर्ययुक्त स्वामिन् **(प्र)** **(याहि)** गच्छ **(कल्याणीः)**। अत्र **सुपां सुलुगिति** सुरादेशः। **(जाया)** जायन्ते यस्या अपत्यानि सा **(सुरणम्)** सुष्ठु रणः संग्रामो यस्मात्तत् **(गृहे)** **(ते)** तव **(यत्र)** यस्मिन् **(रथस्य)** विमानादेर्यानस्य **(बृहतः)** महतः **(निधानम्)** स्थापनम् **(विमोचनम्)** पृथक्करणम् **(वाजिनः)** अग्न्यादेः पदार्थस्य **(दक्षिणावत्)** दक्षिणाभिस्तुल्यम्॥६॥

अन्वयः-हे इन्द्र! यत्र बृहतो रथस्य वाजिनो निधानं विमोचनं दक्षिणावत् कार्यं तत्र स्थित्वा या ते गृहे कल्याणीर्जाया वर्त्तते तया सह तत्र रथे स्थित्वाऽस्तं प्र याहि सोममपाः पीत्वा च सुरणं गच्छ॥६॥

भावार्थः-राजादयो विमानादीनि यानानि निर्माय यत्र कलायन्त्राणि रचयित्वाग्न्यादीन् संस्थाप्य विमोच्य सपत्नीका गृहमागच्छेयुर्देशान्तरं च गच्छेयुः यदि पत्नी शूरवीरा स्यात्तर्हि तया सह संग्रामविजयाय गच्छेयुः॥६॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** ऐश्वर्य से युक्त स्वामिन्! **(यत्र)** जिसमें **(बृहतः)** बड़े **(रथस्य)** विमान आदि वाहन के **(वाजिनः)** अग्नि आदि पदार्थ के **(निधानम्)** स्थापन और **(विमोचनम्)** अलग करने को **(दक्षिणावत्)** दक्षिणाओं के तुल्य करें और वहाँ स्थित होकर जो आपके **(गृहे)** गृह में **(जाया)** स्त्री वर्त्तमान है, उसके साथ उस वाहन के ऊपर विराज कर **(अस्तम्)** गृह को **(प्र, याहि)** आइये **(सोमम्)** सम्पूर्ण रोगों के नाश करनेवाले महौषधि के रस का **(अपाः)** पान करिये और पीकर **(सुरणम्)** श्रेष्ठ संग्राम जिससे उसको प्राप्त होइये॥६॥

भावार्थः-राजा आदि विमान आदि वाहनों का निर्माण कर और उसमें कलायन्त्रों को रच के तथा अग्नि आदि पदार्थों को स्थित तथा अलग करके अपनी स्त्रियों के सहित गृह में आवें और देशान्तर को जावें, जो स्त्री शूरवीरा हो तो उसके साथ संग्राम के विजय के लिये जावें॥६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इमे भोजा अङ्गिरसो विरूपा दिवस्पुत्रासो असुरस्य वीराः।
विश्वामित्राय ददतो मघानि सहस्रसावे प्र तिरन्त आयुः॥७॥

इमे। भोजाः। अङ्गिरसः। विऽरूपाः। दिवः। पुत्रासः। असुरस्य। वीराः। विश्वामित्राय। ददतः। मघानि। सहस्रऽसावे। प्र। तिरन्ते। आयुः॥७॥

पदार्थः-**(इमे)** **(भोजाः)** भोक्तारः प्रजापालकाः **(अङ्गिरसः)** प्राणा इव बलिष्ठाः **(विरूपाः)** विविधरूपा विकृतरूपा वा **(दिवः)** प्रकाशस्वरूपस्य **(पुत्रासः)** वायुरिव बलिष्ठाः **(असुरस्य)** शत्रूणां प्रक्षेपकस्य **(वीराः)** व्याप्तयुद्धविद्याः **(विश्वामित्राय)** विश्वं सर्वं जगन्मित्रं यस्य तस्मै **(ददतः)** **(मघानि)** अत्युत्तमानि धनानि **(सहस्रसावे)** सहस्रस्याऽसंख्यस्य धनस्य सावः प्रसवो यस्मिन् संग्रामे **(प्र)** **(तिरन्ते)** उल्लङ्घन्ते **(आयुः)** जीवनम्॥७॥

अन्वयः-हे राजन्! य इमेऽङ्गिरस इव भोजा विरूपा दिवोऽसुरस्य पुत्रासो वीराः सहस्रसावे विश्वामित्राय मघानि ददतः सन्त आयुः प्र तिरन्ते त एव भवता सत्कृत्य रक्षणीयाः॥७॥

भावार्थः-हे राजन्! भवानीदृशैर्वीरैः सहितां हृष्टां पुष्टां युद्धविद्यायां कुशलां सेनामुन्नीय सर्वदा विजयस्व॥७॥

पदार्थः-हे राजन्! जो **(इमे)** ये **(अङ्गिरसः)** प्राणों के सदृश बलयुक्त **(भोजाः)** भोजन करने

तथा प्रजा के पालन करनेवाले **(विरूपाः)** अनेक प्रकार के रूप वा विकारयुक्त रूपवाले और **(दिवः)** प्रकाशस्वरूप **(असुरस्य)** शत्रुओं के फेंकनेवाले के **(पुत्रासः)** वायु के समान बलिष्ठ **(वीराः)** युद्धविद्या में परिपूर्ण **(सहस्रसावे)** संख्यारहित धन की उत्पत्ति जिसमें उस संग्राम में **(विश्वामित्राय)** सम्पूर्ण संसार मित्र है जिसका उसके लिये **(मघानि)** अतिश्रेष्ठ धनों को **(ददतः)** देते हुए जन **(आयुः)** जीवन का **(प्र, तिरन्ते)** उल्लङ्घन करते हैं, वे ही लोग आपसे सत्कारपूर्वक रक्षा करने योग्य हैं॥७॥

भावार्थः-हे राजन्! आप ऐसे वीरों के सहित प्रसन्न, पुष्ट और युद्धविद्या से कुशल सेना की वृद्धि करके सर्वदा विजय को प्राप्त होइये॥७॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

रूपंरूपं मघवा बोभवीति मायाः कृण्वानस्तन्वं१ परि स्वाम्।

त्रिर्यद्दिवः परि मुहूर्तमागात् स्वैर्मन्त्रैरनृतुपा ऋतावा॥८॥

रूपम्ऽरूपम्। मघऽवा। बोभवीति। मायाः। कृण्वानः। तन्वम्। परि। स्वाम्। त्रिः। यत्। दिवः। परि। मुहूर्तम्। आ। अगात्। स्वैः। मन्त्रैः। अनृतुऽपाः। ऋतऽवा॥८॥

पदार्थः-**(रूपंरूपम्)** प्रतिरूपम् **(मघवा)** बहुधनवान् **(बोभवीति)** भृशं भवति **(मायाः)** प्रज्ञाः **(कृण्वानः)** **(तन्वम्)** शरीरम् **(परि)** सर्वतः **(स्वाम्)** स्वकीयाम् **(त्रिः)** त्रिवारम् **(यत्)** यः **(दिवः)** प्रकाशान् **(परि)** **(मुहूर्त्तम्)** घटिकाद्वयम् **(आ)** **(अगात्)** प्राप्नुयात् **(स्वैः)** स्वकीयैः **(मन्त्रैः)** विचारैः **(अनृतुपाः)** य ऋतून् पाति स ऋतुपा न ऋतुपा अनृतुपाः **(ऋतावा)** सत्यवान्॥८॥

अन्वयः-यद्य ऋतावा मघवा सूर्य्यो दिवो मुहूर्तमिव स्वैर्मन्त्रैरनृतुपाः सन् स्वां तन्वं त्रिः पर्यागाद् रूपंरूपं प्रति मायाः कृण्वानः सन् परि बोभवीति तमध्यापकमुपदेष्टारञ्च कुर्य्युः॥८॥

भावार्थः-ये परमेश्वरमारभ्य पृथिवीपर्य्यन्तानां पदार्थानां स्वरूपविदः सद्योऽन्येभ्यो विज्ञानप्रदाः सूर्य्य इव सुशिक्षासभ्यताविनयप्रकाशकाः स्युस्ते विद्याधर्मराजमन्त्रवर्द्धने नियोजनीयाः॥८॥

पदार्थः-**(यत्)** जो **(ऋतावा)** सत्य से युक्त **(मघवा)** बहुत धन से युक्त **(सूर्य्यः)** सूर्य्य **(दिवः)** प्रकाशों को **(मुहूर्तम्)** दो घड़ी **(स्वैः)** अपने **(मन्त्रैः)** विचारों से **(अनृतुपाः)** नहीं ऋतुओं का पालन करनेवाला होकर **(स्वाम्)** अपने **(तन्वम्)** शरीर को **(त्रिः)** तीन वार **(परि, आ)** सब प्रकार **(अगात्)** प्राप्त होवें और **(रूपंरूपम्)** रूप-रूप के प्रति **(मायाः)** बुद्धियों को **(कृण्वानः)** करते हुए **(परि, बोभवीति)** अत्यन्त होता है, उसको अध्यापक और उपदेश देनेवाला करें॥८॥

भावार्थः-जो परमेश्वर को ले के पृथिवी पर्यन्त पदार्थों के स्वरूप जानने और शीघ्र अन्य जनों के

लिये विज्ञान देने और सूर्य्य के सदृश उत्तम शिक्षा, सभ्यता और विनय के प्रकाश करनेवाले होवें, वे विद्या, धर्म और राजधर्म के मन्त्र बढ़ाने में नियत करने के योग्य हैं॥८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

महाँ ऋषिर्देवजा देवजूतोऽस्तभ्नात्सिन्धुमर्णवं नृचक्षाः।

विश्वामित्रो यदवहत्सुदासमप्रियायत कुशिकेभिरिन्द्रः॥९॥

महान्। ऋषिः। देवऽजाः। देवऽजूतः। अस्तभ्नात्। सिन्धुम्। अर्णवम्। नृऽचक्षाः। विश्वामित्रः। यत्। अवहत्। सुऽदासम्। अप्रियायत। कुशिकेभिः। इन्द्रः॥९॥

पदार्थः-(**महान्**) महत्वपरिमाणतः सर्वेभ्योऽधिकः (**ऋषिः**) मन्त्रार्थवेत्ता (**देवजाः**) यो देवेषु विद्वत्सु जातः (**देवजूतः**) देवैः प्रेरितः (**अस्तभ्नात्**) स्तभ्नाति धरति (**सिन्धुम्**) नदीम् (**अर्णवम्**) समुद्रम् (**नृचक्षाः**) नृणां द्रष्टा (**विश्वामित्रः**) सर्वेषां सुहृत् (**यत्**) यः (**अवहत्**) प्राप्नोति (**सुदासम्**) शोभनदानम् (**अप्रियायत**) प्रिय इवाचरति (**कुशिकेभिः**) कार्यसिद्धान्तविद्भिः (**इन्द्रः**) परमैश्वर्यकरः॥९॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यद्यो महानृषिर्देवजा देवजूतो नृचक्षा विश्वामित्र इन्द्रः कुशिकेभिः यथा सूर्यो भूमिं सिन्धुमर्णवं चास्तभ्नात् यथा दिव राज्यं धरेच्छ्रियमवहत् सुदासमप्रियायत तं सर्वे सत्कुरुत॥९॥

भावार्थः-यथा सूर्यः सर्वेभ्यो लोकेभ्यो महान्त्सर्वस्य धर्त्ता प्रकाशकोऽस्ति तथैव वेदविद आप्ता वर्त्तन्त इति वेद्यम्॥९॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यत्**) जो (**महान्**) बड़प्पन रूप परिमाण से सब पदार्थों से बड़ा (**ऋषिः**) मन्त्रों के अर्थों का जाननेवाला (**देवजाः**) विद्वानों में उत्पन्न (**देवजूतः**) विद्वानों से प्रेरित (**नृचक्षाः**) मनुष्यों का देखनेवाला (**विश्वामित्रः**) सबका मित्र (**इन्द्रः**) अत्यन्त ऐश्वर्य का करनेवाला (**कुशिकेभिः**) कार्यों के सिद्धान्तों को जाननेवालों से जैसे सूर्य, पृथिवी (**सिन्धुम्**) नदी और (**अर्णवम्**) समुद्र को (**अस्तभ्नात्**) धारण करता है, जैसे [द्युलोक के] राज्य को धारण करे तो लक्ष्मी को (**अवहत्**) प्राप्त होता है (**सुदासम्**) उत्तम दान को (**अप्रियायत**) प्रिय के सदृश करता है, उसका सब लोग सत्कार करें॥९॥

भावार्थः-जैसे सूर्य सब लोकों से बड़ा और सबका धारणकर्त्ता तथा प्रकाश करनेवाला है, वैसे ही सबके जाननेवाले यथार्थवक्ता पुरुष हैं, ऐसा जानना चाहिये॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

हंसाइव कृणुथ श्लोकमद्रिभिर्मदन्तो गीर्भिरध्वरे सुते सचा।

देवेभिर्विप्रा ऋषयो नृचक्षसो वि पिबध्वं कुशिकाः सोम्यं मधु॥१०॥२०॥

हंसाःऽइंव। कृणुथ। श्लोकंम्। अद्रिंऽभिः। मदंन्तः। गीःऽभिः। अध्वरे। सुते। सचां। देवेभिंः। विप्राः। ऋषयः। नृऽचक्षसः। वि। पिबध्वम्। कुशिकाः। सोम्यम्। मधुं॥ १०॥

पदार्थः-(**हंसाइव**) (**कृणुथ**) (**श्लोकम्**) सुलक्षणां वाचम्। **श्लोक इति वाङ्नामसु पठितम्।** (निघं०१.११) (**अद्रिभिः**) मेघैः (**मदन्तः**) प्राप्तानन्दाः (**गीर्भिः**) सुशिक्षिताभिर्वाग्भिः (**अध्वरे**) अहिंसनीयेऽध्ययनाऽध्यापनीये व्यवहारे (**सुते**) निष्पन्ने (**सचा**) समूहे (**देवेभिः**) विद्वद्भिः (**विप्राः**) मेधाविनः (**ऋषयः**) मन्त्रार्थवेत्तारः (**नृचक्षसः**) मनुष्याणां विद्यादृष्ट्या परीक्षकाः (**वि**) (**पिबध्वम्**) (**कुशिकाः**) विद्यासिद्धान्तनिष्कर्षकाः (**सोम्यम्**) सोम ऐश्वर्ये साधु (**मधु**) मधुरादिगुणं द्रव्यम्॥१०॥

अन्वयः-हे कुशिका नृचक्षस ऋषयो विप्रा! यूयं सुतेऽध्वरेऽद्रिभिर्मदन्तः सन्तो देवेभिः सह श्लोकं हंसाइव कृणुथ सत्यस्य सचा वर्त्तध्वं सोम्यं मधु वि पिबध्वम्॥१०॥

भावार्थः-परमविद्वांसो विदुषः प्रति जितेन्द्रियतां धर्मात्मतां सुशीलतां सभ्यतां च ग्राहयेयुर्यतस्तेऽप्याप्ता भूत्वा जगत्कल्याणं कुर्युः॥१०॥

पदार्थः-हे (**कुशिकाः**) विद्याओं के सिद्धान्तों के जानने (**नृचक्षसः**) मनुष्यों की विद्यादृष्टि से परीक्षा करने और (**ऋषयः**) मन्त्रों के अर्थों को जाननेवाले (**विप्राः**) बुद्धिमान्! आप लोग (**सुते**) उत्पन्न (**अध्वरे**) नहीं हिंसा करने योग्य पढ़ने और पढ़ाने रूप व्यवहार में (**अद्रिभिः**) मेघों से (**मदन्तः**) आनन्द को प्राप्त होते हुए (**देवेभिः**) विद्वानों के साथ (**श्लोकम्**) उत्तम स्वरूप वाणी को (**कृणुथ**) करो और सत्य के (**सचा**) समूह में वर्त्तमान (**सोम्यम्**) ऐश्वर्य में श्रेष्ठ (**मधु**) मधुर आदि गुणयुक्त द्रव्य का (**वि, पिबध्वम्**) पान कीजिये॥१०॥

भावार्थः-अत्यन्त विद्वान् जन विद्वानों के प्रति जितेन्द्रियता, धर्मात्मता, सुशीलता और सभ्यता को ग्रहण करावें कि जिससे वे भी श्रेष्ठ होकर संसार के कल्याण को करें॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उप प्रेत कुशिकाश्चेतयध्वमश्वं राये प्र मुञ्चता सुदासः।
राजा वृत्रं जङ्घनत् प्रागपागुदगथा यजाते वर आ पृथिव्याः॥ ११॥

उपं। प्र। इत। कुशिकाः। चेतयध्वम्। अश्वंम्। राये। प्र। मुञ्चत। सुऽदासंः। राजां। वृत्रम्। जङ्घनत्। प्राक्। अपांक्। उदंक्। अथं। यजाते। वरें। आ। पृथिव्याः॥ ११॥

पदार्थः-(**उप**) (**प्र**) (**इत**) प्राप्नुत (**कुशिकाः**) ये कुर्वन्त्युपदिशन्ति ते कुशाः प्रशस्ताः कुशा विद्यन्ते येषु ते कुशिकाः (**चेतयध्वम्**) ज्ञापयध्वम् (**अश्वम्**) तुरङ्गमिवाऽऽशुगामिनीं विद्युतम् (**राये**) श्रिये

(प्र) **(मुञ्चत)** त्यजत। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(सुदासः)** शोभनदानः **(राजा)** प्रकाशमानः **(वृत्रम्)** मेघमिव शत्रुम् **(जङ्घनत्)** भृशं हन्यात् **(प्राक्)** पूर्वम् **(अपाक्)** पश्चिमतः **(उदक्)** उत्तरतः **(अथ)** अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(यजाते)** यजेत **(वरे)** उत्तमे देशे **(आ)** **(पृथिव्याः)**॥११॥

अन्वयः-हे कुशिका! यः सुदासो राजा प्रागपागुदग्वृत्रं जङ्घनदथ पृथिव्या वर आ यजाते तस्य राये प्र मुञ्चताश्वञ्च चेतयध्वमुप प्रेत॥११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! ये वीराः शत्रून् हन्युस्तेभ्यः पुष्कलं धनं प्रतिष्ठां च दद्युः। येन सर्वासु दिक्षु विजयः प्रकाशेत॥११॥

पदार्थः-हे **(कुशिकाः)** जो करते और उपदेश देते वे कुश वे श्रेष्ठ विद्यमान हैं जिनमें वे कुशिक और जो **(सुदासः)** उत्तम दान देनेवाला **(राजा)** प्रकाशमान **(प्राक्)** प्रथम **(अपाक्)** पश्चिम और **(उदक्)** उत्तर से **(वृत्रम्)** मेघ के सदृश शत्रु का **(जङ्घनत्)** अत्यन्त नाश करे **(अथ)** इसके अनन्तर **(पृथिव्याः)** पृथिवी के **(वरे)** उत्तम स्थान में **(आ, यजाते)** यज्ञ करे उसका **(राये)** लक्ष्मी के लिये **(प्र)** **(मुञ्चत)** त्याग करो और उस **(अश्वम्)** घोड़े के सदृश शीघ्र चलनेवाली बिजुली को **(चेतयध्वम्)** जनाओ और **(उप, प्र इत)** प्राप्त होओ॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वानो! जो वीर लोग शत्रुओं का नाश करें उनके लिये बहुत धन और प्रतिष्ठा को देवें। जिससे सम्पूर्ण दिशाओं में विजय प्रकाशित होवे॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

य इमे रोदसी उभे अहमिन्द्रमतुष्टवम्।
विश्वामित्रस्य रक्षति ब्रह्मेदं भारतं जनम्॥१२॥

यः। इमे इति। रोदसी इति। उभे इति। अहम्। इन्द्रम्। अतुस्तवम्। विश्वामित्रस्य। रक्षति। ब्रह्म। इदम्। भारतम्। जनम्॥१२॥

पदार्थः-**(यः)** **(इमे)** **(रोदसी)** द्यावापृथिव्यौ **(उभे)** **(अहम्)** **(इन्द्रम्)** परमात्मानम् **(अतुष्टवम्)** प्रशंसेयम् **(विश्वामित्रस्य)** सर्वस्य सुहृदः **(रक्षति)** **(ब्रह्म)** धनं ब्रह्माण्डं वा **(इदम्)** वर्त्तमानम् **(भारतम्)** भारत्या वाचोऽयं वेत्ता धर्त्ता वा तम् **(जनम्)** प्रसिद्धं मनुष्यादिकं प्राणिमयम्॥१२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य इमे उभे रोदसी ब्रह्मेदं भारतं जनं रक्षति यमिन्द्रमहमतुष्टवं तस्य विश्वामित्रस्यैवोपासनां यूयं कुरुत॥१२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येनेश्वरेण सर्वं जगत्सृष्ट्वा रक्ष्यते तस्यैव स्तुतिप्रार्थनोपासनाः सततं कुरुत॥१२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(इमे)** ये **(उभे)** दोनों **(रोदसी)** अन्तरिक्ष और पृथिवी **(ब्रह्म)** धन वा ब्रह्माण्ड **(इदम्)** इस वर्त्तमान **(भारतम्)** वाणी के जानने वा धारण करनेवाले उस **(जनम्)** प्रसिद्ध मनुष्य आदि प्राणिस्वरूप की **(रक्षति)** रक्षा करता है, जिस **(इन्द्रम्)** परमात्मा की हम **(अतुष्टवम्)** प्रशंसा करें, उस **(विश्वामित्रस्य)** सबके मित्र की ही उपासना आप लोग करें॥१२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस परमेश्वर से सम्पूर्ण संसार रच कर रक्षित है, उसकी ही स्तुति, प्रार्थना और उपासना निरन्तर करो॥१२॥

अथ प्रजाविषयमाह॥

अब प्रजा के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

विश्वामित्रा अरासत ब्रह्मेन्द्राय वज्रिणे। करदिन्नः सुराधसः॥१३॥

विश्वामित्राः। अरासत। ब्रह्म। इन्द्राय। वज्रिणे। करत्। इत्। नः। सुऽराधसः॥१३॥

पदार्थः-**(विश्वामित्राः)** सर्वस्य सुहृदः **(अरासत)** रासन्ताम् **(ब्रह्म)** धनम् **(इन्द्राय)** राज्ञे **(वज्रिणे)** धनुर्वेदविदे **(करत्)** कुर्य्यात् **(इत्)** एव **(नः)** अस्मान् **(सुराधसः)** उत्तमधनयुक्तान्॥१३॥

अन्वयः-हे विश्वामित्रा! भवन्तो यो नः सुराधसः करत्तस्मै इद्वज्रिण इन्द्राय ब्रह्मारासत॥१३॥

भावार्थः-यो राजा सर्वाः प्रजाः सुखसम्पन्नाः कुर्य्यात्तमेव प्रजाः परमैश्वर्य्ययुक्तं कुर्य्युः॥१३॥

पदार्थः-हे **(विश्वामित्राः)** सबके मित्रो! आप लोग जो **(नः)** हम लोगों को **(सुराधसः)** उत्तम धन से युक्त **(करत्)** करे उस **(इत्)** ही **(वज्रिणे)** धनुर्वेद के जाननेवाले **(इन्द्राय)** राजा के लिये **(ब्रह्म)** धन की **(अरासत)** वृद्धि करें॥१३॥

भावार्थः-जो राजा सम्पूर्ण प्रजाओं को सुखयुक्त करे, उस ही को प्रजा अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त करें॥१३॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

किं ते कृण्वन्ति कीकटेषु गावो नाशिरं दुह्रे न तपन्ति घर्मम्।
आ नो भर प्रमगन्दस्य वेदो नैचाशाखं मघवन् रन्धया नः॥१४॥

किम्। ते। कृण्वन्ति। कीकटेषु। गावः। न। आऽशिरम्। दुह्रे। न। तपन्ति। घर्मम्। आ। नः। भर। प्रऽमगन्दस्य। वेदः। नैचाऽशाखम्। मघऽवन्। रन्धय। नः॥१४॥

पदार्थः-**(किम्)** **(ते)** तव **(कृण्वन्ति)** **(कीकटेषु)** अनार्य्यदेशनिवासिषु म्लेच्छेषु **(गावः)** धेनूः **(न)** **(आशिरम्)** यदस्य ते तत् क्षीरादिकम् **(दुह्रे)** दुहन्ति **(न)** **(तपन्ति)** **(घर्मम्)** दिनम्। **घर्म**

इत्यहर्नामसु पठितम्। (निघं०१.९) **(आ)** समन्तात् **(नः)** अस्मभ्यम् **(भर)** धर **(प्रमगन्दस्य)** यः कुलीनो मां गच्छति स तस्य **(वेदः)** धनम् **(नैचाशाखम्)** नीचा शाखा शक्तिर्यस्मिँस्तम् **(मघवन्)** पूजितधनयुक्त **(रन्धय)** निवारय **(नः)** अस्माकम्॥१४॥

अन्वयः-हे विद्वन्! ते कीकटेषु गावो नाऽऽशिरं दुह्रे घर्मं न तपन्ति ते किं कृण्वन्ति त्वं नः प्रमगन्दस्य वेद आ भर। हे मघवँस्त्वं नो नैचाशाखं रन्धय॥१४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा म्लेच्छेषु गावो न वर्द्धन्ते नास्तिकेषु धर्मादयो गुणाश्च, तथैव विद्वत्स्वनीश्वरवादिनः प्रबला न जायन्ते तस्माद्विद्वद्भिर्मनुष्येषु नास्तिकत्वं सर्वथा निवारणीयम्॥१४॥

पदार्थः-हे विद्वान्! **(ते)** आपके **(कीकटेषु)** अनार्य देशों में वसनेवालों में **(गावः)** गावों से **(न)** नहीं **(आशिरम्)** दुग्ध आदि को **(दुह्रे)** दुहते हैं **(घर्मम्)** दिन को **(न)** नहीं **(तपन्ति)** तपाते हैं, वे **(किम्)** क्या **(कृण्वन्ति)** करते वा करेंगे और आप **(नः)** हम लोगों के लिये **(प्रमगन्दस्य)** जो कुलीन मुझको प्राप्त होता है, उसके **(वेदः)** धन को **(आ)** सब प्रकार से **(भर)** धारण करिये और हे **(मघवन्)** श्रेष्ठ धन से युक्त! आप **(नः)** हम लोगों के **(नैचाशाखम्)** नीची शक्ति जिसमें उसकी **(रन्धय)** निवृत्ति करो॥१४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जैसे म्लेच्छ जनों में गौओं की, नास्तिक पुरुषों में धर्म आदि गुणों की वृद्धि नहीं होती और वैसे ही विद्वानों में ईश्वर को नहीं माननेवाले प्रबल न होवें, इससे चाहिये कि [विद्वज्जन] मनुष्यों में नास्तिकत्व का सर्वथा निवारण करें॥१४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ससर्परीरमतिं बाधमाना बृहन्मिमाय जमदग्निदत्ता।
आ सूर्यस्य दुहिता ततान श्रवो देवेष्वमृतमजुर्यम्॥१५॥२१॥

ससर्परीः। अमतिम्। बाधमाना। बृहत्। मिमाय। जमदग्निऽदत्ता। आ। सूर्यस्य। दुहिता। ततान। श्रवः। देवेषु। अमृतम्। अजुर्यम्॥१५॥

पदार्थः-**(ससर्परीः)** भृशं सर्पणशीला **(अमतिम्)** रूपम् **(बाधमाना)** निवारयन्ती **(बृहत्)** **(मिमाय)** मिमीते **(जमदग्निदत्ता)** चक्षुषा प्रत्यक्षेण दत्ता। **चक्षुर्वै जमदग्निर्ऋषिः।** **[**शत०८.१.२.३**]** **(आ)** **(सूर्य्यस्य)** **(दुहिता)** दुहितेव वर्त्तमानोषा **(ततान)** तनुते विस्तृणोति **(श्रवः)** श्रवणम् **(देवेषु)** विद्वत्सु **(अमृतम्)** अमृतात्मकम् **(अजुर्य्यम्)** हानिरहितम्॥१५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! या जमदग्निदत्ता ससर्परीर्वागजुर्य्यं सूर्य्यस्य दुहिता तमो बाधमानोषा इव बृहदमतिं मिमाय देवेष्वजुर्य्यममृतं श्रव आ ततान तां वाचं सर्वथोन्नयत॥१५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यदि ब्रह्मचर्य्यधर्मानुष्ठानपुरुषार्थैराप्तानां सकाशाद् विद्यासुशिक्षे मनुष्या गृह्णीयुस्तर्हि तेषां किमपि सुखमप्राप्तं न स्यात्॥१५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(जमदग्निदत्ता)** नेत्र से प्रत्यक्ष दी गई **(ससर्परीः)** अत्यन्त चलनेवाली वाणी **(अजुर्य्यम्)** हानि से रहित **(सूर्य्यस्य)** सूर्य्य की **(दुहिता)** कन्या सदृश वर्त्तमान अन्धकार को नाश करते हुए प्रातःकाल के सदृश **(बृहत्)** बड़े **(अमतिम्)** रूप को **(मिमाय)** नापती है और **(देवेषु)** विद्वानों में हानिरहित **(अमृतम्)** अमृतस्वरूप **(श्रवः)** सुनने का **(आ, ततान)** विस्तार करती है, उस वाणी की सब प्रकार वृद्धि करो॥१५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो ब्रह्मचर्य धर्म का अनुष्ठान और पुरुषार्थों से श्रेष्ठ पुरुषों के समीप से विद्या और उत्तम शिक्षा को मनुष्य ग्रहण करें तो उनको कुछ भी सुख अप्राप्त न होवे॥१५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ससर्परीरभरत् तूयमेभ्योऽधि श्रवः पाञ्चजन्यासु कृष्टिषु।

सा पक्ष्या३ नव्यमायुर्दधाना यां मे पलस्तिजमदग्नयो ददुः॥१६॥

ससर्परीः। अभरत्। तूयम्। एभ्यः। अधि। श्रवः। पाञ्चऽजन्यासु। कृष्टिषु। सा। पक्ष्या। नव्यम्। आयुः। दधाना। याम्। मे। पलस्तिऽजमदग्नयः। ददुः॥१६॥

पदार्थः-**(ससर्परीः)** सुखस्य प्रापिका **(अभरत्)** **(तूयम्)** शीघ्रम् **(एभ्यः)** जिज्ञासुभ्यः **(अधि)** उपरिभावे **(श्रवः)** अन्नम् **(पाञ्चजन्यासु)** पञ्चसु दिनेषु प्राणेषु भवासु **(कृष्टिषु)** मनुष्यादिप्रजासु **(सा)** **(पक्ष्या)** पक्षेषु साध्वी **(नव्यम्)** नवीनमेव **(आयुः)** अन्नं जीवनं वा। **आयुरित्यन्ननामसु पठितम्।** (निघं०२.७) **(दधाना)** **(याम्)** **(मे)** मम **(पलस्तिजमदग्नयः)** प्रजमिता विदिता अग्नयः पलस्तयो वयोज्ञानवृद्धाश्च जमदग्नयो यैस्ते **(ददुः)** दद्युः॥१६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! पलस्तिजमदग्नयो मे यां ददुः सा पक्ष्या पाञ्चजन्यासु कृष्टिषु नव्यमायुर्दधाना एभ्य श्रवोऽधि तूयं ददुः ससर्परीरभरत्॥१६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! या कार्यसिद्ध्यैश्वर्योत्पादिका आयुर्वर्धिका सत्यादिलक्षणोज्ज्वला वाणी नवीनं विज्ञानं जीवनं च दधाति तां नित्यं बिभृत॥१६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(पलस्तिजमदग्नयः)** जाना है प्राजापत्य आदि अग्नियों को जिन्होंने वे और अवस्था और ज्ञान में वृद्ध पुरुष [मेरे लिये] **(याम्)** जिसको **(ददुः)** देवें **(सा)** वह **(पक्ष्या)** पक्षों में

साध्वी **(पाञ्चजन्यासु)** पाँच दिनों तथा प्राणों में उत्पन्न **(कृष्टिषु)** मनुष्य आदि प्रजाओं में **(नव्यम्)** नवीन ही **(आयुः)** अन्न वा जीवन को **(दधाना)** धारण करती हुई **(एभ्यः)** इन जानने की इच्छा करनेवालों के लिये **(श्रवः)** अन्न को **(अधि)** उपरि भाग में **(तूयम्)** शीघ्र **(ददुः)** देवें **(ससर्परीः)** सुख की बढ़ानेवाली **(अभरत्)** प्राप्त कराइये॥१६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो कार्य की सिद्धि और ऐश्वर्य की उत्पन्न करने और अवस्था की बढ़ानेवाली सत्य लक्षणों से स्पष्ट वाणी नवीन-नवीन विज्ञान और जीवन धारण करती है, उसको नित्य धारण करो॥१६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

स्थिरौ गावौ भवतां वीळुरक्षो मेषा वि वर्हि मा युगं वि शारि।
इन्द्रः पातल्ये ददतां शरीतोररिष्टनेमे अभि नः सचस्व॥१७॥

स्थिरौ। गावौ। भवताम्। वीळुः। अक्षः। मा। ईषा। वि। वर्हि। मा। युगम्। वि। शारि। इन्द्रः। पातल्येऽ३ इति। ददताम्। शरीतोः। अरिष्टऽनेमे। अभि। नः। सचस्व॥१७॥

पदार्थः-**(स्थिरौ)** निश्चलौ **(गावौ)** वृषभौ **(भवताम्)** **(वीळुः)** प्रशंसितः **(अक्षः)** इन्द्रियछिद्रम् **(मा)** निषेधे **(ईषा)** हिंसकः **(वि)** **(वर्हि)** उत्सन्नाभूत् **(मा)** **(युगम्)** वर्षम् **(वि)** **(शारि)** हिंस्यात् **(इन्द्रः)** ऐश्वर्य्यवान् **(पातल्ये)** पतनशीले **(ददताम्)** **(शरीतोः)** शरीतुं दुष्टस्वभावं हिंसितुं शक्नोति **(अरिष्टनेमे)** योऽरिष्टान्यहिंसितानि कर्माणि नयति तत्सम्बुद्धौ **(अभि)** **(नः)** अस्मान् **(सचस्व)**॥१७॥

अन्वयः-हे अरिष्टनेमे! भवानिन्द्रः शरीतोः सन् पातल्ये ददतां वीळुरक्ष ईषा सन् स्थिरौ गावौ मा वि शारि युगं मा वि वर्हि यतः स्थिरौ गावौ भवतां तस्मात्त्वं नोऽभि सचस्व॥१७॥

भावार्थः-मनुष्यैर्महोपकारका गवादयः पशवः कदाचिन्नो हिंसनीयाः। व्यर्थः समयश्च न गमनीयः सद्भिः सह सदैव सन्धी रक्षणीयः॥१७॥

पदार्थः-हे **(अरिष्टनेमे)** नहीं नाश होनेवाले कर्मों को प्राप्त करानेवाले! आप **(इन्द्रः)** ऐश्वर्यवाले **(शरीतोः)** दुष्ट स्वभाव से युक्त के नाश करने में समर्थ हुए **(पातल्ये)** गिरनेवाले में **(ददताम्)** दीजिये और **(वीळुः)** प्रशंसायुक्त **(अक्षः)** इन्द्रिय के छिद्र को **(ईषा)** नाश करनेवाला हुआ **(स्थिरौ)** निश्चल **(गावौ)** बैलों का **(मा)** नहीं **(वि, शारि)** नाश करे **(युगम्)** वर्ष को **(मा)** नहीं **(वि, वर्हि)** वन्ध्या हो जिससे कि निश्चल बैल **(भवताम्)** होवें, तिससे आप **(नः)** हम लोगों से **(अभि, सचस्व)** सब प्रकार मिलो॥१७॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि बड़े उपकार करनेवाले गौ आदि पशुओं का कभी नाश नहीं

करें और व्यर्थ समय न बितावें, श्रेष्ठ पुरुषों के साथ सदा ही मेल [=सम्बन्ध] की रक्षा करें॥१७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

बलं॑ धेहि त॒नूषु॑ नो॒ बल॑मिन्द्रान॒ळुत्सु॑ नः।

बलं॑ तो॒काय॒ तन॑याय जी॒वसे॒ त्वं हि ब॑ल॒दा असि॑॥१८॥

बल॑म्। धे॒हि॒। त॒नूषु॑। नः॒। बल॑म्। इ॒न्द्र॒। अ॒न॒ळुत्ऽसु॑। नः॒। बल॑म्। तो॒काय॑। तन॑याय। जी॒वसे॑। त्वम्। हि। ब॒ल॒ऽदाः। असि॑॥१८॥

पदार्थः-(**बलम्**) पराक्रमम् (**धेहि**) (**तनूषु**) शरीरेषु (**नः**) अस्मान् (**बलम्**) (**इन्द्र**) परमैश्वर्यप्रद (**अनळुत्सु**) गवादिषु (**नः**) अस्माकम् (**बलम्**) (**तोकाय**) ह्रस्वाय बालकाय (**तनयाय**) प्राप्तकौमारयौवनाऽवस्थाय (**जीवसे**) जीवितुम् (**त्वम्**) (**हि**) यतः (**बलदाः**) (**असि**)॥१८॥

अन्वयः-हे इन्द्र! हि यतस्त्वं बलदा असि तस्मान्नस्तनूषु बलं धेहि। नोऽनळुत्सु बलं धेहि नो जीवसे तोकाय तनयाय बलं धेहि॥१८॥

भावार्थः-हे आचार्य! भवान् यस्माच्छरीरात्मबलवानस्ति तस्मादस्मासु पूर्णं शरीरात्मबलं निधेहि॥१८॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य के देनेवाले! (**हि**) जिससे आप (**बलदाः**) बल के देनेवाले (**असि**) हैं, इससे (**नः**) हम लोगों के (**तनूषु**) शरीरों में (**बलम्**) बल को (**धेहि**) धारण करो और (**नः**) हम लोगों के (**अनळुत्सु**) गौ आदिकों में (**बलम्**) बल को धारण करो, हम लोगों के (**जीवसे**) जीवन और (**तोकाय**) छोटे बालक तथा (**तनयाय**) कौमार अवस्था को प्राप्त पुरुष के लिये (**बलम्**) पराक्रम को धारण करो॥१८॥

भावार्थः-हे आचार्य्य! आप जिससे कि शरीर और आत्मा के बल से युक्त हो, इससे हम लोगों में पूर्ण शरीर और आत्मा के बल को धारण करो॥१८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अ॒भि व्य॑यस्व खदि॒रस्य॒ सार॒मोजो॑ धेहि स्पन्द॒ने शिं॒शपा॑याम्।

अक्ष॑ वीळो वीळित वी॒ळय॑स्व॒ मा यामा॑द॒स्मादव॑ जीहिपो नः॥१९॥

अ॒भि। वि॒ऽअ॒य॒स्व॒। ख॒दि॒रस्य॑। सार॑म्। ओजः॑। धे॒हि॒। स्प॒न्द॒ने। शिं॒शपा॑याम्। अक्ष॑। वी॒ळो॒ इति॑। वी॒ळि॒त॒। वी॒ळय॑स्व। मा। यामा॑त्। अ॒स्मात्। अव॑। जी॒हि॒पः॒। नः॒॥१९॥

पदार्थः-(**अभि**) सर्वतः (**व्ययस्व**) व्ययं कुरु (**खदिरस्य**) एतत्काष्ठस्य (**सारम्**) दृढभागमिव (**ओजः**) बलम् (**धेहि**) (**स्पन्दने**) किञ्चिच्चलने (**शिंशपायाम्**) एतत्काष्ठे वृक्षविशेषे (**अक्ष**) व्याप्तविद्य (**वीळो**) बलवन् प्रशंसितस्वभाव (**वीळित**) बहुभिः प्रशंसित (**वीळयस्व**) प्रेरयस्व (**मा**) निषेधे (**यामात्**) प्रहरात् (**अस्मात्**) (**अव**) (**जीहिपः**) त्याजयेः (**नः**) अस्मान्॥१९॥

अन्वयः-हे अक्ष! त्वमस्मासु खदिरस्य सारमिवोजो धेहि शिंशपायां स्पन्दन इवाऽभिव्ययस्व। हे वीळो वीळित! नोऽस्मान् वीळयस्वाऽस्माद् यामादस्मान्माव जीहिपः॥१९॥

भावार्थः-हे आचार्य्य! अस्मासु दृढं बलं धेहि सत्कर्मेष्वस्मान् प्रेरय कदाचिन्मा त्यजेः॥१९॥

पदार्थः-हे (**अक्ष**) विद्याओं से व्याप्त! आप हम लोगों में (**खदिरस्य**) इस काष्ठ के (**सारम्**) दृढ भाग के सदृश (**ओजः**) बल को (**धेहि**) धारण कीजिये (**शिंशपायाम्**) इस काष्ठ की वृक्षविशेष (**स्पन्दने**) कुछ चलने में (**अभि**) सब प्रकार (**व्ययस्व**) खर्च करो। और हे (**वीळो**) बलयुक्त और (**वीळित**) बहुतों में प्रशंसित पुरुष! (**नः**) हम लोगों को (**वीळयस्व**) प्रेरणा करो (**अस्मात्**) इस (**यामात्**) प्रहर से [हम लोगों को] (**मा**) नहीं (**अव, जीहिपः**) त्यागिये॥१९॥

भावार्थः-हे आचार्य्य! हम लोगों में दृढ़ बल को धारण करो, श्रेष्ठ कर्मों में हम लोगों को प्रेरणा करो और कभी मत त्याग करो॥१९॥

अथ राजपुरुषविषयमाह॥

अब राजा के पुरुष के विषय को कहते हैं॥

अयमस्मान्वनस्पतिर्मा च हा मा च रीरिषत्।
स्वस्त्या गृहेभ्य आवसा आ विमोचनात्॥२०॥२२॥

अयम्। अस्मान्। वनस्पतिः। मा। च। हाः। मा। च। रिरिषत्। स्वस्ति। आ। गृहेभ्यः। आ। अवऽसै। आ। विऽमोचनात्॥२०॥

पदार्थः-(**अयम्**) (**अस्मान्**) (**वनस्पतिः**) वनस्य पालकः (**मा**) (**च**) (**हाः**) त्यजेः (**मा**) (**च**) (**रीरिषत्**) हिंस्यात् (**स्वस्ति**) सुखम् (**आ**) (**गृहेभ्यः**) (**आ**) (**अवसै**) निश्चयाय। अत्र षो धातोः क्विप् **वाच्छन्दसी**त्याकारलोपाभावः। (**आ**) (**विमोचनात्**) विमोचनामारभ्य॥२०॥

अन्वयः-हे राजन्! यथाऽयं वनस्पतिरस्मान्न त्यजति तथाऽस्मान्मा हा यथा सूर्य्यश्चाऽस्मान्न हिनस्ति तथैव भवान् मा च रीरिषत्। आवसै आ गृहेभ्यः स्वस्त्या विमोचनात् सुखमागच्छतु॥२०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथाऽन्नादीनि वस्तूनि सर्वेषां रक्षकाणि स्युस्तथा राजपुरुषाश्च सर्वेषां पालकाः सन्तु न्यायं विहायाऽन्यायं कदाचिन्मा कुर्युः॥२०॥

पदार्थः-हे राजन्! जैसे (**अयम्**) यह (**वनस्पतिः**) वन का पालन करनेवाला (**अस्मान्**) हम

लोगों का त्याग नहीं करता है, वैसे हम लोगों का **(मा)** मत **(हा:)** त्याग करिये **(च)** और जैसे सूर्य्य हम लोगों की हिंसा नहीं करता है, वैसे ही आप **(मा, च)** नहीं **(रीरिषत्)** नाश कीजिये। और **(आ, अवसै)** अच्छे निश्चय के लिये **(आ, गृहेभ्य:)** सब प्रकार गृहों से **(स्वस्ति)** सुख हो **(आ, विमोचनात्)** त्याग तक सुख प्राप्त होवे॥२०॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे अन्न आदि वस्तु सबके रक्षक होवें, वैसे राजा के पुरुष सबके पालनकर्त्ता हों और न्याय का त्याग करके अन्याय कभी न करें॥२०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रो॒तिभि॑र्बहु॒लाभि॑र्नो अ॒द्य या॑च्छ्रे॒ष्ठाभि॑र्मघवञ्छूर जिन्व।

यो नो॒ द्वेष्ट्यध॑र॒: सस्प॑दीष्ट यमु॑ द्वि॒ष्मस्तमु॑ प्रा॒णो ज॑हातु॥२१॥

इन्द्र॑। ऊ॒तिऽभि॑:। ब॒हु॒लाभि॑:। न॒:। अ॒द्य। या॒त्ऽश्रे॒ष्ठाभि॑:। म॒घ॒ऽव॒न्। शू॒र॒। जि॒न्व॒। य:। न॒:। द्वेष्टि॑। अध॑र:। स:। प॒दी॒ष्ट॒। यम्। ऊ॒म् इति॑। द्वि॒ष्म:। तम्। ऊ॒म् इति॑। प्रा॒ण:। ज॒हा॒तु॒॥२१॥

पदार्थ:-**(इन्द्र)** परमैश्वर्य्ययुक्त **(ऊतिभि:)** रक्षादिभि: **(बहुलाभि:)** **(न:)** अस्मान् **(अद्य)** **(याच्छ्रेष्ठाभि:)** शत्रुवधकर्म्मण्युत्तमाभि: **(मघवन्)** बहुपूजितधनयुक्त **(शूर)** दुष्टानां हिंसक **(जिन्व)** प्रसादय **(य:)** **(न:)** अस्मान् **(द्वेष्टि)** वैरयति **(अधर:)** नीच: **(स:)** **(पदीष्ट)** प्राप्नुयात् **(यम्)** **(उ)** **(द्विष्म:)** **(तम्)** **(उ)** **(प्राण:)** **(जहातु)** त्यजतु॥२१॥

अन्वय:-हे इन्द्र! योऽधरो नो द्वेष्टि स दु:खं पदीष्ट यमु वयं द्विष्मस्तमु प्राणो जहातु। हे मघवन्त्शूर! भवान् बहुलाभि: याच्छ्रेऽष्ठाभिर्नोऽस्मान् अद्य जिन्व॥२१॥

भावार्थ:-विदुषां दुष्टकर्मैव द्वेष्यो धर्मात्मा सत्कर्त्तव्यो भवति यावन्ति प्रजारक्षायां दुष्टनिवारणे च साधनान्यपेक्षितानि स्युस्तावन्त्यादाय श्रेष्ठपालनं दुष्टनिवारणं राजादय: सततं कुर्यु:॥२१॥

पदार्थ:-हे **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य से युक्त! **(य:)** जो **(अधर:)** नीच **(न:)** हम लोगों से **(द्वेष्टि)** वैर करता है **(स:)** वह दु:ख को **(पदीष्ट)** प्राप्त होवे **(यम्)** जिसको **(उ)** और हम लोग **(द्विष्म:)** द्वेष करें **(तम्)** उसको **(उ)** भी **(प्राण:)** हृदयस्थ वायु **(जहातु)** त्याग करे। और हे **(मघवन्)** श्रेष्ठ धन से

युक्त **(शूर)** दुष्टों के नाशकर्त्ता! आप **(बहुलाभिः)** बहुत **(श्रेष्ठाभिः)**[१४] उत्तम **(ऊतिभिः)** रक्षा आदिकों से **(नः)** हम लोगों को **(यात्)** प्राप्त होवे **(अप, जिन्व)** प्रसन्न कीजिये॥२१॥

भावार्थः-विद्वान् लोगों को दुष्ट कर्म करनेवाला पुरुष द्वेष करने योग्य और धर्मात्मा सत्कार करने योग्य है। जितने प्रजा की रक्षा करने और दुष्ट पुरुषों के निवारण करने में साधन अपेक्षित होवें, उनको ग्रहण करके श्रेष्ठ पुरुषों का पालन और दुष्टों का निवारण राजा आदि निरन्तर करें॥२१॥

अथ राजविषयमाह॥

अब राजा के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

परशुं चिद्वि तपति शिम्बलं चिद्वि वृश्चति।

उखा चिदिन्द्र येषन्ती प्रयस्ता फेनमस्यति॥२२॥

परशुम्। चित्। वि। तपति। शिम्बलम्। चित्। वि। वृश्चति। उखा। चित्। इन्द्र। येषन्ती। प्रऽयस्ता। फेनम्। अस्यति॥२२॥

पदार्थः-**(परशुम्)** कुठारम् **(चित्)** इव **(वि)** **(तपति)** विशेषेण सन्तापयति **(शिम्बलम्)** शल्मलीपुष्पं पत्रं वा **(चित्)** इव **(वि)** विशेषेण **(वृश्चति)** छिनत्ति **(उखा)** पाकस्थाली **(चित्)** इव **(इन्द्र)** परमैश्वर्ययुक्त **(येषन्ती)** स्रवन्ती **(प्रयस्ता)** प्रेरिता **(फेनम्)** **(अस्यति)** प्रक्षिपति॥२२॥

अन्वयः-हे इन्द्र! या ते सेना अयस्कारः परशुं चिच्छत्रून् वि तपति शिम्बलं चिद्वि वृश्चति प्रयस्ता येषन्त्युखा चित् फेनमिव शत्रूनस्यति सा त्वया सदैव सत्कर्त्तव्या॥२२॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये राजानः प्रशस्तां वीरसेनां रक्षन्ति त एव विजयं प्राप्य विराजन्ते॥२२॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य से युक्त! जो आपकी सेना लोहार **(परशुम्)** परशारूप शस्त्र को **(चित्)** जैसे वैसे शत्रुओं को **(वि, तपति)** विशेष करके सन्ताप देती है **(शिम्बलम्)** शेमर [सेमल] वृक्ष के पुष्प वा पत्र को **(चित्)** जैसे **(वि, वृश्चति)** विशेष करके काटता है **(प्रयस्ता)** प्रेरित हुई **(येषन्ती)** वहता तथा प्राप्त हुआ **(उखा)** पाक करने का पात्र **(चित्)** जैसे **(फेनम्)** फेने को वैसे शत्रुओं को **(अस्यति)** फेंकती है, उसका [=वह] आपसे सदा सत्कार करने योग्य है॥२२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो राजा लोग श्रेष्ठ वीरों की सेना की रक्षा करते हैं, वे ही

---

१४. **(यान्छ्रैष्ठाभिः)** शत्रु का वध करने में उत्तम **(ऊतिभिः)** रक्षा आदिकों से **(नः)** हम लोगों को **(अप, जिन्व)** प्रसन्न कीजिये॥ सं०

विजय को प्राप्त होकर शोभित होते हैं॥२२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

न सायकस्य चिकिते जनासो लोधं नयन्ति पशु मन्यमानाः।
नावाजिनं वाजिना हासयन्ति न गर्दभं पुरो अश्वान्नयन्ति॥२३॥

न। सायकस्य। चिकिते। जनासः। लोधम्। नयन्ति। पशु। मन्यमानाः। न। अवाजिनम्। वाजिना। हासयन्ति। न। गर्दभम्। पुरः। अश्वात्। नयन्ति॥२३॥

पदार्थः-(**न**) निषेधे (**सायकस्य**) शस्त्रसमूहस्य (**चिकिते**) जानातु (**जनासः**) वीराः (**लोधम्**) लोब्धारम्। अत्र वर्णव्यत्ययेन भस्य धः। (**नयन्ति**) प्राप्नुवन्ति (**पशु**) पशुमिव। अत्र **सुपां सुलुगिति** विभक्तेर्लुक्। (**मन्यमानाः**) विजानन्तः (**न**) निषेधे (**अवाजिनम्**) अविद्यमाना वाजिनो यत्र संग्रामे तम् (**वाजिना**) अश्वेन (**हासयन्ति**) (**न**) (**गर्दभम्**) लम्बकर्णं खरम् (**पुरः**) (**अश्वात्**) (**नयन्ति**)॥२३॥

अन्वयः-हे राजन्! ये ते जनासो लोधं न नयन्ति पशु मन्यमाना वाजिना अवाजिनं न हासयन्ति। अश्वात्पुरो गर्द्दभं न नयन्ति ता सायकस्य दानेन युक्तान् कर्त्तुं भवान् चिकिते॥२३॥

भावार्थः-त एव राज्ञो वीरा वराः स्युर्ये युद्धविद्यां विज्ञाय सेनाङ्गानि यथावद्रक्षितुं संस्थापयितुं योधयितुं जानन्ति॥२३॥

पदार्थः-हे राजन्! जो वे (**जनासः**) वीरपुरुष (**लोधम्**) प्राप्त होनेवाले को (**न**) नहीं (**नयन्ति**) प्राप्त होते हैं (**पशु**) पशु के सदृश (**मन्यमानाः**) जानते हुए (**वाजिना**) घोड़े से (**अवाजिनम्**) घोड़े जिसमें नहीं ऐसे संग्राम को (**न**) नहीं (**हासयन्ति**) हराते हैं और (**अश्वात्**) घोड़े से (**पुरः**) प्रथम (**गर्दभम्**) लम्बे कानवाले गदहे को (**न**) नहीं (**नयन्ति**) प्राप्त कराते हैं, उनको (**सायकस्य**) शस्त्रसमूह के दान से युक्त करने को आप (**चिकिते**) जानिये॥२३॥

भावार्थः-वे ही राजा के वीर श्रेष्ठ होवें कि जो युद्धविद्या को जान के सेनाओं के अङ्गों की यथावत् रक्षा, स्थिर करने और युद्ध कराने को जानते हैं॥२३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इम इन्द्र भरतस्य पुत्रा अपपित्वं चिकितुर्न प्रपित्वम्।
हिन्वन्त्यश्वमरणं न नित्यं ज्यावाजं परि णयन्त्याजौ॥२४॥२३॥४॥

इमे। इन्द्र। भरतस्य। पुत्राः। अपऽपित्वम्। चिकितुः। न। प्रऽपित्वम्। हिन्वन्ति। अश्वम्। अरणम्। न। नित्यम्। ज्याऽवाजम्। परि। नयन्ति। आजौ॥ २४॥

पदार्थः-(**इमे**) (**इन्द्र**) परमैश्वर्ययोजक (**भरतस्य**) सेनाया धर्त्तू रक्षकस्य (**पुत्राः**) सुशिक्षितास्तनया इव भृत्याः (**अपपित्वम्**) अपचयम् (**चिकितुः**) विज्ञातुः (**न**) इव (**प्रपित्वम्**) प्रकृष्टं प्रापणम् (**हिन्वन्ति**) वर्धयन्ति (**अश्वम्**) तुरङ्गम् (**अरणम्**) प्रेरितम् (**न**) इव (**नित्यम्**) (**ज्यावाजम्**) ज्यायाः शब्दम् (**परि**) सर्वतः (**नयन्ति**) (**आजौ**) संग्रामे॥ २४॥

अन्वयः-हे इन्द्र! तव सेनाया भरतस्य चिकितुर्न य इमे पुत्रा इवाऽपपित्वं प्रपित्वमश्वमरणं न हिन्वन्त्याजौ ज्यावाजं नित्यं परि णयन्ति ताँश्च त्वं स्वात्मवद्रक्ष॥ २४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। ये राजादयः स्वह्रासवृद्धी जानन्ति सेनास्थान् साध्यक्षान् भृत्यान् युद्धकर्मणि कुशलाननुरक्तान् पुत्रवत्पालयन्ति तेषां सदैव वृद्धिर्भवति पराजयः कुतो भवेदिति॥ २४॥

अत्र विद्युन्मेघविद्वद्राजप्रजासेनाकर्मवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति त्रिपञ्चाशत्तमं सूक्तं त्रयोविंशो वर्गस्तृतीये मण्डले चतुर्थोऽनुवाकश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य से युक्त करनेवाले! आपकी सेना के (**भरतस्य**) रक्षा करने और (**चिकितुः**) जाननेवाले के (**न**) तुल्य [जो] (**इमे**) ये मेरे (**पुत्राः**) उत्तम प्रकार शिक्षा को प्राप्त सन्तानों के सदृश सेवक लोग (**अपपित्वम्**) नाश और (**प्रपित्वम्**) उत्तम प्रकार प्राप्त कराने को (**अश्वम्**) घोड़े को (**अरणम्**) प्रेरणा किये हुए के (**न**) तुल्य (**हिन्वन्ति**) बढ़ाते हैं और (**आजौ**) संग्राम में (**ज्यावाजम्**) धनुष् की तांत के शब्द को (**नित्यम्**) नित्य (**परि**) सब प्रकार (**नयन्ति**) प्राप्त करते हैं, उसकी और उनकी आप अपने आत्मा के सदृश रक्षा करो॥ २४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो राजा आदि अपने नाश और वृद्धि को जानते हैं, सेना में वर्त्तमान साध्यक्ष सेवकों को युद्ध कर्म में चतुर और अनुरक्तों का पुत्र के सदृश पालन करते हैं, उनकी सदा ही वृद्धि होती है, पराजय कहां से होवे॥ २४॥

इस सूक्त में बिजुली, मेघ, विद्वान्, राजा, प्रजा और सेना के कर्मों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह तिरेपनवां सूक्त और तेईसवां वर्ग तीसरे मण्डल में चौथा अनुवाक् समाप्त हुआ॥

अथ द्वाविंशत्यृचस्य चतुःपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य प्रजापतिर्वैश्वामित्रो वाच्यो वा ऋषिः। विश्वेदेवा देवताः। १ निचृत्पङ्क्तिः। ९ भुरिक् पङ्क्तिः। १२ स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। २, ३, ६, ८, १०, ११, १३, १४ त्रिष्टुप्। ४, ७, १५, १६, १८, २०, २१ निचृत् त्रिष्टुप्। ५ स्वराट् त्रिष्टुप्। १७ भुरिक् त्रिष्टुप्। १९, २२ विराट् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ राजविषयमाह॥

अब बाईस ऋचावाले चौवनवें सूक्त का प्रारम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में राजा के विषय को कहते हैं॥

इमं महे विदथ्याय शूषं शश्वत्कृत्व ईड्याय प्र जभ्रुः।
शृणोतु नो दम्येभिरनीकैः शृणोत्वग्निर्दिव्यैरजस्रः॥ १॥

इमम्। महे। विदथ्याय। शूषम्। शश्वत्। कृत्वः। ईड्याय। प्र। जभ्रुः। शृणोतु। नः। दम्येभिः। अनीकैः। शृणोतु। अग्निः। दिव्यैः। अजस्रः॥ १॥

पदार्थः-(**इमम्**) (**महे**) महते (**विदथ्याय**) विदथेषु संग्रामेषु भवाय (**शूषम्**) बलम् (**शश्वत्**) निरन्तरम् (**कृत्वः**) बहवः कर्त्तारो विद्यन्ते यस्य तत्सम्बुद्धौ (**ईड्याय**) स्तोतुमर्हाय (**प्र**) (**जभ्रुः**) धरन्तु (**शृणोतु**) (**नः**) अस्माकम् (**दम्येभिः**) दातुं योग्यैः (**अनीकैः**) सैन्यैः (**शृणोतु**) (**अग्निः**) विद्वान् (**दिव्यैः**) (**अजस्रः**) निरन्तरः॥१॥

अन्वयः-हे कृत्वो! भवान्महे ईड्याय विदथ्यायेमं शश्वच्छूषं प्र जभ्रुः तान्नोऽस्मान् भवान् दम्येभिरनीकैः सह शृणोतु। अजस्रोऽग्निर्भवान् दिव्यैः कर्मभिः सहाऽस्माञ्छृणोतु॥१॥

भावार्थः-ये युद्धाय पूर्णां विद्यां महद्बलं धरेयुस्तान् राजानः श्रुत्वा सततं सत्कुर्युस्तत्कृत्यं सततमुन्नयेयुर्यतो हृष्टाः सन्तस्ते विजयेन राजानं सदाऽलङ्कुर्युः॥१॥

पदार्थः-हे (**कृत्वः**) बहुत कार्य करनेवाले! जिसके वह आप (**महे**) बड़े (**ईड्याय**) स्तुति करने के योग्य (**विदथ्याय**) संग्राम में उत्पन्न हुए के लिये (**इमम्**) इस (**शश्वत्**) निरन्तर (**शूषम्**) बल को (**प्र, जभ्रुः**) अच्छे प्रकार धारण करते हैं, उन (**नः**) हम लोगों को आप (**दम्येभिः**) देने के योग्य (**अनीकैः**) सेना में वर्त्तमान जनों के साथ (**शृणोतु**) सुनिये (**अजस्रः**) निरन्तर वर्त्तमान (**अग्निः**) विद्वान् आप (**दिव्यैः**) श्रेष्ठ कर्मों के साथ हम लोगों का (**शृणोतु**) श्रवण करो॥१॥

भावार्थः-जो लोग युद्ध के लिये पूर्ण विद्या और बड़े बल को धारण करें, उनको राजजन सुनके निरन्तर सत्कार करें और उनके कृत्य की निरन्तर उन्नति करें, जिससे कि प्रसन्न हुए वे विजय से राजा को सदा शोभित करें॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

महिं मुहे दिवे अर्चा पृथिव्यै कामों म इच्छञ्चरति प्रजानन्।
ययोंर्ह स्तोमें विदथेषु देवाः संपर्यवों मादयन्ते सचायोः॥ २॥

महिं। मुहे। दिवे। अर्च। पृथिव्यै। कामः। मे। इच्छन्। चरति। प्रऽजानन्। ययोः। ह। स्तोमें। विदथेषु। देवाः। सपुर्यवः। मादयन्ते। सचा। आयोः॥ २॥

पदार्थः-(**महि**) महान् (**महे**) महते (**दिवे**) प्रकाशमानाय (**अर्च**) सत्कुरु। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**पृथिव्यै**) भूमिराज्यप्राप्तये (**कामः**) अभिलाषा (**मे**) मम (**इच्छन्**) (**चरति**) गच्छति (**प्रजानन्**) विदन् सन् (**ययोः**) विद्याराज्ययोः (**ह**) (**स्तोमे**) प्रशंसिते विजये (**विदथेषु**) संग्रामेषु (**देवाः**) विद्वांसः (**सपर्यवः**) सेवकाः (**मादयन्ते**) हर्षयन्ति (**सचा**) सम्बन्धेन (**आयोः**) जीवस्य॥ २॥

अन्वयः-यो युद्धविद्यां प्रजानन् विजयन् राज्यमिच्छन्महे दिवे पृथिव्यै चरति तं यो मे महि कामोऽस्ति तमलङ्कर्त्तुमिच्छन् विजयते तमर्च। ययोः स्तोमे विदथेषु सपर्यवो देवा हाऽऽयोः सचा मादयन्ते तौ युवां तानानन्दयेतम्॥ २॥

भावार्थः-ये विद्याराज्यवृद्धिकामा दीर्घायुषो युद्धविद्याकुशला राजामात्याञ्छ्रीविजयाभ्यां सत्कुर्य्युस्तान् राजाऽमात्या अपि सदैव सुखयन्तु॥ २॥

पदार्थः-जो युद्धविद्या को (**प्रजानन्**) जानता और विजय करता और राज्य की (**इच्छन्**) इच्छा करता हुआ (**महे**) बड़े (**दिवे**) प्रकाशमान के और (**पृथिव्यै**) भूमि के राज्य की प्राप्ति के लिये (**चरति**) चलता है, उसको जो (**मे**) मेरी (**महि**) बड़ी (**कामः**) अभिलाषा है, उसको शोभित करने की इच्छा करता हुआ विजय को प्राप्त होता है, उसको (**अर्च**) सत्कार करो। और (**ययोः**) जिन विद्या और राज्य के (**स्तोमे**) प्रशंसा करने योग्य विजय और (**विदथेषु**) संग्रामों में (**सपर्यवः**) सेवक (**देवाः**) विद्वान् लोग (**ह**) निश्चय (**आयोः**) जीव के (**सचा**) सम्बन्ध से (**मादयन्ते**) प्रसन्न करते हैं, वे दोनों आप उन लोगों को आनन्द दीजिये॥ २॥

भावार्थः-जो विद्या और राज्य की वृद्धि की कामना करने और अधिक अवस्थावाले युद्धविद्या में निपुण जन, राजा और मन्त्रियों का लक्ष्मी और विजय से सत्कार करें, उन जनों को राजा और मन्त्री भी सदा ही सुखित करें॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

युवोर्ऋतं रोदसी सत्यमस्तु महे षु णः सुविताय प्र भूतम्।
इदं दिवे नमो अग्ने पृथिव्यै सपर्यामि प्रयसा यामि रत्नम्॥ ३॥

युवोः। ऋतम्। रोदसी इति। सत्यम्। अस्तु। महे। सु। नः। सुविताय। प्र। भूतम्॥ इदम्। दिवे। नमः। अग्ने। पृथिव्यै। सपर्यामि। प्रयसा। यामि। रत्नम्॥३॥

पदार्थः-(**युवोः**) स्वामिसेवकयोः (**ऋतम्**) प्राप्तुं योग्यं कारणम् (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**सत्यम्**) अव्यभिचारि (**अस्तु**) (**महे**) महते (**सु**) (**नः**) (**सुविताय**) ऐश्वर्याय (**प्र**) (**भूतम्**) पुष्कलम् (**इदम्**) (**दिवे**) प्रकाशमानाय (**नमः**) अन्नादिकम् (**अग्ने**) विद्वन्! (**पृथिव्यै**) भूम्यै (**सपर्यामि**) सेवामि (**प्रयसा**) प्रयत्नेन (**यामि**) प्राप्नोमि (**रत्नम्**) सुवर्णहीरकादिकम्॥३॥

अन्वयः-हे अग्ने राजन्! युवोर्युवयोः स्वामिसेवकयोः रोदसी इव महे सुवितायेदं प्र भूतमृतं सत्यं रत्नं नः स्वस्तु। यथाऽहं पृथिव्यै दिवे नमः सपर्यामि प्रयसा विजयं यामि तथा युवां वर्त्तेयाथाम्॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा भूमिसूर्यौ सर्वं जगद्व्यवहारयित्वा श्रीमदन्नवच्च करोति तथैव राजादिभिः पुरुषैः प्रयत्नेन सुकर्माणि सेवित्वा पुष्कलमैश्वर्यं प्राप्तव्यम्॥३॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) विद्वन् पुरुष राजन्! (**युवोः**) आप दोनों स्वामी-सेवक के (**रोदसी**) अन्तरिक्ष और पृथिवी के सदृश (**महे**) बड़े (**सुविताय**) ऐश्वर्य के लिये (**इदम्**) यह (**प्र, भूतम्**) अत्यन्त (**ऋतम्**) प्राप्त होने योग्य कारण (**सत्यम्**) व्यभिचाररहित अर्थात् नहीं विपरीत होनेवाला (**रत्नम्**) सुवर्ण और हीरा आदि (**नः**) हम लोगों का (**सु, अस्तु**) श्रेष्ठ हो और जैसे मैं (**पृथिव्यै**) भूमि और (**दिवे**) प्रकाशमान के लिये (**नमः**) अन्न आदि का (**सपर्यामि**) सेवन करता और (**प्रयसा**) प्रयत्न से विजय को (**यामि**) प्राप्त होता हूँ, वैसे आप दोनों वर्त्ताव कीजिये॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे भूमि और सूर्य सम्पूर्ण संसार का व्यवहार चलाय के लक्ष्मी और अन्न से युक्त करता है, वैसे ही राजा आदि पुरुषों को चाहिये कि प्रयत्न से उत्तम कर्मों का सेवन करके अत्यन्त ऐश्वर्य को प्राप्त होवें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उतो हि वां पूर्व्या आविविद्र ऋतावरी रोदसी सत्यवाचः।
नरश्चिद्वां समिथे शूरसातौ ववन्दिरे पृथिवि वेविदानाः॥४॥

उतो इति। हि। वाम्। पूर्व्याः। आऽविविद्रे। ऋतवरी इत्यृतऽवरी। रोदसी इति। सत्यऽवाचः। नरः। चित्। वाम्। सम्ऽइथे। शूरऽसातौ। ववन्दिरे। पृथिवि। वेविदानाः॥४॥

पदार्थः-(**उतो**) अपि (**हि**) (**वाम्**) युवाम् (**पूर्व्याः**) पूर्वेषु कुशलाः (**आविविद्रे**) समन्ताल्लभन्ते (**ऋतावरी**) सत्यप्रापिकोषा (**रोदसी**) द्यावापृथिव्याविव (**सत्यवाचः**) सत्या यथार्था वाग्येषान्ते (**नरः**) नायकाः (**चित्**) इव (**वाम्**) युवाम् (**समिथे**) संग्रामे (**शूरसातौ**) शूराणां विभागे (**ववन्दिरे**) आनन्दन्तु (**पृथिवि**) भूमिवत्क्षमाशीले (**वेविदानाः**) भृशं प्रतिजानन्तः॥४॥

अन्वयः-हे पृथिविवद्वर्त्तमाने राज्ञि! ये सत्यवाचो वेविदानास्त्वां ववन्दिरे त्वां तव पतिं च वां शूरसातौ समिथे नरश्चिदिव ववन्दिरे उतो ऋतावरी रोदसीव पूर्व्या वां ह्या विविद्रे सा त्वं तांस्तञ्च सत्कुरु॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। त एव राज्यं कर्त्तुमर्हन्ति ये सत्यमानाः सत्याचाराः सत्यवाचो जितेन्द्रिया विद्वांसः स्युस्ता एव राज्ञो भवितुमर्हन्ति याः पतिसदृश्यः स्युः॥४॥

पदार्थः-हे (**पृथिवी**) भूमि के सदृश क्षमायुक्त राज्ञि! जो (**सत्यवाचः**) यथार्थ वाणी वाले (**वेविदानाः**) अत्यन्त जानते हुए आपको (**ववन्दिरे**) प्रणाम करें और आप आपके स्वामी को (**वाम्**) आप दोनों (**शूरसातौ**) शूरवीर पुरुषों के विभाग और (**समिथे**) संग्राम में (**नरः**) अग्रणी पुरुषों के (**चित्**) सदृश प्रणाम करो और (**उतो**) भी (**ऋतावरी**) सत्य को प्राप्त करानेवाली स्त्री (**रोदसी**) अन्तरिक्ष और पृथिवी के सदृश (**पूर्व्याः**) प्राचीन जनों में चतुर पुरुष आप दोनों को (**हि**) और (**आ, विविद्रे**) सब प्रकार प्राप्त होते हैं, वह स्त्री और आप उनका और उसका सत्कार करो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। वे ही लोग राज्य करने के योग्य हैं कि जो सत्य मानने, सत्य आचरण करने, सत्य वाणी बोलने और इन्द्रियों के जीतनेवाले विद्वान् जन होवें और वे ही रानी योग्य स्त्रियाँ हैं कि जो उक्त प्रकार के पति के सदृश होवें॥४॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

को अद्धा वेद क इह प्र वोचद् देवाँ अच्छा पथ्या३ का समेति।

ददृश्र एषामवमा सदांसि परेषु या गुह्येषु व्रतेषु॥५॥२४॥

कः। अद्धा। वेद। कः। इह। प्र। वोचत्। देवान्। अच्छ। पथ्या। का। सम्। एति। ददृश्रे। एषाम्। अवमा। सदांसि। परेषु। या। गुह्येषु। व्रतेषु॥५॥

पदार्थः-(**कः**) (**अद्धा**) साक्षात् (**वेद**) जानीयात् (**कः**) (**इह**) अस्मिन् विज्ञाने (**प्र**) (**वोचत्**) उपदिशेत् (**देवान्**) विदुषः (**अच्छ**) सम्यक्। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**पथ्या**) पथोनपेता (**का**) (**सम्**) (**एति**) प्राप्नोति (**ददृश्रे**) पश्येयुः (**एषाम्**) (**अवमा**) अर्वाचीनानि (**सदांसि**) वस्तूनि (**परेषु**) सूक्ष्मेषु (**या**) यानि (**गुह्येषु**) गुप्तेषु रक्षितव्येषु (**व्रतेषु**) सत्यभाषणादिनियमेषु॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! इह परमात्मानं धर्मञ्चाद्धा को वेद को देवानच्छ प्र वोचत् का पथ्या देवान्त्समेति य एषां परेष्ववमा सदांसि गुह्येषु व्रतेषु या ज्ञानसत्यभाषणादीनि ददृश्रे ते पूर्वोक्तं सर्वं विजानीयुः॥५॥

भावार्थः-अस्मिञ्जगति विरल एव मनुष्यो भवति यः परमात्मानं विदित्वा तदाज्ञानुकूलमाचरणं स्वीकृत्य सत्यमुपदिशति कश्चिदेव विद्वान् योऽत्र पराऽवरज्ञः स्यात्॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(इह)** इस विज्ञान में परमात्मा और धर्म को **(अद्धा)** साक्षात् **(कः)** कौन **(वेद)** जाने और **(कः)** कौन पुरुष **(देवान्)** विद्वानों को **(अच्छ)** उत्तम प्रकार **(प्र, वोचत्)** उपदेश देवे **(का)** कौन **(पथ्या)** उत्तम मार्ग से युक्त **(देवान्)** विद्वानों को **(सम्, एति)** प्राप्त होती है और **(एषाम्)** इन विद्वानों के **(परेषु)** सूक्ष्मों को **(अवमा)** नीचे भाग में वर्त्तमान **(सदांसि)** वस्तुएँ **(गुह्येषु)** गुप्त अर्थात् रक्षा करने योग्य **(व्रतेषु)** सत्यभाषण आदि नियमों में **(या)** जो ज्ञान और सत्यभाषण आदिकों को **(ददृश्रे)** देखें, वे पूर्वोक्त सम्पूर्ण को जानें॥५॥

भावार्थः-इस संसार में विरला ही ऐसा मनुष्य होता है कि जो परमात्मा को जान और उसकी आज्ञा के अनुकूल आचरण स्वीकार करके सत्य का उपदेश देता है, ऐसा कोई विद्वान् जो इस संसार में इस लोक और परलोक का ज्ञाता होवे॥५॥

अथ ईश्वरविषयमाह॥

अब ईश्वर के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

कविर्नृचक्षा अभि षीमचष्ट ऋतस्य योना विघृते मदन्ती।

नाना चक्राते सदनं यथा वेः समानेन क्रतुना संविदाने॥६॥

कविः। नृऽचक्षाः। अभि। सीम्। अचष्ट। ऋतस्य। योना। विघृते इति विऽघृते। मदन्ती इति। नाना। चक्राते इति। सदनम्। यथा। वेः। समानेन। क्रतुना। संविदाने इति सम्ऽविदाने॥६॥

पदार्थः-**(कविः)** सर्वज्ञः **(नृचक्षाः)** नृणां द्रष्टा **(अभि)** **(सीम्)** सर्वतः **(अचष्ट)** प्रकाशितवान् **(ऋतस्य)** सत्यस्य कारणस्य **(योना)** योनौ गृहे **(विघृते)** विशेषेण प्रकाशिते **(मदन्ती)** आनन्दन्त्यौ **(नाना)** अनेकविधम् **(चक्राते)** कुरुतः **(सदनम्)** स्थानम् **(यथा)** **(वेः)** पक्षिणः **(समानेन)** तुल्येन **(क्रतुना)** कर्मणा **(संविदाने)** कृतप्रतिज्ञ इव॥६॥

अन्वयः-हे स्त्रीपुरुषौ! यथा कविर्नृचक्षाः परमेश्वर ऋतस्य योना विघृते नाना सदनं चक्राते मदन्ती वेः समानेन क्रतुना संविदाने स्त्रियाविव वर्त्तमाने द्यावापृथिव्यौ सीमभ्यचष्ट तं सर्व उपासीरन्॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येन परमेश्वरेणाऽनेकविधाः प्रकाशाऽप्रकाशयुक्ता लोका निर्मिताः स एव सर्वज्ञः सर्वद्रष्टा परमात्मा सततमुपासनीयः॥६॥

पदार्थः-हे स्त्री और पुरुष! **(यथा)** जैसे **(कविः)** सम्पूर्ण विषयों के जानने **(नृचक्षाः)** मनुष्यों के देखनेवाले परमेश्वर **(ऋतस्य)** सत्य कारण के **(योना)** गृह में **(विघृते)** विशेष करके प्रकाशित में **(नाना)** अनेक प्रकार के **(सदनम्)** स्थान को **(चक्राते)** करते हैं **(मदन्ती)** आनन्द करती हुई **(वेः)** पक्षी के **(समानेन)** तुल्य **(क्रतुना)** कर्म से **(संविदाने)** की है प्रतिज्ञा जिन्होंने उन स्त्रियों के सदृश वर्त्तमान अन्तरिक्ष और पृथिवी को **(सीम्)** सब ओर **(अभि, अचष्ट)** प्रकाशित किया, उसकी सब लोग उपासना करें॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस परमेश्वर ने अनेक प्रकार के प्रकाश और अप्रकाश से युक्त लोक रचे, वही सबको जानने और सबको देखनेवाला परमात्मा निरन्तर उपासना करने योग्य है॥६॥

अथ शिष्यविषयमाह॥

अब शिष्य के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

समान्या वियुते दूरे अन्ते ध्रुवे पदे तस्थतुर्जागरूके।
उत स्वसारा युवती भवन्ती आदु ब्रुवाते मिथुनानि नाम॥७॥

समान्या। वियुते इति विऽयुते। दूरेअन्ते इति दूरेऽअन्ते। ध्रुवे। पदे। तस्थतुः। जागरूके इति॥ उत। स्वसारा। युवती इति। भवन्ती इति। आत्। ऊम् इति। ब्रुवाते इति। मिथुनानि। नाम॥७॥

पदार्थः-**(समान्या)** समानस्वभावे **(वियुते)** मिश्रिताऽमिश्रिते **(दूरेअन्ते)** विप्रकृष्टे समीपे च **(ध्रुवे)** दृढे **(पदे)** प्रापणीये **(तस्थतुः)** तिष्ठतः **(जागरूके)** प्रसिद्धे **(उत)** अपि **(स्वसारा)** भगिन्यौ **(युवती)** प्राप्तयौवनावस्थे **(भवन्ती)** वर्त्तमाने **(आत्)** आनन्तर्ये **(उ) (ब्रुवाते)** वदतः **(मिथुनानि)** युग्मानि **(नाम)** सञ्ज्ञा॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ये युवती स्वसारा भवन्ती मिथुनानि नाम ब्रुवाते इव समान्या वियुते दूरेअन्ते ध्रुवे पदे उतापि जागरूके द्यावापृथिव्यौ तस्थतुस्ते उ विदित्वादैश्वर्य्यं लब्धव्यम्॥७॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा प्रेमयुक्ता स्वसारोऽभीष्टानि वचनानि ब्रुवन्ते मिथुनानि वर्त्तन्ते तथैव दूरसमीपस्थाः प्रकाशाऽप्रकाशयुक्ता लोका अस्मिन् जगति वर्त्तन्ते॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(युवती)** यौवन अवस्था को प्राप्त हुई **(स्वसारा)** भगिनी **(भवन्ती)** वर्त्तमान **(मिथुनानि)** जोड़ों को **(नाम)** सञ्ज्ञा को **(ब्रुवाते)** कहती हैं **(समान्या)** तुल्य स्वभाववाली **(वियुते)** मिली और नहीं मिली हुई **(दूरेअन्ते)** दूर और समीप में **(ध्रुवे)** दृढ़ **(पदे)** प्राप्त होने योग्य **(उत)** भी **(जागरूके)** प्रसिद्ध अन्तरिक्ष और पृथिवी **(तस्थतुः)** स्थित हैं, उनको **(उ)** और जानने के

(आत्) अनन्तर ऐश्वर्य को प्राप्त होना चाहिये॥७॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे प्रेम से युक्त भगिनीजन मनोवाञ्छित वचनों को कहती हैं और जोड़े वर्त्तमान हैं, वैसे ही दूर और समीप में वर्त्तमान प्रकाश और अप्रकाश से युक्त लोक इस संसार में वर्त्तमान हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

विश्वेदेते जनिमा सं विविक्तो महो देवान् बिभ्रती न व्यथेते।
एजद् ध्रुवं पत्यते विश्वमेकं चरत् पतत्रि विषुणं वि जातम्॥८॥

विश्वा। इत्। एते इति। जनिम। सम्। विविक्तः। महः। देवान्। बिभ्रती इति। न। व्यथेते इति। एजत्। ध्रुवम्। पत्यते। विश्वम्। एकम्। चरत्। पतत्रि। विषुणम्। वि। जातम्॥८॥

पदार्थः-(**विश्वा**) सर्वाणि (**इत्**) एव (**एते**) द्यावापृथिव्यौ (**जनिमा**) जन्मानि (**सम्**) (**विविक्तः**) पृथक् कुर्वतः (**महः**) महतः (**देवान्**) दिव्यान् पदार्थान् (**बिभ्रती**) (**न**) निषेधे (**व्यथेते**) स्वस्वपरिधेरितस्ततो न चलतः (**एजत्**) चलत् (**ध्रुवम्**) अन्तरिक्षम् (**पत्यते**) पतिरिवाचरति (**विश्वम्**) सर्वं जगत् (**एकम्**) असहायम् (**चरत्**) प्राप्नुवत् (**पतत्रि**) पतनशीलम् (**विषुणम्**) विष्वग्गच्छति (**वि**) (**जातम्**) निष्पन्नम्॥८॥

अन्वयः-हे विद्वांस! य एते महो देवान् बिभ्रती विश्वा जनिमा सं विविक्तो न व्यथेते यत्रेदेव ध्रुवमेजदेकं विषुणं जातं पतत्रि चरद्विश्वं वि पत्यते ते यूयं विजानीत॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्या! इह पृथिवीसूर्य्यादिरूपाऽधिकरणेऽन्तरिक्षे च सर्वे पदार्था जीवाश्च वसन्ति जायन्ते म्रियन्ते नश्यन्तीति विदन्तु॥८॥

पदार्थः-हे विद्वानो! जो (**एते**) ये अन्तरिक्ष और पृथिवी (**महः**) बड़े अर्थात् श्रेष्ठ (**देवान्**) उत्तम पदार्थों को (**बिभ्रती**) धारण करती हुईं (**विश्वा**) सब (**जनिमा**) जन्मों को (**सम्, विविक्तः**) पृथक् करती हैं और (**न**) नहीं (**व्यथेते**) अपने परिधि अर्थात् मण्डल में इधर-उधर नहीं हिलते हैं और (**यत्र**) जिसमें (**इत्**) ही (**ध्रुवम्**) अन्तरिक्ष (**एजत्**) चलता हुआ (**एकम्**) सहायरहित अकेला (**विषुणम्**) नीचे को प्राप्त है (**जातम्**) उत्पन्न (**पतत्रि**) गिरनेवाला (**चरत्**) प्राप्त होता हुआ (**विश्वम्**) सम्पूर्ण संसार के (**वि, पत्यते**) स्वामी के सदृश वर्त्तमान उसको आप लोग जानें॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! इन पृथिवी, सूर्य्यरूप अधिकरण और अन्तरिक्ष में सम्पूर्ण पदार्थ वसते और उत्पन्न होते, मरते और नाश को प्राप्त होते हैं, ऐसा जानो॥८॥

अथ ईश्वरविषयमाह॥

अब ईश्वर के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सना॑ पु॒रा॒णमध्ये॑म्या॒रान्म॒हः पि॒तुर्ज॑नि॒तुर्जा॒मि तन्नः॑।
दे॒वासो॒ यत्र॑ पनि॒तार॑ ए॒वैरु॒रौ प॒थि व्यु॑ते त॒स्थुर॒न्तः॥ ९॥

सना॑। पु॒रा॒णम्। अधि॑। ए॒मि॒। आ॒रात्। म॒हः। पि॒तुः। ज॒नि॒तुः। जा॒मि। तत्। नः॒। दे॒वासः॑। यत्र॑। प॒नि॒तारः॑। ए॒वैः। उ॒रौ। प॒थि। विऽउ॑ते। त॒स्थुः। अ॒न्तरिति॑॥ ९॥

पदार्थः-(**सना**) सनातनम् (**पुराणम्**) पुरानवम् (**अधि**) (**एमि**) सर्वतः स्मरामि (**आरात्**) दूरात् समीपाद्वा (**महः**) महतः पूजनीयस्य (**पितुः**) पालकस्य (**जनितुः**) जनकस्य (**जामि**) जातम् (**तत्**) (**नः**) अस्मानस्माकं वा (**देवासः**) विद्वांसः (**यत्र**) (**पनितारः**) व्यवहर्त्तारः स्तावकाः (**एवैः**) प्रापकैः (**उरौ**) महति (**पथि**) मार्गे (**व्युते**) विगतावरणे प्रसिद्धे (**तस्थुः**) तिष्ठन्ति (**अन्तः**) मध्ये॥ ९॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यत्र पनितारो देवास एवैरुरौ व्युते पथि अन्तस्तस्थुस्तत्पितुर्जनितुर्महो जामि आरादनुविदितं भवतु तन्न आरात् सना पुराणमध्येमि तस्यान्तर्भवन्तोऽपि सन्ति॥ ९॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यत्र सर्वं जगत्तिष्ठति येन प्रोक्तेन मार्गेण गच्छन्ति तत्सर्वस्य पालकं जनितृ सर्वेभ्यो महदनादिभूतं ब्रह्मोपासनीयं यदि तज्जानीयात् तर्हि समीपस्थं न जानीयाच्चेदतिदूरस्थं भवति॥ ९॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यत्र**) जिसमें (**पनितारः**) व्यवहार करने अर्थात् स्तुति करनेवाले (**देवासः**) विद्वान् लोग (**एवैः**) प्राप्त करनेवालों से (**उरौ**) बड़े (**व्युते**) आवरण अर्थात् दूसरे करके ढांपने से रहित इस प्रकार प्रसिद्ध (**पथि**) मार्ग में (**अन्तः**) मध्य में (**तस्थुः**) वर्त्तमान हैं (**तत्**) वह (**पितुः**) पालन करने और (**जनितुः**) उत्पन्न करनेवाले (**महः**) श्रेष्ठ पूजा करने योग्य से (**जामि**) उत्पन्न हुआ (**आरात्**) दूर वा समीप से जाना जाय और वह (**नः**) हम लोगों के दूर वा समीप से (**सना**) प्राचीन काल से सिद्ध और (**पुराणम्**) प्रथम नवीन को (**अधि, एमि**) स्मरण करता हूँ, उसके मध्य में आप लोग भी हैं॥ ९॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिसमें सम्पूर्ण संसार स्थित है और जिसकी कही हुई मर्य्यादा से चलते हैं, वह सबका पालक, उत्पन्न करनेवाला, सब पदार्थों से बड़ा, अनादि से सिद्ध ब्रह्म उपासना करने योग्य है, जो उसको जाने तो समीप में वर्त्तमान और न जाने तो अत्यन्त दूर वर्त्तमान होता है॥ ९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इ॒मं स्तोमं॑ रोदसी॒ प्र ब्र॑वीम्यृदू॒दराः॑ शृणवन्नग्निजि॒ह्वाः।
मि॒त्रः स॒म्राजो॒ वरु॑णो॒ युवा॑न आदि॒त्यासः॑ क॒वयः॑ पप्रथा॒नाः॥ १०॥ २५॥

इमम्। स्तोमम्। रोदसी इति। प्र। ब्रवीमि। ऋदूदरा:। शृणवन्। अग्निऽजिह्वा:। मित्र:। सम्ऽराज:। वरुण:। युवान:। आदित्यास:। कवय:। पप्रथाना:॥१०॥

पदार्थ:-(**इमम्**) परमात्मानम् (**स्तोमम्**) प्रशंसनीयम् (**रोदसी**) द्यावापृथिव्याविव सकलविद्यावेद्यं प्रकाशकं सर्वस्य धर्त्तारम् (**प्र**) (**ब्रवीमि**) उपदिशामि (**ऋदूदरा:**) ऋत्सत्यमुदरे येषान्ते (**शृणवन्**) शृण्वन्तु (**अग्निजिह्वा:**) अग्निरिव प्रकाशमाना सत्योपदेशा जिह्वा येषान्ते (**मित्र:**) सर्वस्य सखा (**सम्राज:**) सम्यग्राजमाना: (**वरुण:**) श्रेष्ठ: (**युवान:**) प्राप्तयुवावस्था: (**आदित्यास:**) सूर्य इव पूर्णविद्याप्रकाशा: (**कवय:**) विक्रान्तप्रज्ञा मेधाविन: (**पप्रथाना:**) प्रख्याता:॥१०॥

अन्वय:-यमिमं स्तोमं रोदसी इव मित्रो वरुणोऽहं प्रब्रवीमि तमृदूदरा सम्राजोऽग्निजिह्वा युवान आदित्यास: कवय: पप्रथाना: शृणवन्॥१०॥

भावार्थ:-यथा चक्रवर्त्ती राजा स्वाज्ञया सर्वन्यायं प्रकाशितं करोति तथैवाऽऽप्ता विद्वांसोऽध्यापनोपदेशाभ्यां परमात्मानं तस्याज्ञां च प्रसिद्धां कुर्वन्ति। येऽष्टाचत्वारिंषद्वर्षपर्यन्तं ब्रह्मचर्यं कृत्वाऽखिलविद्या जायन्ते त एवैतद्वक्तुं श्रोतुं निश्चेतुमभ्यसितुं साक्षात् कर्त्तुं च शक्नुवन्ति॥१०॥

पदार्थ:-जिस (**इमम्**) इस परमेश्वर (**स्तोमम्**) प्रशंसा करने योग्य और (**रोदसी**) अन्तरिक्ष और पृथिवी के सदृश सम्पूर्ण विद्याओं से जानने योग्य प्रकाश और धारण करनेवाले का (**मित्र:**) सबका मित्र (**वरुण:**) श्रेष्ठ हम (**प्र, ब्रवीमि**) उपदेश देते हैं उसको (**ऋदूदरा:**) सत्य है हृदय में जिनके वे (**सम्राज:**) अच्छे प्रकार प्रकाशमान (**अग्निजिह्वा:**) अग्नि के सदृश प्रकाशमान सत्य के उपदेश देनेवाली जिह्वा हैं जिनकी वे (**युवान:**) युवा अवस्था को प्राप्त (**आदित्यास:**) सूर्य के सदृश पूर्ण विद्या से प्रकाशित (**कवय:**) तीव्र बुद्धि से युक्त (**पप्रथाना:**) प्रख्यात बुद्धिमान् लोग (**शृणवन्**) सुनो॥१०॥

भावार्थ:-जैसे चक्रवर्त्ती राजा अपनी आज्ञा से सम्पूर्ण न्याय को प्रकाशित करता है, वैसे ही यथार्थवक्ता विद्वान् लोग अध्यापन और उपदेश से परमेश्वर और उसकी आज्ञा को प्रसिद्ध करते हैं, और जो लोग अड़तालीस वर्ष पर्यन्त ब्रह्मचर्य करके पूर्णविद्या युक्त हैं वे ही इसके कहने, सुनने, निश्चय और अभ्यास करने और प्रत्यक्ष करने को समर्थ होते हैं॥१०॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

हिरण्यपाणि: सविता सुजिह्वस्त्रिरा दिवो विदथे पत्यमान:।
देवेषु च सवित: श्लोकमश्रेरादस्मभ्यमा सुव सर्वतातिम्॥११॥

हिरण्यऽपाणिः। सविता। सुऽजिह्वः। त्रिः। आ। दिवः। विदथे। पत्यमानः। देवेषु। च। सवितरिति। श्लोकम्। अश्रेः। आत्। अस्मभ्यम्। आ। सुव। सर्वऽतातिम्॥ ११॥

पदार्थः-(**हिरण्यपाणिः**) पाणिरिव हिरण्यं तेजो यस्य सः (**सविता**) सूर्य्यः (**सुजिह्वः**) शोभना जिह्वा यस्य सः (**त्रिः**) त्रिवारम् (**आ**) समन्तात् (**दिवः**) विद्युतादेः (**विदथे**) विज्ञाने (**पत्यमानः**) पतिरिवाचरन् (**देवेषु**) पृथिव्यादिषु (**च**) विद्वत्सु (**सवितः**) परमैश्वर्यप्रद (**श्लोकम्**) वाचम् (**अश्रेः**) आश्रय (**आत्**) आनन्तर्ये (**अस्मभ्यम्**) (**आ**) (**सुव**) जनय (**सर्वतातिम्**) सर्वमेव॥११॥

अन्वयः-हे सवितस्सुजिह्वः पत्यमानस्त्वं दिवो विदथे देवेषु हिरण्यपाणिः सवितेवाऽस्मभ्यं यं सर्वतातिं श्लोकमश्रेस्तं चादा त्रिरा सुव॥११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्य्यो लोकानामधिष्ठाता वर्त्तते तथैव विद्वान् सर्वेषामध्यक्षो भवेत्॥११॥

पदार्थः-हे (**सवितः**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य के दाता (**सुजिह्वः**) सुन्दर जिह्वायुक्त (**पत्यमानः**) पति के सदृश आचरण करते हुए! आप (**दिवः**) बिजुली आदि के (**विदथे**) विज्ञान और (**देवेषु**) पृथिवी आदिकों में (**हिरण्यपाणिः**) हस्त के सदृश तेज से युक्त (**सविता**) सूर्य्य के सदृश (**अस्मभ्यम्**) हम लोगों के लिये जिस (**सर्वतातिम्**) सम्पूर्ण ही (**श्लोकम्**) वाणी का (**अश्रेः**) आश्रय करिये उसको (**च**) और (**आत्**) अनन्तर (**आ**) सब ओर से (**त्रिः**) तीन वार (**आ, सुव**) उत्पन्न करो॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य लोकों का अधिष्ठाता है, वैसे ही विद्वान् सबका अध्यक्ष होवे॥११॥

अथ शिष्यविषयमाह॥

अब शिष्य के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सुकृत्सुपाणिः स्ववाँ ऋतावा देवस्त्वष्टावसे तानि नो धात्।
पूषण्वन्त ऋभवो मादयध्वमूर्ध्वग्रावाणो अध्वरमतष्ट॥ १२॥

सुऽकृत्। सुऽपाणिः। स्वऽवान्। ऋतऽवा। देवः। त्वष्टा। अवसे। तानि। नः। धात्। पूषण्ऽवन्तः। ऋभवः। मादयध्वम्। ऊर्ध्वऽग्रावाणः। अध्वरम्। अतष्ट॥ १२॥

पदार्थः-(**सुकृत्**) यः शोभनं धर्म्यं कर्म करोति (**सुपाणिः**) शोभनौ पाणी हस्तौ यस्य सः (**स्ववान्**) बहवः स्वे विद्यन्ते यस्य सः (**ऋतावा**) सत्यप्रकाशकः (**देवः**) विद्वान् (**त्वष्टा**) प्रकाशकः (**अवसे**) रक्षणाद्याय (**तानि**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**धात्**) दधातु (**पूषण्वन्तः**) बहवः पूषणो विद्यन्ते येषान्ते (**ऋभवः**) मेधाविनः (**मादयध्वम्**) आनन्दयत (**ऊर्ध्वग्रावाणः**) मेघाः (**अध्वरम्**) पालकं व्यवहारम् (**अतष्ट**) तनूकुरुत॥१२॥

अन्वयः-हे पूषण्वन्त ऋभवो! यूयं यथा सुकृत् सुपाणिः स्ववानृतावा त्वष्टा देवो नोऽवसे तानि धादूर्ध्वग्रावाण इवाऽध्वरमतष्ट तथाऽस्मान् मादयध्वम्॥१२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा धार्मिका विद्वांसो मेघा इव सर्वानानन्दयन्ति तथैव सर्वे विदुष आनन्दयन्तु॥१२॥

पदार्थः-हे **(पूषण्वन्तः)** बहुत पुष्टिकर्त्ता विद्यमान हैं जिनके वे **(ऋभवः)** बुद्धिमान्! आप लोग जैसे **(सुकृत्)** सुन्दर धर्मयुक्त कर्मकर्त्ता **(सुपाणिः)** सुन्दर हस्तयुक्त **(स्ववान्)** बहुत आत्मजन हैं जिसके वह **(ऋतावा)** सत्य का प्रकाश करनेवाला **(त्वष्टा)** प्रकाशकर्त्ता **(देवः)** विद्वान् **(नः)** हम लोगों को **(अवसे)** रक्षण आदि के लिए **(तानि)** उन अपेक्षित पदार्थों को **(धात्)** धारण करे और **([ऊर्ध्व]ग्रावाणः)** मेघों के सदृश **(अध्वरम्)** पालन करनेवाले व्यवहार को **(अतष्ट)** सूक्ष्म करता है, वैसे ही हम लोगों के लिए **(मादयध्वम्)** आनन्द दीजिए॥१२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे धार्मिक विद्वान् लोग मेघों के सदृश सबको आनन्द देते हैं, वैसे ही सब लोग विद्वानों को आनन्द देवें॥१२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

विद्युद्रथा मरुत ऋष्टिमन्तो दिवो मर्या ऋतजाता अयासः।

सरस्वती शृणवन् यज्ञियासो धाता रयिं सहवीरं तुरासः॥१३॥

विद्युत्ऽरथाः। मरुतः। ऋष्टिऽमन्तः। दिवः। मर्याः। ऋतऽजाताः। अयासः। सरस्वती। शृणवन्। यज्ञियासः। धात। रयिम्। सहऽवीरम्। तुरासः॥१३॥

पदार्थः-**(विद्युद्रथाः)** विद्युद्युक्ता रथा यानानि येषान्ते **(मरुतः)** मरणधर्माणः **(ऋष्टिमन्तः)** बह्व्य ऋष्टयो गतयो विद्यन्ते येषान्ते **(दिवः)** कामयमानस्य **(मर्याः)** मनुष्याः **(ऋतजाताः)** ऋतेन सत्येन प्रसिद्धाः **(अयासः)** प्राप्तविद्याः **(सरस्वती)** सकलविद्यायुक्ता वाणी **(शृणवन्)** शृण्वन्तु **(यज्ञियासः)** शिल्पव्यवहारकर्त्तारः **(धात)**। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(रयिम्)** धनम् **(सहवीरम्)** वीरैः सह वर्त्तमानम् **(तुरासः)** सद्यः कर्त्तारः॥१३॥

अन्वयः-सरस्वती विदुषी स्त्री यं सहवीरं रयिं विद्युद्रथा मरुत ऋष्टिमन्तो दिवो मर्या ऋतजाता अयासो यज्ञियासस्तुरासो विद्वांसः शृणवन् धात तथैतं शृणुयाद्दध्याच्च॥१३॥

भावार्थः-यथा पुरुषा विद्याभ्यासं कुर्य्युस्तथैव स्त्रियोऽपि कृत्वा श्रीमत्यो भवन्तु। उभये आलस्यं विहाय शिल्पविषयाणि सर्वाणि कर्माणि साध्नुवन्तु॥१३॥

पदार्थः-(**सरस्वती**) विद्यायुक्त स्त्री जिस (**सहवीरम्**) वीर पुरुषों के सहित वर्त्तमान (**रयिम्**) धन को (**विद्युद्रथाः**) बिजुली से युक्त हैं वाहन जिनके वे (**मरुतः**) मरण धर्मवाले (**ऋष्टिमन्तः**) बहुत गतियों से युक्त (**दिवः**) कामना करते हुए के सम्बन्धी (**मर्य्याः**) मनुष्य (**ऋतजाताः**) सत्य से प्रसिद्ध (**अयासः**) विद्याओं को प्राप्त (**यज्ञियासः**) शिल्प-व्यवहार के करनेवाले (**तुरासः**) शीघ्रकर्त्ता विद्वान् लोग (**शृणवन्**) सुनो और (**धात**) धारण करो, वैसे इसको सुने और धारण करे॥१३॥

भावार्थः-जैसे पुरुष लोग विद्या का अभ्यास करें, वैसे ही स्त्रियाँ भी करके लक्ष्मीयुक्त हों। दोनों स्त्री और पुरुष आलस्य का त्याग करके शिल्पविषयक सम्पूर्ण कर्मों को सिद्ध करो॥१३॥

अथ वक्तृविषयमाह॥

अब वक्ता के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

विष्णुं स्तोमा॑सः पुरुदुस्ममुर्का भग॑स्येव कारिणो याम॑नि ग्मन्।
उरुक्रमः ककुहो यस्य॑ पूर्वीर्न म॑र्धन्ति युवतयो जनि॑त्रीः॥१४॥

विष्णु॑म्। स्तोमा॑सः। पुरुऽदुस्मम्। अर्काः। भग॑स्यऽइव। कारिणः। याम॑नि। ग्मन्। उरुऽक्रमः। ककुहः। यस्य॑। पूर्वीः। न। मर्धन्ति। युवतयः। जनि॑त्रीः॥१४॥

पदार्थः-(**विष्णुम्**) व्यापकम् (**स्तोमासः**) स्तावकाः (**पुरुदस्मम्**) पुरूणि बहूनि दुःखानि दस्मान्युपक्षीणानि यस्मात्तम् (**अर्काः**) पूजनीयाः (**भगस्येव**) ऐश्वर्यस्येव (**कारिणः**) कर्त्तुं शीलाः (**यामनि**) प्रापणीये मार्गे (**ग्मन्**) गच्छन्ति (**उरुक्रमः**) बहुपुरुषार्थः (**ककुहः**) महतीः। **ककुह इति महन्नामसु पठितम्।** (निघं०३.३) (**यस्य**) (**पूर्वीः**) (**न**) निषेधे (**मर्धन्ति**) हिंसन्ति (**युवतयः**) प्राप्तयौवनाः (**जनित्रीः**) मातः॥१४॥

अन्वयः-हे विद्वन्नुरुक्रमस्त्वं यथास्तोमासोऽर्का भगस्येव कारिणो विद्वांसो यामनि पुरुदस्मं विष्णुं ग्मन्। यस्य युवतयो ककुहः पूर्वीर्जनित्रीर्न मर्धन्ति तथा त्वं वर्त्तस्व॥१४॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। ये भगवदुपासका ईश्वराज्ञानुकूलवर्त्तमाना भगवन्तो भूत्वाऽहिंसामहतीर्भगवतीः प्राप्य दुःखान्तं गत्वा महत्सुखं प्राप्नुवन्ति॥१४॥

पदार्थः-हे विद्वन्! (**उरुक्रमः**) बहुत पुरुषार्थवाले! आप जैसे (**स्तोमासः**) स्तुति करनेवाले (**अर्काः**) पूजा करने योग्य (**भगस्येव**) ऐश्वर्य्य के तुल्य (**कारिणः**) करनेवाले विद्वान् लोग (**यामनि**) प्राप्त होने योग्य मार्ग में (**पुरुदस्मम्**) बहुत दुःख नाश हुए जिससे उस (**विष्णुम्**) व्यापक को (**ग्मन्**) प्राप्त होते हैं और (**यस्य**) जिसकी (**युवतयः**) युवावस्था को प्राप्त (**ककुहः**) बड़ी (**पूर्वीः**) प्राचीन काल में वर्त्तमान (**जनित्रीः**) माताओं का (**न**) नहीं (**मर्धन्ति**) नाश करते हैं, वैसे आप वर्त्ताव करो॥१४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा और वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जो लोग भगवान् की उपासना

करनेवाले ईश्वर की आज्ञा के अनुकूल वर्त्तमान ऐश्वर्ययुक्त होकर, नहीं नाश होनेवाली बड़ी लक्ष्मियों को प्राप्त हो दु:ख के पार जाकर बड़े सुख को प्राप्त होते हैं॥१४॥

अथ राजविषयमाह॥

अब राजा के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रो विश्वैर्वीर्यै:३ पत्यमान उभे आ पप्रौ रोदसी महित्वा।

पुरंदरो वृत्रहा धृष्णुषेण: संगृभ्या न आ भरा भूरि पश्व:॥१५॥२६॥

इन्द्र:। विश्वै:। वीर्यै:। पत्यमान:। उभे इति। आ। पप्रौ। रोदसी इति। महिऽत्वा। पुरम्ऽदर:। वृत्रऽहा। धृष्णुऽसेन:। सम्ऽगृभ्य। न:। आ। भर। भूरि। पश्व:॥१५॥

पदार्थ:-(**इन्द्र:**) परमैश्वर्यो राजा (**विश्वै:**) अखिलै: (**वीर्यै:**) पराक्रमै: (**पत्यमान:**) पति: स्वामीवाचरन् (**उभे**) (**आ**) (**पप्रौ**) व्याप्नोति (**रोदसी**) न्यायभूमिराज्ये (**महित्वा**) महिम्ना (**पुरन्दर:**) शत्रूणां नगराणां हन्ता (**वृत्रहा**) मेघहन्ता सूर्येव (**धृष्णुसेन:**) धृष्णु: प्रगल्भा दृढा सेना यस्य स: (**सङ्गृभ्य**) सम्यग् गृहीत्वा। अत्र **संहितायामिति** दीर्घ:। (**न:**) अस्मान् (**आ**) (**भर**) धर। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घ:। (**भूरि**) बहु (**पश्व:**) पशून्॥१५॥

अन्वय:-हे राजन्! यो वृत्रहेव पुरन्दर: पत्यमानो धृष्णुसेन इन्द्रो भवान् विश्वैर्वीर्यैर्महित्वोभे रोदसी आ पप्रौ स त्वं भूरि नोऽस्मान् पश्वश्च सङ्गृभ्या भर॥१५॥

भावार्थ:-यथा भूमिसूर्यौ सर्वान् धृत्वा संपोष्य वर्द्धयतस्तथैव राजादयोऽध्यक्षा: सर्वाञ्छुभगुणान् धृत्वा प्रजां पोषयित्वा सेनामुन्नीय शत्रून् हत्वा प्रजामुन्नयन्तु॥१५॥

पदार्थ:-हे राजन्! जो (**वृत्रहा**) मेघ का नाश करनेवाले सूर्य के सदृश (**पुरन्दर:**) शत्रुओं के नगरों का नाश करनेवाला (**पत्यमान:**) स्वामी के सदृश आचरण करता हुआ (**धृष्णुसेन:**) दृढ़ सेना और (**इन्द्र:**) अत्यन्त ऐश्वर्ययुक्त राजा आप (**विश्वै:**) सम्पूर्ण (**वीर्यै:**) पराक्रमों से (**महित्वा**) महिमा से (**उभे**) दोनों (**रोदसी**) न्याय और भूमि के राज्य को (**आ, पप्रौ**) व्याप्त करते हैं, वह आप (**भूरि**) बहुत (**न:**) हम लोगों और (**पश्व:**) पशुओं को (**संगृभ्य**) उत्तम प्रकार ग्रहण करके (**आ, भर**) सब प्रकार पोषण कीजिये॥१५॥

भावार्थ:-जैसे भूमि और सूर्य सब पदार्थों को धारण और उत्तम प्रकार पोषण करके बढ़ाते हैं, वैसे ही राजा आदि अध्यक्ष सब उत्तम गुणों को धारण, प्रजा का पोषण, सेना की वृद्धि और शत्रुओं का नाश करके प्रजा की वृद्धि करें॥१५॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब विद्वान् के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नासत्या मे पितरा बन्धुपृच्छा सजात्यमश्विनोश्चारु नाम।
युवं हि स्थो रयिदौ नो रयीणां दात्रं रक्षेथे अकवैरदब्धा॥ १६॥

नासत्या। मे। पितरा। बन्धुऽपृच्छा। सऽजात्यम्। अश्विनोः। चारु। नाम। युवम्। हि। स्थः। रयिदौ। नः। रयीणाम्। दात्रम्। रक्षेथे इति। अकवैः। अदब्धा॥ १६॥

पदार्थः-(**नासत्या**) न विद्यतेऽसत्यं ययोस्तौ (**मे**) मम (**पितरा**) पालकौ (**बन्धुपृच्छा**) यौ बन्धून् पृच्छतस्तौ (**सजात्यम्**) समानजातौ भवम् (**अश्विनोः**) सूर्य्याचन्द्रमसोरिव (**चारु**) सुन्दरम् (**नाम**) (**युवम्**) (**हि**) यतः (**स्थः**) भवथः (**रयिदौ**) श्रीप्रदौ (**नः**) अस्माकम् (**रयीणाम्**) धनानाम् (**दात्रम्**) दानम् (**रक्षेथे**) (**अकवैः**) अकुत्सितैः कर्मभिः (**अदब्धा**) अहिंसितौ॥ १६॥

अन्वयः-हे सभासेनेशौ! युवं हि नो रयिदौ रयीणां दात्रं रक्षेथे अकवैरदब्धा स्थो ययोरश्विनोरिव चारु नामास्ति तौ बन्धुपृच्छा नासत्या मे पितरेव सजात्यं चारु नाम रक्षतम्॥ १६॥

भावार्थः-ये विद्वांसो मातापितृवत्सर्वेभ्यो विद्याधनप्रदा धर्माचारिणः सन्तः सजात्यानन्याँश्च रक्षन्ति ते सर्वेषां पूज्या भवन्ति॥ १६॥

पदार्थः-हे सभा और सेना के स्वामी! (**युवम्**) आप दोनों (**हि**) जिससे कि (**नः**) हम लोगों के लिये (**रयिदौ**) लक्ष्मी देनेवाले (**रयीणाम्**) धनों के (**दात्रम्**) दान की (**रक्षेथे**) रक्षा करते हैं (**अकवैः**) कुत्सित भिन्न अर्थात् उत्तम कर्मों से (**अदब्धा**) नहीं हिंसित हुए (**स्थः**) होते हैं और जिनकी (**अश्विनोः**) सूर्य-चन्द्रमा के तुल्य (**चारु**) सुन्दर (**नाम**) सञ्ज्ञा है उन (**बन्धुपृच्छा**) बन्धुओं का कुशलादि पूछनेवाले (**नासत्या**) असत्य के त्यागी (**मे**) मेरे (**पितरा**) पालन करनेवालों के सदृश (**सजात्यम्**) समान जातिवाले सुन्दर नाम की रक्षा करो॥ १६॥

भावार्थः-जो विद्वान् लोग माता और पिता के सदृश सबके लिये विद्या और धन देनेवाले, धर्मपूर्वक आचरण करते हुए अपने समान जातिवाले तथा अन्य जनों की रक्षा करते हैं, वे सबके पूजा करने योग्य होते हैं॥ १६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

महत्तद्वः कवयश्चारु नाम यद्ध देवा भवथ विश्व इन्द्रे।
सख ऋभुभिः पुरुहूत प्रियेभिरिमां धियं सातये तक्षता नः॥ १७॥

महत्। तत्। वः। कवयः। चारु। नाम। यत्। ह। देवाः। भवथ। विश्वे। इन्द्रे। सखा। ऋभुऽभिः। पुरुऽहूत। प्रियेभिः। इमाम्। धियम्। सातये। तक्षत। नः॥ १७॥

पदार्थः-(**महत्**) महान् (**तत्**) (**वः**) युष्माकम् (**कवयः**) विपश्चितः (**चारु**) सुन्दरम् (**नाम**) (**यत्**) (**ह**) किल (**देवाः**) विद्वांसः (**भवथ**) (**विश्वे**) (**इन्द्रे**) परमैश्वर्ये राज्ञि वा (**सखा**) सुहृत् (**ऋभुभिः**) मेधाविभिः सह (**पुरुहूत**) बहुभिः प्रशंसित (**प्रियेभिः**) स्वात्मवत् प्रियैः (**इमाम्**) प्रत्यक्षाम् (**धियम्**) प्रज्ञाम् (**सातये**) सत्याऽसत्ययोर्विवेकाय (**तक्षत**) रक्षत। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**नः**) अस्माकम्॥१७॥

अन्वयः-हे कवयो! वो यन्महच्चारु नाम नामास्ति तत्तेन युक्ता विश्वे देवा ह यूयं भवथ। प्रियेभिर्ऋभुभिः सहेन्द्रे सातये न इमां धियं तक्षत। हे पुरुहूत राजेन्द्र! त्वमेतैः सह सखा सन्नेतां प्रज्ञां प्राप्नुहि॥१७॥

भावार्थः-तेषामेव नामानि प्रशंसितानि प्रसिद्धानि स्युर्ये विद्वत्स्वविद्वत्सु मैत्रीमासाद्य धर्माऽधर्मविवेकाय शुद्धां प्रज्ञां सर्वेभ्यः प्रयच्छन्ति॥१७॥

पदार्थः-हे (**कवयः**) विद्वानो! (**वः**) आप लोगों का (**यत्**) जो (**महत्**) बड़ा (**चारु**) सुन्दर (**नाम**) नाम है (**तत्**) वह और उससे युक्त (**विश्वे**) सम्पूर्ण (**देवाः**) विद्वान् और (**ह**) निश्चय आप लोग (**भवथ**) होओ (**प्रियेभिः**) अपने सदृश प्रिय (**ऋभुभिः**) बुद्धिमानों के साथ (**इन्द्रे**) अत्यन्त ऐश्वर्य्य वा राजा में (**सातये**) सत्य और असत्य के विचार के लिये (**नः**) हम लोगों की (**इमाम्**) इस (**धियम्**) बुद्धि की (**तक्षत**) रक्षा करो। और हे (**पुरुहूत**) बहुतों से प्रशंसित हुए राजेन्द्र! आप इनके साथ (**सखा**) मित्र हुए इस बुद्धि को प्राप्त होओ॥१७॥

भावार्थः-उन लोगों के ही नाम प्रशंसा करने योग्य और प्रसिद्ध होवें कि जो विद्वान् और अविद्वानों में मित्रता को प्राप्त होकर धर्म और अधर्म के विचार के लिये उत्तम बुद्धि सबके लिये देते हैं॥१७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अर्यमा णो अदितिर्यज्ञियासोऽदब्धानि वरुणस्य व्रतानि।

युयोत नो अनपत्यानि गन्तोः प्रजावान्नः पशुमाँ अस्तु गातुः॥१८॥

अर्यमा। नः। अदितिः। यज्ञियासः। अदब्धानि। वरुणस्य। व्रतानि। युयोत। नः। अनपत्यानि। गन्तोः। प्रजाऽवान्। नः। पशुऽमान्। अस्तु। गातुः॥१८॥

पदार्थः-(**अर्य्यमा**) न्यायाधीशः (**नः**) अस्माकम् (**अदितिः**) मातेव (**यज्ञियासः**) अहिंसायज्ञस्याऽनुष्ठातारः (**अदब्धानि**) अहिंसितानि (**वरुणस्य**) श्रेष्ठस्य (**व्रतानि**) सत्यभाषणादीनि

(युयोत) प्रापयत त्याजयत **(नः)** अस्माकम् **(अनपत्यानि)** अविद्यमानान्यपत्यानि येषु तानि **(गन्तोः)** गन्तव्यानि **(प्रजावान्)** सन्तानवान् **(नः)** अस्मान् **(पशुमान्)** बहुपशुयुक्तः **(अस्तु)** **(गातुः)** भूमिः। **गातुरिति पृथिवीनामसु पठितम्।** (निघं०१.१)॥१८॥

अन्वयः-हे विद्वांसोऽदितिरिवार्य्यमा यज्ञियासो यूयं! नो वरुणस्याऽदब्धानि व्रतानि युयोत। नो गन्तोरनपत्यानि युयोत येन नो गातुः प्रजावान् पशुमानस्तु॥१८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे विद्वांसो! भवन्तोऽस्मान् न्यायाधीशवन्मातृवद-न्यायाचरणात् पृथक्कृत्य सत्यानि धर्म्याणि कर्माणि प्रापय्य भूगोलं बहुप्रजासमसंख्यधनं कुरुत॥१८॥

पदार्थः-हे विद्वानो! **(अदितिः)** माता के सदृश **(अर्य्यमा)** न्यायाधीश **(यज्ञियासः)** जिसमें हिंसा न हो ऐसे यज्ञ के करनेवाले आप लोगो! **(नः)** हम लोगों के **(वरुणस्य)** श्रेष्ठ के **(अदब्धानि)** हिंसाभिन्न **(व्रतानि)** सत्य बोलने आदि व्रतों को **(युयोत)** प्राप्त कराइये **(नः)** हम लोगों के **(गन्तोः)** प्राप्त होने योग्य व्यवहार से **(अनपत्यानि)** नहीं विद्यमान हैं सन्तान जिनमें उनको प्राप्त कराइये जिससे **(नः)** हम लोगों की **(गातुः)** पृथिवी **(प्रजावान्)** सन्तानयुक्त और **(पशुमान्)** बहुत पशुयुक्त **(अस्तु)** हो॥१८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे विद्वानो! आप लोग हम लोगों को न्यायाधीश और माता के सदृश अन्यायाचरण से अलग करके और सत्य धर्मयुक्त कर्मों को प्राप्त कराके सम्पूर्ण पृथिवी को बहुत प्रजा और असंख्य धनयुक्त करो॥१८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

देवानां दूतः पुरुध प्रसूतोऽनागान्नो वोचतु सर्वताता।
शृणोतु नः पृथिवी द्यौरुतापः सूर्यो नक्षत्रैरुर्वन्तरिक्षम्॥१९॥

देवानाम्। दूतः। पुरुध। प्रऽसूतः। अनागान्। नः। वोचतु। सर्वऽताता। शृणोतु। नः। पृथिवी। द्यौः। उत। आपः। सूर्यः। नक्षत्रैः। उरु। अन्तरिक्षम्॥१९॥

पदार्थः-**(देवानाम्)** विदुषाम् **(दूतः)** सत्याऽसत्यसमाचारदाता **(पुरुध)** यः पुरून् दधाति तत्सम्बुद्धौ **(प्रसूतः)** उत्पन्नः **(अनागान्)** अनपराधिनः **(नः)** अस्मान् **(वोचतु)** उपदिशतु **(सर्वताता)** सर्वानिव **(शृणोतु)** **(नः)** अस्मान् **(पृथिवी)** भूमिरिव क्षमा **(द्यौः)** विद्युदिव विद्या **(उत)** **(आपः)** जलानीव शान्तिः **(सूर्य्यः)** सवितेव विद्याप्रकाशः **(नक्षत्रैः)** कारणरूपेणाविनश्वरैः **(उरु)** व्यापकम् **(अन्तरिक्षम्)** आकाशमिवाऽक्षोभता॥१९॥

अन्वयः-हे पुरुध! देवानां दूतः प्रसूतो भवान्त्सर्वतातानागान्नः पृथिव्यादिविद्या वोचतु। नक्षत्रैस्सहोर्वन्तरिक्षं सूर्य्यः पृथिवी द्यौरुतापो नः प्राप्नोतु अस्माकं वचांसि शृणोतु॥१९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ये धर्मसभाऽधिकृतानां प्रेष्या उपदेशका सर्वान्त्सत्याऽसत्ये उपदिश्य धर्मात्मनः सम्पादयन्तु तेषां प्रश्नाञ्छ्रुत्वा समादधतु पृथिव्यादीनां सकाशात् क्षमादिगुणान् गृहीत्वाऽन्यान् ग्राहयित्वा पाखण्डं विनाश्य धर्मं प्रापय्य सर्वाञ्छिष्टान् कुर्वन्तु॥१९॥

पदार्थः-हे **(पुरुध)** बहुतों को धारण करनेवाले! **(देवानाम्)** विद्वानों के **(दूतः)** सत्य और असत्य समाचार के देनेवाले **(प्रसूतः)** उत्पन्न आप **(सर्वताता)** सबको ही **(अनागान्)** अपराध से रहित **(नः)** हम लोगों को भूमि आदि की विद्याओं का **(वोचतु)** उपदेश दीजिये। और **(नक्षत्रैः)** कारण रूप से नहीं नाश होनेवालों के साथ **(उरु)** व्यापक **(अन्तरिक्षम्)** आकाश के सदृश नहीं हिलना **(सूर्य्यः)** सूर्य्य के समान विद्या का प्रकाश **(पृथिवी)** भूमि के सदृश क्षमा और **(द्यौः)** बिजुली के सदृश विद्या **(उत)** और **(आपः)** जलों के सदृश शान्ति **(नः)** हम लोगों को प्राप्त हो और हम लोगों के वचनों को **(शृणोतु)** सुनो॥१९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। धर्म्मसभा के अधिकृत लोगों के आधीन में वर्त्तमान उपदेश देनेवाले सबको सत्य और असत्य का उपदेश देकर धर्मात्मा करें और उनके प्रश्नों को सुन के समाधान करें और पृथिवी आदिकों के समीप से क्षमा आदि गुणों का ग्रहण करके अन्यों को ग्रहण करा पाखण्ड का नाश और धर्म को प्राप्त कराके सबको श्रेष्ठ करें॥१९॥

शृण्वन्तु नो वृषणः पर्वतासो ध्रुवक्षेमास इळया मदन्तः।
आदित्यैर्नो अदितिः शृणोतु यच्छन्तु नो मरुतः शर्म भद्रम्॥२०॥

शृण्वन्तु। नः। वृषणः। पर्वतासः। ध्रुवऽक्षेमासः। इळया। मदन्तः। आदित्यैः। नः। अदितिः। शृणोतु। यच्छन्तु। नः। मरुतः। शर्म। भद्रम्॥२०॥

पदार्थः-**(शृण्वन्तु)** **(नः)** अस्मान् कीर्त्तिमतः **(वृषणः)** वृष्टिकराः **(पर्वतासः)** मेघा इव **(ध्रुवक्षेमासः)** ध्रुवं निश्चितं क्षेमं रक्षणं येभ्यस्ते **(इळया)** प्रशंसितया वाचा **(मदन्तः)** हर्षन्तः **(आदित्यैः)** पूर्णविद्यैस्सह **(नः)** अस्मान् **(अदितिः)** माता **(शृणोतु)** **(यच्छन्तु)** ददतु **(नः)** अस्मभ्यम् **(मरुतः)** मानवाः **(शर्म)** उत्तमं गृहमिव सुखम् **(भद्रम्)** कल्याणकरम्॥२०॥

अन्वयः-हे विद्वांसो! भवन्त इळया सह वर्त्तमानान्नोऽस्माञ्छृण्वन्तु वृषणो ध्रुवक्षेमासः पर्वतास इवाऽस्मान् मदन्त उन्नयन्तु। आदित्यैः सहादितिर्नः शृणोतु मरुतो नो भद्रं शर्म यच्छन्तु॥२०॥

भावार्थः-मनुष्यैः सर्वाभ्यः प्राप्तिभ्य आदौ सुशिक्षा ततो विद्या पुनः सत्सङ्गकल्याणाऽऽचरणं श्रवणमुपदेशनञ्च कृत्वा सर्वेषां योगक्षेमौ संसाधनीयौ॥२०॥

पदार्थः-हे विद्वानो! आप लोग **(इळया)** प्रशंसित वाणी के सहित वर्त्तमान **(नः)** हम लोगों

कीर्त्तिमानों को **(शृण्वन्तु)** सुनो **(वृषणः)** वृष्टि करनेवाले **(ध्रुवक्षेमासः)** निश्चित रक्षा है जिनसे वे **(पर्वतासः)** मेघ जैसे वैसे हम लोगों की **(मदन्तः)** प्रसन्न हुए वृद्धि करो। और **(आदित्यैः)** पूर्ण विद्वानों के साथ **(अदितिः)** माता **(नः)** हम लोगों को **(शृणोतु)** सुने **(मरुतः)** मनुष्य लोग **(नः)** हम लोगों के लिये **(भद्रम्)** कल्याण करनेवाले **(शर्म)** श्रेष्ठ गृह के सदृश सुख को **(यच्छन्तु)** देवें॥२०॥

भावार्थः-मनुष्यों को चाहिये कि सब प्राप्तियों से प्रथम उत्तम शिक्षा, तदनन्तर विद्या, पुनः सत्सङ्ग से कल्याणकारक आचरण, उत्तम बातों का श्रवण और उपदेश करके सबके योग[क्षेम] अर्थात् भोजन-आच्छादन के निर्वाह और कल्याण को सिद्ध करें॥२०॥

सदा सुगः पितुमाँ अस्तु पन्था मध्वा देवा ओषधीः सं पिपृक्त।
भगो मे अग्ने सख्ये न मृध्या उद्रायो अश्यां सदनं पुरुक्षोः॥२१॥

सदा। सुऽगः। पितुमान्। अस्तु। पन्थाः। मध्वा। देवाः। ओषधीः। सम्। पिपृक्त। भगः। मे। अग्ने। सख्ये। न। मृध्याः। उत्। रायः। अश्याम्। सदनम्। पुरुऽक्षोः॥२१॥

पदार्थः-**(सदा)** सर्वदा **(सुगः)** सुखेन गच्छन्ति यस्मिन् **(पितुमान्)** बहूनि पितवोऽन्नादीनि विद्यन्ते यस्मिन् **(अस्तु)** **(पन्थाः)** मार्गः **(मध्वा)** मधुरादिगुणयुक्ताः **(देवाः)** विद्वांसः **(ओषधीः)** सोमलताद्याः **(सम्)** **(पिपृक्त)** सम्यक् प्राप्नुत: **(भगः)** ऐश्वर्यम् **(मे)** मम **(अग्ने)** विद्वन्! **(सख्ये)** सख्युर्भावे कर्मणि वा **(न)** **(मृध्याः)** हिंस्याः **(उत्)** **(रायः)** धनानि **(अश्याम्)** प्राप्नुयाम् **(सदनम्)** गृहम् **(पुरुक्षोः)** बह्वन्नस्य॥२१॥

अन्वयः-हे देवा विद्वांसो! यूयं मध्वौषधीः सम्पिपृक्त येनाऽस्माकं सुगः पितुमान् पन्थाः सदास्तु। हे अग्ने! मे सख्ये त्वं न मृध्या मे भगो तेऽस्तु यथाऽहं पुरुक्षोः सदनं रायश्चोदश्यां तथा भवानप्येतत्प्राप्नोतु॥२१॥

भावार्थः-ये विद्वांसो वैद्या भूत्वा सदौषधीभी रोगान्निवार्य्य सर्वानरोगान् कुर्य्युस्सदैव मैत्रीं भावयित्वा राज्ञा निष्कण्टका निर्भयाः सरलाः पन्थानो निर्मातव्याः येषु गत्वाऽऽगत्य प्रजाः पुष्कलधना भवेयुः॥२१॥

पदार्थः-हे **(देवाः)** विद्वानो! आप लोग **(मध्वा)** मधुर आदि गुणों से युक्त **(ओषधीः)** सोमलता आदि ओषधियों को **(सम्)** **(पिपृक्त)** उत्तम प्रकार प्राप्त हों जिससे हम लोगों का **(सुगः)** सुखपूर्वक चलते हैं जिसमें और **(पितुमान्)** बहुत अन्न आदि विद्यमान हैं जिसमें ऐसा **(पन्थाः)** मार्ग सदा सब काल में **(अस्तु)** हो और हे **(अग्ने)** विद्वन्! **(मे)** मेरे **(सख्ये)** मित्र के भाव अर्थात् मित्रपन वा धर्म में आप **(न)** नहीं **(मृध्याः)** नाश करो, मेरा **(भगः)** ऐश्वर्य्य आपका हो और जैसे मैं **(पुरुक्षोः)** बहुत अन्नवाले के **(सदनम्)** गृह और **(रायः)** धनों को **(उत्, अश्याम्)** प्राप्त होऊँ, वैसे आप भी इन गृह, धनादि वस्तुओं को प्राप्त होइये॥२१॥

भावार्थ:-जो विद्वान् लोग वैद्य होकर सर्वदा ओषधियों से रोगों का निवारण करके सबको रोगरहित करें और सदैव मित्रता करके राजा को चाहिये कि दुष्ट डाकू रूप कण्टकों से तथा सबसे रहित सरल मार्ग बनावें कि जिन मार्गों में जाकर तथा आकर प्रजायें बहुत धनवाली होवें॥२१॥

स्वदस्व हव्या समिषो दिदीह्यस्मद्र्यक् सं मिमीहि श्रवांसि।
विश्वाँ अग्ने पृत्सु ताञ्जेषि शत्रूनहा विश्वा सुमना दीदिही नः॥२२॥२७॥

स्वदस्व। हव्या। सम्। इषः। दिदीहि। अस्मद्र्यक्। सम्। मिमीहि। श्रवांसि। विश्वान्। अग्ने। पृत्ऽसु। तान्। जेषि। शत्रून्। अहा। विश्वा। सुऽमनाः। दीदिहि। नः॥२२॥

पदार्थ:-(**स्वदस्व**) भुङ्क्ष्व (**हव्या**) अत्तुमर्हाणि (**सम्**) (**इषः**) विज्ञानानि (**दिदीहि**) प्रकाशय (**अस्मद्र्यक्**) योऽस्मानञ्चति सः (**सम्**) (**मिमीहि**) संमिमीष्व (**श्रवांसि**) अन्नानि श्रवणानि वा (**विश्वान्**) सर्वान् (**अग्ने**) पावक इव वर्त्तमान (**पृत्सु**) संग्रामेषु (**तान्**) (**जेषि**) जयसि (**शत्रून्**) (**अहा**) दिनानि (**विश्वा**) सर्वाणि (**सुमनाः**) प्रसन्नचित्तः (**दीदिहि**) प्रकाशस्व प्रकाशय वा। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। (**नः**) अस्मान्॥२२॥

अन्वयः-हे अग्ने! त्वमस्मद्र्यक् सन् हव्या श्रवांसि स्वदस्वेषः सं दिदीहि। श्रवांसि सं मिमीहि यतस्त्वं पृत्सु तान् विश्वाञ्छत्रूञ्जेषि तस्माद्विश्वाहा सुमनाः सन् दीदिहि। नोऽस्माँश्च दीदिहि॥२२॥

भावार्थ:-राजादिपुरुषैर्बुद्धिविनाशकान्नादित्यागमुक्त्वा विज्ञानं वर्द्धयित्वा लोकतो वार्त्ताः श्रुत्वा सेना उन्नीय शत्रूञ्जित्वा सर्वदा हर्षशोकरहितैर्भवितव्यं धर्म्येण प्रजाः संपाल्य विषयासक्तिं विहायाऽऽनन्दितव्यमिति॥२२॥

अत्र राजविद्वत्प्रजाऽध्यापकशिष्येश्वरश्रोतृवक्तृशूरवीरकर्मगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति चतुःपञ्चाशत्तमं सूक्तं सप्तविंशो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थ:-हे (**अग्ने**) अग्नि के सदृश वर्त्तमान! आप (**अस्मद्र्यक्**) जो हम लोगों को ज्ञान, गमन, प्राप्ति और सत्कार देता है वह (**हव्या**) भोजन करने योग्य (**श्रवांसि**) अन्न वा श्रवणों को (**स्वदस्व**) भोग करें (**इषः**) विज्ञानों को (**सम्, दिदीहि**) प्रकाश करो। और अन्न वा श्रवणों को (**सम्, मिमीहि**) तोलो और सुनो जिससे कि आप (**पृत्सु**) संग्रामों में (**तान्**) उनको (**विश्वान्**) सम्पूर्ण (**शत्रून्**) शत्रुओं को (**जेषि**) जीतते हो तिससे (**विश्वा**) सब (**अहा**) दिनों को (**सुमनाः**) प्रसन्नचित्त होते हुए (**दीदिहि**) प्रकाशित होइये और (**नः**) हम लोगों को प्रकाशित कीजिये॥२२॥

भावार्थ:-राजा आदि पुरुषों को चाहिये कि बुद्धि के नाश करनेवाले अन्न आदि का त्याग करना

कहके, विज्ञान बढ़ाय के, लोक से वार्त्ताओं को सुन के, सेनाओं की वृद्धि करके और शत्रुओं को जीत कर सब काल में आनन्द और शोक का त्याग करें और धर्म से प्रजाओं का पालन करके विषयों में आसक्ति का त्याग करके आनन्द करना चाहिये॥२२॥

इस सूक्त में राजा, विद्वान्, प्रजा, अध्यापक, शिष्य, ईश्वर, श्रोता, वक्ता और शूरवीर के कर्म्म और गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह चौवनवाँ सूक्त और सत्ताईसवाँ वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ द्वाविंशत्यृचस्य पञ्चपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य प्रजापतिर्वैश्वामित्रो वाच्यो वा ऋषयः। विश्वेदेवाः। १ उषाः। २-१० अग्निः। ११ अहोरात्रौ। १२-१४ रोदसी। १५ रोदसी द्युनिशौ वा। १६ दिशः। १७-२२ इन्द्रः पर्जन्यात्मा त्वष्टा वाग्निश्च देवताः। १, २, ६, ७, ९-१२, १९, २२ निचृत्त्रिष्टुप्। ४, ८, १३, १६, २१ त्रिष्टुप्। १४, १५, १८ विराट् त्रिष्टुप्। १७ भुरिक् त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ३ भुरिक् पङ्क्तिः। ५, २० स्वराट् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अब बाईस ऋचा वाले पचपनवें सूक्त का आरम्भ है॥

उषसः पूर्वा अध यद्व्यूषुर्महद्वि जज्ञे अक्षरं पदे गोः।
व्रता देवानामुप नु प्रभूषन् महद्देवानामसुरत्वमेकम्॥१॥

उषसः। पूर्वाः। अध। यत्। विऽऊषुः। महत्। वि। जज्ञे। अक्षरम्। पदे। गोः। व्रता। देवानाम्। उप। नु। प्रऽभूषन्। महत्। देवानाम्। असुरऽत्वम्। एकम्॥१॥

पदार्थः-(**उषसः**) प्रभातात् (**पूर्वाः**) (**अध**) अथ (**यत्**) (**व्यूषुः**) विवसन्ति (**महत्**) (**वि**) (**जज्ञे**) जातम् (**अक्षरम्**) (**पदे**) स्थाने (**गोः**) पृथिव्याः (**व्रता**) नियमाः (**देवानाम्**) विदुषाम् (**उप**) समीपे (**नु**) सद्यः (**प्रभूषन्**) अलङ्कुर्वन् (**महत्**) (**देवानाम्**) पृथिव्यादीनाम् (**असुरत्वम्**) यदसुषु प्राणेषु रमते तत् (**एकम्**) अद्वितीयमसहायम्॥१॥

अन्वयः-यदुषसः पूर्वा व्यूषुस्तन्महदक्षरं महत्तत्त्वाख्यं गोः पदे वि जज्ञे यदेकं देवानां महदसुरत्वं प्रभूषन्नध देवानां व्रतोप नु जज्ञे तद्यूयं विजानीत॥१॥

भावार्थः-यद्विद्युदाख्यमुषसः सेवन्ते तद्वद्वर्त्तमानमेकमद्वितीयं ब्रह्म प्रकृत्यादिषु व्याप्तं तत्सर्वं धरति तदेव सर्वैरुपास्यमस्ति॥१॥

पदार्थः-(**यत्**) जो (**उषसः**) प्रातःकाल से (**पूर्वाः**) प्रथम हुए (**व्यूषुः**) विशेष करके वसते हैं वह (**महत्**) बड़ा (**अक्षरम्**) नहीं नाश होनेवाला (**महत्**) बड़ा तत्त्वनामक (**गोः**) पृथिवी के (**पदे**) स्थान में (**वि, जज्ञे**) उत्पन्न हुआ जो (**एकम्**) अद्वितीय और सहायरहित (**देवानाम्**) पृथिवी आदिकों में बड़े (**असुरत्वम्**) प्राणों में रमनेवाले को (**प्र, भूषन्**) शोभित करता हुआ (**अध**) उसके अनन्तर (**देवानाम्**) विद्वानों के (**व्रता**) नियम (**उप**) समीप में (**नु**) शीघ्र उत्पन्न हुए उसको आप लोग जानिये॥१॥

भावार्थः-जो बिजुली नामक वस्तु को प्रातःकालः से सेवन करते हैं, उनके सदृश वर्त्तमान एक द्वितीयरहित ब्रह्म प्रकृति आदि पदार्थों में व्याप्त हुआ वह सबको धारण करता है, वही सब करके **[=से]** उपासना करने योग्य है॥१॥

मो षू णो अत्र जुहुरन्त देवा मा पूर्वे अग्ने पितरः पदज्ञाः।

पुराण्योः सद्मनोः केतुरन्तर्महद्देवानामसुरत्वमेकम्॥ २॥

मो इति। सु। नः। अत्र। जुहुरन्त। देवाः। मा। पूर्वे। अग्ने। पितरः। पदऽज्ञाः। पुराण्योः। सद्मनोः। केतुः। अन्तः। महत्। देवानाम्। असुरऽत्वम्। एकम्॥ २॥

पदार्थः-(**मो**) निषेधे (**सु**) (**नः**) अस्मान् (**अत्र**) अस्मिन् ब्रह्मणि विज्ञानव्यवहारे वा (**जुहुरन्त**) प्रसहन्ताम् (**देवाः**) विद्वांसः (**मा**) निषेधे (**पूर्वे**) प्रथमजाः (**अग्ने**) विद्वन्! (**पितरः**) विज्ञानवन्तः (**पदज्ञाः**) ये पदं प्राप्तव्यं जानन्ति ते (**पुराण्योः**) सनातन्योर्विद्युदाकाशरूपयोः प्रकृत्योः (**सद्मनोः**) सर्वेषां निवासस्थानयोः (**केतुः**) ज्ञानस्वरूपम् (**अन्तः**) मध्ये व्याप्तम् (**महत्**) (**देवानाम्**) पृथिव्यादीनां जीवानां वा (**असुरत्वम्**) प्राणेषु क्रीडमानम् (**एकम्**) अद्वितीयं ब्रह्म॥ २॥

अन्वयः-हे अग्ने! यत्पुराण्योः सद्मनोर्देवानामन्तः केतुर्महदेकमसुरत्वमस्त्यत्र नो अस्मान् पदज्ञाः पूर्वे पितरो मो जुहुरन्त देवा अत्रास्मान् मा सु जुहुरन्तैवं त्वमप्येतद्विज्ञाय त्वामेते मा जुहुरन्त॥ २॥

भावार्थः-त एवाऽस्मिञ्जगति विद्वांसो जनका इव भवेयुर्ये प्रकृत्यादिषु व्याप्तं सर्वान्तर्य्यामि ब्रह्म सम्यग् विज्ञाय विज्ञापयेयुः॥ २॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) विद्वन्! जो (**पुराण्योः**) अनादि काल से सिद्ध बिजुली और आकाश रूप प्रकृतियों (**सद्मनोः**) सबके रहने के स्थानों और (**देवानाम्**) पृथिवी आदि वा जीवों के (**अन्तः**) मध्य में (**केतुः**) ज्ञानस्वरूप (**महत्**) बड़ा (**एकम्**) अपने सदृश द्वितीय पदार्थरहित ब्रह्म (**असुरत्वम्**) प्राणों में क्रीड़ा करता हुआ है (**अत्र**) इस ब्रह्म वा विज्ञान के व्यवहार में (**नः**) हम लोगों को (**पदज्ञाः**) प्राप्त होने योग्य के जाननेवाले (**पूर्वे**) प्रथम उत्पन्न हुए (**पितरः**) विज्ञानवाले (**मो**) नहीं (**जुहुरन्त**) प्रसहन करें और (**देवाः**) विद्वान् लोग इस विज्ञानरूप व्यवहार में हम लोगों को (**मा**) नहीं (**सु**) उत्तम प्रकार सहें, इस प्रकार आप भी यह जान के आपको ये लोग न सहें॥ २॥

भावार्थः-वे ही इस संसार में विद्वान् जन पिता के सदृश होवें कि जो प्रकृति आदि पदार्थों में व्याप्त सर्वान्तर्य्यामी ब्रह्म को उत्तम प्रकार जान के अन्यों को जनावें॥ २॥

वि मे पुरुत्रा पतयन्ति कामाः शम्यच्छा दीद्ये पूर्व्याणि।
समिद्धे अग्नावृतमिद्वदेम महद्देवानामसुरत्वमेकम्॥ ३॥

वि। मे। पुरुऽत्रा। पतयन्ति। कामाः। शमि। अच्छ। दीद्ये। पूर्व्याणि। सम्ऽइद्धे। अग्नौ। ऋतम्। इत्। वदेम। महत्। देवानाम्। असुरऽत्वम्। एकम्॥ ३॥

पदार्थः-(**वि**) विशेषे (**मे**) मम (**पुरुत्रा**) बहूनि (**पतयन्ति**) पतिमाचक्षन्ते (**कामाः**) अभिलाषाः (**शमि**) कर्माणि। **शमीति कर्मनामसु पठितम्।** (निघं०२.१) (**अच्छ**)। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**दीद्ये**) प्रकाशयेयम्। **दीदयतीति ज्वलतिकर्मा।** (निघं०१.१६) (**पूर्व्याणि**) पूर्वैः साधितानि (**समिद्धे**) प्रदीप्ते

(अग्नौ) **(ऋतम्)** सत्यम् **(इत्)** एव **(वदेम)** **(महत्)** **(देवानाम्)** दिव्यानां पदार्थानां मध्ये **(असुरत्वम्)** प्राणाधारम् **(एकम्)** असहायम्॥३॥

अन्वयः-यैर्मे पुरुत्रा कामाः पतयन्ति तानि पूर्व्याणि शम्यहमच्छ वि दीद्ये समिद्धेऽग्नाविव देवानां महदेकमसुरत्वमृतं वदेम तदिदेव सर्वे वदन्तु॥३॥

भावार्थः-मनुष्या आलस्यं विहाय पूर्वैराप्तैराचरितानि कर्माणि सेवित्वा देवानां देवं सर्वाधारं सत्यस्वरूपं दीपेन घटादिकमिवान्तर्व्याप्तं परमात्मानं साक्षाद् दृष्ट्वाऽन्यान् प्रत्युपदिशन्तु॥३॥

पदार्थः-जिनसे **(मे)** मेरी **(पुरुत्रा)** बहुत **(कामाः)** अभिलाषायें **(पतयन्ति)** स्वामी को स्पष्ट कहने की इच्छा करती हैं, उन **(पूर्व्याणि)** पूर्व जनों से सिद्ध किये गये **(शमि)** कर्मों को मैं **(अच्छा)** उत्तम प्रकार **(वि)** विशेष करके **(दीद्ये)** प्रकाश करूं, **(समिद्धे)** प्रदीप्त **(अग्नौ)** अग्नि में जैसे **(देवानाम्)** उत्तम पदार्थों के मध्य में **(महत्)** बड़े **(एकम्)** सहायरहित **(असुरत्वम्)** प्राणों के आधार **(ऋतम्)** सत्य को **(वदेम)** कहे, उसको **(इत्)** ही सब लोग कहें॥३॥

भावार्थः-मनुष्य लोग आलस्य को त्याग के पूर्व पुरुषों करके [=द्वारा] किये हुये कर्मों का सेवन करके देवों के देव सबके आधार सत्यस्वरूप और दीपक से घट आदि के सदृश भीतर व्याप्त परमात्मा को साक्षात् देख के अन्य जनों के प्रति उपदेश देवें॥३॥

समानो राजा विभृतः पुरुत्रा शये शयासु प्रयुतो वनानु।

अन्या वत्सं भरति क्षेति माता महद्देवानामसुरत्वमेकम्॥४॥

समानः। राजा। विऽभृतः। पुरुऽत्रा। शये। शयासु। प्रऽयुतः। वना। अनु। अन्या। वत्सम्। भरति। क्षेति। माता। महत्। देवानाम्। असुरऽत्वम्। एकम्॥४॥

पदार्थः-**(समानः)** एकः **(राजा)** प्रकाशमानः **(विभृतः)** विशेषेण धृतः **(पुरुत्रा)** पूर्वासु **(शये)** **(शयासु)** शेरते यासु विद्युदादयः पदार्थाः तासु **(प्रयुतः)** विभक्तः सन् मिलितः **(वना)** किरणान् **(अनु)** सद्यः **(अन्या)** भिन्ना त्रिगुणात्मिका प्रकृतिः **(वत्सम्)** महत्तत्त्वादिकम् **(भरति)** धरति **(क्षेति)** निवासयति **(माता)** जननीव **(महत्)** पूजनीयम् **(देवानाम्)** सूर्य्यादीनां विदुषां वा मध्ये **(असुरत्वम्)** अस्यति प्रक्षिपति दूरीकरोति सर्वाणि दुःखानि तस्य भावम् **(एकम्)** अद्वितीयम्॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यत्र पुरुत्रा शयासु प्रयुतो विभृतस्समानो राजा सूर्य्यः शये शेते वना सेवतेऽन्या माता वत्सं भरति सर्वं क्षेति तद्देवानां महदेकमसुरत्वं यूयमनु विजानीत॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येन प्रकाशिताः सूर्य्यादयः प्रकाशन्ते योऽव्यक्ते सर्वमुत्पाद्य धृत्वा मातृवद्रक्षति यदाप्तानां विदुषां सत्कर्त्तव्यमस्ति तद्ब्रह्म यूयमुपाध्वम्॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिन **(पुरुत्रा)** प्राचीन काल से प्रसिद्ध **(शयासु)** शयन करें जिनमें बिजुली आदि पदार्थ उनमें **(प्रयुतः)** विभक्त हुआ फिर मिल गया **(विभृतः)** विशेष करके धारण किया गया **(समानः)** एक **(राजा)** प्रकाशमान सूर्य्य **(शये)** शयन करता है **(वना)** किरणों को सेवन करता है **(अन्या)** भिन्न त्रिगुण स्वरूप प्रकृति **(माता)** माता **(वत्सम्)** पुत्र को **[(भरति)]** धारण करती है और सबको **(क्षेति)** वसाती है वह **(देवानाम्)** सूर्य्यादिक वा विद्वानों के मध्य में **(महत्)** सत्कार करने योग्य **(एकम्)** द्वितीयरहित **(असुरत्वम्)** दूर करता है दुःखों को जो उसका होना उसको आप लोग **(अनु)** शीघ्र जानिये॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस करके **[**=के द्वारा**]** प्रकाशित हुए सूर्य्य आदि प्रकाशित होते हैं, जो अव्यक्त अर्थात् प्रकृति में सबको उत्पन्न करके तथा धारण करके माता के सदृश रक्षा करता है और जो यथार्थवक्ता विद्वानों करके **[**=के द्वारा**]** सत्कार करने योग्य है, उस ब्रह्म की आप लोग उपासना करो॥४॥

आक्षित्पूर्वास्वपरा अनूरुत्सद्यो जातासु तरुणीष्वन्तः।
अन्तर्वतीः सुवते अप्रवीता महद्देवानामसुरत्वमेकम्॥५॥२८॥

आऽक्षित्। पूर्वासु। अपराः। अनूरुत्। सद्यः। जातासु। तरुणीषु। अन्तरिति। अन्तःऽवतीः। सुवते। अप्रऽवीताः। महत्। देवानाम्। असुरऽत्वम्। एकम्॥५॥

पदार्थः-**(आक्षित्)** यः समन्तात् क्षियति सर्वत्र वसति सः **(पूर्वासु)** प्राचीनासु सनातनीषु प्रजासु **(अपराः)** या जनिष्यन्ते **(अनुरुत्)** योऽनुरौत्युपदिशति **(सद्यः)** समानेऽहनि **(जातासु)** उत्पन्नासु प्रजासु **(तरुणीषु)** युवतय इव वर्त्तमानासु **(अन्तः)** **(मध्ये)** **(अन्तर्वतीः)** अन्तर्मध्ये कारणं विद्यते यासु ताः **(सुवते)** उत्पद्यन्ते **(अप्रवीताः)** अव्याप्ताः परिच्छिन्नाः **(महत्)** सर्वेभ्यो बृहत् **(देवानाम्)** दिव्यगुणानां सूर्यादीनां सकाशात् **(असुरत्वम्)** सर्वेषां प्रक्षेप्तारम् **(एकम्)** चेतनमात्रस्वरूपम्॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः पूर्वासु सद्यो जातासु च तरुणीषु प्रजास्वन्तराक्षिदनूरुद्वर्त्तते यस्योत्पादनेनाऽपरा अन्तर्वतीरप्रवीताः प्रजाः सुवते तदेव देवानाम्महदसुरत्वमेकं परमात्मानं यूयं भजत॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्या! य उत्पन्नासूत्पद्यमानासूत्पस्त्यमानासु प्रजासु व्याप्तो धर्ताऽन्तर्यामी वर्त्तते तं परमात्मानं सेवन्ताम्॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(पूर्वासु)** प्राचीन काल में विद्यमान और **(सद्यः)** समान दिन में **(जातासु)** उत्पन्न और **(तरुणीषु)** युवावस्थावालियों के सदृश वर्त्तमान प्रजाओं के **(अन्तः)** मध्य में **(आक्षित्)** जो चारों ओर सर्वत्र वसता है वह **(अनूरुत्)** उपदेश देनेवाला वर्त्तमान है और जिसके उत्पन्न करने से **(अपराः)** उत्पन्न की जातीं **(अन्तर्वतीः)** मध्य में कारण विद्यमान है जिनमें उन **(अप्रवीताः)**

नहीं व्याप्त अर्थात् गणना से नाप सकने योग्य प्रजा **(सुवते)** उत्पन्न होती हैं, वही **(देवानाम्)** उत्तम गुणवाले सूर्य्य आदिकों के मध्य में **(महत्)** सबसे बड़े **(असुरत्वम्)** सबसे फेंकनेवाले और **(एकम्)** चेतनमात्र स्वरूप परमात्मा की आप लोग सेवा करो॥५॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो उत्पन्न, उत्पन्न हो गई और उत्पन्न होनेवाली प्रजाओं में व्याप्त धारण करनेवाला अन्तर्यामी वर्त्तमान है, उस परमात्मा की सेवा करो॥५॥

शयुः परस्तादध नु द्विमाताऽबन्धनश्चरति वत्स एकः।

मित्रस्य ता वरुणस्य व्रतानि महद्देवानामसुरत्वमेकम्॥६॥

शयुः। परस्तात्। अध। नु। द्विऽमाता। अबन्धनः। चरति। वत्सः। एकः। मित्रस्य। ता। वरुणस्य। व्रतानि। महत्। देवानाम्। असुरऽत्वम्। एकम्॥६॥

पदार्थः-**(शयुः)** योऽभिव्याप्य शेते **(परस्तात्)** परस्मिन् देशे **(अध)** अथ **(नु)** **(द्विमाता)** द्वे वाय्वाकाशौ मातरौ यस्याऽग्नेः सः **(अबन्धनः)** यो बध्नाति तद्भिन्नः **(चरति)** गच्छति **(वत्सः)** पुत्रइव वर्त्तमानः **(एकः)** असहायः **(मित्रस्य)** सुहृदः **(ता)** तानि **(वरुणस्य)** सर्वोत्तमस्य जगत्प्रबन्धकस्य **(व्रतानि)** सत्यभाषणादीनि कर्माणि। **व्रतमिति कर्मनामसु पठितम्।** (निघं०२.१) **(महत्)** **(देवानाम्)** विदुषाम् **(असुरत्वम्)** प्रक्षेप्तृत्वम् **(एकम्)** असहायं तेजः॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यः परस्ताच्छयुर्द्विमाताऽबन्धनो वत्स इवैको नु चरत्यध यद्देवानान्महदेकमसुरत्वं चरति ता व्रतानि मित्रस्य वरुणस्य परमात्मनः सन्तीति वेद्यम्॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यत्किञ्चिदत्र जगति सूर्य्यादिवस्तु, या अत्र विविधा रचनाः सन्ति, यच्च विचित्ररूपं स्वादादिकं वर्त्तते सर्वे स्वस्वपरिधौ भ्रमन्ति प्रलयात् प्राक् न विनश्यन्ति तानीमानि परमात्मनः कर्माणि सन्तीति वेदितव्यम्॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(परस्तात्)** दूसरे देश में **(शयुः)** व्याप्त होकर शयन करनेवाला **(द्विमाता)** दो वायु और आकाश माता हैं जिस अग्नि के वह **(अबन्धनः)** जो बन्धनरहित वह **(वत्सः)** पुत्र के सदृश वर्त्तमान **(एकः)** सहायरहित **(नु)** शीघ्र **(चरति)** चलता है **(अध)** इसके अनन्तर जो **(देवानाम्)** विद्वानों का **(महत्)** बड़ा **(एकम्)** सहायरहित तेज **(असुरत्वम्)** फेंकनापन **(ता)** वे **(व्रतानि)** सत्यभाषण आदि कर्म **(मित्रस्य)** मित्र और **(वरुणस्य)** सब में उत्तम और संसार के प्रबन्ध करनेवाले परमात्मा के हैं, ऐसा जानना चाहिये॥६॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो कुछ इस संसार में सूर्य्य आदि वस्तु और जो इस संसार में अनेक प्रकार की रचना हैं और जो विचित्ररूप स्वाद आदि वर्त्तमान हैं और सब अपने-अपने मण्डल में घूमते

हैं, प्रलय से प्रथम नहीं नष्ट होते हैं, वे ये परमात्मा के कर्म हैं, यह जानना चाहिये॥६॥

द्विमाता होता विदथेषु सम्राळन्वग्रं चरति क्षेति बुध्नः।
प्र रण्यानि रण्यवाचो भरन्ते महद्देवानामसुरत्वमेकम्॥७॥

द्विऽमाता। होता। विदथेषु। सम्ऽराट्। अनु। अग्रम्। चरति। क्षेति। बुध्नः। प्र। रण्यानि। रण्यऽवाचः। भरन्ते। महत्। देवानाम्। असुरऽत्वम्। एकम्॥७॥

पदार्थः-(**द्विमाता**) द्वे वाय्वाकाशौ मातरौ यस्य सूर्य्यस्य सः (**होता**) आदाता दाता च (**विदथेषु**) विज्ञातव्येषु पृथिव्यादिषु (**सम्राट्**) यः सम्यग् राजते (**अनु**) (**अग्रम्**) सर्वेषां मध्यं केन्द्रं स्थानमुपरिस्थम् (**चरति**) गच्छति (**क्षेति**) निवसति निवासयति वा (**बुध्नः**) बुध्नमन्तरिक्षं निवासस्थानं विद्यते यस्य सः। अत्रार्शादित्वादच्। (**प्र**) (**रण्यानि**) रमणीयानि लोकजातानि (**रण्यवाचः**) रमणीयभाषाः (**भरन्ते**) धरन्ति पुष्णन्ति वा (**महत्**) (**देवानाम्**) (**असुरत्वम्**) (**एकम्**)॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! येन निर्मितो द्विमाता होता बुध्नो विदथेषु सम्राडग्रमनुचरति क्षेति रण्यानि प्र क्षेति यद्देवानां महदेकमसुरत्वं रण्यवाचो भरन्ते तदेव ब्रह्म यूयं सेवध्वम्॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो जगदीश्वरस्सूर्य्यादि जगन्निर्माय धृत्वा प्रकाश्य पालयति। यः सर्वत्र वसन्त्सन्त्सर्वान्त्स्वस्मिन् वासयति यमेकमेवाप्ता विद्वांसः सेवन्ते तमेव सर्व उपासन्ताम्॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिस करके निर्माण किया गया (**द्विमाता**) दो वायु और आकाश हैं, माता जिस सूर्य्य के वह (**होता**) लेने और देनेवाला (**बुध्नः**) अन्तरिक्ष निवास का स्थान विद्यमान है जिसका वह (**विदथेषु**) जानने योग्य पृथिवी आदिकों में (**सम्राट्**) जो उत्तम प्रकार प्रकाशमान है (**अग्रम्**) सबके मध्य केन्द्र स्थान जो कि ऊपर वर्तमान उसको (**अनु, चरति**) प्राप्त होता है, वसता वा वसाता (**रण्यानि**) सुन्दर और लोकों में उत्पन्न हुओं को (**प्र, क्षेति**) वसता वा वसाता और जो (**देवानाम्**) विद्वानों में (**महत्**) बड़े (**एकम्**) सहायरहित (**असुरत्वम्**) प्राणों में रमनेवाले को (**रण्यवाचः**) रमणीय भाषाएँ (**भरन्ते**) धारण वा पोषण करती हैं, उस ही ब्रह्म की आप लोग सेवा करो॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो जगदीश्वर सूर्य्य आदि जगत् को निर्माण, धारण और प्रकाश करके पालन करता है और जो सर्वत्र वसता हुआ सबको अपने में वसाता है, जिस एक ही को यथार्थ बोलनेवाले विद्वान् लोग सेवते हैं, उस ही की सब लोग उपासना करो॥७॥

शूरस्येव युध्यतो अन्तमस्य प्रतीचीनं ददृशे विश्वमायत्।
अन्तर्मतिश्चरति निष्षिधं गोर्महद्देवानामसुरत्वमेकम्॥८॥

शूरस्यऽइव। युध्यतः। अन्तमस्य। प्रतीचीनम्। ददृशे। विश्वम्। आऽयत्। अन्तः। मतिः। चरति। निःऽसिधम्। गोः। महत्। देवानाम्। असुरऽत्वम्। एकम्॥८॥

पदार्थः-(**शूरस्येव**) यथा शत्रून् हिंसतः (**युध्यतः**) प्रहरतः। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम्। (**अन्तमस्य**) समीपस्थस्य (**प्रतीचीनम्**) पश्चाद्भूतम् (**ददृशे**) दृश्यते (**विश्वम्**) सर्वञ्जगत् (**आयत्**) प्राप्नुवत् (**अन्तः**) मध्ये (**मतिः**) मेधावी। **मतय इति मेधाविनामसु पठितम्।** (निघं०३.१५) (**चरति**) गच्छति (**निष्षिधम्**) यन्नितरां सेधति शास्ति तत् (**गोः**) वाण्याः (**महत्**) (**देवानाम्**) (**असुरत्वम्**) (**एकम्**)॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! अन्तमस्य युध्यतः शूरस्येव यत्र प्रतीचीनमायद्विश्वमन्तर्ददृशे गोर्महन्निष्षिधं देवानामेकमसुरत्वं मतिश्चरति तदेव ब्रह्म यूयं विजानीत॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा युध्यमानस्य समीपस्थस्य शूरस्य समीपे कातरो जनस्तिरस्कृतवद् दृश्यते तथैव सर्वशक्तिमतोऽनन्तस्य परमात्मनस्सन्निधौ सूर्य्यादिकं जगत् क्षुद्रं तिरस्कृतं वर्त्तते यो जगदीश्वरो विद्याकोशं वेदचतुष्टयं वाण्याऽऽभूषणं शास्ति तदेवेष्टं यूयं मन्यध्वम्॥८॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**अन्तमस्य**) समीप के वर्त्तमान (**युध्यतः**) प्रहार करते हुए (**शूरस्येव**) शत्रुओं के मारनेवाले के सदृश जहाँ (**प्रतीचीनम्**) पीछे से हुए (**आयत्**) प्राप्त होते हुए (**विश्वम्**) सम्पूर्ण संसार (**अन्तः**) मध्य में (**ददृशे**) देख पड़ता है और (**गोः**) वाणी का (**महत्**) बड़ा (**निष्षिधम्**) अत्यन्त शासन करनेवाला (**देवानाम्**) विद्वानों में (**एकम्**) सहायरहित (**असुरत्वम्**) प्राणों में रमनेवाला (**मतिः**) बुद्धिमान् (**चरति**) प्राप्त होता है, उस ही को ब्रह्म आप लोग जानें॥८॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे युद्ध करते हुए समीप में वर्त्तमान और शत्रु के नाशक वीर पुरुष के समीप में कायर मनुष्य तिरस्कृत हुए पुरुष के सदृश देखा जाता है, वैसे ही सम्पूर्ण शक्तिवाले अनन्त परमात्मा के समीप में सूर्य्य आदिक जगत् क्षुद्र और तिरस्कृत है और जो जगदीश्वर विद्या के खजाने रूप चारों वेदों वाणी के आभूषण हुओं का शासन करता है, उस ही को इष्ट आप लोग मानो॥८॥

नि वे॑वेति पलि॒तो दू॒त आ॑स्व॒न्तर्म॒हाँश्च॑रति रोच॒नेन॑।
वपूं॑षि बिभ्र॑द॒भि नो॒ वि च॑ष्टे म॒हद्दे॒वाना॑मसुर॒त्वमेक॑म्॥९॥

नि। वे॒वे॒ति॒। प॒लि॒तः। दू॒तः। आ॒सु॒। अ॒न्तः। म॒हान्। च॒र॒ति॒। रो॒च॒नेन॑। वपूं॑षि। बिभ्र॑त्। अ॒भि। नः॒। वि। च॒ष्टे॒। म॒हत्। दे॒वाना॑म्। अ॒सु॒र॒ऽत्वम्। एक॑म्॥९॥

पदार्थः-(**नि**) (**वेवेति**) भृशं व्याप्नोति। अत्र **वाच्छन्दसी**तीडभावः। (**पलितः**) श्वेतकेशः (**दूतः**) समाचारदाता (**आसु**) प्रजासु (**अन्तः**) आभ्यन्तरे (**महान्**) व्याप्तः सन् (**चरति**) प्राप्तोऽस्ति (**रोचनेन**) स्वप्रकाशेन (**वपूंषि**) रूपाणि (**बिभ्रत्**) धरत् सन् (**अभि**) आभिमुख्ये (**नः**) अस्मान् (**वि**) (**चष्टे**) विशेषेणोपदिशति (**महत्**) (**देवानाम्**) विदुषामस्माकम् (**असुरत्वम्**) दोषाणां प्रक्षेप्तृत्वम् (**एकम्**) अद्वितीयम्॥९॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य आस्वन्तर्नि वेवेति पलितो दूत इव महान् रोचनेन चरति वपूंषि बिभ्रन्नोऽस्मानभि विचष्टे तदेव देवानामस्माकमेकमसुरत्वं महत्पूज्यमस्तीति यूयमप्येतं पूजयत॥९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! यो जगदीश्वरो योगिनो वायुद्वारा वृद्धो दूत इव दूरस्थं समाचारं पदार्थं वा ज्ञापयति। अन्तर्यामी सन्तस्वप्रकाशेन सर्वं प्रकाश्य जीवानां कर्माणि विदित्वा फलानि प्रयच्छति आत्मस्थस्सन्न्याय्यमन्याय्यं कर्त्तुमकर्त्तुं चेतयति तदेवास्माकं पूज्यतमं ब्रह्म वस्त्वस्तीति भवन्तोऽप्येवं विजानन्तु॥९॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(आसु)** इन प्रजाओं में **(अन्तः)** भीतर **(नि, वेवेति)** अत्यन्त व्याप्त है **(पलितः)** श्वेत केशों से युक्त **(दूतः)** समाचार देनेवाले के सदृश **(महान्)** व्याप्त हुआ **(रोचनेन)** अपने प्रकाश से **(चरति)** प्राप्त है **(वपूंषि)** रूपों को **(बिभ्रत्)** धारण करता हुआ **(नः)** हम लोगों को **(अभि)** सम्मुख **(वि, चष्टे)** विशेष करके उपदेश देता है, वही **(देवानाम्)** विद्वान् हम लोगों का **(एकम्)** द्वितीय से रहित **(असुरत्वम्)** दोषों का फेंकना **(महत्)** बड़ा पूज्य है, आप लोग भी इनकी पूजा करो॥९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो जगदीश्वर योगियों को वायु के द्वारा वृद्ध दूत के सदृश दूर देश में वर्त्तमान समाचार वा पदार्थ को जनाता है और अन्तर्यामी हुआ अपने प्रकाश से सबको प्रकाशित और जीवों के कर्मों को जान कर फलों को देता है, अन्तःकरण में वर्त्तमान हुआ न्याय्य और अन्याय्य करने और न करने को चिताता है, वही हम लोगों को अतिशय पूजा करने योग्य ब्रह्म वस्तु है, आप लोग भी ऐसा जानो॥९॥

विष्णुर्गोपाः परमं पाति पाथः प्रिया धामान्यमृता दधानः।
अग्निष्टा विश्वा भुवनानि वेद महद्देवानामसुरत्वमेकम्॥१०॥२९॥

विष्णुः। गोपाः। परमम्। पाति। पाथः। प्रिया। धामानि। अमृता। दधानः। अग्निः। ता। विश्वा। भुवनानि। वेद। महत्। देवानाम्। असुरऽत्वम्। एकम्॥१०॥

पदार्थः-**(विष्णुः)** वेवेष्टि व्याप्नोति चराचरं जगत् स परमात्मा **(गोपाः)** सर्वस्य रक्षकः **(परमम्)** प्रकृष्टम् **(पाति)** रक्षति **(पाथः)** पृथिव्याद्यन्नम् **(प्रिया)** प्रियाणि कमनीयानि सेवितुमर्हाणि **(धामानि)** जन्मस्थाननामानि **(अमृता)** नाशरहितानि प्रकृत्यादीनि **(दधानः)** धरन् पुष्यन्त्सन् **(अग्निः)** पावको विद्युदिव स्वप्रकाशः **(ता)** तानि **(विश्वा)** सर्वाणि **(भुवनानि)** निवासस्थानानि **(वेद)** जानाति **(महत्)** व्यापकं सत् **(देवानाम्)** पृथिव्यादीनां मध्ये **(असुरत्वम्)** सर्वेषां प्रक्षेप्तारम् **(एकम्)** अद्वितीयं ब्रह्म॥१०॥

अन्वयः-हे मनुष्या! योऽग्निरिव विष्णुर्गोपा यानि परमं पाथः प्रिया अमृता धामानि दधानः पाति ता तानि विश्वा भुवनानि वेद तद्देवानां महदेकमसुरत्वं यूयं वित्त॥१०॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्या! योऽस्य जगत उत्पादको धाता पालको विनाशकोऽस्ति सर्वेषां जीवानां हिताय विविधान् पदार्थान्निर्मिमीते तमेव यूयं सेवध्वम्॥१०॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(अग्निः)** अग्निरूप बिजुली के सदृश स्वयं प्रकाशित **(विष्णुः)** चर और अचर संसार में व्यापक परमात्मा **(गोपाः)** सबकी रक्षा करनेवाला परमेश्वर जिन **(परमम्)** उत्तम **(पाथः)** पृथिवी आदि अन्न और **(प्रिया)** कामना करने और सेवा करने योग्य **(अमृता)** नाश से रहित प्रकृति आदि और **(धामानि)** जन्म, स्थान और नाम को **(दधानः)** धारण और पुष्ट करता हुआ **(पाति)** रक्षा करता है, **(ता)** उन **(विश्वा)** सम्पूर्ण **(भुवनानि)** निवासस्थानों को **(वेद)** जानता है, उस **(देवानाम्)** पृथिवी आदिकों के मध्य में **(महत्)** व्यापक हुए **(एकम्)** द्वितीयरहित ब्रह्म **(असुरत्वम्)** सबके फेंकनेवाले को आप लोग जानो॥१०॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो इस संसार का उत्पन्न, धारण, पालन और नाश करनेवाला है और सब जीवों के हित के लिये अनेक प्रकार के पदार्थों का निर्माण करता है, उस ही की आप लोग सेवा करो॥१०॥

नाना॑ चक्राते य॒म्या॒३॑ वपूं॑षि॒ तयो॑र॒न्यद्रोच॑ते कृ॒ष्णम॒न्यत्।
श्या॒वी॑ च॒ यदरु॑षी च॒ स्वसा॑रौ म॒हद्दे॒वाना॑मसुर॒त्वमेक॑म्॥११॥

नाना॑। च॒क्रा॒ते॒ इति॑। य॒म्या॑। वपूं॑षि। तयोः॑। अ॒न्यत्। रोच॑ते। कृ॒ष्णम्। अ॒न्यत्। श्या॒वी॑। च॒। यत्। अरु॑षी। च॒। स्वसा॑रौ। म॒हत्। दे॒वाना॑म्। अ॒सु॒र॒ऽत्वम्। एक॑म्॥११॥

पदार्थः-**(नाना)** अनेकानि **(चक्राते)** कुरुतः **(यम्या)** या सर्वान् प्राणिनो निद्रया नियच्छति सा रात्रिः। **यम्येति रात्रिनामसु पठितम्।** (निघं०१.७) **(वपूंषि)** रूपाणि। **वपुरिति रूपनामसु पठितम्।** (निघं०३.७) **(तयोः)** **(अन्यत्)** **(रोचते)** प्रकाशते **(कृष्णम्)** निकृष्टवर्णं तमः **(अन्यत्)** द्वितीयमावृणोति **(श्यावी)** अन्धकाररूपा **(च)** **(यत्)** या **(अरुषी)** प्रकाशरूपोषा **(च)** **(स्वसारौ)** भगिन्याविव वर्त्तमाने **(महत्)** बृहत् **(देवानाम्)** पृथिव्यादीनां सकाशात् **(असुरत्वम्)** **(एकम्)**॥११॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यद्देवानां महदेकमसुरत्वमस्ति तेन व्यवस्थापिते यत् या श्यावी यम्या चाऽरुषी स्वसाराविव वर्त्तमाने सत्यौ नाना वपूंषि चक्राते तयोरन्यदुषोरूपं रोचते च कृष्णमन्यद्रात्रिरूपमावृणोति तद् ब्रह्म विजानीत॥११॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यदि परमेश्वरो भूमेः सूर्य्यस्य च भ्रमणस्य व्यवस्थां न कुर्य्यात्तर्हि रात्रिदिने कथं सम्भवेतां येन जगदीश्वरेण पुरुषार्थाय दिनं शयनाय शर्वरी निर्मिता तमीश्वरं हृदि सर्वे ध्यायन्तु॥११॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(देवानाम्)** पृथिवी आदिकों के समीप से **(महत्)** बड़ा **(एकम्)** द्वितीयरहित **(असुरत्वम्)** दोषों को फेंकनेवाला है, उससे व्यवस्थापित **(यत्)** जो **(श्यावी)** अन्धकाररूप **(यम्या)** जो सम्पूर्ण प्राणियों को निद्रा से युक्त करती है, वह रात्रि **(च)** और **(अरुषी)** प्रकाशरूप प्रातःकाल **(स्वसारौ)** भगिनी के सदृश वर्त्तमान हुए **(नाना)** अनेक प्रकार के **(वपूंषि)** रूपों को **(चक्राते)** करते हैं **(तयोः)** उनका **(अन्यत्)** अन्य प्रातःकाल रूप **(रोचते)** प्रकाशित होता है **(च)** और **(कृष्णम्)** काला बे काम **(अन्यत्)** दूसरा वर्ण रात्रिरूप जो आवरण करता है, वह जिससे प्रसिद्ध उसको ब्रह्म जानो॥११॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो परमेश्वर पृथिवी और सूर्य्य के घूमने की व्यवस्था को न करे तो रात्रि और दिन कैसे होवें और जिस जगदीश्वर ने पुरुषार्थ के लिये दिन और शयन करने के लिये रात्रि रची उस ईश्वर का हृदय में सब ध्यान करो॥११॥

माता च यत्र दुहिता च धेनू सबर्दुघे धापयेते समीची।
ऋतस्य ते सदसीळे अन्तर्महद्देवानामसुरत्वमेकम्॥१२॥

माता। च। यत्र। दुहिता। च। धेनू इति। सबर्दुघे इति सबःऽदुघे। धापयेते इति। समीची इति सम्ऽईची। ऋतस्य। ते इति। सदसि। ईळे। अन्तः। महत्। देवानाम्। असुरऽत्वम्। एकम्॥१२॥

पदार्थः-**(माता)** मान्यप्रदा जननीव रात्रिः **(च)** **(यत्र)** यस्मिन्त्समये **(दुहिता)** दुहितेवोषा **(च)** **(धेनू)** धेनुवद्रसप्रदे **(सबर्दुघे)** सबः पालकस्य दुग्धादेरिव रसस्य प्रपूरिके **(धापयेते)** पाययतः **(समीची)** सम्यक् प्राप्नुवत्यौ **(ऋतस्य)** जलस्येव सत्यस्य **(ते)** तव **(सदसि)** सभायाम् **(ईळे)** स्तौमि **(अन्तः)** मध्ये **(महत्)** **(देवानाम्)** सभ्यानां विदुषाम् **(असुरत्वम्)** **(एकम्)**॥१२॥

अन्वयः-हे राजन्नहं ते सदसि यथा यत्र माता च दुहिता च समीची सबर्दुघे धेनू ऋतस्य सम्बन्धेन धापयेते तथैव ते सदस्यन्तः स्थितस्सन्नृतस्य देवानाम्महदेकमसुरत्वमीळे॥१२॥

भावार्थः-ये सभ्या जना परमेश्वराद्भीत्वा तदाज्ञाऽनुसारेण यथा रात्रिदिवसौ सर्वस्य जगतो नियमेन पालकौ भवतस्तथैव सभायां धर्मस्य विजयेनाऽधर्मस्य पराजयेन प्रजा आनन्दयन्तु॥१२॥

पदार्थः-हे राजन्! मैं **(ते)** आपकी **(सदसि)** सभा में जैसे **(यत्र)** जिस समय **(माता)** मान को देनेवाली माता के सदृश रात्रि **(च)** और **(दुहिता)** कन्या के सदृश प्रातःकाल **(च)** और **(समीची)** उत्तम प्रकार प्राप्त होती हुई **(सबर्दुघे)** पालन करनेवाले दुग्ध आदि के सदृश रस की पूर्ति करने और **(धेनू)** धेनु के सदृश रस को देनेवाली **(ऋतस्य)** जल के सदृश सत्य के सम्बन्ध से **(धापयेते)** पिलाती हैं, वैसे ही सभा के **(अन्तः)** मध्य में वर्त्तमान हुआ **(ऋतस्य)** जल के सदृश सत्य का **(देवानाम्)** श्रेष्ठ विद्वानों में **(महत्)** बड़े **(एकम्)** द्वितीयरहित **(असुरत्वम्)** दोषों को दूर करनेवाले की **(ईळे)** स्तुति करता हूँ॥१२॥

भावार्थः-जो सभ्य जन परमेश्वर से डरके उसकी आज्ञा के अनुसार जैसे रात्रि और दिन सम्पूर्ण संसार के नियमपूर्वक पालनकर्त्ता होते हैं, वैसे ही सभा में धर्म के विजय और अधर्म के पराजय से प्रजाओं को आनन्दित करें॥१२॥

अ॒न्यस्या॑ व॒त्सं रि॑ह॒ती मि॑माय॒ कया॑ भु॒वा नि द॑धे धे॒नुरूधः॑।

ऋ॒तस्य॒ सा पय॑सापिन्व॒तेळा॑ म॒हद्दे॒वाना॑मसुर॒त्वमेक॑म्॥१३॥

अ॒न्यस्याः॑। व॒त्सम्। रि॒ह॒ती। मि॒मा॒य॒। कया॑। भु॒वा। नि। द॒धे॒। धे॒नुः। ऊधः॑। ऋ॒तस्य॑। सा। पय॑सा। अ॒पि॒न्व॒त॒। इळा॑। म॒हत्। दे॒वाना॑म्। अ॒सु॒र॒ऽत्वम्। एक॑म्॥१३॥

पदार्थः-(**अन्यस्याः**) द्वयोर्मध्य एकतरस्याः (**वत्सम्**) वत्सवत्पालनीयम् (**रिहती**) घ्नन्ती (**मिमाय**) मिमीते (**कया**) (**भुवा**) पृथिव्या (**नि**) (**दधे**) निदधाति (**धेनुः**) गोवद्वर्त्तमाना (**ऊधः**) उषा (**ऋतस्य**) सत्यस्य (**सा**) (**पयसा**) दुग्धेनेव जलेन (**अपिन्वत**) सिञ्चति सेवते वा (**इळा**) पृथिवी। **इळेति पृथिवीनामसु पठितम्।** (निघं०१.१) (**महत्**) (**देवानाम्**) दिव्यानां पृथिव्यादीनाम् (**असुरत्वम्**) (**एकम्**)॥१३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! देवानां मध्ये यन्महदेकमसुरत्वं वर्त्तते तेन नियुक्ता धेनुरिव रात्रिरूधश्चाऽन्यस्या वत्सं रिहती कया भुवा सह मिमाय या निदधे सर्त्तस्य पयसा सहेळापिन्वत॥१३॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः परमात्मा रात्रिदिनाभ्यां पृथिवीस्थान् पदार्थाञ्शयनजागरणार्थाभ्यां प्रकाशाऽन्धकाराभ्यां वृष्ट्या च धेनुवद्रक्षति तमेवार्चत॥१३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**देवानाम्**) उत्तम पृथिवी आदिकों के मध्य में जो (**महत्**) बड़ा (**एकम्**) द्वितीयरहित (**असुरत्वम्**) दोषों को दूर करनेवाला वर्त्तमान है, उससे युक्त (**धेनुः**) गौ के सदृश वर्त्तमान रात्रि और (**ऊधः**) प्रातःकाल (**अन्यस्याः**) दोनों के मध्य में किसी के (**वत्सम्**) बछड़े के सदृश पालन करने योग्य को (**रिहती**) नाश करती हुई (**कया**) किस (**भुवा**) पृथिवी के साथ (**मिमाय**) नापती है जो (**नि, दधे**) धारण करती है (**सा**) वह (**ऋतस्य**) सत्य के (**पयसा**) दुग्ध के सदृश जल के साथ (**इळा**) पृथिवी (**अपिन्वत**) सींचती वा सेवन करती है॥१३॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो परमात्मा रात्रि और दिन से पृथिवी में वर्त्तमान पदार्थों को शयन और जागरण प्रयोजन जिनका उन प्रकाश और अन्धकार तथा वृष्टि से गौ के सदृश रक्षा करता है, उस ही की पूजा करो॥१३॥

प॒द्या व॑स्ते पुरु॒रूपा॒ वपूं॑ष्यू॒र्ध्वा त॑स्थौ॒ त्र्यविं॒ रेरि॑हाणा।

ऋ॒तस्य॒ सद्म॒ वि च॑रामि वि॒द्वान्म॒हद्दे॒वाना॑मसुर॒त्वमेक॑म्॥१४॥

पद्या। वस्ते। पुरुऽरूपा। वपूंषि। ऊर्ध्वा। तस्थौ। त्रिऽअविम्। रेरिहाणा। ऋतस्य। सद्म। वि। चरामि। विद्वान्। महत्। देवानाम्। असुरऽत्वम्। एकम्॥१४॥

पदार्थः-(**पद्या**) पादेष्वंशेषु भवा (**वस्ते**) आच्छादयति (**पुरुरूपा**) बहुरूपा (**वपूंषि**) रूपाणि (**ऊर्ध्वा**) उत्कृष्टा (**तस्थौ**) तिष्ठति (**त्र्यविम्**) कार्य्यकारणजीवाख्यानि त्रीणि वस्तूनि यो रक्षति तम् (**रेरिहाणा**) भृशं लिहन्ती (**ऋतस्य**) सत्यस्य (**सद्म**) गृहम् (**वि**) (**चरामि**) (**विद्वान्**) (**महत्**) (**देवानाम्**) (**असुरत्वम्**) (**एकम्**)॥१४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! विद्वानहं यदृतस्य देवानां च महदेकं सद्मासुरत्वं वि चरामि तेन नियामिता पद्या रात्रिः सर्वान् वस्ते। अन्या त्र्यविं वपूंषि रेरिहाणोर्ध्वा पुरुरूपोषा तस्थौ तं ते यूयञ्च विजानीत॥१४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा दिनं विचित्राणि दर्शयति तथैव रात्रिः सर्वाण्याच्छादयति इम एव सत्यकारणादुत्पद्यमानजन्ये विदित्वा सर्वस्य निर्मातारमीशं च सुखेन विचरन्तु [=विजानन्तु]॥१४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**विद्वान्**) विद्यायुक्त मैं जो (**ऋतस्य**) सत्य और (**देवानाम्**) विद्वानों में (**महत्**) बड़े (**एकम्**) द्वितीयरहित (**सद्म**) स्थान और (**असुरत्वम्**) दोषों के दूर करनेवाले को (**वि, चरामि**) प्राप्त होता हूँ, उससे नियमित (**पद्या**) अंशों में होनेवाली रात्रि सब को (**वस्ते**) आच्छादित करती घेरती है (**अन्या**) (**त्र्यविम्**) कार्य्य, कारण और जीवनामात्मक तीन वस्तुओं की रक्षा करनेवाले और (**वपूंषि**) रूपों को (**रेरिहाणा**) अत्यन्त चाटती हुई (**ऊर्ध्वा**) उत्तम (**पुरुरूपा**) बहुत रूपयुक्त प्रात:काल (**तस्थौ**) स्थित है, उसको वे और आप लोग जानें॥१४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे दिन अनेक रूपों को दिखाता है, वैसे ही रात्रि सबको घेरती है, ये ही सत्य के कारण से उत्पन्न हुए और उत्पन्न होनेवाले को जानकर सबके बनानेवाले परमेश्वर को सुखपूर्वक जानो॥१४॥

पदे इव निहिते दस्मे अन्तस्तयोरन्यद् गुह्यमाविरन्यत्।
सध्रीचीना पथ्या३ सा विषूची महद्देवानामसुरत्वमेकम्॥१५॥३०॥

पदेइवेति पदेऽइव। निहिते इति निऽहिते। दस्मे। अन्तरिति। तयोः। अन्यत्। गुह्यम्। आविः। अन्यत्। सध्रीचीना। पथ्या। सा। विषूची। महत्। देवानाम्। असुरऽत्वम्। एकम्॥१५॥

पदार्थः-(**पदेइव**) यथा पादौ तथा (**निहिते**) धृते (**दस्मे**) उपक्षयित्र्यौ (**अन्तः**) मध्ये (**तयोः**) (**अन्यत्**) (**गुह्यम्**) गुप्तम् (**आविः**) रक्षकम् (**अन्यत्**) (**सध्रीचीना**) सहाञ्चन्ती (**पथ्या**) पथोऽनपेता स्वकक्षां विहायाऽन्यत्रागन्त्री (**सा**) (**विषूची**) या विषून् व्याप्तानञ्चति सा (**महत्**) (**देवानाम्**) (**असुरत्वम्**) (**एकम्**)॥१५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! देवानां यन्महदेकमसुरत्वमस्ति येन दस्मे पदेइव निहिते रात्रिदिने वर्त्तेते यान्या सध्रीचीना पथ्या सा विषूची वर्त्तेते तयोरन्तरन्यद्गुह्यमन्यच्चाविरस्ति तत्सर्वं विजानीत॥१५॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। यथा मनुष्या द्वाभ्यां पादाभ्यां गच्छन्ति तथैव रात्रिदिने गच्छतः। यथा दिनं पथ्यमस्ति तथा रात्रिः पथ्या न भवति। एवं सर्वान्तर्य्यामि ब्रह्म विहायान्यदुपासितं पथ्यं न जायते॥१५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(देवानाम्)** विद्वानों का जो **(महत्)** बड़ा **(एकम्)** द्वितीयरहित **(असुरत्वम्)** दोषों को दूर करनेवाला है और जिससे **(दस्मे)** नाश होनेवाले **(पदेइव)** पैरों के सदृश **(निहिते)** धारण किये गये रात्रि और दिन वर्त्तमान हैं, जो अन्य **(सध्रीचीना)** एक साथ सेवन करती हुई **(पथ्या)** अपनी कक्षा को त्याग के अन्यत्र नहीं जानेवाली **(सा)** वह **(विषूची)** व्याप्त पदार्थों का सेवन करती है **(तयोः)** उनके **(अन्तः)** मध्य में **(अन्यत्)** दूसरा **(गुह्यम्)** गुप्त **(अन्यत्)** अन्य **(आविः)** रक्षा करनेवाला है, उस सबको जानो॥१५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे मनुष्य लोग दो पैरों से चलते हैं, वैसे ही रात्रि और दिन चलते हैं और जैसे दिन पथ्य है, वैसे रात्रि पथ्य नहीं होती है। इसी प्रकार सर्वान्तर्यामी ब्रह्म को त्याग करके अन्य उपासित हुआ पथ्य नहीं होता है॥१५॥

आ धेनवो धुनयन्तामशिश्वीः सबर्दुघाः शशया अप्रदुग्धाः।
नव्यानव्या युवतयो भवन्तीर्महद्देवानामसुरत्वमेकम्॥१६॥

आ। धेनवः। धुनयन्ताम्। अशिश्वीः। सबःऽदुघाः। शशयाः। अप्रऽदुग्धाः। नव्याःऽनव्याः। युवतयः। भवन्तीः। महत्। देवानाम्। असुरऽत्वम्। एकम्॥१६॥

पदार्थः-**(आ)** समन्तात् **(धेनवः)** वाचः **(धुनयन्ताम्)** कम्पन्ताम् **(अशिश्वीः)** अबालाः **(सबर्दुघाः)** सर्वान् कामान् प्रपूरिकाः **(शशयाः)** शयाना इव **(अप्रदुग्धाः)** न केनापि प्रकर्षतया दुग्धाः **(नव्यानव्याः)** नवीनानवीनाः **(युवतयः)** प्राप्तयौवनावस्था ब्रह्मचारिण्यः **(भवन्तीः)** भवन्त्यः **(महत्)** **(देवानाम्)** **(असुरत्वम्)** **(एकम्)**॥१६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! युष्माकं सबर्दुघाः शशया अप्रदुग्धा धेनवो अशिश्वीर्नव्यानव्या भवन्तीर्युवतय इव देवानां महदेकमसुरत्वमाधुनयन्ताम्॥१६॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा प्रथमे वयसि वर्त्तमाना अधीतविद्या अबाला ब्रह्मचारिण्यः स्वसदृशान् पतीनुपनीयाऽऽनन्दन्ति तथैव सर्वविद्यायुक्ता वाचो प्राप्य विद्वांसः सुखयन्ति॥१६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! आप लोगों के **(सबर्दुघाः)** सब मनोरथों को पूर्ण करनेवाली **(शशयाः)** शयन करती सी हुईं **(अप्रदुग्धाः)** नहीं किसी करके भी बहुत दुही गईं **(धेनवः)** वाणियां **(अशिश्वीः)** बालाओं से भिन्न **(नव्यानव्याः)** नवीन-नवीन **(भवन्तीः)** होती हुईं **(युवतयः)** यौवनावस्था को प्राप्त ब्रह्मचारिणी स्त्रियाँ जैसे वैसे **(देवानाम्)** विद्वानों में **(महत्)** बड़े **(एकम्)** द्वितीयरहित **(असुरत्वम्)** दोषों के दूर करनेवाले को **(आ, धुनयन्ताम्)** अच्छे प्रकार कंपाइये॥१६॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे प्रथम अवस्था में वर्त्तमान विद्या पढ़ी हुई बालाभिन्न ब्रह्मचारिणी स्त्रियाँ अपने सदृश पतियों को प्राप्त होकर आनन्दित होती हैं, वैसे ही सर्व विद्याओं से युक्त वाणियों को प्राप्त होकर विद्वान् लोग सुखी होते हैं॥१६॥

यदुन्यासु वृषभो रोरवीति सो अन्यस्मिन् यूथे नि दधाति रेतः।
स हि क्षपावान्त्स भगः स राजा महद्देवानामसुरत्वमेकम्॥१७॥

यत्। अन्यासु। वृषभः। रोरवीति। सः। अन्यस्मिन्। यूथे। नि। दधाति। रेतः। सः। हि। क्षपाऽवान्। सः। भर्गः। सः। राजा। महत्। देवानाम्। असुरऽत्वम्। एकम्॥१७॥

पदार्थः-**(यत्)** यः **(अन्यासु)** रात्रिषूषःसु च **(वृषभः)** बलिष्ठः **(रोरवीति)** भृशं शब्दयति **(सः)** **(अन्यस्मिन्)** **(यूथे)** समूहे **(नि)** **(दधाति)** **(रेतः)** वीर्य्यम् **(सः)** **(हि)** यतः **(क्षपावान्)** क्षपा रात्रिः सम्बन्धिनी यस्य सः चन्द्रः **(सः)** **(भगः)** ऐश्वर्य्यप्रदः सूर्य्यः **(सः)** **(राजा)** प्रकाशमानः **(महत्)** **(देवानाम्)** **(असुरत्वम्)** **(एकम्)**॥१७॥

अन्वयः-यद्यो वृषभः सूर्य्योऽन्यासु रात्रिषूषःसु च रोरवीति सोऽन्यस्मिन् यूथे चन्द्रादिषु रेतो निदधाति हि यतस्स क्षपावान्त्सस्सभगस्स राजा देवानां महदेकमसुरत्वं प्राप्यं भवति॥१७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः सूर्य्यो रात्र्यन्ते दिनादौ सर्वान् प्राणिनो जजागरित्वा संशब्द्य व्यवहार्य्य श्रीः प्रापयति रात्रौ च चन्द्रादिषु किरणान् प्रक्षिप्य प्रकाशयति सोऽयं प्रकाशमानो जगदीश्वरेणोत्पादित इति वेद्यम्॥१७॥

पदार्थः-**(यत्)** जो **(वृषभः)** बलयुक्त सूर्य्य **(अन्यासु)** रात्रि और प्रातःकालों में **(रोरवीति)** अत्यन्त शब्द करता है **(सः)** वह **(अन्यस्मिन्)** अन्य **(यूथे)** समूह में चन्द्र आदिकों में **(रेतः)** पराक्रम का **(निदधाति)** स्थापना करता है। **(हि)** जिससे कि **(सः)** वह **(क्षपावान्)** रात्रिवान् अर्थात् रात्रि जिसकी सम्बन्धिनी होती और **(सः)** वह **(भगः)** ऐश्वर्य्यों का दाता सूर्य्य तथा **(सः)** वह **(राजा)** प्रकाशमान होता **(देवानाम्)** विद्वानों में **(महत्)** बड़ा **(एकम्)** एक यह **(असुरत्वम्)** दोषों को दूर करनेवाला प्राप्त होने योग्य गुण होता है॥१७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो सूर्य्य रात्रि के अन्त और दिन के आदि में सब प्राणियों को निरन्तर

जगाय के शब्द कराय और व्यवहार कराय के लक्ष्मियों को प्राप्त कराता है और रात्रि में चन्द्र आदिकों में किरणों को रख के प्रकाश कराता सो यह प्रकाशमान जगदीश्वर से उत्पन्न किया गया, ऐसा जानना चाहिये॥१७॥

अथेश्वरगुणानाह॥

अब ईश्वर के गुणों का वर्णन अगले मन्त्र में करते हैं॥

वी॒रस्य॒ नु स्वश्व्यं॑ जनास॒: प्र नु वो॑चाम वि॒दुर॑स्य दे॒वा:।
षोळ्हा यु॒क्ता: पञ्च॑प॒ञ्चा व॑हन्ति म॒हद्दे॒वाना॑मसु॒र॒त्वमेक॑म्॥ १८॥

वी॒रस्य॑। नु। सु॒ऽअश्व्य॑म्। ज॒नास॒:। प्र। नु। वो॒चा॒म॒। वि॒दु:। अ॒स्य॒। दे॒वा:। षो॒ळ्हा। यु॒क्ता:। पञ्च॑ऽपञ्च। आ। व॒हन्ति॒। म॒हत्। दे॒वाना॑म्। अ॒सु॒र॒ऽत्वम्। एक॑म्॥ १८॥

पदार्थ:-(**वीरस्य**) प्राप्तशौर्य्यादिगुणस्य (**नु**) सद्य: (**स्वश्व्यम्**) शोभनेष्वश्वेषु साधु वच: (**जनास:**) विद्यासु प्रादुर्भूता: (**प्र**) (**नु**) (**वोचाम**) उपदिशेम (**विदु:**) जानन्ति (**अस्य**) (**देवा:**) विद्वांस: (**षोढा**) षट् प्रकारा: (**युक्ता:**) (**पञ्चपञ्च**) (**आ**) (**वहन्ति**) प्राप्नुवन्ति (**महत्**) (**देवानाम्**) (**असुरत्वम्**) (**एकम्**)॥१८॥

अन्वय:-हे जनासो वयमस्य वीरस्य स्वश्व्यं नु प्रवोचाम ये युक्ता: देवा देवानां महदेकमसुरत्वं विदुर्ये षोढा युक्ता: पञ्चपञ्च यदा वहन्ति तद्विदुस्तान् प्रति वयमेतद् ब्रह्म नु वोचाम॥१८॥

भावार्थ:-हे मनुष्या! यस्य प्राप्तौ पञ्च प्राणा निमित्तं यं सर्वे योगिन: समाधिना जानन्ति तस्यैवोपासनं भृत्यानां वीरत्वजनकमस्तीति वयमुपदिशेम॥१८॥

पदार्थ:-हे (**जनास:**) विद्याओं में प्रकट हुए मनुष्यो! हम (**अस्य**) इस (**वीरस्य**) शौर्य्य आदि गुणों को प्राप्त हुए शूर को (**स्वश्व्यम्**) अति उत्तम अश्वविषयक अच्छे वचन का (**नु**) शीघ्र (**प्र, वोचाम**) उपदेश देवें जो (**युक्ता:**) संयुक्त हुए (**देवा:**) विद्वान् जन (**देवानाम्**) विद्वानों में (**महत्**) बड़े (**एकम्**) एक (**असुरत्वम्**) दोषों को दूर करने को (**विदु:**) जानते और जो (**षोढा**) छ: प्रकार की संयुक्त इन्द्रियां और (**पञ्चपञ्च**) पाँच-पाँच प्राण जिस विषय को (**आ, वहन्ति**) प्राप्त होते हैं, उसको जानते हैं, उनके प्रति हम लोग इस ब्रह्म का (**नु**) शीघ्र उपदेश देवें॥१८॥

भावार्थ:-हे मनुष्यो! जिसकी प्राप्ति में पाँच प्राण निमित्त और जिसको सब योगी लोग समाधि से जानते हैं, उसी की उपासना भृत्यों के वीरपन को उत्पन्न करनेवाली है, ऐसा हम लोग उपदेश देवें॥१८॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

दे॒वस्त्वष्टा॑ सवि॒ता वि॒श्वरू॑पः पु॒पोष॑ प्र॒जाः पु॑रु॒धा ज॑जान।
इ॒मा च॒ विश्वा॒ भुव॑नान्यस्य म॒हद्दे॒वाना॑मसुर॒त्वमेक॑म्॥ १९॥

दे॒वः। त्वष्टा॑। स॒वि॒ता। वि॒श्वऽरू॑पः। पु॒पोष॑। प्र॒ऽजाः। पु॒रु॒धा। ज॒जा॒न। इ॒मा। च॒। विश्वा॑। भुव॑नानि। अ॒स्य॒। म॒हत्। दे॒वाना॑म्। अ॒सु॒र॒ऽत्वम्। एक॑म्॥ १९॥

पदार्थः-(**देवः**) देदीप्यमानः (**त्वष्टा**) प्रकाशकः (**सविता**) प्रेरकः (**विश्वरूपः**) विश्वानि रूपाणि यस्मात् सः (**पुपोष**) पुष्यति (**प्रजाः**) प्रजाताः (**पुरुधा**) बहुधा (**जजान**) जनयति (**इमा**) इमानि (**च**) (**विश्वा**) सर्वाणि (**भुवनानि**) लोकजातानि (**अस्य**) परमेश्वरस्य (**महत्**) (**देवानाम्**) (**असुरत्वम्**) (**एकम्**)॥ १९॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्त्वष्टा परमेश्वरो देवो विश्वरूपः सवितेव प्रजाः पुपोष इमा विश्वा भुवनानि च पुरुधा जजानास्येदमेव देवानां महदेकमसुरत्वमस्तीति वेद्यम्॥ १९॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्य्यः सर्वं जगत्पालयति तथैव जगदीश्वरः सूर्य्यादिकं बहुविधं जगन्निर्माय रक्षति। इदमेव परमात्मनो महदाश्चर्य्यं कर्माऽस्तीति बोध्यम्॥ १९॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**त्वष्टा**) प्रकाश करनेवाला परमेश्वर (**देवः**) प्रकाशमान (**विश्वरूपः**) जिससे सम्पूर्ण रूप हैं ऐसे (**सविता**) प्रेरणा करनेवाले सूर्यमण्डल के सदृश (**प्रजाः**) उत्पन्न हुए प्राणी-अप्राणी को (**पुपोष**) पुष्ट करता है और (**इमा**) इन (**विश्वा**) सम्पूर्ण (**भुवनानि**) लोकों को (**च**) भी (**पुरुधा**) बहुत प्रकार से (**जजान**) उत्पन्न करता है (**अस्य**) इस परमेश्वर का यही (**देवानाम्**) विद्वानों के बीच (**महत्**) बड़ा (**एकम्**) एक (**असुरत्वम्**) दोषों को दूर करनेवाला गुण है, ऐसा जानना चाहिये॥ १९॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य जगत् का पालन करता है, वैसे ही जगदीश्वर सूर्य्य आदि अनेक प्रकार संसार को बनाय करके रक्षा करता है। यही परमात्मा का बड़ा आश्चर्य्य कर्म है, ऐसा जानना चाहिये॥ १९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

म॒ही समै॑रच्च॒म्वा॑ समी॒ची उ॒भे ते अ॒स्य वसु॑ना॒ न्यृ॑ष्टे।
शृ॒ण्वे वी॒रो वि॒न्दमा॑नो॒ वसू॑नि म॒हद्दे॒वाना॑मसुर॒त्वमेक॑म्॥ २०॥

म॒ही इति॑। सम्। ऐ॒र॒त्। च॒म्वा॑। स॒मी॒ची इति॑ स॒म्ऽई॒ची। उ॒भे इति॑। ते इति॑। अ॒स्य॒। वसु॑ना। न्यृ॑ष्टे इति॑ नि॒ऽऋ॑ष्टे। शृ॒ण्वे। वी॒रः। वि॒न्दमा॑नः। वसू॑नि। म॒हत्। दे॒वाना॑म्। अ॒सु॒र॒ऽत्वम्। एक॑म्॥ २०॥

पदार्थः-(**मही**) महत्यौ (**सम्**) (**ऐरत्**) प्रेरयति (**चम्वा**) सनयेव (**समीची**) सम्यक् प्राप्ते (**उभे**) (**ते**) (**अस्य**) (**वसुना**) द्रव्यैस्सह (**न्यृष्टे**) निश्चितं स्वरूपं प्राप्ते (**शृण्वे**) (**वीरः**) विद्यमानबलः (**विन्दमानः**) प्राप्नुवन् (**वसूनि**) धनानि (**महत्**) (**देवानाम्**) (**असुरत्वम्**) (**एकम्**)॥२०॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो जगदीश्वरस्त उभे मही समीची द्यावापृथिव्यौ चम्वेव समैरदस्य वसुना सह न्यृष्टे स्तस्तद्देवानां महदेकमसुरत्वं वसूनि च विन्दमानो वीरोऽहं ब्रह्म नित्यं शृण्वे तद्यूयमपि सततं श्रुत्वैतानि प्राप्नुत॥२०॥

भावार्थः-नहि कश्चिदपि परमेश्वराज्ञापालनेन विना महदैश्वर्यं लभते न चाप्तेभ्यः श्रवणादिना विना परमात्मनो बोधः कश्चिदाप्नोति तत्सर्वैः परमेश्वराज्ञां पालयित्वैश्वर्य्यवद्भिर्भवितव्यम्॥२०॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो जगदीश्वर (**ते**) उन (**उभे**) दोनों (**मही**) बड़ी (**समीची**) उत्तम प्रकार प्राप्त अन्तरिक्ष और पृथिवी को (**चम्वा**) सेना से जैसे वैसे (**सम्, ऐरत्**) प्रेरणा करता है, वह दोनों (**अस्य**) इसके (**वसुना**) द्रव्यों के साथ (**न्यृष्टे**) निश्चित स्वरूप को प्राप्त हुई हैं (**देवानाम्**) विद्वानों के उस (**महत्**) बड़े (**एकम्**) एक (**असुरत्वम्**) दोषों के दूर करनेवाले को और (**वसूनि**) धनों को (**विन्दमानः**) प्राप्त होता हुआ (**वीरः**) बल से युक्त मैं ब्रह्म का नित्य (**शृण्वे**) श्रवण करूं, उसको आप लोग भी निरन्तर सुनके उन सबों को प्राप्त हूजिये॥२०॥

भावार्थः-कोई भी पुरुष परमेश्वर की आज्ञापालन के विना बड़े ऐश्वर्य्य को नहीं प्राप्त होता है और यथार्थवक्ता पुरुषों से सुने विना परमात्मा का बोध किसी को भी नहीं प्राप्त होता है, तिससे सब लोगों को चाहिये कि परमेश्वर की आज्ञा का पालन करके ऐश्वर्य्यवान् होवें॥२०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इमां च नः पृथिवीं विश्वधाया उप क्षेति हितमित्रो न राजा।

पुरः सदः शर्मसदो न वीरा महद्देवानामसुरत्वमेकम्॥२१॥

इमाम्। च। नः। पृथिवीम्। विश्वऽधायाः। उप। क्षेति। हितऽमित्रः। न। राजा। पुरःऽसदः। शर्मऽसदः। न। वीराः। महत्। देवानाम्। असुरऽत्वम्। एकम्॥२१॥

पदार्थः-(**इमाम्**) (**च**) (**नः**) अस्मान् (**पृथिवीम्**) (**विश्वधायाः**) या विश्वं दधाति तस्याः (**उप**) (**क्षेति**) उपवसति (**हितमित्रः**) हितानि धृतानि मित्राणि येन सः (**न**) इव (**राजा**) विद्याविनयाभ्यां प्रकाशमानः (**पुरःसदः**) ये पुरः सीदन्ति ते (**शर्मसदः**) ये शर्मणि गृहे सीदन्ति ते (**न**) इव (**वीराः**)

क्षात्रधर्मयुक्ता: **(महत्)** **(देवानाम्)** देदीप्यमानानां राज्ञाम् **(असुरत्वम्)** शत्रूणां प्रक्षेप्तृत्वम् **(एकम्)** असहायम्॥२१॥

अन्वय:-हे मनुष्या! यो न इमां द्यां पृथिवीं च विश्वधाया हितमित्रो राजा न उप क्षेति पुर:सद: शर्मसदो वीरा न विजयं ददाति तदेव देवानां महदेकमसुरत्वमस्माभिरुपासनीयमस्ति॥२१॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कार:। हे मनुष्या! यो धर्मात्मराजवज्जगति निवासयति धनुर्वेदविद्वीरवद्विजयं दापयति तदेव ब्रह्माऽस्माकमुपास्यमस्तीति॥२१॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जो **(न:)** हम लोगों के **(इमाम्)** इस अन्तरिक्ष **(च)** और **(पृथिवीम्)** भूमि को समीप **(विश्वधाया:)** सम्पूर्ण को धारण करनेवाली पृथिवी उसके **(हितमित्र:)** मित्रों को धारण करनेवाले **(राजा)** विद्या और विनय से प्रकाशमान अधिपति से **(न)** सदृश **(उप, क्षेति)** वसता है और **(पुर:सद)** आगे चलने और **(शर्मसद:)** गृह में ठहरनेवाले **(वीरा:)** क्षात्रधर्म से युक्त शूरों के **(न)** तुल्य विजय देता है, वही **(देवानाम्)** प्रकाशमान राजा लोगों में **(महत्)** बड़ा **(एकम्)** सहायरहित **(असुरत्वम्)** शत्रुओं को दूर करनेवाला हम लोगों से उपासना करने योग्य है॥२१॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जो धर्मात्मा राजा के सदृश संसार में निवास कराता और धनुर्वेद के जाननेवाले वीर के सदृश विजय दिलाता है, वही ब्रह्म हम लोगों को उपासना करने योग्य है॥२१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

नि॒ष्षि॒ध्व॑रीस्त॒ ओष॑धीरु॒तापो॑ र॒यिं त॑ इन्द्र पृथि॒वी बि॑भर्ति।

सखा॑यस्ते वा॒म॒भाजः॑ स्याम म॒हद्दे॒वाना॑मसु॒र॒त्वमेक॑म्॥२२॥३१॥३॥

नि॒:ऽसिध्व॑री:। ते॒। ओष॑धी:। उ॒त। आप॑:। र॒यिम्। ते॒। इ॒न्द्र॒। पृ॒थि॒वी। बि॒भ॒र्ति॒। सखा॑य:। ते॒। वा॒म॒ऽभाजः॑। स्या॒म॒। म॒हत्। दे॒वाना॑म्। अ॒सु॒र॒ऽत्वम्। एक॑म्॥२२॥

पदार्थ:-**(निष्षिध्वरी:)** नितरां मङ्गलकारिणी: **(ते)** तव **(ओषधी:)** सोमाद्या: **(उत)** अपि **(आप:)** जलानि **(रयिम्)** श्रियम् **(ते)** तव **(इन्द्र)** परमैश्वर्य्यप्रदेश्वर **(पृथिवी)** **(बिभर्ति)** धरति पुष्यति वा **(सखाय:)** सुहृद: सन्त: **(ते)** तव **(वामभाज:)** प्रशस्तकर्मसेविनश्श्रेष्ठभोगा वा **(स्याम)** **(महत्)** सर्वेभ्यो बृहत् **(देवानाम्)** सूर्य्यादीनाम् **(असुरत्वम्)** **(एकम्)** अद्वितीयम्॥२२॥

अन्वय:-हे इन्द्र! यथा ते सृष्टौ पृथिवी निष्षिध्वरी ओषधीर्बिभर्ति। उतापि त आपो रयिं बिभर्ति तदेव देवानाम्महदेकमसुरत्वं प्राप्य ते वामभाज: सखायो वयं स्याम॥२२॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे जगदीश्वर! येन भवताऽस्माकं सुखाय सृष्ट्यां विविधा ओषधय आपो निर्मितास्तस्य ते वयमुपासका भवेम। भवन्तं विहायाऽन्यस्योपासनं कदाचिन्न कुर्य्यामेति॥२२॥

अत्राऽहर्निशविद्वद्द्यावापृथिवीराजधर्मेश्वरगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यृक् संहितायां तृतीयाष्टके तृतीयोऽध्याय एकत्रिंशो वर्गस्तृतीये मण्डले पञ्चपञ्चाशत्तमं सूक्तञ्च समाप्तम्॥

पदार्थः-हे **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य के देनेवाले ईश्वर! जैसे **(ते)** आपकी सृष्टि में **(पृथिवी)** भूमि **(निष्षिध्वरीः)** अत्यन्त मङ्गल करनेवाली **(ओषधीः)** सोमलता आदि ओषधियों को **(बिभर्ति)** धारण वा पोषण करती है **(उत)** और **(ते)** आपके **(आपः)** जल **(रयिम्)** लक्ष्मी को धारण करते हैं उसी **(देवानाम्)** सूर्य्य आदिकों में **(महत्)** सबसे बड़े **(एकम्)** द्वितीयरहित **(असुरत्वम्)** शत्रुओं के नाश करनेवाले को प्राप्त होकर **(ते)** आपके **(वामभाजः)** उत्तम कर्मों के सेवन करने वा श्रेष्ठ भोग भोगनेवाले **(सखायः)** मित्र हम लोग **(स्याम)** होवें॥२२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे जगदीश्वर! जिन आपने हम लोगों के सुख के लिये सृष्टि में अनेक प्रकार की ओषधियां और जल रचे उन आपके हम लोग उपासना करनेवाले होवें और आपको छोड़ के दूसरे की उपासना कभी न करें॥२२॥

इस सूक्त में दिन, रात्रि, विद्वान्, अन्तरिक्ष, पृथिवी, राजधर्म और ईश्वर के गुणवर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह ऋग्वेद की संहिता के तीसरे अष्टक में तीसरा अध्याय इकतीसवां वर्ग और तीसरे मण्डल में पचपनवां सूक्त समाप्त हुआ॥

॥ओ३म्॥

अथ तृतीयाऽष्टके चतुर्थाऽध्यायाऽऽरम्भः॥

अब तृतीयाष्टक में चौथे अध्याय का आरम्भ है॥

ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव। यद्भद्रं तन्न आ सुव॥ ऋ०५.८२.५॥

अथाऽष्टर्चस्य षट्पञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य प्रजापतिर्वैश्वामित्रो वाच्यो वा ऋषयः। विश्वे देवा देवताः। १, ६, ८ निचृत्त्रिष्टुप्। ३,४ विराट् त्रिष्टुप्। ५, ७ त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। २ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथेश्वरगुणानाह॥

अब छप्पनवें सूक्त का आरम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में ईश्वर के गुणों को कहते हैं॥

न ता मिनन्ति मायिनो न धीरा व्रता देवानां प्रथमा ध्रुवाणि।

न रोदसी अद्रुहा वेद्याभिर्न पर्वता निनमे तस्थिवांसः॥१॥

न। ता। मिनन्ति। मायिनः। न। धीराः। व्रता। देवानाम्। प्रथमा। ध्रुवाणि। न। रोदसी इति। अद्रुहा। वेद्याभिः। न। पर्वताः। निऽनमे। तस्थिऽवांसः॥१॥

पदार्थः-(**न**) (**ता**) तानि (**मिनन्ति**) हिंसन्ति (**मायिनः**) निन्दिता माया प्रज्ञा येषान्ते (**न**) (**धीराः**) ध्यानवन्तः श्रेष्ठाः (**व्रता**) उत्तमानि कर्माणि (**देवानाम्**) आप्तानां विदुषाम् (**प्रथमा**) आदिमानि (**ध्रुवाणि**) अखण्डितानि (**न**) (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**अद्रुहा**) द्रोहरहितावध्यापकोपदेशकौ (**वेद्याभिः**) वेत्तुं योग्याभिः प्रजाभिः (**न**) निषेधे (**पर्वताः**) शैलाः (**निनमे**) नमनीये स्थाने (**तस्थिवांसः**) तिष्ठन्तः॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ईश्वरेण देवानां यानि प्रथमा ध्रुवाणि व्रतोपदिष्टानि निर्मितानि वा ता मायिनो न मिनन्ति धीरा न मिनन्ति रोदसी न मिनुतोऽद्रुहा न मिनुतो वेद्याभिस्सह निनमे वर्त्तमानास्तस्थिवांसः पर्वताश्च न मिनन्ति तानि यूयं विदित्वाचरत॥१॥

भावार्थः-नहि कस्यापि शक्तिरस्ति य ईश्वरकृतान्नियमानुल्लङ्घेत यस्य निर्भ्रमानि शन्तमाणि कर्माणि सन्ति तमेव दयानिधिं परमेश्वरं सर्व उपासीरन्॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! ईश्वर ने (**देवानाम्**) यथार्थवादी विद्वानों के जो (**प्रथमा**) आदि में वर्त्तमान (**ध्रुवाणि**) अखण्डित (**व्रता**) उत्तम कर्म उपदेश किये गये वा रचे गये (**ता**) उनका (**मायिनः**) निन्दित बुद्धिवाले (**न**) नहीं (**मिनन्ति**) नाश करते हैं (**धीराः**) ध्यान करनेवाले श्रेष्ठ पुरुष नहीं नाश करते हैं (**रोदसी**) अन्तरिक्ष और पृथिवी (**न**) नहीं नाश करते हैं (**अद्रुहा**) द्रोह से रहित अध्यापक और उपदेशक (**न**) नहीं नाश करते हैं (**वेद्याभिः**) जानने के योग्य प्रजाओं के साथ (**निनमे**) नवने के योग्य स्थान में

(तस्थिवांसः) स्थित होते हुए **(पर्वताः)** पर्वत **(न)** नहीं नाश करते हैं, उनको आप जानके आचरण करो॥१॥

भावार्थः-किसी का भी सामर्थ्य नहीं है कि जो ईश्वर के किये हुए नियमों का उल्लङ्घन करे और जिस परमेश्वर के भ्रमरहित सुखरूप कर्म हैं, उसी दयानिधि परमेश्वर की सब लोग उपासना करो॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

षड्भाराँ एको अचरन् बिभर्त्यृतं वर्षिष्ठमुप गाव आगुः।
तिस्रो महीरुपरास्तस्थुरत्या गुहा द्वे निहिते दर्श्येका॥२॥

षट्। भारान्। एकः। अचरन्। बिभर्ति। ऋतम्। वर्षिष्ठम्। उप। गावः। आ। अगुः। तिस्रः। महीः। उपराः। तस्थुः। अत्याः। गुहा। द्वे इति। निहिते इति निऽहिते। दर्शि। एका॥२॥

पदार्थः-**(षट्)** **(भारान्)** पञ्चतत्त्वानि महत्तत्वञ्च **(एकः)** स्थिरः **(अचरन्)** **(बिभर्ति)** धरति पुष्यति वा **(ऋतम्)** सत्यं कारणम् **(वर्षिष्ठम्)** अतिशयेन वृद्धम् **(उप)** **(गावः)** किरणाः **(आ)** **(अगुः)** आगच्छन्ति **(तिस्रः)** स्थूला मध्या सूक्ष्मा च **(महीः)** भूमीः **(उपराः)** मेघाः **(तस्थुः)** तिष्ठन्ति **(अत्याः)** अतन्ति सर्वत्र व्याप्नुवन्ति त आकाशादयः **(गुहा)** गुहायां महत्तत्त्वाख्यायां समष्टिबुद्धौ **(द्वे)** कार्य्यकारणे **(निहिते)** संधृते **(दर्शि)** दृश्यते **(एका)** कार्याख्या॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! येन जगदीश्वरेण संसारे द्वे निहिते तयोरेका दर्श्यत्या गुहा उपराश्च तस्थुरुपराश्च तिस्रो महीर्गाव उपागुस्तान् षड् भारानचरन्त्सन्नेक असहाय ईश्वर वर्षिष्ठमृतं च बिभर्ति तमेव सततं ध्यायत॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! येन परमेश्वरेण प्रकृत्यादिभूम्यन्तं जगन्निर्माय धृत्वा संपाल्य व्यवस्थाप्यते स एव पूज्योऽस्तीति मन्यध्वम्॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिस जगदीश्वर ने इस संसार में **(द्वे)** दो कार्य और कारण **(निहिते)** धारण किये, उन दोनों के मध्य में **(एका)** एक कार्य नामक **(दर्शि)** देख पड़ता है **(अत्याः)** सर्वत्र व्यापक होने वाले आकाशादि वा **(गुहा)** महत्तत्त्वनामक सम्पूर्ण बुद्धि में **(उपराः)** मेघ **(तस्थुः)** स्थित होते और मेघ **(तिस्रः)** स्थूल, मध्य और सूक्ष्म **(महीः)** भूमियों को और **(गावः)** किरणें **(उप, आ, अगुः)** प्राप्त होते हैं, उन **(षट्)** छः **(भारान्)** पञ्चतत्त्व और महत्तत्त्व अर्थात् बुद्धि को **(अचरन्)** न कंपाता हुआ **(एकः)** सहायरहित ईश्वर **(वर्षिष्ठम्)** अतीव बढ़े हुए **(ऋतम्)** सत्य कारण का **(बिभर्ति)** धारण वा पोषण करता है, उसी का निरन्तर ध्यान करो॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जिस परमेश्वर ने प्रकृति आदि भूमि पर्य्यन्त संसार रच, धारण कर और उत्तम प्रकार पालन करके व्यवस्थापित अर्थात् ढंग पर चलाया जाता है, वही पूज्य है, ऐसा मानो॥२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्रिपाजस्यो वृषभो विश्वरूप उत त्र्युधा पुरुध प्रजावान्।
त्र्यनीकः पत्यते माहिनावान्त्स रेतोधा वृषभः शश्वतीनाम्॥३॥

त्रिऽपाजस्यः। वृषभः। विश्वऽरूपः। उत। त्रिऽउधा। पुरुध। प्रजाऽवान्। त्रिऽअनीकः। पत्यते। माहिनऽवान्। सः। रेतःऽधाः। वृषभः। शश्वतीनाम्॥३॥

पदार्थः-(**त्रिपाजस्यः**) त्रिषु शरीरात्मसम्बन्धिबलेषु साधुः (**वृषभः**) वर्षकः (**विश्वरूपः**) विश्वमखिलं रूपं यस्मिन् यस्माद्वा सः (**उत**) अपि (**त्र्युधा**) त्रीणि कारणसूक्ष्मस्थूलान्यूधांसि यस्मिन् सः। अत्र वर्णव्यत्ययेन ह्रस्वः। (**पुरुध**) यः पुरून् बहून् दधाति तत्सम्बुद्धौ (**प्रजावान्**) बह्व्यः प्रजा विद्यन्ते यस्य सः (**त्र्यनीकः**) त्रीणि त्रिगुणान्यनीकानि सैन्यानि यस्य सः (**पत्यते**) पतिरिवाचरति (**माहिनावान्**) बहूनि माहिनानि सत्करणानि विद्यन्ते यस्य सः (**सः**) (**रेतोधाः**) यो रेत उदकमिव वीर्यं दधाति सः (**वृषभः**) अनन्तबलः (**शश्वतीनाम्**) अनादिभूतानां प्रकृतिजीवाख्यानां प्रजानाम्॥३॥

अन्वयः-हे पुरुध विद्वन्! यस्त्रिपाजस्यो वृषभस्त्र्युधा विश्वरूपो विद्युदिव उतापि प्रजावाँस्त्र्यनीक इव माहिनावान् पत्यते स वृषभश्शश्वतीनां रेतोधाः सूर्यइव वीर्यप्रदोऽस्तीति विजानीहि॥३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यो जगदीश्वरो विद्युद्वत्सर्वत्राऽभिव्याप्य प्रकाशको धर्त्ता उतापि न्यायाधीशस्स्वाम्यनन्तमहिमयुक्तोऽनादिभूतानां न्यायाधीशो वर्त्तते तस्माद् भीत्वा पापानि त्यक्त्वा प्रीत्या धर्ममाचर्य तमेव स्वान्ते सर्वे समादधीरन्॥३॥

पदार्थः-हे (**पुरुध**) बहुतों को धारण करनेवाले विद्वान् पुरुध! जो (**त्रिपाजस्यः**) तीन- शरीर आत्मा और सम्बन्धियों के बलों में निपुण (**वृषभः**) वृष्टिकर्त्ता (**त्र्युधा**) जिसमें तीन अर्थात् कारण, सूक्ष्म और स्थूल बढ़े हुए जीव शरीर और (**विश्वरूपः**) अन्य सम्पूर्ण रूप जिसमें विद्यमान जो बिजुली के सदृश (**उत**) और (**प्रजावान्**) बहुत प्रजाजन (**त्र्यनीकः**) तथा त्रिगुणित सेनायुक्त के समान (**माहिनावान्**) बहुत सत्कारवान् है वो (**पत्यते**) जो स्वामी के सदृश आचरण करता (**सः**) वह (**वृषभः**) अत्यन्त बलयुक्त (**शश्वतीनाम्**) अनादिकाल से हुई प्रकृति और जीव नामक प्रजाओं का (**रेतोधाः**) जल के सदृश वीर्य को धारण करनेवाले सूर्य के सदृश वीर्य को देनेवाला जगदीश्वर है, ऐसा जानो॥३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो जगदीश्वर बिजुली के सदृश सब जगह व्यापक होके प्रकाशकर्त्ता, धारणकर्त्ता फिर भी न्यायाधीश, स्वामी, अनन्त महिमा से युक्त और अनादि

जीवों का न्यायाधीश वर्त्तमान है, उससे डर के और पापों का त्याग करके प्रीति से धर्म का आचरण कर अपने अन्त:करण में सब लोग उसी का ध्यान करें॥३॥

पुनरीश्वरगुणानाह॥

फिर भी ईश्वर के गुणों का उपदेश अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अभीकं आसां पदवीरबोध्यादित्यानामह्वे चारु नाम।

आपश्चिदस्मा अरमन्त देवीः पृथग्व्रजन्तीः परि षीमवृञ्जन्॥४॥

अभीके। आसाम्। पदऽवीः। अबोधि। आदित्यनाम्। अह्वे। चारु। नाम। आपः। चित्। अस्मै। अरमन्त। देवीः। पृथक्। व्रजन्तीः। परि। सीम्। अवृञ्जन्॥४॥

पदार्थः-(**अभीके**) कमितरि (**आसाम्**) सनातनीनां प्रजानाम् (**पदवीः**) यः पदानि वेत्ति व्याप्नोति (**अबोधि**) बुध्यताम् (**आदित्यानाम्**) सूर्यादीनां मासानां वा (**अह्वे**) आह्वयेयम् (**चारु**) श्रेष्ठम् (**नाम**) संज्ञा (**आपः**) प्राणाः (**चित्**) अपि (**अस्मै**) (**अरमन्त**) रमन्ते (**देवीः**) देदीप्यमानाः (**पृथक्**) (**व्रजन्तीः**) गच्छन्तीः (**परि**) (**सीम्**) परिग्रहे (**अवृञ्जन्**) वृञ्जन्ति॥४॥

अन्वयः-हे मनुष्या! येन जगदीश्वरेणासामादित्यानां च पदवीरबोधि यस्य चारु नाम यस्मिँश्चिद् व्रजन्तीर्देवीरापः सीम् पृथगरमन्त पर्यवृञ्जन्नस्मा अभीके स्थितोऽहमिममह्वे तमेव यूयमप्याह्वयत॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यः सर्वेषां सुखं कामयते यस्मिन्त्सर्वे जीवा लोकादयश्च पदार्थाः पृथक् पृथक् क्रीडन्ति गृह्णन्ति त्यजन्ति च तं विहायाऽन्यं कञ्चिदपि मोपाध्वम्॥४॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिस जगदीश्वर ने (**आसाम्**) इन अनादि काल से सिद्ध प्रजाओं और (**आदित्यानाम्**) सूर्य्यादिकों वा मास आदि समयविभागों के (**पदवीः**) पदों को जो व्याप्त होता वह (**अबोधि**) जाना हुआ है और जिसका (**चारु**) अत्यन्त श्रेष्ठ (**नाम**) नाम जिसमें (**चित्**) निश्चित (**व्रजन्तीः**) जाते हुए (**देवीः**) प्रकाशमान (**आपः**) प्राण (**सीम्**) परिग्रह करने में (**पृथक्**) अलग-अलग (**परि, अरमन्त**) सब ओर से रमते और (**अवृञ्जन्**) त्याग करते हैं (**अस्मै**) इसके लिये (**अभीके**) कामना करनेवाले में वर्त्तमान मैं इस ईश्वर को (**अह्वे**) बुलाता हूँ, उसी को आप लोग भी बुलाओ॥४॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो सबके सुख की कामना करता है, जिसमें सब जीव और लोकादि पदार्थ पृथक्-पृथक् क्रीड़ा करते, ग्रहण करते और त्याग करते हैं, उसको छोड़ के अन्य किसी की भी मत उपासना करो॥४॥

अथेश्वरेण सर्वेषां निवासाय जगद्रचितमित्याह॥

अब सबके निवास के लिये ईश्वर ने जगत् बनाया, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्री षधस्था सिन्धवस्त्रिः कवीनामुत त्रिमाता विदथेषु सम्राट्।
ऋतावरीर्योषणास्तिस्रो अप्यास्त्रिरा दिवो विदथे पत्यमानाः॥५॥

त्री। सधऽस्था। सिन्धवः। त्रिः। कवीनाम्। उत। त्रिऽमाता। विदथेषु। सम्ऽराट्। ऋतऽवरीः। योषणाः। तिस्रः। अप्याः। त्रिः। आ। दिवः। विदथे। पत्यमानाः॥५॥

पदार्थः-(**त्री**) त्रीणि (**सधस्था**) सहस्थानानि (**सिन्धवः**) नद्यः (**त्रिः**) (**कवीनाम्**) विदुषाम् (**उत**) (**त्रिमाता**) त्रयाणां जन्मस्थाननाम्नां माता जनकः (**विदथेषु**) संग्रामादिषु विज्ञातव्येषु व्यवहारेषु (**सम्राट्**) यः सम्यग्राजते भूमौ (**ऋतावरीः**) ऋतं सत्यं विद्यते यासु ताः (**योषणाः**) योषाइव वर्त्तमानाः (**तिस्रः**) स्थूलसूक्ष्मकारणाख्याः (**अप्याः**) अप्स्वन्तरिक्षे भवाः (**त्रिः**) त्रिवारम् (**आ**) (**दिवः**) ज्योतींषि (**विदथे**) संग्रामे (**पत्यमानाः**) पतिरिवाचरन्तीः॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो जगदीश्वरस्त्री सधस्था सिन्धव उतापि कवीनां त्रिस्त्रिमाता विदथेषु सम्राडिवर्त्तावरीर्योषणा इव तिस्रोऽप्या विदथे पत्यमानास्त्रिदिवो निर्मिमीते स एव सर्वाऽधीशोऽस्ति॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। हे मनुष्याः! येन परमात्मना सर्वेषां प्राण्यप्राणिनां निवासाय जलस्थलान्तरिक्षाणि निर्मितानि तं पतिं पतिव्रतेव सततं सेवध्वम्॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो जगदीश्वर (**त्री**) तीन (**सधस्था**) साथ के स्थान (**सिन्धवः**) नदियां (**उत**) और (**कवीनाम्**) विद्वानों के (**त्रिः**) तीन वार (**त्रिमाता**) जन्म, स्थान और नाम इन तीनों को उत्पन्न करनेवाला (**विदथेषु**) वा जो संग्रामों और जानने योग्य व्यवहारों में (**सम्राट्**) उत्तम प्रकार भूमि में प्रकाशित है, ऐसे पुरुष के सदृश (**ऋतावरीः**) जिनमें सत्य विद्यमान (**योषणाः**) जो स्त्रियों के सदृश वर्त्तमान (**तिस्रः**) स्थूल, सूक्ष्म और कारण नामक (**अप्याः**) अन्तरिक्ष में होनेवाली सृष्टियां (**विदथे**) संग्राम में (**पत्यमानाः**) पति के सदृश आचरण करती हुई हैं, उनको (**त्रिः**) तीन वार और (**दिवः**) तारागणों को रचता है, वही सबका स्वामी है॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। हे मनुष्यो! जिस परमात्मा ने सब प्राणी और प्राणीभिन्नों के निवास के लिये जल, स्थल और अन्तरिक्ष रचे, उस स्वामी की पतिव्रता स्त्री के सदृश निरन्तर सेवा करो॥५॥

अथेश्वरप्रार्थनया जगद्विषयमाह॥

अब ईश्वर की प्रार्थना के साथ जगद्विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्रिरा दिवः सवितर्वार्याणि दिवेदिव आ सुव त्रिर्नो अह्नः।
त्रिधातु राय आ सुवा वसूनि भग त्रातर्धिषणे सातये धाः॥६॥

त्रिः। आ। दिवः। सवितः। वार्याणि। दिवेऽदिवे। आ। सुव। त्रिः। नः। अह्नः। त्रिऽधातु। रायः। आ। सुव। वसूनि। भग। त्रातः। धिषणे। सातये। धाः॥६॥

पदार्थः-(**त्रिः**) त्रिवारम् (**आ**) समन्तात् (**दिवः**) कमनीयाः (**सवितः**) ऐश्वर्यप्रद (**वार्याणि**) वरितुं योग्यान्यैश्वर्याणि (**दिवेदिवे**) प्रतिदिनम् (**आ**) (**सुव**) जनय (**त्रिः**) त्रिवारम् (**नः**) अस्मभ्यम् (**अह्नः**) दिवसस्य मध्ये (**त्रिधातु**) त्रीणि सुवर्णरजताऽयसादयो धातवो येषु तानि (**रायः**) (**आ**) (**सुवा**)। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**वसूनि**) धनानि (**भग**) भजनीयतम (**त्रातः**) रक्षक (**धिषणे**) द्यावापृथिव्यौ (**सातये**) संविभागाय (**धाः**) धेहि॥६॥

अन्वयः-हे सवितस्त्वं दिवेदिवे नोऽस्मभ्यं दिवो वार्याणि त्रिरासुव। हे भग! अह्नो मध्ये रायस्त्रिरा सुव। हे त्रातस्सातये त्रिधातु वसूनि धिषणे आ धाः॥६॥

भावार्थः-हे जगदीश्वर! भवान् कृपयाऽस्मान् धर्मेण पुरुषार्थयित्वा प्रतिदिनमैश्वर्य्यं प्रापय सततं रक्षित्वा सर्वेषां सुखाय विभागान् कारय॥६॥

पदार्थः-हे (**सवितः**) ऐश्वर्य के देनेवाले! आप (**दिवेदिवे**) प्रतिदिन (**नः**) हम लोगों के लिये (**दिवः**) कामना करने योग्य क्रियाओं को (**वार्याणि**) ग्रहण करने योग्य ऐश्वर्यों को (**त्रिः**) तीन वार (**आसुव**) उत्पन्न करो। हे (**भग**) अत्यन्त भजने योग्य! (**अह्नः**) दिन के मध्य में (**रायः**) धनों को (**त्रिः**) तीन वार (**आ सुव**) उत्पन्न करो और (**त्रातः**) हे रक्षा करनेवाले! (**सातये**) उत्तम प्रकार विभाग के लिये (**त्रिधातु**) सुवर्ण, चांदी और लोहा आदि धातु जिनमें ऐसे (**वसूनि**) धनों और (**धिषणे**) अन्तरिक्ष और पृथिवी को (**आ, धाः**) सब प्रकार धारण करो॥६॥

भावार्थः-हे जगदीश्वर! आप कृपा से हम लोगों को धर्म से पुरुषार्थयुक्त करके प्रतिदिन ऐश्वर्य प्राप्त कराओ और निरन्तर रक्षा करके सबके सुख के लिये विभागों को कराओ॥६॥

अथ राजप्रस्तावेन विद्वद्विषयमाह॥

अब राजप्रस्ताव से विद्वानों के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्रिरा दिवः सविता सोषवीति राजाना मित्रावरुणा सुपाणी।

आपश्चिदस्य रोदसी चिदुर्वी रत्नं भिक्षन्त सवितुः सवाय॥७॥

त्रिः। आ। दिवः। सविता। सोसवीति। राजाना। मित्रावरुणा। सुपाणी इति सुऽपाणी। आपः। चित्। अस्य। रोदसी इति। चित्। उर्वी इति। रत्नम्। भिक्षन्त। सवितुः। सवाय॥७॥

पदार्थः-(**त्रिः**) (**आ**) अभिविधौ (**दिवः**) प्रकाशात् (**सविता**) प्रेरकोऽन्तर्य्यामी (**सोषवीति**) भृशं सुवति (**राजाना**) विद्याविनयाभ्यां प्रकाशमानः (**मित्रावरुणा**) प्राणोदानवत्सर्वेषां सुहृदौ (**सुपाणी**) शोभनौ

पाणी ययोस्तौ **(आप:)** प्राणा इव **(चित्)** इव **(अस्य)** जगदीश्वरस्य **(रोदसी)** प्रकाशाप्रकाशे जगती **(चित्)** अपि **(उर्वी)** बहुले **(रत्नम्)** रमणीयं धनम् **(भिक्षन्त)** याचन्ते **(सवितु:)** सकलैश्वर्य्यसम्पन्नस्य सकाशात् **(सवाय)** ऐश्वर्य्याय॥७॥

अन्वय:-हे मनुष्या! यस्सविता मित्रावरुणा सुपाणी राजानेव दिवस्त्रिरा सोषवीत्यस्य सवितु: सकाशात् सवायाऽऽपश्चिदुर्वी रोदसी रत्नं चित् सर्वे भिक्षन्त॥७॥

भावार्थ:-अत्रोपमालङ्कार:। ये राजान: परमेश्वरवद्गुणकर्मस्वभावास्सन्त: प्रजासु वर्त्तन्ते त एव साम्राज्यमसंख्यं धनञ्च लभन्ते॥७॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जो **(सविता)** प्रेरणा करनेवाला अन्तर्य्यामी **(मित्रावरुणा)** प्राण और उदान वायु के सदृश सबके मित्र **(सुपाणी)** और सुन्दर जिनके हाथ ऐसे **(राजाना)** विद्या और विनय से प्रकाशमान नरों के समान **(दिव:)** प्रकाश से **(त्रि:)** तीन वार **(आ, सोषवीति)** सब ओर से निरन्तर प्रेरणा देता है **(अस्य)** इस **(सवितु:)** सम्पूर्ण ऐश्वर्य्ययुक्त जगदीश्वर के समीप से **(सवाय)** ऐश्वर्य्य के लिये **(आप:)** प्राणों के **(चित्)** सदृश **(उर्वी)** बहुत **(रोदसी)** प्रकाशित और अप्रकाशित जगत् और **(रत्नम्)** सुन्दर धन को **(चित्)** भी सब लोग **(भिक्षन्त)** याचना करते हैं॥७॥

भावार्थ:-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। जो राजा लोग परमेश्वर के सदृश गुण, कर्म और स्वभावयुक्त हुए प्रजाओं में वर्त्तमान हैं, वे ही चक्रवर्त्ति राज्य और असंख्य धन को प्राप्त होते हैं॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

त्रिरु॒त्त॒मा दू॒णशा॑ रोच॒नानि॒ त्रयो॑ राज॒न्त्यसु॑रस्य वी॒रा:।

ऋ॒तावा॑न इषि॒रा दू॒ळभा॑स॒स्त्रिरा दि॒वो वि॒दथे॑ सन्तु दे॒वा:॥८॥१॥

त्रि:। उ॒त्ऽत॒मा। दु॒:ऽनशा॑। रो॒च॒नानि॑। त्रय॑:। रा॒ज॒न्ति॒। असु॑रस्य। वी॒रा:। ऋ॒तऽवा॑न:। इ॒षि॒रा:। दु॒:ऽदभा॑स:। त्रि:। आ। दि॒व:। वि॒दथे॑। स॒न्तु॒। दे॒वा:॥८॥

पदार्थ:-**(त्रि:)** त्रिवारम् **(उत्तमा)** उत्तमानि **(दूणशा)** दु:खेन नशो नाशो येषान्तानि **(रोचनानि)** प्रकाशमानानि **(त्रय:)** विद्युत्प्रसिद्धसूर्य्या: **(राजन्ति)** **(असुरस्य)** दुष्टान् दोषान् प्रक्षेप्तु: **(वीरा:)** व्याप्तविद्याशौर्यबला: **(ऋतावान:)** प्रशंसितमृतं सत्यं विद्यते येषु ते **(इषिरा:)** गन्तार: **(दूळभास:)** दुर्गतो दभो हिंसा येभ्यस्ते **(त्रि:)** **(आ)** **(दिव:)** कामयमाना: **(विदथे)** संग्रामादिव्यवहारे **(सन्तु)** **(देवा:)** विद्वांस:॥८॥

अन्वय:-ये ब्रह्मभक्तास्त्रय इवाऽसुरस्येषिरा ऋतावानो वीरा दूळभास आ दिवो देवा विदथे त्रिस्सन्तु ते दूणशोत्तमा रोचनानि त्री राजन्ति॥८॥

भावार्थः-ये जगदीश्वरं प्राणवत्प्रियं राजवदादेष्टारं न्यायाधीशवन्नेतारं सूर्य्यवत्स्वप्रकाशं सर्वप्रकाशकं सततं भजन्ते त एव शत्रुभिर्दुर्जयाः सत्याचारा अन्येषां सुखं कामयमानाश्चक्रवर्त्तिराज्यं प्राप्य सूर्य्यवद्विराजन्ते त एवात्र रक्षाधिकृता भवन्त्विति॥८॥

अत्रेश्वरजगद्विद्वद्गुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षट्पञ्चाशत्तमं सूक्तं प्रथमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-जो ब्रह्म के भक्त **(त्रयः)** बिजुली, प्रसिद्ध अग्नि और सूर्य्याग्नि के सदृश **(असुरस्य)** दुष्ट और दोषों के दूर करनेवाले के सम्बन्ध में **(इषिराः)** जानेवाले **(ऋतावानः)** प्रशंसित सत्य जिनमें विद्यमान तथा **(वीराः)** विद्या, शूरता और बल से परिपूरित वे **(दूळभासः)** हिंसा से रहित **(आ)** सब प्रकार **(दिवः)** कामना करते हुए **(देवाः)** विद्वान् लोग **(विदथे)** संग्राम आदि व्यवहार में **(त्रिः)** तीन वार **(सन्तु)** प्रसिद्ध हों और **(दूणशा)** दुःख से जिनका नाश होता है वे **(उत्तमा)** श्रेष्ठ **(रोचनानि)** प्रकाशमान **(त्रिः)** तीन वार **(राजन्ति)** शोभित होते हैं॥८॥

भावार्थः-जो लोग जगदीश्वर को प्राणों के सदृश प्रिय, राजा के सदृश उपदेशदाता, न्यायाधीश के सदृश नायक, सूर्य के सदृश अपने से प्रकाशमान और सबका प्रकाशकर्त्ता मान निरन्तर भजते हैं, वे ही शत्रुओं के दुःख से जीतने योग्य, सत्य के आचरण करने और अन्यों के सुख चाहनेवाले हैं। वे चक्रवर्ती राज्य को प्राप्त होकर सूर्य्य के सदृश शोभित होते हैं, और वे ही इसी संसार में रक्षा के अधिकारी हों॥८॥

इस सूक्त में ईश्वर, जगत् और विद्वानों के गुणों का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की पिछले सूक्तार्थ के साथ सङ्गति समझनी चाहिये॥

[यह छप्पनवाँ सूक्त और प्रथम वर्ग समाप्त हुआ॥]

अथ षड्चस्य सप्तपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। विश्वेदेवा देवताः। १, ३, ४ त्रिष्टुप्। २, ५, ६ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः॥

अथ वाणीविषयमाह॥

अब छः ऋचावाले सत्तावनवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में वाणी के विषय को कहते हैं॥

प्र मे॑ विवि॒क्वाँ अ॑विदन्मनी॒षां धे॒नुं चर॑न्तीं प्रयु॑ता॒मगो॑पाम्।

स॒द्यश्चि॒द्या दु॑दु॒हे भूरि॑ धा॒सेरिन्द्र॒स्तद॒ग्निः प॑नि॒तारो॑ अस्याः॥ १॥

प्र। मे॒। वि॒वि॒क्वान्। अ॒वि॒द॒त्। म॒नी॒षाम्। धे॒नुम्। चर॑न्तीम्। प्र॒ऽयु॑ताम्। अगो॑पाम्। स॒द्यः। चि॒त्। या। दु॒दु॒हे। भूरि॑। धा॒सेः। इन्द्रः॑। तत्। अ॒ग्निः। प॒नि॒तार॑ः। अ॒स्याः॥ १॥

पदार्थः-(**प्र**) (**मे**) मम (**विविक्वान्**) विविक्तः (**अविदत्**) प्राप्नुयात् (**मनीषाम्**) प्रज्ञाम् (**धेनुम्**) वत्सस्य पालिकां गामिव वाचम् (**चरन्तीम्**) प्राप्नुवन्तीम् (**प्रयुताम्**) असंख्यबोधाम् (**अगोपाम्**) अरक्षिताम् (**सद्यः**) (**चित्**) (**या**) (**दुदुहे**) प्राति (**भूरि**) बहु (**धासेः**) प्राणधारकस्यान्नस्य। **धासिरित्यन्ननाम।** (निघं०२.७) (**इन्द्रः**) विद्युत् (**तत्**) अन्नम् (**अग्निः**) पावक इव वर्त्तमान (**पनितारः**) स्तोतारो व्यवहर्त्तारो वा (**अस्याः**) वाचः॥१॥

अन्वयः-यो विविक्वान् मनुष्यो मे मनीषां चरन्तीं प्रयुतां धेनुं प्राविदत् या धासेरिन्द्र इवाऽगोपां भूरि सद्यश्चिद् दुदुहे तदग्निरिव पुरुषः प्राप्नुयादस्याः पनितार उपदिशेयुस्तां वाचं सर्वे प्राप्नुवन्तु॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। येऽधर्माचरणाद्विरहितां विद्यां जिघृक्षवः सुवाचं प्रयुञ्जानास्सत्यं धर्ममाचरन्तः सर्वेषामिच्छां दुहन्ति ते भूरि सत्कर्त्तव्यास्स्युः॥१॥

पदार्थः-जो (**विविक्वान्**) प्रकट मनुष्य (**मे**) मेरी (**मनीषाम्**) बुद्धि को (**चरन्तीम्**) प्राप्त होती हुई (**प्रयुताम्**) संख्यारहित बोधों से युक्त (**धेनुम्**) बछड़े को पालन करनेवाली गौ के सदृश वाणी को (**प्र, अविदत्**) प्राप्त हो और (**या**) जो (**धासेः**) प्राणों को धारण करनेवाले अन्न की (**इन्द्रः**) बिजुली के सदृश (**अगोपाम्**) अरक्षित को (**भूरि**) बहुत (**सद्यः**) शीघ्र (**चित्**) ही (**दुदुहे**) पूर्ण करता है (**तत्**) उस अन्न को (**अग्निः**) अग्नि के सदृश वर्त्तमान पुरुष प्राप्त होवे (**अस्याः**) इस वाणी का (**पनितारः**) स्तुति वा व्यवहार करनेवाले उपदेश देवें, उस वाणी को सब लोग प्राप्त हों॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो लोग अधर्म के आचरण से रहित, विद्या को ग्रहण करने की इच्छा पूरी करनेवाले, उत्तम वाणी का प्रयोग करने और सत्य धर्म का आचरण करते हुए सबकी इच्छा को पूरी करते हैं, वे अत्यन्त सत्कार करने योग्य होवें॥१॥

अथ बुद्धिविषयमाह॥

अब बुद्धि विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रः सु पूषा वृषणा सुहस्ता दिवो न प्रीता शशयं दुदुह्रे।
विश्वे यदस्यां रणयन्त देवाः प्र वोऽत्र वसवः सुम्नमश्याम्॥२॥

इन्द्रः। सु। पूषा। वृषणा। सुऽहस्ता। दिवः। न। प्रीताः। शशयम्। दुदुह्रे। विश्वे। यत्। अस्याम्। रणयन्त। देवाः। प्र। वः। अत्र। वसवः। सुम्नम्। अश्याम्॥२॥

पदार्थः-(**इन्द्रः**) विद्युत् (**सु**) (**पूषा**) पोषकः प्राणः (**वृषणा**) बलकरौ (**सुहस्ता**) शोभनौ हस्तौ ययोस्तद्वत् (**दिवः**) प्रकाशाः किरणाः कमनीयाः (**न**) इव (**प्रीताः**) प्रसन्नाः (**शशयम्**) खशयं मेघम्। अत्र वर्णव्यत्ययेन खस्य शः। (**दुदुह्रे**) दुहन्ति (**विश्वे**) सर्वे (**यत्**) ये (**अस्याम्**) प्रज्ञायुक्तायां वाचि (**रणयन्त**) रणः संग्राम इवाचरन्ति (**देवाः**) विद्वांसः (**प्र**) (**वः**) युष्माकम् (**अत्र**) अस्मिन् व्यवहारे (**वसवः**) विद्यां जिज्ञासवः (**सुम्नम्**) सुखम् (**अश्याम्**) प्राप्नुयाम्॥२॥

अन्वयः-हे वसवो! यदत्र विश्वे देवा अस्यां शशयमिव सुम्नं प्र दुदुह्रे रणयन्त ते दिवो न प्रीता जायन्ते ये सुहस्तैवं याविन्द्रः पूषा वृषणा दुदुह्रे ते सु प्रीता भवन्ति यथा सत्सङ्गेन वस्सकाशात् सुम्नमहमश्यां तथा यूयं प्रयतत॥२॥

भावार्थः-अत्रोपमावाचकलुप्तोपमालङ्कारौ। ये शरीरात्मबलं कामयन्ते त एव विद्वांसो भूत्वा शास्त्रेश्वरबोधान्वितायां वाचि रममाणाः सन्तो विद्युदादिविद्यां प्रसिद्धीकृत्य विजयमानाभूत्वाऽतुलमानन्दं प्राप्याऽन्यान् पूर्णाऽऽनन्दाञ्जनयन्ति त एव जगत्पूज्याः सर्वगुरवो भवन्ति॥२॥

पदार्थः-हे (**वसवः**) विद्या की जिज्ञासा करनेवाले! (**यत्**) जो (**अत्र**) इस व्यवहार में (**विश्वे**) सम्पूर्ण (**देवाः**) विद्वान् लोग (**अस्याम्**) बुद्धि से युक्त वाणी में (**शशयम्**) मेघ के सदृश (**सुम्नम्**) सुख को (**प्र, दुदुह्रे**) दुहते हैं और (**रणयन्त**) संग्राम के सदृश आचरण करते हैं वे (**दिवः**) कामना करने योग्य प्रकाशकिरणों के (**न**) सदृश (**प्रीताः**) प्रसन्न होते हैं और जो (**सुहस्ता**) सुन्दर हाथोंवाले दो पुरुषों के समान जो (**इन्द्रः**) बिजुली और (**पूषा**) पुष्टिकर्त्ता प्राण (**वृषणा**) बल करनेवाले हैं, उनको पूरा करते हैं वे (**सु, प्रीताः**) उत्तम प्रकार प्रसन्न होते हैं और जैसे सत्सङ्ग से (**वः**) तुम लोगों के समीप से (**सुम्नम्**) सुख को मैं (**अश्याम्**) प्राप्त होऊं, वैसे आप लोग प्रयत्न करिये॥२॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमा [और] वाचकलुप्तोपमालङ्कार हैं। जो शरीर और आत्मा के बल की कामना करते हैं, वे ही विद्वान् हो शास्त्र और ईश्वर के बोध से युक्त वाणी में रमते हुए बिजुली आदि की विद्या को प्रसिद्ध कर और विजयमान हो अतुल आनन्द को पाय अन्य जनों को पूर्ण आनन्द उत्पन्न करते, वे ही जगत् के पूज्य सबके गुरु होते हैं॥२॥

अथ गृहाश्रमकृत्यमाह॥

अब गृहाश्रम के कृत्य को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

या जामयो वृष्ण इच्छन्ति शक्तिं नमस्यन्तीर्जानते गर्भमस्मिन्।
अच्छा पुत्रं धेनवो वावशाना महश्चरन्ति बिभ्रतं वपूंषि॥ ३॥

याः। जामयः। वृष्णे। इच्छन्ति। शक्तिम्। नमस्यन्तीः। जानते। गर्भम्। अस्मिन्। अच्छ। पुत्रम्। धेनवः। वावशानाः। महः। चरन्ति। बिभ्रतम्। वपूंषि॥ ३॥

पदार्थः-(**याः**) (**जामयः**) प्राप्तचतुर्विंशतिवर्षा युवतयः (**वृष्णे**) वीर्यसेचनसमर्थाय प्राप्तचत्वारिंशद्वर्षाय ब्रह्मचारिणे (**इच्छन्ति**) (**शक्तिम्**) सामर्थ्यम् (**नमस्यन्तीः**) सत्कारं कुर्वन्त्यः (**जानते**) जानन्ति (**गर्भम्**) (**अस्मिन्**) संसारे (**अच्छ**) श्रैष्ठ्ये। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**पुत्रम्**) (**धेनवः**) विद्यासुशिक्षायुक्ता वाच इव वर्त्तमानाः (**वावशानाः**) पतीन् कामयमानाः (**महः**) महान्ति पूज्यानि (**चरन्ति**) प्राप्नुवन्ति (**बिभ्रतम्**) धारकं पोषकम् (**वपूंषि**) रूपवन्ति शरीराणि॥ ३॥

अन्वयः-या नमस्यन्तीर्ब्रह्मचारिण्यो जामयो वृष्णे शक्तिमिच्छन्त्यस्मिन् गर्भं धर्तुं जानते ताः पतीन् वावशानाः धेनवो वृषभानिव महर्वपूंषि बिभ्रतमच्छ पुत्रं चरन्ति॥ ३॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। ता एव कन्याः सुखं प्राप्नुवन्ति याः स्वाभ्यो द्विगुणविद्याशरीरबलान् पतीनभिरूपान् हृद्यान् सुपरीक्ष्य स्वीकुर्वन्ति तथैव पुरुषा अपि हृद्या भार्या उपयच्छन्ति त एव परस्परेण प्रीत्यानुकूलव्यवहारेण वीर्य्यस्थापनाऽऽकर्षणविद्यां बुध्वा गर्भं धृत्वा सुपाल्य सर्वान् संस्कारान् कृत्वा महाभाग्यान्यपत्यानि जनयित्वाऽतुलमानन्दं विजयञ्च प्राप्नुवन्ति नातोऽन्यथा व्यवहारेण॥ ३॥

पदार्थः-(**याः**) जो (**नमस्यन्तीः**) सत्कार करती हुईं (**जामयः**) चौबीस वर्ष की अवस्था को प्राप्त युवती ब्रह्मचारिणी (**वृष्णे**) वीर्यसेचन में समर्थ चालीस वर्ष की आयु को प्राप्त ब्रह्मचारी के लिये (**शक्तिम्**) सामर्थ्य की (**इच्छन्ति**) इच्छा करती और (**अस्मिन्**) इस संसार में (**गर्भम्**) गर्भ के धारण करने को (**जानते**) जानती हैं, वे पतियों की (**वावशानाः**) कामना करती हुईं (**धेनवः**) विद्या और उत्तम शिक्षायुक्त वाणियों के सदृश वर्त्तमान गौवें जैसे वृषभों को वैसे (**महः**) बड़े पूज्य (**वपूंषि**) रूप वाले शरीरों को (**बिभ्रतम्**) धारण और पोषण करनेवाले (**अच्छ**) श्रेष्ठ (**पुत्रम्**) पुत्र को (**चरन्ति**) ग्रहण करती हैं॥ ३॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। वे ही कन्यायें सुख को प्राप्त होती हैं कि जो अपने से दुगने विद्या और शरीर बलवाले अपने सदृश प्रेमी पतियों की उत्तम प्रकार परीक्षा करके स्वीकार करती हैं, वैसे ही पुरुष लोग भी प्रेमपात्र स्त्रियों को ग्रहण करते हैं, वे ही परस्पर प्रीतिपूर्वक अनुकूल व्यवहार से वीर्यस्थापन और आकर्षण विद्या को जान गर्भ को धारण, उसका उत्तम प्रकार पालन, सब संस्कारों को करके बड़े भाग्यवाले पुत्रों को उत्पन्न कर, अतुल आनन्द और विजय को प्राप्त

होते हैं, इससे विपरीत व्यवहार से नहीं॥३॥

अथ स्त्रीपुरुषयोः कृत्यमाह॥

अब स्त्रीपुरुषों के कृत्य का अगले मन्त्र में उपदेश करते हैं॥

अच्छा विवक्मि रोदसी सुमेके ग्रावणो युजानो अध्वरे मनीषा।
इमा उ ते मनवे भूरिवारा ऊर्ध्वा भवन्ति दर्शता यजत्राः॥४॥

अच्छ। विवक्मि। रोदसी इति। सुमेके इति सुऽमेके। ग्रावणः। युजानः। अध्वरे। मनीषा। इमाः। ऊम् इति। ते। मनवे। भूरिऽवाराः। ऊर्ध्वाः। भवन्ति। दर्शताः। यजत्राः॥४॥

पदार्थः-(**अच्छ**)। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। (**विवक्मि**) विशेषेणोपदिशामि (**रोदसी**) द्यावापृथिव्याविव (**सुमेके**) सुष्ठ्वेकीभूते (**ग्रावणः**) मेघात् (**युजानः**) (**अध्वरे**) सङ्गन्तव्ये व्यवहारे (**मनीषा**) प्रज्ञया (**इमाः**) प्रजाः (**उ**) आश्चर्य्यम् (**ते**) तुभ्यम् (**मनवे**) मनुष्याय (**भूरिवाराः**) भूरि बहुविधं सुखं वृण्वन्ति (**ऊर्ध्वाः**) उत्कृष्टाः (**भवन्ति**) (**दर्शताः**) द्रष्टुं योग्याः (**यजत्राः**) सङ्गन्तुं पूजितुमर्हाः॥४॥

अन्वयः-हे विद्वांसोऽस्मिन्नध्वरे या इमा मनीषा सह वर्त्तमाना भूरिवारा दर्शता यजत्रा ऊर्ध्वा भवन्ति ता युजानो भवन्तो ग्रावण इव संयोगात् सुखिनो भवन्ति यौ स्त्रीपुरुषौ सुमेके रोदसी इव ते मनवे वर्त्तेते तौ तान् प्रत्यु अहमच्छ विवक्मि॥४॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यौ स्त्रीपुरुषौ भूमिसूर्य्याविव संयुक्तौ वर्त्तते तौ भाग्यशालिनौ भवतः ये स्त्रीपुरुषाः सम्यक् परीक्ष्य स्वयंवरं विवाहं कुर्युस्ते मेघवदुत्तमान्यपत्यान्युत्पाद्य सर्वदा सुखिनो जायन्ते॥४॥

पदार्थः-हे विद्वानो! इस (**अध्वरे**) मेल करने योग्य व्यवहार में जो (**इमाः**) ये प्रजायें (**मनीषा**) बुद्धि के सहित वर्त्तमान (**भूरिवाराः**) अनेक प्रकार के सुख को प्राप्त होनेवाली (**दर्शताः**) देखने तथा (**यजत्राः**) मेल और सत्कार करने योग्य (**ऊर्ध्वाः**) उत्तम (**भवन्ति**) होती हैं, उनको (**युजानः**) प्राप्त होते हुए आप लोग (**ग्रावणः**) मेघ के सदृश संयोग से सुखी होते हैं और जो स्त्री-पुरुष (**सुमेके**) उत्तम प्रकार एक हुए (**रोदसी**) अन्तरिक्ष और पृथिवी के तुल्य (**ते**) आप (**मनवे**) मनुष्य के लिये वर्त्तमान हैं, उन दोनों और उन आप लोगों के प्रति (**उ**) आश्चर्य के साथ मैं (**अच्छ**) उत्तम प्रकार (**विवक्मि**) विशेष करके उपदेश देता हूँ॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जो स्त्री और पुरुष पृथिवी और सूर्य के सदृश संयुक्त हुए वर्त्तमान हैं, वे भाग्यशाली होते हैं। जो स्त्री और पुरुष उत्तम प्रकार परीक्षा करके स्वयंवर विवाह को करें, वे मेघ के सदृश उत्तम सन्तानों को उत्पन्न करके सब काल में सुखी होते हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

या ते जिह्वा मधुमती सुमेधा अग्ने देवेषूच्यत उरूची।
तयेह विश्वाँ अवसे यजत्राना सादय पायया चा मधूनि॥५॥

या। ते। जिह्वा। मधुऽमती। सुऽमेधाः। अग्ने। देवेषु। उच्यते। उरूची। तया। इह। विश्वान्। अवसे। यजत्रान्। आ। सादय। पायय। च। मधूनि॥५॥

पदार्थः- **(या)** **(ते)** तव **(जिह्वा)** वाणी। **जिह्वेति वाङ्नामसु पठितम्।** (निघं०१.११) **(मधुमती)** बहूनि मधूनि सत्यभाषणानि विद्यन्ते यस्यां सा **(सुमेधाः)** शोभना मेधा यस्यां सा **(अग्ने)** विद्वन् विदुषि वा **(देवेषु)** विद्वत्सु **(उच्यते)** कथ्यते **(उरूची)** या उर्वीर्बह्वीर्विद्या अञ्चति प्राप्नोति सा **(तया)** **(इह)** अस्मिन् गृहाश्रमे **(विश्वान्)** समग्रान् **(अवसे)** रक्षणाद्याय **(यजत्रान्)** सङ्गतान् पूज्यान् तनयान् **(आ)** **(सादय)** प्रापय **(पायय)**। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(च)**। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। **(मधूनि)** मधुयुक्तानि रसविशेषाणि पेयानि॥५॥

अन्वयः-हे अग्ने स्त्रि पुरुष वा! ते तव या देवेषु मधुमती सुमेधा उरूची जिह्वोच्यते तयेह विश्वान् यजत्राना सादयैषामवसे च मधूनि पायय॥५॥

भावार्थः-यदि स्त्रीपुरुषौ प्रसन्नतया कृतविवाहौ विद्याप्रज्ञासुवाणीयुक्तौ भूत्वेह गृहाश्रमे स्थित्वा प्रेमजान्यपत्यान्युत्पाद्य पालयित्वा सुशिक्षायुक्तानि कृत्वा स्वयंवरं विवाहं कारयित्वा निवासयन्ति त एवाऽत्र गृहाश्रमे मोक्षमिव सुखमनुभवन्ति॥५॥

पदार्थः-हे **(अग्ने)** विद्वान् पुरुष वा विदुषि स्त्री! **(ते)** तुम्हारी **(या)** जो **(देवेषु)** विद्वानों में **(मधुमती)** बहुत सत्यभाषणोंवाली **(सुमेधाः)** जिसमें उत्तम बुद्धि विद्यमान वह **(उरूची)** बहुत विद्याओं को प्राप्त होती हुई **(जिह्वा)** वाणी **(उच्यते)** कही जाती है **(तया)** उस से **(इह)** इस गृहाश्रम में **(विश्वान्)** सम्पूर्ण **(यजत्रान्)** मिले हुए श्रेष्ठ पुत्रों को **(आ, सादय)** प्राप्त कराओ **(च)** और इनकी **(अवसे)** रक्षा आदि के लिये **(मधूनि)** मधुरता से युक्त पीने के योग्य विशेष रसों का **(पायय)** पान कराओ॥५॥

भावार्थः-जो स्त्री और पुरुष प्रसन्नता से विवाह किये हुए विद्या, बुद्धि और उत्तम वाणी से युक्त इस संसार में गृहाश्रम में वर्त्तमान होकर प्रेम से उत्पन्न होनेवाले पुत्रों को उत्पन्न, पालन और उत्तम शिक्षायुक्त करके तथा स्वयंवर विवाह कराके निवास कराते हैं वे ही गृहाश्रम में मोक्ष के सदृश सुख का अनुभव करते हैं॥५॥

पुनः स्त्रीपुरुषयोः कृत्यमाह॥

फिर स्त्री-पुरुष के कृत्य को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

या ते॑ अग्ने॒ पर्व॑तस्येव॒ धारास॑श्चन्ती पी॒पय॑द्देव चि॒त्रा।

ताम॒स्मभ्यं॒ प्रम॑तिं जातवेदो॒ वसो॒ रास्व॑ सुम॒तिं वि॒श्वज॑न्याम्॥ ६॥ २॥

या। ते॒। अ॒ग्ने॒। पर्व॑तस्यऽइव। धारा॑। अस॑श्चन्ती। पी॒पय॑त्। दे॒व॒। चि॒त्रा। ताम्। अ॒स्मभ्य॑म्। प्रऽम॑तिम्। जा॒त॒ऽवे॒द॒ः। वसो॒ इति॑। रास्व॑। सु॒ऽम॒तिम्। वि॒श्वऽज॑न्याम्॥ ६॥

पदार्थः-(**या**) (**ते**) तव (**अग्ने**) स्त्रि पुरुष वा (**पर्वतस्येव**) मेघस्येव (**धारा**) प्रवाहवद्वाणी। **धारेति वाङ्नामसु पठितम्।** (निघं०१.११) (**असश्चन्ती**) असमवयन्ती (**पीपयत्**) पिबति (**देव**) दिव्यगुणसम्पन्न (**चित्रा**) अद्भुता (**ताम्**) (**अस्मभ्यम्**) (**प्रमतिम्**) प्रकृष्टां प्रज्ञाम् (**जातवेदः**) जातेषु विद्यमानेश्वर (**वसो**) सर्वत्र वसन् (**रास्व**) देहि। अत्र व्यत्ययेनात्मनेपदम्। (**सुमतिम्**) शोभनप्रज्ञां स्त्रियमुत्तमप्रज्ञं पुरुषं वा (**विश्वजन्याम्**) विश्वं समग्रमपत्यं जायते यस्यास्ताम्॥ ६॥

अन्वयः-हे अग्ने! ते यासश्चन्ती चित्रा पर्वतस्येव धारा पीपयत्तां प्रमतिं विश्वजन्यां सुमतिं त्वं रास्व। हे देव वसो जातवेदो भगवँस्त्वं दम्पतीभ्योऽस्मभ्यमेतां विद्यां प्रज्ञां वाचमीदृशीं स्त्रियमीदृशं पतिं च कृपया देहि यतो वयं सर्वदा सुखिनो भवेम॥ ६॥

भावार्थः-स्त्रीपुरुषैर्ब्रह्मचर्य्येण विद्यासुशिक्षाः प्राप्य युवावस्थायां तुल्यगुणकर्म-स्वभावान्त्सुपरीक्ष्य द्विगुणबलायुष्कं पतिं हृद्यां च प्राप्य गृहाश्रमे सुखेन निवसनीयमिति॥ ६॥

अत्र वाक्प्रज्ञागृहाश्रमस्त्रीपुरुषविवाहकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति सप्तपञ्चाशत्तमं सूक्तं द्वितीयो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) स्त्रि या पुरुष! (**ते**) आपकी (**या**) जो (**असश्चन्ती**) असम्बन्ध रखती हुई (**चित्रा**) अद्भुत (**पर्वतस्येव**) मेघ के (**धारा**) प्रवाह के सदृश वाणी बुद्धि को (**पीपयत्**) पीती है (**ताम्**) उस (**प्रमतिम्**) उत्तम बुद्धि को और (**विश्वजन्याम्**) जिससे सम्पूर्ण सन्तान उत्पन्न होता है, उस (**सुमतिम्**) उत्तम बुद्धिवाली स्त्री वा उत्तम बुद्धिवाले पुरुष को आप (**रास्व**) दीजिये। हे (**देव**) उत्तम गुणों से युक्त (**वसो**) सर्वत्र वसते हुए (**जातवेदः**) उत्पन्न हुए पदार्थों में विद्यमान भगवन्! ईश्वर आप (**अस्मभ्यम्**) हम लोगों के लिये ऐसी विद्या, बुद्धि, वाणी और ऐसी स्त्री तथा ऐसे पति को कृपा से दीजिये, जिससे कि हम लोग सदा सुखी होवें॥ ६॥

भावार्थः-स्त्री और पुरुषों को चाहिये कि ब्रह्मचर्य से विद्या और उत्तम शिक्षाओं को प्राप्त होकर युवावस्था में तुल्य गुण, कर्म और स्वभावों की परीक्षा करके द्विगुण बल और अवस्थावाले पति और प्रेमपात्र स्त्री को प्राप्त होकर गृहाश्रम में सुख से रहें॥ ६॥

इस सूक्त में वाणी, बुद्धि, गृहाश्रम और स्त्री-पुरुषों के कृत्य का वर्णन होने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह सत्तावनवां सूक्त और दूसरा वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ नवर्चस्याष्टपञ्चाशत्तमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। अश्विनौ देवते। १, ८, ९ त्रिष्टुप्। २-५, ७ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ६ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ शिल्पिजनकृत्यमाह॥

अब नव ऋचावाले अट्ठावनवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में शिल्पिजन के काम को कहते हैं॥

धेनुः प्रत्नस्य काम्यं दुहानान्तः पुत्रश्चरति दक्षिणायाः।
आ द्योतनिं वहति शुभ्रयामोषसः स्तोमो अश्विनावजीगः॥१॥

धेनुः। प्रत्नस्य। काम्यम्। दुहाना। अन्तरिति। पुत्रः। चरति। दक्षिणायाः। आ। द्योतनिम्। वहति। शुभ्रऽयामा। उषसः। स्तोमः। अश्विनौ। अजीगरिति॥१॥

पदार्थः-(**धेनुः**) गौरिव वाक् (**प्रत्नस्य**) पुरातनस्य (**काम्यम्**) कमनीयं बोधम् (**दुहाना**) प्रपूरयन्ती (**अन्तः**) आभ्यन्तरे (**पुत्रः**) तस्या जातो बोधः (**चरति**) विलसति (**दक्षिणायाः**) ज्ञानप्रापिकायाः (**आ**) (**द्योतनिम्**) प्रकाशरूपां विद्याम् (**वहति**) प्राप्नोति प्रापयति वा (**शुभ्रयामा**) शुभ्राश्शुद्धा यामा दिवसा यया सा (**उषसः**) प्रभातान् (**स्तोमः**) श्लाघनीयः (**अश्विनौ**) आप्ताध्यापकोपदेशकौ (**अजीगः**) प्राप्नोति॥१॥

अन्वयः-हे मनुष्या! शुभ्रयामा या प्रत्नस्य काम्यं दुहाना धेनुरस्ति तस्या दक्षिणायाः पुत्रोऽन्तश्चरति द्योतनिमश्विनौ उषस इवाऽऽवहति यया स्तोमोऽश्विनावजीगस्तां यूयं प्राप्नुत॥१॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा सूर्य उषसो जनयति तथैवात्मनि जातो बोधः पूर्णं कामं जनयित्वा सत्याऽसत्ये प्रकाशयति। या विद्याधर्मयुक्ता श्लक्ष्णा वा वाग् यमाप्नोति तं सनातनस्य ब्रह्मणो बोधोऽप्याप्नोति॥१॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**शुभ्रयामा**) शुद्ध दिन जिससे होते वा जो (**प्रत्नस्य**) प्राचीन के (**काम्यम्**) कामना योग्य बोध को (**दुहाना**) पूर्ण करती हुई (**धेनुः**) गौ के सदृश वाणी है, उस (**दक्षिणायाः**) ज्ञान को प्राप्त करानेवाली वाणी का (**पुत्रः**) पुत्र अर्थात् उससे उत्पन्न बोध (**अन्तः**) मध्य में (**चरति**) विलसता अर्थात् रहता है (**द्योतनिम्**) और प्रकाशरूप विद्या को (**अश्विनौ**) तथा यथार्थवक्ता अध्यापक और उपदेशक को (**उषसः**) प्रातःकालों के सदृश (**आ, वहति**) प्राप्त होता वा प्राप्त कराता है और जिससे (**स्तोमः**) प्रशंसा करने योग्य यथार्थवक्ता अध्यापक और उपदेशक (**अजीगः**) प्राप्त होता है, उसको आप लोग भी प्राप्त होओ॥१॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे सूर्य्य प्रातःकालों को उत्पन्न करता है, वैसे ही आत्मा में उत्पन्न हुआ बोध पूर्ण मनोरथ को उत्पन्न कर सत्य और असत्य का प्रकाश करता है। जो विद्याधर्म से युक्त वा श्रेष्ठ वाणी जिसको प्राप्त होती है उसको सनातन ब्रह्म का बोध भी प्राप्त होता है॥१॥

अथोर्ध्वाध:स्थानविषयकं शिल्पिजनकृत्यमाह॥

अब ऊर्ध्व और अध:स्थानविषयक शिल्पिजनों के कृत्य को कहते हैं॥

सुयुग्वहन्ति प्रति वामृतेनोर्ध्वा भवन्ति पितरेव मेधा:।

जरेथामस्मद्वि पणेर्मनीषां युवोरवश्चकृमा यातमर्वाक्॥ २॥

सुऽयुक्। वहन्ति। प्रति। वाम्। ऋतेन। ऊर्ध्वा:। भवन्ति। पितराऽइव। मेधा:। जरेथाम्। अस्मत्। वि। पणे:। मनीषाम्। युवो:। अव:। चकृम। आ। यातम्। अर्वाक्॥ २॥

पदार्थ:-**(सुयुक्)** ये सुष्ठु युञ्जन्ति ते **(वहन्ति)** प्राप्नुवन्ति **(प्रति)** **(वाम्)** युवाम् **(ऋतेन)** सत्येन **(ऊर्ध्वा:)** ऊर्ध्वगमयित्र्य: **(भवन्ति)** **(पितरेव)** जननीजनकाविव **(मेधा:)** प्रज्ञा: **(जरेथाम्)** स्तुयातम् **(अस्मत्)** **(वि)** **(पणे:)** व्यवहारस्य **(मनीषाम्)** मनस ईषिणीम् **(युवो:)** युवयो: **(अव:)** रक्षणम् **(चकृम)** कुर्य्याम **(आ)** समन्तात् **(यातम्)** प्राप्नुतम् **(अर्वाक्)** अध:॥ २॥

अन्वय:-हे अश्विनावध्यापकोपदेशकौ! सुयुग् या ऊर्ध्वा मेधा ऋतेन वां वहन्ति ता अस्मान् प्रति वाहय या: पितरेव पालिका भवन्ति ता युवां जरेथाम्। अस्मद्विपणेर्मनीषामा यातमर्वाग् युवोरवो वयं चकृम॥ २॥

भावार्थ:-यथा वायुकिरणा: सूर्य्यादिकं वहन्ति तथैवोत्तमप्रज्ञावद्वर्त्तमाना: स्त्रियो सुखं प्रतिवहन्ति। ये विद्वांसो नृषु पितृवद्वर्त्तन्ते तान् प्रति सर्वै: पुत्रवद्वर्त्तित्वा सर्वं व्यवहारं विज्ञाय यथावदनुष्ठातव्यम्॥ २॥

पदार्थ:-हे अध्यापक और उपदेशक! **(सुयुक्)** उत्तम कृत्य के योगकर्त्ताजन जिन **(ऊर्ध्वा:)** ऊपर को पहुंचानेवाली **(मेधा:)** बुद्धियों और **(ऋतेन)** सत्य से **(वाम्)** आप दोनों को **(वहन्ति)** प्राप्त होते हैं, उनको हम लोगों के **(प्रति)** प्रति पहुंचाओ, जो **(पितरेव)** माता और पिता के सदृश पालन करनेवाली **(भवन्ति)** होती हैं, [उनको] आप दोनों **(जरेथाम्)** उनकी स्तुति करो। **(अस्मत्)** हमारे लिये **(वि, पणे:)** व्यवहार की **(मनीषाम्)** बुद्धि को **(आ)** सब प्रकार **(यातम्)** प्राप्त होओ **(अर्वाक्)** नीचे स्थानों में **(युवो:)** आप दोनों की **(अव:)** रक्षा हम लोग **(चकृम)** करें॥ २॥

भावार्थ:-जैसे वायु और किरणें सूर्य्य आदि को पहुँचाती हैं, वैसे ही उत्तम बुद्धि के सदृश वर्त्तमान स्त्रियाँ सुख को पहुँचाती हैं। और जो विद्वान् लोग मनुष्यों में पिता के सदृश वर्त्तमान हैं, उनके प्रति सबको चाहिये कि पुत्र के सदृश वर्त्ताव कर और सब व्यवहार को जान के यथावत् करें॥ २॥

अथाग्न्यादिपदार्थचालितयानविषयकं शिल्पिकृत्यमाह॥

अब अग्नि आदि पदार्थ चालितयान विषयक शिल्पिकृत्य को कहते हैं॥

सुयुग्भिरश्वैः सुवृता रथेन दस्राविमं शृणुतं श्लोकमद्रेः।
किमङ्ग वां प्रत्यवर्तिं गमिष्ठाहुर्विप्रासो अश्विना पुराजाः॥३॥

सुयुक्ऽभिः। अश्वैः। सुऽवृता। रथेन। दस्रौ। इमम्। शृणुतम्। श्लोकम्। अद्रेः। किम्। अङ्ग। वाम्। प्रति। अवर्तिम्। गमिष्ठा। आहुः। विप्रासः। अश्विना। पुराऽजाः॥३॥

पदार्थः-(**सुयुग्भिः**) सुष्ठु योजितैः (**अश्वैः**) अग्न्यादिभिः पदार्थैः (**सुवृता**) यः सुष्ठु वर्त्तते तेन (**रथेन**) विमानादियानेन (**दस्रौ**) दुःखानामुपक्षेतारौ (**इमम्**) (**शृणुतम्**) (**श्लोकम्**) वाचम् (**अद्रेः**) मेघस्येव (**किम्**) (**अङ्ग**) (**वाम्**) (**प्रति**) (**अवर्त्तिम्**) अवर्त्तमानाम् (**गमिष्ठा**) अतिशयेन गन्तारौ (**आहुः**) कथयन्ति (**विप्रासः**) मेधाविनो विपश्चितः (**अश्विना**) सूर्य्याचन्द्रमसाविव वर्त्तमानावध्यापकोपदेशकौ (**पुराजाः**) पूर्वं जाताः॥३॥

अन्वयः-हे दस्रावश्विना! युवां सुयुग्भिरश्वैर्युक्तेन सुवृता रथेनापत्याऽद्रेरिवास्माकमिमं श्लोकं शृणुतम्। अङ्ग! यौ वां गमिष्ठा पुराजा विप्रास आहुस्तौ युवां प्रत्यवर्त्तिं किं न गच्छेतम्, किन्तु प्राप्नुयातमेव॥३॥

भावार्थः-ये विद्वांसोऽन्यादिविद्यया चालितैर्यानैर्व्यवहरेयुस्ते किं किमैश्वर्य्यं न लभेरन्॥३॥

पदार्थः-हे (**दस्रौ**) दुःखों को नाश करनेवाले (**अश्विना**) सूर्य्य और चन्द्रमा के सदृश वर्त्तमान अध्यापक और उपदेशक! आप दोनों (**सुयुग्भिः**) उत्तम प्रकार जोड़े गये (**अश्वैः**) अग्नि आदि पदार्थों से युक्त (**सुवृता**) उत्तम (**रथेन**) विमान आदि वाहन से [आकर] (**अद्रेः**) मेघ के सदृश हम लोगों की (**इमम्**) इस (**श्लोकम्**) वाणी को (**शृणुतम्**) सुनो और (**अङ्ग**) हे पूर्वोक्त अध्यापक उपदेशको! जो (**वाम्**) तुम दोनों को (**गमिष्ठा**) अत्यन्त चलनेवाले (**पुराजाः**) प्रथम उत्पन्न हुए (**विप्रासः**) बुद्धिमान् विद्वान् लोग (**आहुः**) कहते हैं, वे आप दोनों (**प्रति, अवर्त्तिम्**) अवर्त्तमान अर्थात् अलभ्य पदार्थ को (**किम्**) क्यों नहीं प्राप्त हों, किन्तु प्राप्त ही होवें॥३॥

भावार्थः-जो विद्वान् लोग अग्नि आदि विद्या से चलाये वाहनों से व्यवहार करें, वे किस-किस ऐश्वर्य्य को न प्राप्त होवें॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

आ मन्येथामा गतं कच्चिदेवैर्विश्वे जनासो अश्विना हवन्ते।
इमा हि वां गोऋजीका मधूनि प्र मित्रासो न ददुरुस्रो अग्रे॥४॥

आ। मन्येथाम्। आ। गतम्। कत्। चित्। एवैः। विश्वे। जनासः। अश्विना। हवन्ते। इमा। हि। वाम्। गोऽऋजीका। मधूनि। प्र। मित्रासः। न। ददुः। उस्रः। अग्रे॥४॥

पदार्थः-(**आ**) समन्तात् (**मन्येथाम्**) विजानीतम् (**आ**) (**गतम्**) आगच्छतम् (**कत्**) कदा (**चित्**) अपि (**एवैः**) सद्यः प्रापकैर्विद्युदादिचालितैर्यानैः (**विश्वे**) सर्वे (**जनासः**) प्रसिद्धा मनुष्याः (**अश्विना**) वायुविद्युतौ (**हवन्ते**) आददति (**इमा**) इमानि (**हि**) यतः (**वाम्**) (**गोऋजीका**) गवां दुग्धादिना मिश्रितानि (**मधूनि**) (**प्र**) (**मित्रासः**) सखायः (**न**) इव (**ददुः**) दद्युः (**उस्रः**) गाः। **उस्रेति गोनामसु पठितम्।** (निघं०२.११)। (**अग्रे**) पूर्वम्॥४॥

अन्वयः- हे अश्विनावध्यापकोपदेशकौ यौ युवां विश्वे जनासो हवन्तेऽग्रे हीमा गोऋजीका मधूनि मित्रासो न प्रददुस्तानुस्रो वामेवैः कदाऽऽगतं चिदपि तानामन्येथाम्॥४॥

भावार्थः-विदुषां योग्यतास्ति ये प्रीत्या धार्मिकाः सुसेवका विद्यार्थिनश्श्रोतारो वा समीपमागच्छेयुस्तेभ्यः प्रशस्तानि विज्ञानादीनि दद्युः। हि यतो सर्वे मनुष्याः सर्वैः सह मित्रवद्वर्त्तेरन्॥४॥

पदार्थः-हे (**अश्विना**) अध्यापक और उपदेशक जनो! [जो] आप दोनों को (**विश्वे**) सम्पूर्ण (**जनासः**) प्रसिद्ध मनुष्य (**हवन्ते**) ग्रहण करते हैं (**अग्रे**) और प्रथम (**हि**) कि जिससे (**इमा**) इन (**गोऋजीका**) गौवों के दुग्ध आदि से मिले हुए (**मधूनि**) सोमलतारूप औषधियों के रसों को (**मित्रासः**) मित्र लोगों के (**न**) सदृश (**प्र, ददुः**) देवें, उनका तथा (**उस्रः**) गौओं को (**वाम्**) आप दोनों (**एवैः**) शीघ्र पहुँचानेवाले बिजुली आदि से चलाये गये वाहनों से (**कत्**) कब (**आ, गतम्**) प्राप्त हुए (**चित्**) भी [उनको] (**आ**) सब प्रकार (**मन्येथाम्**) जानिये॥४॥

भावार्थः-विद्वानों की योग्यता है कि जो प्रीति से धार्मिक उत्तम सेवक विद्यार्थी वा श्रोताजन समीप आवें, उनको उत्तम विज्ञान आदि देवें। जिससे सब मनुष्य सबके साथ मित्रों के सदृश वर्त्ताव करें॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ति॒रः पु॒रू चि॑दश्विना॒ रजां॑स्याङ्गू॒षो वां॑ मघवाना॒ जने॑षु।

एह या॑तं प॒थिभि॑र्देव॒यानै॒र्दस्रा॑वि॒मे वां॑ नि॒धयो॒ मधू॑नाम्॥५॥३॥

ति॒रः। पु॒रु। चि॒त्। अ॒श्वि॒ना॒। रजां॑सि। आ॒ङ्गू॒षः। वा॒म्। म॒घ॒ऽवा॒ना॒। जने॑षु। आ। इ॒ह। या॒त॒म्। प॒थिऽभिः॑। दे॒व॒ऽयानैः॑। दस्रौ॑। इ॒मे। वा॒म्। नि॒ऽधयः॑। मधू॑नाम्॥५॥

पदार्थः-(**तिरः**) तिर्यक् (**पुरू**) बहूनि (**चित्**) अपि (**अश्विना**) शिल्पविद्याविदा-वध्यापकोपदेशकौ (**रजांसि**) लोकान् (**आङ्गूषः**) विद्वान् (**वाम्**) युवाम् (**मघवाना**) परमोत्तमधनयुक्तौ

(जनेषु) मनुष्येषु **(आ)** **(इह)** **(यातम्)** **(पथिभिः)** मार्गैः **(देवयानैः)** देवा विद्वांसो यान्ति यैस्तैः **(दस्रौ)** क्लेशविनाशकौ **(इमे)** **(वाम्)** **(निधयः)** धनसमूहाः **(मधूनाम्)** माधुर्य्यगुणयुक्तानां पदार्थानाम्॥५॥

अन्वयः-हे दस्रौ मघवाना अश्विना! यदि वां देवयानैः पथिभिः पुरू रजांसि तिर आ यातं तर्हीह वां जनेष्विमे मधूनां निधयः प्राप्नुयुः। आङ्गुषश्चिदपि प्राप्नुयात्॥५॥

भावार्थः-ये विद्वद्गतैर्मार्गैः पदार्थविद्या अन्विच्छेयुस्ते सकलविद्याः प्राप्य जलस्थलान्तरिक्षेषु गत्वागत्य श्रीमन्तो भूत्वा दारिद्र्यं तिरस्कृत्य निधिमन्तः सन्तोऽन्यानप्येवं कुर्य्युः॥५॥

पदार्थः-हे **(दस्रौ)** क्लेश के नाशकर्त्ता **(मघवाना)** अत्यन्त उत्तम धनयुक्त **(अश्विना)** शिल्पविद्या के जाननेवाले अध्यापक और उपदेशको! जो **(वाम्)** आप दोनों **(देवयानैः)** विद्वान् लोग जिनसे चलते उन **(पथिभिः)** मार्गों से **(पुरू)** बहुत **(रजांसि)** लोकों को **(तिरः)** तिर्छे मार्ग से **(आ, यातम्)** प्राप्त होवें तो **(इह)** यहाँ **(वाम्)** तुम दोनों को **(जनेषु)** मनुष्यों में **(इमे)** ये **(मधूनाम्)** माधुर्य गुणों से युक्त पदार्थसम्बन्धी **(निधयः)** धनों के समूह प्राप्त होवें और **(आङ्गूषः)** विद्वान् **(चित्)** भी प्राप्त होवें॥५॥

भावार्थः-जो लोग विद्वानों के मार्गों से पदार्थविद्याओं की खोज करें, वे सम्पूर्ण विद्याओं को प्राप्त हों तथा जल, स्थल और अन्तरिक्षों में जा-आ और लक्ष्मीवान् हो दारिद्र्य का तिरस्कार करके धनवान् होते हुए अन्य जनों को भी ऐसे ही करें॥५॥

यदि शिल्पिविद्वद्भिरन्ये परस्परं मैत्रीं कुर्य्युस्तर्हि किं प्राप्नुयुरित्याह॥

जो शिल्पी विद्वानों के साथ और लोग परस्पर मित्रता करें तो क्या पावें, इस विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

पुराणमोकः सख्यं शिवं वां युवोर्नरा द्रविणं जह्नाव्याम्।
पुनः कृण्वानाः सख्या शिवानि मध्वा मदेम सह नू समानाः॥६॥

पुराणम्। ओकः। सख्यम्। शिवम्। वाम्। युवोः। नरा। द्रविणम्। जह्नाव्याम्। पुनरिति। कृण्वानाः। सख्या। शिवानि। मध्वा। मदेम। सह। नु। समानाः॥६॥

पदार्थः-**(पुराणम्)** पुरातनम् **(ओकः)** सर्वर्त्तुसुखप्रदं स्थानमिव **(सख्यम्)** सख्युः कर्म मित्रत्वम् **(शिवम्)** कल्याणकरम् **(वाम्)** **(युवोः)** **(नरा)** नायकौ **(द्रविणम्)** धनम् **(जह्नाव्याम्)** जह्नोस्त्यक्तुरियं नीतिस्तस्याम्। अत्राकाराऽकारयोर्व्यत्ययः। **(पुनः)** **(कृण्वानाः)** कुर्वन्तः **(सख्या)** सुहृदः कर्माणि **(शिवानि)** सुखकराणि **(मध्वा)** मधुरभावेन **(मदेम)** आनन्देम **(सह)** **(नु)** सद्यः। अत्र **ऋचि तुनुघेति** दीर्घः। **(समानाः)** तुल्योत्तमगुणकर्मस्वभावाः॥३॥

अन्वयः-हे नरा नायकौ सभासेनेशौ! वां पुराणमोक इव शिवं सख्यमाप्नोतु। जह्नाव्यां युवोर्द्रविणं मिलतु पुनः शिवानि सख्या कृण्वानाः समाना वयं मध्वा सह नु मदेम॥३॥

भावार्थः-यदि विद्वांसोऽविद्वांसश्च परस्परं मैत्रीं कुर्युस्ते सनातनं शिवं ब्रह्मैश्वर्यं विज्ञानञ्च प्राप्य धार्मिकास्सन्तो दुष्टानि व्यसनानि विहाय सदैव सुखिनः स्युः॥६॥

पदार्थः-हे **(नरा)** नायक सभा और सेना के ईशो! **(वाम्)** आप दोनों **(पुराणम्)** प्राचीन काल से सिद्ध **(ओकः)** सब ऋतुओं में सुख देनेवाले स्थान के तुल्य **(शिवम्)** कल्याण करनेवाले **(सख्यम्)** मित्र के कर्म को प्राप्त हूजिये। और **(जह्नाव्याम्)** त्याग करनेवाले की नीति में **(युवोः)** तुम दोनों को **(द्रविणम्)** धन प्राप्त हो **(पुनः)** फिर **(शिवानि)** सुख करनेवाले **(सख्या)** मित्र के कर्मों को **(कृण्वानाः)** करते हुए **(समानाः)** तुल्य गुण और उत्तम कर्म, स्वभाववाले हम लोग **(मध्वा)** मधुरभाव के **(सह)** साथ **(नु)** शीघ्र **(मदेम)** आनन्द करें॥६॥

भावार्थः-जो विद्वान् और अविद्वान् लोग परस्पर मैत्री करें, वे अनादिसिद्ध, कल्याणकारक ब्रह्म, ऐश्वर्य और विज्ञान को प्राप्त होकर धार्मिक होते हुए दुष्ट व्यसनों का त्याग करके सदा ही सुखी होवें॥६॥

अथ शिल्पविद्योपदेशार्थाज्ञाविषयमाह॥

अब शिल्पविद्या उपदेशार्थ आज्ञा विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अश्विना वायुना युवं सुदक्षा नियुद्भिश्च सजोषसा युवाना।

नासत्या तिरोअह्न्यं जुषाणा सोमं पिबतमस्रिधा सुदानू॥७॥

अश्विना। वायुना। युवम्। सुऽदक्षा। नियुत्ऽभिः। च। सऽजोषसा। युवाना। नासत्या। तिरःऽअह्न्यम्। जुषाणा। सोमम्। पिबतम्। अस्रिधा। सुदानू इति सुऽदानू॥७॥

पदार्थः-**(अश्विना)** शिल्पविद्याध्यापकाऽध्येतारौ स्वामिसेवकौ वा **(वायुना)** पवनेन **(युवम्)** युवाम् **(सुदक्षा)** सुष्ठु चतुरौ **(नियुद्भिः)** नियुक्तैः **(च)** **(सजोषसा)** समानप्रीतिसेविनौ **(युवाना)** प्राप्तयौवनौ **(नासत्या)** अविद्यमानाऽसत्याचारौ **(तिरोअह्न्यम्)** तिरश्चीनेष्वहस्सु साधुम् **(जुषाणा)** सेवमानौ **(सोमम्)** महौषधिरसम् **(पिबतम्)** **(अस्रिधा)** अहिंसकौ **(सुदानू)** उत्तमपदार्थदातारौ॥७॥

अन्वयः-हे युवाना नासत्या सुदक्षा सजोषसा तिरोअह्न्यं जुषाणा अस्रिधा सुदानू अश्विना! युवं वायुना नियुद्भिश्च युक्ते याने स्थित्वाऽऽगत्य सोमं पिबतम्॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! भवन्तो हिंसाद्यधर्मव्यवहारं विहाय वायुविद्युदादिपदार्थविद्या विज्ञायाऽन्येभ्यो विद्यादि दत्वा पूर्णं ब्रह्मचर्य्यं सेवित्वा चिरञ्जीवन्तु॥७॥

पदार्थः-हे **(युवाना)** यौवनावस्था को प्राप्त **(नासत्या)** असत्य आचार से रहित **(सुदक्षा)** उत्तम प्रकार चतुर **(सजोषसा)** तुल्य प्रीति के सेवनेवाले **(तिरोअह्न्यम्)** तिर्च्छे दिनों में उत्तम की **(जुषाणा)** सेवा करते हुए **(अस्त्रिधा)** अहिंसक **(सुदानू)** उत्तम पदार्थ के देने **(अश्विना)** शिल्पविद्या के पढ़ाने और पढ़नेवाले स्वामी और सेवको! **(युवम्)** आप दोनों **(वायुना)** पवन से **(नियुद्भिः)** नियत किये हुए भी वाहनों में स्थित हो **(च)** और आकर **(सोमम्)** बड़ी औषधि के रस का **(पिबतम्)** पान कीजिये॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! आप हिंसा आदि अधर्म व्यवहार को त्याग के वायु, बिजुली आदि पदार्थविद्याओं को जान अन्य जनों के लिये विद्या आदि दे और पूर्ण ब्रह्मचर्य का सेवन करके अतिकाल जीओ॥७॥

अथ शिल्पविद्यासिद्धयानेन गमनागमनविषयमाह॥

अब शिल्पविद्यासिद्ध यान से जाने-आने के विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अश्विना परि वामिषः पुरूचीरीयुर्गीर्भिर्यतमाना अमृध्राः।

रथो ह वामृतजा अद्रिजूतः परि द्यावापृथिवी याति सद्यः॥८॥

अश्विना। परि। वाम्। इषः। पुरूचीः। ईयुः। गीःऽभिः। यतमानाः। अमृध्राः। रथः। ह। वाम्। ऋतऽजाः। अद्रिऽजूतः। परि। द्यावापृथिवी इति। याति। सद्यः॥८॥

पदार्थः-**(अश्विना)** सकलविद्याव्याप्तौ **(परि)** सर्वतः **(वाम्)** युवाम् **(इषः)** इच्छासिद्धीः **(पुरूचीः)** पुरूणि सुखान्यञ्चन्तीः **(ईयुः)** प्राप्नुयुः **(गीर्भिः)** वाग्भिः **(यतमानाः)** **(अमृध्राः)** अध्यापकोपदेशकाः **(रथः)** **(ह)** किल **(वाम्)** युवयोः **(ऋतजाः)** ऋतात् सत्याज्जातः **(अद्रिजूतः)** योऽद्रौ मेघे जवति सद्यो गच्छति **(परि)** सर्वतः **(द्यावापृथिवी)** भूमिप्रकाशौ **(याति)** गच्छति **(सद्यः)** शीघ्रम्॥८॥

अन्वयः-हे अश्विना यदि वामृतजा अद्रिजूतो रथो द्यावापृथिवी सद्यः परि याति तर्हि तेन वां ह गीर्भिरमृध्रा यतमाना अध्यापकोपदेशका इव पुरूचीरिष परीयुः॥८॥

भावार्थः-ये विमानादियानान्यग्न्यादिभिर्निर्मिते तेऽभीष्टानि सुखानि प्राप्य यत्रेच्छा तत्र सद्यो गन्तुं शक्नुवन्ति॥८॥

पदार्थः-हे **(अश्विना)** सम्पूर्ण विद्याओं में व्याप्त रमते हुए यदि **(वाम्)** आप दोनों को **(ऋतजाः)** सत्य से उत्पन्न **(अद्रिजूतः)** मेघ में शीघ्र जानेवाला **(रथः)** वाहन **(द्यावापृथिवी)** भूमि और प्रकाश को **(सद्यः)** शीघ्र **(परि, याति)** सब ओर पहुँचाता है तो उससे **(वाम्)** आप दोनों को **(ह)** निश्चय कर **(गीर्भिः)** वाणियों से जैसे **(अमृध्राः)** अध्यापक और उपदेशक **(यतमानाः)** प्रयत्न करते प्राप्त हों, वैसे **(पुरूचीः)** सुखों को पहुंचानेवाली **(इषः)** इच्छासिद्धियों को **(परि, ईयुः)** सब ओर प्राप्त होवें॥९॥

भावार्थः-जो लोग विमान आदि यानों को अग्नि आदि से रचते हैं, वे अभीष्ट सुखों को प्राप्त होकर जहाँ इच्छा हो शीघ्र जा सकते हैं॥८॥

अथ शिल्पविद्याफलमाह॥

अब शिल्पविद्या के फल को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अश्विना मधुषुत्तमो युवाकुः सोमस्तं पातमा गतं दुरोणे।
रथो ह वां भूरि वर्पः करिक्रत् सुतावतो निष्कृतमागमिष्ठः॥९॥४॥

अश्विना। मधुसुत्ऽतमः। युवाकुः। सोमः। तम्। पातम्। आ। गतम्। दुरोणे। रथः। ह। वाम्। भूरि। वर्पः। करिक्रत्। सुतऽवतः। निःऽकृतम्। आऽगमिष्ठः॥९॥

पदार्थः-(**अश्विना**) सर्वाधीशसेनाधीशौ (**मधुषुत्तमः**) यो मधूनि सुनोति सोऽतिशयितः (**युवाकुः**) मिश्रिताऽमिश्रितः (**सोमः**) ऐश्वर्यलाभः (**तम्**) (**पातम्**) रक्षतम् (**आ**) (**गतम्**) आगच्छतम् (**दुरोणे**) गृहे (**रथः**) (**ह**) किल (**वाम्**) युवयोः (**भूरि**) बहु (**वर्पः**) रूपयुक्तः (**करिक्रत्**) भृशं करोति (**सुतावतः**) निष्पन्नैश्वर्यकोशस्य (**निष्कृतम्**) निष्पन्नम् (**आगमिष्ठः**) अतिशयेनाऽऽगन्ता॥९॥

अन्वयः-हे अश्विना! यो ह वां रथो भूरि वर्पः सुतावतो निष्कृतमागमिष्ठः करिक्रदस्ति तेन यो मधुषुत्तमो युवाकुस्सोमोऽस्ति तं दुरोणे पातं परदेशात् स्वदेशमागतम्॥९॥

भावार्थः-ये मनुष्या शिल्पविद्ययाऽनेकानि कलायन्त्राणि निर्माय यानादीनि निर्मिमते ते स्वगृहकुलदेशे पूर्णमैश्वर्यं कर्त्तुं शक्नुवन्ति॥९॥

अत्राश्विशिल्पकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्यष्टपञ्चाशत्तमं सूक्तं चतुर्थो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे (**अश्विना**) सबके अधीश और सेना के अधीश! जो (**ह**) निश्चय (**वाम्**) आप दोनों का (**रथः**) [वाहन] (**भूरि**) बड़े (**वर्पः**) रूप से युक्त (**सुतावतः**) उत्पन्न ऐश्वर्य कोश के (**निष्कृतम्**) सिद्ध हुए विषय को (**आगमिष्ठः**) अतिशय करके प्राप्त होनेवाला (**करिक्रत्**) निरन्तरकारी है, उससे जो (**मधुषुत्तमः**) मीठे रसों को निचोड़नेवाला (**युवाकुः**) मिला और अनमिला (**सोमः**) ऐश्वर्य का लाभ है (**तम्**) इसकी (**दुरोणे**) गृह में (**पातम्**) रक्षा कीजिये और अन्य देश से अपने देश में (**आ, गतम्**)

आइए॥९॥

भावार्थः-जो मनुष्य शिल्पविद्या से अनेक कलायन्त्रों का निर्माण कर के वाहन आदि को रचते हैं, वे अपने गृह, कुल और देश में पूर्ण ऐश्वर्य कर सकते हैं॥७॥

इस सूक्त में अश्वि शब्द से शिल्पीजनों का कृत्य वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह अट्ठावनवां सूक्त और चौथा वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ नवर्चस्यैकोनषष्टितमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। मित्रो देवता। १, २, ५ त्रिष्टुप्। ३ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ४ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः। ६, ९ निचृद्गायत्री। ७, ८ गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथ मित्रगुणानाह॥

अब नव ऋचावाले उनसठवें सूक्त का प्रारम्भ है, उसके प्रथम मन्त्र में मित्रगुणों का उपदेश करते हैं॥

मि॒त्रो जना॑न् यातयति ब्रुवा॒णो मि॒त्रो दा॑धार पृथि॒वीमु॒त द्याम्।
मि॒त्रः कृ॒ष्टीरनि॑मिषा॒भि च॑ष्टे मि॒त्राय॑ ह॒व्यं घृ॒तव॑ज्जुहोत॥ १॥

मि॒त्रः। जना॑न्। या॒त॒य॒ति॒। ब्रु॒वा॒णः। मि॒त्रः। दा॒धा॒र॒। पृ॒थि॒वीम्। उ॒त। द्याम्। मि॒त्रः। कृ॒ष्टीः। अनि॑ऽमिषा। अ॒भि। च॒ष्टे॒। मि॒त्राय॑। ह॒व्यम्। घृ॒तऽव॑त्। जु॒हो॒त॒॥ १॥

पदार्थः-(**मित्रः**) सखा (**जनान्**) (**यातयति**) पुरुषार्थयति (**ब्रुवाणः**) उपदेशेन प्रेरयन् (**मित्रः**) सूर्य इव परमात्मा (**दाधार**) धरति (**पृथिवीम्**) भूमिम् (**उत**) अपि (**द्याम्**) सूर्यलोकम् (**मित्रः**) सर्वस्य सुहृद्राजा (**कृष्टीः**) कर्षिका मनुष्यप्रजाः (**अनिमिषा**) अहर्निशजन्यया क्रियया (**अभि**) (**चष्टे**) अभितः ख्याति (**मित्राय**) वह्नये (**हव्यम्**) होतुमर्हम् (**घृतवत्**) बहुघृतादियुक्तं हविः (**जुहोत**) दत्त॥ १॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो ब्रुवाणो मित्रो जनाननिमिषा यातयति यो मित्रः पृथिवीमुत द्यामनिमिषा दाधार। यो मित्रः कृष्टीरनिमिषाऽभि चष्टे तस्मै मित्राय घृतवद्धव्यं जुहोत॥ १॥

भावार्थः-ये मनुष्या सत्योपदेशकं सत्यविद्याप्रदं सखायं सर्वाधारकं परमात्मानं सर्वव्यवस्थापकं राजानं सत्कुर्वन्ति त एव सर्वस्य सुहृदः सन्ति॥ १॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो (**ब्रुवाणः**) उपदेश से प्रेरणा करता हुआ (**मित्रः**) सबका मित्रजन (**जनान्**) मनुष्यों को (**अनिमिषा**) दिन और रात्रि में होनेवाली क्रिया से (**यातयति**) पुरुषार्थ कराता जो (**मित्रः**) सूर्य के समान परमात्मा मित्र (**पृथिवीम्**) भूमि (**उत**) और (**द्याम्**) सूर्यलोक को दिन और रात्रि में होनेवाली क्रिया से (**दाधार**) धारण करता और जो (**मित्रः**) सबका मित्र (**कृष्टीः**) खींचने व जोतनेवाली मनुष्य रूप प्रजाओं को दिन और रात्रि में होनेवाली क्रिया से (**अभि, चष्टे**) सब प्रकार उपदेश देता है उस (**मित्राय**) उक्त सर्व व्यवहार को चलानेवाले मित्र के लिये (**घृतवत्**) बहुत घृत आदि से युक्त (**हव्यम्**) हविष्यान्न (**जुहोत**) दीजिये॥ १॥

भावार्थः-जो मनुष्य लोग सत्य का उपदेश करने, सत्य विद्या देने, मित्रता रखने, सबको धारण करनेवाले परमात्मा और सबके व्यवस्थापक राजा का सत्कार करते हैं, वे ही सबके मित्र हैं॥ १॥

अथेश्वराप्तमित्रतामाह॥

अब ईश्वर और आप्त विद्वान् के मित्रपन को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

प्र स मि॑त्र॒ मर्तो॑ अस्तु॒ प्रय॑स्वा॒न् यस्त॑ आदित्य॒ शिक्ष॑ति व्र॒तेन॑।
न ह॑न्यते॒ न जी॑यते॒ त्वोतो॒ नैन॒मंहो॑ अश्नो॒त्यन्ति॑तो॒ न दू॒रात्॥ २॥

प्र। सः। मि॒त्र॒। मर्तः॑। अ॒स्तु॒। प्रय॑स्वान्। यः। ते॒। आ॒दि॒त्य॒। शिक्ष॑ति। व्र॒तेन॑। न। ह॒न्य॒ते॒। न। जी॒य॒ते॒। त्वाऽऊ॑तः। न। ए॒न॒म्। अंहः॑। अ॒श्नो॒ति॒। अन्ति॑तः। न। दू॒रात्॥ २॥

पदार्थः-(**प्र**) (**सः**) (**मित्र**) सखे (**मर्त्तः**) मनुष्यः (**अस्तु**) भवतु (**प्रयस्वान्**) प्रयत्नवान् (**यः**) (**ते**) तव (**आदित्य**) अविनाशिस्वरूप (**शिक्षति**) विद्यां गृह्णाति ग्राहयति वा। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम्। (**व्रतेन**) कर्मणेव (**न**) (**हन्यते**) (**न**) (**जीयते**) जेतुं शक्यते (**त्वोतः**) त्वया रक्षितः (**न**) (**एनम्**) (**अंहः**) पापम् (**अश्नोति**) प्राप्नोति (**अन्तितः**) समीपात् (**न**) (**दूरात्**)॥ २॥

अन्वयः-हे मित्र आप्त विद्वज्जगदीश्वर वा! यो मर्त्तः प्रयस्वानस्तु हे आदित्य! यो मनुष्यस्ते व्रतेनेवाऽन्यान् प्रशिक्षति स त्वोतोऽन्यैर्न हन्यते न जीयते। एनमन्तितोंऽहो नाऽश्नोति नैनं दूरादंहोऽश्नोति॥ २॥

भावार्थः-ये मनुष्या आप्तेश्वरयोर्गुणकर्मस्वभाववत्स्वगुणकर्मस्वभावान् कृत्वा सत्यन्यायेन सर्वाञ्छिक्षन्ते ते निष्पापा धर्मात्मानो भूत्वाऽऽप्तेश्वराभ्यां रक्षिताः सन्तो दुष्टैर्हन्तुं पराजेतुं च न शक्यन्ते। नैव ते दूरात् समीपाद्वा पक्षपातेन पापं भजन्ते॥ २॥

पदार्थः-हे (**मित्र**) मित्र यथार्थवक्ता विद्वान् वा जगदीश्वर! (**यः**) जो (**मर्त्तः**) मनुष्य (**प्रयस्वान्**) प्रयत्नवाला (**अस्तु**) हो। और हे (**आदित्य**) अविनाशिस्वरूप! जो मनुष्य (**ते**) आपके (**व्रतेन**) कर्म से जैसे वैसे अन्य जनों को (**प्र, शिक्षति**) विद्या ग्रहण कराता वा आप ग्रहण करता है (**सः**) वह (**त्वोतः**) आपसे रक्षित अन्य जनों से (**न**) न (**हन्यते**) मारा जाता (**न**) और न (**जीयते**) जीता जाता है। (**एनम्**) इसको (**अन्तितः**) समीप से (**अंहः**) पाप (**न**) नहीं (**अश्नोति**) प्राप्त होता और (**न**) न इसको (**दूरात्**) दूर से पाप प्राप्त होता है॥ २॥

भावार्थः-जो मनुष्य यथार्थवक्ता और स्वामी के गुण, कर्म और स्वभाव के सदृश अपने गुण, कर्म और स्वभावों को करके सत्य न्याय से सबको शिक्षा करते हैं, वे पापरहित धर्मात्मा होकर यथार्थवक्ता और स्वामी से रक्षित हुए दुष्टों से नाश तथा पराजय को प्राप्त नहीं हो सकते और न वे दूर वा समीप से पक्षपात से पाप का सेवन करते हैं॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अ॒न॒मी॒वास॑ इळ॑या॒ मद॑न्तो मि॒तज्ञ॑वो॒ वरि॑म॒न्ना पृ॑थि॒व्याः।
आ॒दि॒त्यस्य॑ व्र॒तमु॑पक्षि॒यन्तो॑ व॒यं मि॒त्रस्य॑ सुम॒तौ स्या॑म॥ ३॥

अनमीवासः। इळया। मदन्तः। मितऽज्ञवः। वरिमन्। आ। पृथिव्याः। आदित्यस्य। व्रतम्। उपऽक्षियन्तः। वयम्। मित्रस्य। सुऽमतौ। स्याम॥३॥

पदार्थः-(**अनमीवासः**) शरीरात्मरोगरहिताः (**इळया**) सुशिक्षितया वाचा पृथिवीराज्येन वा (**मदन्तः**) आनन्दन्तः (**मितज्ञवः**) मितानि जानूनि येषान्ते (**वरिमन्**) बहुशीलसत्ययुक्तम् (**आ**) (**पृथिव्याः**) भूमेः (**आदित्यस्य**) सूर्य्यस्य (**व्रतम्**) क्षमां न्यायप्रकाशं वा कर्म (**उपक्षियन्तः**) उपनिवसन्तः (**वयम्**) (**मित्रस्य**) सर्वस्य सुहृद ईश्वरस्याऽऽप्तस्य वा (**सुमतौ**) उत्तमाज्ञायां प्रज्ञायां वा (**स्याम**) भवेम॥३॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा ब्रह्मचर्य्येणऽनमीवास इळया मदन्तो मितज्ञवः पृथिव्या आदित्यस्य वरिमन् व्रतमोपक्षियन्तो वयं मित्रस्य सुमतौ स्याम तथा भवन्तोऽपि भवन्तु॥३॥

भावार्थः-ये परमेश्वरेणाऽऽप्तैस्सह सौहार्दं कृत्वा क्षमादिविद्यान्यायप्रकाशादिगुणान् स्वीकृत्य धर्म्ये पथि वर्तन्ते त एव परमेश्वरस्याप्तानां च प्रिया जायन्ते॥३॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे ब्रह्मचर्य्य से (**अनमीवासः**) शरीर और आत्मा के रोग से रहित (**इळया**) उत्तम प्रकार शिक्षित वाणी वा पृथिवी के राज्य से (**मदन्तः**) आनन्दित होते (**मितज्ञवः**) और नपी जङ्घाओंवाले (**पृथिव्याः**) भूमि और (**आदित्यस्य**) सूर्य्य के (**वरिमन्**) बहुत शील और सत्य से युक्त (**व्रतम्**) क्षमा वा न्यायप्रकाश करनेवाले कर्म को (**आ, उपक्षियन्तः**) प्राप्त होते हुए (**वयम्**) हम लोग (**मित्रस्य**) सबके मित्र ईश्वर वा यथार्थवक्ता पुरुष की (**सुमतौ**) श्रेष्ठ आज्ञा वा बुद्धि में (**स्याम**) होवें, वैसे आप भी होओ॥३॥

भावार्थः-जो लोग परमेश्वर और यथार्थवक्ता पुरुषों के साथ मित्रता कर और क्षमा आदि, विद्या, न्याय के प्रकाश आदि गुणों को स्वीकार करके धर्मयुक्त मार्ग में वर्तमान हैं, वे ही परमेश्वर और यथार्थवक्ता पुरुषों के प्रिय होते हैं॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अयं मित्रो नमस्यः सुशेवो राजा सुक्षत्रो अजनिष्ट वेधाः।
तस्य वयं सुमतौ यज्ञियस्यापि भद्रे सौमनसे स्याम॥४॥

अयम्। मित्रः। नमस्यः। सुऽशेवः। राजा। सुऽक्षत्रः। अजनिष्ट। वेधाः। तस्य। वयम्। सुऽमतौ। यज्ञियस्य। अपि। भद्रे। सौमनसे। स्याम॥४॥

पदार्थः-(**अयम्**) परमात्माऽऽप्तो राजा वा (**मित्रः**) सखा (**नमस्यः**) परिचरितुं सत्कर्तुं योग्यः (**सुशेवः**) सुष्ठु सुखप्रदः (**राजा**) भूमिपः (**सुक्षत्रः**) सुष्ठु सुखि क्षत्रं राष्ट्रं यस्य सः (**अजनिष्ट**) जायते (**वेधाः**) मेधावी (**तस्य**) (**वयम्**) (**सुमतौ**) आज्ञायां प्रज्ञायां वा (**यज्ञियस्य**) न्यायव्यवहारसम्पादकस्य (**अपि**) (**भद्रे**) कल्याणकरे (**सौमनसे**) सुमनसि भवे व्यवहारे (**स्याम**)॥४॥

अन्वयः-सर्वैर्योऽयं मित्रो सुशेवः सुक्षत्रो राजा वेधा नमस्योऽस्ति यस्य राष्ट्रं सुख्यजनिष्ट तस्य यज्ञियस्य सुमतौ सौमनसे भद्रेऽपि वयं स्याम तथैव सर्वे भवन्तु॥४॥

भावार्थः-यथेश्वर आप्ताश्च धर्मे वर्त्तमाना नमस्या भवन्ति तथैव न्यायविनयाभ्यां राष्ट्रपालका राजानः सत्कर्त्तव्याः स्युः। यथा शिष्टाः परमेश्वरस्याऽऽप्तानां च कर्मसु वर्त्तन्ते तथैवाऽस्माभिस्सदैव वर्त्तितव्यम्॥४॥

पदार्थः-सबको जो (**अयम्**) यह परमात्मा वा यथार्थवक्ता राजा (**मित्रः**) मित्र (**सुशेवः**) उत्तम सुख का दाता (**सुक्षत्रः**) वा जिसका राज्य देश उत्तम प्रकार सुखी (**राजा**) जो पृथिवी का पालनकर्त्ता (**वेधाः**) बुद्धिमान् (**नमस्यः**) और सत्कार करने योग्य है तथा जिसका राज्य देश सुखी (**अजनिष्ट**) होता है (**तस्य**) उस (**यज्ञियस्य**) सत्य व्यवहार के उत्पन्न करनेवाले की (**सुमतौ**) आज्ञा वा बुद्धि में तथा (**सौमनसे**) श्रेष्ठ मानस व्यवहार और (**भद्रे**) कल्याण करनेवाले व्यवहार में (**अपि**) भी (**वयम्**) हम लोग (**स्याम**) प्रसिद्ध होवें, वैसे ही सब लोग हों॥४॥

भावार्थः-जैसे ईश्वर और यथार्थवक्ता पुरुष धर्म में वर्त्तमान हुए नमस्कार करने के योग्य होते हैं, वैसे ही न्याय और विनय से राज्य के पालनकर्त्ता राजा लोग सत्कार करने योग्य होवें और सज्जन लोग परमेश्वर और यथार्थवक्ताओं के कर्मों में वर्त्तमान हैं, वैसे ही हम लोगों को चाहिये कि वर्त्ताव करें॥४॥

अथ मित्राय प्रियपदार्थान् दातुमाह॥

अब मित्र के लिये प्रिय पदार्थ देने को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

म॒हाँ आ॑दि॒त्यो नम॑सोप॒सद्यो॑ यात॒यज्ज॑नो गृण॒ते सु॒शेवः॑।

तस्मा॑ ए॒तत्पन्य॑तमाय॒ जुष्ट॑म॒ग्नौ मि॒त्राय॑ ह॒विरा जु॑होत॥५॥५॥

म॒हान्। आ॒दि॒त्यः। नम॑सा। उ॒प॒ऽसद्यः॑। या॒त॒यत्ऽज॑नः। गृ॒ण॒ते। सु॒ऽशेवः॑। तस्मै॑। ए॒तत्। पन्य॑ऽतमाय। जुष्ट॑म्। अ॒ग्नौ। मि॒त्राय॑। ह॒विः। आ। जु॒हो॒त॥५॥

पदार्थः-(**महान्**) महागुणविशिष्टः (**आदित्यः**) सूर्य्यइव शुभगुणप्रकाशकः (**नमसा**) सत्कारेण (**उपसद्यः**) प्राप्तुं योग्यः (**यातज्जनः**) प्रेरयन् (**गृणते**) स्तुवन्ति (**सुशेवः**) सुसुखः (**तस्मै**) (**एतत्**) (**पन्यतमाय**) अतिशयेन प्रशंसिताय (**जुष्टम्**) प्रीतम् (**अग्नौ**) (**मित्राय**) प्राणवद्वर्त्तमानाय (**हविः**) होतव्यमत्तव्यम् (**आ**) (**जुहोत**) दद्युः॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! य आदित्य इव महान् सुशेवो यातयज्जनो नमसोपसद्यो भवेद्यं सर्वे गृणते तस्मै पन्यतमाय मित्रायाऽग्नौ हविरिवैतज्जुष्टं हविरा जुहोत॥५॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। त एव पूज्यास्सूर्य्यवद्विद्याधर्मप्रकाशका आप्ता विद्वांसो ये शुभगुणकर्मसु सर्वान् प्रेरयेयुर्यथर्त्विजोऽग्नौ सुसंस्कृतं हविर्हुत्वा जगत्प्रसादयन्ति तथैव शुभगुणयुक्तेषु विद्यार्थिषु विद्याधर्मौ संस्थाप्य सर्वान् मनुष्यादीन् सुखिनः कुर्वन्ति॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(आदित्यः)** सूर्य्य के सदृश अच्छे गुणों का प्रकाश करनेवाला **(महान्)** बड़े-बड़े गुणों से युक्त **(सुशेवः)** जिसका उत्तम सुख **(यातयज्जनः)** जो प्रेरणा करता हुआ जन **(नमसा)** सत्कार से **(उपसद्यः)** प्राप्त होने योग्य हो और जिसकी सब लोग **(गृणते)** स्तुति करते हैं। **(तस्मै)** उस **(पन्यतमाय)** अत्यन्त प्रशंसायुक्त **(मित्राय)** प्राणों के सदृश वर्त्तमान पुरुष के लिये **(अग्नौ)** अग्नि में **(हविः)** हवन करने तथा खाने योग्य पदार्थ के सदृश **(एतत्)** इस **(जुष्टम्)** प्रिय पदार्थ को **(आ, जुहोत)** देओ॥५॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। वे ही पूज्य सूर्य्य के सदृश विद्या और धर्म के प्रकाश करनेवाले यथार्थवक्ता विद्वान् लोग हैं कि जो उत्तम गुण और कर्मों में सब को प्रेरणा करें जैसे ऋत्विक् अर्थात् ऋतु-ऋतु में हवन करनेवाले लोग अग्नि में अच्छे बनाए हुए हवि अर्थात् होम करने योग्य पदार्थ को होम के संसार को प्रसन्न करते हैं, वैसे ही उत्तम गुणों से युक्त विद्यार्थी जनों में विद्या और धर्म को अच्छे प्रकार स्थापन करके सब मनुष्य आदि प्राणियों को सुखी करते हैं॥५॥

अथ प्रजामित्रराजगुणानाह॥

अब प्रजा मित्र राजा के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मित्रस्य॑ चर्षणी॒धृतोऽवो॑ दे॒वस्य॒ सान॒सि। द्यु॒म्नं चि॒त्रश्र॑वस्तमम्॥६॥

मि॒त्रस्य॑। च॒र्ष॒णि॒ऽधृतः॑। अवः॑। दे॒वस्य॑। सा॒न॒सि। द्यु॒म्नम्। चि॒त्रऽश्र॑वःऽतमम्॥६॥

पदार्थः-**(मित्रस्य)** सर्वस्य सुहृदः **(चर्षणीधृतः)** मनुष्याणां धर्तुः **(अवः)** रक्षणादिकम् **(देवस्य)** विदुषो राज्ञः **(सानसि)** पुरातनम् **(द्युम्नम्)** यशःकरं धनं विज्ञानं वा **(चित्रश्रवस्तमम्)** चित्राण्यद्भुतानि श्रवांसि श्रवणान्यन्नानि वा येन तदतिशायितम्॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्य चर्षणीधृतो मित्रस्य देवस्य सानस्यवश्चित्रश्रवस्तमं द्युम्नं चास्ति स एव प्रजा रक्षितुं शक्नोति॥६॥

भावार्थः-ये सनातनं विद्याधनं गृहीत्वा सर्वाः प्रजा रक्षन्ति तेऽत्राऽमुत्र च सुखं लभन्ते॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जिस **(चर्षणीधृतः)** मनुष्यों के धारण करनेवाले **(मित्रस्य)** सबके मित्र

(देवस्य) विद्वान् राजा का **(सानसि)** प्राचीन **(अवः)** रक्षा आदि **(चित्रश्रवस्तमम्)** जिसके अत्यन्त होने से अद्भुत श्रवण वा अन्न सिद्ध होते **(द्युम्नम्)** और जो यश करनेवाला धन वा विज्ञान है, वही प्रजाओं की रक्षा कर सकता है॥६॥

भावार्थः-जो लोग अनादि काल से सिद्ध विद्याधन का ग्रहण करके सम्पूर्ण प्रजाओं की रक्षा करते हैं, वे इस लोक और परलोक में सुख को प्राप्त होते हैं॥६॥

अथ मित्रत्वेनेश्वरस्य पदार्थरचनं तत्सेवनं चाह॥

अब मित्रपन से ईश्वर के पदार्थरचन और ईश्वरसेवन को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अभि यो महिना दिवं मित्रो बभूव सप्रथाः। अभि श्रवोभिः पृथिवीम्॥७॥

अभि। यः। महिना। दिवम्। मित्रः। बभूव। सऽप्रथाः। अभि। श्रवःऽभिः। पृथिवीम्॥७॥

पदार्थः-(अभि) आभिमुख्ये **(यः) (महिना)** महिम्ना **(दिवम्)** प्रकाशमयं सूर्य्यम् **(मित्रः)** सखेव वर्त्तमानः **(बभूव)** भवति **(सप्रथाः)** प्रथसा विस्तृतेन जगता सह वर्त्तमानः **(अभि) (श्रवोभिः)** अन्नादिभिस्सह **(पृथिवीम्)** भूमिम्॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यस्सप्रथा मित्रो जगदीश्वरः स्वस्य महिना दिवं निर्मायाऽभि बभूव श्रवोभिः पृथिवीं रचयित्वाऽभि बभूव तं नित्यं सेवध्वम्॥७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यो महासामर्थ्येन सूर्य्यपृथिव्यादिकं सविस्तरं जगन्निर्मायान्तर्यामिरूपेण सर्वं विज्ञाय धृत्वा नियमयति स एवोपासितुं योग्यः॥७॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(यः)** जो **(सप्रथाः)** विस्तारयुक्त जगत् के साथ वर्त्तमान वा **(मित्रः)** मित्र के सदृश वर्त्तमान जगदीश्वर अपनी **(महिना)** महिमा से **(दिवम्)** प्रकाशमय सूर्य को रच के **(अभि)** सम्मुख **(बभूव)** होता वा **(श्रवोभिः)** अन्न आदि पदार्थों के साथ **(पृथिवीम्)** भूमि को रच के **(अभि)** सम्मुख होता है, उसकी नित्य सेवा करो॥७॥

भावार्थः- हे मनुष्यो! जो बड़े सामर्थ्य से सूर्य्य और पृथिवी आदि विस्तार सहित संसार को रच और अन्तर्य्यामिरूप से सबको जान और धारण करके नियम में लाता है, वही उपासना करने के योग्य है॥७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मित्राय पञ्च येमिरे जना अभिष्टिशवसे। स देवान् विश्वान् बिभर्ति॥८॥

मित्राय। पञ्च। येमिरे। जनाः। अभिष्टिऽशवसे। सः। देवान्। विश्वान्। बिभर्ति॥८॥

पदार्थः-(**मित्राय**) सखेव सर्वेषां सुखप्रदाय (**पञ्च**) प्राणादयः (**येमिरे**) यच्छन्ति (**जनाः**) विद्वांसः (**अभिष्टिशवसे**) अभीष्टबलाय (**सः**) (**देवान्**) सूर्य्यादीन् (**विश्वान्**) सर्वान् (**बिभर्ति**) धरति पुष्णाति॥८॥

अन्वयः-हे मनुष्या! इमे पञ्च प्राणा इव जना यस्मा अभिष्टिशवसे मित्राय येमिरे स विश्वान् देवान् बिभर्तीति विजानीत॥८॥

भावार्थः-अत्र वाचकलुप्तोपमालङ्कारः। यथा निगृहीताः प्राणा इन्द्रियाणि निगृह्णन्ति तथैव योगिनो जना समाधिना परमात्मानं प्राप्नुवन्ति॥८॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! ये (**पञ्च**) पाँच प्राण आदि के सदृश (**जनाः**) विद्वान् लोग जिस (**अभिष्टिशवसे**) अपेक्षित बलयुक्त (**मित्राय**) मित्र के सदृश सबको सुख देनेवाले परमात्मा के लिये (**येमिरे**) यमादि साधन साधते हैं। (**सः**) वह (**विश्वान्**) समस्त (**देवान्**) सूर्य्य आदिकों को (**बिभर्ति**) धारण तथा पोषण करता है, ऐसा जानो॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में वाचकलुप्तोपमालङ्कार है। जैसे रोके गये प्राणवायु इन्द्रियों को रोकते हैं, वैसे ही योगीजन समाधि से परमात्मा को प्राप्त होते हैं॥८॥

अथ मित्रत्वेनेश्वरोपासनविषयमाह॥

अब मित्रत्व से ईश्वरोपासना विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

मि॒त्रो दे॒वेष्वा॒युषु॒ जना॑य वृ॒क्तब॑र्हिषे। इष॑ इ॒ष्टव्र॑ता अकः॥९॥६॥

मि॒त्रः। दे॒वेषु॑। आ॒युषु॑। जना॑य। वृ॒क्तऽब॑र्हिषे। इषः॑। इ॒ष्टऽव्र॑ताः। अ॒क॒रित्य॑कः॥९॥

पदार्थः-(**मित्रः**) सखा (**देवेषु**) दिव्येषु (**आयुषु**) जीवनेषु (**जनाय**) मनुष्याद्याय (**वृक्तबर्हिषे**) वृक्तं बर्हिरुदकं येन तस्मै (**इषः**) इच्छाः (**इष्टव्रताः**) इष्टकर्माणः (**अकः**) करोति॥९॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो मित्र ईश्वरो वृक्तबर्हिषे जनाय देवेष्वायुष्विष्टव्रता इषोऽकस्तं सर्वे भजध्वम्॥९॥

भावार्थः-यः परमात्माऽन्यायवर्जितान् भक्तान् मनुष्यान्त्सिद्धेच्छान् करोति स एव सर्वैर्ध्यातव्य इति॥९॥

अत्र मित्रादिगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकोनषष्टितमं सूक्तं षष्ठो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(मित्रः)** ईश्वर **(वृक्तबर्हिषे)** छोड़ा है जल जिसने उस **(जनाय)** मनुष्य आदि के लिये **(देवेषु)** उत्तम **(आयुषु)** जीवनों में **(इष्टव्रताः)** चाहे हुए काम जिनसे होते उनकी **(इषः)** इच्छाओं को **(अकः)** पूर्ण करता है, उसकी सब लोग सेवा करो॥९॥

भावार्थः-जो परमात्मा अन्याय से रहित भक्त मनुष्यों को सिद्ध इच्छावाले करता है, वही सब लोगों को ध्यान करने योग्य है॥९॥

[यह उनसठवां सूक्त और छठा वर्ग समाप्त हुआ॥]

अथ सप्तर्चस्य षष्टितमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। ऋभवो देवताः। १-३ जगती। ४, ५ निचृज्जगती। ६ विराड्जगती। ७ भुरिग्जगती छन्दः। निषादः स्वरः॥

अथ राजविषयमाह॥

अब सात ऋचावाले साठवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में राजविषय का उपदेश करते हैं॥

इहेह वो मनसा बन्धुता नर उशिजो जग्मुरभि तानि वेदसा।
याभिर्मायाभिः प्रतिजूतिवर्पसः सौधन्वना यज्ञियं भागमानश॥ १॥

इहऽइह। वः। मनसा। बन्धुता। नरः। उशिजः। जग्मुः। अभि। तानि। वेदसा। याभिः। मायाभिः। प्रतिजूतिऽवर्पसः। सौधन्वनाः। यज्ञियम्। भागम्। आनश॥ १॥

पदार्थः-(**इहेह**) अस्मिन्नस्मिन् व्यवहारे (**वः**) युष्माकम् (**मनसा**) चित्तेन (**बन्धुता**) बन्धूनां भावः (**नरः**) नायकाः (**उशिजः**) कामयमानाः (**जग्मुः**) (**अभि**) (**तानि**) मित्रत्वयुक्तानि कर्माणि (**वेदसा**) वित्तेन (**याभिः**) (**मायाभिः**) प्रज्ञाभिः (**प्रतिजूतिवर्पसः**) प्रतीतं जूतिर्वेगवद्वर्पो रूपं येषान्ते (**सौधन्वनाः**) शोभनं धन्वमन्तरिक्षं यस्य तदपत्यानि तस्य पुत्राः (**यज्ञियम्**) यज्ञाऽर्हम् (**भागम्**) (**आनश**) आनशिरे व्याप्नुवन्ति। अत्र व्यत्ययेन परस्मैपदम् पुरुषव्यत्ययश्च॥१॥

अन्वयः-हे नरो! या उशिजो मनसेहेह वो या बन्धुता तया तान्यभिजग्मुर्याभिर्मायाभिः प्रतिजूतिवर्पसो वेदसा सौधन्वनाः सन्तो यज्ञियं भागमानश ते भाग्यशालिनो भवन्ति॥१॥

भावार्थः-ये मनुष्या इह जगति सर्वैस्सह भ्रातृत्वं कृत्वा बुद्ध्या धनेन च सुखं वर्द्धयन्ति तेऽलङ्कामा जायन्ते॥१॥

पदार्थः-हे (**नरः**) नायक लोगो! जो (**उशिजः**) कामना करते हुए (**मनसा**) चित्त से (**इहेह**) इस-इस व्यवहार में (**वः**) आप लोगों का जो (**बन्धुता**) बन्धुपन उससे (**तानि**) उन मित्रपने से युक्त कामों को (**अभि, जग्मुः**) प्राप्त होते हैं और (**याभिः**) जिन (**मायाभिः**) बुद्धियों से (**प्रतिजूतिवर्पसः**) प्रतीत हुआ वेगयुक्त रूप जिनका वे (**वेदसा**) धन से (**सौधन्वनाः**) उत्तम अन्तरिक्ष जिसका उसके पुत्र होते हुए (**यज्ञियम्**) यज्ञ के योग्य (**भागम्**) अंश को (**आनश**) व्याप्त होते, और [वे] भाग्यशाली होते हैं॥१॥

भावार्थः-जो मनुष्य इस संसार में सबके साथ भाईपन करके बुद्धि और धन से सुख बढ़ाते, वे पूर्ण मनोरथवाले होते हैं॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी राजशिक्षा विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

याभिः शचीभिश्चमसाँ अपिंशत यया धिया गामरिणीत चर्मणः।

येन हरी मनसा निरतक्षत तेन देवत्वमृभवः समानश॥२॥

याभिः। शचीभिः। चमसान्। अपिंशत। यया। धिया। गाम्। अरिणीत। चर्मणः। येन। हरी इति। मनसा। निःऽअतक्षत। तेन। देवऽत्वम्। ऋभवः। सम्। आनश॥२॥

पदार्थः-(**याभिः**) (**शचीभिः**) प्रज्ञाभिः कर्मभिर्वा (**चमसान्**) मेघान् (**अपिंशत**) अवयवयन्ति। अत्र **बहुलं छन्दसी**ति शब्विकरणोऽपि। (**यया**) (**धिया**) प्रज्ञया (**गाम्**) धेनुम् (**अरिणीत**) प्राप्नुवन्ति (**चर्मणः**) चर्मप्राप्तेः (**येन**) (**हरी**) धारणाकर्षणौ (**मनसा**) विज्ञानेन (**निरतक्षत**) नितरां विस्तृणन्ति (**तेन**) (**देवत्वम्**) विद्वत्वम् (**ऋभवः**) मेधाविनः (**सम्**) (**आनश**) सम्यग्व्याप्नुत॥२॥

अन्वयः-हे मनुष्या! ऋभवो याभिः शचीभिश्चमसानपिंशत यया धिया चर्मणो गामरिणीत येन मनसा हरी निरतक्षत तेन यूयं देवत्वं समानश॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्या! यथा मेधाविनोऽत्र वर्त्तेयुस्तथैव वर्त्तित्वा विद्वांसो भवत॥२॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**ऋभवः**) बुद्धिमान् लोग (**याभिः**) जिन (**शचीभिः**) बुद्धियों वा कर्मों से (**चमसान्**) मेघों को (**अपिंशत**) अवयवोंवाले करते हैं (**यया**) जिस (**धिया**) बुद्धि के साथ (**चर्मणः**) चर्म की प्राप्ति से (**गाम्**) धेनु को (**अरिणीत**) प्राप्त होते हैं (**येन**) जिस (**मनसा**) विज्ञान से (**हरी**) साथ धारण और आकर्षण का (**निरतक्षत**) निरन्तर विस्तार करते हैं (**तेन**) उससे आप लोग (**देवत्वम्**) विद्वान् पने को (**सम्, आनश**) उत्तम प्रकार व्याप्त होओ॥२॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जैसे बुद्धिमान् लोग यहाँ वर्त्ताव करें, वैसे ही वर्त्ताव करके विद्वान् होओ॥२॥

अथ सर्वाधीशस्य परमात्मनः सखित्वफलमाह॥

अब सर्वाधीश परमात्मा की मित्रता का फल अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रस्य सख्यमृभवः समानशुर्मनोर्नपातो अपसो दधन्विरे।
सौधन्वनासो अमृतत्वमेरिरे विष्ट्वी शमीभिः सुकृतः सुकृत्यया॥३॥

इन्द्रस्य। सख्यम्। ऋभवः। सम्। आनशुः। मनोः। नपातः। अपसः। दधन्विरे। सौधन्वनासः। अमृतऽत्वम्। आ। ईरिरे। विष्ट्वी। शमीभिः। सुऽकृतः। सुऽकृत्यया॥३॥

पदार्थः-(**इन्द्रस्य**) परमैश्वर्ययुक्तस्य परमात्मनः (**सख्यम्**) मित्रत्वम् (**ऋभवः**) मेधाविनः (**सम्**) (**आनशुः**) सम्यक् प्राप्नुयुः। अत्राऽपि व्यत्ययेन परस्मैपदम्। (**मनोः**) मननशीलस्य (**नपातः**) न विद्यते पातो यस्य (**अपसः**) कर्माणि (**दधन्विरे**) दधति (**सौधन्वनासः**) शोभनज्ञानस्य पुत्राः (**अमृतत्वम्**) (**आ**) (**ईरिरे**) प्राप्नुवन्ति (**विष्ट्वी**) कर्म (**शमीभिः**) कर्मभिः (**सुकृतः**) ये सुष्ठु कुर्वन्ति ते (**सुकृत्यया**) धर्मक्रियया॥३॥

अन्वयः-य ऋभव इन्द्रस्य सख्यं समानशुर्यस्य मनोर्नपातोऽस्मा अपसो दधन्विरे ते सौधन्वनासः शमीभिर्विष्ट्वी कृत्वा सुकृत्यया सुकृतः सन्तोऽमृतत्वमेरिरे॥३॥

भावार्थः-ये परमेश्वरे प्रीतिं तदाज्ञाभङ्गाद्भयं धर्म्यकर्माचरणं कुर्वन्ति त एव मोक्षमाऽऽप्नुवन्ति॥३॥

पदार्थः-जो **(ऋभवः)** बुद्धिमान् लोग **(इन्द्रस्य)** अत्यन्त ऐश्वर्य से युक्त परमात्मा की **(सख्यम्)** मित्रता को **(सम्, आनशुः)** उत्तम प्रकार प्राप्त होवें तथा जिस **(मनोः)** मनन करनेवाले का **(नपातः)** नहीं गिरना होता उसके लिये **(अपसः)** कर्मों को **(दधन्विरे)** धारण करते हैं वे **(सौधन्वनासः)** उत्तम ज्ञान से युक्त करनेवाले **(शमीभिः)** कर्मों के साथ **(विष्ट्वी)** कर्म को करके **(सुकृत्यया)** धर्म की क्रिया से **(सुकृतः)** उत्तम कर्म करनेवाले होते हुए **(अमृतत्वम्)** मोक्षपदवी को **(आ, ईरिरे)** प्राप्त होते हैं॥३॥

भावार्थः-जो लोग परमेश्वर में प्रीति और उसकी आज्ञा के भङ्ग होने से भय तथा धर्म का आचरण करते हैं, वे ही मोक्षपदवी को प्राप्त होते हैं॥३॥

पुना राज्यविषयमाह॥

फिर राज्य विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्रे॑ण याथ स॒रथं॑ सु॒ते सचाँ॒ अथो॒ वशा॑नां भवथा स॒ह श्रि॒या।

न वः॑ प्रति॒मै सु॑कृ॒तानि॑ वाघतः॒ सौध॑न्वना ऋभवो वी॒र्या॑णि च॥४॥

इन्द्रे॑ण। या॒थ। स॒ऽरथ॑म्। सु॒ते। सचा॑। अथो॒ इति॑। वशा॑नाम्। भ॒व॒थ॒। स॒ह। श्रि॒या। न। वः॒। प्र॒ति॒ऽमै। सु॒ऽकृ॒तानि॑। वा॒घ॒तः॒। सौध॑न्वनाः। ऋ॒भ॒वः॒। वी॒र्या॑णि। च॒॥४॥

पदार्थः-**(इन्द्रेण)** परमैश्वर्येण **(याथ)** गच्छथ **(सरथम्)** रथेन सह वर्त्तमानं सैन्यम् **(सुते)** निष्पन्ने राज्ये **(सचा)** विज्ञानेन **(अथो)** आनन्तर्ये **(वशानाम्)** कमनीयानाम् **(भवथ)**। अत्र **संहितायामि**ति दीर्घः। **(सह)** **(श्रिया)** **(न)** **(वः)** **(प्रतिमै)** प्रतिमातुम् **(सुकृतानि)** धर्म्याणि कर्माणि **(वाघतः)** विपश्चितः **(सौधन्वनाः)** आप्तस्य पुत्राः **(ऋभवः)** मेधाविनः **(वीर्याणि)** बलानि **(च)**॥४॥

अन्वयः-हे सौधन्वना! वाघत ऋभवो यूयं सुते सचेन्द्रेण स सरथं याथ। अथो वशानां श्रिया सह भवथ। येन वः सुकृतानि वीर्याणि च प्रतिमै न भवेयुः॥४॥

भावार्थः-ये विद्वांसो भूत्वा धर्म्येण प्रयतन्ते ते श्रीमन्तो भूत्वाऽतुलानि धनानि प्राप्य वीर्याणि वर्धयन्ति॥४॥

पदार्थः-हे **(सौधन्वनाः)** यथार्थवक्ता पुरुष के पुत्रो! **(वाघतः)** विद्वान् **(ऋभवः)** बुद्धिमान् आप लोग **(सुते)** उत्पन्न हुए राज्य में **(सचा)** विज्ञान और **(इन्द्रेण)** अत्यन्त ऐश्वर्य्य से **(सरथम्)** रथ के साथ

वर्त्तमान सेना को **(याथ)** प्राप्त हूजिये, **(अथो)** इसके अनन्तर **(वशानाम्)** कामना करने योग्यों की **(श्रिया)** लक्ष्मी के **(सह)** साथ **(भवथ)** हूजिये जिससे **(वः)** आप लोगों के **(सुकृतानि)** धर्मयुक्त कर्म्म **(वीर्याणि, च)** और पराक्रम **(प्रतिमै)** समान **(न)** नहीं होवें॥४॥

भावार्थः-जो विद्वान् होकर धर्मयुक्त आचरण से प्रयत्न करते हैं, वे लक्ष्मीवान् और अतुल धनों को प्राप्त होकर पराक्रमों को बढ़ाते हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्र ऋभुभिर्वाजवद्भिः समुक्षितं सुतं सोमुमा वृषस्वा गभस्त्योः।

धियेषितो मघवन् दाशुषो गृहे सौधन्वनेभिः सह मत्स्वा नृभिः॥५॥

इन्द्र। ऋभुऽभिः। वाजवत्ऽभिः। सम्ऽउक्षितम्। सुतम्। सोमम्। आ। वृषस्व। गभस्त्योः। धिया। इषितः। मघऽवन्। दाशुषः। गृहे। सौधन्वनेभिः। सह। मत्स्व। नृऽभिः॥५॥

पदार्थः-**(इन्द्र)** परमैश्वर्यवन् राजन्! **(ऋभुभिः)** मेधाविभिः **(वाजवद्भिः)** प्रशस्तान्नाद्यैश्वर्य-युक्तैः सह **(समुक्षितम्)** सम्यक्सिक्तम् **(सुतम्)** निष्पादितम् **(सोमम्)** ऐश्वर्यम् **(आ)** **(वृषस्व)** बलिष्ठो भव। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(गभस्त्योः)** हस्तयोः **(धिया)** प्रज्ञया **(इषितः)** प्रेरितः **(मघवन्)** प्रशंसितधनयुक्त **(दाशुषः)** दातुः। **(गृहे)** **(सौधन्वनेभिः)** मेधाविपुत्रैः **(सह)** **(मत्स्व)** आनन्द। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। **(नृभिः)** विद्यादिव्यवहारेषु नायकैः॥५॥

अन्वयः-हे मघवन्निन्द्र! धियेषितस्त्वं वाजवद्भिर्ऋभुभिस्सह समुक्षितं सुतं सोमं गभस्त्योर्बलेना वृषस्व। सौधन्वनेभिर्नृभिस्सह दाशुषो गृहे मत्स्व॥५॥

भावार्थः-राजा प्राज्ञैर्जनैस्सहितेन प्रजाः संरक्ष्य न्यायेनैश्वर्यमुन्नीय राजकरदातॄनानन्द्य नायकैः सह प्रजाः सदैव रञ्जनीयाः॥५॥

पदार्थः-हे **(मघवन्)** प्रशंसितधनयुक्त **(इन्द्र)** अत्यन्त ऐश्वर्यवाले **(धिया)** बुद्धि से **(इषितः)** प्रेरित आप **(वाजवद्भिः)** प्रशंसनीय अन्न आदि ऐश्वर्यों से युक्त **(ऋभुभिः)** बुद्धिमानों के साथ **(समुक्षितम्)** उत्तम प्रकार सींचे **(सुतम्)** उत्पन्न किये गये **(सोमम्)** ऐश्वर्य को **(गभस्त्योः)** हाथों के बल से **(आ, वृषस्व)** सब प्रकार पुष्टि कीजिये, **(सौधन्वनेभिः)** बुद्धिमानों के पुत्रों और **(नृभिः)** विद्या आदि व्यवहारों में अग्रगन्ता जनों के **(सह)** साथ **(दाशुषः)** देनेवाले के **(गृह)** घर में **(मत्स्व)** आनन्दित हूजिये॥५॥

भावार्थः-राजा को चाहिये कि बुद्धिमान् जनों के सहित प्रजाओं की रक्षा और न्याय से ऐश्वर्य की वृद्धि करके तथा राज्य के कर देनेवालों को आनन्दित करके नायकों के साथ प्रजाओं को सदैव

आनन्दित करें॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्र ऋभुमान् वाजवान् मत्स्वेह नोऽस्मिन्त्सवने शच्या पुरुष्टुत।
इमानि तुभ्यं स्वसराणि येमिरे व्रता देवानां मनुषश्च धर्मभिः॥६॥

इन्द्र। ऋभुऽमान्। वाजऽवान्। मत्स्व। इह। नः। अस्मिन्। सवने। शच्या। पुरुऽस्तुत। इमानि। तुभ्यम्। स्वसराणि। येमिरे। व्रता। देवानाम्। मनुषः। च। धर्मऽभिः॥६॥

पदार्थः-(**इन्द्र**) परमैश्वर्यवन् राजन् (**ऋभुमान्**) बहव ऋभवो मेधाविनो विद्यन्ते यस्य सः (**वाजवान्**) बहवो वाजा अन्नाद्यैश्वर्ययोगा विद्यन्ते यस्य सः (**मत्स्व**) आनन्द (**इह**) अस्मिन् राज्ये (**नः**) अस्माकम् (**अस्मिन्**) (**सवने**) ऐश्वर्ययुक्ते राज्ये (**शच्या**) प्रज्ञया वाण्या वा (**पुरुष्टुत**) बहुभिः प्रशंसित (**इमानि**) वर्त्तमानानि (**तुभ्यम्**) (**स्वसराणि**) दिनानि (**येमिरे**) यच्छन्तु (**व्रता**) सुशीलानि कर्माणि (**देवानाम्**) विदुषाम् (**मनुषः**) मनुष्यान् (**च**) (**धर्मभिः**) धर्मैः॥६॥

अन्वयः-हे शच्या पुरुष्टुतेन्द्र! त्वमिह ऋभुमान् वाजवान् सन्नोऽस्मिन् सवने मत्स्व यस्मै तुभ्यमिमानि स्वसराणि येमिरे स त्वं देवानां धर्मभिस्सहितानि व्रता गृहीत्वा मनुषश्चानन्दय॥६॥

भावार्थः-हे राजंस्त्वं सदा धर्मात्मप्राज्ञसङ्गी मूर्खासङ्गी भूत्वैकं क्षणमपि व्यर्थं मा नय। यथाप्ताः पक्षपातं विहाय सर्वैस्सह निष्कपटत्वेन वर्त्तन्ते तथैव वर्त्तस्व॥६॥

पदार्थः-हे (**शच्या**) बुद्धि वा वाणी से (**पुरुष्टुत**) बहुतों से प्रशंसा किये गये (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्यवान् राजन्! आप (**इह**) इस राज्य में (**ऋभुमान्**) बहुत बुद्धिमान् और (**वाजवान्**) बहुत अन्न आदि ऐश्वर्ययुक्त होते हुए (**नः**) हम लोगों के (**अस्मिन्**) इस (**सुवने**) ऐश्वर्ययुक्त राज्य में (**मत्स्व**) आनन्दित होओ जिन (**तुभ्यम्**) आपके लिये (**इमानि**) यह वर्त्तमान (**स्वसराणि**) दिन (**येमिरे**) नियत होते हैं, वह आप (**देवानाम्**) विद्वानों के (**धर्मभिः**) धर्मों के सहित (**व्रता**) सुशील कर्मों को ग्रहण करके (**मनुषः**) मनुष्यों को (**च**) भी आनन्दित करो॥६॥

भावार्थः-हे राजन्! आप सदा धर्मात्मा और बुद्धिमानों के सङ्गी और मूर्खों के सङ्ग के त्यागी होकर एक क्षण भी व्यर्थ न व्यतीत करो और जैसे यथार्थवक्ता पुरुष पक्षपात का त्याग करके सबके साथ कपटरहित वर्त्ताव करते हैं, वैसा ही वर्त्ताव करो॥६॥

अथ राजप्रसंगेनामात्यप्रजाकर्माण्याह॥

अब राजप्रसङ्ग से अमात्य और प्रजाकृत्य को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

इन्द्र॑ ऋ॒भुभि॑र्वा॒जिभि॑र्वा॒जय॑न्नि॒ह स्तोमं॑ जरि॒तुरुप॑ याहि य॒ज्ञिय॑म्।
श॒तं केते॑भिरिषि॒रेभि॑रा॒यवे॑ स॒हस्र॑णीथो अध्व॒रस्य॒ होम॑नि॥७॥७॥

इन्द्र॑। ऋ॒भुऽभिः॑। वा॒जिऽभिः॑। वा॒जय॑न्। इ॒ह। स्तोम॑म्। ज॒रि॒तुः। उप॑। या॒हि॒। य॒ज्ञिय॑म्। श॒तम्। केते॑भिः। इ॒षि॒रेभिः॑। आ॒यवे॑। स॒हस्र॑ऽनीथः। अ॒ध्व॒रस्य॑। होम॑नि॥७॥

पदार्थः-(**इन्द्र**) परमैश्वर्यप्रद नरेश (**ऋभुभिः**) प्राज्ञैः (**वाजिभिः**) वेगादिगुणयुक्तैः (**वाजयन्**) प्रापयन् (**इह**) अस्मिन् संसारे (**स्तोमम्**) स्तुतिम् (**जरितुः**) स्तावकस्य विदुषः (**उप**) (**याहि**) उपाऽऽगच्छ (**यज्ञियम्**) राज्यव्यवहारनिष्पादकम् (**शतम्**) असंख्यम् (**केतेभिः**) प्रज्ञाभिः (**इषिरेभिः**) इष्टैः (**आयवे**) मनुष्याय (**सहस्रणीथः**) सहस्रैरसंख्यैधार्मिकैर्नीथः प्राप्तः (**अध्वरस्य**) न्यायव्यवहारस्य (**होमनि**) आदातव्ये व्यवहारे॥७॥

अन्वयः-हे इन्द्र! त्वमिह वाजिभिर्ऋभुभिस्सह वाजयन्सन् जरितुः स्तोममुपयाह्यायव इषिरेभिः केतेभिः सहस्रणीथः सन्नध्वरस्य होमनि शतं यज्ञियमुपयाहि॥७॥

भावार्थः-हे राजँस्त्वमत्र राष्ट्रे मनुष्याणां हितायाऽसंख्यानि शुभानि कर्माणि कृत्वा धार्मिकैरमात्यैरध्यापकोपदेशकैः सहाऽऽप्तैः कृतां प्रशंसां प्राप्य परजन्मन्यपि मोक्षं प्राप्नुहीति॥७॥

अत्र राजामात्यप्रजाकृत्यवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इति षष्टितमं सूक्तं सप्तमो वर्गश्च समाप्तः

पदार्थः-हे (**इन्द्र**) अत्यन्त ऐश्वर्य के देनेवाले मनुष्यों के स्वामिन्! आप (**इह**) इस संसार में (**वाजिभिः**) वेग आदि गुणों से युक्त (**ऋभुभिः**) बुद्धिमानों के साथ (**वाजयन्**) प्राप्त कराये हुए (**जरितुः**) स्तुति करनेवाले विद्वान् की (**स्तोमम्**) स्तुति को (**उप, याहि**) प्राप्त हूजिये। और (**आयवे**) मनुष्य के लिये (**इषिरेभिः**) इष्ट (**केतेभिः**) बुद्धियों से (**सहस्रणीथः**) असंख्य धार्मिकों से प्राप्त होते हुए (**अध्वरस्य**) न्यायव्यवहार के (**होमनि**) ग्रहण करने योग्य व्यवहार में (**शतम्**) असंख्य (**यज्ञियम्**) राज्यव्यवहार के उत्पन्न करनेवाले के समीप प्राप्त हूजिये॥७॥

भावार्थः-हे राजन्! आप इस राज्य में मनुष्यों के हित के लिये असंख्य उत्तम कर्मों को करके धार्मिक मन्त्री जन और उपदेशकों के साथ यथार्थवक्ता पुरुषों से की हुई प्रशंसा को प्राप्त होकर अगले जन्म में भी मोक्ष को प्राप्त हूजिये॥७॥

इस सूक्त में राजा, मन्त्री और प्रजा के कृत्य वर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्तार्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह साठवां सूक्त और सातवां वर्ग समाप्त हुआ॥

अथ सप्तर्चस्यैकाधिकषष्टितमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। उषा देवता। १, ५, ७ त्रिष्टुप्। २ विराट् त्रिष्टुप्। ६ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ३, ४ भुरिक् पङ्क्तिश्छन्दः। पञ्चमः स्वरः॥

अथ प्रातर्वेलोपमया स्त्रीगुणानाह॥

अब सात ऋचावाले एकसठवें सूक्त का आरम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में प्रातःकाल की वेला की उपमा से स्त्री के गुणों को कहते हैं॥

उषो वाजेन वाजिनि प्रचेताः स्तोमं जुषस्व गृणतो मघोनि।
पुराणी देवि युवतिः पुरंधिरनु व्रतं चरसि विश्ववारे॥ १॥

उषः। वाजेन। वाजिनि। प्रऽचेताः। स्तोमम्। जुषस्व। गृणतः। मघोनि। पुराणी। देवि। युवतिः। पुरम्ऽधिः। अनु। व्रतम्। चरसि। विश्वऽवारे॥ १॥

पदार्थः-(**उष**) उषर्वद्वर्त्तमाने (**वाजेन**) विज्ञानेन (**वाजिनि**) विज्ञानवती (**प्रचेताः**) प्रकृष्टतया सदर्थज्ञापिका (**स्तोमम्**) श्लाघाम् (**जुषस्व**) (**गृणतः**) स्तोतुः (**मघोनि**) परमधनयुक्ते (**पुराणी**) पुरा नवीना (**देवि**) कमनीये (**युवतिः**) पूर्णचतुर्विंशतिवर्षा (**पुरन्धिः**) या बहूञ्छुभगुणान् धरति (**अनु**) आनुकूल्ये (**व्रतम्**) कर्म (**चरसि**) (**विश्ववारे**) सर्वतो वरणीये॥ १॥

अन्वयः-हे वाजिनि मघोनि देवि विश्ववारे स्त्रि! त्वमुष इव वाजेन प्रचेताः सती गृणतो मम स्तोमं जुषस्व यतः पुराणी पुरन्धिर्युवतिस्सती व्रतमनु चरसि तस्माद्धृद्यासि॥ १॥

भावार्थः-हे स्त्रियो! यथोषसः सर्वान् प्राणिनः प्रबोध्य कार्य्येषु प्रवर्त्तयन्ति तथैव पतिव्रता भूत्वा पतिभिस्सहाऽऽनुकूल्येन वर्त्तित्वा प्रशंसिता भवत॥ १॥

पदार्थः-हे (**वाजिनि**) विज्ञानवाली (**मघोनि**) अत्यन्त धन से युक्त (**देवि**) सुन्दर (**विश्ववारे**) सब प्रकार वरने योग्य स्त्री! तुम (**उषः**) प्रातर्वेला के सदृश वर्त्तमान (**वाजेन**) विज्ञान के साथ (**प्रचेताः**) उत्तमता से सत्य अर्थ की जनानेवाली होती हुई (**गृणतः**) मुझ स्तुति करनेवाले की (**स्तोमम्**) प्रशंसा का (**जुषस्व**) सेवन करो, जिससे कि (**पुराणी**) प्रथम नवीन (**पुरन्धिः**) बहुत उत्तम गुणों को धारण करनेवाली (**युवतिः**) पूर्ण चौबीस वर्षवाली हुई (**व्रतम्**) कर्म को (**अनु**) अनुकूलता में (**चरसि**) करती हो, इससे हृदयप्रिय हो॥ १॥

भावार्थः-हे स्त्रियो! जैसे प्रातर्वेला सम्पूर्ण प्राणियों को जगाय कार्य्यों में प्रवृत्त करती है, वैसे ही पतिव्रता होकर पतियों के साथ अनुकूलता से वर्त्ति **[कर]** प्रशंसित होओ॥ १॥

पुनस्तमेव विषयं प्रकारान्तरेणाह॥

फिर उसी विषय को प्रकारान्तर से अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उषो देव्यमर्त्या वि भाहि चन्द्ररथा सूनृता ईरयन्ती।

आ त्वा वहन्तु सुयमासो अश्वा हिरण्यवर्णां पृथुपाजसो ये॥ २॥

उषः। देवि। अमर्त्या। वि। भाहि। चन्द्रऽरथा। सूनृताः। ईरयन्ती। आ। त्वा। वहन्तु। सुऽयमासः। अश्वाः। हिरण्यऽवर्णाम्। पृथुऽपाजसः। ये॥ २॥

पदार्थः-(**उषः**) उषर्वद्वर्त्तमाने (**देवि**) सुशोभिते (**अमर्त्या**) मरणधर्मरहिता (**वि**) (**भाहि**) (**चन्द्ररथा**) चन्द्र इव रथो यस्याः (**सूनृता**) सुष्ठु सत्याः क्रियाः (**ईरयन्ती**) प्रेरयन्ती (**आ**) (**त्वा**) त्वाम् (**वहन्तु**) (**सुयमासः**) सुष्ठुनियामकाः (**अश्वाः**) व्याप्ताः किरणाः (**हिरण्यवर्णाम्**) तेजोमयीम् (**पृथुपाजसः**) बहुबलाः (**ये**)॥ २॥

अन्वयः-हे देव्युषर्वत्सूनृताः प्रेरयन्ती चन्द्ररथा अमर्त्या सती विभाहि। ये पृथुपाजसः सुयमासो हिरण्यवर्णामश्वा इव त्वाऽऽवहन्तु तान् सुखेन त्वं विभाहि॥ २॥

भावार्थः-यथा चन्द्रयानोषास्तेजोमयी भूत्वा सर्वाञ्जागरयति तथैवोत्तमा विदुष्यस्स्त्रियः स्वकीयं पतिं सेवाविनयाभ्यां सुशीलं सम्पादयन्ति॥ २॥

पदार्थः-हे (**देवि**) उत्तम प्रकार शोभित! (**उषः**) प्रातर्वेला के सदृश वर्त्तमान (**सूनृताः**) उत्तम प्रकार सत्य क्रियाओं की (**ईरयन्ती**) प्रेरणा करती हुई (**चन्द्ररथा**) चन्द्रमा के सदृश रथ जिसका ऐसी (**अमर्त्या**) मरण धर्म से रहित हुई (**वि भाहि**) शोभित होओ और (**ये**) जो (**पृथुपाजसः**) बहुत बलयुक्त (**सुयमासः**) उत्तम प्रकार नियम करनेवाले (**हिरण्यवर्णाम्**) तेजोमयी कान्ति को (**अश्वाः**) व्याप्त किरणों के सदृश (**त्वा**) आपको (**आ, वहन्तु**) प्राप्त हों, उनको सुखपूर्वक आप शोभित करिये॥ २॥

भावार्थः-जैसे चन्द्रमारूप रथवाली प्रातःकाल की वेला तेजस्वरूप होकर सबको जगाती है, वैसे ही उत्तम पण्डिता स्त्रियाँ अपने-अपने पति को सेवा और विनय से सुशील करती हैं॥ २॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उषः प्रतीची भुवनानि विश्वोर्ध्वा तिष्ठस्यमृतस्य केतुः।
समानमर्थं चरणीयमाना चक्रमिव नव्यस्या ववृत्स्व॥ ३॥

उषः। प्रतीची। भुवनानि। विश्वा। ऊर्ध्वा। तिष्ठसि। अमृतस्य। केतुः। समानम्। अर्थम्। चरणीयमाना। चक्रम्ऽइव। नव्यसि। आ। ववृत्स्व॥ ३॥

पदार्थः-(**उषः**) उषाः (**प्रतीची**) प्रत्यञ्चति प्राप्नोति सा (**भुवनानि**) लोकजातानि (**विश्वा**) सर्वाणि (**ऊर्ध्वा**) ऊर्ध्वं स्थिता (**तिष्ठसि**) तिष्ठति। अत्र पुरुषव्यत्ययः। (**अमृतस्य**) अमृतात्मकस्य रसस्य (**केतुः**) प्रज्ञापिका (**समानम्**) (**अर्थम्**) वस्तु (**चरणीयमाना**) प्राप्नुवती (**चक्रमिव**) यथा चक्रं गच्छति तथा (**नव्यसि**) अतिशयेन नवीना (**आ**) (**ववृत्स्व**) आवर्त्तस्व॥ ३॥

अन्वयः-हे स्त्रि! यथा विश्वा भुवनानि प्रतीच्यमृतस्य केतुरूर्ध्वा चक्रमिव समानमर्थं चरणीयमाना नव्यस्युष आ वर्त्तते तिष्ठसि तथैव त्वमाववृत्स्व॥३॥

भावार्थः-हे सत्स्त्रियो यथोषसः सर्वाणि भुवनानि प्रकाशयन्ति तथैव सद्व्यवहारान् प्रकाशयत॥३॥

पदार्थः-हे स्त्रि! जैसे **(विश्वा)** सम्पूर्ण **(भुवनानि)** उत्पन्न हुए लोकों को **(प्रतीची)** प्राप्त होने और **(अमृतस्य)** अमृतस्वरूप रस की **(केतुः)** जनानेवाली **(ऊर्ध्वा)** ऊपर को वर्तमान **(चक्रमिव)** पहिये के सदृश चलनेवाले **(समानम्)** तुल्य **(अर्थम्)** वस्तु को **(चरणीयमाना)** प्राप्त होती हुई **(नव्यसि)** अत्यन्त नवीन **(उषः)** प्रातःकाल की वेला वर्त्तमान और **(तिष्ठसि)** स्थिर होती है, वैसे ही आप **(आ, ववृत्स्व)** वर्त्ताव करिये॥३॥

भावार्थः-हे उत्तम स्त्रियो! जैसे प्रातःकाल सम्पूर्ण भुवनों के खण्डों को प्रकाशित करते हैं, वैसे ही उत्तम व्यवहारों को प्रकाशित करो॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अव स्यूमेव चिन्वती मघोन्युषा याति स्वसरस्य पत्नी।

स्व१र्जनन्ती सुभगा सुदंसा आन्ताद्दिवः पप्रथ आ पृथिव्याः॥४॥

अव। स्यूमऽइव। चिन्वती। मघोनी। उषाः। याति। स्वसरस्य। पत्नी। स्वः। जनन्ती। सुऽभगा। सुऽदंसाः। आ। अन्तात्। दिवः। पप्रथे। आ। पृथिव्याः॥४॥

पदार्थः-**(अव)** **(स्यूमेव)** तन्तुवद्व्याप्ता **(चिन्वती)** चयनं कुर्वती **(मघोनी)** परमधनयुक्ता **(उषाः)** प्रभातवेला **(याति)** गच्छति **(स्वसरस्य)** दिनस्य **(पत्नी)** पत्नीवद्वर्त्तमाना **(स्वः)** सूर्य्यं सुखं वा **(जनन्ती)** जनयन्ती **(सुभगा)** सौभाग्यकारिणी **(सुदंसाः)** शोभनानि दंसांसि यस्यां सा **(आ)** **(अन्तात्)** समीपात् **(दिवः)** प्रकाशमानात् सूर्य्यात् **(पप्रथे)** प्रथते **(आ)** **(पृथिव्याः)**॥४॥

अन्वयः-हे स्त्रियो! या स्यूमेव चिन्वती मघोनी स्वसरस्य पत्नीव स्वर्जनन्ती सुभगा सुदंसा उषा आ अन्ताद्दिव आ अन्तात्पृथिव्या पप्रथेऽव याति प्राप्नोति तथैव यूयं वर्त्तध्वम्॥४॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। हे स्त्रियो! यथा दिनस्य सम्बन्धिन्युषा अस्ति तथैव छायावत्स्वस्वपत्या सहाऽनुकूलाः सत्यो वर्त्तन्ताम्। यथायं प्रकाशः पृथिव्या योगेन जायते तथा पतिपत्निसम्बन्धादपत्यानि जायन्ते॥४॥

पदार्थः-हे स्त्रियो! जो **(स्यूमेव)** डोरों के सदृश व्याप्त **(चिन्वती)** बटोरती हुई **(मघोनी)**

अत्यन्त धन से युक्त **(स्वसरस्य)** दिन की **(पत्नी)** स्त्री के सदृश वर्त्तमान **(स्वः)** सूर्य्य वा सुख को **(जनन्ती)** उत्पन्न करती हुई **(सुभगा)** सौभाग्य की करनेवाली **(सुदंसाः)** उत्तम कर्म जिस में विद्यमान ऐसी **(उषाः)** प्रातःकाल की वेला **(आ, अन्तात्)** सब प्रकार समीप से **(दिवः)** प्रकाशमान सूर्य्य और **(आ)** सब प्रकार समीप **(पृथिव्याः)** पृथिवी के योग से **(पप्रथे)** प्रख्यात होती है **(अव, याति)** और प्राप्त होती है, वैसे ही आप लोग भी वर्त्ताव करो॥४॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। हे स्त्रियो! जैसे दिन का सम्बन्धी प्रातःकाल है, वैसे ही छाया के सदृश अपने-अपने पति के साथ अनुकूल होकर वर्त्ताव करो और जैसे यह प्रकाश पृथिवी के योग से होता है, वैसे पति और पत्नी के सम्बन्ध से सन्तान होते हैं॥४॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अच्छा॑ वो दे॒वीमु॒षसं॑ विभा॒तीं प्र वो॑ भरध्वं॒ नम॑सा सुवृ॒क्तिम्।
ऊ॒र्ध्वं म॑धु॒धा दि॒वि पाजो॑ अश्रे॒त् प्र रो॑च॒ना रु॑रुचे र॒ण्वसं॑दृक्॥५॥

अच्छ॑। व॒ः। दे॒वीम्। उ॒षस॑म्। वि॒ऽभा॒तीम्। प्र। व॒ः। भ॒र॒ध्व॒म्। नम॑सा। सु॒ऽवृ॒क्तिम्। ऊ॒र्ध्वम्। म॒धु॒धा। दि॒वि। पाज॑ः। अ॒श्रे॒त्। प्र। रो॒च॒ना। रु॒रु॒चे। र॒ण्वऽसं॑दृक्॥५॥

पदार्थः-**(अच्छ)**। अत्र **संहितायामिति** दीर्घः। **(वः)** युष्मान् **(देवीम्)** देदीप्यमानाम् **(उषसम्)** प्रातर्वेलाम् **(विभातीम्)** विविधान् पदार्थान् प्रकाशयन्तीम् **(प्र)** **(वः)** युष्माकम् **(भरध्वम्)** **(नमसा)** वज्रेण विद्युता सह **(सुवृक्तिम्)** सुष्ठु वर्त्तमानाम् **(ऊर्ध्वम्)** उत्कृष्टम् **(मधुधा)** या मधूनि दधाति **(दिवि)** प्रकाशे **(पाजः)** बलम् **(अश्रेत्)** श्रयति **(प्र)** **(रोचना)** रुचिकरी **(रुरुचे)** रोचते **(रण्वसंदृक्)** या रण्वान् रमणीयान् पदार्थान् सन्दर्शयति सा॥५॥

अन्वयः-हे मनुष्या! या रण्वसन्दृग्रोचना मधुधा दिवि वो युष्मान् प्र रुरुचे। यया वो युष्माकमूर्ध्वं पाजोऽश्रेत् तां देवीं युष्मान् विभातीं सुवृक्तिमुषसं नमसा यूयमच्छ प्र भरध्वम्॥५॥

भावार्थः-यथा प्रातर्वेलां सेवमाना जना उत्कृष्टं बलं प्राप्नुवन्ति तथैव हृद्यां पतिव्रतां भार्यां प्राप्य पुरुषः शरीरात्मबलाऽऽरोग्यानि प्राप्नोति यतो द्वयोः सदृशयोः सत्योर्रुचिर्वर्धेत॥५॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो **(रण्वसन्दृक्)** सुन्दर पदार्थों के दिखाने **(रोचना)** रुचि करने और **(मधुधा)** मधुर पदार्थों को धारण करनेवाली **(दिवि)** प्रकाश में **(वः)** आप लोगों को **(प्र, रुरुचे)** अच्छी लगती है। और जिससे **(वः)** आप लोगों के **(ऊर्ध्वम्)** उत्तम **(पाजः)** बल का **(अश्रेत्)** श्रयण करती है उस **(देवीम्)** प्रकाशमान और आप लोगों और **(विभातीम्)** अनेक पदार्थों को प्रकाशित करती हुई **(सुवृक्तिम्)** उत्तम प्रकार वर्त्तमान **(उषसम्)** प्रभात वेला को **(नमसा)** वज्र अर्थात् बिजुली के साथ आप लोग **(अच्छ)** उत्तम प्रकार **(प्र, भरध्वम्)** पुष्ट कीजिये॥५॥

भावार्थः-जैसे प्रातःकाल को सेवन करते हुए लोग उत्तम बल को प्राप्त होते हैं, वैसे ही स्नेहपात्र पतिव्रता स्त्री को प्राप्त होकर पुरुष शरीर, आत्मबल और आरोग्यपन को प्राप्त होते हैं, जिससे दोनों के सदृश होने पर प्रेम बढ़े॥५॥

अथ प्रातर्वेलाया एव गुणानाह।

अब प्रातर्वेला ही के गुणों को कहते हैं॥

ऋतावरी दिवो अर्कैरबोध्या रेवती रोदसी चित्रमस्थात्।
आयतीमग्न उषसं विभातीं वाममेषि द्रविणं भिक्षमाणः॥६॥

ऋतऽवरी। दिवः। अर्कैः। अबोधि। आ। रेवती। रोदसी इति। चित्रम्। अस्थात्। आऽयतीम्। अग्ने। उषसम्। विऽभातीम्। वामम्। एषि। द्रविणम्। भिक्षमाणः॥६॥

पदार्थः-(**ऋतावरी**) ऋतं सत्यं विद्यते यस्यां सा (**दिवः**) प्रकाशात् (**अर्कैः**) सूर्यैः (**अबोधि**) बुध्यते (**आ**) (**रेवती**) प्रशस्तधनकारिणी (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**चित्रम्**) अद्भुतम् (**अस्थात्**) तिष्ठति (**आयतीम्**) आगच्छन्तीम् (**अग्ने**) विद्वन् (**उषसम्**) (**विभातीम्**) प्रकाशयन्तीम् (**वामम्**) प्रशस्तम् (**एषि**) प्राप्नोति (**द्रविणम्**) धनम् (**भिक्षमाणः**) याचमानः॥६॥

अन्वयः-हे अग्ने विद्वन्! या रेवती ऋतावरी दिवो जातोषा अर्कैरबोधि रोदसी आस्थात् तामायतीं विभातीमुषसं प्राप्य समाधिना जगदीश्वरं भिक्षमाणस्त्वं चित्रं वामं द्रविणमेषि॥४॥

भावार्थः-ये जना! रात्रेश्चतुर्थे यामे प्रबुध्येश्वरस्य स्तुतिप्रार्थनोपासनाः कृत्वा शुभान् गुणानैश्वर्य्यं च याचन्ते ते पुरुषार्थेनाऽवश्यमेतत्प्राप्नुवन्ति॥६॥

पदार्थः-हे (**अग्ने**) विद्वान् जन! जो (**रेवती**) उत्तम धन करनेवाली (**ऋतावरी**) जिसमें सत्य विद्यमान ऐसी (**दिवः**) प्रकाश से उत्पन्न हुई वेला (**अर्कैः**) सूर्य्यों से (**अबोधि**) जानी जाती है, (**रोदसी**) अन्तरिक्ष और पृथिवी को (**आ, अस्थात्**) अच्छे प्रकार स्थित करती है, उस (**आयतीम्**) आती और (**विभातीम्**) प्रकाशित करती हुई (**उषसम्**) प्रभात वेला को प्राप्त होकर समाधि से जगदीश्वर की (**भिक्षमाणः**) याचना करते हुए आप (**चित्रम्**) अद्भुत (**वामम्**) उत्तम प्रशंसा योग्य (**द्रविणम्**) धन को (**एषि**) प्राप्त होते हो॥६॥

भावार्थः-जो लोग रात्रि के चौथे प्रहर में जाग के ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करके उत्तम गुणों और ऐश्वर्य्य को मांगते हैं, वे पुरुषार्थ से अवश्य इसको प्राप्त होते हैं॥६॥

अथ विद्वच्छिल्पिगुणानाह॥

अब बिजुली और शिल्पियों के गुणों को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

ऋतस्य॑ बुध्न उ॒षसा॑मिष॒ण्यन् वृषा॑ म॒ही रोद॑सी॒ आ वि॑वेश।
म॒ही मि॒त्रस्य॒ वरु॑णस्य मा॒या च॒न्द्रेव॑ भा॒नुं वि द॑धे पु॒रु॒त्रा॥७॥८॥

ऋतस्य॑। बु॒ध्ने। उ॒षसा॑म्। इ॒ष॒ण्यन्। वृषा॑। म॒ही इति॑। रोद॑सी॒ इति॑। आ। वि॒वे॒श॒। म॒ही। मि॒त्रस्य॑। वरु॑णस्य। मा॒या। च॒न्द्राऽइ॑व। भा॒नुम्। वि। द॒धे॒। पु॒रु॒ऽत्रा॥७॥

पदार्थः-(**ऋतस्य**) सत्यस्य (**बुध्ने**) अन्तरिक्षे (**उषसाम्**) प्रभातवेलानाम् (**इषण्यन्**) आत्मन इषणं प्रेरणमिच्छन्निव (**वृषा**) वृष्टिहेतुः (**मही**) महत्यौ (**रोदसी**) द्यावापृथिव्यौ (**आ**) (**विवेश**) आविशति (**मही**) महती पूज्या (**मित्रस्य**) सुहृदः (**वरुणस्य**) श्रेष्ठस्य (**माया**) प्रज्ञा (**चन्द्रेव**) सुवर्णानीव। **चन्द्रमिति हिरण्यनामसु पठितम्।** (निघं०१.२) (**भानुम्**) सूर्य्यम् (**विदधे**) विदधाति (**पुरुत्रा**) पुरुरूपम्॥७॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो विद्युद्रूपोऽग्निः बुध्न उषसामृतस्येषण्यन्निव वृषा मही रोदसी आ विवेश मित्रस्य वरुणस्य मही माया चन्द्रेव पुरुत्रा भानुं विदधे अतस्तं विज्ञाय कार्य्याणि साध्नुत॥७॥

भावार्थः-यथा विदुषां वाणी प्रज्ञा चैश्वर्य्यप्रदा भूत्वा विद्यासु प्रविश्य सुखानि प्रयच्छति तथैव सर्वत्र प्रविष्टा विद्युद् विज्ञाता कार्य्येषु प्रयुक्ता सत्यैश्वर्य्यं जनयतीति॥७॥

अत्रोषःस्त्रीविद्युच्छिल्पिगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिर्वेद्या॥

इत्येकाधिकषष्टितमं सूक्तमष्टमो वर्गश्च समाप्तः॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जो बिजुलीरूप अग्नि (**बुध्ने**) अन्तरिक्ष में (**उषसाम्**) प्रातःकालों और (**ऋतस्य**) सत्य के सम्बन्ध में (**इषण्यन्**) अपनी प्रेरणा की इच्छा करता हुआ सा (**वृषा**) वृष्टि का हेतु (**मही**) बड़ी (**रोदसी**) अन्तरिक्ष और पृथिवी को (**आ, विवेश**) प्रविष्ट होता है और (**मित्रस्य**) मित्र (**वरुणस्य**) श्रेष्ठ पुरुष की (**मही**) बड़ी पूज्य (**माया**) बुद्धि (**चन्द्रेव**) सुवर्णों के सदृश (**पुरुत्रा**) बहुत रूपयुक्त (**भानुम्**) सूर्य्य को (**विदधे**) धारण करता है, इससे उस को जान के कार्यों को सिद्ध करो॥७॥

भावार्थः-जैसे विद्वानों की वाणी और बुद्धि ऐश्वर्य्य को देनेवाली हो और विद्याओं में प्रवेश करके सुखों को देती है, वैसे ही सर्वत्र प्रविष्ट हुई बिजुली जानी हुई कार्यों में प्रयुक्त होकर ऐश्वर्य्य को उत्पन्न करती है॥७॥

इस सूक्त में प्रातःकाल, स्त्री, बिजुली और शिल्पीजनों के गुणों का वर्णन करने से इसके अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति जाननी चाहिये॥

यह इकसठवां सूक्त और अष्टम वर्ग समाप्त हुआ॥

अथाष्टादशर्चस्य द्विषष्टितमस्य सूक्तस्य विश्वामित्र ऋषिः। १६-१८ विश्वामित्रो जमदग्निर्वा। १-३ इन्द्रावरुणौ। ४-६ बृहस्पतिः। ७-९ पूषा। १०-१२ सविता। १३-१५ सोमः। १६-१८ मित्रावरुणौ देवताः। १ विराट्त्रिष्टुप्। २ त्रिष्टुप्। ३ निचृत्त्रिष्टुप् छन्दः। धैवतः स्वरः। ४, ५, १०, ११, १६ निचृद्गायत्री। ६ त्रिपाद्गायत्री। ७-९, १२-१५, १७, १८ गायत्री छन्दः। षड्जः स्वरः॥

अथ मित्राध्यापकोपदेशकविषयमाह॥

अब अठारह ऋचावाले बासठवें सूक्त का प्रारम्भ है। उसके प्रथम मन्त्र में मित्र, अध्यापक और उपदेशकों के विषय को कहते हैं॥

इमा उ वां भृमयो मन्यमाना युवावते न तुज्या अभूवन्।
क्व१त्यदिन्द्रावरुणा यशो वां येन स्मा सिनं भरथः सखिभ्यः॥ १॥

इमाः। ऊम् इति। वाम्। भृमयः। मन्यमानाः। युवाऽवते। न। तुज्याः। अभूवन्। क्व। त्यत्। इन्द्रावरुणा। यशः। वाम्। येन। स्म। सिनम्। भरथः। सखिऽभ्यः॥ १॥

पदार्थः-(**इमाः**) (**उ**) (**वाम्**) युवयोः (**भृमयः**) भ्रमणानि (**मन्यमानाः**) (**युवावते**) त्वां रक्षते (**न**) निषेधे (**तुज्याः**) हिंसनीयाः (**अभूवन्**) भवेयुः (**क्व**) कस्मिन् (**त्यत्**) तत् (**इन्द्रावरुणा**) विद्युद्वायू इव वर्त्तमानौ (**यशः**) कीर्त्तिः (**वाम्**) युवयोः (**येन**) (**स्म**) एव। अत्र **निपातस्य चे**ति दीर्घः। (**सिनम्**) अन्नादिकम्। **सिनमित्यन्ननामसु पठितम्।** (निघं०२.७) (**भरथः**) (**सखिभ्यः**) मित्रेभ्यः॥१॥

अन्वयः-हे अध्यापकोपदेशकौ! या वामिमा मन्यमाना भृमयो युवावते तुज्या नाभूवन् तथा कुरुतम्। हे इन्द्रावरुणा! येन वां सखिभ्यः सिनं स्म भरथस्त्यद्यशो वामु क्वास्ति॥१॥

भावार्थः-येऽध्यापकोपदेशका वायुविद्युद्वदुपकारकाः कीर्त्तिमन्तः प्रियाचरणाः स्युस्तेभ्यः स्नेहेनाऽन्नादिकं देयम्। तैस्सह सर्वैर्मित्रता च रक्षणीया॥१॥

पदार्थः-हे अध्यापक और उपदेशक! जो (**वाम्**) आप दोनों के (**इमाः**) ये वर्त्तमान (**मन्यमानाः**) आदर किये गये (**भृमयः**) घूमने आदि (**युवावते**) आप की रक्षा करनेवाले के लिये (**तुज्याः**) हिंसा करने के योग्य (**न**) नहीं (**अभूवन्**) होवें, वैसे करिये और हे (**इन्द्रावरुणा**) बिजुली और वायु के सदृश वर्त्तमान! (**येन**) जिस यश से (**वाम्**) आप दोनों के (**सखिभ्यः**) मित्रों के लिये (**सिनम्**) अन्न आदि को (**स्म**) ही (**भरथः**) धारण करते हो (**त्यत्**) वह (**यशः**) यश (**उ**) ही (**क्व**) कहां है॥१॥

भावार्थः-जो अध्यापक और उपदेशक लोग वायु और बिजुली के सदृश उपकार करनेवाले, कीर्त्ति से युक्त और प्रिय आचरण करनेवाले होवें, उनके लिये स्नेह से अन्न आदि देना और उनके साथ सदा ही मित्रता की रक्षा करनी चाहिये॥१॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

अयमु वां पुरुतमो रयीयञ्छश्वत्तममवसे जोहवीति।
सजोषाविन्द्रावरुणा मरुद्भिर्दिवा पृथिव्या शृणुतं हवं मे॥ २॥

अयम्। ऊम् इति। वाम्। पुरुऽतमः। रयिऽयन्। शश्वत्ऽतमम्। अवसे। जोहवीति। सऽजोषौ। इन्द्रावरुणा। मरुत्ऽभिः। दिवा। पृथिव्या। शृणुतम्। हवम्। मे॥ २॥

पदार्थः-(**अयम्**) राजा (उ) वितर्के (**वाम्**) युवयोः (**पुरुतमः**) अतिशयेन बहुः (**रयीयन्**) आत्मनो रयिमिच्छन् (**शश्वत्तमम्**) अनादिभूतम् (**अवसे**) रक्षणाद्याय (**जोहवीति**) भृशं ददाति (**सजोषौ**) समानप्रीतिसेवनौ (**इन्द्रावरुणा**) विद्युज्जले इव वर्त्तमानौ (**मरुद्भिः**) वायुभिरिव श्रोत्रिभिः (**दिवा**) सूर्य्येण (**पृथिव्या**) भूम्या (**शृणुतम्**) (**हवम्**) स्तवनम् (**मे**) मम॥ २॥

अन्वयः-हे इन्द्रावरुणा! यथा विद्युज्जले मरुद्भिर्दिवा पृथिव्या सह वर्त्तित्वा सुखं प्रयच्छतो यथाऽयमु पुरुतमो रयीयन् वामवसे शश्वत्तमं जोहवीति तथा सजोषौ युवां मे हवं शृणुतम्॥ २॥

भावार्थः-यथा राजाऽध्यापकोपदेशकाश्च सर्वेषां रक्षावृद्धिविद्याप्रवेशाय शिक्षां कुर्वन्ति तथैव परस्परेषां प्रशंसया पृथिव्यादिष्वैश्वर्य्याणि प्रयत्नेन प्राप्य परस्परेषु प्रीतिमन्तः सर्वे मनुष्यास्सन्तु॥ २॥

पदार्थः-हे (**इन्द्रावरुणा**) बिजुली और जल के सदृश वर्त्तमान! (**मरुद्भिः**) पवनों के सदृश सुननेवाले जनों से (**दिवा**) सूर्य और (**पृथिव्या**) भूमि के साथ वर्त्तमान होकर आप सुख देते हैं और जैसे (**अयम्**) यह राजा (उ) क्या (**पुरुतमः**) अतिशय करके बहुत (**रयीयन्**) अपने धन की इच्छा करता हुआ (**वाम्**) आप दोनों की (**अवसे**) रक्षा आदि के लिये (**शश्वत्तमम्**) अनादि काल से सिद्ध पदार्थ को (**जोहवीति**) वारंवार देता है, वैसे (**सजोषौ**) तुल्य प्रीति के सेवन करनेवाले आप दोनों (**मे**) मेरी (**हवम्**) स्तुति को (**शृणुतम्**) सुनिये॥ ६॥

भावार्थः-जैसे राजा, अध्यापक और उपदेशक लोग सबके रक्षा, वृद्धि और विद्या में प्रवेश होने के लिये शिक्षा करते हैं, वैसे ही परस्पर की प्रशंसा से पृथिवी आदिकों में ऐश्वर्यों को प्रयत्न से प्राप्त करके परस्पर में प्रीतिवाले सब मनुष्य होओ॥ २॥

अध्यापकविषयमाह॥

अब अगले मन्त्र में अध्यापक के विषय को कहते हैं॥

अस्मे तदिन्द्रावरुणा वसु ष्यादस्मे रयिर्मरुतः सर्ववीरः।
अस्मान् वरूत्रीः शरणैरवन्त्वस्मान् होत्रा भारती दक्षिणाभिः॥ ३॥

अस्मे इति। तत्। इन्द्रावरुणा। वसु। स्यात्। अस्मे इति। रयिः। मरुतः। सर्वऽवीरः। अस्मान्। वरूत्रीः। शरणैः। अवन्तु। अस्मान्। होत्रा। भारती। दक्षिणाभिः॥ ३॥

पदार्थः-(**अस्मे**) अस्मासु (**तत्**) (**इन्द्रावरुणा**) वायुविद्युद्वद्वर्त्तमानौ (**वसु**) (**स्यात्**) (**अस्मे**) अस्मासु (**रयिः**) श्रीः (**मरुतः**) मनुष्याः (**सर्ववीरः**) सर्वे वीरा यस्मात् (**अस्मान्**) (**वरूत्रीः**) अत्यन्तं वराः (**शरणैः**) दुःखादीनां हिंसनैः (**अवन्तु**) (**अस्मान्**) (**होत्रा**) आदातुं योग्या (**भारती**) सकलविद्यां भरन्ती वाणी (**दक्षिणाभिः**) दानैः॥३॥

अन्वयः-हे इन्द्रावरुणा! यथाऽस्मे तद्वसु स्यादस्मे सर्ववीरो रयिः स्यात्। हे मरुतो! यथाऽस्मान् वरूत्रीर्होत्रा भारती च शरणैर्दक्षिणाभिश्चाऽस्मानवन्तु तथैव प्रयतध्वम्॥३॥

भावार्थः-हे अध्यापकोपदेशका राजानश्च! यथा वयं वसुमन्तः श्रीमन्तो विद्वांसो भवेम तथैवाऽस्मान् प्रेर्ध्वम्॥३॥

पदार्थः-हे (**इन्द्रावरुणा**) पवन और बिजुली के सदृश वर्त्तमान! जैसे (**अस्मे**) हम लोगों में (**तत्**) वह (**वसु**) धन (**स्यात्**) होवे और (**अस्मे**) हम लोगों में (**सर्ववीरः**) सब वीर जिस से ऐसी (**रयिः**) लक्ष्मी होवे और हे (**मरुतः**) मनुष्यो! जैसे (**अस्मान्**) हम लोगों को (**वरूत्रीः**) अत्यन्त श्रेष्ठ विद्या (**होत्रा**) ग्रहण करने योग्य क्रिया और (**भारती**) सम्पूर्ण विद्याओं को पूर्ण करती हुई वाणी (**शरणैः**) दुःख आदिकों के नाश करनेवाले (**दक्षिणाभिः**) दानों से (**अस्मान्**) हम लोगों की (**अवन्तु**) रक्षा करें वैसा ही प्रयत्न करो॥३॥

भावार्थः-हे अध्यापक, उपदेशक और राजा लोगो! जैसे हम लोग धनी, लक्ष्मीवान् और विद्वान् होवें, वैसे ही हम लोगों को प्रेरणा करो॥३॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उस ही विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

बृह॑स्पते जु॒षस्व॑ नो ह॒व्यानि॑ विश्वदेव्य। रास्व॒ रत्ना॑नि दा॒शुषे॑॥४॥

बृह॑स्पते। जु॒षस्व॑। नः॒। ह॒व्यानि॑। वि॒श्व॒ऽदे॒व्य॒। रास्व॑। रत्ना॑नि। दा॒शुषे॑॥४॥

पदार्थः-(**बृहस्पते**) बृहत्या वाचः पालक (**जुषस्व**) सेवस्व (**नः**) अस्मभ्यम् (**हव्यानि**) दातुमर्हाणि (**विश्वदेव्य**) विश्वेषु देवेषु साधो (**रास्व**) देहि (**रत्नानि**) रमणीयानि धनानि (**दाशुषे**) दात्रे॥४॥

अन्वयः-हे विश्वदेव्य बृहस्पते विद्वंस्त्वं नो हव्यानि जुषस्व दाशुषे रत्नानि रास्व॥४॥

भावार्थः-हे अध्यापक! त्वमस्मदर्थं विद्याः सेवस्व हि राजंस्त्वं विद्यादात्रे उत्तमं धनं देहि॥४॥

पदार्थः-हे (**विश्वदेव्य**) सम्पूर्ण विद्वानों में उत्तम (**बृहस्पते**) बड़ी वाणी के पालनकर्त्ता विद्वान् पुरुष! आप (**नः**) हम लोगों के लिये (**हव्यानि**) देने के योग्य पदार्थों का (**जुषस्व**) सेवन करो और

(दाशुषे) देनेवाले के लिये **(रत्नानि)** सुन्दर धनों को **(रास्व)** दीजिये॥४॥

भावार्थः-हे अध्यापक! आप हम लोगों के लिये विद्याओं का सेवन करो। और हे राजन्! आप विद्या देनेवाले के लिये उत्तम धन दीजिये॥४॥

अथ मित्रविषयमाह॥

अब इस अगले मन्त्र में मित्र के विषय को कहते हैं॥

शुचिमर्कैर्बृहस्पतिमध्वरेषु नमस्यत। अनाम्योज आ चके॥५॥९॥

शुचिम्। अर्कैः। बृहस्पतिम्। अध्वरेषु। नमस्यत। अनामि। ओजः। आ। चके॥५॥

पदार्थः-**(शुचिम्)** पवित्रम् **(अर्कैः)** सत्कर्त्तव्यैर्मन्त्रैर्विचारैः **(बृहस्पतिम्)** वाग्विद्यारक्षकम् **(अध्वरेषु)** अहिंसनीयेषु विद्याप्राप्तिकर्मसु **(नमस्यत)** सत्कुरुत **(अनामि)** नम्यते **(ओजः)** पराक्रमः **(आ)** **(चके)** कामये॥५॥

अन्वयः-हे विद्याप्रिया जना! यूयमध्वरेष्वर्कैर्वर्त्तमानं शुचिं बृहस्पतिं नमस्यत यदोजोऽनामि यदहमा चके तद्यूयं कामयध्वम्॥५॥

भावार्थः-ये मनुष्या वेदार्थविदोऽध्यापकानुपदेशकांश्च नमस्यन्ति सत्कुर्वन्ति ते पवित्रा विद्वांसः सन्तो बलमाप्नुवन्ति॥५॥

पदार्थः-हे विद्या के प्रेमी जनो! आप लोग **(अध्वरेषु)** जिन में हिंसा नहीं होती ऐसे विद्या की प्राप्ति के कर्मों में **(अर्कैः)** सत्कार करने योग्य विचारों से वर्त्तमान **(शुचिम्)** पवित्र **(बृहस्पतिम्)** वाणीरूप विद्या की रक्षा करनेवाले का **(नमस्यत)** सत्कार करो। और जो **(ओजः)** पराक्रम **(अनामि)** नहीं नम्र होनेवाला और जिसकी मैं **(आ, चके)** कामना करता हूँ, उसकी आप लोग कामना करो॥५॥

भावार्थः-जो मनुष्य वेदार्थ के जाननेवाले अध्यापक और उपदेशकों का नमस्कार और सत्कार करते हैं, वे पवित्र विद्वान् हुए बल को प्राप्त होते हैं॥५॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर इसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

वृषभं चर्षणीनां विश्वरूपमदाभ्यम्। बृहस्पतिं वरेण्यम्॥६॥

वृषभम्। चर्षणीनाम्। विश्वऽरूपम्। अदाभ्यम्। बृहस्पतिम्। वरेण्यम्॥६॥

पदार्थः-**(वृषभम्)** अत्युत्तमम् **(चर्षणीनाम्)** विद्याप्रकाशवतां मनुष्याणां मध्ये **(विश्वरूपम्)** विश्वानि कर्माणि वस्तूनि वा रूपयन्तम् **(अदाभ्यम्)** अहिंसनीयं सत्कर्त्तव्यम् **(बृहस्पतिम्)** बृहतां पालकं राजानम् **(वरेण्यम्)** अतिश्रेष्ठम्॥६॥

अन्वयः-हे मनुष्याश्चर्षणीनां मध्ये वृषभं विश्वरूपमदाभ्यं वरेण्यं बृहस्पतिं यूयं नमस्यताऽतः पराक्रमं कामयध्वम्॥६॥

भावार्थः-यथा राजानं सत्कृत्य प्रजाजना ऐश्वर्यवन्तो जायन्ते तथैव राजानः प्रजाः सत्कृत्य कीर्त्तिमन्तो भवन्ति॥६॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! **(चर्षणीनाम्)** विद्याप्रकाश से युक्त मनुष्यों के मध्य में **(वृषभम्)** अत्यन्त उत्तम **(विश्वरूपम्)** कर्मों वा वस्तुओं को रूपित करते हुए अर्थात् उनको यथार्थभाव से प्रकट करते हुए **(अदाभ्यम्)** नहीं हिंसा करने और सत्कार करने योग्य **(वरेण्यम्)** अत्यन्त श्रेष्ठ **(बृहस्पतिम्)** बड़ों के पालन करनेवाले राजा का आप लोग आदर करो इससे पराक्रम की कामना करो॥६॥

भावार्थः-जैसे राजा का सत्कार करके प्रजाजन ऐश्वर्यवान् होते हैं, वैसे ही राजा लोग प्रजाओं का सत्कार करके कीर्त्तियुक्त होते हैं॥६॥

विद्वद्विषयमाह॥

अब अगले मन्त्र में विद्वान् के विषय को कहते हैं॥

इ॒यं ते॑ पूष॒न्नाघृ॑णे सुष्टु॒तिर्दे॑व॒ नव्य॑सी। अ॒स्माभि॒स्तुभ्यं॑ शस्यते॥७॥

इ॒यम्। ते॒। पू॒ष॒न्। आ॒घृ॒णे॒। सु॒ऽस्तु॒तिः। दे॒व॒। नव्य॑सी। अ॒स्माभिः॑। तुभ्य॑म्। श॒स्य॒ते॒॥७॥

पदार्थः-**(इयम्)** **(ते)** तव **(पूषन्)** पुष्टिकर्त्तः **(आघृणे)** समन्तात् प्रकाशितः **(सुष्टुतिः)** शोभना प्रशंसा **(देव)** दिव्यगुणसम्पन्न **(नव्यसी)** अतिशयेन नवीना **(अस्माभिः)** **(तुभ्यम्)** **(शस्यते)**॥७॥

अन्वयः-हे पूषन्नाघृणे देव विद्वन् राजन् वा! ते येयं नव्यसी सुष्टुतिर्वर्त्तते सा तुभ्यमस्माभिः शस्यते॥७॥

भावार्थः-ये मनुष्या धर्म्यकर्म्माऽनुष्ठानेन कीर्त्तिमन्तो भवेयुस्ताञ्छ्रुत्वा दृष्ट्वा सर्वे प्रसन्ना भवन्तु॥८॥

पदार्थः-हे **(पूषन्)** पुष्टि करनेवाले **(आघृणे)** सब प्रकार प्रकाशित **(देव)** उत्तम गुणों से युक्त विद्वान् पुरुष वा राजन्! **(ते)** आपकी जो **(इयम्)** यह **(नव्यसी)** अत्यन्त नवीन **(सुष्टुतिः)** उत्तम प्रशंसा वर्त्तमान है, वह **(तुभ्यम्)** आपके लिये **(अस्माभिः)** हम लोगों से **(शस्यते)** उच्चारण की जाती है॥७॥

भावार्थः-जो मनुष्य धर्मसम्बन्धी कर्मों के करने से यशस्वी हैं, उनको सुन और देखके सब लोग प्रसन्न होओ॥७॥

अथाध्ययनविषयमाह॥

अब अगले मन्त्र में पठन विषय को कहते हैं॥

तां जुषस्व गिरं मम वाजयन्तीमवा धियम्। वधूयुरिव योषणाम्॥८॥

ताम्। जुषस्व। गिरम्। मम। वाजऽयन्तीम्। अव। धियम्। वधूयुःऽइव। योषणाम्॥८॥

पदार्थः-(**ताम्**) (**जुषस्व**) सेवस्व (**गिरम्**) सत्यभाषणशास्त्रविज्ञानयुक्तां वाचम् (**मम**) (**वाजयन्तीम्**) सत्याऽसत्यविज्ञापयन्तीम् (**अव**) रक्ष। अत्र **द्व्यचोऽतस्तिङ** इति दीर्घः। (**धियम्**) प्रज्ञाम् (**वधूयुरिव**) आत्मनो वधूमिच्छन्निव (**योषणाम्**) स्वपत्नीम्॥८॥

अन्वयः-हे देव विद्वन् राजन् वा! त्वं तां वाजयन्तीं मम गिरं योषणां वधूयुरिव जुषस्व धियञ्चाव॥८॥

भावार्थः-अत्रोपमालङ्कारः। मनुष्या यथा स्त्रीकामाः स्वां स्वां हृद्यां प्रियां पत्नीं रक्षन्ति सेवन्ते च तथैव शास्त्रान्वितां वाचं सेवित्वा प्रज्ञां सततं रक्षन्तु॥८॥

पदार्थः-हे देव विद्वन् वा राजन्! आप (**ताम्**) उस (**वाजयन्तीम्**) सत्य और असत्य के जाननेवाली (**मम**) मेरी (**गिरम्**) सत्यभाषण और शास्त्र के विज्ञान से युक्त वाणी का जैसे (**योषणाम्**) निज स्त्री को (**वधूयुरिव**) अपनी स्त्री की इच्छा करनेवाला वैसे (**जुषस्व**) सेवन और (**धियम्**) बुद्धि की (**अव**) रक्षा करो॥८॥

भावार्थः-इस मन्त्र में उपमालङ्कार है। मनुष्य लोग, जैसे स्त्री की कामना करनेवाले अपनी अपनी प्रेमपात्र पत्नी की रक्षा और सेवा करते हैं, वैसे ही शास्त्र से युक्त वाणी का सेवन करके बुद्धि की निरन्तर सेवा करें॥८॥

अथ परमात्मविषयमाह॥

अब इस अगले मन्त्र में परमात्मा के विषय को कहते हैं॥

यो विश्वाभि विपश्यति भुवना सं च पश्यति। स नः पूषाविता भुवत्॥९॥

यः। विश्वा। अभि। विऽपश्यति। भुवना। सम्। च। पश्यति। सः। नः। पूषा। अविता। भुवत्॥९॥

पदार्थः-(**यः**) परमात्मा (**विश्वा**) सर्वाणि (**अभि**) आभिमुख्ये (**विपश्यति**) विविधतया प्रेक्षते (**भुवना**) सर्वाणि भूतानि लोकान् वस्तूनि वा (**सम्**) (**च**) (**पश्यति**) (**सः**) (**नः**) अस्माकम् (**पूषा**) पुष्टिकरः (**अविता**) रक्षिता (**भुवत्**) भूयात्॥९॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यो जगदीश्वरो विश्वा भुवनानि विपश्यति सं पश्यति स नः पूषाऽविता भुवत्। येन च वयं सततं वर्धेमहि॥९॥

भावार्थः-यः सर्वस्य विधाता द्रष्टा कर्मणां फलप्रदाता न्यायाधीश ईश्वरोऽस्ति स एवाऽस्माकं रक्षको भूयादिति सर्वे वयमभिलषेम॥९॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! (**यः**) जो जगदीश्वर (**विश्वा**) सम्पूर्ण (**भुवना**) जीव, लोक वा वस्तुओं को

(अभि) सम्मुख **(विपश्यति)** अनेक प्रकार से देखता है **(सम्, पश्यति)** मिले हुए देखता है **(सः)** वह **(नः)** हम लोगों का **(पूषा)** पुष्टिकर्त्ता **(अविता)** रक्षक **(भुवत्)** होवे **(च)** और जिससे हम लोग निरन्तर वृद्धि को प्राप्त होवें॥९॥

भावार्थः-जो सबका रचने, देखने और कर्मों के फल देनेवाला न्यायाधीश ईश्वर है, वही हम लोगों की रक्षा करने और वृद्धि करनेवाला होवे, ऐसी हम सब लोग अभिलाषा करें॥९॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

तत्स॑वि॒तुर्वरे॑ण्यं॒ भर्गो॑ दे॒वस्य॑ धीमहि। धियो॒ यो नः॑ प्रचो॒दया॑त्॥१०॥१०॥

तत्। स॒वि॒तुः। वरे॑ण्यम्। भर्गः॑। दे॒वस्य॑। धी॒म॒हि॒। धियः॑। यः। नः॒। प्र॒ऽचो॒दया॑त्॥१०॥

पदार्थः-**(तत्)** **(सवितुः)** सकलजगदुत्पादकस्य समग्रैश्वर्ययुक्तस्येश्वरस्य **(वरेण्यम्)** सर्वेभ्य उत्कृष्टं प्राप्तुं योग्यम् **(भर्गः)** भृज्जन्ति पापानि दुःखमूलानि येन तत् **(देवस्य)** सकलैश्वर्यप्रदातुः प्रकाशमानस्य सर्वप्रकाशकस्य सर्वत्र व्याप्तस्याऽन्तर्यामिणः **(धीमहि)** दधीमहि **(धियः)** प्रज्ञाः **(यः)** **(नः)** अस्माकम् **(प्रचोदयात्)** सद्गुणकर्मस्वभावेषु प्रेरयतु॥१०॥

अन्वयः-हे मनुष्याः! सर्वे वयं यो नो धियः प्रचोदयात् तस्य सवितुर्देवस्य तद्वरेण्यं भर्गो धीमहि॥१०॥

भावार्थः-ये मनुष्याः सर्वसाक्षिणं पितृवद्वर्त्तमानं न्यायेशं दयालुं शुद्धं सनातनं सर्वात्मसाक्षिकं परमात्मानमेव स्तुत्वा प्रार्थयित्वोपासते तान् कृपानिधिः परमगुरुर्दुष्टाचारान्निवर्त्य श्रेष्ठाचारे प्रवर्त्तयित्वा शुद्धान् सम्पाद्य पुरुषार्थयित्वा धर्मार्थकाममोक्षान् प्रापयति॥१०॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! सब हम लोग **(यः)** जो **(नः)** हम लोगों की **(धियः)** बुद्धियों को **(प्रचोदयात्)** उत्तम गुण, कर्म और स्वभावों में प्रेरित करे, उस **(सवितुः)** सम्पूर्ण संसार से [=के] उत्पन्न करनेवाले और सम्पूर्ण ऐश्वर्य से युक्त स्वामी और **(देवस्य)** सम्पूर्ण ऐश्वर्य के दाता प्रकाशमान सबके प्रकाश करनेवाले सर्वत्र व्यापक अन्तर्यामी के **(तत्)** उस **(वरेण्यम्)** सबसे उत्तम प्राप्त होने योग्य **(भर्गः)** पापरूप दुःखों के मूल को नष्ट करनेवाले प्रभाव को **(धीमहि)** धारण करें॥१०॥

भावार्थः-जो मनुष्य सबके साक्षी, पिता के सदृश वर्त्तमान, न्यायेश, दयालु, शुद्ध, सनातन, सबके आत्माओं के साक्षी परमात्मा की ही स्तुति और प्रार्थना करके उपासना करते हैं; उनको कृपा का समुद्र, सबसे श्रेष्ठ परमेश्वर, दुष्ट आचरण से पृथक् करके, श्रेष्ठ आचरण में प्रवृत्त करा और पवित्र तथा पुरुषार्थयुक्त करके धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त कराता है॥१०॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

देवस्य सवितुर्वयं वाजयन्तः पुरंध्या। भगस्य रातिमीमहे॥११॥

देवस्य। सवितुः। वयम्। वाजऽयन्तः। पुरम्ऽध्या। भगस्य। रातिम्। ईमहे॥११॥

पदार्थः-(**देवस्य**) कमनीयस्य (**सवितुः**) प्रेरकस्याऽन्तर्यामिणः (**वयम्**) (**वाजयन्तः**) विज्ञापयन्तः (**पुरन्ध्या**) यया प्रज्ञया बहून् बोधान् दधाति तया (**भगस्य**) ऐश्वर्य्यप्रदस्य (**रातिम्**) दानम् (**ईमहे**) याचामहे॥११॥

अन्वयः-हे मनुष्या! यथा पुरन्ध्या वाजयन्तो वयं सवितुर्देवस्य भगस्य रातिमीमहे तथा यूयमप्येतां याचध्वम्॥११॥

भावार्थः-मनुष्यैर्य्यदि प्रज्ञां वर्धयित्वा पुरुषार्थेन धर्ममनुष्ठाय परमेश्वराऽऽज्ञाऽऽनुकूल्येन वर्त्तित्वा स्वात्मशुद्धये प्रार्थना क्रियेत तर्हीश्वरस्तान्त्सद्यः पवित्राञ्छुद्धाचारान् करोति॥११॥

पदार्थः-हे मनुष्यो! जैसे (**पुरन्ध्या**) जिस बुद्धि से बहुत बोधों को धारण करता उससे (**वाजयन्तः**) जनाते हुए (**वयम्**) हम लोग (**सवितुः**) प्रेरणा करनेवाले अन्तर्य्यामी (**देवस्य**) कामना करने के योग्य (**भगस्य**) ऐश्वर्य देनेवाले के (**रातिम्**) दान की (**ईमहे**) याचना करते हैं, वैसे आप लोग भी उस बुद्धि की याचना करो॥११॥

भावार्थः-मनुष्य लोग जो बुद्धि को बढ़ाय, पुरुषार्थ से धर्म का अनुष्ठान कर और परमेश्वर की आज्ञा के अनुकूल वर्त्ताव करके अपनी बुद्धि के लिये प्रार्थना करें तो ईश्वर उनको शीघ्र पवित्र और शुद्ध आचरणयुक्त करता है॥११॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

देवं नरः सवितारं विप्रा यज्ञैः सुवृक्तिभिः। नमस्यन्ति धियेषिताः॥१२॥

देवम्। नरः। सवितारम्। विप्राः। यज्ञैः। सुवृक्तिऽभिः। नमस्यन्ति। धिया। इषिताः॥१२॥

पदार्थः-(**देवम्**) सुखस्य दातारम् (**नरः**) योगेनेन्द्रियान्तःकरणस्य नेतारः (**सवितारम्**) सकलजगदुत्पादकम् (**विप्राः**) मेधाविनः (**यज्ञैः**) शास्त्राऽभ्याससत्सङ्गयोगाभ्यासैः (**सुवृक्तिभिः**) सुष्ठु वृक्तिर्दोषाणां छेदनं येषु तैः (**नमस्यन्ति**) (**धिया**) प्रज्ञया कर्मणा वा (**इषिताः**) प्रेरिताः॥१२॥

अन्वयः-ये धियेषिता नरो विप्राः सुवृक्तिभिर्यज्ञैः सवितारं देवं नमस्यन्ति तेऽभीष्टसिद्धसुखा जायन्ते॥१२॥

भावार्थः-ये संयमिनो विद्वांसः प्रेम्णा सत्यभाषणादिलक्षणेन धर्म्येण परमेश्वरमुपासते ते सुखाढ्या जायन्ते॥१२॥

पदार्थः-जो **(धिया)** बुद्धि वा कर्म से **(इषिताः)** प्रेरणा किये गये **(नरः)** योग से इन्द्रिय और अन्तःकरण के प्राप्त करानेवाले **(विप्राः)** बुद्धिमान् लोग **(सुवृक्तिभिः)** उत्तम प्रकार दोषों का काटना जिनमें उन **(यज्ञैः)** शास्त्र का अभ्यास, सत्सङ्ग और योगाभ्यासों से **(सवितारम्)** सम्पूर्ण संसार के उत्पन्न करने और **(देवम्)** सुख देनेवाले को **(नमस्यन्ति)** नमस्कार करते हैं, वे अभीष्ट सुखों से सम्पन्न होते हैं॥१२॥

भावार्थः-जो इन्द्रियों को वश में करनेवाले विद्वान् लोग प्रेम और सत्यभाषणादिस्वरूप धर्म से परमेश्वर की उपासना करते हैं, वे सुख से युक्त होते हैं॥१२॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

सोमो॑ जिगाति गातुविद्दे॒वानामेति निष्कृतम्। ऋतस्य॒ योनि॑मा॒सद॑म्॥१३॥

सोम॑ः। जि॒गा॒ति॒। गा॒तु॒ऽवित्। दे॒वाना॑म्। ए॒ति॒। निः॒ऽकृ॒तम्। ऋ॒तस्य॑। योनि॑म्। आ॒ऽसद॑म्॥१३॥

पदार्थः-**(सोमः)** ऐश्वर्ययुक्तः **(जिगाति)** स्तौति **(गातुवित्)** प्रशंसावित् **(देवानाम्)** विदुषाम् **(एति)** प्राप्नोति **(निष्कृतम्)** नितरां विज्ञातम् **(ऋतस्य)** सत्यस्य **(योनिम्)** कारणम् **(आसदम्)** आसीदन्ति सर्वे यस्मिंस्तम्॥१३॥

अन्वयः-यो गातुवित्सोमो देवानामृतस्य निष्कृतमासदं योनिं जिगाति सोऽभीष्टसुखमेति॥१३॥

भावार्थः-यो विद्वानस्य विविधाकृतेर्विश्वस्य कारणमव्यक्तं जानाति। एतन्निर्मातारं परमात्मानं प्रशंसति स एवैश्वर्यसम्पन्नो भवति॥१३॥

पदार्थः-जो **(गातुवित्)** प्रशंसा जाननेवाले **(सोमः)** ऐश्वर्य्य से युक्त **(देवानाम्)** विद्वानों और **(ऋतस्य)** सत्य के **(निष्कृतम्)** निरन्तर जाने गये **(आसदम्)** और जिसमें सब वर्त्तमान होते हैं, उस **(योनिम्)** कारण की **(जिगाति)** स्तुति करता है, वह अपेक्षित सुख को **(एति)** प्राप्त होता है॥१३॥

भावार्थः-जो विद्वान् इस अनेक प्रकार के स्वरूपवाले संसार के कारण अव्यक्त को जानता है और इस संसार के रचनेवाले परमात्मा की प्रशंसा करता है, वही ऐश्वर्य से युक्त होता है॥१३॥

अथ विद्वद्विषयमाह॥

अब इस अगले मन्त्र में विद्वान् के विषय को कहते हैं॥

सोमो॑ अ॒स्मभ्यं॑ द्वि॒पदे॒ चतु॑ष्पदे च प॒शवे॑। अ॒न॒मी॒वा इष॑स्करत्॥१४॥

सोम॑ः। अ॒स्मभ्य॑म्। द्वि॒ऽपदे॑। चतु॑ःऽपदे। च॒। प॒शवे॑। अ॒न॒मी॒वाः॑। इष॑ः। क॒र॒त्॥१४॥

पदार्थ:-(**सोम:**) चन्द्र: (**अस्मभ्यम्**) (**द्विपदे**) मनुष्याद्याय (**चतुष्पदे**) गवाद्याय (**च**) (**पशवे**) (**अनमीवा:**) नीरोगा: (**इष:**) अन्नाद्योषधिगणान् (**करत्**) कुर्य्यात्॥१४॥

अन्वय:-हे मनुष्या! यस्सोमो द्विपदेऽस्मभ्यं चतुष्पदे गवे च पशवेऽनमीवा इषस्करत्तं सर्वदा सत्कुरुत॥१४॥

भावार्थ:-ये वैद्या: सर्वान् द्विपदश्चतुष्पदोऽरोगान् कुर्य्युस्ते सर्वैर्माननीया: स्यु:॥१४॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जो (**सोम:**) चन्द्रमा (**द्विपदे**) मनुष्य आदि (**अस्मभ्यम्**) हम लोगों के (**चतुष्पदे**) गौ आदि के (**च**) और [गौ आदि] (**पशवे**) अन्य पशु के लिए (**अनमीवा:**) रोग निवर्त्तक (**इष:**) अन्न आदि ओषधिसमूहों को (**करत्**) करे, उसका सब काल में सत्कार करो॥१४॥

भावार्थ:-जो वैद्य लोग सब दो पैरवाले अर्थात् मनुष्य आदि और चौपाये गौ आदिकों को रोगरहित करें, वे सब लोगों को मान करने योग्य होवें॥१४॥

अथ मित्रताविषयमाह॥

अब इस अगले मन्त्र में मित्रता के विषय को कहते हैं॥

अ॒स्माक॑मा॒युर्व॒र्धय॑न्न॒भिमा॑तीः॒ सह॑मानः। सोम॑ः स॒धस्थ॒मास॑दत्॥१५॥

अ॒स्माक॑म्। आयु॑ः। व॒र्धय॑न्। अ॒भिऽमा॑तीः। सह॑मानः। सोम॑ः। स॒धऽस्थ॑म्। आ। अ॒स॒द॒त्॥१५॥

पदार्थ:-(**अस्माकम्**) (**आयु:**) जीवनम् (**वर्धयन्**) उन्नयन् (**अभिमाती:**) शत्रूनिव रोगान् (**सहमान:**) (**सोम:**) सुपथ्ये युक्ते व्यवहारे प्रेरयन् (**सधस्थम्**) सहस्थानम् (**आ**) (**असदत्**) आसीदतु॥१५॥

अन्वय:-हे मनुष्या! य: सोमोऽभिमाती: सहमान इवाऽस्माकमायुर्वर्धयन् सधस्थमासदत् सोऽस्माकं सखा वयं च तस्य सखाय: स्याम॥१५॥

भावार्थ:-ये धार्मिका: शूरवीराश्शत्रून् विनाश्य सखीन् रक्षित्वा सर्वान्त्सज्जनानायुर्विजयाभ्यां वर्धयन्ति तै: सह सदैव मैत्री सर्वै रक्षणीया॥१५॥

पदार्थ:-हे मनुष्यो! जो (**सोम:**) सुन्दर पथ्य और व्यवहार में प्रेरणा करता हुआ (**अभिमाती:**) शत्रुओं के सदृश रोगों को (**सहमान:**) सहन करता हुआ सा (**अस्माकम्**) हम लोगों के (**आयु:**) जीवन को (**वर्धयन्**) बढ़ाता हुआ (**सधस्थम्**) साथ स्थान को (**आ, असदत्**) स्थित हो, वह हम लोगों का मित्र और हम लोग उसके मित्र होवें॥१५॥

भावार्थ:-जो धार्मिक, शूरवीर पुरुष शत्रुओं का नाश और मित्रों की रक्षा करके सब सज्जनों को जीवन और विजय से वृद्धि करते हैं, उनके साथ सदैव मैत्री की सब लोगों को रक्षा करनी चाहिये॥१५॥

अध्यापकोपदेशकविषयमाह॥

अब अगले मन्त्र में अध्यापक और उपदेशक के विषय को कहते हैं॥

आ नो मित्रावरुणा घृतैर्गव्यूतिमुक्षतम्। मध्वा रजांसि सुक्रतू॥१६॥

आ। नः। मित्रावरुणा। घृतैः। गव्यूतिम्। उक्षतम्। मध्वा। रजांसि। सुक्रतू इति सुऽक्रतू॥१६॥

पदार्थः-(**आ**) (**नः**) अस्मभ्यम् (**मित्रावरुणा**) प्राणोदानवदध्यापकोपदेशकौ (**घृतैः**) उदकादिभिः (**गव्यूतिम्**) क्रोशद्वयम् (**उक्षतम्**) सिञ्चतम् (**मध्वा**) माधुर्येण (**रजांसि**) लोकान् (**सुक्रतू**) उत्तमप्रज्ञौ सत्कर्माणौ वा॥१६॥

अन्वयः-यौ सुक्रतू मित्रावरुणा! घृतैर्गव्यूतिं रजांसि सिञ्चत इव मध्वा नोऽस्मानोक्षतं तौ वयं प्राणवत्प्रियौ मन्यामहे॥१६॥

भावार्थः-यावध्यापकोपदेशकोपदिष्टप्राणविद्यां विज्ञाय लोकलोकान्तरव्यवहारेण सर्वदेशेषु गमनागमनौ संसाधयतस्तौ जलवन्निर्मलान्तःकरणौ विज्ञातव्यौ॥१६॥

पदार्थः-जो (**सुक्रतू**) उत्तम बुद्धि वा श्रेष्ठ कर्मवाले (**मित्रावरुणा**) प्राण और उदान वायु के सदृश अध्यापक और उपदेशक! (**घृतैः**) जल आदिकों से (**गव्यूतिम्**) दो कोस (**रजांसि**) लोकों को सिंचनेवाले के सदृश (**मध्वा**) मधुरता से (**नः**) हम लोगों के लिए (**आ, उक्षतम्**) सींचनेवाले हैं, उन दोनों को हम लोग प्राणों के सदृश प्रिय मानते हैं॥१६॥

भावार्थः-जो पढ़ाने और उपदेश देनेवालें से उपदेश की गई प्राण अर्थात् पवनसम्बन्धी विद्या को जानकर लोकलोकान्तर अर्थात् एक देश से दूसरे देश के व्यवहार से सम्पूर्ण देशों में जाना-आना सिद्ध करते हैं, वे जल के सदृश शुद्ध अन्तःकरणवाले जानने योग्य हैं॥१६॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

उरुशंसा नमोवृधा मह्ना दक्षस्य राजथः। द्राघिष्ठाभिः शुचिव्रता॥१७॥

उरुऽशंसा। नमःऽवृधा। मह्ना। दक्षस्य। राजथः। द्राघिष्ठाभिः। शुचिऽव्रता॥१७॥

पदार्थः-(**उरुशंसा**) बहुप्रस्तुती (**नमोवृधा**) नमसोऽन्नादेर्वर्धकौ (**मह्ना**) महत्त्वेन (**दक्षस्य**) बलस्य (**राजथः**) (**द्राघिष्ठाभिः**) अत्यन्तं दीर्घाभिः पुरुषार्थयुक्ताभिः क्रियाभिः (**शुचिव्रता**) पवित्रकर्माणौ॥१७॥

अन्वयः-हे शुचिव्रतोरुशंसा नमोवृधा मित्रावरुणा! यतो युवां प्राणोदानाविव दक्षस्य मह्ना द्राघिष्ठाभी राजथस्तस्मात् सत्कर्त्तव्यौ भवथः॥१७॥

भावार्थः-हे मनुष्या! ये पवित्रोपचिता यशस्विनो बलैश्वर्य्यान्नादीनां वृद्ध्या महतीभिः सत्क्रियाभिर्लोकेषु प्रकाशन्ते तानेव सेवध्वं सत्कुरुत॥१७॥

पदार्थः-हे **(शुचिव्रता)** उत्तम कर्म करनेवाले **(उरुशंसा)** बहुत स्तुतियों से युक्त **(नमोवृधा)** अन्न आदि के बढ़ानेवाले अध्यापक और उपदेशक लोगो! जिससे कि आप दोनों प्राण और उदान वायु के सदृश **(दक्षस्य)** बल के **(मह्ना)** महत्त्व से **(द्राघिष्ठाभिः)** बहुत बड़ी और पुरुषार्थ से युक्त क्रियाओं से **(राजथः)** प्रकाशित होते हैं, इस कारण सत्कार करने योग्य हैं॥१७॥

भावार्थः-हे मनुष्यो! जो पवित्रता से युक्त यशस्वी जन बल, ऐश्वर्य और अन्न आदि की वृद्धि और बड़े श्रेष्ठ कर्म्मों से लोकों में प्रकाशित होते हैं, उनकी ही सेवा और सत्कार करो॥१७॥

पुनस्तमेव विषयमाह॥

फिर उसी विषय को अगले मन्त्र में कहते हैं॥

गृणाना जमदग्निना योनावृतस्य सीदतम्। पातं सोममृतावृधा॥१८॥११॥५॥३॥

गृणाना। जमत्ऽअग्निना। यौनौ। ऋतस्य। सीदतम्। पातम्। सोमम्। ऋतऽवृधा॥१८॥

पदार्थः-**(गृणाना)** स्तुवन्तौ **(जमदग्निना)** चक्षुषा प्रत्यक्षेण **(योनौ)** गृहे **(ऋतस्य)** सत्याचारस्य **(सीदतम्)** वसतम् **(पातम्)** रक्षतम् **(सोमम्)** ऐश्वर्यम् **(ऋतावृधा)** सत्यवर्द्धकौ॥१८॥

अन्वयः-हे ऋतावृधा गृणाना मित्रावरुणौ! युवां जमदग्निना ऋतस्य योनौ सततं सीदतं सोमं पातम्॥१८॥

भावार्थः-त एवाऽध्यापकोपदेशकौ भवितुमर्हन्ति ये प्रत्यक्षादिभिः प्रमाणैः पृथिवीमारभ्य परमेश्वरपर्य्यन्तान् पदार्थान्त्साक्षात्कृत्वा सत्यविद्याचरणवृद्धिप्रिया धर्म्येण पथा गच्छेयुस्ते सत्कर्त्तुमर्हाः स्युरिति॥१८॥

अत्र मित्राऽध्यापकाऽध्येतृश्रोत्रुपदेशकपरमात्मविद्वत्प्राणोदानादिगुणवर्णनादेतदर्थस्य पूर्वसूक्तार्थेन सह सङ्गतिरस्तीति वेद्यम्॥

इति तृतीये मण्डले द्विषष्टितमं सूक्तं पञ्चमोऽनुवाकस्तृतीयाष्टक एकादशो वर्गस्तृतीयञ्च मण्डलं समाप्तम्॥

पदार्थः-हे **(ऋतावृधा)** सत्य के बढ़ानेवाले **(गृणाना)** स्तुति करते हुए अध्यापक और उपदेशक! आप दोनों **(जमदग्निना)** नेत्र अर्थात् प्रत्यक्ष से **(ऋतस्य)** सत्य आचरण के **(योनौ)** स्थान में निरन्तर **(सीदतम्)** बसो और **(सोमम्)** ऐश्वर्य्य की **(पातम्)** रक्षा करो॥१८॥

भावार्थः-वे ही अध्यापक और उपदेशक होने के योग्य हैं कि जो प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों से पृथिवी को **[**=से**]** लेकर परमेश्वरपर्य्यन्त पदार्थों का साक्षात्कार करके, सत्यविद्या के आचरण की वृद्धि जिनको प्रिय, जो धर्मयुक्त मार्ग में जावें, वे सत्कार करने के योग्य होवें॥१८॥

इस सूक्त में मित्र, अध्यापक, पढ़नेवाले, श्रोता, उपदेशक, परमात्मा, विद्वान्, प्राण और उदान आदि के गुणवर्णन करने से इस सूक्त के अर्थ की इससे पूर्व सूक्त के अर्थ के साथ सङ्गति है, ऐसा जानना चाहिये॥

यह तीसरे मण्डल में बासठवां सूक्त पांचवां अनुवाक, तीसरे अष्टक में ग्यारहवां वर्ग और तृतीय मण्डल समाप्त हुआ॥